भाग ३ मेष, १९७३ । April, 1916. संख्या १
Vol. III. No. 1

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची



प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग ।

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

# विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुंचनेमें एक सप्ताह से अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले या सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायेंगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जावें। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरह के पत्र व्यवहारकेलिए पता—

मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग

## विज्ञान-परिषत्के कार्य्यकर्तृगण—१९१५-१९१६।

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात् । विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते ।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति । तै० उ० । ३ । ५ ।

भाग ३ } मेष, संवत् १९७३ । एप्रिल सन् १९१६ । { संख्या १

## मंगलाचरण

तिहारे को बरनै गुन जाल,[1]
जासु अकथ महिमा बर दीसत,
दस दिसि तीनिहुँ काल ।
अगनित रचे चन्द्र[2] ग्रह तारे,
निराधार जे नभ बिच न्यारे,
द्वै[3] विधि अद्भुत शक्ति सहारे,
करत प्रमानी चाल ।
चींटी मीन विहग नर हाथी,
जीव अमित[4] जो अगनित जाती ।
ज्याइ पालि मारन केहि भांती,
धन्य अखिल रखवाल ।

—स्व० राय देवीप्रसाद (पूर्ण)

१—स्वर्गीय राय देवीप्रसाद (पूर्ण) रचित चन्द्रकला भानुकुमार नाटकसे [प्रताप, कानपुरसे प्राप्य] मंगलाचरणका अंश । यह पूरा मंगलाचरण पढ़ने योग्य है, आदिसे अन्ततक वैज्ञानिक है, और समस्त ईश्वरवादियोंके अनुकूल भी पड़ता है ।

## अपनी चर्चा

परिषत् शुद्ध वैज्ञानिक संस्था है । पत्र सम्पादन वा प्रकाशन वस्तुतः परिषत्का व्यवसाय नहीं हो सकता । परन्तु भाषामें विज्ञान-प्रचारकेलिए अन्य कोई साधन सुलभ न होनेसे परिषत्को "विज्ञान" का प्रकाशन आरंभ करना पड़ा । सम्पादनके अवैतनिक कार्य्य करनेकेलिए परिषत्के कई सभ्योंने वचन दिया परन्तु एक निश्चित संख्याके निश्चय रूपसे बिक जानेकी ही आशापर सहसा कोई प्रकाशक नहीं मिलता था । ऐसी दशामें हमारे परममित्र लाला करमचन्द भल्लाने साहस पूर्वक प्रकाशन

२—जैसे पृथ्वीकेलिए एक चन्द्रमा है, अन्य ग्रहोंकी परिक्रमा करनेवाले भी चन्द्रमा हैं ।

३—ग्रहोंकी गति दो शक्तियोंपर निर्भर है, केन्द्राभिगामिनी और केन्द्रत्यागिनी, जिन्हें अंग्रेजीमें Centripetal और Centrifugal forces कहते हैं ।

४—अखिलकी रक्षाकेलिए मारना भी जिलाने और पालनेके साथ आवश्यक है ।

भार अपने ऊपर ले लिया और जिस भावनासे हिन्दीके एक मात्र वैज्ञानिक पत्रको साल भर चलाया, पाठकोंपर प्रकट ही है। इस परीक्षाको सफल प्रमाणित करके, हानि उठाकर, तथा स्वार्थ-त्याग करके भल्ला महोदयने प्रकाशन भार परिषत्को सौंप दिया है। इस आत्माकी महानताकेलिए परिषत् भल्ला महोदयको भूरि भूरि धन्यवाद देती है, तथा अन्य सज्जनोंसे भी ऐसी ही कृपाकी आशा रखती है।

## तारपीन और विरोजा

[ ले० रामदास गौड़, एम० ए० ]

भारतवर्षकी उत्तर सीमामें हिमालय पर्वत जो पूरबसे पच्छिमतक फैला हुआ है उसकी उत्तरोत्तर बढ़ती हुई उंचाई, मिट्टी और पत्थरकी नरमी और कड़ाई, हवाका बढ़ता हुआ पतलापन और यथेष्ट नमी आदि अनेक अनेक कारणोंसे संसारके सभी भागोंमें उगनेवाले पौधे इस हिमालय पहाड़पर इसकी घाटियोंमें इसके दरोंमें भरे पड़े हैं। चट्टानोंके भीतर भाँति भाँतिके खनिज पदार्थों और नमकोंसे इन वनस्पतियोंको जैसा चाहिए वैसा भोजन मिलता है जिससे यह आपसे आप उगती और फलती फूलती हैं। कौन नहीं जानता कि हिमालयकी जड़ी बूटियोंके ज्ञान बलसे अनेक साधु सन्यासी बहुधा ऐसी चिकित्सा करते हैं कि बड़े बड़े डाक्टर आश्चर्य्यसे चकित रह जाते हैं। ऐसे रत्नाकरके सुलभ होते हुए भी भारतका दरिद्र नहीं जाता यह थोड़े अचरजकी बात नहीं है।

पचीस वर्ष हुए कि रत्नाकरसे लाभ उठानेकी ओर भारत सरकारका ध्यान गया और देहरादूनके जंगलातके पाठशालाके अधिकारियोंने कई महत्वकी परीक्षाएं कीं। इन परीक्षाओंसे यह बात मालूम की गयी कि चीड़के पेड़से जो देवदारुकी एक जाति विशेष है एक प्रकारका तैलमय विरोजा जिसे गंदाविरोजा कहते हैं निकल सकता है, जिससे तारपीन और रजन राल या विरोजा सहज ही बना सकते हैं और इसकी अच्छी बिक्री हो सकती है। चीड़के पेड़ोंसे विरोजा निकालना कोई बात न थी। पहाड़ी लोग चीड़पर क्षत लगाकर उससे टपकते हुए आसवको बटोरते और गंदा विरोजाके नामसे अनेक कालसे बेचते आये हैं।
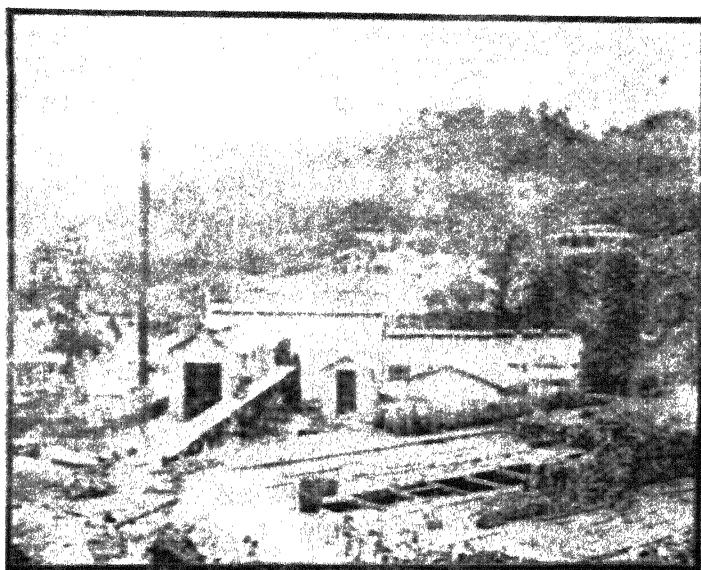
चित्र नं० १

Industrial chemistry शिल्प रसायन।

परन्तु उनकी खत लगानेकी रीति चीड़ोंकेलिए हानिकारक थी और वे गंदा-बिरोजेसे तारपीन नहीं निकालते थे। कुमाऊं प्रान्तमें चीड़के पेड़ों की बहुतायत देखकर सम्वत १९५३ में जंगलात के नैनीतालके विभागमें भवाली नामक स्थानको कार्यालयकेलिए चुना। यह स्थान चारों ओर ऊंचे शिखरोंसे घिरा हुआ है, बीचसे ठंडे जल का एक सोता बहता है और चारों ओर बांझ और चीड़के जंगल हैं, जहांसे लकड़ी और ईंधन बहुतायतसे मिल सकता है। यह स्थान साढ़े पांच हज़ार फ़ीटकी ऊंचाईपर है और यहां तक बैलगाड़ी आती जाती हैं। भवालीमें एक अच्छा स्थान चुनकर अरक़ खींचनेका यन्त्रालय बनाया गया और गंदाबिरोजा इकट्ठा करके उसमेंसे तारपीनका तेल खींचा जाने लगा। इस कारखानेकी बराबर उन्नति होती गयी। साल ही वर्ष बाद इसकी सालाना आमदनी अट्ठारह हज़ार रुपयाके लगभग हो गयी। उस साल लगभग सत्तावन हज़ार पेड़ोंमें सत्तासी हज़ार खत लगाये गये और साढ़े तीन हज़ार मन गंदा बिरोजा निकला। इसी प्रकार बढ़ते बढ़ते सम्वत् १९७१ में आठ लाख पेड़ोंमें बारह लाखके लगभग खत लगाये गये जिससे छप्पन हज़ार मन गंदा-बिरोजा निकला और सरकारी आमदनी सवा लाख रुपयेके लगभग हुई।

चित्र नं० २

### खत लगानेकी रीति

जंगलात विभागमें फरासीसी रीतिका अनुसरण किया जाता है। जाड़ोंमें इसकी तैय्यारी की जाती है। नये प्रदेशोंमें पेड़ोंपर नम्बर लग जाते हैं, संख्या गिनली जाती है, औज़ार इकट्ठे कर लिये जाते हैं। बरतन और चोंगे लगा दिये जाते हैं। अब यह सारा काम ठेकेपर होता है। चोंगा और बरतन लगानेके पहले धरतीसे

एक बिलस्त ऊपर चीड़के तनेमें छेनीसे चन्द्राकार खत कर दिया जाता है, जिसकी गहराई ऊपरकी ओर क्रमशः घटती जाती है। इसी चन्द्राकार खतमें चोंगा लगा दिया जाता है। चोंगेके ठीक नीचे बीचोंबीच छाल छुड़ाकर एक कील गाड़ देते हैं और इसी कीलमें मिट्टीका बरतन ऐसे लटका देते हैं कि चोंगेसे गिरता हुआ रस उसीमें बह आवे। यह बरतन ताड़ी इकट्ठी करनेवाली लबनीके रूपका होता है। चोंगा जिस चन्द्राकार खतमें लगता है उसे अब तेज़ बसूलेसे एक बिलस्त लम्बा आठ अंगुल चौड़ा और केवल दो अंगुल गहरा छील देते हैं जिससे बिरोजा टपकने लगता है।

यह काम मीन संक्रान्तिके लगभग प्रारंभ किया जाता है। पहलेके खतोंमें ज़रा छील देनेसे स्राव प्रारंभ हो जाता है और पांच छः दिन यथेष्ट चलता रहता है। महीनेमें पांचबार इस प्रकार छिलन करनेकी आवश्यकता पड़ती है। साल भरमें उस खतकी लम्बाई इसी प्रकार बढ़ते बढ़ते एक हाथसे अधिक हो जाती है। स्राव अच्छा हुआ तो अठवारे अठवारे और नहीं तो एक मासमें लबनी भर जाया करती है। इसे ठेकेदारका आदमी एक कनिस्टरमें उँडेल लेता है। यह कनिस्टर भर भरकर गाड़ीवाली सड़कके पासके गोदाममें एक बड़े पीपेमें ख़ाली कर दिये जाते हैं। हर पीपेमें ६-७ मन बिरोजा आता है। वह पीपे भवाली भेज दिये जाते हैं।

कूर्माचलके (कुमाऊं) जंगलोंमें एकड़ पीछे २० चीड़के पेड़ोंका औसत है जिनमें ३० खतोंसे सालमें १॥ मन बिरोजा आता है। परन्तु पन्द्रह बरससे अधिक एकही जंगलसे बिरोजा नहीं लिया जा सकता। इसीलिए जंगलका एक तिहाई भाग ही बिरोजा देता रहता है।

चित्र नं० ३

### तारपीनकी खिंचाई

चीड़का बिरोजा कई एक (organic compounds) प्राणिजन्य यौगिकोंका (intimate mixture) संपृक्त मिश्रण है, जिनके दो विभाग समझे जा सकते हैं। एक तारपीन, दूसरे राल। तारपीन जो गन्दाबिरोजासे निकाली जाती है कई प्रकारकी तारपीनोंका मिश्रण है। इसी प्रकार शुद्ध बिरोजा जो उसके साथ ही निकलता है, कई प्रकारकी रालोंका मिश्रण है। गंदाबिरोजाको जब गरम करते हैं यह दोनों वस्तुएँ अलग हो जाती हैं। भाप
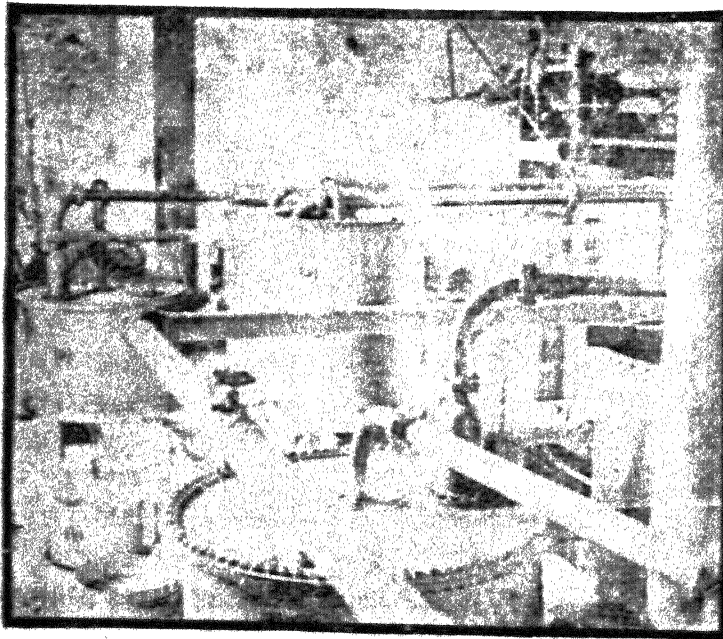
के रूपमें तारपीन उड़कर ठंडी होती है और चुआई जाती है और बिरोजा या राल बचकर जम जाती है।

गन्दा बिरोजाके पीपे बड़े बड़े टंकोंमें उँडेल लिये जाते हैं। एक एक टंक या कुगडमें १८०० मन बिरोजा अमाता है। यह कुगड बहुत ऊँचे पर होते हैं। रेलकी नाई इन्हें कड़ोंपर दौड़ाकर गलानेवाले कड़ाहोंके पास लेजाकर उँडेल देते हैं। एक एक कड़ाहेमें ४०-४२ मन बिरोजा गलता है और बारीक लोहेकी जालीमें छनकर एक खुले मुँहके कड़ाहेमेंसे देगमें पहुंचता है। देग भी कोई ४॥ हाथ व्यासकी और ३॥ हाथके लगभग ऊंची तांबेकी बनी हुई है। इसके भीतर छः भुजोंवाला नलिका चक्र है जो गरम भापको बड़े वेगसे निकालता और देगमें फैलाता रहता है। इसी भापके साथ तारपीन उड़कर भपकेमें जाती है और देगमें राल रह जाती है। देगमें तापक्रम जाननेकेलिए एक तापमापक ( थर्म्मामीटर ) भी लगा हुआ है।

भपका तांबेकी आठ अंगुल व्यासकी नली है जिसमेंसे तारपीन और भापका मिश्रण एक ठंडे पानीके कुगडल्याकार भपकेमें जाता है। यहां वाष्परूपसे यही मिश्रण ठंडा होकर द्रव हो जाता है। द्रव होकर जल और तारपीन एक ऐसे वर्त्तनमें इकट्ठे हो जाते हैं जिसमेंसे ऊपरकी नलिकासे तारपीन और नीचेकी नलिकासे जल निकल जाता है। इस प्रकार बहुत अच्छी तारपीन तैय्यार हो जाती है।

बिलकुल शुद्ध तारपीन तैय्यार करनेकेलिए इस तारपीनको फिर दूसरी देगमें खौलाकर चुआते हैं और इस प्रकार दूसरी बार शुद्ध की हुई तारपीन चूनेके पानीके भीतरसे प्रवेश करती है जिससे अम्ल अशुद्धियां चूनेमें रह जाती हैं। चूनेसे धुली हुई तारपीनको जलहीन सोडियमसलफ़ेटके थालपरसे बहाते हैं जिससे जलका सारा अंश खिच जाता है। इस प्रकार विशुद्ध तारपीन नलिका द्वारा मालके बने बड़े बड़े कुंडोंमें रक्खी जाती है और इन्हींमेंसे भर भरकर ४ गैलनके पीपे बाहर भेजे जाते हैं।

रजन-रालका तैय्यारी

जब सारी तारपीन निकल जाती है, देगके नीचेका पेंचकाग खोल देते हैं जिसमेंसे गली हुई राल बहकर बारीक तारोंकी जाली और रुईमें छनती है और एक कुगडमेंसे होकर गली हुई दशामें लकड़ीके पीपोंमें भर दी जाती है। हर पीपेमें लगभग ७ मनके राल आती है। इसीमें राल जम जाती है। यह राल बिना प्रयास ही अमेरिका प्रभृति देशोंके उत्तम से उत्तम रालकी बराबरीकी होती है और भावमें उनकी अपेक्षा सस्ती भी मिलती है।

भाप देनेकेलिए भवालीकी भट्टीमें ऐसे अंजनसे काम लेते हैं जो घंटा पीछे पौने चार सौ मन भाप देता है।

भवालीकी भट्टीमें दो बड़े देग हैं जिनमें तीन तीन थान नित्य पड़ सकते हैं अर्थात् लगभग २४० मनके नित्य गंदा बिरोजा पक सकता है, जिससे पौने चारसौ गैलन तारपीन और डेढ़ सौ मनसे अधिक रजन--राल प्रति दिन निकल सकती है। परन्तु अभी भट्टीमें पूरा पूरा काम नहीं हो रहा है। तब भी १६१४ में ५६,००० मन गंदा बिरोजासे ३८,००० मन विशुद्ध तारपीन और ११,००० गैलन गंदा तेल और ३८,००० मन रजन रालकी अटकल लगायी गयी थी। १६१६ तक आशा की जाती है कि भवालीकी भट्टीमें १ लाख मन गन्दा बिरोजा लगेगा जिससे १,४०,००० गैलन शुद्ध तारपीन और ६३,००० मन शुद्ध रजन राल निकलेगी, मांग बढ़नेसे इस व्यापारमें और भी अधिक उन्नति संभव है।

इस भट्टीमें एक प्रयोगशाला भी है जिसमें मालकी परीक्षा कर ली जाती है तब बाहर भेजा जाता है। इसकी अच्छी कारगुज़ारीपर प्रयाग-

की १६१० वाली प्रदर्शिनीमें भट्टीको एक स्वर्ण-पदक मिला था। लेखकने गत गरमीकी छुट्टियों-में स्वयं जाकर देखा और तबसे बहुत उन्नत दशा पायी। लकड़ीके पीपे आदि यहां भट्टी स्वयं बना लेती है और मालकी रवानगीकेलिए रेलवेकी ओरसे एक दफ्तर भी है। लेखकने जिस समय देखा उस समय यह प्रबन्ध जान-कारोंके हाथमें था। अब सुननेमें आया है कि इस कामपर एक ऐसा मैनेजर नियुक्त किया गया है जिसको इस विषयमें कोई अनुभव नहीं है।

यह भट्टी सरकारी है। चीड़के जंगलोंकी रक्षा और उसमेंसे गंदा विरोजाका एकत्रीकरण सरकारी प्रबन्धमें ही है। निदान तारपीनका पूरा इजारा सरकारी है। संभव है कि इन्हीं कारणोंसे यह काम प्रकाशतः बड़े लाभके साथ हो रहा है। यह किसीका निजका कारबार न होनेके कारण सरकारपर इस कारोबारकी उन्नतिका बड़ा भारी दायित्व है। अबतक बराबर उन्नति होती भी रही है। माल भी अच्छा निकलता है। १६०३ से १६१२ तक प्रति वर्ष औसत २ लाख सत्ताईस हज़ार गैलनके लगभग तारपीन बाहरसे हमारे देशमें आता रहा है। भवालीकी भट्टी अब आधेके लगभग स्वदेशी तारपीन दे सकती है और आशा है कि ६०-७० प्रति शत थोड़े ही कालमें देने लगेगी। इसके सिवाय पूर्व कुमाऊं तकमपुरमें, तथा पंजाबमें भी भट्टी तैय्यार हो रही है जब यह भट्टियां काम करने लग जायंगी, भारतवर्षको तारपीनकेलिए विदेशका मुंह न जोहना पड़ेगा।

तारपीन और रजन रालका रंगोंके और वार्निशोंके बनानेमें बहुत काम पड़ता है। कपड़ों-में मांड़ी देनेमें भी यह काम आते हैं। साबुन भी बनता है। तारपीन थोड़ी बहुत दवाके काममें भी आता है। हिमालयके सैकड़ों हज़ारों गुप्त रत्नोंमेंसे यह एक छोटीसी चीज़ है। पहाड़ी लोग चीड़की रालमयी लकड़ीसे दीपक-का काम चिरकालसे लेते आये हैं। परन्तु आश्चर्य्य है कि उसके प्रकाशमें भी किसीको ऐसे अमूल्य रत्न इतने दिनोंतक दिखायी नहीं पड़े थे।

## भोजन विचार

[ले॰ डाक्टर एम. पी. राय, एम्. बी., एम्. आर. सी. एस.]

अच्छी तरहसे सोच विचार कर परोसे गये भोजनमें नत्रजनीय पदार्थोंकी एक नियत निष्पत्ति ( ratio ) रहती है। साधारणतः नत्रजनीय पदार्थके एक भागके साथ अनत्रजनीय पदार्थके $3\frac{1}{4}$ या ४ भाग परोसे जाते हैं। नत्रजन और कर्बन १ और १५ के अनुपात-में ( proportion ) होते हैं। १५ भाग कार्बो-हाइड्रेटके साथ एक भाग चर्बीका होना चाहिए पर वास्तविक भोजनमें मितव्ययके कारण यह लगातार बदलता रहता है। इस प्रकारसे भोजनोंका एक भाग विशेष नियत करलेने और भोजनके संबंधमें किन प्रश्नोंपर विशेष ध्यान देना चाहिए यह जानलेनेके अनंतर यह आवश्यक है कि हम प्रत्येक भोज्य पदार्थका विचार इन्हीं ढङ्गोंपर करें और स्वयमेव भोज्य पदार्थोंकी उपयुक्त सूची तैय्यार करलें। ऐसा करनेके पूर्व यह जान लेना आवश्यक है कि अमुक भोज्य पदार्थ किन किन द्रव्योंसे संगठित हैं। भिन्न भिन्न स्थानोंसे एकत्रित किये हुए निम्नलिखित चक्रमें साधारण भोज्य पदार्थों-की सूची दी हुई है जिसमें पदार्थके सौ भागमें किन किन मुख्य घटकोंके कितने कितने भाग हैं यह दिखलाया गया है।

Medicine बैंक ]

| भोज्य पदार्थ | सौ भागोंमेंसे | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| | जल | प्रोटीड | फ़ैट (चर्बी) | कार्बोहाइड्रेट | लवण |
| बारीक आटा (गेहूँका) | १६·५० भाग | १२·०० भाग | १·५० भाग | ६८·३० भाग | ·७०भाग |
| चक्कीका पिसा हुआ आंटा बिना छना हुआ (देसी गेहूँका) | १०·२८ ,, | १५·२२ ,, | नहीं मालूम | ५०·०० ,, | ·६ ,, |
| बारीक सूजी (देसी गेहूँका) | | १४·२६ ,, | | ४३·३३ ,, | |
| चोकर (देसी) | ८·८६ ,, | १५·८२ ,, | | ३१·३३ ,, | |
| जौका आंटा | ११·३० ,, | १२·७० ,, | २·०० भाग | ७१·०० ,, | ३ ०० ,, |
| चावल | १०·०० ,, | ५·०० ,, | ·१० ,, | ८४·४० ,, | ·५० ,, |
| मसूर | १२·५० ,, | २४·८० ,, | १·८० ,, | ५८·४० ,, | २·५ ,, |
| मटर | १५·६० ,, | २२·०० ,, | २·०० ,, | ५८·४० ,, | २·४ ,, |
| मछली (सफ़ेद) | ८६·०० ,, | १२·०० ,, | ·५० ,, | | १·५ ,, |
| अंडे | ७३·५० ,, | १३·५० ,, | ११·६० ,, | | १·४ ,, |
| दूध (साधारण गायका) | ८६·६० ,, | ४·७० ,, | ३·५० ,, | ४·२० ,, | ·७० ,, |
| mutton बकरेका मांस (साधारण) | ७६·०० ,, | १८·०० ,, | ५·०० ,, | | १·०० ,, |
| आलू * | ७५·०० ,, | २·०० ,, | ·०२ ,, | २१·८४ ,, | १·०० ,, |

इस संबंधमें बड़े शोकके साथ कहना पड़ता है कि अद्यापि भारतवर्षके जनसाधारणकी भोजन सामग्रीका रासायनिक विश्लेषण नहीं हुआ है, इसलिए हम अपने भोजनके मानको न तो ठीक ही कर सकते हैं और न बना सकते हैं।

### भोज्य पदार्थोंका हिसाब

वास्तवमें ऊपर दिये हुए अंक बिल्कुल ठीक नहीं हैं। वे ठीक अंकोंके निकटस्थ हैं। पर भोजनका हिसाब तैयार करनेकेलिए वे काफ़ी ठीक हैं। मानलो कि हमें यह पता लगाना है कि एक मनुष्यकेलिए जिसका भार १५० पाउंड है और जो साधारण परिश्रम करता है कितने मांस, रोटी, चिकनई (घी या तेल) और नमककी आवश्यकता पड़ेगी जिससे ४ आउंस प्रोटीड, ३ आउंस फ़ैट, १६ आउंस कार्बोहाइड्रेट और १ आउंस नमक जो उसके शरीरपोषणकेलिए चाहिए मिलसके। जिन पदार्थोंका हम उपयोग करनेवाले हैं उनका संगठन (१०० भागोंके हिसाबसे) इस प्रकारका है (देखो पृष्ठ ८)।

इस प्रकार मालूम हो गया कि ४ आउंस प्रोटीड, ३ आउंस फ़ैट, १६ आउंस कार्बोहाइड्रेट तथा १ आउंस नमक पानेकेलिए हमें १५·७ आउंस मांस, ५ ३ आउंस रोटी, १·८

*यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि इंग्लैंड और आयरलैंडके आलुओंमें गेहूं और चावलके मांड और कार्बोहाइड्रेटका आधा हिस्सा भी नहीं है।

| [ पदार्थ | प्रोटीड | फ़ैट | कार्बोहाइड्रेट | नमक |
|---|---|---|---|---|
| मांस | १५·०० | ८·४ | ——— | १·६० |
| रोटी | ८ | १·०० | ५०·०० | १·५० |
| नमक लगाया हुआ मक्खन | —— | ८०·०० | ——— | ३·०० |
| आलू | २·०० | ·२० | २१·८४ | १·०० |

मानलो मांसकी मात्रा अ, रोटी की मात्र ब, मक्खनकी स, और आलूकी ड, है तो निम्न-लिखित समीकरण बनते हैः—

$$(\text{१})\quad \frac{\text{१५ अ} + \text{८ ब} + \text{२ ड}}{\text{१००}} = \text{४ भाग प्रोटीड (तौलमें)}$$

$$(\text{२})\quad \frac{\text{८·४ अ} + \text{१ ब} + \text{८० स} + \text{·२ ड}}{\text{१००}} = \text{३ भाग फ़ैट (तौलमें)}$$

$$(\text{३})\quad \frac{\text{५० ब} + \text{२१·८४ ड}}{\text{१००}} = \text{१६ भाग कार्बोहाइड्रेट (तौलमें)}$$

$$(\text{४})\quad \frac{\text{१·६ अ} + \text{१·५ ब} + \text{३ स} + \text{१ ड}}{\text{१००}} = \text{१ '' नमक (तौलमें)}$$

अथवा

$$\text{१५ अ} + \text{८ ब} + \text{२ ड} = \text{४००} \qquad (\text{क})$$
$$\text{८·४ अ} + \text{१ ब} + \text{८० स} + \text{·२ ड} = \text{३००} \qquad (\text{ख})$$
$$\text{५० ब} + \text{२१·८४ ड} = \text{१६००} \qquad (\text{ग})$$
$$\text{१·६ अ} + \text{१·५६ ब} + \text{३ स} + \text{१ ड} = \text{१००} \qquad (\text{घ})$$

अब यदि (ख) और (घ) मेंसे किसी प्रकार स निकालदें तो एक समीकरण जिसमें अ, ब और ड होंगे रह जायगा। ऐसा करनेकेलिए (घ) के दोनों भुजोंको $\frac{\text{८०}}{\text{३}}$ से गुणा करो तो—

$$\frac{\text{१२८}}{\text{३}}\text{ अ} + \frac{\text{१२४·८}}{\text{३}}\text{ ब} + \text{८० स} + \text{स }\frac{\text{८०}}{\text{३}}\text{ ड} = \frac{\text{८०००}}{\text{३}}$$

या $\text{४२·६६ अ} + \text{४१·६ ब} + \text{८० स} + \text{२६·६६ ड} = \text{२६६६·६}$ (च)

(च) मेंसे (ख) घटा देनेसे जो नया समीकरण बनेगा उसमें स न होगा वह यह है।

$\text{३४·२६ अ} + \text{४०·६ ब} + \text{२६·४६ ड} = \text{२३६६·६}$ (छ)

अब हम यदि (छ) और (क) में से अ निकाल दें तो एक नया समीकरण बन जायगा जिसमें केवल ब और ड रह जायंगे। ऐसा करनेकेलिए (क) को $\frac{\text{३४·२६}}{\text{१५}}$ से गुणा करो। और इस गुणन-फलमेंसे (छ) घटा दो

$\text{३४·२६ अ} + \text{१८·२७ ब} + \text{४·५७ ड} = \text{९१३·६}$ घटादो।

$$\text{तो } \text{२२·३३ ब} + \text{२१·८९ ड} = \text{१४५२} \qquad (\text{ज})$$
$$\text{पर } \text{५० ब} + \text{२१·८४ ड} = \text{१६००} \qquad (\text{ग})$$

इसलिए (ग) में से (ज) घटानेपर

२३·६७ ब = १२५

या ब = ५·३ आउंस

ब को (ग) में ५·३ रखनेसे २६५ + २१·८४ इ = १६००

$$\therefore \text{इ} = \frac{१३३५}{२१·८४} = ६१·२ \text{ आउंस}$$

(क) में ब की जगह ५·३ और इ के स्थानमें ६१·२ रखनेसे

१५ अ + ४१·४ + १२२·४ = ४००

$$\therefore \text{अ} = \frac{२३६·२}{१५} = १५·७ \text{ आउंस}$$

अ, ब और इ की जगह १५·७, ५·३ और ६१·२ (घ) में रखनेसे

२५·१२ + ८·२७ + ३ स + ६१·२३ = १००

$$\therefore \text{स} = \frac{१०० - २५·१२ - ८·२७ - ६१·२३}{३} = \frac{५·३८}{३} = १·८ \text{ आउंस} ]$$

आउंस मक्खन और ६१·२ आउंस आलू खाने चाहिए।

इसी प्रकार हम कितना परिश्रम करते हैं, इस परिश्रमकेलिए कितना प्रोटीड, कितना कार्बोहाइड्रेट और कितना फ़ैट हमें खाना चाहिए, जिन भोजनोंसे हम यह संसक्त उपादान लेना चाहते हैं उनके संघट्टनमें प्रत्येक उपादानकी कितनी मात्रा है, इन बातोंको जाननेपर हम अपने भोजनकी मात्रा उपरोक्त दिये हुए हिसाबसे जान सकते हैं। इस लेख और इसके पहलेवाले लेखमें जो चक्र दिये हुए हैं उनसे हमें बड़ी सहायता मिल सकती है। यहांपर पाठकोंको एक बात स्मरण रखनी चाहिए कि गणित शास्त्रके अनुसार जितने परिमाणोंका हमें पता लगाना हो तो कमसे कम उतने ही समीकरण मालूम होने चाहिएं। यदि इससे कम समीकरण मालूम होंगे तो हिसाब न लग सकेगा। तीन भोज्य पदार्थोंसे हम चार द्रव्योंकी मात्रा नहीं निकाल सकते।

उपरोक्त हिसाबसे हमें मालूम होता है गणना और कल्पनासे जो द्रव्य हमारे शरीरकेलिए चाहियें इन चार पदार्थोंकी दी हुई मात्रासे मिल सकते हैं। पर भोजन करते समय बहुधा लोग इतने आलू न खायंगे। आलूके स्थानमें रोटी बड़ी सुगमतासे बढ़ायी जासकती है और आवश्यक नमककी मात्रा शाक भाजी द्वारा मिल सकती है। ऊपरके मानमें रुचि भिन्नताकी ओर ध्यान नहीं दिया गया है। इस संसारमें मनुष्य जाति इतने प्रकारके पदार्थोंका भोजन करती है कि उन पर विचार न करना भोजन विचारको अधूरा छोड़ देना है। रुचि भिन्नता और भोज्य पदार्थोंको बाहुल्यताके कारण इस प्रश्नका रूप बड़ा ही गंभीर हो जाता है।

कुछ मनुष्य तो केवल मात्र वनस्पतियोंपर निर्वाह करते हैं (कड़ी दृष्टिसे देखनेपर ऐसे लोग बहुत ही कम मिलेंगे) और कुछ केवल मांस भोजनपर (ऐसे लोग संसारके आश्चर्य्योंमेंसे हैं) पर अधिकांश मनुष्य जाति मिश्रित भोजनपर ही आश्रित है। प्रकृतिने मनुष्यके निर्वाहकेलिए मिश्रित भोजन ही बनाया है। इसीपर पालित मनुष्य जाति उच्चतम शारीरिक और मानसिक स्फूर्ति लाभ करती है। ऐसे ही भोजनको वह बहुमत और रुचि बाहुल्यके कारण जब उसकी दशा उसे

अपनी रुचिके अनुसार काम करने देती है—खाना है और उसके दांत और पाचन यंत्रकी रचना भी ऐसी ही भोजनके योग्य हुई है।

इस बातका स्मरण रखना नितान्त आवश्यक है कि केवल किसी भोजनकी मात्राका हिसाब ही उसकी शरीर-पोषक शक्तिका मापक नहीं है किन्तु अन्य अनेक कारण, जैसे भोजन करनेका समय और प्रबंध, भोजनकी सुपाच्यता ( यह और बहुतसे दूसरे कारणोंके अतिरिक्त पेटके भोजन करनेके स्वभावपर भी निर्भर है, ) और भोजन पकानेकी विधि, भोज्य पदार्थकी पोषक शक्तिपर अपना प्रभाव डाला करते हैं।

भोजन करनेके घंटे

भोजन करनेकी विधिपर विशेष ध्यान देना चाहिए। भोजन सदा नियत समयके अंतरपर करना चाहिए। भोजनोंके बीचमें बहुत देरका अंतर हानिकारक है। इस संबंधमें यह स्मरण रखना चाहिए कि केवल शाक पातका किया हुआ भोजन मिश्रित भोजनकी अपेक्षा देरमें पचता है। अतः निरामिष भोजियोंको एक बार भोजन करनेके बाद दूसरे भोजनतक अधिक समय देना चाहिए। भोजन करनेका समय स्वभाव और समाजके भिन्न भिन्न वर्गोंमें होनेसे और अनेक तुच्छ कारणोंसे नियत होता है। इंग्लैंड और दूसरे युरोपीय देशोंमें इस बातका रिवाज है कि भोजन दिनमें ५ या ६ घंटेके अन्तरपर किया जाय।

साधारण मिश्रित ४ घंटेमें पचकर पेटके बाहर निकल जाता है इसलिए इस रिवाजके अनुसार पेटको फिरसे भरे जानेके पहले कुछ समयका विश्राम मिल जाता है। दिनमें सबसे भारी भोजन (dinner) दोपहरको या सायङ्कालमें करना चाहिए इसका निर्णय विशेष अवस्थाओंपर निर्भर है। जो लोग हाथसे अधिक काम करते हैं उनकेलिए दोपहरको सबसे अधिक खाना श्रेयकर है। सायङ्कालका समय उन व्यवसायिओंकेलिए उत्तम है जो साधारण या उच्च कक्षाके हैं।

यदि सायं भोजन बहुत विलंबसे और बहुत अधिक न किया जाय तो उपरोक्त प्रबंधसे कोई हानि नहीं होती। पर भोजन करनेके अनंतर भरे पेट सो रहना बड़ा ही हानिकारक है।

इसी प्रकारसे बहुत कठिन परिश्रम करनेके बाद पेट भर खाना ठीक नहीं है। दोनों हो दशाओंमें पेट अपना कार्य्य फुरतीसे करने योग्य नहीं रहता। प्रातःकाल तड़के ही कामपर जानेके पहले ग़रीब अमीर सभीको थोड़ा सा भोजन एक प्याला गरम चाय या काफ़ीके साथ कर लेना चाहिए। यह क्रिया शरीर और पाचक शक्तिको ऐसे समयमें जब उसका बल बहुत कम होता है दृढ़ कर देती है। ख़ाली पेटमें हैज़ेके कृमि घुस जाते हैं और यदि कहीं ख़ाली पेटमें कृमिसे भरे हुए किसी ठंडे पेयका एक घूंट भी धोखेसे पी लिया गया हो तो अन्त-ज्वरका (enteric fever) बहुत बड़ा भय रहता है। जब पेटमें कुछ भोजन रहता है और वह उसे पचाता होता है तो यदि कोई रोग-कृमि उसमें पहुंच भी जायँ तो बहुधा करके वे भी पचा डाले जायँगे। चाय या काफ़ी ही सबसे पहले क्यों पी जाय इसका दूसरा कारण यह भी है कि चाय या काफ़ी स्वयं शरीरका कुछ भी पोषण नहीं करती परन्तु कुछ अन्य द्रव्योंके समान उनमें यह गुण है कि वह तंतुओंके नाश या मेटर बोलिज्म को रोककर कम कर देती है। अतः थोड़े ही भोजनसे अधिक देरतक काम करनेकी शक्ति आ जाती है क्योंकि इस भोजनका व्यय शरीरमें धीरे धीरे होता है। इस प्रकार थकावट नहीं आने पाती।

इस देशमें, विशेषकर गर्मीके महीनोंमें एक गिलास ठंडे शर्बतका—शीतल नहीं—भी इसी

प्रकारका प्रभाव किन्तु बिल्कुल वैसाही नहीं होता है। चाय या काफ़ीके रसमें दूध और शक्कर मिला देनेकी प्रथासे इन स्फूर्तिदायक पेयोंमें शरीर पोषण योग्य भोजनका समावेश हो जाता है। यदि चाय या काफ़ी पीनेके बाद कई घंटेतक काम करना हो तो उनके साथ थोड़ा सा अधिक शक्ति देनेवाला मुख्य भोजन किया जा सकता है।

स्कूल और कालेज जाने वाले लड़कोंके लिए, जो बिलकुल बच्चे नहीं हैं, मैं निम्न लिखित प्रथाके अनुकरण करनेकी सम्मति देता हूं।

प्रातःकाल ६½ बजेको कोका, या आधी चाय और आधी कौफ़ी, या आधी चाय और आधा दूधका एक प्याला देना चाहिये।

प्रातःकाल ९½ बजे—पारण (रातभर भूखे रहनेके बादका व्रत भंग-) इसमें लड़कोंको जो कुछ खानेको मिलना चाहिये वही मिलता है। पर उन्हें कदापि अपने पेटको ऊपरतक ठूंसना नहीं चाहिए विशेषकर भोजनके साथ बहुत ज़्यादा पानी पीनेसे बचना चाहिए। मैं इस भोजनकी मात्राको जितनी कम हो सकती है कम करना चाहता हूं पर विशेषता यह है कि साथ ही शरीरका यथोचित पोषण भी हो जाय। इस विचारसे भी और शाक भोजियोंकेलिए भी, जिन्हें दुग्ध फलाहारी अथवा निरामिष भोजी कहना अधिक उचित होगा, मैं जौके (oat meal porridge) आटेकी लप्सीकी एक तश्तरी, जो चाहे नमकीन बनायी गयी हो या जिसमें थोड़ा सा दूध और शक्कर मिले हों, दो चपातियां और थोड़ी सी दाल, जिसमें घीकी उचित मात्रा पड़ी हो, अथवा अच्छी तरहसे पकायी हुई मुलायम खिचड़ी (crisp potato water) घी और थोड़े से भुने हुए आलूके रसके साथ खानेकी राय दूंगा। ऐसा भोजन पूरी तरहसे शरीरको पालेगा भी और रुचिकर और स्वास्थ्यकर भी होगा तथा साधारण रीतिसे किये गये दाल रोटी या दाल तरकारी, रोटी या चावलके पारणकी आधी मात्राकी ही आवश्यकता पड़ेगी।

यह निरामिष भोजन मिश्रित भोजनकी अपेक्षा देरमें पचेगा इसीलिए स्कूल और कालेजमें टिफ़िन या लंच करनेकी आवश्यकता नहीं है। परन्तु बालक अपनी जेबमें सदा थोड़े से अखरोट (wall nut) और पिस्ता और कुछ बताशा या बतासफेनी ले जा सकता है और यदि अपने स्कूल या कालिजके लम्बे घंटोंमें अधिक भूख लगे तो वह इन्हें खा सकता है। ये मीगियां बड़ी ही शरीर पोषक हैं। इनमें वानस्पतिक प्रोटीड (vegetable proteid) बहुत बड़ी मात्रामें वानस्पतिक तैलोंकी अधिकताके साथ, मिला हुआ, एकत्रित रहता है। थोड़ी सी शक्करके साथ यह मांसाहारी और निरामिष भोजी दोनोंकेलिए ही एक स्वच्छ और आदर्श टिफ़िन या लंच बन जाता है। सबसे थोड़ी मात्रामें अच्छी तरहसे शरीरको पालन करनेवाली इन मींगियोंको खानेकेलिए मैं अनुरोध करूंगा। परन्तु ऐसा करते समय मैं पाठकोंको बता देना चाहता हूं कि इनका भोजन थोड़ी ही मात्रामें करना चाहिए क्योंकि यह एक तो देरमें हज़म होते हैं दूसरे थोड़ेमें ही बहुत अधिक भोजन सामग्री एकत्रित कर देते हैं।

४॥ बजे (संध्याके)—यदि यह मान लिया जाय कि लड़केको स्कूल या कालेजसे ३½ या ४ बजे छुट्टी मिल जाती है और वह ४॥ बजेके लगभग घर पहुंच जाता है तो उसे अपने अंतिम मुख्य भोजनकेलिए यदि अभी कई घंटेतक रास्ता देखना पड़े,

तो कुछ हलका भोजन या जलपान थोड़ा सा विश्राम करनेके अनंतर कर लेना चाहिए। मैं उसे अब बहुतसे पदार्थ बतलाता हूं जिनमें वह अपनी रुचिके अनुसार कुछ चुन लें: कोको-का एक प्याला जिसमें दूध चाहे पड़ा हो या न पड़ा हो जलपानकेलिए बहुत अच्छा होगा। इसमें भोज्य द्रव्य थोड़ोंमें ही अधिकतासे एकत्रित होते हैं, यदि इसमें दूध मिला दिया गया है तो फिर और कुछ मिलानेकी आवश्यकता नहीं रहती। ताज़े फल और कुछ देसी मिठाइयां, जिनका खाना विशेषकर बाज़ारकी मिठाइयोंसे जहांतक हो सके, बचाना चाहिए, भी खायी जा सकती हैं। घरकी बनी हुई मिठाइयां अच्छी होंगी। मूंगकी दालमोठ या मूंग और चनेकी कोई और मिठाई खा सकते हैं पर सदा इनको बहुत ही थोड़ी मात्रामें प्रयोग करना चाहिए। चायका एक प्याला बड़े सुभीते और आसानीसे मिल सकता है। शरीरकी समस्त आवश्यकताओंको यह पूरा कर सकता है।

७॥ या ८ बजे रातको—जहांतक हो सके अंतिम भोजन ८ बजेके बाद कभी न करना चाहिए। विद्यार्थीको कुछ पढ़नेका काम शामको करना पड़ता है इसलिए मैं विद्यार्थीको सलाह दूंगा कि उसे अंतिम मुख्य भोजन स्कूल या कालेजसे लौटनेके थोड़ी ही देर बाद कर लेना चाहिए। ६ बजेके बाद वह भोजन न करे। ऐसा करनेसे दूसरे पहरको जलपान करनेकी आवश्यकता नहीं रहेगी। यदि वह चाहे तो हल्की कोको या चाय पी सकता है। रातको सोते समय दूध पीनेकी प्रथा अच्छी नहीं है। दूध पानी नहीं है जिसके पचानेमें पेटको कुछ काम न करना पड़े। वह तो पक्का भोजन है अर्थात् उसमें तो शरीरोप-योगी सभी संसक्त उपादान मिलते हैं। अतः पेटमें उसे अर्द्ध-ठोस भोजनकी तरह हज़म होना पड़ता है। इसलिए यदि वह रातको सोनेके पहले अंतिम पदार्थके रूपमें पिया ही जाय तो उसके पीनेके समयतक सारा भोजन पेटके बाहर निकल जाना चाहिए। नहीं तो वह समय पाकर पाचन क्रियामें भयानक उपद्रव मचा देगा। इसके अवगुण चाहे पहले कुछ कालतक न भी जान पड़ें पर थोड़े समय-के बाद वे उग्र रूपसे दृष्टिगोचर होने लगते हैं।

## मछलियोंके सम्बन्धकी एक पहेली

( ले० महवीर प्रसाद, बी. एस. सी. एल. टी. )

जो लोग समुन्दरके किनारे रह चुके हैं उन्होंने बहुधा देखा होगा कि समुन्दरमें किनारेसे अर्द्ध-मील वा ऐसी ही कुछ दूरीपर कई छोटी छोटी डोंगियां लंगरसे बंधी हुई तमाम दिन चुप चाप पड़ी रहती हैं। पहली दृष्टिमें तो यही मालूम होता है कि उनमें रहनेवाले केवल डोंगीके किनारे बाहरकी ओर झुके रहते हैं और नाचते हुए पानीको ध्यानपूर्वक देखते रहते हैं। परन्तु वास्तवमें वह "डैब", "सोल" इत्यादि चपटी मछलियोंके पकड़नेमें लगे रहते हैं और यह देखनेमें लगे रहते हैं कि बंसीमें झटकेकी श्रेणी कब बंध जाती है क्योंकि इन्हीं झटकोंसे तारकी नाईं यह सूचना मिलती है कि पानीके भीतर कोई चीज़ फंस गयी है।

यह बात नहीं है कि इन झटकोंसे इच्छित मछलीका ही फंस जाना सदैव सूचित होता है। कितनी ही बार तो दिक़ करनेवाली कुकुर-मच्छ ( dog fish ) चारा खाकर फंस जाता है और किसी कामका न होनेके कारण फिर समुन्दरमें फेंक दिया जाता है।

इन कुकुर-मच्छोंमें कुछकी त्वचा चिकनी होती है और कुछकी बहुत ही खुरदरी। यह खुरदरे कुकुर-मच्छ जहाँ कहीं डोंगीको छू पाते

Zoology जीव विज्ञान ]

है वहांकी शान्तिका चिन्हतक भी नहीं रहने पाता। इसलिए यह बहुत जल्द अपनी प्रथमावस्थामें कर दिये जाते हैं अर्थात् पानीमें छोड़ दिये जाते हैं। सारा बदन खच्चा और दागोंसे भरा रहनेके कारण यह देखनेमें बहुत ही अनोखे मालूम होते हैं।

परन्तु चिपटी-मछली ( flat fish ) स्वयम् एक बहुत ही मनोहर जन्तु है। क्या कभी हम लोगोंने अपने मनमें यह प्रश्न उठाया है कि डैब ( dab ) और इस जातिकी और बहुतसी मछलियोंको प्रकृतिने चिपटी ही तैरनेकेलिए क्यों बनाया है और हेरिङ्ग ( herrings ) मेकरल ( mackerel ) इत्यादि मछलियोंको खड़ी (बेंड़ी) चिपटी ( vertically flat ) तैरनेके लिए क्यों बनाया है? इस पहेलीका उत्तर अभीतक समझनेमें नहीं आया है।

इस विषयमें वास्तविक अनोखापन यह है:- डैब और सोल जातिके बच्चे जन्मसे एक मासके लगभगतक हेरिंग और मेकरलकी तरह खड़े तैरते हैं। इसके पश्चात् वह अपनी अवस्था बदलने लगते हैं और जैसे जैसे वह बढ़ते जाते हैं धीरे धीरे एक बगलकी ओर झुकनेका स्वभाव डालने लगते हैं। एक ओर झुके हुए ही वह तैरते हैं और इसी अनोखी दशामें बलुई तहमें लेटते भी हैं। अन्तमें वह चपटी-मछलीके रूपमें आ जाते हैं तब फिर कभी अपनी पुरानी और पहली रीतिसे तैरते हुए वा लेटे हुए नहीं देखे जाते।

खड़ा तैरनेवाली मछलीके शिरके दोनों ओर एक एक आंख होती है परन्तु चपटी-मछलीके ( पड़ी तैरनेवाली मछली ) एक ही ओर शिरके ऊपर दोनों आंखें होती हैं। चपटी मछलीके बच्चोंकी आंखें खड़ी तैरनेवाली मछलियोंकी आंखोंकी भांति शिरके दोनों ओर होती हैं क्योंकि तभी खड़ी तैरनेमें सुबिधा हो सकती है। यह बिलकुल स्पष्ट है कि जब यह बच्चे चपटी मछलीके रूपमें आ जाते होंगे, इनकी एक आंख बेकाम हो जाती होगी क्योंकि वह नीचे पड़ जाती है। इसी स्थानमें प्रकृतिकी करामातका अनुभव होता है क्योंकि जैसे जैसे बच्चा बढ़ता जाता है वैसे वैसे उसकी नीचेवाली आंख ऊपरको सरकती जाती है और अन्तमें शिरके ऊपरवाली आंखके पास समान काम करनेकेलिए हो जाती है।

दूसरी अनोखी बात जिसपर अचम्भा मालूम होता है यह है। जिस समय यह परिवर्तन धीरे धीरे होता रहता है, मछलीकी वह बगल जो ऊपरकी ओर हो जायगी धीरे धीरे अपना रंग बदलती रहती जो बगल नीचे होनेवाली है वह सफेद होती जाती है परन्तु जो बगल ऊपर होगी वह मटमैली होती जाती है।

---

## दिल्लीका लौह स्तंभ

[ ले० देवेन्द्र नाथ पाल, एम. ए. ]

दिल्लीके समान प्राचीन और ऐतिहासिक नगर इस संसारमें बहुत कम होंगे। आधुनिक कालमें भी दिल्ली नगरके चारों ओर फैले हुए उतमस्त, जीर्ण खंडहर, भग्न प्रासाद और कोलाहल पूर्ण दुर्गोंकी ध्वंस राशि निस्तब्ध भाषामें कुटिल कालकी क्रूर क्रीड़ाओंका वर्णन कर रही है। उसी ध्वंस राशिके बीचमें किसी अभिमानी नृपतिका लोह निर्मित कीर्तिस्तभं जयध्वनि कर रहा है। प्राचीन कालके भारत-वासियोंने शिल्पविद्यामें कितनी निपुणता और उन्नति प्राप्त की थी यह स्तभं इसका एक उत्कृष्ट प्रमाण है। आज कलके बड़े बड़े वैज्ञानिक इसको देखकर विस्मित और विमुग्ध हो जाते हैं। यह स्तंभ भूमिसे २२ फुट ऊंचा है। पृथ्वीके अन्दर यह कितनी दूरतक चला गया है इसका अभीतक ठीक पता नहीं लग सका

है। जनरल कनिंगहमने भारतवर्षीय पुरातत्व सम्बन्धी निरीक्षणोंके विवरणमें (Proceedings of the archaeological survey of India) लिखा है कि २६ फुट मिट्टी खोदनेपर भी इस स्तंभ-का तला नहीं मिला है। उनके अनुमानमें इसकी पूरी लम्बाई लगभग ६० फुटके होगी और इसका वज़न १७ टनके (४१० मन) क़रीब होगा। इस स्तंभके ऊपरके भागका व्यास १६ इंचके क़रीब है। बिलकुल ठोस है और सबसे अधिक आश्चर्यकी बात तो यह है कि आज-तक इसके किसी भागमें भी मुरचा नहीं लगा। प्राचीन समयमें अन्य देशोंमें बहुत सी बड़ी बड़ी मूर्तियां, जैसे रोड़ द्वीपकी बृहत मूर्ति (Colossus of Rhodes) तो अवश्य बनी थीं पर यह मूर्तियां ठोस नहीं हैं और ये अधिकतर तांबे या पीतलकी बनी हुई हैं। उनके भिन्न भिन्न अंश पहले अलग बनाये गये थे और फिर इकट्ठा कर दिये गये इसलिए उनकी तुलना इस दिल्लीके स्तंभसे नहीं हो सकती।

इस स्तंभमें कुछ अक्षर खुदे हुए दिखायी देते हैं यह अक्षर देवनागरीके हैं और उनकी भाषा संस्कृत है। इन अक्षरोंमें कहीं कहीं चांदीके चिन्ह पाये जाते हैं। अनुमान होता है कि पहले इन सब अक्षरोंमें चांदी भरी हुई थी अब वह चांदी किसी अत्याचारीके द्वारा निकाल ली गयी है। इस भाषाके पढ़नेसे विदित होता है कि महाराजा धवने अपने विजय गौरवको चिरस्मरणीय करनेकेलिए इस स्तंभ-को बनवाया था। प्रिन्सिप साहबका मत है कि यह स्तंभ ईसाकी दूसरी या तीसरी शताब्दीका बना हुआ होगा। ऐतिहासिक प्रमाणोंके अभाव-से इस बातको मान लेना पड़ा कि महाराज धव भी उसी समय दिल्लीके राजसिंहासनपर सुशोभित थे। उन्होंने इसी समय अपनी अक्षय कीर्तिकी स्थापनाकी थी।

उस प्राचीन समयमें जब भाप और बिजली-के यंत्रोंका आविष्कार भी नहीं हुआ था और जब मनुष्य अपने हा हाथोंके बलसे सब काम किया करते थे, इतने बड़े लोहेको ढालकर या पीटकर इस आकारमें ले आना किस प्रकारसे संभव हुआ इस बातकी चिन्ता करनेसे ही हमारी बुद्धि विस्मित हो जाती है। यह स्तंभ ढला हुआ लोहा नहीं है। इसके प्रमाण यह हैं:

( १ ) इस स्तंभके ऊपर एक गोलेका चिन्ह बना हुआ है। यदि यह ढला हुआ लोहा होता तो गोलेके लगनेसे ही चूर चूर हो गया होता परन्तु यह तो आज भी वैसाही अखंड बना हुआ है जैसा बनते समय था। इसमें केवल मात्र गोलेका एक चिन्ह दिखायी पड़ता है।

( २ ) इस अनुमानकी पुष्टिमें दूसरा प्रमाण यह है कि इतने बड़े लोहेके ढालनेके यंत्र आज-तक भारतवर्षमें तो क्या इतने बड़े महादेश एशियामें भी नहीं हैं। इसकी ढलाईका उस युगमें होना तो असंभव ही मालूम होता है।

( ३ ) रसायनिक और वैज्ञानिक परीक्षाओं-से पता चला है कि इसका लोहा ढला हुआ नहीं है केवल पिटा हुआ है। किसी अंग्रेज़ पदार्थवित्‌ने कहा है "It is pure malleable iron" अर्थात् यह केवल पीटकर बढ़ाया जानेवाला शुद्ध लोहा है।

जब यह स्तंभ ढले हुए लोहेका नहीं है तो निश्चय ही यह निहाई और हथौड़ी द्वारा पीटकर तैयार किया गया होगा। अब विवेचना करनेका विषय है कि वह निहाई और हथौड़ी कितनी बड़ी होगी और वह अग्निकुण्ड कैसा होगा जिसके द्वारा इसकी पिटाई की जा सकी होगी यदि यह भी मान लिया जाय कि वह अग्निकुण्ड बहुत बड़ा होगा तो भी इतने बड़े लोहेका स्तंभ जब अग्निके पास पिटाईकेलिए लाल किया जायगा तब उससे कितनी अधिक गर्मी निकलकर चारों ओर फैल जायगी इस बातका अनुमान वेही लोग कर सकते हैं जो

कभी हलवाईके कारखानेमें गये हैं। इससे निकली हुई गर्मीके कारण तीस या चालीस फ़िटके भीतर किसी मनुष्यका ठहरना कठिन हो जायगा। इन सब बातोंको जानकर और इस स्तंभकी गठन प्रणालीको सोचकर बुद्धि चकित हो जाती है। धन्य हैं वह आर्य सन्तान जिन्होंने न मालूम अपनी किस महिमासे, किस योगके बल ऐसे ऐसे कार्य्य कर डाले जिनका निदर्शक केवल यह स्तंभ ही नहीं है किन्तु भारतवर्षके भिन्न भिन्न स्थानोंमें और भी ऐसे अनेक चिन्ह पड़े हैं जो उनकी शिल्प पारदर्शिताका परिचय देते हैं।

स्तंभ स्थापित होनेके बाद बरसपर बरस बीत गये कितने युग आये और चले गये कितने साम्राज्योंका अवसान होगया परन्तु यह आज भी उसी स्थानमें वैसेही सम्भावसे अटल और स्थिर खड़ा होकर हिन्दुओंके अतीत अतुल कीर्ति और गौरवका वर्णन कर रहा है।

---

# मैडेम मागटीसेरीकी शिशु शिक्षा प्रणाली।

( गताङ्कसे आगे )

[ ले० मधुमङ्गल मिश्र, बी ए एम-सी ]

देखा जाता है कि रेलवे स्टेशनपर, बाज़ारमें, मेलेमें, सैंकड़ों, सहस्रों मनुष्य अपने अपने काममें लगे रहते हैं। एक दूसरेसे बातचीत करते हैं, हँसते हैं, चिल्लाकर पुकारते हैं। किसीको अपने काममें बाधा नहीं होती। सभी अपने अपने कार्यमें दत्तचित्त रहते हैं। व्याख्याता लोग अपने श्रुण्डका ध्यान आकर्षित कर सकते हैं। मदारी लोग अपने दर्शकोंको लच्छेदार बातोंमें भुलाये, जादूके खेल करते रहते हैं। दूकानदार ग्राहक अपनी बात कर लेते हैं। किसीको बाधा नहीं होती। पर हमारी शालाओंमें कचहरियोंमें दो जनकी बातचीतमें बाधा होती है ऐसा माना जाता है। यदि यह कुटेव प्रारंभमें न डाली जावे तो संभव है कि विद्यार्थी शोर होते भी अपना काम करनेका अभ्यास डालें और कर सकें। कितने विद्यार्थी हमारी शालाओंमें तनिक सी बात चीत करनेपर शासनाभिमानी पाठकोंसे क्या क्या दण्ड नहीं पाते? बालभवनकी शिक्षा प्रणाली उन्हें भी कुछ शिक्षा दे सकती है। इन्सपेक्टर लोग भी शोर कम होनेसे शासन और बालकोंके चालचलनको अच्छा कहते हैं। पर यह अस्वाभाविक शासन या दबाव क्षणिक होके उन्हें धोखा दे सकता है। और केवल क्षणिक हो सकता है क्योंकि अस्वाभाविक है।

एक और प्रकारका विनोद मैडेम मागटीसेरीने निकाला है। उसमें बालकोंका मन लगता है और वर्णमाला सिखानेकी एक नई पद्धतिमें भी सहायक है। उसके साथ ही साथ वह केवल विनोद या खेल ही नहीं है। वरन बुद्धि विकासमें भी सहायक है। अंग्रेज़ी औषधालयोंमें बहुधा नाप तोलका एक तराज़ू होता है। उसके बाट एक पटरीके गड्ढोंमें रक्खे रहते हैं। उनके ऊपर पकड़नेको छोटी बटन सी मूठें लगी रहती हैं। बटनको दो उँगलियोंसे पकड़के उठा लेते हैं। वे बड़े छोटे होते हैं। बड़ेका गोला बड़ा और ऊँचाई भी अधिक होती है। और प्रत्येक बाट अपने ही घेरेमें ठीक बैठता है। दूसरे घेरेमें या तो ढीला होता है या जाता ही नहीं।

हम लोग तो इन बाटोंको डालते समय गोलोंका विस्तार और घरका विस्तार देखते हैं। पर बालभवनमें जहाँ आँखकी शक्ति बाल्यावस्थामें स्पर्श शक्तिके तुल्य प्रबल नहीं मानी जाती पाठिका पहिले बाटके चारों ओर उँगलीसे टटोलके तब घरको टटोलती है और घर ठीक नापका हुआ तो उसमें बाटको रख देती

हैं और बालकोंको भी ऐसे ही करनेको कहती है। दो तीन बाटका ऐसे ही टटोलके रखवा-कर पाठिका तो वहांसे चल देती है और बालक नये खेलमें मगन हो टटोल टटोलके रखना प्रारम्भ करता है। एक बार पूरा हो जानेपर फिर सब बाटोंको अपने छोटेसे टेबुलपर गिराके बाट और घरके विस्तार टटोलनेका अभ्यास प्रारम्भ करता है। और जबलों मन मानता है उसमें लगा रहता है।

बालकोंको बाट और उनके घर टटोलने-भरका काम सदा प्रिय नहीं हो सकता। इस-लिए बाटके गोले आगे चलके अण्डाकार (छोटा, बड़ा) त्रिकोण, चतुर्भुज, पञ्चभुज, षड्भुज आदि भिन्न भिन्न परिमाणके सम वा विषम भुजके अपने अपने योग्य घरोंमें रक्खे रहते हैं और बालक गण इन नई तथा विचित्र आकृ-तियोंके नाम सीखने और उन्हें यथा स्थान घरोंमें रखते हैं। यों उनको विनोद तथा स्पर्श ज्ञान बढ़ानेका अधिक मसाला मिल जाता है। साथ ही साथ स्पर्श ज्ञानके आकृतियोंके नाम भी सीखता जाता है। हम लोग आकृति शब्दका व्यवहार करते हैं क्योंकि हमारे मनमें आंखोंके द्वारा चित्र बनता है, पर उन बालकोंके मानसिक चित्र स्पर्श द्वारा बनते होंगे उनकेलिए आकृति शब्द उपयुक्त न होगा। हम लोग तो उन्हीं शब्दोंसे काम चलावेंगे। अस्तु।

इसके अनन्तर बालकगण उन आकृतियोंको काग़ज़पर रखके चारों ओर उंगलीसे छूते हैं और आकृतिका नाम लेते हैं और कुछ काल ऐसा अभ्यास कर चुकनेपर चाककी (खड़िया मट्टी) पेंसिलसे काग़ज़ वा काठपर आकृतिके बाहरी भागके चारों ओरकी सीमा बनाके उसे उठा लेते हैं और उसका नाम त्रिकोण वा अंडा-कार आंखसे देखके पहिचानते वा कहते हैं। ऐसा अभ्यास हो चुकनेपर उन्हें बाटके स्थानपर काठके बने अक्षर दिये जाते हैं। बालकगण उन्हें टटोलके उनके ठीक ठीक घरमें उन्हें रखते हैं और उनका नाम सीखते हैं। यह काम खेल सा लगनेसे आपसमें कहते सुनते रहनेसे बिना पाठककी सहायताके सीखते हैं। अक्षरोंका नाम बतानेकेलिए सदा पाठककी आवश्यकता नहीं होती। काठके अक्षरोंके भी चहुं ओर उंगलीसे टटोलते और खड़िया मिट्टीकी पेंसिलसे रेखाएं बनाते हैं। अक्षरोंको उठाके चाककी रेखाओंके ऊपर फिर फिर हाथ फेरते हैं अथवा रेतीले काग़ज़ोंमें कटे हुए अक्षरोंपर उंगली फेरते हैं जैसे कि अक्षरोंका कुछ भाग देखते ही हम लोग (संयुक्त अक्षरोंमें तो अधिक) सम्पूर्ण अक्षर पहिचान लेते हैं वैसे ही टटोलते समय उंगलीको थोड़ी ही दूर ले जाते ही बालकको पूरे अक्षरका बोध हो जाता है। यों स्पर्शेन्द्रिय-की प्रबलताका अभ्यास शीघ्र पड़नेमें बड़ा सहायक होता है। जैसे अक्षरोंका रूप देखते ही हमारे चित्तमें आकार उपस्थित होता है वैसे अक्षरका स्पर्श होते ही नाम और आकार उनके चित्तमें आ बैठता है अथवा रूप देखते ही स्पर्श और नामका ज्ञान उदय हो आता है। नाम लेते स्पर्श और रूपका बोध होता होगा। तिलड़े काग़ज़में कटेहुए बहुत से अक्षर काठके चौखटे-में बनेहुए घरोंमें रक्खे रहते हैं।

कभी कभी पाठिका बालकोंको चौखटेमेंसे अक्षरोंको निकालनेको कहती है। नामको सुन-कर आंखसे उन्हें खोजना लड़कोंकेलिए अच्छा खेल होता है। पाठिका उन अक्षरोंको निकल-वाती है जिनसे शब्द बन सकते हों और उन्हें मेज़पर पास रखवाती है जैसे च म चः व त क, न लः मल म ल इत्यादि। यों बालक शब्दोंका पढ़ना प्रारंभ करते हैं और घर चल : जल भर आदि वाक्योंको भी पढ़ लेते हैं। रोमन भाषामें मात्राएं होती हैं वा उनकेलिए पूरे साकार अक्षर होते हैं यह तो विदित नहीं है पर मा-त्राएं भी रेतीले काग़ज़की बनी हों तो उन्हें

मंगाके अलग रखके गल, गाल, गला आदि शब्द पढ़ाये जा सकते हैं. स्थानाभावसे पढ़ाना सिखानेकी रीतिका विशेष उल्लेख यहां नहीं किया जा सकता।

रंगीन खड़ियाकी पेंसिलसे बने अक्षरोंपर हाथ फेरनेका अभ्यास करते करते अक्षर सुन्दर बनने लगते हैं। और अक्षरोंपर हाथ फेरते फेरते उनका नाम जल्दी याद आने लगता है और तब छोटे छोटे शब्द पढ़नेका अभ्यास हो जाता है। इन तीन बातोंका अभ्यास हो जानेपर तब बालक हाथमें खड़ियाकी पेंसिल लिये हुए मनमें सोचता है कि जैसे अक्षरोंपर उंगली फेरी जाती है वैसे हो पेंसिलसे खींचा जावे तो शब्द बन जावेंगे। और वह शब्द लिखकर प्रसन्न होता है कि उसने लिखनेकी कला ढूंढ निकाली। प्रत्येक विद्यार्थीका यही भाव होता है। सचमुचमें उसने किसीके बतानेसे लिखना नहीं सीखा है। वह आप ही वर्णोंपर हाथ फेरते और खींचते खींचते शब्दों और वाक्योंको लिखने लगता है।

यदि स्वाभाविक शिक्षाका सामान उपस्थित किया जावे तो शिक्षा भी स्वाभाविक उदय हो सकती है किसीके बतानेकी आवश्यकता नहीं है। करुणासागर परमेश्वरने बालकको दुर्बल बनाके उन्नतिकी शक्ति उसके स्वभावमें ही रक्खी है। उचित सामग्री उपस्थित होना चाहिए। स्वतन्त्रतामें बाधक, बतानेवालेकी कोई आवश्यकता नहीं दीखती।

---

## वायुमंडलपर विजय

### हवाई जहाज़*

[ले० रामदास गौड़, एम. ए.]

हमारे इतिहास पुराणोंमें अनेक कथाएं ऐसी हैं जो साधारण बुद्धिमें नहीं आतीं, जिनमें प्रकाशतः कल्पनामात्रका इतना अधिक अंश पाया जाता है कि बहुतेरे लोग उसे सीधे गप ठहरानेमें तनिक भी आगा पीछा नहीं करते। परन्तु उन्नतिविद्यानुरागी विद्वान इन कल्पनात्मक कथाओंमें भी प्राचीन सभ्यता तथा प्राचीन इतिहासकी यथेष्ट सामग्री पाते हैं और ([illegible]) स्मिथ सरीखे इतिहासतत्त्वज्ञ पाश्चात्य भी पुराणोंके महत्त्वका प्रतिपादन करते हैं। हमारे पौराणिक साहित्यमें इन्हीं कथानकोंमें अनेकबार विमानोंका वर्णन आया है, परन्तु नौका निर्म्माणकी नाईं विमानकी निर्म्माण रीति तथा उसका अनेक कालतक बनता जाना अबतक किसी साहित्यमें नहीं मिला है। मेरा अनुमान है कि विमान सम्बन्धी कथाएं उस कालकी या कल्पकी हैं जिनसे वर्तमानकालसे अनेक विषयोंमें एक दम सम्बन्ध टूट गया है। संभवतः यह कथाएं उस महाविप्लवके पहलेकी हैं—Interglacial कालकी हैं, जिनका वर्णन श्रुतिमें मनुके सम्बन्धमें, बैबिलमें नूहके संबंधमें और यूनानी पारसी आदिके साहित्योंमें भी आया है। यदि इस दृष्टिसे भी कोई विमानोंका निर्म्माण किसी पूर्व युगमें होना न माने, तो कमसे कम इतना तो प्रत्यक्ष है कि भारतवर्षमें "विमान" कोई कल्पनातीत विषय नहीं है।

#### गुड्डी

यह कहना कठिन है कि मनुष्यने गुड्डी उड़ाना कब सीखा। परंतु यह खेल सभी देशोंमें बहुत कालसे चला आ रहा है। गुड्डी उड़ानेवाले जिन पदार्थोंसे गुड्डीकी रचना करते हैं, हवासे भारी ही होते हैं परंतु गुड्डी इस प्रकार बनायी जाती है कि उसके नीचेसे हवा उसे दबाती है और हवा जितनी ही तेज़ होती है गुड्डी उतनी ही ऊंचे चढ़ती है अथवा कमसे कम अपनी ओर डोरको खींचती है। यह एक मोटी सी बात है जिसे हर पतंग उड़ानेवाला जानता है। पतंगोंकी लड़ाई किसने नहीं देखी है। जिन लोगोंने गुड्डी लड़ायी है, भली भांति जानते हैं कि जब एक गुड्डीके साथ ही, पास ही, दूसरी गुड्डी भी फँस

* Aviation वायुयात्रा ]

जाती है, तनाव कितना बढ़ जाता है, खींचनेवालेको कैसी मेहनत पड़ती है।

गुड्डी उड़ानेवालोंकेलिए एक कुतूहलमय प्रयोग करना चाहिए। दो बराबर नापकी बड़ी गुड्डियाँ लीजिए। एक बित्तस्त लम्बाईके डोरोंसे चारों कोने इस तरह बाँधिये कि एक दूसरेकी समतल हों परन्तु परस्पर एक बित्तस्तकी दूरी पर हों। अब नीचेवालीका कन्ना साधकर हवामें उचित रीतिसे उड़ाइये। यह दोनों गुड्डियाँ बड़े वेगसे उड़ती हैं। इनका खिचाव चौगुना हो जाता है। इस प्रकारकी गुड्डियाँ बहुत उड़ायी गयी हैं। अंग्रेज़ीमें इस सिद्धान्तपर बनी गुड्डियोंको box-kite कहते हैं। हम इन्हें दुगड्डी कह सकते हैं।

पतंग-बाज़ोंको तुक्कलका नाम अपरिचित न होगा। बड़े लम्बे चौड़े पतंगका नाम तुक्कल है। तुक्कलका क्षेत्रफल बहुत ज़्यादा होता है। क्षेत्रफलके अनुसार उसका खिचाव भी बहुत बड़ा चढ़ा होता है इसीलिए उसे साधारण नख या डोरसे नहीं उड़ाते। उसे सुतलीपर उड़ाते हैं। तुक्कल धातके तारोंसे भी उड़ाये जा सकते हैं। तुक्कल भी पतंगकी नाईं बाँसकी कमचियोंपर काग़ज़ लपेटकर बनाते हैं। पतंगका काग़ज़ बारीक होता है। तुक्कलका मोटा काग़ज़ होता है, अथवा कपड़ेपर पतला काग़ज़ लपेटा हुआ रहता है।

आतशबाज़ोंके तमाशोंमें एक और चीज़ उड़ायी जाती है। काग़ज़का एक बड़ा गोलाकार थैला बनाते हैं जो भीतरसे खोखला रहता है और एक ओरसे थोड़ा सा खुला रहता है। काग़ज़ तारोंके सहारे रहता है जो उसके खुले हुए मुँहके पास कुछ नीचेकी ओर हटकर मिलते हैं। इस जगहपर तेलसे भीगा हुआ चीथड़ा जला देते हैं। आँचसे गुबारेकी भीतरी हवा फैलकर पतली हो जाती है, इसीलिए गुबारेका पूरा आयतन हवासे हलका पड़ जाता है। हलका होनेसे गुबारा हवामें उठता है और तबतक बराबर ऊँचे चला जाता है जबतक आँच या गरमी बनी रहती है। ठंडकसे गुबारा भारी होकर गिर जाता है।

पक्षियोंको आकाशपर उड़ते देख मनुष्यके मनमें कुतूहल होना स्वाभाविक ही है। बच्चे पर आदि उड़ाते उड़ाते गुड्डी तुक्कल और गुबारेतक उड़ाते हैं, बहुतेरे कबूतर आदि भी उड़ाकर मनको सन्तोष दे लेते हैं। परन्तु ऐसे भी मनुष्य हैं और हुए हैं जिन्हें इतनेपर सन्तोष नहीं हुआ है। अब हम ऐसे असन्तुष्ट मनुष्योंका वर्णन करेंगे।

### गुड्डी और गुबारे

सं० १७१६ (१६६० ई०) में अल्लर्ड (Allard) ने और सं० १७३४ (१६७८ ई०) में (Besnier) बेसनीरने पतंगकेसे यंत्र बनाकर फ्रांसमें उड़नेका प्रयत्न किया था। इनके यंत्रोंको यथेष्ट सफलता न होनेसे सौ बरसके लगभग फिर किसीने इस ढंगका उद्योग नहीं किया।

इन दोनोंके सौ बरस पीछे सं० १८३९ (१७८३ ई०) में मांटगोलफ़ियर बन्धुओंने गुबारों द्वारा उड़नेका उद्योग किया। मांटगोलफ़ियरका गुबारा गरम हवाका गुबारा था और फूस जलाकर हवा गरम रक्खी गयी थी। इसी समयके लगभग केवेंडिशने उज्जन गैसकी खोज की थी। उज्जन गैस सबसे हलकी गैस है। साधारण हवासे साढ़े चौदह गुनी हलकी है। फ्रांसमें शार्ल्स नामक वैज्ञानिकके आदेशसे इसी हलके गैसको भरकर राबर्ट बन्धुओंने उसी वर्ष आकाशयात्रा की।

गुबारेके दो भाग समझने चाहियें। एक तो गैसका थैला जो ऐसे पदार्थका बना होता है जिससे हवा न निकल सके। यह थैला बन्द रहता है। इसे एक गोलाकार जालीमें रखते हैं जिसके निचले सिरेपर यात्रीका झूला बँधा रहता है। थैलेसे गैस भरने और निकलनेके

मार्ग भी होते हैं। गुबारेके आवश्यक अंग यही हैं। परन्तु छोटी छोटी बातोंमें ही बराबर घटाते बढ़ाते और उन्नति करते करते उसमें बहुत कुछ परिवर्तन हो गया। किन्तु शार्ल्सकी रीति स्थूल रूपसे अबतक बरती गयी है। सं० १८६२ ( सं० १८३६ ) तक तो कोई विशेषताका परिवर्त्तन हुआ ही नहीं था।

इस वर्ष लंडनके पासके वाक्सहाल बाग़से एक गुबारा उड़ा जिसमें ८५००० वर्गफुट गैस था। यह चैनेलको पार करके फ्रांसमें नसाऊके नाल्लुकेमें उतर पड़ा। तबसे इस गुबारेका नाम नसाऊ गुबारा पड़ा। सं० १६१६ ( १८६३ ई० ) में एक फ़ोटोग्राफ़रने उससे भी बड़ा गुबारा बनाया जिसमें २ लाख वर्गफुट उज्जन भरा था और १३ यात्री बैठाले गये थे।

साहसी लोग गुबारे बनाकर अपनी जानको हथेलीमें ले आकाशकी यात्राकेलिए चल पड़ते थे। यह न मालूम होनेसे कि आकाश मंडलमें ऊपरी भागपर पहुँचनेपर हमको क्या अनुभव होगा, बड़ी बड़ी यातनाएं भोगी है और कितनोंने अपनी जानें भी खोयी हैं।

जैसे मछलियां जलके समुद्रमें रहती हैं, हम भी इस वायुके २०० मील गहरे समुद्रकी मछलियां हैं। समुद्रमें जो मछलियां ४ मीलकी गहराईपर रहती हैं जलमें ही ३-२-या १ मीलकी गहराईतक भी नहीं आ सकतीं। कारण क्या है? वह जिस दबावपर स्वभावतः रहती हैं, उससे कम दबावपर लाये जानेसे उनका अंग अंग फट जाता है, आंखें निकल आती हैं, वह जीती नहीं रह सकतीं। उसी तरह जो मछलियां ऊपरकी तलीमें रहती हैं ज़्यादा नीचे नहीं जा सकतीं। अधिक नीचे जानेसे उनके शरीरपर इतना दबाव पड़ता है कि उनका जीना असंभव है। पानीमें गोता लगानेवाले मनुष्य २१० फुटसे अधिक नहीं जा सकते हैं। क्योंकि जलका दबाव इतना पड़ता है कि लोहेकी मोटी नली बहुत गहरेमें डालनेसे अत्यन्त चिपटी होकर निकलती है।

जल वायुसे अधिक घना है। वायु हलकी है। पर उसका भी दाब हमारे ऊपर लगभग सात सेर प्रति वर्ग इंच है। परन्तु हम जब ऊँचे पहाड़पर चढ़ते हैं, यह दाब कम हो जाता है। हवामें जितने ऊपर उठिये यह दबाव कम होता जायगा। साथ ही सरदी भी बढ़ती जाती है। हवा पतली होती जाती है। दबाव इतना घट जाता है कि कान नाक आदि रंध्रोंसे लोहू बहने लगता है। सम्वत १८६० (१८०४ ई०) में गेलुसक नामक प्रसिद्ध वैज्ञानिक ४ मीलसे अधिक उड़ा। इतनी ऊंचाईपर गरुड़को छोड़ कोई पक्षी नहीं जाता थोड़ी देरकेलिए कल्पना कर लीजिए कि आप इस ऊंचाईपर हैं। चारों ओर सुनसान है। सन्नाटा है। पृथ्वीपरके शब्द नहीं पहुँचते। और कहींके शब्द नहीं आते। हवा पतली है। आपके नीचे बादलोंके होनेसे पृथ्वीकी हरियाली भी ओझल हो गयी। इस निर्जनता और नीरवतामें सांस लेनेमें कष्ट, और कड़ी सरदी। गेलुसककी नाड़ी अत्यन्त तेज़ हो गयी थी: ६६ प्रति मिनिटसे १२० प्रति मिनिट चलने लगी। सं० १६१६ (१८६२ ई०) में ग्लेशर और काक्सवेल सात मीलके लगभग ऊंचे गये। इस ऊंचाईको और कोई अभी नहीं पहुँचा है। ग्लेशर तो अचेत हो गया और हवाकी कमी और प्रचंड ठंडसे काक्सवेलके हाथ अकड़ गये थे, सो नीचे उतरनेकेलिए गैस खोलनेवाली रस्सी उसने दांतोंसे पकड़कर खींची। तब कहीं उज्जनके घट जानेसे गुबारा नीचे उतरा। एक और उड़ानमें जिसमें Tissandier, Seril और Crocespinelli सवार थे, अन्तिम दो तो हवा बिना गुबारेमें ही मर गये। इन दिनों सांस लेनेकेलिए ओपजन भरकर ले जा सकते हैं परन्तु और सब कठिनाइयां अभी दूर नहीं हुई हैं।

हवाका समुद्र

हम हवाके समुद्रमें सबसे निचले भागमें रहते हैं। सात आठ मील ऊपर उड़कर भी इस समुद्रसे बाहर नहीं जा सकते। भेद इतना ही है कि इस ऊंचाईपर हम हवामें पतले भागमें पहुंच जाते हैं। अबतक गुबारा, पक्षी, गुड्डी जो कुछ हमने पृथ्वीसे उठकर उड़ते देखा है, सभी इसी समुद्रके भीतर हैं। उड़नेका प्रश्न अभी इसी समुद्रके भीतर किसी ऊंचाईपर हवामें बहनेका प्रश्न है। जिस प्रकार पानीसे हलकी चीज़ अगर गहरेमें छोड़ी जायँ ऊपर उठती आएँगी उसी प्रकार गुबारा पृथ्वी तलसे, हवाके समुद्रकी गहराईसे ऊपरको उठता है। यह उठता ही जायगा। यदि इसके हलकेपनको दूर न किया जाय। गुबारेपर अपना यथेष्ट अधिकार रखनेकेलिए गुबारेवाला अपने पास कुछ बोझा रखता है। साधारणतः बोरियोंमें भरकर बालू रखते हैं। जब पतली हवामें पहुँचनेपर गुबारा ऊपर कम उठता है या गैस छेदोंसे निकलकर घट जाती है, एकाध बोरी बालू गिराकर बोझ हलका कर देते हैं। और जब कभी गुबारेकी चाल कम करनी होती है या नीचे उतरना होता है, गैसके ढकनेका मुँह खोलकर थैलेसे उज्जन निकाल देते हैं, इस तरह गुबारा भारी हो जाता है।

साथ ही यह भी याद रहे कि गैसपर हवाका दबाव घटता है तो थैलेमें गैस फैलती है और उसका भीतरी दबाव अपेक्षाकृत अधिक हो जाता है। इसी प्रकार जहां कहीं हवा घनी हुई थैला सिकुड़ जाता है। भीतरी दबाव अपेक्षाकृत घट जाता है। हवा खींचनेवाले पंपके बरतनमें एक छोटा गैसका थैला रखकर इस बातकी परीक्षा कर सकते हैं। हमारे वायुमंडलमें सब जगह हवाकी घनता एक सी नहीं है। कहीं कम है कहीं ज़्यादा, कहीं आंधी या झोंकेसे अधिक हो जाती है, कहीं कम। ऐसी स्थितिमें गुबारेका थैला फैलता सिकुड़ता रहता है जिससे यह सारा यंत्र अजब डावांडोल दशामें रहता है। इस चंचलतासे बचनेको अब गुबारेके उज्जनके थैलेके भीतर एक थैला हवाका भी रहता है। जब उज्जनका थैला फैलने लगता है इसे भीतरी दाबसे सिकुड़ना पड़ता है और उसके फैलनेको जगह मिल जाती है। जब उज्जनका थैला सिकुड़ता है अर्थात भीतरी दाब घटता है तब हवाका थैला फैलकर अधिक स्थान ले लेता है। इस तरह उज्जनका थैला सिकुड़नेसे रोक दिया जाता।

यहांतक जो कुछ वर्णन हुआ उससे स्पष्ट होगा कि सारा गुबारा यदि आयतनकी दृष्टिसे (१) हवासे हलका है तो ऊपर चढ़ेगा, (२) हवासे भारी है तो ऊपरसे नीचे उतरेगा और (३) हवाके बराबर है तो जहां है वहीं बना रहेगा। गुबारा ऐसा बनाते हैं कि तीनों दशाएं मनुष्य अपने अधिकारमें रक्खे। इतनेपर भी गुबारा हवाके ही हाथों रहा। क्योंकि मनुष्य जिधरको चाहे उधरको नहीं ले जा सकता था। हवा जिधर बही उधर ढुले। ऐसी दशामें आकाशयानी एक मोटा रस्सा लटकाकर गुबारेको कुछ धरतीकी ओर बोझल कर देता था। छोटी गुड्डियां पुछल्ला लगा देनेसे कम डगमगाती हैं। यही दशा गुबारेकी भी थी। गुबारेवाला पहले तो हवा देखकर चलता था। अगर उड़नेके पीछे हवाका रुख़ बदला तो गुबारेको हलका करके झट इतने ऊँचे ले जाता था जहां हवाका बहाव अनुकूल दिशामें हो। निदान, गुबारेवाला हवाके वशमें था। अनेक बार हवाके पीछे जान भी दे देता था। जब देखता था कि जोखिम है उज्जनको कम करके उतरता था और रस्सेमें हुक लगाकर इस प्रकार लटकाता था कि किसी पेड़की मज़बूत डालीसे या किसी मकानके किसी दृढ़ भागमें फँस जाय।

### गुब्बारेमें परिवर्त्तन

पहली बार सं० १९०७ ( १८५०ई० ) में गिफ़ार्डने बीड़ीको शकलका ७६ हाथ लम्बा और सबसे मोटे भागमें ८२ हाथके लपेटका गुब्बारा बनाया उसे निश्चित दिशामें चलानेको भापका इंजन बनाया इस प्रकारके परिवर्त्तन विशेषतः फ्रांसके उत्साही आकाशयानी करते आये। सबका यही उद्देश रहा कि गुब्बारा निश्चित दिशामें चलाया जा सके। किसी यंत्रमें इंजन, किसीमें हाथपैर और किसीमें बिजलीका बल लगाते थे। कौंट ज़ेपलिनने १९४४ में अपना पवनपोत बिजलीका मोटर लगाकर बनाया, इसमें दो झूले लम्बे लम्बे थे। दोनों ओर ऊपरके भागमें पूरी शक्तिके प्रपेलक ( propellers ) लगे हुए थे। यदि एकका इंजन जवाब दे दे, दूसरा उसी गतिसे पवनपोतको लिये जाता था। यह पवनपोत पौने तीन सौ हाथ लम्बा और कोई साढ़े छः सौ हाथ लपेटका था। इसका ठाट आल्युमिनमका था और पाटाम्बर चढ़ा हुआ था। झूले बड़ी दृढ़तासे गुब्बारेके पास ही लगे हुए थे।

अबतो जबसे पिट्रोलके इंजन चलने लगे पवनपोतोंकी क्रिया बहुत सहज हो गयी। अब इतने बड़े चुरुटके रूपके थैले बनते हैं जिनमें ३॥ लाख घन फ़ुट गैस आये और ३०-४० वा अधिक मनुष्य बैठ सकें। अटकलसे ३५ हज़ार घन फ़ुट उज्जन २७॥ मन उठा सकता है। अतः इसे ज़ेपलिन पवनपोतमें पौने तीन सौ मन उठानेकी शक्ति है। और गैसोंमें उज्जनकेसे लाभ नहीं है। आजकल पिट्रोल इंजन ३५ से लेकर ४०० घोड़े-की ताक़ततकका लगाते हैं।

### प्रेरण विधि

जैसे नावकी दिशा बदलने अथवा उसे एक निश्चित दिशामें ले चलनेकेलिए पतवार लगी होती है वैसे ही पवनपोतमें भी पतवार लगी होती है। यद्यपि उतनी ही बड़ी नावकी अपेक्षा पवनपोतकी पतवार बड़ी होती है तथापि किर-मिच आदिकी बनी होती है और ठाटमें फैलाकर जड़ी होती है। कारच्वाई भी वैसी ही होती है, भेद इतना ही है कि नावमें बाएं मोड़नेको दहने घुमाना पड़ता है, पवनपोतमें बाएं मोड़नेको बाएं और दहनेकेलिए दहने घुमाना पड़ता है।

पवनपोतको ऊपर नीचे ले जानेकेलिए एक पड़ी पतवारसे काम लेते हैं और प्रेरक चक्रके भ्रमण कोणको बदल देते हैं। प्रेरक ठीक बिजलीके पंखे सा होता है। परन्तु साधारणतः दो ही फलक होते हैं। कभी कभी चार भी रहते हैं। प्रेरकके फलक बहुत बड़े, लम्बे और दृढ़ होते हैं। जो लकड़ीके बनते हैं, कई टुकड़े जोड़कर बनाये जाते हैं। जिस तरह पंखे बिजलीके बलसे चलते हैं ( फ़िल्हाक ) उसी तरह प्रेरक भी पिट्रोल इंजनके द्वारा चलाया जाता है। यह बड़े वेगसे घूमता है। इसकी गति मिनिटमें एक हज़ार चक्करसे अधिक ही रहती है। एक हज़ार चक्करसे कमसे काम नहीं चलता है। यह प्रेरक पंखे वायुमें वही काम करते हैं जो काम लोहेका पेंच लकड़ीके अन्दर करता है। लोहेका पेंच सब किसीने देखा है। इसमें चूड़ियां पेली हुई होती हैं। चूड़ियोंका किनारा तेज़ होता है और कीलके चारों ओर ढालके साथ घूमी हुई होती हैं। नोकदार सिरा काठमें छेद करता है जिसके चारों ओर गावदुम चूड़ियां काटती चली जाती हैं। ज्यों ज्यों चूड़ियां भीतर घुसती हैं काठमें भी चूड़ि-यां बनती जाती हैं। दो चूड़ियोंमें जितनी दूरी होती है, उसी दूरीको नापकर यह हिसाब लग सकता है कि पेंचकी गति काठमें कितनी है।

यदि दो चूड़ियोंमें $\frac{१}{८}$ इंचका अन्तर है और एक सेकंडमें ८ चूड़ियां घुस जाती हैं तो पेंच-की गति १ इंच प्रति सेकंड हुई।

प्रेरक पंखोंके फलक ऐसे ढलवाँ बनाये जाते हैं और इस ढंगसे लगाये जाते हैं कि घूमनेसे वह पेंचकी नाईं वायुमंडलको काटते जाते हैं और जिस तरह पेंच लकड़ीके कणोंको फेंकता जाता है, प्रपेलक हवाको भी फेंकते जाते हैं। इसीलिए इनको प्रेरकपेंच कहना चाहिए। इस पेंचके एक चक्कर घूमनेसे यदि छः फुट गहरा छेद वायुमें हो तो १००० फुट प्रति मिनट घूमनेमें ६००० फुट प्रति मिनिट अर्थात् ७० मील प्रति घंटेके लगभग पवनपोतकी चाल हुई। परन्तु काठ और वायुके छेदमें भेद है। काठके छेदमें पेंच फिसलकर पीछे नहीं आ सकता। वायु तरल है। इसमें फिसलाव ही फिसलाव है। सो, यदि इस फिसलावको ५० प्रति शत अर्थात् आधेके लगभग पीछेकी ओर मान लें तो यह चाल ७० मील प्रति घंटाकी जगह ३५ मील प्रति घंटा रह गयी।

पनडुब्बी नावका चित्र सबने देखा होगा। यह नाव जलके भीतर चलती है। पवनपोत भी पवनडुब्बी नाव है जो पवनके भीतर चलती है। पनडुब्बीमें भी पड़ी पतवार होती है जिससे उसे ऊपर नीचे चलाते हैं। पवनपोतकेलिए बाँस या अल्युमिनियमके चौकोर सपाट ठाटपर किरमिच जड़ देते हैं और पड़ी रखते हैं। इसे जब नीचे झुकाते हैं हवा ऊपरसे दबाती है और पवनपोत नीचेकी ओर चलता है। जब इस पड़ी पतवारको ऊपरको ओर उठाते हैं तो उसे हवा नीचेसे दबाती है और पवनपोत ऊपरको उठता है। अब स्पष्ट है कि प्रपेलक और इंजन चलानेको और खड़ी और पड़ी पतवार दहने बाएं ऊपर नीचे फेरनेको, और उड़ानका दानवकार थैला—इस प्रकारका सामान लेकर पवनपोतके संभालनेमें विमानीको कोई कठिनाई न होनी चाहिए।

इतनेपर भी अबतक पवनपोत पूरा पूरा व्यवहार साध्य मान नहीं हुआ है, क्योंकि अब भी हवाके झोंकेसे लाचार रहता है। बड़ेसे बड़े पवनपोत ऐसे झोंकोंमें तहस नहस हो गये हैं जिन्हें विमानवाला सहज ही सह लेता है। इस दोषको दूर करनेकेलिए, लचकदार, अर्धदृढ़ और दृढ़ तीन तरहके पवनपोत बनते हैं। लड़ाईमें कुछ और परिवर्त्तन हुए हैं जिनका पता पीछे चलेगा। एक एक पवनपोतमें कई लाख रुपये लगते हैं और उसके चलानेका नित्यका खरचा ४०) या ५०) से कम नहीं है। विमानका वर्णन फिर करेंगे*।

---

## शब्दका चित्र

[ ले० महेशचरण सिंह, बी. ए. एम. एस सी इत्यादिक ]

जब हमारे सामने कोई चित्र प्रस्तुत होता है तो हम कहते हैं कि हम चित्र देखते हैं। परन्तु वस्तुतः वह चित्र केवल एक रंगों द्वारा सीमित स्थानके सिवा और कुछ भी नहीं होता, इसी प्रकार जब हम शब्द सुनते हैं तो हमें शब्दका बोध तो होता है परन्तु वस्तुतः वह भी एक चित्रके ही समान है जिसक सीमा और परिमाण निश्चित हैं। दूसरे शब्दोंमें शब्द भी ताल और स्वरसे सीमित एक चित्र है, परन्तु यद्यपि आम और इमली दोनोंके ही चित्र केवल लेखनीके विशेष कम्पनोंके समूहके परिणाम हैं तौ भी यथार्थ वह एक ही नहीं। इसी प्रकार यद्यपि सारे ही शब्द वायु कम्पनके समूहोंके परिणाम हैं तौ भी वह रूपमें भिन्न भिन्न होते हैं।

शब्दोंका रूप होता है और वायुको भिन्न भिन्न

* यह इस व्याख्यानका प्रारंभका अंश है जो लेखकने परिषत्के सामने सचित्र और सप्रयोग मार्च, १९१६ में दिया था।

Sound शब्द शास्त्र ]

अन्तर तथा वेगसे कम्पायमान करनेसे भिन्न भिन्न रूप पैदा किये जा सकते हैं। इस सिद्धान्तको पहले पहल भारतवर्षके ऋषियोंने ही समझा था। वह इस विचारको इतना गहरा ले गये कि उन्होंने राग और रागिनियोंकी मूर्ति भी बना डाली—इन मूर्तियोंके बिगड़े हुए रूपोंका चित्र आज भी पुराने राग पुस्तकोंमें मिलता है, यद्यपि कालान्तरके प्रभावसे उन मूर्तियोंके आकार भी रावण और कुम्भकर्णके नाईं हास्य-जनक ही शेष रह गये हैं। भारतके विज्ञान वेत्ताओंने केवल यही पता नहीं लगाया था कि शब्दोंका चित्र होता है बल्कि उन्होंने आगे बढ़-कर यह भी जान लिया था कि इन कम्पायमान शब्द चित्रोंका जीवधारियोंके मस्तिष्कपर तथा अन्य प्राकृतिक वस्तुओंपर क्या असर होता है। वह अन्तमें यहांतक पहुंचे कि उन्होंने मनुष्योंके मस्तिष्ककी अवस्था कृत्रिम रीतिसे बदलनेका यत्न इन्हीं शाब्दिक चित्रों द्वारा सफल रूपसे किया-मंत्र तंत्र जादू टोनाका आधार यही शब्द चित्र ही हैं। मंत्रोंका प्रयोग रोग निवारणार्थ हमारी आर्य वैद्यक ग्रन्थोंमें भी पाया जाता है, जिनको देख बहुतसे डाक्टर मुंह सिकोड़ उन्हें धोखा टट्टी (quakery), इन्द्रजालके नामकी उपाधि देते हमारे पुरुषोंकी घोर निन्दा करते हैं और भारतीय वैद्यकको संसारसे निर्मूल करनेकी चेष्टा करते हैं। यदि सोचा जावे तो यह टूटे फूटे निरर्थक शब्द किन्हीं बहु-मूल्य शब्दोंके बिगड़े हुए भयानक चित्र हैं जैसे टूटे हुए पिथौरा मन्दिरके खम्भे किसी शान्दार इन्द्रप्रस्थके पद चिन्ह हैं। कुछ हो कहनेका तात्पर्य यह है कि शब्दोंका चित्र होता है और जिसे शब्दका चित्र देखना हो वह एक सुरीले चीमटेको [ tuning fork ] बजा-कर शीघ्रतासे एक धुंए लगे शीशेपर दौड़ावे ऐसा करनेसे तारके शब्दका चित्र बन जावेगा।

इस चित्रके सत्यताका प्रमाण यह है कि यदि इस चित्रपर फिर तार दौड़ाया जावे तो वैसाही शब्द पैदा होता है। शब्दके चित्रोंका ज्ञान और उन चित्रोंके बने हुए रूपोंसे कठिन और जटिल प्रयोग लेनेके प्रमाण तो हमें अपने वैद्यक तथा तान्त्रिक साहित्य द्वारा मिलते हैं परन्तु उसके सरल उपयोगोंके साधारण ज्ञान-का पता अपने साहित्यमें अभीतक नहीं मिला। यह ज्ञान महाशय एडीसन धालालावासी द्वारा ही ठीक ठीक मिला है। जबसे उन्होंने फोनो-ग्राफ़की प्लेटपर शब्दोंका चित्र बनाकर फिर सुई उसी चित्रपर चलाकर वही शब्द पैदा करके दिखा दिया तबसे यह स्पष्ट हो गया कि शब्द करनेसे चित्र और उसके स्पष्ट चित्रसे वही शब्द फिर उत्पन्न किया जा सकता है।

### चित्रोंमें अन्तर

यदि हमारे सामने नाना प्रकारकी मूर्तियां लायी जावें अथवा नाना प्रकारकी आकृतिवाले मनुष्य लाये जावें तो हम उन्हें एक दूसरेसे विलग तो अवश्य सुगमतासे कर लेते हैं परन्तु यदि हमसे कोई कहे कि उन सबका यथोचित चित्र कागज़पर खींच दो तो सिवाय श्रेष्ठ चित्रकारके दूसरा समर्थ नहीं कि वह ऐसा कर सके। इसका क्या कारण है? जब हम सब आकृतियोंको विलग कर सकते हैं तो क्या कारण है कि विलगायक चिन्होंको दृष्टिमें रख-कर चित्र न बना सकें। इसका कारण यही है कि जहां एक ओर परमात्माका दिया हुआ चक्षु यंत्र सारे मनुष्योंका एकसा होता है जिस-के कारण हम बिना प्रयत्न किये ही एक क्षण-मात्रमें हज़ारों मूर्तियोंके भेदोंको मन ही मन विश्लेष कर सकते हैं और उनको एक दूसरेसे विलग कर सकते हैं, तहां दूसरी ओर हमारे सबके पास वह साधन समान नहीं होते जिनके द्वारा हम इन आकृतियोंके चित्र फिरसे निर्माण कर सकें: परञ्च गुणी चित्रकार यही कार्य सु-विधासे कर सकते हैं यहांतक कि बाज़े चित्रकार

तो केवल एक बार देखकर ही फिर स्वतंत्रतासे चित्र बना देते हैं। चित्रकारोंको वह विधि भी मालूम है जिस विधिसे और जिन साधनोंसे मस्तकपर सूक्ष्म लिखे हुए चित्रोंको फिर जीवित रूप कागज़ वा कपड़ेपर दिया जाता है। यह वही कर सकता है जो चित्रकारीके नियमोंसे परिचित हो, जिसे प्रकाश, रंग, रेखा, रूप आकृतिका विशेष ज्ञान हो। इसी प्रकार

#### शब्द चित्रोंमें भेद

होता है जो केवल अनुभव, परीक्षण और अध्ययनसे प्राप्त होता है क्योंकि बिना विशेष ज्ञानके बहुतोंको तो साधारण स्वरोंके शब्दोंका भेद प्रतीत नहीं होता शब्दके चित्रोंका भेद तो अलग रहा। साधारण शब्दोंका भेद तो हर कोई समझ सकता है, यथा कुत्ते, स्यार, सीटी, ढोल, सितार, हारमोनियमके शब्दोंको हर कोई पहचान सकता है, परन्तु यह हमारे कानके यंत्र किस प्रकार करते हैं इसका उत्तर कठिन है। शब्द भेद करनेकी शक्ति भी प्रत्येक मनुष्य-की समान नहीं होती, क्योंकि जब बहुतसे बाजे मिलाकर बजाये जाते हैं तो बहुतोंको केवल एक ही स्वर सुनायी देता है। यदि बाजे आपुसमें मिले भी न हों तो भी साधारण मनुष्य को यह पता नहीं लगता कि कौन सा स्वर अलग है, पर अभ्यासी कान उन सब बाजोंको एक स्वर बजते भी पहचान लेते हैं और स्वर न मिलनेपर तो मानों उनका कान ही फट जाता है। इन सब घटनाओंसे यही सिद्ध होता है कि प्रत्येक शब्दका अलग रूप होता है और उसको अभ्यस्त कान देख सकते हैं। यदि रूप-का निरूपण कर दिया जाय तो शब्दकी रचना हो सकती है, जैसा फ़ोनोग्राफ़में प्रत्यक्ष दिखायी देता है।

#### शब्दका वाहक वायु

यदि हम एक बंद कमरेमें जहां वायुका संचार अधिक न हो एक खूंटीमें डोरा लटका-कर उसमें एक ताव काग़ज़ तख़्तीकी नाईं लटका दें और फिर उसके समानान्तर अपने

हाथका पंजा वा पंखा रख कर गज़की दूरीसे

अपने हाथको झटका देकर अपने पेटकी ओर खींचें तो हम यह विचित्र घटना देखेंगे कि वह काग़ज़ स्वयम् हमारी ओर खिंचैगा। इसका कारण केवल यह है कि हमारे हाथने वा पंखे-ने हवाके स्तम्भ समतुल्यको बिगाड़कर उसमें धक्के दे दिये अथवा उसने अपने समीपवर्ती हवाकी तहोंको दबाकर घना कर दिया। हवाके संकोचके कारण पंखेके स्थानमें शून्य हो गया जिसके भरनेको पंखेके पीछेकी वायु आगे बढ़ी और इन्हीं धक्कोंकी कार्य शृङ्खला-से प्रभावित काग़ज़ भी आगे चल पड़ा। इसी प्रकार जब हम शब्द करते हैं तो वायुकी गति-में कम ज़्यादा परिवर्तनोंके कारण शब्द एक स्थानसे दूसरे स्थानपर जाते हैं। दूसरे शब्दोंमें शब्दका वाहक वायु है, यदि वायु न हो, हम अपना मुंह बन्द करके शब्द करें तो हमारी बातको कोई नहीं सुन सकता परन्तु मुंहसे शब्द निकलते ही पासके पुरुष सुन सकते हैं। इसका मूल कारण यही है कि हमारी ज़बानके हिलनेसे हवामें विशेष रूपके न्युनाधिक धक्के पड़ते हैं जिनकी गति और वेगके तद्रूप चित्र लगातार आगे बढ़ते जाते हैं। यहांतक कि वह वायुके कम्पन हमारे कानके परदेको भी कम्पायमान करते हैं। इन कम्पनोंकी गणना तथा इन कम्पनोंके संकेत रूप चित्रोंको तत्काल ही कानसे बंधी हुई श्रवण-नाड़ी पढ़ती जाती है, अथवा हम यों भी कह सकते हैं कि शब्द सुनायी पड़ने लगता है। यदि शब्द ऐसी शीघ्रतासे या ऐसा मंद किया जावे कि श्रवणनाड़ीको वायु कम्पन संकेतोंके समझ-नेकेलिए पर्याप्त समय न मिलै वा वायु कम्पनों में इतना बल न हो कि वह कानके परदेमें कम्प-

गति प्रकट करें तो इन अवस्थाओंमें साधारण मनुष्योंको कुछ सुनायी नहीं देता।

शब्द वाहक नल

दफ़्तरोंमें बोलने नल द्वारा दूरके कमरोंसे बात चीत करते हैं क्योंकि नलके अन्दर कम्पनों-की शक्तिका क्षय जल्दी नहीं होता और उनका प्रतिक्षेप ज्योंका त्यों दूरतक जाता है।

विद्युत् शब्द

नल द्वारा भी शब्द अधिक दूरतक नहीं जा सकता. इसलिए आवश्यकता पड़ी कि बिजली द्वारा शब्द दूरतक पहुँचाया जाय। जिस प्रकार शब्द करनेसे वायु प्रभावित होती है और उस परिवर्तनका परिणाम कानको अनुभव होता है। इसी प्रकार शब्दकी गतिकी चोटसे विद्युत्की गतिकी तीव्रतामें कमी तथा बेशी हो जाती है। विद्युत् तीव्रताको तेज़ी तथा आहिस्तगीके कारण विद्युत्-चुम्बकत्वमें कमी वा बेशी होती है। इस सिद्धान्तकी क्रिया सूक्ष्मश्रावक यंत्र द्वारा भली भांति दिखायी गयी है। इसका विशेष रहस्य केवल यह है कि यदि शुद्ध कोयलेको किसी विद्युत् चक्रमें बांध दिया जावे और उस कोयलेके समीप शब्द किया जावे तो शब्द प्रापक द्वारा हम उस विद्युत् प्रवाहके परिवर्तनको जान सकते हैं जो उस विद्युत्चक्रमें होता है। इसी कोयलेके गुणसे लाभ उठाकर शब्द तार बनाया गया है।

सनीचर देवता सहायक

यदि हम किसीके कानमें कुछ बात कह दें और वह मनुष्य विमानपर बैठकर तुरंत हमारी बात लंकापुरी पहुंचकर वहां किसी ऐसे मनुष्य-से कानमें कह दे जिसे बात हज़म न होती हो और वह फ़ौरन हमारी बात दुहरा दे और वहां पर खड़ा हुआ हमारा मित्रभी बात सुन ले इसी प्रकार विद्युत् समाचारकी क्रिया होती है। हम पहले सनीचरदेव रूप कोयलेके कानमें बात करते हैं. पर हमारे सनीचर देवता इन्द्रका दिया हुआ विद्युत् प्रवाह नामक दुपट्टा ओढ़े हैं जो हलके धक्के लगनेसे भी हिलकर कांपने लगता है और अपनी चोटोंकी ख़बर अपने स्नेही लोहेको देता है। लोहा यह शब्द अपने रिश्तेदारोंसे कहता है और वह रिश्तेदार चिल्लाने लगते हैं। लेकिन लोहेकी भाषा समझे कौन? लोहेके शब्दोंको सुनकर दूसरा लोहा ज्योंका त्यों शब्द करता है और हमारा मित्र पास खड़ा है पर सुनता नहीं अथवा अब सनीचर देवताकी चादररूपी विद्युत् प्रवाहके लंबे लंबे सूत्रों द्वारा हमारे शब्दोंका चित्र लंका तो पहुँच गया और उस धक्का रूपीको पढ़कर विद्युत् प्रवाह प्रिय लोहा भी प्रभावित हुआ, उसके भाई बंद जो समीप हैं वह भी कांपने अथवा चिल्लाने लगे। अब लोहेकी भाषा समझे कौन अथवा लोहेके कम्पन चित्रोंको पढ़े कौन यह कम्पन सुनसान समीपवर्ती वायुमें हो रहे हैं या यों कहिये कि तपोवनमें बैठे साधु-का शब्द धक्केके रूपमें लंकापुरीतक वाहन वायु तथा विद्युत् ले गये और विद्युत्ने अपनी बहन चुम्बकत्वको भी वही धक्के देकर साधुका शब्द सौंप दिया जिसने तदनुकूल कम्प अपने स्नेही लोहेके टुकड़ोंको दे डाला, वह भी पागलकी तरह वायुमें कांप कांपकर सुनाने लगे। शब्दके प्रेषकका काम तो हो चुका पर सुननेवाला कोई नहीं जिस वायु द्वारा शब्द तपोवनमें जिस रूप और आकृतिके किये गये थे उसी प्रकार उसी वायुमें लंकामें भी वायुका कम्पन हो रहा है पर सुनायी नहीं देता, जैसे हम अपने घरमें दूसरे घरकी बात नहीं सुन सकते क्योंकि यदि हम शकरक़न्दके फूलके आकार की तथा बड़े तुर्माकार नलिकाको लगा ध्यानसे सुनें तो अस्पष्ट शब्दभी साफ़ सुनायी देगा; इसलिए उस लोहेके टुकड़ेको जो कम्पायमान होकर शब्दोंके चित्र बना रहा है एक तुर्माकार नलीसे

घेर दूँ तो कान लगानेसे तपोवनका किया शब्द लंकामें सुनायी देगा।

विद्युत् समाचार सिद्धान्त

इसमें जादू कोई नहीं है केवल इस बात-को निश्चय जानकर कि शब्द करनेसे वायुमें धक्के लगते हैं और वायुमें धक्के लगानेसे शब्द पैदा होता है ध्यानमें रखकर इतना प्रपञ्च रचा गया है। किया केवल यही की गयी है कि पहले वायुके धक्कोंके तद्रूप गतिशील विद्युत्-को धक्के दिये गये और फिर गतिशील विद्युत् धक्कोंके तद्रूप विद्युतोत्पन्न चुम्बकत्वको दिये गये। चुम्बकके तद्रूप धक्के लोहेके मुलायम पतले पत्रको दिये गये जिसका परिणाम यह हुआ कि शब्द फिर प्रगट हुआ। इस शब्दको स्थान परिवर्तन करनेकेलिए विद्युत्के वाहक तारकी बड़ी आवश्यकता है। इसलिए इस खोजकी ज़रूरत हुई कि बिना तारके विद्युत् द्वारा शब्द दूरतक कैसे पहुंचाया जाय। इस खोजमें पातालदेशवासी महाशय फॉरेस्टने बड़ा परिश्रम किया और अब बिना तार भी शब्दका स्थान परिवर्तन किया जा सकता है।

---

## बिजली कैसे बनाई जाती है

[ ले॰ निहालकरण सेठी, एम. एस-सी

बहुत प्राचीन समयमें भी यह ज्ञात थी कि अंबरको ऊनी वस्त्रसे घिसनेसे उसमें एक ऐसी शक्ति-का संचार हो जाता है जिससे वह हलका वस्तुओंको चुम्बककी भांति अपनी ओर आकृष्ट कर लेता है। माला फेरकर जिस समय ऋषि मुनि उसे धरतीपर रखते थे तो घास आदि उसमें चिपक जाते थे। किन्तु जहांतक हमें पता लगता है उस समय बिजलीके विषयमें इतना ही ज्ञान था। कई हज़ार वर्षोंतक इससे अधिक और कुछ मालूम न हुआ परन्तु सन् १५९९ वि० में डाक्टर गिलबर्टने (Gilbert) प्रकाशित किया कि अम्बरके अतिरिक्त और भी बहुतसे पदार्थोंमें ऐसी ही शक्ति पैदा हो सकती है, और उन्होंने कांच, गंधक, चपड़ा इत्यादि साधारण वस्तुओंमें भी इस अद्भुत आकर्षणकी योग्यता बतलायी। यह सुनकर इसकी परीक्षा करनेकेलिए बहुतोंने प्रयोग करना आरंभ किया। साधारण रबड़की कंघीसे हम भी बहुत सरलता पूर्वक इस बातकी परीक्षा कर सकते हैं। यदि छोटे छोटे काग़ज़के टुकड़े मेज़पर रख दें और बालोंसे घिसी हुई कंघी उनके पास लावें तो वे आकृष्ट होकर उससे चिपकनेका प्रयत्न करते हैं। बालोंके पास ले जानेसे वे भी कंघीकी ओर दौड़ते हैं। इस ही बातको और अच्छी तरह देखनेकेलिए उन लोगोंने एक हलकी कागकी गोली बनाकर रेशम-के तागेसे लटका दी। कांचकी एक छड़ लेकर रेशमके कपड़ेसे उसे घिसा और उस गोलीके पास ले गये, वह गोली तुरन्त आकृष्ट हो गयी। परन्तु बहुत शीघ्र ही यह बात मालूम हो गयी कि यदि यह गोली कांचको स्पर्श कर ले तो फिर आकृष्ट होना तो एक ओर वह तो उससे ऐसे दूर भागेगी जैसे कोई उसे बड़े बलसे धक्का लगाता हो, अथवा यों कहिये कि जैसे साधु पुरुष पहले तो छली पुरुषके बाहरी आडंबरों-को देख भक्ति पूर्वक उसकी ओर आकृष्ट होता है किन्तु निकट परिचय होनेपर पोल खुल जाती है और वह अपने धन और प्राणकी रक्षार्थ उससे दूर भाग जाता है, और फिर कितना ही प्रलोभन दीजिये वह कदापि निकट भी नहीं आता। इस गोलीके इस कुतूहलजनक व्यापारसे सबको आश्चर्य होना स्वाभाविक ही था। इसी आश्चर्यके कारण उस गुप्त रहस्यको जान लेनेके प्रयत्नमें पुनः अधिकाधिक प्रयोग किये जाने लगे। आख़िर यह भी मालूम हुआ

कि कुछ घिसे हुए पदार्थ आपसमें एक दूसरे-को बिना स्पर्श किये ही दूर भागते हैं, विशेषकर एक ही पदार्थ द्वारा घिसे हुए एक ही पदार्थके दो टुकड़े जैसे रेशमसे घिसा हुआ एक कांचका टुकड़ा दूसरे इस ही प्रकार घिसे हुए कांचके टुकड़ेसे। क्यों न हो जो पुरुष स्वयं कुली हो वह दूसरेके कुलमें कब आसकता है परन्तु अधिक प्रयोगों और अधिक विचारसे यह स्पष्ट हो गया कि सब पदार्थोंको घिसनेसे यद्यपि उनमें आकर्षण शक्तिका संचार होता है तो भी सबकी एक ही सी दशा रहती है—यह मत ठीक नहीं। वास्तवमें उनमेंसे कुछ एक दशामें रहते हैं और कुछ उसके सर्वथा विपरीत दशामें—जिन दो वस्तुओंकी एक सी दशा है वे पास लानेपर एक दूसरेको दूर रखनेकी चेष्टा करती हैं, और जिन दो वस्तुओंकी दशाएं विपरीत हैं वे एक दूसरेको अपनी ओर खींचती हैं। इन दो दशाओंके नाम धनात्मक और ऋणात्मक बिजली रख दिये गये। धनात्मक बिजली-वाली वस्तु ऋणात्मक-वालीको खींचती है, और धनात्मक-वालीको दूर भगा देती है। इस प्रकार ऋणात्मक भी धनात्मकको खींच लेती है परन्तु स्वजातीय ऋणात्मकको पास नहीं आने देती।

इसके पश्चात् यह पता लगा कि जब दो वस्तुएं घिसी जाती हैं तब एकमें धनात्मक बिजली उत्पन्न होती है और दूसरीमें ऋणात्मक। परन्तु यह बात दिखलानेकेलिए यह आवश्यक जान पड़ा कि घिसी हुई वस्तुको कांच, गंधक या रबड़पर रखना चाहिए। किसी दूसरी वस्तुपर रखनेसे उसकी बिजली उड़ जाती थी। धातुकी बनी हुई वस्तुओंके लिए तो यह अत्यंत ही आवश्यक था। बहुत दिनोंतक तो इसका कारण नहीं समझमें आया और यह अज्ञेय जान पड़ने लगा कि क्यों जब हाथमें पीतल लेके उसे जानवरके बालोंसे घिसें तब तो केवल बालोंमें ही बिजली हो और जब पीतलको कांचपर रखके उन्हीं बालोंसे इस ही प्रकार घिसें तब दोनों वस्तुओंमें बिजली पैदा हो जावे। अंतमें किसी प्रकार बुद्धिने यह बात जान पायी कि कांच या रबड़ पीतलमें उत्पन्न बिजलीको वहांसे भागने नहीं देते; हाथमें पकड़नेसे बिजली ज्यों ही उत्पन्न होती है त्यों ही भाग भी जाती है। विशेष प्रयोगों द्वारा यह शीघ्र ही ज्ञात हो गया कि समस्त पदार्थोंके दो विभाग किये जा सकते हैं: एक तो वे जो बिजलीको निकल भागनेसे रोकते हैं; और दूसरे वे जो ऐसा नहीं करते। इन विभागोंके अवरोधक (Nonconductors) और वाहक (Conductors) नाम रख दिये गये। कांच, गंधक, रबड़, मोम, कपड़ा, वायु, आदि तो प्रतिरोधक हैं और धातुएं वाहक हैं। परन्तु लकड़ी, काग़ज़, रुई इत्यादि ऐसे भी पदार्थ हैं जो न अच्छे प्रतिरोधक ही हैं और न आसानीसे बिजलीको भागने ही देते हैं। इन्हें "अर्धवाहक" कहने लगे।

इन बातोंसे विद्वानोंको बिजलीका कुछ शौक़ हो गया और इसके द्वारा बड़े कार्य भी करनेकी चिन्ता करने लगे। ऑटोवान गैरिकने (Otto von Guerrick) ही पहले पहल एक यंत्र बनाया जिससे बहुत बिजली बनायी जा सकती थी। इस यंत्रमें केवल एक गंधकका गोला अपनी धुरीके चारों ओर घूमता था, और उसे गैरिक अपने हाथोंसे दबाये रखता था। हाथकी रगड़से बिजली बन जाती थी। इस भद्दे परन्तु उपयोगी यंत्रकी सर आइज़क न्यूटन (Sir Isaac Newton) आदि विद्वानोंने बहुत उन्नति की और अठारहवीं शताब्दिके अंतमें बड़े बड़े वृत्ताकार कांचोंको रेशमसे दबाकर बड़े वेगसे घुमाकर बिजली बनाने लगे थे। धनात्मक बिजली कांचपर उत्पन्न होती थी। और यदि यह यंत्र वाहक पदार्थके तारसे जोड़ दिया

जाता तो सब बिजली तारमें होकर बह जाती। यदि काँचको बराबर घुमाते रहें तो इस तारमें होकर भी बिजलीका प्रवाह होता रहेगा। इस बिजलीके बहनेका नाम आगे चलकर विद्युत् धारा (current) पड़ गया।

यहाँ यह कह देना भी उचित जान पड़ता है कि आकाशमें जो बिजली चमकती दिखलायी देती है वह भी रगड़से ही बनती है। बादलोंके आपसकी और वायुकी रगड़ ही इसका कारण है। यह बात फ्रैंकलिनने (Franklin) पतंग उड़ाकर उसमें आकाशकी कुछ बिजली एकत्रित करके दिखलायी है। इस बिजलीमें भी ठीक वैसे ही गुण होते हैं जैसे कि रगड़कर बनायी हुई बिजलीमें।

इसके पश्चात् बहुत समयतक बिजलीके विषयमें अधिक जाननेका उद्योग ढीला सा पड़ गया, यों ही शौक़से कुछ विद्वान इस ओर ध्यान देते थे किंतु इन अद्भुत और कुतूहल जनक बातोंका वैज्ञानिक रीतिसे अध्ययन करनेको कोई प्रयत्न नहीं हो रहा था। यंत्र द्वारा बिजली पैदा करना अच्छा अवश्य मालूम पड़ता था परंतु बहुत परिश्रम करनेपर भी थोड़ी सी बनती थी। और बन जानेपर वह बिजली किसी कामकी नहीं जान पड़ती थी। एक दिन अध्यापक गैल्वेनी (Galvani) कुछ मेंढ़ककी टाँगोंसे अपने छात्रोंको यह दिखा रहे थे कि यदि मशीन द्वारा बिजली बनाकर इन टाँगोंमेंसे बहायी जावे तो निर्जीव टाँगें सजीवकी भांति झटका लगावेंगी। परंतु उन्होंने देखा कि बिना मशीनके ही, जब मशीन उस कमरेमें भी न थी, तबही उन टाँगोंने वह झटका लगा दिया। वे बड़े आश्चर्य में डूब गये—और उन्होंने चाहा कि यही बात पुनःकर देखें। थोड़े परिश्रमके पश्चात् उन्हें सफलता हुई और अंतमें उन्हें यह ज्ञात हो गया कि यदि दो भिन्न धातुओंके तार लेकर उनका एक एक सिरा तो मेंढककी टाँगसे छुआ दें। और दूसरे सिरे आपसमें मिला दें तो वैसा ही झटका लग जाता है। इस क्रियासे मेंढ़ककी टाँगमें बिजली बन जाती है। यही गैल्वनीने स्थिर किया। किंतु दूसरे अध्यापक वोल्टाने (Volta) कहा कि इस बिजलीके बननेमें बिचारे मेंढ़ककी टाँगका कोई काम नहीं। वह तो दो भिन्न धातुओंके स्पर्शसे ही बन जाती है। वोल्टाका मत ही आखिर ठीक निकला। इस आकस्मिक घटनासे बिजली बनानेके कार्यमें बहुत कुछ उन्नति हुई।

अपने सिद्धांतको पुष्ट करनेकेलिए वोल्टाने एक यंत्र बनाया। जिसका नाम अबतक वोल्टाकी ढेरी (Volta's pile) है। इस यंत्रसे इस नवीन आविष्कारकी भविष्य लाभदायकता भली भाँति प्रकट होती थी। उन्होंने जस्ते और तांबेके गोल गोल रुपयेके आकारके बहुतसे टुकड़े बनाये। फिर एक लकड़ीपर तांबेका टुकड़ा रखकर उसपर जस्तेका टुकड़ा रख दिया। तब एक गीले कपड़े या ब्लाटिंगकी तह देकर पुनःतांबेका और उसपर जस्तेका टुकड़ा रख दिया। फिर गीले कपड़ेकी तह दी और इसही प्रकार कोई ३०-४० टुकड़े प्रत्येक धातुके जमा दिये। सबसे ऊपर जस्ता रहा। अब एक तारका एक सिरा नीचेके ताँबेसे मिला दिया और दूसरा ऊपरके जस्तेसे तो मालूम हुआ कि इस तारमें होकर बिजली बह रही है (चित्र नं० १)
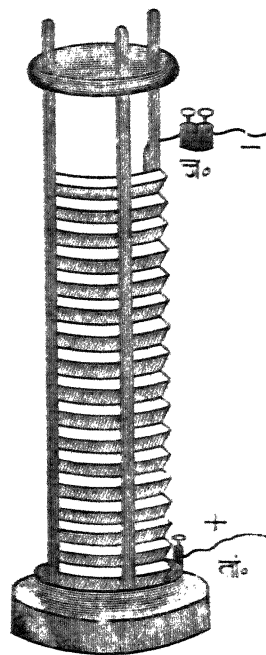
चित्र नं० १

यहीं न ठहरकर वोल्टाने इसमें बहुत उन्नतिकर एक और यंत्र बनाया। इस बार तांबे और जस्तेके दो पृथक पृथक टुकड़े उन्होंने जल मिश्रित गंधकके तेज़ाबमें रख दिये (चित्र नं० २) इन टुकड़ोंको एक तार द्वारा मिला देनेपर उसमें बड़ी प्रबल विद्युत् धारा बहती हुई जान पड़ी। और इस प्रवाहकी शक्ति ऐसे बहुतसे यंत्रोंको मिला देनेसे और बड़ा बरतन लेकर बड़े बड़े टुकड़े रख देने मात्रसे बहुत सरलता पूर्वक बढ़ायी जा सकती थीं। यह सीधा सा यंत्र जल मिश्रित तेज़ाबमें रखे हुए ताँबे और जस्तेके टुकड़े ही आजकल वोल्टाका विद्युत्पात्र (simple voltaic cell) कहलाता है। और आज भी सारे संसारमें यही सीधा सीधा पात्र बहुतसे परिवर्त्तित रूपोंमें मनुष्य समाजका अत्यन्त लाभदायक कार्य कर रहा है।
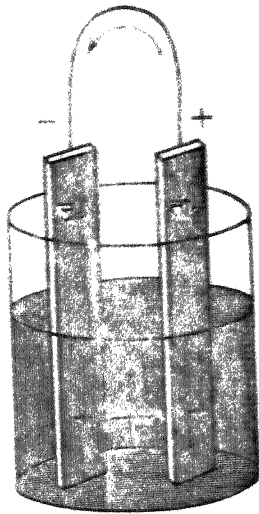
चित्र नं० २

इसमें परिवर्तन करनेकी आवश्यकता यों हुई कि यद्यपि इसके द्वारा पहले तो बहुत बलवान विद्युत् प्रवाह होता था। किंतु थोड़ी ही देरमें उसकी शक्ति घट जाती थी और अंतमें प्रायः वह बंद ही हो जाती थी। इसका कारण यह था कि बिजली जिस प्रकार बाहर तारमें बहती थी उस तेज़ाबमें होकर भी उस ही प्रकार बहती थी। और ऐसा होनेसे उस तेज़ाबका विश्लेषण हो जाता था। एक भाग जो हाइड्रोजन (hydrogen) होता थी जाकर उस तांबेके टुकड़ेपर इकट्ठी हो जाती थी। और उसे अपना कार्य नहीं करने देती थी। इसका प्रतीकार यही हो सकता था कि या तो हाइड्रोजनको बनने ही न दें। या कोई ऐसी युक्ति निकालें जिससे जितनी शीघ्रतासे वह बने उतनी ही शीघ्रतासे वह फिर किसी वस्तुसे मिला दी जावे। ताकि जाकर तांबेपर न जमे। यह कार्य करनेकेलिए अगणित प्रकारके विद्युत्पात्र या बाटरियां बनायी गयीं और बहुत कुछ कार्य होने भी लगा।

इनमेंसे एक जो सारे संसारमें इस समय भी बहुत काम आती है उसका नाम लैक्लशी सेल (Leclanche cell) है। इसमें नौसादरके पानीमें एक जस्तेकी छोटी सी छड़ पड़ी रहती है। और एक मिट्टीका बिना रोगन किया हुआ बरतन भी रखा रहता है। इस बरतनमें एक कारबनका (कोयलेके शुद्ध स्वरूप) एक टुकड़ा रखा रहता है। और बची हुई जगहमें मैंगनीज़ डाइऑक्साइड (manganese dioxide) नामक पदार्थ भर दिया जाता है। यह कारबन ठीक तांबेका सा कार्य करता है। और नौसादरका पानी भी तेज़ाबसे अधिक सुलभ और कम कष्ट दायक होता है। और मैंगनीज़ डाइआक्साइडमें इतनी आक्सिजन होती है कि यदि हाइड्रोजन बहुत शीघ्र न बने तो वह उस सबको जल रूप कर देती है। परन्तु दुर्भाग्य वश हाइड्रोजन अधिक शीघ्रतासे बनती है। और जाकर कारबनपर एकत्रित हो जाती है। तब यदि कुछ समयतक इसे आराम दिया जाय तो वह हाइड्रोजन भाग जाती है। और यह सेल पुनः काम लायक बन जाती है। यही कारण है कि इस सेलका केवल ऐसे कामोंमें उपयोग हो सकता है जिनमें थोड़ी थोड़ी देरकेलिए विद्युत् प्रवाहकी आवश्यकता हो। यदि कहीं घंटोंका काम हो तो यह काम नहीं दे

सकती। घंटी बजाने इत्यादि कार्यों में इसका ही प्रयोग किया जाता है।

तार—घरोंमें साधारण तथा डैनियलका बनाया हुआ विद्युत्पात्र रहता है। ( Daniell's cell ) इसमें तेज़ाबमें एक जस्तेका पत्र पड़ा रहता है। एक मिट्टीका बरतन भी होता है जिसमें नीले थोथेका घोल और तांबेका पत्र रहता है। कुछ नीले थोथेके टुकड़े भी पड़े रहते हैं, ताकि ज्यों ज्यों घोलमें थोथे-की कमी होती जावे यह टुकड़े घुलते आवें। इसमें यह थोथेका पानी हाइड्रोजनको हज़म कर जाता है, चाहे वह कितनी ही शीघ्रतासे क्यों न बने। इस कारण चाहे कितनी ही देर काम करिये, चाहे कितनी ही प्रबल धाराका उपयोग कीजिये, जबतक इस पात्रमें आवश्यक वस्तुएं मौजूद रहेंगी तबतक हाइड्रोजन एक-त्रित हो ही नहीं सकती।

इनके अतिरिक्त बीसियों प्रकारके विद्युत्पात्र काममें लाये जाते हैं-किन्तु वे सब इन्हीं दोके रूपान्तर मात्र हैं, किसीमें थोथेके स्थानमें शोरे का तेज़ाब और तांबेके स्थानमें कारबन या प्लैटिनमका उपयोग होता है जैसा बुनसन (Bunsen cell) या ग्रोवके पात्र (Grove cell)। किसी किसीमें मिट्टीके बरतनकी भी आवश्यकता नहीं पड़ती, जैसे; डाइक्रोमेट पात्र (dichromate cell) इसमें पोटाश डाइक्रोमेटको ही तेज़ाबके साथ मिला देते हैं, इस ही प्रकार और भी बहुत प्रकारकी बैटरियां हैं किन्तु उन सबका वर्णन करना न आवश्यक ही है और न परिमित स्थानके कारण उचित ही है।

इतना हो जानेपर तो बिजलीके बहुतसे उपयोग मनुष्यको ज्ञात हो गये और इन बैटरियों द्वारा बिजली बनानेका कार्य भी होने लगा। कोई साठ वर्षतक बिजली बनानेके कार्यमें और कोई हेर फेर या उन्नति न हुई, किन्तु इस ही बीचमें परेगो (Arago) और डेवी (Davy) नामक दो विद्वानोंने एक अद्भुत बातका पता लगा लिया कि यदि लोहे-की एक छड़के चारों ओर तार लपेटकर
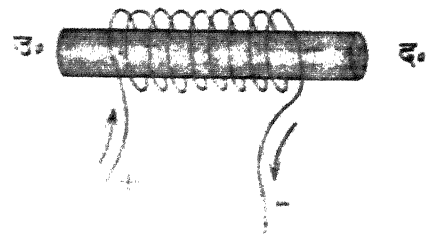
चित्र नं० ३—बिजलीका चुम्बक

(चित्र नं० ३) उस तारमें विद्युत प्रवाह किया जाय तो वह लोहेकी छड़ चुम्बक बन जाती है-किन्तु यदि प्रवाह बन्द कर दिया जाय तो उसमेंसे वह आकर्षणका गुण चला जाता है। इस प्रकारके चुम्बकको बिजलीका चुम्बक (electromagnet) कहने लगे-यह चुम्बक साधारण चुम्बकसे बहुत अधिक शक्ति-वाला होता है। इसके बाद ही बिजलीकी रोशनी, बिजलीका अंजन इत्यादिका आविष्कार हुआ। सहस्रों रुपये व्यय कर इन्हें वोल्टाके विद्युत्पात्रों द्वारा काममें लानेके प्रयत्न होने लगे-सफलता भी हुई-रोशनी भी होने लगी-जैकोबीने एक नौकाको इन्हींसे चलाया-पेजने (Page) इन्हीं-की सहायतासे एक रेलगाड़ी भी चलायी-परंतु बहुत शीघ्र ही यह भली प्रकार ज्ञात हो गया कि इस प्रकार बिजली बनाकर उससे प्रकाश करने अथवा इंजन चलानेमें इतना अधिक व्यय होता है कि कभी भी यह बातें व्यापारिक सफलता नहीं प्राप्त कर सकतीं। इस बातसे वैज्ञानिक निराश न हुए, और सं० १८३१ में फैरेडेने (Faraday) आविष्कार किया कि बिना वोल्टाकी बैटरीके, बिना किसी पदार्थके खर्च किये भी बिजली बन सकती है, आवश्यकता है केवल एक चुम्बकको तारकी गिड्डीके निकट हिलानेकी।

चित्र संख्या ४ में जब चुम्बक गिट्टीके मध्यके छिद्रमें घुमाया जाता है तो तारमें होकर
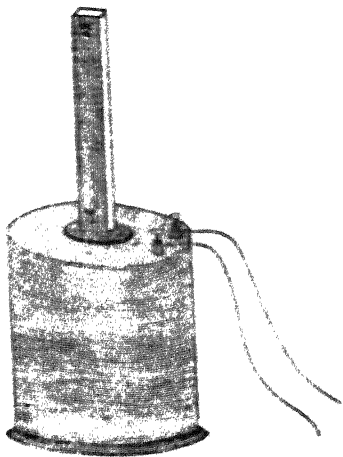
चित्र नं० ४—तारकी गिट्टी और चुम्बक

बिजली बहती है, और जब उसे पुनः बाहिर निकालते हैं तो फिर भी बहती है-किन्तु इस बार उलटी ओर। यदि चुम्बकको स्थिर रखके गिट्टीको चुम्बकपर चढ़ा दें और फिर उतारलें तो भी ठीक ऐसा ही फल होता है। इतनी सीधी और इतने महत्वकी बातके आविष्कारने सब विद्वानोंको चकित कर दिया, और केवल वैज्ञानिक ही नहीं, कल कारखाने चलानेवाले उद्योगी पुरुषोंने भी इस ओर ध्यान देना प्रारम्भ किया। क्योंकि उन्होंने विचार किया कि यदि केवल चुम्बक और तारकी गिट्टीके हिलने मात्रसे बिजली पैदा हो सकती है तो एक भापका इंजन उनको हिलानेकेलिए लगादेनेसे ही जितनी चाहें उतनी बिजली बन जायगी।

इसके पश्चात कोई ३६ वर्षतक इसही बातका प्रयत्न होता रहा कि किसी प्रकार सरलतासे तारकी गिट्टी और चुम्बकका आपेक्षिक हलन चलन होजाय-इस समयके अंततक कई यंत्र इस कार्यके करनेको बन गये थे, और उनसे प्रायः बिजलीसे प्रकाश करनेका कार्य किया जाता था, इन मशीनोंमें बहुत करके सबसे उत्तम यह थी जिसे इस समय सीमेन्स की पुरानी मशीन कहते हैं, यह यंत्र जिस सिद्धान्तपर बनता है वह चित्र संख्या ५-७ से समझमें आजायगा।

लोहेका एक बेलनसा बनाकर उसकी लम्बाईकी दिशामें एक खांचा बनाकर (चित्र संख्या ५ क) उसमें तार लपेटा गया, इस तार लिपटे हुए बेलन-(५ ख) को बहुत बलवान चुम्बकके सिरोंके बीचमें घुमानेका प्रबंध किया गया-यदि हम चित्र संख्या ७ को देखें तो समझना और भी अधिक सरल हो जायगा। इसमें
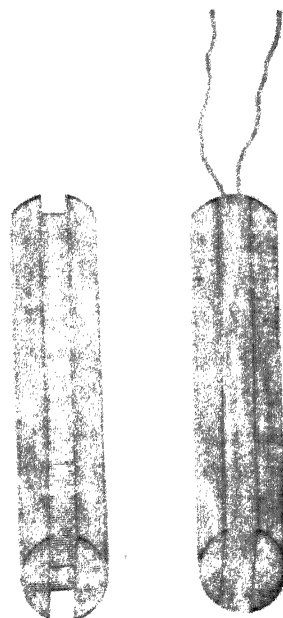
क चित्र नं० ५ ख

चुम्बकके दोनों सिरोंके बीच एक तारका चक्कर घूम रहा है-इस चक्करके सिरे धुरीपर लगे हुए दो अर्ध गोलाकार टुकड़ोंसे जुड़े हैं। ये टुकड़े भी घूमते रहते हैं-और इन टुकड़ोंको पीतलकी दो पत्तियां जिन्हें ब्रश कहते हैं दबाये रहती हैं। ये पत्तियां घूमती नहीं, बाहरी तारसे जिसमें होकर हमें बिजली ले जाना हो जुड़ी रहती हैं। तारके घेरेमें चुम्बकके निकट रहनेसे जो बिजली उत्पन्न होती है वह कुछ देर एक ओर बहती है और फिर उलटी ओर बहने लगती-इस प्रकार एक चक्करमें दो बार दिशा परिवर्त्तन करती है। यह बिजली तब अर्ध गोलाकार टुकड़ोंसे पीतल-

की पत्तियोंमें होकर रोशनीके स्थानको चली जाती है-परन्तु बाहरी तारमें बिजलीकी गति एक ही दिशामें रहती है-क्योंकि जब बिजली दिशा परिवर्त्तन करती है ठीक उस ही समय अर्ध गोलाकार टुकड़े भी एक ब्रशको छोड़कर दूसरेसे मिल जाते हैं। इस कारण प्रत्येक ब्रशमें होकर बिजली सदा एक ही दिशामें बहती है। इस प्रकार दिशा परिवर्तनशील बिजलीको एक ही दिशामें बहानेवाला यंत्र कम्युटेटर (commutator) कहलाता है।

सारे यूरोपमें इस ही मशीनके रूपान्तरोंसे काम लिया जाने लगा। परन्तु १८६९ में ग्राम (Gramme) नामी एक फ्रांसीसीने इसमें एक नयी युक्तिका प्रयोग कर इस मशीनको इतना उन्नत बना दिया कि उसके कारण विद्युत्के विज्ञानको जो उत्तेजना मिली थी उसका प्रभाव अब भी घटा नहीं है। यह प्रत्यक्ष ही है कि सीमैन्सकी मशीनमें गिट्टीको चाहे कितनी ही शीघ्रतासे क्यों न घुमाया जाय, दिशा परिवर्त्तनके कारण बाहरी तारमें भी धाराका वेग कम कभी अधिक होता रहेगा। ग्रामने सोचा कि यदि एक गिट्टीके स्थानमें बहुतसी गिट्टियां लगा दी जावें तो यह सम्भव है कि जिस समय प्रवाह एकमें कम हो, उस समय दूसरीमें अधिक हो और इस प्रकार बाहरी तारमें प्रायः एक ही वेगका प्रवाह हो सके। इस विचारके फल स्वरूप उसने एक मशीन बनायी, जिसमें लोहेके पहियेके चारों ओर बहुत सी गिट्टियां लगी थीं जो आपसमें जुड़ी हुई थीं और धुरीके चारों ओर एक एक पीतलके टुकड़ेसे भी जुड़ी थीं। इन टुकड़ोंपर पहलेकी भांति दो ब्रश लगे थे, जिनका सम्बंध बाहरी तारसे था। (चित्र नं० ६) इसमें प्रत्येक गिट्टी सीमैन्सकी मशीनके समान ही काम करती थी-किन्तु जिस समय एक गिट्टीसे उत्पन्न प्रवाह बन्द होनेको होता था उस ही समय दूसरीसे उत्पन्न प्रवाह बहुत बलवान होता था इस कारण बाहिरी तारमें वेगकी घट बढ़ नहीं होती थी।

सीमैन्सकी कम्पनीने झट विचारा कि इसमें लोहेके पहियेकी तो कुछ विशेषता है नहीं, केवल बहुत गिट्टियां लपेटनेके लिये ही इसका उपयोग ग्रामने किया था। उन्होंने उसही समय उद्योग आरंभ कर दिया। कुछ ही समयमें उन्होंने नयी सीमैन्सकी मशीन बना डाली, इसमें उन्होंने पहियेका उपयोग न करके बहुतसे तार एक लम्बे बेलनपर ही लपेटे और तब प्रत्येक
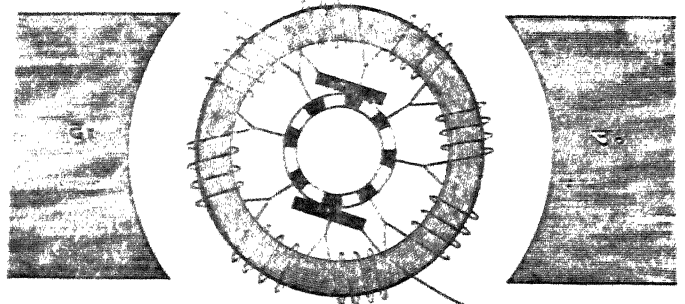
चित्र नं० ६—ग्रामका पहिया

गिट्टीका कार्य ठीक वैसाही था जैसा कि पुरानीमें।

इस समय सारे संसारमें यही दो प्रकारकी मशीन काममें आ रही हैं। अपनी अपनी आवश्यकताओंके अनुसार और राजकीय स्वत्व प्राप्त करनेकी अभिलाषासे कुछ थोड़े बहुत परिवर्त्तन भी कर दिये गये हैं परन्तु वे बहुत विलक्षण और उपयोगी नहीं। कुछ दो चार ऐसी भी मशीनें बनी हैं जिनका विवरण इनसे पृथक

है, परन्तु अन्तर इतना नहीं है कि यहां इस छोटे से लेखमें उनका भी वर्णन किया जाय। इन्हें आजकल डायनेमो (Dynamo) कहते हैं (चित्र नं० ७)
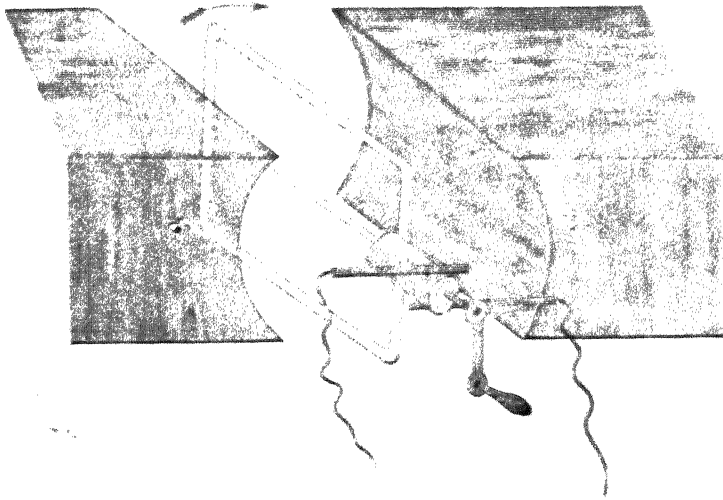
चित्र नं० ७

अब दिशा परिवर्त्तन शील धमासे (alternating current) भी काम लेना मालूम हो गया है। इससे इन मशीनोंके ब्रश और पीतलके छोटे छोटे टुकड़ोंसे भी छुट्टी मिल गयी। इसके अतिरिक्त ऐसी धाराके उपयोगमें व्यय भी थोड़ा होता है, इसही कारण आजकल समस्त यूरोपमें ऐसेही यंत्रोंका प्रयोग किया जाता है।

इन मशीनोंमें बड़े बड़े चुम्बकोंकी आवश्यकता होती है। चुम्बकोंके स्थानमें बड़े बड़े लोहेके टुकड़े लगा दिये जाते हैं केवल उनके चारों ओर तार लिपटा रहता है, जिसमें होकर मशीनसे बननेवाली बिजली बहाई जाती है, इससे वे चुम्बक बनजाते हैं-और अधिक बल पूर्वक बिजली बनानेके काममें सहायता करते हैं।

परन्तु इनमें एक अड़चन है। इन मशीनोंसे प्रवाह तबतक ही होता है जबतक कि इंजन द्वारा यह चलती रहें। जहां इनका चलना बंद हुआ कि चुम्बक और तारका आपेक्षिक हलन चलन भी रुक गया। फिर विद्युत प्रवाह कहां। बहुतसे कार्योंकेलिए बिजलीका उपयोग किया जा सकता है किन्तु यह बड़ी कठिनाई है कि सब कहीं भापका इंजन लगाना पड़ता है, और जब काम लेना हो तब ही इंजन भी चलना चाहिये इस अड़चनको दूर करनेके प्रयत्नमें भी विद्युतशास्त्रके वेत्ता लग गये और गैस्टन प्लैन्ट (Gaston Plante) नामक वैज्ञानिकने एक उपाय निकाल ही डाला, जिससे बिजली मशीनसे बनाकर इकट्ठी करली जाती है। फिर जिस समय आवश्यकता हो उससे काम लिया जा सकता है। इस यंत्रका नाम उसने विद्युत्कोश (storage cell) रखा, इसमें दो सीसेके पत्र जल मिश्रित गंधकके तेज़ाबमें रक्खे रहते हैं। यह पुनः वोल्टाके पात्र की भांति है। अंतर केवल यह है कि दोनों पत्र एकही धातुके होनेके कारण इसमेंसे विद्युत् प्रवाह नहीं होता। परन्तु प्लैन्टने मालूम कर लिया कि यदि मशीनसे इसमें होकर बिजली भेजी जावे तो एक पत्रपर लाल पर-आक्सइड आफ़ लैड (red oxide of lead) जम जाता है, और दूसरा साफ सीसा ही रहता है। इस प्रकार ये दोनों पत्र भिन्न पदार्थोंके बन जाते हैं। और इस कारण वोल्टाकी सैलकी भांति उसका भी उपयोग हो सकता है।

यह तो प्रत्यक्ष ही है कि इसका नाम विद्युत्कोष (storage cell) ठीक नहीं क्योंकि इसमें कोई वस्तु इकट्ठी नहीं होती। बाहिरसे जो बिजली उसमें होकर बहाई जाती है उसके

कारण वह एक वोल्टाका विद्युत्पात्र बन जाता है। इस ही कारण वैज्ञानिक लोग इसे गौण पात्र (secondary cell) कहते हैं। उसके द्वारा जो प्रवाह होता है वह उस प्रवाहका उल्टा होता है जो इसे बनाते समय इसमें होकर भेजा गया था। इस प्रवाहके कारण दोनों पत्र पुनः एक से हो जाते हैं। तब प्रवाह बन्द हो जाता है। और फिर इसमें मशीनसे प्रवाह भेजना आवश्यक होजाता है। अथवा इसे पुनः विद्युन्मय करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त इस सेलसे अधिक बिजली, अधिक समयतक ले सकनेके-लिए प्लैन्टको इसे कई महीनोंतक बार बार विद्युन्मय करना पड़ता था. तब कहीं कुछ काम लायक बनती थी-इस कामको शीघ्रतासे करने-केलिए फ़ावरने १८८१के लगभग एक उपाय निकाल डाला। उसने दोनों पत्रोंपर लाल पर-आक्साइडकी एक तह जमादी—इससे काम शीघ्रतासे होने लगा। थोड़े दिनोंतक तो इससे वैज्ञानिकोंका बहुत उत्साह बढ़ा परन्तु फिर थोड़े ही समयमें मालूम हो गया कि अभी इसमें बहुत दोष थे. एक तो इनमें बोझ बहुत होता था. दूसरे यह सीसेके यंत्र टूट फूट बहुत ही जल्दी जाते थे. तबसे अबतक इसमें बराबर उन्नति हो रही है. और अब तो जहां जहां डायनमोका हर समय चलाना आसान नहीं वहां प्रायः इसके ही द्वारा काम लिया जाता है।

पाठकोंके हृदयमें यह विचार उत्पन्न हुए बिना न रहा होगा कि यद्यपि फ़ैरेडेके आविष्कारने उन मशीनों और यंत्रोंका बनाना संभव कर दिया जिनमें वोल्टाकी बैटरीकी अपेक्षा अधिक अच्छा और कम व्ययसे काम हो जाता है, तो भी इन मशीनोंमें शक्ति बहुत अधिक व्यय करनी पड़ती है। जितनी शक्तिका इसमें व्यय होता है उसका बहुत छोटा भाग हमें बिजलीके रूपमें मिलता है। पहले हमें भट्टीमें कोयला जलाना पड़ता है. इस कोयलेकी गरमी द्वारा बैलटमें (boiler) पानी गरम कर भाप बनाते हैं, तब इस भापको इंजनमें ले जाकर उसे हलन चलन शक्तिके रूपमें परिणत् करते हैं, और इस इंजनको डायनमोसे जोड़कर वहीं इसको पुनः विद्युत्शक्तिके रूपमें लाते हैं। इस प्रकार मशीनसे बिजली बनानेमें चार पृथक पृथक कार्य करने होते हैं और प्रत्येकमें शक्तिका बहुत कुछ घाटा
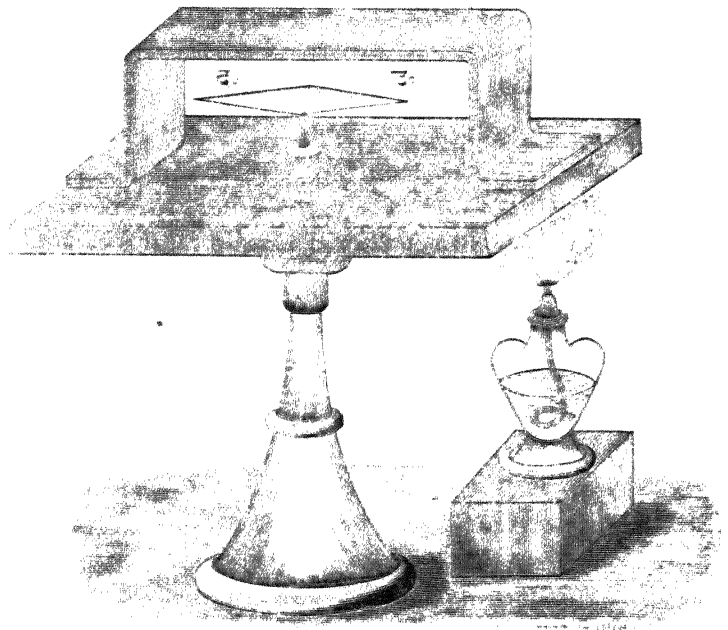
चित्र नं० ६—सीबेककी युक्ति

हो जाता है अंतमें प्रायः कोयलेकी गरमीका दशांश ही बिजलीके रूपमें उपलब्ध होता है। इस कारण वैज्ञानिक लोग गरमीसे एकदम बिजली बनानेकी कोशिशमें बहुत दिनोंसे हैं। हमें याद रखना चाहिये कि सीबेकने यह मालूम किया था कि यदि तांबेका एक मुड़ा हुआ टुकड़ा सिलिनियमके ( ) टुकड़ेपर रखा जावे, (चित्र संख्या ६) और एक सिरा गरम किया जावे और दूसरा ठंडा ही रहे तो इन दोनों धातुओंमेंसे बिजली बहने लगेगी और यह बात उनके बीचमें रखी हुई चुम्बककी सुईके घूम जानेसे प्रत्यक्ष होजाय-गी। इसके आधारपर बहुतसे आविष्कर्त्ताओं-ने भिन्न भिन्न धातुओंको मिला मिलाकर उनके जोड़के स्थानोंको गरम कर करके बिजली बनानेकी चेष्टा की है, किन्तु अभी कुछ विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई। इतना अवश्य हो गया है कि यह आशा की जा सकती है कि कुछ समय-यमें जैसी होनी चहिये वैसी सफलता अवश्य प्राप्त हो जायगी। इसमें कठिनाई यह है कि ऐसे हज़ारों जोड़ तैयार किये जावें तब कहीं काम लायक़ हों। क्लैमोन्डके बनाये हुए यंत्रसे सुनते हैं कि बहुत बड़ा प्रकाश किया जा सका है।

इसके अतिरिक्त एडीसनने ( Edison ) हालमें ही एक दूसरी बातका उपयोग किया है। लोहेको अधिक गरम करनेपर उसका चुम्बक नहीं बन सकता इस ही बातको लेकर उन्होंने कार्य आरंभ किया। यद्यपि इसमें अभी कोई बहुत बड़ी सफलता प्राप्त नहीं हुई है तौ भी यह आशा की जा सकती है कि इस बातके भी बहुत विलक्षण परिणाम निकलेंगे।

यद्यपि इस समय गरमीसे एकदम बिजली बना लेनेका कार्य पूर्ण नहीं होगया और कोई यंत्र ऐसा नहीं बन सका जिसके द्वारा यह कार्य सिद्ध हो जाय किन्तु इसमें सफलता प्राप्त अवश्य होगी ऐसा जान पड़ता है। आजकल इसके ही पीछे वैज्ञानिक लोग पड़ रहे हैं और हज़ारों स्थानोंपर इसका प्रयत्न हो रहा है। जिस समय यह उपाय भी मनुष्यके हाथमें आ जायगा उस समय संसारको कितना लाभ पहुँचेगा उसका अंदाज़ा करना कोई कठिन कार्य नहीं। वास्तव-में यह एक नया ही युग होगा।

जबतक यह उपाय ज्ञात नहीं होता तबतक मनुष्यने बहुतसी प्राकृतिक शक्तियोंका उपयोग डायनमो चलानेकेलिए करना सीख लिया है। जलप्रपात इत्यादिसे अब यह कार्य किया जा रहा है। बम्बईमें हालमें ही जलका एक बांध बनाकर उस जलकी शक्तिसे डायनमो चलाने-का प्रबंध देश भक्त उद्योग कुशल टाटाने किया है। इससे अनुमान किया जाता है कि बम्बई-के कारखानोंका खर्च आधा रह जायगा।

# वैज्ञानिकोंकी जिज्ञासा

[ ले० शिवनारायण द्विवेदी ]

भारत-वर्षने आजसे हज़ारों वर्ष पूर्व वेदान्त विषयक ज्ञान निःसन्देह अपूर्व और उच्च कोटिको प्राप्त किया था; इसे प्रमाणों द्वारा सिद्ध करनेकी रंच मात्र भी आवश्यकता नहीं है। किन्तु, आज भारत संसारसे पीछे है, इसे भी सिद्ध करना व्यर्थ है। भारतमें विचारदक्षता बहुत अधिक थी; किन्तु क्रियदक्षता सदासे बहुत कम रही है। बिना क्रियावाले विचार दृढ़ विश्वास नहीं पैदा कर सकते; हमारे देशके अमित ज्ञानके लोप होने-का एक यह भी कारण है। क्रियाके द्वारा सिद्ध किये हुए शास्त्रीय सिद्धान्त देशकी जिज्ञासा-को जगा देते हैं, और जिज्ञासा ही ज्ञान और उन्नतिका मूल कारण है। जहाँ जिज्ञासा नहीं है, वहाँ ज्ञानका भी अभाव है। जिस मनुष्य-के भीतर जिस विषयकी जिज्ञासाकी प्रबलता

रात दिन निवास करती है, उसे इस बातकी ज़रा भी परवा नहीं होती कि उस विषयको पूरा जान पानेपर कुछ द्रव्य प्राप्ति भी होगी या नहीं ? बिना जिज्ञासाके उन्नति होना कठिन ही नहीं, असम्भव है। जिस समय जिज्ञासाकी प्रबलता हो जाती है, उस समय संसारकी उन्नति हुए बिना नहीं रहती। छोटे बच्चे कितनी शीघ्रतासे सब विषयोंके जानकार बनते हैं ; कारण यही है कि उनकी जिज्ञासा बड़ी प्रबल रहती है। प्रत्येक पदार्थको देखकर बच्चा सैकड़ों प्रश्न करता है। इससे कहना चाहिए कि मनुष्य-को मनुष्यत्व केवल जिज्ञासासे प्राप्त होता है। प्रसिद्ध अमेरिकन यात्री डा० कुक हिमालयके निर्जन प्रदेशोंकी खोज करनेको जानेवाले थे, इसका कारण क्या है ? जब जब सूर्यका खग्रास या कंकणाकार ग्रहण होता है तब तब जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस आदिके बड़े बड़े विद्वान् अपनी अपनी दूरबीनें लेकर दूर दूर देशोंसे वेध करते हैं, इसका कारण क्या है ? जिस समय भारतमें प्लेगका सपाटा ज़ोरसे चल रहा था और सगा भाई बीमारीके डरसे अपने भाईको छोड़कर भाग जाता था, उस समय हॉफकिन जैसा उच्च कोटिका विद्वान् अपनी जान जोखममें डालकर प्लेग-तत्वकी खोजमें क्यों लगा था ? इन सब प्रश्नोंका उत्तर है ज्ञानतृष्णा, जिज्ञासा। अपने ज्ञानकी प्यास बुझानेकेलिए विद्वानोंने रात दिन परिश्रम कर-के ज्ञानके सरोवर भर दिये हैं, जिनमेंसे निकले हुए ठंडे झरने संसारको शान्ति देते हैं। बहुतों-का विचार होगा कि दक्षिण ध्रुवके यात्री कप्तान स्काटने जो चार साथियों सहित अपने प्राण खो दिये, इसमें उसने कौन सी बुद्धिमत्ता-का काम किया ? एक मासिक पत्रमें सम्पादक-ने लिखा था, कि, "कप्तान शाकलटन दक्षिण ध्रुवकी खोजमें गये। कप्तान कुक और एडमिरल पेरी उत्तर ध्रुवपर गये, डाक्टर स्वेनहेडिनने हिमालय पार किया, पर इन लोगोंके ऐसे विकट प्रयत्नोंसे संसारको क्या लाभ हुआ यदि ? ध्रुवका पता न लगा होता या हिमालय न उलांघा गया होता तो क्या किसी-का काम रुका रहता ? यह माना कि इनके ध्रुवपर जानेसे एक विशेष जातिकी मच्छी और कुछ पक्षियोंका पता चला, पर यदि इनका पता न लगा होता तो क्या किसीको रोटी हज़म न होती ? हाँ, यदि वहाँकी मिट्टी सोनेकी होती या वहाँ पारस पत्थर मिलते तो हमारे परिश्रमकी सफलता थी। आलसी, निरुद्योगी और हतज्ञान मनुष्य इससे अधिक और क्या सोच सकते हैं" निस्सन्देह उक्त सम्पादकके विचार भारतवासियोंके विषयमें एक एक अक्षर सत्य हैं।

"स्ट्रैंड मेगज़िन" एक प्रसिद्ध मासिकपत्र है। इसने अपने जून १९१० के अंकमें 'ध्रुवकी खोजसे लाभ' विषयपर अनेक प्रसिद्ध विद्वानों-के लेख छापे हैं। दक्षिण ध्रुवकी खोजमें अपनी बलि देनेवाले प्रसिद्ध कप्तान स्काट्ने, उक्त प्रश्नका उत्तर देते हुए लिखा था, कि, "इसका लाभ हमारे देश और हमारे बच्चोंको होना संभव है। शायद हमारी इस यात्रासे भूगर्भ-शास्त्र, ज्योतिष और रसायन शास्त्रकी कोई नयी बात मालूम हो। नहीं तो, कमसे कम हमारे बच्चे इससे साहसका पाठ सीखेंगे। जिस समय सिर झुकाकर संसार कहेगा कि, दक्षिण ध्रुवकी खोज सबसे पहले एक अँग्रेज़ने की, उस समय हमारी जाति और हमारा देश स्वाभिमानसे अपना मस्तक ऊंचा कर सकेगा।" प्रसिद्ध यात्री वर्क ग्रेविहन्सके भी यही वाक्य हैं कि ऐसी साहसी बातें हमारी भावी सन्तान-को साहसी और तेजस्वी बनायेंगी। सारांश यह है कि इन सब उद्योगोंका कारण ज्ञानकी प्यास बुझाना है। वास्तवमें ज्ञानकी प्यासका बढ़ना ही देशकी उन्नतिका लक्षण है।

वास्तविक ज्ञान बड़े बड़े ग्रन्थोंके देख जानेसे नहीं बढ़ता। धन पानेकी इच्छा रखकर कोई ज्ञानके समुद्रमें नहीं उतर सकता। हाँ, फिर उसे कुछ प्राप्ति हो जाय यह दूसरी बात है किन्तु यह निश्चित नहीं। प्रत्येक विषयकी बारीक जांच ही उस विषयकी पूरी जानकारी है। सब आविष्कारोंकी जड़ यही है। इससे पुराने सिद्धान्तोंके भ्रम भी दूर हो जाते हैं और उनका संशोधन भी हो जाता है। भारतवासियोंका ज्योतिष विषयक ज्ञान बहुत पुराना है, पर योरुपमें थोड़े समयमें इस विद्याका विकास हुआ है। वहां इसके विकासका कारण केवल उन लोगोंकी ज्ञान तृष्णा थी, और अब वे इस विद्याकी उन्नति करके वायुयान द्वारा मंगल आदि ग्रहोंपर भी पहुंचनेका विचार कर रहे हैं। हमारे यहाँ ज्योतिः शास्त्रकी इतनी उन्नति हुई थी कि विवाह, यज्ञोपवीत आदि बड़े कामोंसे लगाकर छोटे छोटे कामोंतकमें इसे पूछते हैं; पर उदासीनताके कारण इस अत्युच्च शास्त्रमें बड़े बड़े संशोधन होने आवश्यक तो हो गये किन्तु वे होते नहीं। १९७१ के भाद्र मासमें चन्द्र ग्रहणके विषयमें गवालियरके पंचांगमें लिखा था कि ७ बजकर १६ मिनिटपर शुद्ध होगा किन्तु चन्द्र बिम्ब ८ बजकर १४ मिनिटपर शुद्ध हुआ। इसी ढँगका पन्द्रह बीस मिनिटका अन्तर तो प्रायः सदा ही रहता है। पर कभी कभी वह घण्टों पहुँच जाता है, और कई बार तो बिलकुलही उलटा होजाता है। गणित और सारणीके भी सुधारकी आवश्यकता है। बहुत बार बिचारे भोले भक्त दशमीके ही दिन एकादशी कर डालते हैं। दक्षिण भारतमें शुक्ल पक्षसे मास प्रारम्भ होता है और उत्तरमें कृष्ण पक्षसे। पर, लोगोंके चित्तमें इसके संशोधनकी बात कभी न आयी होगी। पहले ज्ञानकी तृष्णा बढ़ानी चाहिए, तभी ज्ञानसे आनन्द हो सकता है।

जो ज्ञान जिज्ञासाके द्वारा प्राप्त किया जाता है, वह सांसारिक और आर्थिक लाभ पहुँचाता ही है। यदि कोई मनुष्य केवल ज्ञान प्राप्तिकी ही इच्छासे शरीर-शास्त्रका अध्ययन करे, और वह धमनी, नाड़ी, स्नायु, फेफड़े, पट्ठे, मांस, रक्त, अस्थि आदि विषयोंकी बारीक जाँच करे, तो यह कब संभव है कि उसे स्वस्थ रहनेकी विधि, हड्डी टूटने, खूनके घूमने और एक धातुसे दूसरे धातुके परिवर्तन आदिका पूरा ज्ञान न हो। मतलब यह कि उसकी जानकारी काम आवेगी ही। यह भी निश्चित है कि जिस विषयकी जितनी बारीक खोज की जायगी वह उतना ही अधिक उपयोगी भी बन जायगा, और समय आनेपर उस खोजसे सम्पूर्ण संसार लाभ उठा सकेगा। गवालियरकी फ़ौजमें एक महाराष्ट्र विद्वान श्रीयुत मल्हारशास्त्री थे। आपने गणित, ज्योतिष, त्रिकोणमिति, रेखागणित आदिका पूर्व मननपूर्वक विशेष अभ्यास किया था। फ़ौजमें प्रचलित शत्रुकी दूरी मापनेके यंत्र मेकामिटर स्टुअर्डस् टेलीमिटर आदिका आपने सूक्ष्म निरीक्षण किया था। जब आपकी पेंशन हुई तब आपने उस यंत्रका सुधार करना सोचा और पहले कागज़की नालियाँ बनाकर आज़माइश की। इन परीक्षामें ठीक उतरनेपर आपने उन्हें धातुका बनाया। गवालियर नरेशने शास्त्रीजीके बनाये हुए इस यंत्रकी शिक्षा कई सिपाहियोंको दिलायी। जब इन सिपाहियोंकी परीक्षा ली गयी तब तो महाराज और भी विशेष प्रसन्न हुए, क्योंकि इस यंत्रसे शत्रुकी दूरी शीघ्र और सरलतासे मालूम हो जाती थी। इसी समय इंग्लैंडके सैनिक कार्यालयने ( war office ) सूचना निकाली कि, "शत्रुकी दूरी मापनेके यंत्रका संशोधन होना आवश्यक है, क्योंकि वर्त्तमान यंत्रोंमें दो मनुष्योंकी आवश्यकता होती है और जगह भी बहुत घिरती है। अब ऐसा यंत्र बनना चाहिए जिसका उप-

योग एक मनुष्य कर सके और जो दो फ़ीटसे अधिक जगह न घेरे" शास्त्रीजीने ऐसा ही यंत्र तैयार किया और सिपाहियोंसे काम करवाकर महाराजको दिखाया। महाराजने प्रसन्न होकर शास्त्रीजीको १००० रु० इनाम दिया और विद्यासागरकी पदवीसे भूषित किया। कलकत्ता मिलिटरी डिपोके रायल इंजिनियर कप्तान रियाचने शास्त्रीजीके बनाये इस यंत्रकी जांच की, तो इसकी और सब बातें तो ठीक उतरीं ही पर इन लाभोंके अतिरिक्त एक और विशेष लाभ भी हाथ आ गया। वह विशेषता यह थी कि शास्त्रीजीके यंत्रका वज़नभी बहुत कम था। इंग्लैंडके सैनिक कार्यालयने इस यंत्रको स्वीकार किया और शास्त्रीजीकी कीर्ति देश विदेशोंमें छा गयी। जिस दिन शास्त्रीजी गणित और यंत्रोंकी बारीक जांच कर रहे थे उन्हें यह ध्यान भी न हुआ होगा कि मैं एक ऐसा आविष्कार कर सकूंगा। किन्तु उनका एकान्तमें बैठकर किया हुआ परिश्रम आज लाखोंको लाभ कर रहा है। इसी प्रकार रेल, तार, टेलीफ़ोन, विमान आदिकी रचना और संशोधन हुआ है।

ज्ञानसे भ्रम और सन्देह नहीं रहते। हममें भूत, पिशाच और यक्षिणी साधन आदिकी मूर्ख-श्रद्धा अपना ज़ोर जमाये हुए हैं। प्रकृति शास्त्रके मनन पूर्वक अभ्याससे यह भोली कल्पना सर्वथा छूट जाती है। ऐसे झूठे और निर्मूल काल्पनिक विचारोंमें ही हमारी बुद्धि रुकी रहती है; हमारो बुद्धिके अबके दुरुपयोगोंमेंसे एक यह भी है। इसे हटानेकेलिए सृष्टि शास्त्रके अध्ययनकी आवश्यकता है। सूर्यके प्रकाशसे जैसे प्रत्येक पदार्थका वाह्य स्वरूप प्रकट हो जाता है, वैसे ही प्रकृति शास्त्रके अध्ययनसे पदार्थकी भीतरी दशा प्रकट हो जाती है।

प्रत्येक कार्यमें युक्ति होती है। जब किसी आश्चर्यकारी पदार्थके विषयमें युक्ति पूर्वक विचार करते हैं तब वह उतना आश्चर्यकारी नहीं जान पड़ता। शरीरकी कौन सी इन्द्रियाँ और कौन से अवयव क्या क्या काम कर सकते हैं, यह सौमेंसे पाँचको भी मालूम न होगा! राममूर्ति, जोशी आदिके अपूर्व कामोंको यदि युक्ति पूर्वक देखा जाय तो मालूम होगा कि वे केवल ताक़तसे ही काम नहीं करते, बल्कि उनमें युक्ति भी रहती है। यह सच है कि प्रत्येक मनुष्य राममूर्ति नहीं हो सकता, किन्तु जिस किसीमें मानवी सूक्ष्म निरीक्षणका गुण होगा वह हो सकेगा। हमारे देखनेमें कितने आमके पेड़ आते हैं, पर उनमें किसी किसीके ही फल 'अमृतफल' कहने योग्य होते हैं। हज़ारों संकटों, आपत्तियों विपत्तियोंको सहकर प्रत्येक यात्रीको ठंडी छाया और मीठा फल देकर, उसके मुँहसे प्रशंसा सुनती किसी विरले वृक्षके भाग्यमें होती है। प्रत्येक छोटे बड़ेकेलिए प्रकृतिका यह नियम समान है। हज़ारों कवियोंमें सर रवीन्द्रनाथ ठाकुरका सम्मान है, लाखों पहलवानोंमें राममूर्तिका सम्मान है, लाखोंमें विज्ञानाचार्य डा० जे० सी० बोसका सम्मान है। यदि देश देशान्तरोंमें इनके गुणोंका प्रसार होकर ये सम्मानित न होते तो आज हमें उनका अभिमान न होता। मतलब यह है कि मनुष्य स्वयं उच्च बनकर अप्रत्यक्ष रीतिसे भी दूसरोंको लाभ पहुँचाता है।

छोटे बालकोंको विज्ञानशास्त्र सिखानेकेलिए वस्तुपाठ ( object lessons ) सिखाया जाता है। इसी प्रकार विचारशक्ति जगानेकेलिए पदार्थ विज्ञानके व्याख्यान सुनने बांचने, उनके प्रयोग प्रत्यक्ष देखने, डाकूर बोस जैसे दिग्गज विद्वान्‌के प्रयोग, तर्क और व्याख्यान सुनने पड़ते हैं और प्रत्यक्ष देखनेका ही नाम वस्तुपाठ है। प्रत्येक विद्यार्थीका उद्देश्य बहुत उच्च होना चाहिए सफलताका कोई न कोई अंश उसके हाथ आयेगा ही। प्रत्येक मनुष्य जस्टिस रानाडे, महात्मा गोखले, सर गुरुदास

बनर्जी, डाकूर भांडारकर या डाक्टर बोस नहीं हो सकता; किन्तु, इन्होंने इतनी योग्यता कैसे प्राप्त की इसीके ज्ञान लेनेमें विशेष लाभ है। प्रत्येक मनुष्य काशी नहीं पहुँच सकता, पर काशीकी सड़कपर चल पड़ना ही कम लाभ नहीं है।

अपनी उन्नति करके व्यक्ति, समाज और देशको लाभ पहुंचानेकेलिए सूक्ष्म निरीक्षण और प्रबल जिज्ञासाकी आवश्यकता है। इसी प्रकारके वस्तुपाठकी आवश्यकता है। संसारके जो हज़ारों पदार्थ हमारी आंखोंके सामने घूमा करते हैं, इनसे बढ़कर उपयोगी वस्तुपाठ और कौन हो सकता है? यानी, प्रत्येक प्राकृतिक पदार्थको देखकर, यह कैसे बना होगा, कब बना होगा, इसके बननेमें किन पदार्थोंकी आवश्यकता हुई होगी, अब यह कितने दिन तक टिकेगा, इसका परिवर्तन किस हिसाबसे हो रहा है—आदि प्रश्न जिज्ञासु हृदयमें अपने आप उठते हैं। इस प्रकार कुछ पदार्थोंका पूरा ज्ञान प्राप्त कर चुकनेपर, बहुतसे पदार्थोंका अपने आप ज्ञान हो जाता है—और प्रत्येक पदार्थके विषयमें खोज करनेकी परिपाटी हाथ आ जाती है। हमारे पूर्वज ऋषि और मुनि इस विद्याको जानते थे। इस समय, जिन पदार्थोंको हम देखते हैं उनकी रचना किस प्रकार हुई होगी, वे नष्ट किस प्रकार होंगे, उस समय उनका क्या हो जायगा, उनकी रचना समझनेपर हम भी वैसा ही पदार्थ तैयार कर सकते हैं या नहीं—आदि बातोंकी विज्ञप्तिसे जो शास्त्र तैयार किया गया है उसे रसायनशास्त्र कहते हैं।

इस शास्त्रका मूल परमाणु है। सं० १८६० के लगभग एक डाल्टन नामक विद्वान् हो गया है, उसने यह सिद्धान्त निकाला कि संसारके प्रत्येक पदार्थका मूल परमाणु (atom) है, यह परमाणु अति सूक्ष्म, अविभाज्य है। पर डाल्टनका यह परमाणुवाद कोई नयी कल्पना नहीं है, उससे भी दो हज़ार वर्ष पूर्व ग्रीस देशके एम्पिडॉक्लिस, डिमाक्रिटस, अरिस्टाटल तथा इपिक्यूरस आदि विद्वानोंने यही कल्पना की थी। ग्रीस देशके इन विद्वानोंसे पूर्व हमारे देशके कणाद और इनसे भी पहले कपिल ने परमाणुकी पूरी व्याख्या की थी। उन्होंने लिखा है कि रसायनशास्त्रका अध्ययन हमें करना चाहिए, इससे मोक्ष प्राप्ति होती है। वैशेषिक दर्शनमें महर्षि कणादने वायुतकके ही अणु सिद्ध करके विश्राम नहीं लिया, बल्कि यहांतक बताया है कि उन्हीं वायुके अणुओंके आन्दोलनसे शब्दोंकी गति होती है और वे हमें सुनायी देते हैं। महर्षिके उस मतसे आधुनिक शब्द और उसकी गतिके सिद्धान्तोंसे बहुत कुछ समानता है। उस अति प्राचीन कालमें हममें ऐसे अत्युच्च तत्वज्ञानी हो गये हैं, इसका हमें अभिमान होना चाहिए। हां, प्रत्येक तत्वके विभाग करनेपर परमाणु उसकी चरमसीमा है, इसे प्रयोगोंके द्वारा सबसे पहले डाल्टनने सिद्ध किया। विद्वान् मैक्समूलर और कोलब्रुकने अपने मतमें कहा है कि योरुपमें यह ज्ञान ग्रीस देशसे आया और ग्रीसवालोंने भारतवर्षसे यह ज्ञान सीखा। भारतने इस ज्ञानकेलिए किसी देशको अपना गुरु नहीं बनाया।

अब प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि, डाल्टनने अपनी परमाणु कल्पनामें ऐसी कौन सी नयी बात दिखायी जो कणादको मालूम न थी? उत्तर यही है कि डाल्टनने सबसे पहले उसे प्रयोग द्वारा सिद्ध किया और हमारे विद्वानोंने जो कुछ कहा वह केवल अनुमानजन्य था। यदि हमारे विद्वानोंमें पहलेसे प्रयोग द्वारा सिद्ध करनेकी रीति प्रचलित होती तो हमें डाल्टनका सिद्ध करना आश्चर्यमें नहीं डालता। डाल्टनके समयमें लेव्हाशियर नामक फ्रेंच और बरज़ीलियस नामक स्वीडिश सृष्टिशास्त्रज्ञ विद्वान थे, इन्होंने डाल्टनके कथनको प्रयोगोंसे सिद्ध किया।

लोगोंकी शंकाएं मिटानेमें डाल्टनको बहुत प्रयत्न करना पड़ा, पर अन्तमें यह मत सर्व सम्मत हो गया। कणादका परमाणुवाद केवल श्रद्धापर स्थापित हुआ था, यह केवल शाब्दिकसिद्ध था। स्वयं कणादने इस मतको युक्तिवादपर स्थापित किया था। प्रयोगों द्वारा सिद्ध करनेकी प्रथा योरुपमें डेढ़ सौ वर्षसे चली है।

जिस शास्त्रको अंग्रेज़ीमें 'केमिस्ट्री' कहते हैं उसीको हम 'रसायनशास्त्र' कहते हैं। पर भावप्रकाशमें लिखा है "सम्यक् पकस्य भुंकस्य सारो निगदितो रसः" यानी भोजन क्रियाके द्वारा जो पदार्थ बनता है उसे रस कहते हैं। काथादि बनानेकी क्रियाका नाम सुश्रुतमें 'रसक्रिया' है। धीरे धीरे पतली चीज़को सारके कारण रस कहने लगे। फिर तरल होनेके कारण प्रकृत पदार्थको भी रसके नामसे पुकारने लगे। "रसायनं च तज्ज्ञेयं यज्जराव्याधिनाशनम्" अर्थात् रसायन उसे कहना जिससे बुढ़ापा और व्याधि नाश हो तथा मनुष्य दीर्घ जीवी हो। वाग्भट्टके इस मतका ही प्रयोग आज कल भी होता है। भर्तृहरिने लिखा है "मित्रं प्रीति रसायनं" यानी मित्र प्रेमको पुष्ट और चिरस्थायी बनानेवाला है। तांत्रिक ग्रन्थोंमें भी रस और रसायनका बहुत कुछ वर्णन है। उन्होंने बताया है कि रसायनसे इस लोकमें दीर्घ जीवन और परलोकमें मोक्ष प्राप्त होती है।

केमिस्ट्री शब्दका अर्थ है पदार्थकी आन्तरिक रचनासे सम्बन्ध रखनेवाला शास्त्र, यह अर्थ आज कलके अर्थसे बिलकुल भिन्न है। वास्तवमें केमिस्ट्री शब्दका जो पहले अर्थ था वह अब नहीं है। योरुपमें तेरहवीं शताब्दिमें लोग कीमियाकी ओर अधिक झुक गये थे। उस समय सबका यही विचार था कि किसी प्रकार लोहेसे सोना बनानेकी विद्या मालूम हो जाय, किन्तु इसमें किसीको भी सफलता न हुई। पर इससे यह लाभ ज़रूर हुआ कि पदार्थोंकी आन्तरिक दशा मालूम हो गयी और अन्तमें यह सिद्ध हो गया कि तांबे, पीतल या लोहेसे सोना नहीं बन सकता। उस समय केमिस्ट्री शब्द पदार्थोंके पृथक्करता और संयोगकरणकेलिए व्यवहृत् होता था। केमिस्ट्री वास्तवमें 'कीमिया' शब्दका बिगड़ा हुआ रूप है। पारस पत्थर छुआनेसे लोहेसे सोना हो जाता है और उस पारसमें मनुष्यकी आयु ४०० वर्ष तक बढ़ा देनेकी शक्ति है, यह मूर्ख श्रद्धा अब वहां नहीं है। तेरहवीं और चौदहवीं शताब्दीमें भारतमें भी लोगोंको यही धुन थी, पर धीरे धीरे वह कम हो गयी और आयुर्वेदकी ओर लोगोंका ध्यान खिंच गया। धीरे धीरे योरुपमें केमिस्ट्रीने ऐहिक रूप धारण किया। अब यह शास्त्र उन्नति कर चला है।

हम ऊपर लिख आये हैं कि मूलतत्त्वोंमेंसे एक, दो, तीन या अधिकके संयोगसे पदार्थ बनाये जा सकते हैं या नहीं। इस सम्बन्धका विचार या प्रयोग करनेका ही नाम आजकल रसायनशास्त्र है। आधुनिक रसायनशास्त्रवेत्ताओंने मूलतत्व माने हैं। इसके विशेष संयोग वियोग और मिश्रणसे लाखों कृत्रिम पदार्थ अबतक बनाये जा चुके हैं। साधारणतः तत्व उसे कहते हैं जिसका रूपान्तर (transformation) किसी दूसरी वस्तुमें न हो सके, तथा उसका पृथक्करण भी न होसके, यही मूलतत्व अथवा मौलिक (element) हैं। हमारे विद्वानोंने मूलतत्वोंकी कल्पना भिन्न ही प्रकार की है। सांख्यशास्त्रमें २५ तत्व माने गये हैं, जिनमें मुख्य तत्व ५ हैं। किन्तु इन पांच तत्वोंकी भी उत्पत्ति आदि तत्व आकाशसे मानी गयी है। उपनिषदोंमें कहा गया है कि आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल और जलसे पृथवी पैदा हुई: किन्तु इन तत्वोंमें एकसे दूसरेमें इतनी अनन्त भिन्नता किस प्रकार होगयी इसका ज्ञान हमें नहीं है। अबतक यह केवल

युक्तिवाद और शब्दवादपर स्थित है, प्रत्यक्ष प्रयोग द्वारा किसीने सिद्ध नहीं किया। किन्तु जो रसायनशास्त्रके मर्मज्ञ प्रेमी हैं, उनके हृदयमें यह प्रश्न उठ आता है कि एक तत्वसे दूसरे तत्वमें परिवर्तन कर देना कितना शक्य है? इस अनन्त विश्वकी उत्पत्ति ८१, २५ या ५ तत्वोंसे हुई है, यदि ऐसा है तो इनका कोई एक आदि तत्व अवश्य होना चाहिए। प्राउट नामक एक प्रसिद्ध रसायनशास्त्रज्ञ विद्वान होगया है, इसने १८७१ वि० में एक लेख प्रसिद्ध किया था, जिसमें यह सिद्ध किया गया था कि आधुनिक सब तत्वोंकी उत्पत्ति "हाइड्रोजन" नामक सबसे हलके वायु रूप पदार्थसे हुई है। उस समय तत्व शब्दकी व्याख्या यह की जाती थी कि वह दूसरे तत्वके रूपमें परिवर्तित नहीं हो सकता और जो परिवर्तित हो तो वह तत्व नहीं: इसीलिए उक्त विद्वानने उस लेखमें अपना कल्पित नाम दिया। कई विद्वानोंने प्रयोगों द्वारा इसकी परीक्षाकी किन्तु यह सिद्धान्त उचित नहीं जचा, अशक्य मालूम हुआ। अब रेडियम नामक एक नये तत्वका पता लगा। इससे कुछ किरणें निकलती हैं। ये किरणें कुछ समयके बाद हिलियम नामक पदार्थके समान बन जाती हैं। हिलियममें जो गुण हैं वे पूर्ण रूपसे इसमें भी पाये जाते हैं। अर्थात् रेडियमसे हिलियम पैदा होता है। निआन, आरगन, तांबा, सोडियम तत्वोंके विषयोंमें भी ऐसी ही बातें मालूम हुई हैं। चाँदी और सीसेमें बहुत कुछ समानता है। इन बातोंसे मालूम होता है कि प्राउटके सिद्धान्तकी परीक्षा अभी भली भाँति नहीं हुई। बड़े बड़े धुरन्धर आचार्य रात दिन इसकी खोजमें लगे हुए हैं। चाहे एक हाइड्रोजनसे बाक़ी ८१ तत्वोंकी उत्पत्ति सिद्ध हो जाय या आकाश तत्वसे — किन्तु इस सिद्धान्तकी पुष्टि करनेकेलिए दोनों समान ही हैं।

सर ऑलिवर लाज एक प्रसिद्ध विद्वान हैं, इन्होंने प्रयोगोंके द्वारा इलेक्ट्राणु नामक अति सूक्ष्म कणोंकी स्थिति सिद्ध की है। इन्होंने सिद्ध किया है कि हाइड्रोजनके एक अणुमें ७०० इलेक्ट्राणु रहते हैं, और आक्सिजनके एक अणुमें ११,२०० इलेक्ट्राणु रहते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि हाइड्रोजन आदि सम्पूर्ण ८१ मूलतत्वोंकी उत्पत्ति इलेक्ट्राणुसे हुई है। हमारा विश्वास है कि महर्षियोंका माना हुआ आदि तत्व आकाश केवल इलेक्ट्राणुओंका दूसरा नाम होगा।

रासायनिक प्रयोगों द्वारा पदार्थ एक दशासे दूसरी दशामें परिवर्तित किये जा सकते हैं। और बहुत से नये कृत्रिम पदार्थ भी बनाये जा सकते हैं। एक समय यह बात अशक्य मानी जाती थी: पर रात दिन परिश्रम करनेवाले विद्वानोंको धन्य है, उन्होंने पत्थरके कोयलेसे हीरा बनाना सोचा। क्योंकि हीरे और कोयलेमें एक ही प्रकारके तत्व हैं, यह बात प्रयोगोंसे सिद्ध हो चुकी है। कोयलेके छोटे छोटे टुकड़ोंसे मनोहर चमकदार हीरे तैयार भी किये गये, पर पृथ्वीके गर्भमें जितने अच्छे बनते हैं उतने नहीं बने। फिर भी समय पाकर यह प्रयत्न अवश्य सफल होगा। फ्रांसके मि० एम्. ए. मैनके तैयार किये हुए हीरे कुदरती हीरोंकी बराबरी कर सकते हैं। रसायनिक तत्वोंके संयोगसे हीरे तैयार करनेमें जैसी सफलता हुई है, वैसे ही और बहुत से पदार्थोंके तैयार करनेमें भी सफलता हुई है। हाड, तेल, बाल, मांस, शहद, सींग, हाथीदांत, कस्तूरी, साबूदाना, चमड़ा, रेशम आदि पदार्थ रसायनिक संयोगसे तयार होने लगे हैं और ये सब कुदरती चीज़ोंकी बराबरी करते हैं। असली नील खेतोंमें पैदा की जाती है, पर अब रासायनिक संयोगोंसे नक़ली नील तैयार होने लगी है। इस असली और नक़ली नीलमें ज़रा

भी फ़रक़ नहीं जान पड़ता। यह नक़ली नील हज़ारों मन तैयारकी जाती है, इसके कारण असली नीलकी खेती दिनपर दिन कम होती जाती है। नीलके ही समान सैकड़ों रंग रसायनिक संयोगोंसे तैयार किये जाते हैं, जो कुदरतकी बराबरी करते हैं। प्रत्येक वनस्पतिपर प्रयोग करके यह जानना कि उसमें किन किन तत्वोंका मिश्रण है और उनका विपाक क्या हो सकता है, तथा उसमें फिर किन गुणोंका समावेश हो जायगा, इसे जांचके द्वारा निश्चित करना ही आधुनिक रसायन शास्त्रका काम है। वैद्यकशास्त्रने तो इस विद्याको बहुत ही महत्व दिया है। गिलोयसे ज्वर दूर होता है। तो गिलोयकी जगह उन्हीं अंशोंका प्रयोग करना सयुक्तिक होगा,—तथा रासायनिक क्रिया द्वारा गिलोयसे वे अवयव निकाल लिये जायंगे। ऐसा करनेसे गिलोयका वास्तविक महत्व भी समझमें आ जायगा और थोड़ी औषधिसे काम भी बन जायगा। इस प्रकार पदार्थोंकी जांच करके विद्वानोंने उनके उपयोगी अंश पृथक कर लिये हैं।

प्रकृतिने सब पदार्थ मनुष्यके सामने खोलकर रख दिये हैं, प्रत्येक पदार्थकी जांचमें प्रकृति उलटी सहायता कर रही है। इतना होते हुए भी अभी मनुष्यको बहुत कम पदार्थोंका ज्ञान है, और जिन कृत्रिम पदार्थोंको बनानेमें सफलता हुई है वे तो उंगलियोंपर गिने जा सकते हैं। मनुष्य अपनी बुद्धिका अभिमान करता है और मानता है कि मैं जो चाहे कर सकता हूँ। अनुभवसे मालूम होता है कि यह अभिमान व्यर्थ है। प्रकृतिकी अनन्तता कहां, और रसायनशास्त्रमें होनेवाले क्षुद्र प्रयोग कहाँ? हम प्रकृतिके किसी अंशांशको जान सकते हैं। प्रकृतिका निस्सीम महत्व इससे व्यक्त होता है। सचमुच सृष्टिशास्त्रके जाननेवाले प्रकृतिकी जितनी उच्चता स्वीकार करते हैं, उतनी साधारण मनुष्योंके ध्यानमें भी नहीं आ सकती। विज्ञानवेत्ताओंपर जो नास्तिकताका दोष मढ़ा जाता है, वह ठीक नहीं। वास्तवमें प्रकृतिका सच्चा महत्व वैज्ञानिक ही जानते हैं और वे उसके कर्त्ताका उससे भी अधिक सम्मान करते हैं। सृष्टिका अव्यक्त ज्ञान प्राप्त करनेकेलिए ज्ञानकी विशेष उन्नति होनी आवश्यक है। निरंतर उद्योग करते रहना ही कर्त्तव्य होना चाहिये, और उस कर्त्तव्यको नम्रता किन्तु दृढ़ताके साथ पूरा करना चाहिये। सर ऑलिव्हर लाजका कहना है कि मनुष्यके मर जानेके बाद भी स्मृति और मन जीवित रहते हैं, यह प्रयोगों द्वारा भी सिद्ध हो सकता है। इस प्रकार विज्ञानके अभ्याससे आस्तिकता दृढ़ होती है, और भ्रम रहित ज्ञान बढ़ता है।

वनस्पति तथा प्राणी सजीव हैं अन्य पदार्थ निर्जीव हैं, पर हमारे शास्त्र प्रणेता महर्षियोंने सजीव निर्जीव दोनोंमें आत्मा मानी है। इस सिद्धान्तको भारतमाताके सपूत विज्ञानाचार्य डा० बोसने पूरी तरहसे प्रयोगों द्वारा सिद्ध कर दिया। डाक्टर बोसने सिद्ध किया कि प्राणी और वनस्पतिके मस्तकमें बिजली छोड़ने की शक्ति है, इसी प्रकार वह शक्ति धातुओंमें भी है। गरमीसे जैसे प्राणियोंमें यह शक्ति कम हो जाती है वैसे ही धातुओंमें भी हो जाती है। भिन्न दशामें रखनेपर संखियेका भी ज़हर दूर हो जाता है, इसी प्रकार धातुओंकी शक्ति क्षीण, मृत और वर्धित होती है। इस प्रकार डा० बोसने सजीव और निर्जीव पदार्थोंका भेद सिद्ध कर दिया। संसारका वैज्ञानिक वर्ग उन्नतिकी एक सीढ़ी और चढ़ गया। कोई रसायनशास्त्री कृत्रिम मास बनाने कोई अंडे तैयार करनेकी और कोई मरे जानवरको जिला देनेकी धुनमें है। यद्यपि इन उद्योगोंमें अभी सफलता नहीं हुई हैं किन्तु विद्वानोंको विश्वास है कि वे इसमें सफल अवश्य होंगे।

## वैज्ञानिकीय

मिट्टीके तेलसे आग बुझायी गयी।

अमेरिकाकी स्टैंडर्ड आयल कंपनी मिट्टीके तेलके व्यापारमें संसारभरमें बढ़ी चढ़ी है। इस कंपनीके पत्र स्टैंडर्ड आयल बुलेटिनमें एक बड़ी ही विचित्र घटना छपी है। लोगोंने मिट्टीके तेलसे आग लगते तो बहुतसुना होगा पर हमारे पाठकोंको संभवतः यह सुनकर विस्मय होगा कि उससे आग बुझायी भी जा सकती है।

कैलीफ़ोर्नियाका कलिक्सो नगर बड़ा ही धन धान्य पूर्ण है। वहां रुई बहुत होती है। वहांके मुख्य रुईके गोदाममें बहुत सी रुईके ११ मनके गट्ठे लदे हुए थे। एक रातको एक मुसाफ़िर गोदाममें सोरहा। उसने अपनी जानमें चुरट बुझा दी थी पर रातको यकबारगी रुई सुलगती हुई मिली। पासमें पानी मिल सकता था पर गोदामके संरक्षकने स्थानीय स्टैंडर्ड आयल कंपनीके मैनेजरको टेलीफ़ोन किया "मिट्टीका तेल भेज दो गोदाममें आग लग गयी है।" यदि कोई दूसरा मनुष्य यह समाचार पाता तो हँसी समझकर टाल देता पर स्टैंडर्ड आयल कंपनीका मैनेजर चतुर था उसने झट तेल पहुंचवा दिया।

हमारे पाठक तेल पहुंचवानेकी बात न समझे होंगे। इस शब्दसे उनके हृत्पटलपर मिट्टीका तेल लादे सौ दोसौ आदमियोंका दौड़ता हुआ चित्र खिंच जायगा। पर पृथ्वीके इस सबसे बड़ी कंपनीकी माया निराली है। अमेरिकाभरमें एक समुद्रसे लेकर दूसरे समुद्र तक इस कंपनीके बड़े बड़े नल पृथ्वीके भीतर गड़े हुए हैं जिनसे इसका तेल पम्प हो होकर देश भरमें समुद्रतटतक भेज दिया जाता है। यहांसे जहाज़ोंपर लद कर वह और देशोंमें जाता है।

Miscellaneous कुटकर ]

तेलके पहुंचनेसे आग बुझ गयी। लोगोंका अनुमान है कि पानीसे आग इतनी शीघ्रतासे बहुत कम बुझती।

ऐसा क्यों हुआ इस बातका उत्तर बहुत साधारण है। प्रत्येक पदार्थके जलनेका एक तापक्रम होता है, जबतक उसका तापक्रम एक नियत कक्षातक न पहुंच जाय कोई पदार्थ जल नहीं सकता। इसी कारण हमें चूल्हा जलाते समय आग रखकर लकड़ियोंको बड़ी देरतक सुलगाना पड़ता है। रुई बहुत जल्द आग पकड़ लेती है पर यदि ऊपर बहुत दबाई हुई होती है तो इसमें लपटें बहुत देरमें निकलती हैं। सुलग सुलग कर आग रुईमें प्रवेश करती है। यदि दबाई हुई रुईके गट्ठरमें पानी डाला जाय तो वह एक या दो इंचसे अधिक भीतर प्रवेश नहीं कर सकता। यदि आग दूरतक पहुंच गयी है तो पानी वहांतक नहीं जा सकता, पर मिट्टीका तेल आर पार पहुंच जाता है।

गोदाममें जब आग लगी तब ऐसा ही हाल था। रुई सुलग रही थी और उनमें लपटें नहीं निकलती थीं। ऐसी अवस्थामें रुई मिट्टीके तेलका तापक्रम इतना अधिक नहीं बढ़ा सकी कि वह तेल जल पड़े। विपरीत इसके मिट्टीके तेल ने रुईके सब भागोंमें प्रवेश कर आगको बुझा दिया।

इस नोटके देते समय मुझे कुछ डर लग रहा है। कहीं इस नोटको पढ़कर हमारे बहुतसे नवयुवक इसकी परीक्षा करनेको तैयार न हो जांय। मुझे इसका भय नहीं है कि यदि इस बातकी परीक्षाकी जाय तो वह असत्य निकलेगी किंतु, मुझे इसका भय अवश्य है कि ऐसी परीक्षाएं यदि चतुर और जानकार आदमियोंको छोड़, जो विज्ञानके तत्वोंसे भलीभांति परिचित हैं, कोई अनारी करने बैठेगा तो कहीं वह गांव भरमें आग न लगा दे, इसका मुख्य कारण

यह है कि भिन्न भिन्न प्रकारके मिट्टीके तेलोंके जलनेका तापक्रम भिन्न है। जिस तेलका हम प्रयोग कर रहे हैं उसके जलनेका तापक्रम एक अच्छे तापमापक से बड़ी सावधानी पूर्वक करना होगा। फिर जिस जलते हुए पदार्थपर उसका प्रयोग करना है उसका भी तापक्रम उसी तापमापकसे बड़ी सावधानी पूर्वक जानना चाहिये। यदि किसी मनुष्यने इन बातोंको अच्छी तरहसे जान लिया है और उसे यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि मिट्टीका तेल इस जलते हुए पदार्थपर छोड़नेसे आग न पकड़ेगा तो वह निर्भय अपना प्रयोग कर सकता है, अन्यथा इसीमें भलाई है कि वह इस नोटकी सत्यता बिना किसी व्यर्थ तर्कके स्वीकार कर ले। अमेरिकाके जनताके बराबर व्यवहारिक वैज्ञानिक संसारमें बहुत कम मिलेंगे। ऐसे खेल वे ही निर्भयताके साथ खेला करते हैं।

* * * *

आजकल युद्धमें हवाई जहज़ोंका बहुत अधिक प्रयोग होता है। यह ज़हाज़ जब हवामें उड़ते हैं तो इतने ज़ोरकी आवाज़ पैदा होती है कि इन्हें चलानेवाले पाइलाटकी आवाज़ यात्रियोंके कानोंतक साधारण टेलीफ़ोन द्वारा भी पहुंचना असंभव है। इस बाधाको दूर करनेकेलिए एक विशेष प्रकारके टेलीफ़ोनका आविष्कार हुआ है।

इस टेलीफ़ोनमें दो यंत्र सुननेके काममें आते हैं और दो बोलनेके। सुननेवाले यंत्र एक कमानीदार सिरकी पट्टीसे लगे हुए होते हैं। यह दोनों कानोंमें लगाये जाते हैं। इस प्रकार सब भांतिके विघ्न कारक शब्द कानतक नहीं पहुंच पाते। बोलनेवाले यंत्रोंमें मुखसे काम नहीं लिया जाता है। इन यंत्रोंमें रबरकी मुलायम टोपियां लगी रहती हैं। यह टोपियां छाती पर बांध दी जाती हैं और इसपर एक यंत्र तो गलेकी हंसुलीके नीचे और दूसरा तीसरी पसलीके जोड़पर रक्खा रहता है। जब कुछ कहना हुआ तो आदमी ज़ोरसे चिल्लाता है। इस चिल्लानेसे पसलियां हिलने लगती हैं। इन्हीं कंपोंसे टेलीफ़ोन काम करता है।

* * * *

बड़ी बड़ी तोपों और बंदूकोंसे निकली हुई गरम गोलियां हवामें बड़े वेगसे जानेके कारण चुम्बकके गुण प्राप्त कर लेती हैं। यह गुण विशेषतः जर्मनोंकी गोलियोंमें पाया जाता है। अबतक इस बातका पता लगानेकेलिए कि आहत सैनिकके किस भागमें गोली धंस गयी थी एक्सरेज़का प्रयोग किया जाता था। एक्सरेज़का यंत्र एक स्थानसे दूसरे स्थानतक ले जाना, उसे ठीक करना और उससे काम लेनेमें बड़ी खट पट होती थी। रणक्षेत्रमें तो जल्दी काम देनेवाले यंत्र ही बड़े उपयोगी होते हैं।

इस असुविधाको दूर करनकेलिए फ्रांसके वैज्ञानिकोंने एक अद्भुत उपाय निकाला है। एक्सरेज़के स्थानमें वे अब टेलीफ़ोनका प्रयोग अधिकतासे करने लगे हैं। टेलीफ़ोनका एक यंत्र तो डाक्टर अपने कानमें लगा लेता है और दूसरे यंत्रकी चुंगली घायल योद्धाके घावके आस पास लगाता फिरता है। चुंगली ज्योंही उस स्थानपर पहुंचती है जहाँ गोली है त्योंही चुंगलीकी लोहेकी चद्दर गोलीकी ओर खिचती हैं और कुंडलिकासे विद्युत् धारा बहकर कानके पासवाली लोहेकी चद्दरको खटकाती है। बस इसी शब्दको सुनकर डाक्टर गोलीका पता लगा लेते हैं। यंत्रको अधिक उपयोगी बनानेकेलिए कुंडलिकामें थोड़ी सी बिजलीकी धारा भेजते रहते हैं, ज्योंही चद्दर लोहेके टुकड़ेके पास आती है त्योंही इस धाराका बल बढ़ जाता है और डाक्टरको आवाज़ सुनायी पड़ती है।

गं० प्र०

फ्रांस और इंगलैंडके योद्धाओंके अस्पतालोंसे जो शिक्षाएं मिली हैं उनमेंसे कुछका वर्णन जब तब निकला करता है। इनमेंसे दो शिक्षाएं बड़ी अच्छी मालूम होती हैं। फ्रांसके अस्पतालोंमें यह देखा गया कि घायल और रोगी सैनिक बिल्कुल ही घरेलू तरीक़ेपर रखे जाते हैं। इस देशमें यदि कोई किसीको अस्पताल जानेको कह दे तो अच्छा चंगा आदमी भी बीमार पड़ जाय। यहांकी तो यह धारणा है कि मरीज़को डांट डपटमें रखना, उसके हिलने डोलने और बातचीत करनेमें रुकावट डालना तथा उसके रुचिकी ओर ध्यान न देना ही अस्पतालवालोंका मुख्य धर्म है। पर फ्रांसके अस्पतालोंकी दशा भिन्न है। वहांके अस्पताल बड़े ही साफ़ और सुथरे रखे जाते हैं। उन्हें लोग बड़ी अच्छी तरहसे आरास्ता करते हैं। रोगियोंको सुंदर चित्त प्रसन्न करनेवाले रङ्ग बिरंगे कपड़े पहननेको मिलते हैं, उनकी सेवा करने वाली नर्सें भी अच्छी अच्छी पोशाक पहने रहती हैं। रोगियोंको प्रसन्न रखना, उन्हें हंसाते रहना और साथी और मित्रोंकी तरह उन्हें औषधि देना और भोजन कराना वहांके औषधोपचारका मुख्य अंग समझा जाता है। जहांतक बनता है रोगीकी इच्छानुसार ही उसे खाने पीने और विनोद हासकी सामग्री दी जाती है। एक सैनिकका एक ओरका मुंह घावके कारण निकम्मा होगया था पर दूसरी ओरसे सिगरट पिया करता था। किसीने उसे ऐसे करनेसे मना न किया। रोगी भी बहुत जल्द निरोग होकर अस्पतालसे चला आया। एक अमेरिकनका कथन है कि "यदि अमेरिकामें भी इसी प्रकारके अस्पताल हों तो रोगीको आज कल जितना समय अस्पतालमें व्यतीत करना पड़ता है उसका आधा ही समय लगे और यदि फ्रांसके नगर नगरमें अस्पतालोंके समान हो स्वच्छताका प्रबंध किया जाय तो बहुत ही शीघ्र फ्रांसकी जन क्षति पूरी हो जाय"

* * * *

यद्यपि हम लोग साधारणतः जब किसी कठिन पीड़ामें और पीड़ा पहुंचानेका वर्णन करते हैं तो यही कहा करते हैं कि "घावमें नमक भर दिया तथापि हमारे ग्रामीण भाई बड़ी बड़ी चोटों और घावोंमें लोन पानीका इलाज बताया करते हैं। इंगलैंडके अस्पतालोंमें अब इस बातका समर्थन हुआ है। वहां देखा गया है कि जल सैनिकोंके घाव स्थल सैनिकोंके घावोंकी अपेक्षा बड़ी जल्दी आरोग्य होजाते हैं। पहले लोग कहा करते थे कि स्थल सैनिककोंको खाइयोंमें रहना पड़ता है, विषैला धुआं उसके चारों ओर फैला रहता है, पर जल सैनिकको अधिक स्वच्छ वायु मिलती है, इसी कारण वह शीघ्र स्वस्थ हो जाता है। उनका अनुमान था कि यदि समुद्रमें बहुत देरतक रहनेके कारण यदि जल सैनिकको चिंता, भय और अन्य अनेक उपद्रवोंसे उत्पन्न हुई स्नायविक तथा मानसिक दुर्बलता बढ़ जाय तो उसका भी घाव देरमें पूरेगा। पर वास्तवमें इसका प्रत्यक्ष फल सर्वांश विपरीत ही निकला। जिन सैनिकोंका घाव समुद्र जलमें देरतक डूबा रहा वह बड़ी जल्दी अच्छा हो गया।

अब तो अस्पतालोंमें घावको १०० हिस्से जलमें ५ हिस्सा नमक घोलकर धोते हैं। समुद्रमें केवल २½ हिस्सा नमकका होता है। ऐसा करनेसे घाव पूर्ण रीतिसे शुद्ध हो जाता है। घावोंमें रोग कीटाणुओंके प्रवेश कर जानेका बड़ा भय रहता है। इन्हीं कीटाणुओंसे रक्षा करनेकेलिए डाक्टर अनेक औषधियोंका प्रयोग किया करते थे जो इन कीटाणुओंको मार डालनेकी शक्ति रखते हैं। परन्तु वर्तमान युद्धमे इन औष-

धियोंकी सफलता बहुत ही कम रही। गोलीसे जो घाव पैदा होते हैं वे बड़े ही टेढ़े मेढ़े होते हैं। उनका मार्ग गोलीके मार्गके समान ही टेढ़ा होता है। अतः उनतक इन औषधियोंकी पहुंच नहीं होने पाती। जलसे घावका कोना कोना तक अच्छी तरह धुल जाता है। जलमें नमक होनेके कारण घावके पासके तंतुओंसे एक रस लिम्फ नामका निकलता है जो सब रोग कीटाणुओंको निकालकर बाहर कर देता है।

थल सैनिकोंमें यह कीटाणु अधिकतासे घुस जाते हैं। गोलीके गरम होनेके कारण घाव होते समय वायुके कीटाणु तो बहुत कम प्रवेश करते हैं। पर गोलीके साथ कपड़ेके टुकड़े घावमें घुस जाते हैं। थलमें रहनेके कारण सैनिकके वस्त्रोंपर गर्द, धूल, कीचड़ तथा जलके बहुतसे कीटाणु रहते हैं जो इस प्रकार शरीरमें प्रवेश कर जाते हैं। यही कारण है कि उनके घाव शीघ्र अच्छे नहीं होते। पर नमक घुले हुए जलसे धोनेपर उनके घाव भी अब शीघ्र अच्छे होने लगे हैं।

हम लोग पहले इस देहाती नुस्खेपर हंसा करते थे। इंग्लैंडमें भी लोग नाविकोंके इस नुस्खेकी हँसी उड़ाते थे पर आज युद्धने ऐसे ऐसे अनेक चुटकलोंका यथार्थ महत्व बतला दिया है।

* * * *

वर्त्तमान युद्धमें जहां जर्मनी, फ्रांस और इंग्लैंडने बड़े बड़े आविष्कार किये हैं वहां एक महत्वपूर्ण आविष्कार करनेका सौभाग्य आस्ट्रियाको भी प्राप्त हुआ है वायना नगरके एल ज़ीलर नामक एक इंजीनियरने एक ऐसी मोटर बनायी है जो जल और स्थल, वायु कीचड़ और नदिओंके ढालू किनारोंपर सुगमतासे चल सके। यह मोटर साधारण मोटरोंसे अधिक ऊंची है। इसके पीछे एक पतवार लगा रहता है। मोटरके पहियोंको चलानेवाली बिजलीकी शक्ति एक घुंडी घुमानेसे इस प्रकार बदली जा सकती है कि उससे इच्छानुसार जब चाहें पतवार चलवा सकते हैं और जब चाहें तब मोटरके पहिये। इसी बिजलीके सम्मेलकको ([illegible]) हम इस प्रकार भी लगा सकते हैं कि पहिये और पतवार दोनों चल सकें। इसके पहिये ढालू उतार चढ़ावोंको बड़ी आसानीसे पार कर जाते हैं। इस प्रकार इस मोटरपर चढ़कर लोग सड़कोंपर दौड़ते हुए नदीके किनारोंको पारकर नदीके पास आ सकते हैं और फिर घुंडी घुमी दूसरे किनारेके ऊपर चढ़े और फिर सड़कपर दौड़ने लगे। नदीमें यदि दलदल हुआ तो झट पहिये और पतवार दोनोंको चलाने लगे। इस मोटरसे रेलकी सड़कों और नदियोंके पुलकी आवश्यकता जाती रहती है। इसीसे युद्धमें यह कितने काम की हो सकती है इसका अनुमान पाठक स्वयं कर सकते हैं।

यद्यपि अन्य देशवासी भी जल थल दोनोंमें चलनेवाली मोटर बनानेमें समर्थ हुए हैं तथापि सबसे अच्छी मोटर यही बनी है।

चारचरखीकी १६ अश्वबलवाली मोटरसे इसको बल मिलता है जिसके कारण स्थलमें वह ४५ मील प्रति घंटा जाती है पर जलमें उसका वेग १२ मील प्रति घंटा ही रह जाता है।

* * * *

आजकलकी भयंकर बंदूकोंसे जब गोली दाग़ी जाती हैं तो बहुधा दो आवाज़ें सुनायी देती हैं। निशाना लगाने वाले लोग बहुधा इसे यों समझाते हैं कि पहला शब्द तो बंदूकके दगनेका होता है और दूसरा गोलीके गिरने या फटनेका। फ्रेंचसेनाके कर्नल एग्नेसने गणित द्वारा यह हिसाब ग़लत ठहराया है "उन्होंने रिव्यू साइंटिफ़ीक" नामक पत्रमें एक लेख दिया है जिसका सारांश यह है।

जब कोई बड़ा भारी उल्कापात होता है तब बड़े ज़ोरकी आवाज़ होती है। और लोग

कहते हैं कि यह उल्का फटनेका शब्द है। पर बहुधा पता लगानेपर मालूम होता है कि जहां उल्का गिरा है वहां वह फटा नहीं है किंतु पृथ्वीमें धस गया है। यह शब्द वास्तवमें उल्काके गिरनेका नहीं है किंतु उल्कापात होनेके कारण वायु मंडलमें जो अशान्ति फैल जाती है यह उसीका फल है।

आजकलकी बढ़िया बंदूके दागनेसे जो दो आवाज़ें निकलती हैं उनमेंसे एक तो बंदूक दगनेकी है और दूसरी वायुमंडलके अशान्तिकी। यह आवाज़ें उन्हीं बंदूकोंमें सुनायी पड़ती हैं जिनसे दगी हुई गोली शब्द तरङ्गोंके गमन वेगकी अपेक्षा शीघ्रतासे जाती है। गोलीका वेग हवाके रुकावटके कारण कम होता जाता है और कोई १½ मीलके लगभग उसका वेग शब्द तरंगोंके वेगके बराबर रह जाता है। इसके आगे बढ़नेपर शब्द तरंग गोलीके समीप होती जाती है और जब यह आकर गोलीसे टकराती हैं तब दूसरा शब्द सुनायी पड़ता है। यदि कोई फटनेवाला बड़ा गोला हुआ तो उसके फटनेपर एक तीसरा शब्द अलग सुनायी देता है।

यदि इन बातोंकी परीक्षा करनेवाला जिस स्थानसे गोली दगी है उसके ३०० फुटसे कम ही अंतरपर रहेगा तो यह शब्द एक दूसरेसे मिल जायँगे। ज्यों ज्यों यह अपनी दूरी बढ़ाता जायगा शब्दोंका बीचका समय भी बढ़ता जायगा। १½ मीलके लगभग पहुंचनेपर एक लगातार सीटीकी आवाज़ या गरज सी दोनो शब्दोंके बीचमें सुनायी पड़ेगी। आगे बढ़नेपर यह सीटी या गरज और भी अधिक देरतक सुनाई देती रहेगी।

* * * *

साधारणतः लोग समझते हैं कि साहुल बिल्कुल सीधा लटकता है। यह बात सर्वत्र ठीक नहीं है। धरतीकी ऊंचाई नीचाई पहाड़ और वस्तुके तारतम्यसे साहुल भी कुछ अंश तिरछा लटकता है। यह तिरछापन इतना सूक्ष्म है कि इसे नापनेकेलिए विशेष यंत्र होते हैं। मिस्टर हेडरने एक ऐसे यंत्रका निर्माण किया है जिसके द्वारा किसी पहाड़के चारों ओरके घेरेका जितना कुछ प्रभाव साहुलको तिरछा करनेमें पड़ता उन सबका योग सहज निकाला जा सकता है। ग० प्र०

* * * *

## प्राप्ति स्वीकार

निम्नलिखित सज्जनोंसे परिषद्के चन्देकी प्राप्ति सहर्ष स्वीकार करते हैं:—

१ पं० रामजीलाल शर्म्मा, सम्पादक विद्यार्थी प्रयाग १२)
२ श्रीयुत अयोध्यादास, बार-एट्-ला गोरखपुर (१९१५-१६) १२)
३ पं० सत्यनारायण सिक्रीटेरी हिन्दी साहित्य समिति ३)
४ श्रीयुत पन्नालाल अजमेरी घिया-मण्डी अजमेर (१९१५-१९१६) ३)
५ श्री० धनसुखजी, हज़ारीलालजी ६)
६ श्रीयुत काज़ी अज़ीज़ उद्दीन जुडीशियल सिक्रेटरी धौलपुर (१९१५-१९१६) (१९१४-१५) १५)
७ मिस्टर महावीर प्रसाद बी एस्-सी., एलटी (१९१५-१९१६) ६)
८ अध्यापक सतीशचन्द्र देव, एम् ए प्रयाग (१९१५-१९१६) ३)
९ श्री० कृष्णगोपाल, कदौरा (१९१५-१६) ३)
१० अध्यापक विशम्भर लाल वैश्य एम्-एस्-सी, आगरा (१९१५-१६) ३)
११ श्रीयुत चिरञ्जी लाल माथुर, बी. ए. एल्. टी जोधपुर ३)

१२ श्री० मोतीलालजी, सुपरिन्टेण्डेण्ट बोर्डिङ्ग हाउस जोधपुर (१६१५-१६) ३)
१३ श्रीयुत मुर्लीधर मिश्र, बी. ए, एल.एल.बी. मेरठ (१६१५-१६) ३)
१४ श्री० बालादत्त जोशी, मैनेजर, धामपुर एस्टेट (१६१५-१६) १२)
१५ रायबहादुर पु० गोपीनाथ, एम. ए. मेम्बर स्टेट कौन्सिल जयपुर (१६१५-१६) १२)
१६ श्री० शक्तिसिंह वर्म्मा बीजेपुर मेवाड़ (१६१५-१६) ३)
१७ श्री० शारदा प्रसाद, सतना (१६१५-१६) १२)
१८ श्रीयुत ब्रजराज १२)
१९ श्री परशुराम चतुर्वेदी (१६१५-१६) ३)
२० श्रीयुत ब्रह्मदीन सकसेना ३)
२१ श्रीयुत श्रीनाथ मिश्र, बड़ी महारानीका दफ़्तर दरभंगा (१६१५-१६) १२)
२२ श्रीमान् एस-एच फ्रीमेन्टेल, जे-पी, आई. सी. एस् (१६१५-१६) १२)
२३ डाक्टर झा, एम. ए, डी. लिट्, प्रयाग (१६१५-१६) ४)
२४ श्री सिद्धेश्वरी प्रसाद वर्म्मा एम-एस्-सी लाहौर (१६१५-१६) १२)
२५ श्री जगदीश सहाय माथुर बी ए, एल-एल् बी, भरतपुर (१६१५-१६) १२)
२६ पं० बंसीधरलाल, अचरोल ((१६१५-१६) २)
२७ श्री ए. जी. शिरेफ आई. सी. एस् राय बरेली १२)
२८ अध्यापक चन्द्रो प्रसाद एम. ए. बनारस (१६१५-१६) १२)
२९ पं० योगेश्वर दत्त जोशी-वैद्य कंखल (१६१५-१६) १२)
३० माननीय ब्रजकिशोर प्रसाद दरभंगा (१६१५-१६) १२
३१ श्रीयुत जगद्विहारी सेठ बी एस्-सी केम्ब्रज इंगलेण्ड (१६१५-१६) १२)
३२ राय जी. एन. चक्रवर्ती बहादुर एम. ए., बनारस (१६१५-१६) १२)
३३ पं० विनायक राव, रिटायर्ड सुपरेंटेंडेंट ट्रेनिंग् स्कूल जबलपुर (१६१५-१६) १२)
३४ श्रीमहाराजाधिराजा छतरपुर (१६१५-१६) १२)
३५ अध्यापक के. सी. पांडे, सेंट जान्सकालेज आगरा (१६१५-१६) ३)
३६ अध्यापक हमीद-उद्दीन-बी. ए. दारुल् उलूम हैदराबाद (१६१५-१६) १६)
३७ श्री० रामनरायन सकसेना चौहट्टा कन्नोज (१६१५-१६) ३)

योग २६६)।

जिन सज्जनोंने चन्दा १० अप्रेलके पहले भेजा हो, परन्तु ऊपर स्वीकृत न हो तो उन्हें उचित है कि मंत्री को शीघ्र सूचना दें, नहीं तो पीछे से भूल का पता लगना कठिन होगा।

गोपाल स्वरूप भार्गव

मंत्री

## सूचना

किसी स्थानकी नागरी प्रचारिणी सभाके मंत्री, श्रीयुत सत्यनारायणजीने हमारे पास ३) रुपये भेजे हैं, परन्तु उनका पता मनी आर्डरमें नहीं दिया हुवा था। यदि किसी सज्जनको आपका पता मालूम हो तो कृपया मंत्रीको सूचना दें।

## विज्ञापन छपाईके नियम।

१—कवरपर प्रति पृष्ठ प्रति मास ... ... १५)

प्रति पृष्ठ १ कालम ... ... १०)

½ ,, ... ... ५)

चौथाई ,, ... ... ३)

आधे कालमसे कमका ... ... २)

२—अश्लील विज्ञापन छापा न जायगा। अ. ब्लाक छपाना चाहें तो लागतमें ) का टिकट भी भेज दें।

३—विज्ञापनकी छपाई सर्वथा पेशगी ली जायगी।

४—५) रुपयेसे कम दामका विज्ञापन छपानेवालोंको ।) प्रति कापी पत्रका मूल्य अधिक देना पड़ेगा।

५—विज्ञापन बँटाईकी दर चौथपत्र देखकर बतायी जायगी।

६—अधिक कालकेलिए तथा अन्य बातें पत्र व्यवहार द्वारा तय करनी चाहिए।

निवेदक, मंत्री विज्ञान परिषत्, प्रयाग।

# FOR
## All Money Orders,
## Letters, Articles, etc.,

CONCERNING

# VIJNANA,

**Please note this Address—**

**SECRETARY,**

## Vijnana Parishat,

**ALLAHABAD**

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी,लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए ।

पता—मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग ।

Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by K. C. Bhalla
Vijnana Office, Allahabad.

भाग ३ | वृष, १९७३ । May, 1916. | संख्या २
Vol. III. | No. 2

## प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

### विषय-सूची



### प्रकाशक

**विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग ।**

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

# विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताह से अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

(४) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरह के पत्र व्यवहारकेलिए पता—

मंत्री विज्ञान परिषद् प्रयाग

## विज्ञान-परिषत्के कार्य्यकर्त्तृगण—१९१५-१९१६।

### सभापति

माननीय डाक्टर सुन्दरलाल रायबहादुर, बी. ए., एल-एल. डी., सी. आइ. ई., प्रयाग

### उपसभापति

महामहोपाध्याय डाक्टर गङ्गा नाथ झा, एम. ए., डी लिट, प्रयाग

माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय, बी. ए., एल-एल बी. प्रयाग

श्रीयुत एस. एच. फ्रीमैन्टल साहब, जे. पी., सी. आइ. ई., आइ सी. एस., मजिस्ट्रेट और कलेक्टर, प्रयाग

श्रीमती एनी बेसन्ट, पी: टी. एस., मद्रास

माननीय राजा रामपालसिंह, सी. आइ. ई., कुर्री सुदौली राज, रायबरेली

राय बहादुर पुरोहित गोपीनाथ, एम. ए., (मेम्बर स्टेट कौंसिल) जयपुर

### प्रधान मंत्रिगण

लाला सीताराम, बी. ए., एफ् ए. यू., प्रयाग

अध्यापक सतीशचन्द्र देव, एम. ए., प्रयाग

### मंत्रिगण

अध्यापक गोपालस्वरूप भार्गव, एम. एस-सी., प्रयाग

अध्यापक मौलवी सैय्यद मुहम्मद अली नामी, प्रयाग

### कोषाध्यक्ष

श्री व्रजराज, बी. एस-सी., एल-एल. बी., प्रयाग

### अन्तरंगिगण

अध्यापक रामदास गौड़, एम. ए., प्रयाग

अध्यापक देवेन्द्रनाथ पाल, एम. ए., ,,

,, शालग्राम भार्गव, एम. एस-सी ,,

,, हीरालाल खन्ना, बी. एस-सी, ,,

,, श्यामसुन्दरदास बी. ए., बनारस और लखनऊ

,, नन्दकुमार तिवारी, बी. एस-सी., लखनऊ और कानपुर

,, पांडेय रामवतार शर्मा, एम. ए., साहित्याचार्य पटना

,, गोमतीप्रसाद अग्निहोत्री, बी. एस-सी., नागपुर

श्रीयुत राधामोहन गोकुल जी, कलकत्ता

### लेखापरीक्षक

श्रीमान पण्डित श्रीधर पाठक, लूकरगंज, प्रयाग

श्रीयुत प्यारेलाल केसरवानी, (हेड असिस्टेन्ट आफि एन्टल लैफ्र आफ़िस) प्रयाग

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३।५।

भाग ३ } वृष, संवत् १९७३। मई, सन् १९१६। { संख्या २

## मंगलाचरण

*माता तू भलि रीझन वारी।
खीझत कहूँ सहज सेवातें
कहूँ मुदित सहिगारी।
जनम जनम तप करि निज देही
जिन माटी करि डारी,
तिन चरनन रज परस न पायो
रहिगे दया भिखारी।
सकल भुअन जिनकौं इक कौतुक
तिन तु अहित तन धारी,
हाहा खाइ मनाइ थके बहु,
बार सोइ बनवारी † ।
साँचोइ ह्वै सन्तानवती अति
नरम होत हैं नारी,
तन मन धन प्यारी सन्ततिपै
देत सहजही वारी।
सहज अराधे सो तू राधे
सुतपर नेह पसारी,
जोइ जोइ मांगत ‡ देत आज तू
तुरत दया व्रतधारी।
हम तव सुअन सदा पद पूजत
सब विधि आज्ञाकारी,
आरत देखु आज भारत यह,
देहि विपति सब टारी।

—रामदास गौड़

*राधाजीसे यहां संकेत है उस शक्तिसे, जिसके एक रूपको हम विद्युत कहते हैं। राधा शब्दका अर्थ बिजली भी है।

† बनवारी=वनमाली, जलसे आवृत अर्थात् मेघ। वनमाली शब्द यहां उस धन-विद्युतका उपमान है जो प्रत्येक परमाणुका केन्द्र है और जिसके चारों ओर ऋण-विद्युत्कणोंकी अत्यन्त चंचल परिक्रमा निरन्तर होती रहती है, परन्तु मेल कभी नहीं होता।

‡ यहां उस पाश्चात्य उन्नतिकी ओर इंगित है जिसमें छोटेसे बड़ेतक सारे काम बिजली और अन्य रूपकी शक्तियोंसे लेते हैं।

# भुनगा पुराण ।

[ ले० रामदास गौड़, एम्. ए. ]

## कपालखण्ड ।

### चिकुरवन वर्णन ।

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्,
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ।
अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरोहरिः,
अभाललोचनः शम्भुः कलौ विज्ञान पारगाः ॥

कलिके पांच हजार वर्ष बीत जाने-पर जब भगवती भागीरथीका माहात्म्य अनेक नहरोंके कारण घट गया और कलियुग इतना व्याप गया कि मशक नामक दानवोंने मलेरिया, और मूषक नामके राक्षसोंने महामारी नामके बड़े घोर शस्त्रोंके बलसे संसारपर अपना अधिकार कर लिया तब * नैमिषारण्यके पवित्र क्षेत्रमें अट्टासी हजार भुनगा ऋषि इकट्ठे हुए और आचार्य्य भुनगेश्वर जीसे हाथ जोड़कर कहने लगे "भगवन्, प्रलयकालके आनेके सभी लक्षण दिखाई देने लगे, ज्ञान विज्ञानका लोप हो गया, संसार स्वार्थी हो गया, पापके अंधकार-में भले बुरे, सत्य असत्यकी पहचान जाती रही। संसारका सच्चा ज्ञान अब आपके सिवाय किसीके पास न रह गया। अब कृपाकर हम लोगोंको पवित्र पुरानी सच्ची कथाएं सुनाइये जिनसे हमारा निस्तार हो जाय ।

भुनगादि ऋषियोंकी यह विनीत प्रार्थना सुन बड़े गंभीर भावसे, संसारकी दशापर विचार करते हुए भुनगेश्वरजी महाराज ठंडी सांस ले बोले—

"ऋषियो ! तुमने भुनगा संसारकी परम हितकामनाकेलिए यह बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया, परन्तु देखो ऐसा घोर युग व्याप रहा है कि अब धर्म्मका रहा सहा एक चरण भी लंगड़ा हो रहा है, आये दिन हमें ( वृषभरूपी ) धर्म्म-की पूंछका ही सहारा रह जायगा। जबसे इस धरतीपर असुरोंका राज हो गया तबसे ही हमारे सुखका दिनपर दिन क्षय होने लगा। परन्तु, अपने संसारकी प्राचीन कथा सुनकर अचरज नहीं कि तुम लोगोंके चित्तमें फिरसे कुछ अपने धर्म्मकी रक्षाकी ओर रुचि हो जाय और यथोचित उपाय करो। इसीलिए हे परमात्माके परमप्यारे भुनगा ऋषियो ! पूरा ध्यान देकर पवित्र भुनगा पुराणकी मनोहारिणी कथा सुनो। इस कथाको जो प्राणी मन लगा-कर सुनता है, परम कल्याणको पाता है ।

दोहा ।

पील रूप पीलुक लहै चीलर होवे चोल ।
बनै. कथा सुन, साहसी सिंहसमान पिपील ॥
माछी आछी गति लहैं दीमक दपटें देव ।
माटे नाटे ना रहें काटें निकट कुटेव ॥
बौरीसी दौरी फिरैं घनी घिनौरी जौन ।
तिनकी पौरी पै परी मांगैं भौंरी भौन ॥
समय फिरै भुनगान कौ फैले दस दिसि आन ।
बड़े होन की का कहैं मिलै न कोउ समान ॥

मुनियो ! भुनगा पुराणकी परम पवित्र कथा हमने पहले पहल *जुंगमुनिसे सुनी जब हम आकाशमंडलमें विचरते विचरते मानवाचल नामके बड़े ऊंचे शिखरपर कपालखण्डके जंगलोंमें † पहुँच गये। वहीं एक काले चिकुर वृक्षकी ‡झाड़ियोंमें आसन मारे जुंगमुनि तप कर रहे थे। कोमल श्यामल चतुर्भुजी केश-हीन मूर्ति तपस्या करते हुए भी रक्त-योगके बलसे हृष्ट पुष्ट थी। शुंडादंडमें नया चूसा

* नैमिषारण्य = पलकोंके बरौनियोंके जंगलमें। इस कथाके रूपमें मनुष्यके शरीरका ऐसा वर्णन रहा करेगा जैसा भुनगे जैसे नन्हें जीवोंकी दृष्टिसे हो सकता है।

*जूँ जो सिरमें पड़ता है। †अर्थात् मनुष्यका सिर। ‡ बाल

हुआ यज्ञप्रसाद रक्त लगा ही था। ज्योंही उनके संमुख पहुँचा उनके श्याम-खुरारविन्दको सचतुरंग प्रणाम किया। उन्होंने भी बड़े वात्सल्य भावसे शुंडादंड-दोलन पूर्वक मुझे जो भर आशिष दी और तुरन्त चिकुर-मूल रक्त-चरु मेरे भोजनकेलिए आगे रक्खा।

उनके अतिथि-सत्कारको स्वीकारकर मैंने फिर विनयपूर्वक हाथ जोड़कर पूछा कि महाराज, यह कौन देश है, यहांकी कैसी भूमि है, यह पेड़ कैसे हैं, यहांके रहनेवाले कैसे हैं, उनकी जीविका क्या है, यहांपर आप सब सुखसे तो रहते हैं, कोई कष्ट तो नहीं होता, ऋतु कैसी है, आपकी तपस्यामें विघ्न तो नहीं पड़ता, सभी वृत्त, हे महाराज, मेरे तईं संक्षेपसे कहो।

इतना सुन जुँगमुनि बोले, हे भुनगेश ! यह प्रश्न तुमने बहुत ही अच्छे किये। हर एकका उत्तर हम तुम्हें संक्षेपसे देंगे।

हे महामुने ! यह मनुष्य नामक ग्रहपर स्थित मूर्द्धापर्वतके ऊपर कपालखण्ड नामका बड़ा विशाल जंगल है। इसमें एक ही जातिके कई पेड़ हैं जिनमें पत्ते नहीं होते, परन्तु तनेसे लगी हुई शाखाएं होती हैं। यह पेड़ अनेक रंगोंके होते हैं। इनके ऊपरका भाग दूरसे देखनेमें चिकना पर सचमुच खुरदरा होता है। छाल बड़ी कड़ी और एकमें समस्त ऐसी जुटी हुई होती है कि टुकड़े टुकड़े नहीं हो सकती। ऊपरसे कई परतोंके भीतर एक रंगीन रस भरा रहता है; यह रस जिस रंगका होता है, उसी रंगका चिकुरका वृक्ष भी होता है। परन्तु जब पेड़ बहुत पुराना होता है यह रस चुक जाता है। जिस पेड़के तनेमें रस न रहा वह सफ़ेद क्या बल्कि पारदर्शी हो जाता है। पर पेड़ ज्योंके त्यों खड़े रहते हैं। इन पेड़ोंको देवभाषामें बाल या केश भी कहते हैं। जब कभी यह पेड़ ज्यादा सूख सूख रंगहीन होने लगते हैं प्रायः देखा गया है कि इस मानव जगतका नियन्ता इस जंगलको रंगसे तोप देता है और इन पेड़ोंके ऊपरी भाग, झट काले हो जाते हैं। पर जड़ तक इस रंगवर्षाका प्रभाव नहीं पड़ता।

कभी कभी भूमिमें ऐसा रोग फैल जाता है कि यह पेड़ कट कटकर गिरते जाते हैं। परन्तु इनका वर्णन इनके उचित प्रसंग पर करना अधिक अच्छा होगा।

इत्यार्षे श्री भुनगा महापुराणे कपालखंडे चिकुर वन वर्णनोनाम प्रथमोऽध्यायः।

---

# चमकते हुए हीरक

[ ले० महावीर प्रसाद बी. एस-सी]

### हीरे और शीशेमें भेद

हीरे देखनेमें चमकते हुए शीशेके टुकड़ेकी भांति होते हैं, जिससे कदाचित् यह समझा जाता होगा कि हीरा, शीशाकी जातिका, कोई उच्च कोटीका पदार्थ है। रूपके अतिरिक्त और किसी गुणमें शीशा हीरेकी समानता नहीं कर सकता। हीरा बहुत कठोर होता है और बिलकुल भिन्न पदार्थका बना होता है। शीशा विशेषकर बालू (जो सफेद रेतीले पत्थरको कूट, पीस कर बनाई जाती है) सोडा और चूनेको साथ गलाकर बनाया जाता है, परन्तु हीरेमें कार्बन[१] ही कार्बन पाया जाता है। कार्बनका रंग हमको भली तरह मालूम है, यह साधारणतः काला होता है। काजल प्रायः शुद्ध कार्बन है। परन्तु हीरक साधारणतः शीशेकी तरह स्वच्छ होता है, काला नहीं; फिर हीरे और कार्बनमें कैसी समानता ?

### हीरे और कोयलेमें भेदका कारण

यह समझना अवश्य कठिन है कि वही पदार्थ काजलकी तरह काला और हीरेकी

१-धूम रहित लकड़ीका कोयला जलानेसे जो अंश जल जाता है वह कार्बन कहलाता है।

तरह स्वच्छ और चमकीला कैसे हो सकता है; परन्तु भिन्नतामें समानताके उदाहरण कितनी ही वस्तुओंमें पाये जाते हैं। साधारण उदाहरण बर्फ और पानी वा ठोस घी और द्रव घीके समझ लो। यह सम्भव है कि एक ही पदार्थके भिन्न भिन्न रूपका कारण उस पदार्थके सूक्ष्मसे सूक्ष्म टुकड़ों वा अणुओंके बनावटकी भिन्नता हो, अर्थात् काजलके अणुओंकी रचना एक प्रकारकी हो और हीरेके अणुओंकी दूसरे प्रकारकी। यदि हीरेका एक स्वच्छ, रंगहीन टुकड़ा रेडियम नामक धातुके पास रख दिया जाय तो कुछ समयके उपरान्त हीरा नीलापन लिये हुए हरे रंगका हो जाता है इसका कारण केवल यही है कि रेडियमसे निरन्तर कण निकल निकल कर हीरेसे टकराते रहते हैं और उसके अणुओंकी रचनाको बदल देते हैं। इससे रचनाकी उपयोगिता भी प्रकट होती है।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है कि हीरे कार्बनके अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं। यह बात कई प्रमाणोंसे सिद्ध हो चुकी है। यदि कोयला जिसमें अधिकतर कार्बन होता है लेकर जलावें तो कार्बन हवाके आक्सिजनके साथ मिलकर अदृश्य गैसमें बदल जाता है। इस गैसको कार्बोनिक एसिड गैस कहते हैं। इसी तरह हीरा भी आंचमें जलाया जा सकता है। इसके जलनेमें जो गैस पैदा होती है वह भी कार्बोनिक एसिड गैस ही है। सोडावाटर, लेमोनेड इत्यादिमें जो गैस बुलबुलाती हुई निकलती है वह भी कार्बोनिक एसिड गैस है। यदि यह गैस हीरेको जलाकर बनायी जाय और इसीसे सोडावाटर बनाया जाय तो हमें यह कहनेमें कुछ भी संकोच नहीं होगा कि हम पानीमें हीरा पी रहे हैं। वैसे भी यह कहने में कोई हर्ज नहीं जान पड़ता कि जब कभी हम सोडावाटर इत्यादि पीते हैं तब हीरा ही पीते हैं। इसके अतिरिक्त हवामें कार्बोनिक एसिड गैस और भोजनमें कार्बन होता है जिससे हम यह कह सकते हैं कि हम हीरा खाते पीते और सांसके द्वारा ग्रहण करते हैं।

### कृत्रिम हीरा कैसे बना सकते हैं

हीरेवाले कार्बनको काजल वा कोयला वाले कार्बनमें लेआना बड़ा सुगम है, परन्तु काजल वा कोयलावाले कार्बनसे हीरावाला कार्बन बनाना अत्यन्त कठिन है। यदि यह भी सुगम होता तो हीराका इतना आदर न होता। तो भी बहुत दिनोंसे लोग कोयला और काजलवाले कार्बनको हीरेवाले कार्बनके रूपमें ले आनेका प्रयत्न कर रहे हैं और कुछ कुछ फलीभूत भी हुए हैं। यह देखा गया है कि जब कोयलेपर बहुत दबाव डाला जाता है तब कुछ अंश नन्हे नन्हे हीरकोंमें परिणत हो जाता है। इनमेंसे कुछ रंगहीन और कुछ हल्के काले रंगके होते हैं। बड़े रसायन-शास्त्र वेत्ता सर विलियम क्रुक्सने इसी प्रकार बहुतसे नन्हे नन्हे हीरक उस कोयलेसे बनाये हैं जो मिसरीके जलानेसे बना था। बड़े बड़े हीरे तो खानसे ही निकाले गये हैं।

प्रकृतिने हीरोंको कैसे बनाया? शायद उसी भांति दबाव डालकर जैसे उपरोक्त विद्वान ने। शायद भूगर्भमें काले कोयलेको इतना दबना पड़ा कि वह हीरा हो गया। कुछ लोग कहते हैं कि आकाशसे हीरोंकी वर्षा हुई। उपरोक्त विद्वान्का मत है कि यह बहुत सम्भव है कि कुछ हीरे आकाशसे गिरे।

सभी लोगोंने टूटते हुए लूकोंको देखा होगा, टूटनेवाले लूक उल्कासे जुदा हुए लोहेके टुकड़े होते हैं। जब वह वायुमण्डलमें घुसते हैं तब उनका वेग इतना तीव्र होता है कि रगड़से आग लग जाती है, और कभी कभी वह जल जाते हैं। यदि यह लोहेके टुकड़े बहुत बड़े हुए तो सब नहीं जल जाते वरन् पृथ्वीपर बड़ा भारी शब्द करते हुए गिरते हैं और कभी कभी बड़े बड़े छिद्र कर-

देते हैं। पृथ्वीपर कई स्थानोंमें ऐसे लोहेके टुकड़े मिले हैं। अमेरिका महाद्वीपके अरीज़ोनाके मैदान-में सहस्रों उल्कालोह पाये गये हैं। इनमेंसे कुछ तो तोलमें केवल कई छटांकके ठहरे हैं और कुछ १४ मन तक। इसी मैदानमें एक स्थानपर एक गड्ढा लगभग ६०० फीट गहरा देखा गया है जिसको लोग समझते हैं कि शायद उल्का-लोह ही से यह बन गया है।

एक दिन एक अमेरिकाके वैज्ञानिकने जो अरीज़ोनाके उल्कालोहकी परीक्षा कर रहा था यह अद्भुत आविष्कार किया कि उसमें काले और पार दर्शक हीरे भी हैं। अब इसमें सन्देह नहीं रहा कि यह उल्का-लोह टूटकर हवामें घुसते समय अत्यन्त गरम होगया और जिस समय ऊपरी भाग कुछ ठंढा हुआ परन्तु भीतरी भाग कुछ गरम ही था सिकुड़नेसे भीतरी भाग इतना दबा कि भीतरका कार्बन हीरकमें परिणत होगया।

ऐसा भी नहीं है कि सभी हीरे इसी तरह बने हों। परन्तु क्रुक्स साहब कहते हैं कि उल्का-लोह कई बार हीरोंसे लदा हुआ अवश्य गिरा होगा। इसलिए प्रत्येक मनुष्यको यह ध्यानमें रखना चाहिए कि जहां कहीं उल्कालोह गिरे उसमें हीरोंके ढूढ़नेका प्रयत्न अवश्य करे।

बहुतसे हीरोंमें यह गुण होता है कि यदि वह धूपमें रख दिये जायँ और फिर अंधेरी कोठरीमें लाये जाँय तो जुगनूकी नांई चमकते हैं। यदि कोई हीरा एक कांचकी नलीमें रख दिया जाय, और उसमेंसे हवा निकाल ली जाय, फिर नलीमें बिजलीकी धारा बहायी जाय, तो हीरा अंधेरेमें चमकने लगेगा। विलियम क्रुक्स-के पास एक हीरा है जो हरा चमकता है और इतना प्रकाश देता है जितना एक मोमबत्ती।

दुनियांमें जितने हीरे हैं उनमेंसे अधिकतर ब्राज़ील और दक्षिणी अफ्रीक़ामें पाये गये हैं। किम्बरलीकी खानें दुनियांमें सबसे बड़ी खानें हैं। एक अरब बीस करोड़ रुपयेसे अधिकके हीरे इन्हीं खानोंसे निकाले गये हैं। एक खानमें 'कलीनन' नामका सबसे बड़ा हीरा पाया गया है जिसका दाम डेढ़ करोड़ रुपया आंका गया है।

यह कितने आश्चर्य्यकी बात है कि एक छोटासा चमकता हुआ हीरा दाममें सहस्रों बड़े बड़े मकानोंके बराबर हो और कुछ ही फ़ीट ऊंचे हीरोंसे भरे हुए बकसका दाम एक अरब बीस करोड़ रुपया हो। जब हीरेकी उपयोगितापर विचार किया जाता है तब यही मालूम होता है कि इतना दाम लगाना भूल है। परन्तु लोगों-की रुचि इसके प्रतिकूल देखते हुए यही कहना पड़ता है कि प्राकृतिक सौन्दर्य्यके सामने उपयोगिताका मनुष्य उतना आदर नहीं करते और प्रेमको भोजनसे भी उच्च स्थान देते है।

हीरा जलाकर कार्बोनिक एसिड गैसके रूपमें लाया जा सकता है। गरम करनेपर यह एक दूसरी जातिके कार्बनका रूप धारण कर लेता है जिसको ग्रेफाइट कहते हैं। ग्रेफाइट वही पदार्थ है जिससे पेन्सिलें बनायी जाती हैं। इसलिए यह कहना कि हीरेसे किताब लिखी जा सकती है अतिशयोक्ति नहीं है।

---

## पौधे की शरीर रचना

( लेखक—श्री विश्वनाथ सुत )

बीजसे पौधेका जन्म होजानेपर अब उसके शरीरकी रचनाकी ओर दृष्टि डालना चाहिये। आंखमें शक्ति नहीं कि उसकी रचनाके भेद खोल सके, केवल क्षुद्रअनुवीक्षण यन्त्रके द्वारा इसका कुछ बोध हो सकता है। जानवरोंकी तरह समस्त वनस्पतीय पदार्थों-की बनावट कोष ( cell ) से है। 'कोषको' परिभाषा द्वारा या कागज़पर चित्र खींच कर

Botany वनस्पति शास्त्र ]

बनस्पति शास्त्रके न जाननेवालोंको समझाना असम्भव नहीं तो कठिन तो अवश्य ही है। 'सेल' को समझनेकी चेष्टा करते हुए यदि हमारे पाठकगण किसी मधुमक्खीके छत्ते-की कल्पना करें अथवा उसे अवलोकन कर उसपर दृष्टि जमा सकें तो बहुत कुछ काम बन जाय। छत्तेमें पास पास जिस प्रकार एक दूसरेसे मिले हुए छोटे छोटे खाने होते हैं उसी प्रकार जीवों तथा बनस्पतियोंमें अनुवी-क्षण यन्त्रद्वारा देखनेसे एक दूसरेसे मिले हुए खाने (कि जिन्हे 'सेलें' कहते हैं) दृष्टिगोचर होते हैं। मधुकी जगह इन 'सेलों' में पेड़ अथवा जीवोंके जीवन-के मूल और आवश्यक पदार्थोंका संग्रह होता है। (देखो चित्र १)
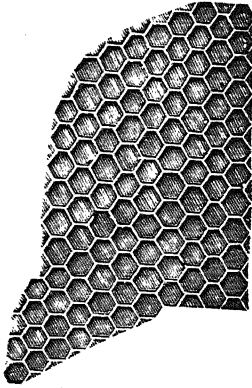
चित्र नं० १–छत्ता

इस जीवन–मूलको अङ्गरेज़ीमें प्रोटोप्लाज़्म (protoplasm.) कहते हैं। यह किसी एक अकेली वस्तुसे नहीं वरन् कई वस्तुओंसे मिल कर बना है। मुख्य इसमें निम्न लिखित छः वस्तुएँ पायी जाती हैः—

कार्बन (carbon.)
ओषजन (oxygen.)
उज्जन (hydrogen,)
नत्रजन (nitrogen.)
फासफोरस (phosphorus.)
गंधक (sulphur.)

रसायन–शास्त्रज्ञ अभी तक प्रोटोप्लाज़्ममें उपस्थित, और इन वस्तुओंसे मिलकर बने हुए पदार्थोंका पूर्णतःपता लगानेमें असमर्थ हुए हैं।

'सेलों' के आकार कई प्रकारके होते हैं कहीं गोल, कहीं अण्डाकृति, कहीं गावदुम, और कहीं लम्बोतरी, अथवा कहीं कहीं लाँबी और दोनों ओर सिरे दार तथा बेसिरे वाली 'सेलें' भी देखनेमें आती हैं। इनकी दीवारें (cellwalls) रोआँकी (cellulose.) बने होनेके कारण बड़ी कोमल होती हैं, पर कहीं कहीं lignin लिग्निन तथा (cork) कार्ककी तह 'सेल' की दीवारों पर पाई जाती हैं। ऐसी दीवारें साधारणतः अन्य दीवारोंकी अपेक्षा कुछ मोटी होती हैं।
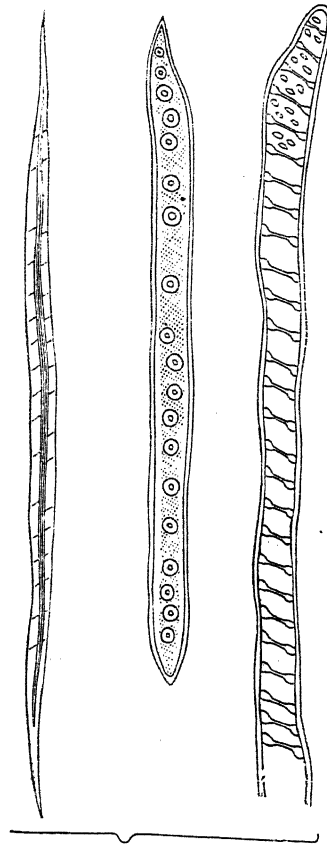
चित्र नं० २–मृतक सेलें

'सेल' के भीतर अनुवीक्षण यन्त्रद्वारा सबसे पहले एक गोल आकारकी वस्तु दीखपड़ती है इसे न्यूक्लिअस (cell nucleus) कहते हैं

और यह सेलके अधिकाँशको घेरे रहता है न्यूक्लिअसके अतिरिक्त—और उसके और सेल-की दीवारोंके बीचमें—कुछ छोटे छोटे दानेदार पदार्थ दीख पड़ते हैं। इसे सेलप्लाज़्म या साइ-टोप्लाज़्म ( cellplasm or cytoplasm. ) कहते हैं। साईटोप्लाज़्ममें बहुत से चमकदार पदार्थ कि जिन्हें क्रोमेटोफ़ोर्स ( chromatophores ) कहते हैं पाये जाते हैं। एक जीवित बनस्पतीय
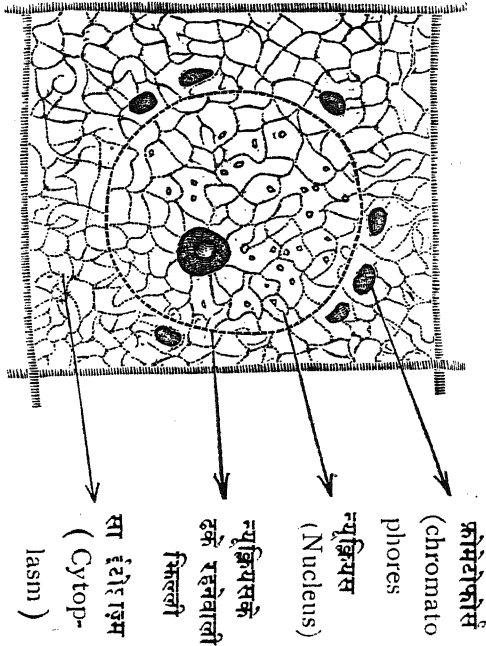
चित्र नं० ३

सेलमें * इसप्रकार न्यूक्लिअस, साइटोप्लाज़्म और क्रोमेटोफोर—यह तीन पदार्थ उपस्थित हाते हैं। इन सबको साधारणतः प्रोटोप्लाज़्मके नामसे पुकारते हैं। साइटोप्लाज़्म और क्रोमेटो-फ़ोर—यह सेल के दो आवश्यकीय अङ्ग हैं और इन्हींकी कार्य्य लीलापर सेलके सारे आवश्य-क कर्तव्य निर्भर हैं।

अदृष्य पौधोंमें अभी तक प्रोटोप्लाज़्मकी कार्य्य प्रणाली विभाजित नहीं हुई है, और तो क्या न्यूक्लिअस तककी उपस्थिति सिद्ध नहीं हो पाई। कुकरमुत्ता, नागछत्र, बेक्टीरियामें क्रोमेटोफ़ोर नहीं होते। बनस्पतीय सेलोंमें उपरोक्त पदार्थोंके अतिरिक्त वेकुओल्स (vacu-oles.) भी होते हैं जिनमें एक नरल पदार्थ कोष-रस भरा रहता है।
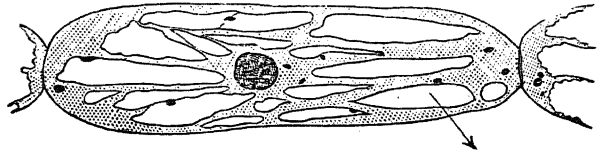
वे कुओल्स कि जिनमें सेलसेप भरा है
चित्र नं० ४

जीवित सेल। न्यूक्लियस बीचमें है

क्रोमेटोफ़ोर, उगती हुई शाखाकी सेलोंमें न्यूक्लिअसको घेरे रहते हैं और बड़े चमकदार बेरंगवाले पदार्थ ज्ञात होते हैं। पुरानी सेलोंमें या तो यह ऐसे ही रहते हैं या इनकेद्वारा क्लोरो-प्लास्ट्स, ल्यूकोप्लास्ट्स और क्रोमोप्लास्ट्स ( chloroplasts, leucoplasts and chromo-plasts. ) की उत्पत्ति होती है।

क्लोरोप्लास्ट्स—यह पौधेके उन अङ्गोंमें पाये जाते हैं जो कि प्रकाशमें रहते हैं (उदाहरणार्थ पत्तियाँ) इनकी शकल अण्डाकार होती है, रंग-में हरे होते हैं।

ल्यूकोप्लास्ट्स—यह पौधेके उन अङ्गोंमें पाये जाते हैं जहां कि प्रकाशका प्रवेश नहीं हो सकता। यह क्रोमेटोफ़ोर्सके उन अँशोंसे बनते हैं जो कि क्लोरोप्लास्टमें परणित नहीं होते। क्लोरो-प्लास्ट्ससे यह दृढ़, गोलाकार और बहुधा लम्बे होते हैं। जब यह प्रकाशमें आते हैं तो क्लोरो-

* बनस्पतीय पदार्थोंमें जीवित सेलोंके अतिरिक्त, मृतक सेलें भी पायी जाती हैं कि जिनमें न्यूक्लिअस इत्यादि नष्ट होजानेके कारण दिखायी नहीं पड़ते। मृतक सेलोंकी कार्य्य प्रणाली निराली ही होती है। इसका पूर्णतः बर्णन आगे चलकर किया जायगा।

प्लास्ट्स‌में परिणत हो जाते हैं, जैसा कि बहुधा आलू व मूलीके उस भागको देखनेसे स्पष्ट होगा जोकि ( खेतमें ) भूमिमें दबा नहीं रहता।

क्रोमोप्लास्ट्स—यह वे रंगवाले क्रोमेटोफ़ोर्स अथवा क्लोरोप्लास्ट्ससे ही उत्पन्न होते हैं। शकलमें तो क्लोरोप्लास्ट्ससे मिलते जुलते हैं पर आकारमें ज़रा छोटे होते हैं। यह रंगमें पीले होते हैं और फलों तथा फूलोंमें पाये जाते हैं।

उगती हुई शाखाकी सेलें एक पतली झिल्लीद्वारा एक दूसरेसे पृथक पृथक होती हैं। ज्यों ज्यों सेलेंपुरानी होती जाती हैं त्यों त्यों यह झिल्ली तहपर तह जमनेके कारण मोटी पड़ती जाती है। यह तहें सब स्थानपर एक सी नहीं होतीं जिसके कारण कहीं कहीं कुछ स्थान छुट जाते हैं। इन्हें 'पिट' ( pit ) कहते हैं। इन पिटोंके कर्तव्य और आकार भिन्न भिन्न होते हैं। यहाँपर उन सबोंका वर्णन करना उचित नहीं प्रतीत होता

न्यूक्लिअसके लगातार खण्डित होते रहनेसे नयी नयी सेलोंकी उत्पत्ति होती है एक आकार और एक कर्तव्य करने वाली सेलोंके सँगठनको तन्तु ( tissue ) कहते हैं। बनस्पतीय तन्तुकी उत्पत्ति सेल विभागसे ही होती है, परन्तु नाग छत्र, कुकरमुत्तादिमें ( mushrooms etc. ) तन्तुओंके लपट जानेसे होती है। एक टिश्यूकी सेलें बिलकुल एक दूसरेसे सटी हुई ( मिली हुई ) अथवा बीचमें कुछ स्थान छोड़े हुए भी रह सकती हैं।

---

## कागज़ की लुगदी

[ ले० गोपाल स्वरूप भार्गव ]

संसारमें कोई भी ऐसा सभ्य देश नहीं जहांपर कागज़ काममें न लाया जाता हो। जैसे जैसे सभ्यताकी उन्नति होती जाती है, कागज़का खर्च बढ़ता जाता है। कागज़ न मिलनेसे जैसी रुकावटें हमारे उन्नतिके मार्गपर आवेंगी, उनका कुछ अनुभव हमें अब होने लगा है। भारतवर्षमें कागज़की लुगदी ( जिससे कि कागज़ बनाया जाता है —एक प्रकार की घास-से, जो कि नौपलकी तराईमें मिलती है, या चिथड़ोंसे—बनाई जाती है, परन्तु और देशोंमें कई प्रकार की लकड़ियोंसे भी यह लुगदी तैय्यार की जाती है। इङ्गलैण्ड देशमें यह लकड़ीसे बनी हुई लुगदी स्वेडिन देश-से आया करती थी, परन्तु अब उसका आना बन्द हो गया है, इससे वहांके कारख़ानोंको बड़ी हानि पहुँचनेकी सम्भावना है। अमेरिका देशमें जङ्गलोंके जङ्गल समाप्त हो चुके, यद्यपि पेड़ लगाये जाते हैं, तदपि उनके बढ़नेमें, फलने फूलनेमें कुछ वर्षोंका समय लगता है, इस कारण यह भय वहांके कारखानेवालोंको लगा हुवा था कि कहीं उन्हें लुगदी बनानेकी सामग्रीके अभाव-से अपने कारखाने बन्द न करने पड़ें।

हमारे देशके कारखाने चलानेवालोंके समान वे लोग अपरिणामदर्शी नहीं हैं, उन्हें अपने काममें बड़ा दिलचस्पी है। इसका उदाहरण एक छोटी सी बातसे मिल सकता है कि कागज़की लुगदी बनानेमें क्षारकी ( caustic soda) आवश्यकता होती है, और लुगदीका रङ्ग सफ़ेद करनेकेलिए ब्लीचका ( bleaching powder ) उपयोग होता है। यद्यपि यह दोनों वस्तुएँ नमकसे बड़ी सुगमतासे बन सकती हैं, तदपि उनके बनानेका उद्योग कभी न किया गया। आजकल इन दोनोंका आना विलायतसे बन्द हो गया है, और कारखानोंके संचालकोंकी दूर दर्शिताका फल यह होगा कि उनको मिलें बन्द कर देनी पड़ेंगीं।

अमेरिकावालोंको जब लुगदी बनानेकी सामग्री मिलनेमें कठिनाई पड़ने लगी, उन्होंने यह सहज उपाय नहीं निकाला कि वे भी स्वे

General साधारण ]

डिन आदि देशों से लुगदी बनी बनाई मंगा-लेते, किन्तु उन्होंने कठिन परिश्रमसे एक नई ही रीति लुगदी बनानेकी निकाल ली।

कौन ऐसा मनुष्य है जो रूईको न जानता होगा, कौन ऐसा देश है जिसमें रूई न पैदा होती है, और न जहां रूई काममें लायी जाती है। इसी रूईके डंठलोंसे लुगदी बनानेकी तर्कीब अब निकाली गई है।

रूईके वृक्षकी डंठलें अबतक अमेरिका देशमें किसी काममें न लाई जाती थीं। रूई उतारनेके पीछे उन्हें डेढ़ आने फी मन ख़र्च करके जलाना पड़ता था। एक मन रूई पीछे लगभग पांच मन डंठल बच रहते थे, इससे अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि इनके जलानेमें कितना खर्च होता होगा। अब इनके कुछ उपयोग होनेकी सूरत पैदा की गई है, यद्यपि यह कला अभी आरम्भ ही हुई है तदपि आशा होती है, कि भविष्यमें बड़ी लाभदायक होगी। ( Greenwood, miss ) ग्रीनवुड नगरमें एक कारखाना खुल चुका है, जिसमें लुगदी रूईके डंठलसे बनाई जाने लगी है।

अधिकांश यह लुगदी कागज़के बनानेमें काम आयेगी। साधारण लकड़ीकी अपेक्षा इन डंठलोंके रेशे बहुत मज़बूत होते हैं, इससे यह अनुमान किया जाता है कि इससे बनाया हुआ कागज़ मुटाई और वज़नके लिहाज़-से मामूली कागज़से अधिक मज़बूत और स्थायी होगा। इस रूईके डंठलोंसे बनी हुई लुगदीको हम रूई-लुगदी कहेंगे।

रूई-लुगदी केवल कागज़ बनानेके ही काम-में न आयेगी परन्तु और भी कई काम इससे निकलेंगे, जिनका वर्णन नीचे किया जाता है।

गनकौटन—यह आधुनिक धुआँ न देने वाली बारूद है। पहले यह रूईसे कई रासायनिक प्रक्रियाओंद्वारा बनायी जाती थी, परन्तु काठ-लुगदीसे न बनायी जा सकती थी। इसका कारण यह था कि शोरेके तेज़ाबके प्रभावसे काठ-लुगदीका रेशा नष्ट हो जाया करता था। रूई-लुगदीका रेशा मज़बूत है और तेज़ाबकी क्रियासे नष्ट नहीं होता, इसीलिए रूई-लुगदी-का गनकौटन बनानेमें प्रयोग होगा।

नकली रेशम—इससे बड़ी सुगमतासे बनाया जा सकता है, इसके बनानेकी रीति यह है, कि लुगदीको अमाईल-एसीटेट ( अमाईल मदिरा और सिरकेका एक यौगिक ) में गलाया जाता है। इस प्रकार एक बहुत ही स्निग्ध घोल प्राप्त होगा, जिससे तागा काता जा सकता है। यदि तागा बहुत बारीक हो तो उसे बट कर मोटा भी बना सकते हैं, और उससे कपड़े बुने जा सकते हैं। यद्यपि हर प्रकारका कपड़ा इससे बुना जा सकता है, तदपि यह कपड़े इतने स्थायी नहीं होते जितने कि और रीतिसे बनाये हुये कृत्रिम रेशमके।

नकली चमड़ा—भी ऊपर कहे हुए स्निग्ध घोलसे बनाया जा सकता है। केवल घोलमें रङ्ग देकर उसकी चद्दरें वेलनलोंकी सहायतासे बना ली जाती हैं। इस रीतिसे साधारण चमड़ा या मगरकी खालके सदृश चमड़ा बन सकता है।

प्राकृतिक चमड़ेके थानमें कोई हिस्सा मोटा कोई पतला मिलता है, परन्तु इस कृत्रिम चमड़ेकी मुटाई बराबर होती है। इस प्रकार एक रूपतामें यह प्राकृतिक वस्तुसे भी अधिक बढ़ा चढ़ा है।

इस स्निग्ध द्रवसे बनायी हुई पतली पट्टियां (cinemetograph) सिनेमेटोग्राफ़की तसवीरों-के बनानेमें काम आती हैं।

पाईरोक्सीलीन ( pyroxelene ), मदिरा ( alcohol ) एसीटोन ( acetone ) इत्यादि अनेक रसायनिक यौगिक ( compounds ) इस रुई लुगदीसे बन सकते हैं।

दैवात् इस नए उद्योगसे रूईकी कृषिको भी बड़ा लाभ पहुंचेगा। अमेरिका देशमें रूईके डंठल ही जला दिये जाया करते थे। पर जड़ खेतमें ही रह जाती थीं। जाड़ेमें एक छोटे किस्मके जानवर जिन्हें वीविल कहते हैं जडोंमें घर कर लिया करते थे और गर्मीमें रूईकी नई खेतीको नाश करनेकेलिए तैय्यार रहते थे। परन्तु अब जड़ भी काममें लायी जा सकती है और इस कारण जड़ोंको उखाड़ना पहलेकी भाँति-निरर्थक न समझा जायगा। पहले इनके उखाड़ने और जलानेमें व्यय होता था, पर अब यह भी डंठलोंके साथ लुगदीके बनानेमें काम आयेंगी।

इस प्रकार बीविलोंके केवल घर ही न छीन लिये जायेंगे, वरन् उनके भोजनकी सामग्री भी नष्ट हो जायगी। उन्हें रूईके खेत छोड़ने ही पड़ेंगे और किरोड़ों रुपयोंकी बचत हो जायगी।

---

## ईश्वरका अस्तित्व और विज्ञान

[ ले० श्यामाचरण ]

आजकल हम लोग कहा करते हैं कि विज्ञान पढ़नेसे मनुष्य नास्तिक हो जाते हैं। यह बिलकुल सत्य नहीं है। केवल वही वैज्ञानिक नास्तिक होते हैं, जिनका ईश्वरकी सत्यतामें प्रथमसे ही विश्वास नहीं होता है। उनका स्वभाव ही ऐसा होता है, वह समझते हैं कि यह ब्रह्माण्ड बिना किसीके निर्माण किये ही बन गया। किंतु अनेक पाश्चात्य पंडित ऐसे भी हैं जिन्होंने स्पष्ट शब्दोंमें कहा है कि इस ब्रह्माण्डकी नेपथ्य भूमिमें कोई सूत्रधार अवश्य है। इस प्रकारके कुछ विचारोंको हम पाठकोंके सामने प्रस्तुत करते हैं।

हमको इस बातपर विचार करना चाहिए कि ज्ञानका प्रकाश किस प्रकार होता है। हम भली प्रकार जानते हैं कि प्रत्येक मनुष्य स्वयं विचार करता है, और यह भी जानते हैं कि हमारे और दूसरोंके विचारोंमें एकता नहीं है। यही भिन्नता है जिसकेद्वारा हमें इस बातका बोध है कि प्रत्येक मनुष्य व्यक्तिगत विचारक है।

अनुभव इत्यादि शक्तियोंके अतिरिक्त मनुष्योंमें संकल्प शक्ति भी है (power of volition) इस शक्तिकेद्वारा जो कुछ हम लोग विचारते हैं उसे एक सीमातक कर भी सकते हैं।

हमको अपने व्यवहारों और विचारोंको दूसरोंके व्यवहारोंसे तुलना करनेपर ज्ञात होता है, कि वे भी हमारी तरहसे स्वाभाविक विचारक हैं। उनमें भी ज्ञान शक्ति है।

ज्ञान अपनेको अनेक प्रकारसे प्रगट कर सकता है। उनमेंसे चार मुख्य प्रकार यह हैं:—

१. क्रम विन्यास, ( order )
२. स्थिरता ( stability )
३. निर्देशिकता ( directivity )
४. संबुद्धि ( intelligibility )

### १—क्रम विन्यास।

कमरेमें सामान इत्यादिक लगानेकेलिए विचारकी आवश्यकता पड़ती है, यहाँतक कि कंकड़ोंको एक सरल या वृत्ताकार रेखामें रखनेकेलिए भी समझ चाहिये। रेलवे कम्पनी या सेना संचालनकेलिए दूसरे ही प्रकारके ज्ञानकी आवश्यकता है। यदि हम कोई चीज़ें क्रमानुसार लगी हुई देखते हैं तो लगानेवालेका ध्यान अवश्य आ जाता है। हम यह नहीं समझ बैठते हैं कि वे स्वयं ही आकस्मिक क्रमसे लग गयी हैं।

अगर हम किसी दिन सवेरे देखें कि हमारे दरवाज़ेपर कोई प्रतिमा कंकड़ोंसे बनी है, हमारे मुँहसे अकस्मात निकल जायगा। "हैं! यह किसने बनायी"? मान लीजिये किसीने

कहा कि कल रातको कंकड़ोंकी गाड़ी उलट जानेसे यह प्रतिमा स्वयं ही बन गयी। हम अवश्य समझेंगे कि यह मनुष्य हंसी कर रहा है। कंकड़ तो क्रमसे लगे हुए हैं और क्रम स्वयं ही नहीं बन जाता है। इसकेलिए विचारकी आवश्यकता है। और विचारकेलिए बुद्धिमान मनुष्य चाहिए। अतएव जितनी ही सुन्दर प्रतिमा होगी उतना ही ज्ञानवान मनुष्य भी होगा।

अगर हम लोग अकस्मात किसी वनमें जा पहुँचें तो देखेंगे कि सारे वृक्ष इधर उधर बिना किसी क्रमके लगे हैं। किसीके पूछनेपर हम कह सकते हैं कि जहाँ पेड़ोंपरसे उड़कर बीज गिरे वहीं नये वृक्ष उग आये। अब हम लोग पार्कमें जायें तो देखेंगे कि पेड़ सुन्दरताके साथ सड़कके दोनों तरफ़ समानान्तर दूरीपर लगे हुए हैं। अब किसीके पूछनेपर हम पहलेकासा ही उत्तर दें तो वह कदापि ठीक न होगा। यहाँपर भी ज़रूर किसी ज्ञानी मनुष्यने अपने विचारों वा व्यवहारोंसे इन पेड़ोंकी क़तार बनायी होगी।

देखें प्रकृतिमें यह क्रम कहाँ तक मिलता है। सूर्य्य आठ लाख मील व्यासका एक बड़ा गोला है। इसके चारों तरफ़ हमारी पृथ्वीकी तरह अनेक ग्रह और उपग्रह परिक्रमा करते हैं और यह सब सूर्य्यके चारों तरफ़ एक ही दिशामें और एक ही धरातलमें घूमते हैं। ज्योतिषियोंने यंत्रों और गणितसे इन सबकी चालका ठीक पता लगा लिया है।

यदि यह सब सूर्य्यके टुकड़े हैं, जो लाखों वर्ष पहले टूटकर अलग हो गये थे, अथवा किसी प्रारम्भिक नीहारिका ( primevial nebula ) से जमकर अलग हो गये हैं और उनके बनानेमें किसी दैवी शक्तिने काम नहीं किया है तो उनकी भी हालत जंगलके वृक्षोंके समान होनी चाहिये। परंतु नहीं, हम जानते हैं कि सूर्य्यसे ग्रहोंकी दूरीमें निम्न लिखित सम्बन्ध है।

यदि हम ०,३,६,१२,२४,४८,९६,१९२,३८४, अङ्क लें तो ध्यान देनेसे मालूम होगा कि प्रथम दोको छोड़कर और सब अंक पहले अंकसे क्रमानुसार दुगने हैं।

हरएक अंकमें अब ४ और जोड़ दें तो

४,७,१०,१६,२८,५२,१००,१९६,३८८, यह क्रम बना।

यदि पृथ्वीकी दूरी सूर्य्यसे १० मानी जाय तो और ग्रहोंकी दूरियाँ यह हुईं:—

बुद्ध ३·८७, शुक्र ७·२३, पृथ्वी १०, मंगल १५·२३ उपग्रहोंकी अन्तर्गत दूरी २७·७, बृहस्पति ५२·०३, शनि ९५·३९, यूरेनस १९१·८२, नेपच्यून ३००.३७

इन दूरियोंकी ऊपरके अंकोंसे तुलना करनेपर ज्ञात होता है कि नेपच्यूनको छोड़कर और सब ग्रहोंकी दूरियां प्रायः ऊपर लिखे हुए क्रममें हैं।

बीच वाला अंक (२८) उन उपग्रहोंके, जो कि मंगल व बृहस्पतिके बीचमें हैं, अन्तर्गत दूरीसे मिलता है।

अतएव सूर्य्यसे ग्रहोंकी दूरीमें एक विशेष क्रम है।

इस नियमको बोडीका नियम (Bode's law) कहते हैं।

इसके अतिरिक्त सौर ग्रहोंकी दूरी और परिक्रमा करनेकी अवधिमें भी एक विशेष सम्बन्ध है। यदि परिक्रमाकी अवधिके वर्गको

सौर दूरीके घनसे विभाजित करें तो प्रत्येक ग्रह-केलिए भाज्यफल एकसाही होगा।

| ग्रह | समय (दिन) | सौर दूरी | $\frac{(\text{समय})^2}{(\text{दूरी})^3}$ |
|---|---|---|---|
| बुध | ८७·९६९ | ३·८७१० | १३३·४ |
| शुक्र | २२४·७०१ | ७·२३३३ | १३३·४ |
| पृथ्वी | ३६५·२५८ | १०·०००० | १३३·४ |
| मंगल | ६८६.९७९ | १५·२३६९ | १३३·४ |
| वृहस्पति | ४३३२·५८६ | ५२·०२७७ | १३३·४ |
| शनैश्चर | १०७५९.२२० | ९५·३८७८ | १३३·४ |
| यूरेनस | ३०६८६·८२१ | १९१·८२३९ | १३३ ४ |
| नेपच्यून | ६०१२६·७१० | ३००·३६८० | १३३·४ |

इस नियमको केपलरका तीसरा नियम कहते हैं। जो पेड़ पार्ककी सड़कोंपर लगाये गये हैं, वे भी एक नियमके अनुसार समानान्तर दूरी-पर हैं। यदि इन पेड़ोंको इस क्रमसे लगानेमें किसी ज्ञानसे काम लिया गया है, तब क्या इस सौर जगत रूपी पार्कमें ग्रह रूपी वृक्षोंको नियमित दूरीपर लगानेमें किसी महान ज्ञानने काम न किया होगा? जड़ पदार्थ अपने आप ही ऐसे नियम नहीं बना लेते हैं और न उनमें ऐसी शक्ति ही है कि नियमानुसार बिना किसीकी सहायता के काम कर सकें।

प्रकृतिके प्रत्येक विभागमें हम देखते हैं कि कुछ न कुछ नियमसे कार्य्य होता है।

रसायन शास्त्रसे हमें ज्ञात होता है कि जब मौलिक पदार्थ मिलकर यौगिक पदार्थ बनाते हैं तो नियमानुसार ही बनाते हैं। यदि हम सोडियम और क्लोरीनकी मनमानी मात्रा लेकर मिलायें तो सबका नमक नहीं बनता। जिस पदार्थकी मात्रा नियमित मात्रासे अधिक होगी तो उसका कुछ अंश मिलनेसे बाकी रह जा-यगा। केवल ३५·५ हिस्सा क्लोरीनका २३ हिस्सा सोडियमसे मिलेगा, न ज्यादा न कम। इसी प्रकार और भी यौगिक पदार्थ बनते हैं। रसायन शास्त्रमें प्रायः ८० मूलतत्व हैं जिनके परमाणु एक दूसरेसे भिन्न भारके हैं। यदि हम इनके भारके क्रमानुसार इन्हें रक्खें तो साततत्त्वोंके बाद जो आठवां तत्त्व है उसके गुण प्रायः प्रथम तत्त्वके गुणसे मिलते हैं। इसी तरहसे नवेंके गुण दूसरेसे मिलते हैं। यहाँ तक कि यह ८० तत्त्व ऐसे ९ विभागोंमें बट जाते हैं जिनके तत्त्वोंके करीब करीब एक हीसे गुण होते हैं।

यह तत्त्व नियमानुसार बनाये गये हैं, और नियमानुसार ही इनमें संयोग होता है। ऐसा क्रम स्वयं ही नहीं बन सकता है। इसकेलिए विचार शक्तिकी आवश्यकता है। और विचार शक्ति होना विचारनेवालेका साक्षी है। अतएव प्रकृतिमें कोई महाविचारवान अवश्य है। अथवा प्राकृतिक नियम ईश्वरीय विचार हैं।

२—स्थिरता

जो कुछ वस्तु हम बनाते हैं उसमें स्थिरता-का अवश्य ध्यान रखते हैं। उस झोंपड़ीके बनानेमें बहुत विचारकी ज़रूरत नहीं पड़ती है जो ज़रासी आंधीमें उड़ जाती है। परन्तु राज-प्रासाद, दुर्ग व रेलके पुल आदिके निर्म्माण करनेकेलिए अत्यन्त चतुरताकी आवश्यकता है। यदि कोई अनिपुण निर्माण विद्या-विशारद ( Engineer ) कोई दीर्घ सेतु अथवा भवनका निर्म्माण करे तो ये अवश्य कमज़ोर और बे-डौल होंगे जब कोई जहाज़ बनाया जाता है तो उसकेलिए बहुत ही चतुर निर्म्माण कर्ताओं व गणितज्ञोंकी सहायता ली जाती है। अन्यथा वह सामुद्रिक लहरोंकी चोटें खाकर जलमग्न हो जायगा।

आप लोग अंतिम प्रकारके जहाज़पर बैठकर महासागरोंको पार करनेकेलिए कदापि न तैय्यार होंगे। यदि आपको समुद्र यात्रा करनी पड़े तो आप पी. एन्ड ओ. या किसी और बड़ी कम्पनी ही के जहाज़पर जाना पसन्द करेंगे।

स्थिरता, चाहे वह भवनमें हो या जहाज़में स्वयं ही नहीं पैदा हो जाती है। यह युक्ति सम्पन्न सावधान बिचारका फल है। निर्म्माण कर्त्ताके ज्ञानका निश्चय उसके निर्म्माण किये हुए कामोंसे किया जाता है।

हम सब इस ब्रह्माण्डमें पृथिवीरूपी वेगवान नौकासे यात्रा कर रहे हैं। इसमें लगभग १५००,००० ०,० यात्री हैं और नौकाकी चाल १२००० मील प्रति घंटा है। यह अपने नियमित पथपर सूर्य्यकी आकर्षण शक्ति और अपने तमोरूपसे (inertia)* स्थित है। जितने ग्रह व उपग्रह हैं सब एक दूसरेको आकर्षित कर अपने मार्गसे हटानेकी चेष्टा करते हैं। यह पृथ्विवी भी कभी एक तरफ़ खिंच जाती है और कभी दूसरी तरफ़ अर्थात हमारा पृथिवीरूपी जहाज़ भी आकर्षणरूपी लहरोंसे टकराया करता है। अब यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या यह भी कभी ख़राब तरहसे बने हुए जहाज़के समान डूब जायगी या यह इस चतुराईके साथ बनायी गयी है कि अपने मार्गसे न हटेगी। इस प्रश्नपर विचार प्रथम लाप्लेस और लाग्रञ्ज, नामक दो फ़रासीसी गणितज्ञों, ने किया था।

लाप्लेस (Laplace) ने यह सिद्ध कर दिया है कि यह आकर्षण शक्तियाँ प्रत्येक ग्रहको एक अपरिवर्तनशील सौर समक्षेत्र के ( invariable solar plane ) दोनों तरफ़ ऐसे झोके देती हैं जो नियत कालके अनंतर एकही स्थानसे उठते हैं और अपने मार्गके प्रत्येक विन्दुको उसी नियत समयके अनंतर एकही दिशामें पार करते हैं जैसे कि रस्सीसे लटकाये हुए लोलुकमें देखनेको मिलता है।

इन सामयिक झोकोंके कारण ग्रह एक समय एक ओरको झुक जाता है और फिर धीरे धीरे झुकना कम होता जाता है और ग्रह यथार्थ जगहपर आ जाता है और फिर धीरे धीरे दूसरी तरफ झुककर लौट आता है। अर्थात् यह भी एक बुद्धिमान मनुष्यके बनाये हुए जहाज़के समान है, जो लहरोंके वेगसे कम्पित तो हो जाता है पर जल मग्न नहीं होता। हमारा सौर जगत भी स्थिर है। यह करोड़ों बर्षसे ऐसा ही चला आया है और करोड़ों ही वर्षतक चला जायगा।

क्या अब हम निश्चय पूर्वक नहीं कह सकते हैं कि हमारे सौर जगत्की–नहीं तमाम ब्रह्मांडकी,–रचना भी किसी ज्ञानी ने की होगी ?

### ३—निर्देशिकता

जैसा कि कहा जा चुका है संसारकी रचना ८० मूल तत्वोंसे हुई है। जब दो व दोसे अधिक तत्व यथार्थ परिमाणमें मिलते हैं तब यौगिक पदार्थ बनते हैं। यह ८० तत्व वर्णमालाके अक्षरोंके समान हैं, और सांसारिक वस्तुएं शब्दोंके समान।

जो पदार्थ हम लोगोंके भोजन इत्यादिकके काममें आते हैं, जो बनिस्पतियों वा जीवजन्तुओंसे उत्पन्न होते हैं, अत्यन्त ही विकट हैं, परन्तु अचरज है कि ये सब निम्न लिखित ६ मुख्य तत्वोंसे ही बने हैं:—

नत्रजन, गन्धक, कोयला, उज्जन, ओषजन, सोडियम, पोटासियम, केलसियम, और फासफोरस (स्फुट)। इन पदर्थोंको भिन्न भिन्न मात्रासे बहुतसे पदार्थ बनते हैं यथा, शराब, स्टारच (मांड़,) एल्बूमन, जिलेटिन, प्रोटीन इत्यादि।

बनिस्पतिओंमें कोई ऐसी अद्भुत शक्ति है कि वे उसी हवा पानी व मिट्टीसे आहार लेकर नाना प्रकारके पदार्थ उत्पन्न करती हैं।

*प्रत्येक पदार्थ स्वयं अपनी दशा परिवर्तन नहीं करना चाहता। यदि वह चलता है तो एकही दिशामें चलता रहेगा और यदि निश्चल है तो अटल बना बैठा रहेगा। बाहरी बल ही उसकी दशा बदल सकता है। यही पदार्थका तमरूप है।

गेहूँका पौदा हवासे कारबन डाइग्राक्साइड् ($CO_2$) पृथ्वीसे पानी इत्यादिक लेकर हमको गेहूँ नामक एक पदार्थविशेष देता है। दाल व मटर सेमके पौदे भी इन्हींको खाकर हमें दाल इत्यादिक देते हैं। परन्तु गेहूँ, मटर, दाल, सेम आदि सिर्फ़ पांच ही तत्वोंके बने हैं (१ कोयला, २ गन्धक, ३ नाइट्रोजन, ४ हाइड्रोजन, ५ आक्सिजन)।

चावल, तेल चर्वी इत्यादिक भी सिर्फ कारबन, हाइड्रोजन, और ओक्सीजिन तत्वोंकी न्यूनाधिक मात्राओंसे बने हैं।

किसी बाग़में जाइये तो आप अनेक प्रकारके फल फूल देखियेगा। सब ऊपर लिखे हुए ६ तत्वोंके बने होनेपर भी कितनी भिन्नता रखते हैं। इन तत्वोंकेलिए अत्यंत आवश्यक है कि वे नियमित मात्रीमें ही मिलाये जावें, जिससे बहुत प्रकारकी चीज़ें बन सकें।

किसी छापेख़ानेमें जाइये तो देखियेगा कि कम्पोज़िटर खानोंमेंसे भिन्न भिन्न अक्षर निकाल कर शब्दों व वाक्योंको बनाता है। परन्तु यह वाक्य उसके नहीं होते, उनको कोई दूसरा ही मनुष्य विचार कर लिखता है।

मान लीजिये किसी अनजानने आपसे पूछा कि कालिदास की बनायी हुई कवितायें कैसे छप गयीं। यदि हम उत्तर दें "वर्णमालाके बहुतसे अक्षर थैलेमें रख कर अच्छी तरहसे हिलाकर मिला दिये गये। और फिर थैलेके खोलने पर कविता बनी हुई निकल आयी" आप ज़रूर कहेंगे कि क्या बकते हो। इस कविताके बनानेकेलिए कविको विचारनेकी आवश्यकता पड़ी होगी। लिखनेके समय भी ध्यान पूर्वक शब्दोंकेलिए नियत अक्षर लिखने पड़े होंगे, क्योंकि मनमाना अक्षर लिख देनेसे सुबोध शब्द नहीं बन जाते। अन्तमें कम्पोज़िटरने भी सोच समझ कर केसके अक्षरोंको अपनी जगहपर लगाया होगा।

एक समय लार्ड केलविनने लीबिग (Liebig) से पूछा "क्या वनस्पति केवल रसायनिक शक्तिओंके द्वारा ही उपजती हैं"। लीबिग ने कहा "हाँ! अगर वनस्पति विषयक पुस्तकें, भी केवल रसायनिक शक्तियोंसे बन सकती हों, तो यह भी सम्भव है।"

अतएव इन अनगिनत पदार्थोंके निर्म्माणमें भी किसी श्री-गुण-सम्पन्नने काम किया होगा। परन्तु यदि आप कहें कि एक विशेष प्रकारका वृक्ष केवल एक ही प्रकारकी वस्तु पैदा कर सकता है, अर्थात् यह भी स्वयं चलने वाले यंत्रके (automatic machine) समान हैं जो कि अपने आप एक विशेष प्रकारका पदार्थ बनाता चला जाता है।

यंत्र बनानेकेलिए भी तो विचार व ज्ञानकी आवश्यकता है। चाहे पीछेसे यह यंत्र अपने आप ही काम क्यों न करे।

अतएव इन वृक्षोंकेलिए भी निर्देशक व निर्म्माणकर्ताकी आवश्यकता है। क्रियाओंका एक ही समान होना (uniformity of operation) संचालन शक्तिके न होनेका प्रमाण नहीं है। रेलवे कम्पनीकी ट्रेनें टाइम टेबिलके अनुसार दौड़ती हैं अतएव उनका संचालन करनेवाला और कोई नहीं है, ऐसा कहना कितना भ्रमात्मक है।

### ४—संबुद्धि

यदि हम किसी चीज़को भली प्रकार समझ सकते हैं तो यह आवश्यक है कि उसे किसी समझदारने बनाया हो।

हज़ारों बर्ष हुए मेसोपोटेमिया देशमें बेबलिन और निनवाह (Ninevah) नामक दो बड़े नगर थे। कालान्तरमें यह नगर उजड़ गये और मिट्टीमें दब गये। पिछली शताब्दीमें यह नगर फिरसे खोद कर बाहर निकाले गये। इनमें बहुत सी शिलाएं अद्भुत प्रकारके चिन्होंसे चिन्हित निकलीं। अनुमान किया गया कि कदाचित

यह चिन्ह कोई प्रकारके लेख न हों। बहुत युक्ति व ज्ञान व्यय करनेके पश्चात् विद्वानोंने कठिन परिश्रमसे इनका मतलब निकाल ही तो डाला।

मतलब केवल इसीलिए निकाला जा सका कि यह चिन्ह किसी बुद्धिमानने किसी प्रयोजनसे ही लिखे थे।

यदि कोई बन्दर या कुपढ़ मनुष्य कागज़ पर रेखाएँ खांचने लगे तो उनका मतलब नहीं समझा जा सकता है क्योंकि उनके बनानेवालेने भी उन्हें बेमतलबके लिखा है।

प्रकृतिमें जो कुछ हम देखते हैं उससे कुछ न कुछ अर्थ अवश्य ही निकलता है

अतएव प्रकृतिको किसी विचारवानने बनाया है। अर्थात् इसका भी कोई सुबोध कारण था।

किसी मकानके ऊपर आपने लिखा देखा "Beware of the Dog" कदाचित आप इसे न समझ सकें। किसी अंग्रेजी पढ़े हुएने पूछनेपर आपको बतलाया कि इसका अर्थ है "कुत्तेसे होशियार रहो।" तो आप ज़रूर यही ख़याल करेंगे कि लिखने या लिखानेवाला भी अवश्य अंग्रेजी जानता होगा, और आपको पूरी तरहसे विश्वास होगा कि यह शब्द कुत्तेने नहीं लिखे हैं।

ज्योतिषियोंने आकाशवर्त्ती तारागणोंकी बनावटका अनुसन्धान किया है। और उनकी चाल इत्यादिके विषयमें भी बहुत कुछ ज्ञान लाभ किया है। इससे उन्हें मालूम हुआ है कि तारागण कई नियमोंका पालन करते हैं। हम लोगोंको अवश्य विश्वास करना चाहिये कि प्रथम किसी महान धी-गुण-सम्पन्न शक्तिने इन नियमोंको विचारा होगा और तत्पश्चात्, जैसाकि हम देखते हैं, तारागणोंको बनाया होगा।

विज्ञानने हमलोगोंको दिखला दिया है कि ब्रह्माण्डमें क्रमविन्यास, स्थिरता, निर्देशिकता और स्पष्टता है। यह स्वयं ही उत्पन्न नहीं हो जाते यह ज्ञान और विचारको सूचित करते हैं। यह ब्रह्माण्ड कोई जड़ पदार्थ नहीं है परन्तु ज्ञान व विचारवानका कार्य्य है।

ज्ञान व विचार होनेकेलिए ज्ञानी और विचारवानकी आवश्यकता पड़ती है।

अतएव इस ब्रह्माण्डमें अतिश्रेष्ठ ज्ञान व विचारवान परब्रह्म है। उसके सामने हमारा ज्ञान कुछ भी नहीं है।

अब मैं थोड़ेसे विख्यात पाश्चात्य वैज्ञानिकोंकी राय देकर इस लेखको समाप्त करता हूँ।

सर आइज़क न्यूटन—"मैं अनुमान करता हूं कि ईश्वरने पहिले मुख्य तत्त्वोंको एक विशेष प्रकारसे रचा .........।"

लार्ड केल्विन—"विज्ञानसे ईश्वर होनेके साक्षात प्रमाण मिलते हैं। विज्ञान हम लोगोंको विवश करता है कि हम उसकी निर्देशक शक्तिमें विश्वास करें जोकि विद्युत् आदि शक्तिओंसे भिन्न है"।

मैक्सवेल—"मेरी रायमें मनुष्योंको विज्ञान पढ़ना चाहिए जिससे कि जहां तक हो सके उनमें ईश्वरकी महिमाका ज्ञान बढ़े।"

प्रोफ़ेसर बाटमली "ईश्वरको हम केवल उसके गुणों अथवा अपने हृदयसे ही जान सकते हैं"।

यही रायें हरशल, डैवी, फ़ैराडे आदिकी हैं।

---

## रसायन

[ ले० रामदास गौड़, एम. ए. ]

### ( २ ) पांचों भूतोंका रहस्य

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् ( गीता )

आजकलका रसायनशास्त्र शंकाद्वारा परीक्षाके गर्भसे उत्पन्न हुआ है। चारों तत्त्वोंके

माननेवाले आगको भी एक पदार्थ मानते थे। यवनानी दार्शनिकोंने यह सिद्धान्त स्थिर कर रक्खा था कि पदार्थ मात्रमें बोझ होता है, पदार्थ तोला जा सकता है। अतः आग भी तोली जा सकती है। उनकी धारणा थी कि जब कोई चीज़ जलती है तो उसमेंसे आग निकल जाती है। परन्तु साधारण अनुभव से मालूम हुआ कि जब किसी धातुकी राख बनाते हैं तो राख उस धातुसे तोलमें अधिक उतरती है। यदि जलनेसे एक पदार्थ अग्नि निकल जाती है तो राखकी तोल घट जानी चाहिये थी, बढ़ना तो उलटी बात थी। परन्तु वास्तविक घटनाओंसे यही बात बार बार सत्य पाकर सौ वर्ष पहलेके दार्शनिकोंने यह ठहरा रक्खा था कि अग्नि ऐसा तत्त्व है कि उसका प्रभाव गुरुत्वाकर्षणसे उलटा पड़ता है, अर्थात जिस पदार्थमें मिला होता है उसके बोझको कम रखता है। जल और वायुको भी लोग मौलिक समझते थे। जलकेलिए तो शंका ही न थी। वायुकी परीक्षा अत्यन्त कठिन होनेसे उसपर कुछ विचार नहीं होता था। परन्तु ढाई सौ बरस हुए ब्लैक नामक एक रासायनिकने खड़ियाको तपाकर एक वायु निकाली जो साधारण वायुसे भारी और भिन्न जान पड़ी। तबसे यह शंका उत्पन्न हुई कि वायु कई वायव्य पदार्थोंका मिश्रण हो सकती है। इस कल्पना पर अनेक उत्साहियोंने परीक्षाएं प्रारंभ कीं। इन उत्साहियोंमें प्रीस्टलेका नाम प्रसिद्ध है। उसने पारेके लाल रसको एक नलीमें तपाया। इस नलीसे एक पतली नली इस तरह जोड़ी कि जल भरे तसलेके भीतर होकर उसका मुंह एक लम्बे औंधे बोतलके मुंहमें पड़ता था जिसमें सम्पूर्ण जल भरा था। जब पारेका रस अच्छी तरह तपा तो वायुके बुल बुले उस बोतल-में उठने लगे और धीरे धीरे बोतलका पानी नीचे उतरने लगा। इस प्रकार उसने वायु इकट्ठी करनेकी रीति निकाली। पारेके लाल रससे जो वायु निकली उसमें सुलगती लकड़ी डालते ही भकसे बल उठती थी। साधारण वायुमें यह गुण नहीं पाया जाता। ब्लैकने खड़िया तपाकर जो गैस निकाली थी उसमें जलती बत्ती बुझ जाती थी। इस प्रकार दो तरहकी वायु जानी गयी। कई बरस बाद केवेंडिश नामक अंग्रेज़ रासायनिकने जस्तेपर तेज़ाब डालकर एक हवा इकट्ठी की जिसमें बत्ती तो बुझ जाती थी परन्तु वह हवा आप जलने लगती थी, और वायुसे मिलाकर जलाने-में ज़ोरका धड़ाका होता था। केवेंडिशने कुतूहलवश इस धड़ाकेकी जाँच की तो पता लगा कि वायुमें प्रीस्टलेकी सुलगती लकड़ी बाल देनेवाली गैससे जब केवेंडिश वाली गैस मिलती है तब धड़ाका होता है। पहलीका नाम अब ओषजन और दूसरीका उज्जन है। उसने नाशपातीके अनुरूप एक मोटी शीशी ली जिसमें बिजलीके तार लगाये। इस शीशीके भीतर दो भाग उज्जन और एक भाग ओषजन लेकर बन्द किया और बिजलीके तारकी चिनगारीसे दोनोंका धड़ाका कराया। इससे शीशी ख़ाली हो गयी। और उसकी भींतपर नमी इकट्ठी हो गयी। उसने इसी प्रकार अनेक बार धड़ाके किये, यहांतक कि थोड़ा सा द्रव इकट्ठा हो गया। इसकी जाँच की गयी तो मालूम हुआ कि शुद्ध जल है।

इस प्रयोगने पुराने सिद्धान्तोंको एक दम निर्म्मूल प्रमाणित कर दिया। यह प्रत्यक्ष हो गया कि ओषजन और उज्जनके मिलनेसे जल बन जाता है। अब जल मूलतत्त्व नहीं रहा। अब जल एक यौगिक पदार्थ प्रमाणित हो गया। वायु भी कई प्रकारकी मालूम हो गयी, जिससे उसका भी मिश्रण होना प्रमाणित हो गया। पृथ्वी तत्त्वमें तो सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा आदि, अनेक धातु तथा गंधक कोयला आदि अनेक अधातु मालूम ही थे जो साफ़ साफ़

मौलिक थे परन्तु उस समयका सिद्धाँत यह था कि इन पदार्थोंमें आग मिली हुई है। क्यों? क्योंकि लौ लगानेसे गंधकसे आग निकलने लगती हैं। अगर आग उसमें मौजूद न होती तो निकलती कहाँ से? ऐसे अनुमानोंके सहारे यह पदार्थ पृथ्वी व अग्नि रूपी यौगिक माने जाते थे और पृथ्वी और अग्नि यह दो मूल-तत्त्व समझे जाते थे।

इसी समय फ्रांसमें लवोइसर एक बड़ा भारी रासायनिक और मौलिक सिद्धान्ती इन्हीं प्रयोगोंको दुहरा रहा था। उस समय तक संसार यह समझता था कि आगपर रखनेसे पारा एकदम उड़ जाता है। परन्तु इस रासायनिक सिद्धान्तीने इन सभी बातोंकी जाँच आरंभ की। उसने अनुमान किया कि ओषजनमें जब सुलगती लकड़ी भकसे बल उठती है तो ओषजनके सहारे सब वस्तुएँ जलती हैं। इस अनुमानकी जांचकेलिए उसने एक काँचके नलदार बरतनमें ओषजन भर कर उसमें तौलकर थोड़ासा पारा रक्खा। उसके झुके हुए सिरेको एक पारेके प्यालेमें डुबो दिया। कांचके बरतन वाले पारेको तेज़ आंच दी गयी। पारा उड़ गया परन्तु प्याली वाले पारेपर लाल लाल पारेका रस जम गया। इसे सावधानीसे बटोर लिया और एक नलिकामें प्रीस्टलेके अनुसार तपाकर उससे गैस निकाली और इकट्ठी की तो वही ओषजन थी। उसने फिर जब इस परीक्षाको दोहराया, पारेको तोल लिया और ओषजनको नाप लिया था। तपानेपर जो लाल रस बना उसे भी तोल लिया। तोलमें जितना पारा लिया था लाल रस उससे कुछ अधिक था। जब उसे तपाकर ओषजन गैस निकाली गयी तो लाल रससे निकला हुआ पारा ठीक उतना ही उतरा जितना पहले लिया गया था, और ओषजन भी आयतनमें उतना ही निकला जितना उस यंत्रमें पहले अमाता था। पारेमें और लाल-रसमें तोलका जो अन्तर था वही अनुमानसे ओषजनकी तोल थी। जाँचसे प्रकट हुआ कि तोलमें १०० भाग पारा ८ भाग ओषजनसे मिलकर लाल रस बनाता है। उसने इस तरहके अनेक प्रयोग किये जिनसे यही दो बातें सिद्ध हुईं।

(१) जब कोई पदार्थ वायुमें जलता है, तो वस्तुतः वायुके ओषजनसे मिल जाता है।

(२) जलानेके पहले पदार्थकी जितनी तोल होती है, उसकी राखकी तोल उससे कुछ अधिक होती है।

इन दो बातोंसे उसने यह सिद्धाँत ठहराया कि अग्नि न तो कोई वस्तु है और न मूलतत्त्व है, क्योंकि न तो इसकी कोई तोल है और न इसका कोई आयतन है-और तोल और आयतनका होना ही वस्तुकेलिए आवश्यक है—वरन जब कोई पदार्थ ओषजनसे मिलता है तो मिलनेमें अग्नि प्रकट होती है। राखकी तोल इसलिए वस्तुसे अधिक होती है कि वस्तु जलनेमें ओषजनसे मिलती है और मिलनेसे मात्रा बढ़ जाती है। पहले यह समझा जाता था कि

(१) पृथ्वी + अग्नि = पारा; और

(२) पारा—अग्नि = लालरस

अर्थात् लाल रसको मूल पृथ्वी तत्त्व मानते थे और पाराको यौगिक पदार्थ ठहराते थे। लवोइसरने सिद्ध किया कि

[ १ ] पारा + ओषजन = लालरस

[ २ ] लालरस–ओषजन = पारा

अतः पारा और ओषजन मौलिक पदार्थ हुए और लालरस यौगिक हुआ।

लवोइसरने इस प्रकार दो बातें सिद्ध कीं। एक तो यह कि पृथ्वी कोई एक मौलिक तत्त्व नहीं है, और न अग्नि कोई वस्तु वा मौलिक तत्त्व है। दूसरे यह कि तांबा चांदी, सोना आदि धातु तथा गंधक कोयला आदि अधातु मौलिक हैं।

प्राचीन सिद्धान्तोंके अनुयायियोंने लवोइसरका घोर विरोध किया परन्तु सच्चा कांटा हाथमें लेकर, तोल नापकर, हिसाब जांच बूझकर जो बातें लवोइसर अकाट्य प्रमाणोंसे निश्चित करता था उनका खंडन कर देना कोरे तार्किकोंके बूतेसे बाहर था। लवोइसरने पुराने चार मौलिकोंको मिश्रण, ( जैसे पृथ्वी और वायु ) वा यौगिक ( जैसे जल ) वा अवस्तु ( जैसे अग्नि ) ठहराया और मौलिक पदार्थोंकी एक नयी सूची बनायी, जैसे,

| गैस वा वायव्य | द्रव वा सलिल | दृढ़ वा ठोस |
|---|---|---|
| ओषजन | पारा | तांबा |
| उज्जन | | चाँदी |
| नत्रजन | | सोना |
| | | कोयला |
| | | गंधक |

यद्यपि लवोइसर हमारे पाँचवें तत्त्व आकाशसे परिचित नहीं था तथापि आकाशको अवस्तु सिद्ध करना तो कोई बात ही न थी। इस प्रकार कई हज़ार वर्ष पुराने महाभूतोंके सिद्धांतकी दाह क्रिया ओषजनकी रासायनिक क्रियाओंमें हो गयी और संसारने मौलिकोंकी ऐसी सूची बनानी आरंभ की जो आजतक समाप्त नहीं हुई है।

लवोइसरने पदार्थ विद्याकी खोजोंका एक नया मार्ग निकाल दिया और उसके समयसे ही वैज्ञानिक नाप जोख करके परीक्षा करने लगे। प्रत्येक पदार्थ की पूरी जाँच होने लगी। प्राचीन सिद्धान्तोंकी भी परीक्षा प्रारंभ हुई। लवोइसर तो बेचारा निरपराध फ्रेंचविप्लवमें मारा गया परन्तु उसने अपने स्वाधीन विचारोंको अजरामर छोड़ा और आधुनिक रसायनिक शास्त्रकी नींव डाली।

# दिवस और मास

ज्योतिषकी एक लोकप्रिय पुस्तक पढ़ते पढ़ते एक जगह एक ऐसी कुतूहलकी बात पढ़नेमें आयी कि उसको लिखकर पाठकोंके भेंट करनेके प्रलोभनको मैं रोक नहीं सका। बात ज्वार भाटेके बारेमें है। ज्वार भाटेका क्या कारण है, ? वह कब और किस प्रकार होता है ? इत्यादि बातोंके सिद्धान्तोंको लिखते हुए जिस अध्यायमें सरजार्ज डार्विनने चंद्रमाके पुराने इतिहासकी छान बीन की है और आगामी इतिहासके बारेमें भविष्योक्ति की है; वह अध्याय बहुत मनोहर और विनोदपूर्ण है। जिस समय ज्वार भाटा आता है। उस समय पृथिवीका जलमय भाग थलीय भागसे रगड़ खाता है और यह रगड़ पृथिवीकी परिभ्रमण गतिमें रोक डालती है अर्थात् इस गतिको कम करती है; अतएव दिन धीरे धीरे बढ़ रहा है। इस बाढ़की गति किन्तु, स्वभावतः इतनी धीमी है कि मनुष्यकी छोटीसी जिन्दगीमें पचास साठ सालके छोटेसे समयमें क्या, हज़ारों बरसोंमें भी, इस बाढ़का अनुभव नहीं हो सकता।

प्रतिक्रिया ( reaction ) के अवश्यम्भावी कारणोंके वशीभूत हो चन्द्रमा दिन दिन पृथिवीसे दूर जा रहा है; और इस वजहसे महीनेका काल भी बढ़ रहा है। कहना नहीं होगा कि इस बातसे एक परिणाम जो निकलता है वह यह है कि प्राचीन कालमें दिन और महीना छोटे रहे होंगे। इस प्रकार पीछेका हिसाब लगाकर, सर जार्ज डार्विनने हमारे सामने उस कालका दृश्य खींचा है कि जब चन्द्रमा और पृथिवी प्रायः संस्पर्शमें थे, अर्थात् एक दूसरेको करीब करीब छूते हुए थे; और दिन और महीने बराबर बराबर कोई तीन चार घंटेके होते थे। इन दोनों पिण्डोंके इतने अधिक सामीप्य के

Astronomy. जोतिष ]

कारण ज्वार सम्बन्धी शक्तियां आजकलकी अपेक्षा कहीं अधिक और बलशाली रही होंगी। अतएव उस कालमें ऊपर कही हुई बाढ़की गति काफ़ी रही होगी। इस प्रकार क्रमशः चन्द्रमा और पृथ्वीके बीचकी दूरी अधिक होती गयी। महीनेका काल बढ़ता गया, और दिनका भी; परन्तु दिन उतना अधिक नहीं बढ़ा जितना कि महीना; और धीरे धीरे आजकलकी अवस्था पहुंच गयी, जब कि चन्द्रमास प्रायः सवा सत्ताईस दिनका होने लगा और दिनमें चौबीस घंटे होने लगे। भविष्य कालकेलिए भी यही हिसाब लगाकर, डार्बिन साहबने यह निकाला है कि आगेसे दिवसकी बाढ़ मासकी अपेक्षा अधिक होगी; सुदूर भविष्य कालमें, मास और दिवस फिर बराबर हो जायंगे-तब दिन और महीनेका काल हमारे आजकलके पचपन दिनोंका होगा। इसके उपरान्त चन्द्रमा क्रमशः पृथ्वीके पास आना शुरू करेगा और एक दिन, यदि उस दिनतक ईश्वरकी सृष्टि क़ायम रही तो, अन्तमें उसके भाग्यमें एक बार फिर अपनी प्राचीन जननी इसी पृथ्वीके गर्भमें लीन हो जाना लिखा है।

जगद्बिहारी सेठ

---

## दिया जलनेके कारण

[ ले० भगवती प्रसाद ]

एक दिन एक लड़का जिसका नाम गदाधरसिंह था और जो एक स्कूलके पाचवें दर्जेमें पढ़ता था, अपने चिमनीदार लैम्पसे पढ़ रहा था। अकस्मात लैम्पमें तेल न रहनेके कारण वह बुझ गया। यह देखकर लड़केने रूमालसे चिमनीको पकड़ कर चिमनी उतारी और लैम्पमें तेल भरकर फिर उसे जलाया और रूमालसे चिमनी पकड़कर लैम्पमें चिमनीको लगाने लगा। परंतु चिमनी रखते रखते ही लैम्प बुझ गया। लड़केने बिना कुछ सोचे विचारे चिमनी फिर उतारी और लैम्पको जलाकर फिर उसे (चिमनी) रूमालसे पकड़कर रखने लगा। चिमनीके रखते ही लैम्प फिर बुझ गया, और इसी तरह बार बार चेष्टा करनेपर भी उसकी इच्छा पूर्ण नहीं हुई। मैं भी उसके पास ही खड़ा यह तमाशा देख रहा था। मैंने उससे कहा कि अबकी बार मेरी बतायी हुई रीतिके अनुसार काम करो तो तुम्हारा लैम्प नहीं बुझेगा। उसने कहा-अच्छा बतलाइये। मैंने कहा कि लैम्पकी चिमनीको रूमालसे इस-तरह पकड़ो कि उसका मुंह जिसमें होकर लैम्पका धुआँ निकलता है खुला रहे और इस तरह उसे पकड़कर लैम्पके ऊपर रक्खो तो तुम्हारा लैम्प नहीं बुझेगा। उसने मेरी बतायी हुई रीतिसे काम किया और लैम्प नहीं बुझा। तब लड़केने जिसका नाम गदाधरसिंह लिखा जाचुका है प्रसन्न होकर मुझसे नीचे लिखे अनुसार वार्तालाप कियाः—

गदाधरसिंह—पहले लैम्प क्यों बुझ जाता था और अब क्यों नहीं बुझा।

मैं—पहले तुम रूमालसे चिमनीके मुंहको ढंक लेते थे और इसीलिये लैम्प बुझ जाता था।

गदा०—इसे अच्छी तरह समझाइये कि क्या कारण है। चिमनीके मुँह ढंक जानेसे किस चीज़की कमी हो जाती थी जिससे लैम्प बुझ जाता था?

मैं—सुनो, यह तो जानते ही हो कि जहां कुछ दिखायी नहीं पड़ता या जो जगह बिल्कुल खाली है वहां हवा जरूर मौजूद है।

गदा—०हां,

मैं—इसलिये चिमनीके भीतर जो ख़ाली जगह है वहां भी हवा अवश्य है।

गदा —हां साहब,

मैं—अगर तेल और पानी मिलाकर एक

Chemistry रसायन ]

दीप में भर दिया जाय तो घंटे या दो घंटे या पांच घंटे बाद जब तेल जल जावेगा और पानी रह जावेगा तब दीप भी बुझ जावेगा और तब-तक नहीं जलेगा जबतक और तेल पानीमें न मिलाया जावे या पानी बिल्कुल निकाल डाला जाय और सिर्फ तेल ही डाला जावे। है न यही बात ?

गदा०—हां यही बात है।

मैं०—इसी तरह हवामें चार गैसें ( gases ) मिली होती हैं, वह गैसें यह हैः—ओषजन ( oxygen ) उज्जन ( hydrogen ) कर्बन द्वि ओषिद् ( carbon di-oxide ) और नत्रजन ( nitrogen ) इन गैसों ( gases ) मेंसे केवल ओषजन (oxygen) ही से हर प्रकारकी अग्नि चाहे वह लैम्पकी बत्ती हो या चूल्हेकी आग हो जलती है और जब यह खतम हो जाती है तब अग्निका जलना भी बंद होजाता है।

इसी तरह तुम्हारी चिमनीकी हवामें भी चार हिस्से हैं, परंतु चिमनीमें बहुत थोड़ी जगह है इसलिये उसमें हवा भी थोड़ी है और चार हिस्से भी छोटे छोटे हैं और इसलिये ओषजन (oxygen) भी बहुत थोड़ीसी है। इसके साथ यह न भूल जाना कि तुम्हारी चिमनीमें नई हवा नहीं घुसने पाती थी। जब तुम उसे पहले रूमालसे पकड़कर लैम्पके ऊपर रखते थे क्योंकि चिमनीका मुंह तुम्हारे रूमाल से बंद होजाता था और दूसरा सिरा जिसे लैम्प-के मुंहमें रखनेसे बंद होजाता था इसलिये वह थोड़ीसी ओषजन ( oxygen ) भी बहुत थोड़ेसे समयमें खतम होगई, यानी एक ही या दो सेकन्ड में, और ऊपरके उदाहरणके अनुसार लैम्प भी बुझ गया। जब तुमने चिमनी इस तरह रूमालसे पकड़ी कि चिमनी-का मुंह खुला रहा और पुरानी हवा जिसमेंसे ओषजन (oxygen ) जल गयी थी गरम होकर ऊपर उठगई और नई हवा उसकी जगह आकर भर गई जिसमें ओषजन मौजूद था और इसी तरह यह हाल बराबर जारी रहता है जब तक लैम्प जलता रहता है और इसलिये लैम्प भी जब उसमें तेल रहता है नहीं बुझता है।

---

## फूल।

[ ले० नन्दकुमार तिवारी, बी. एस-सी. ]

फूलोंका मुख्य उद्देश्य बीज पैदा करना है। अब पाठकोंको बत-लाया जायगा कि किस भांति फूल बीजोंकी उत्पत्तिके कारण होते हैं, वैज्ञानिकोंने प्रकृतिके नियमोंको मनन करके यह बतलाया है कि सभी जीवधारियोंके-लिए यह प्रायः एक ही से हुआ करते हैं और स्वयं मनन करने और सोचनेसे यही जान पड़ता है। केवल उदाहरणार्थ एक बात पाठकोंके सन्मुख उपस्थित की जाती है, यानी सन्तानोत्पत्ति। इस बातके बतलानेकी कदाचित कोई आवश्यकता नहीं–यह सभीके अनुभव की बात है कि दो भिन्न प्रकारके लिङ्गवाले जीवोंके रज व वीर्य्यके संयोगसे ही सन्तान-की उत्पत्ति होना सम्भव है। इसीके हेतु इस संसारकी रंग विरंगी सृष्टिमें नर व मादाका भेद है और यह भेद किसी न किसी रूपमें प्रायः सभी जीवधारियोंमें पाया जाता है। यद्यपि यह बात साधारणतः एक अटल सिद्धान्त है, तो भी कुछ जीव इस सृष्टिमें ऐसे हैं जिनमें ऐसा अन्तर नहीं पाया जाता और उनमें सन्तानो-त्पत्तिकेलिए दो भिन्न जीवोंके रज वीर्य्यके संयोगकी आवश्यकता नहीं पड़ती, परन्तु इस श्रेणीके जीव औरोंकी अपेक्षा बहुत कम और बहुत ही सूक्ष्म होते हैं और इनमें ऐसी उत्पत्ति-के होनेका एक विशेष कारण भी है जिसको यहां लिखनेसे कुछ लाभ नहीं। अधिकांश सन्तानकी उत्पत्ति रज व वीर्यके संयोगसे ही

Botany वनस्पति शास्त्र ]

हुआ करती है। परन्तु कभी कभी ऐसे भी उदाहरण मिलते हैं जिनमें ऐसे संयोगके बिना ही नए प्राणियोंकी उत्पत्ति हो जाती है इसको कानीनता (parthenogenesis) कहते हैं, यह भी एक असाधारण बात है और बहुत कम पाई जाती है। इस कारण हम इनको छोड़ कर मुख्य बात पर ही ध्यान देंगे*।

जानवरोंकी भांति वृक्षोंका समूह भी इसी नियमसे बद्ध है यानी वृक्षोंमें भी प्रजनन रज वीर्य्यके संयोगसे ही होता है। बहुतसे लोगोंका यह विचार है कि नर और मादाका भेद जानवरोंमें ही हुवा करता है और वृक्षोंमें ऐसा अन्तर पाया जाना एक असम्भव बात है। पर यह एक मनमाना विचार है जिसका कारण अज्ञानके सिवाय और कुछ नहीं, क्योंकि बहुतोंका यह मत है कि पेड़ जड़ पदार्थ हैं और जब उनमें जीव ही नहीं तो नर व मादाका भेद कैसा? इस श्रेणीके लोगोंसे हम कुछ नहीं कहना चाहते, क्योंकि वह बेचारे जानते ही नहीं कि वृक्ष भी जीवित पदार्थ हैं, परन्तु कुछ गणना एसे लोगोंकी भी है जो यह जानते और मानते हुए भी कि वृक्ष जीवधारी हैं, यह माननेको तैयार नहीं हैं, कि उनमें भी अन्य जानवरोंकी भांति पुरुष और स्त्रीका भेद हुवा करता है। ठीक यह नहीं कहा जा सकता कि यह सिद्धान्त उनका किस बातपर निर्भर है पर विचार करनेसे सम्भावना यह मालूम पड़ती है कि उनमें रूप भेद नहीं और इसी कारण उनमें लिङ्ग भेद भी होना असम्भव है। यानी हमारे अनुभवके अनुसार नर और मादा जीवोंमें कुछ न कुछ रूपभेद अवश्य दिखाई देता है, पर इस भिन्नताका कोई भी चिह्न वृक्षोंमें नहीं मिलता। यह एक बड़ी ही बिचित्र और तत्त्व शून्य दलील है जिसका मुख्य कारण अज्ञानके सिवाय और कुछ नहीं। किसी विशेष अनुभवपर सभी चीज़ोंको घटाना विद्वानोंका काम नहीं इसमें बड़ी बड़ी भूल होजाया करती हैं। उदाहरणकेलिए एक बात बतलाई जाती है, जैसे किसीने यदि कभी बिना मूंछके मनुष्य न देखे हों, उसके अनुभवके अनुसार जिस किसीके सिरपर बड़े बड़े बाल हों और मूछ व दाढ़ी न हों तो वह पुरुष नहीं स्त्री है पर क्या यह बात ठीक है? उसके अनुभवकी कसौटी आजकलके अनेक पुरुषोंको स्त्री बतलाएगी और चीन देशके वासियोंको देखकर तो वह कहने लगेगा कि यह स्त्रियोंका देश है। क्या ही भयङ्कर दशाका सामना करना पड़ेगा यदि सब लोग ऐसा ही समझने लगें! इसीसे एक बातपर सबका घटाना निपट मूर्खता है और ऐसे मनुष्य बहुत धोखा खाते हैं। वास्तवमें लिङ्ग भेद होनेकेलिए इस बातकी आवश्यकता नहीं कि उसके साथ साथ रूप भेद भी हो, और वृक्षोंमें रूप भेद न होते हुए भी लिङ्ग भेद है।

इस बातको भली भांति समझनेकेलिए हमको फूलोंकी बनावटपर ध्यान देना चाहिए। यों तो सभी फूलोंकी बनावट लगभग एक ही सी हुवा करती है। ऐसा लिखने से यह आशय नहीं कि सब फूल एक ही ढांचेमें ढले हुए होते हैं परन्तु तात्पर्य्य यह है कि जितने फूल हम देखते हैं प्रायः उन सबमें उतने ही अंग हुवा करते हैं और उनमें समानता भी रहा करती है। कुछ श्रेणीके फूलोंमें इन अंगोंमेंसे एक या एकसे अधिक अंग लुप्त भी हो जाते हैं, परन्तु अधिकांशमें सभी भाग मिलते हैं। इन अंगोका अब वर्णन किया जायगा और इनको ठीक ठीक समझने और ध्यानमें लानेकेलिए इस बातकी आवश्यकता है कि इसको पढ़ते समय कई भांतिके फूल इकट्ठा करके सामने रख लिए

* इस विषयमें अधिक बातें जाननेकेलिए पाठकोंको श्री युत बाबूराम अवस्थीका लेख ("गर्भ और गर्भ विज्ञानकी कुछ बातें" भाग २, संख्या ३) पढ़ना चाहिए।

जायं, नहीं तो वही मसला होगा कि "एक कान से सुना और दूसरे कानसे निकाल दिया"* ।

साधारण फूलोंमें चार अंग हुवा करते हैं जिनकी बनावट व धर्म ( function ) में भेद होता है । उनमेंसे हरएक पर अब पृथक पृथक विचार किया जायगा और बाहरी अंगों से आरम्भ करके क्रमशः अन्दरकी तरफ हम बढेंगे ।

(१) इनमें से पहलेको वहिर्वास व कुन्ड (अंगरेजीमें Calyx केलिक्स) कहते हैं । यह फूल का सबसे बाहिरी भाग है ( चित्र नं. १ ) । यह बहुधा हरे रंगका होता है और कई छोटी छोटी पत्तियोंसे मिलकर बना हुवा होता है, जिनको छद ( Sepals-सेपेल्स ) कहते हैं । यह किसी फूलमें अलग अलग होती हैं, किसी और किसीमें कुछ या अधिक दूरतक जुड़ी होती हैं । इनका मुख्य काम फूलको कलीकी दशामें जब कि उसके अंग बड़े ही मुलायम होते हैं बाहिरी हानिकारक कारणोंसे बचाना है । फूल खिलने पर बहुतसे फूलोंमें यह गिर जाती हैं ( जैसे पोस्ता या भटकटैयाके फूलोंमें) परंतु और फूलोंमें जबतक फूल मुर्झा नहीं जाता कुन्ड भी बना रहता है (जैसे मटर,गुलाबके फूलोंमें) । परन्तु कभी कभी फूल कुम्हला कर गिर जानेके बाद भी यह बना रहता है और फलोंको घेरे हुए उनकी रक्षा करता है ( रसभरी-का फल ) ।

(२) अन्तर्वास या किरीट ( corolla 'करोला' )-फूलका दूसरा अंग है । यह वहिर्वाससे घिरा हुआ होता है । यह फूलोंका रंगीन और सुगंधित भाग है और इसीके कारण फूल विचित्र रंगोंसे शोभित और सुगंधित होते हैं ( चित्र नं० १ व २ )

कोई लाल, कोई पीले, कोई श्वेत और उनमें भिन्न भिन्न प्रकारकी सुगंधियां भी होती हैं ।
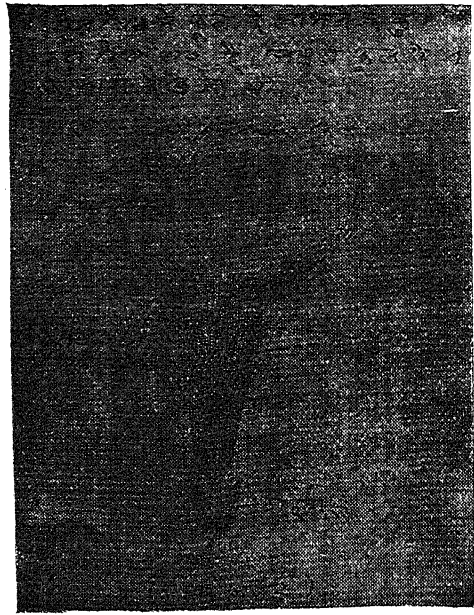
* उदाहरणार्थ कुछ फूलोंके नाम यह हैं-तम्बाकूके फूल, अलसीके फूल, पोस्ता व भटकटैया, मदारके फूल, मटर-के फूल, व सरसोंके फूल ।

जैसे गुलाबमें एक भांतिकी, चमेलीमें दूसरे प्रकारकी। बास व रंग कभी कभी एक साथ मिलते हैं परन्तु और फूलोंमें या तो केवल रंग ही होता है या केवल सुगंध ही। कुन्ड को भांति यह भाग भी कई पत्तियोंका बना हुआ होता है, जोकि अलग अलग होती हैं, या कुछ व पूरी लम्बाईतक जुड़ी हुई होती हैं, इनको दल कहते हैं। इनमेंसे अधिकांश एक हीसे रंग-के होते हैं जैसे गुलाब, बेला इत्यादि परन्तु कुछ फूलोंमें इन दलोंमेंसे कुछ एक रंगके होते हैं और कुछ दूसरे रंगके। इसका उदाहरण रंगीन मटरके फूलोंमें भली भांति पाया जाता है। इस भागका मुख्य काम वास और रंगके द्वारा शहदकी मक्खियों, तितलियों, या और कीड़ों-को फूलकी स्थितिका ज्ञान करा देना है। क्यों-कि इन्हींकी सहायतासे अनेक फूलोंमें रज व वीर्यका समागम होता है जिसका पूरा पूरा हाल आगे चलकर बतलाया जायगा।

(३) किरोटसे घिरा हुआ फूलका एक तीसरा भाग है (चित्र नं० २ व ३) इसको पुरुष अंग कहते हैं, क्योंकि इसीमें वीर्यकण बनते और संचित रहते हैं अंगरेजीमें इसको androecium कहते हैं, जिसका शब्दार्थ पुरुष-वास है! पाठकोंमें-से कुछ ऐसे होंगे जिन्होंने भौरों वा मधुमक्खि-योंको कभी कभी पीले रंगकी रेणुसे ढका हुआ देखा होगा यही वीर्य रेणु है जिसको साधारण भाषामें पराग (pollen) कहते हैं। यह अंग भी पुष्पके पहले दो अंगोंकी भांति कई–कुछ कुछ बहुत छोटे–तीरके तरह भागोंसे मिलकर बना होता है इनको पुमङ्ग कहते हैं (चित्र ३)। हर एक पुमङ्गके दो भाग होते हैं एक तो लम्बा भाग जो फूलसे जुड़ा हुआ होता है और इसके सिरेपर तीरके फलकी जगह दो छोटी छोटी पीले रंगकी कुछ कुछ अंडाकार थैलियाँ रहती हैं। पहले लम्बे पतले भागको केसर (filament) और इन थैलियोंको परागाशय (antherlobes) कहते हैं और इन्हींके अन्दर पराग भरा हुवा रहता है (चित्र ३)
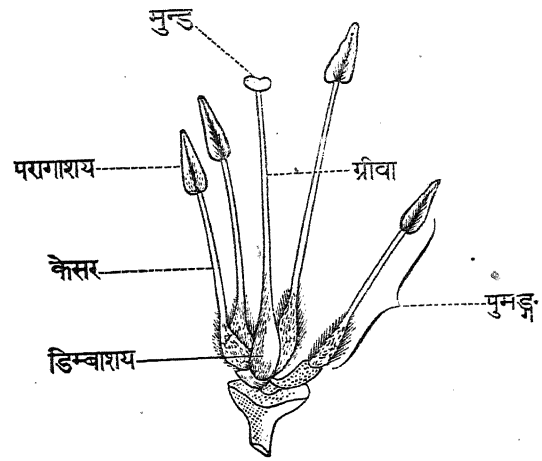
चित्र नं० ३

(४) स्त्रीवास—यह फूलका अन्तिम अंग है और स्त्री अंग कहलाता है। इसको अंगरेज़ीमें gynoecium कहते हैं। यह सबसे बीचका भाग है और तीन पहले कहे हुए अंगोंसे घिरा-हुवा रहता है, इसी भागमें रजकण पैदा होते और संचित रहते हैं और वीर्यकणके समागम-के पश्चात बीज बन जाते हैं। यह भाग भी एक या अनेकसे मिलकर बना होता है, पर अधिकांश यह सब मिलकर एक ही स्त्री अंग बनाते हैं (चि. २ व ३)। यह अंग एक बहुत ही छोटी और लम्बी गर्दनवाली शीशीके स्वरूपका होता है (चि. ३) जिसके पेंदेमें रजकण जिनको डिम्ब कहते हैं पाए जाते हैं। इसीसे उसके पेंदेका डिम्बाशय कहते हैं, गर्दन व ग्रीवाका ऊपरी भाग कुछ चौड़ा और कभी कभी फटा हुवा होता है इसको मुन्ड कहते हैं (चित्र ३)

---

## पदार्थ किस प्रकार बने हैं ?

[ ले० जगद्विहारी सेठ, बी. एस्-सी ]

रसायन शास्त्रकी प्रारम्भिक पुस्तकोंमें हम रासायनिक प्रीति (chemical affinity) युयुत्सा नामक एक शक्तिका वर्णन पाते हैं, परन्तु इस रहस्यमयीशक्तिकी प्रकृति क्या है इसके बारेमें हमें कोई बात नहीं मालूम होती। अपेक्षतया अभी हालकेही वर्षोंमें हम लोगोंने इस बातको पहिचाना है कि रासायनिक प्रीति और कुछ नहीं केवल भिन्न भिन्न परमाणुओंके बीच वैद्युतिक आकर्षण मात्र है। वैद्यतिक आकर्षण क्या है इस बातके बतलानेकी कदाचित् आवश्यकता न होगी। यह भी नहीं बतलाना होगा कि दो प्रकार की विद्युत् होती है एक धनात्मक और एक ऋणात्मक और यह कि एक ही प्रकारकी विद्युत्-मात्राओंमें निराकरण और भिन्न भिन्न भांतिकी मात्राओंके बीच आकर्षण होता है; अर्थात् ऋणात्मक मात्रा धनात्मक मात्राको आकर्षित करेगा, परन्तु ऋणात्मक मात्राको निराकृत करेगा। अब आप थोड़ी देरकेलिए यह समझ लीजिए कि प्रकृति देवीने कुछ परमाणुओंको तो धनात्मक विद्युद् दे रक्खा हैं और कुछको ऋणात्मक। उज्जनका परमाणु धनात्मक विद्युत् सम्पन्न ( Electro-positive ) है और ओषजनका ऋणात्मक विद्युत् सम्पन्न। उपर्युक्त नियमके अनुसार, ये दोनों एक दूसरेको आकर्षित करेंगे और संयुक्त हो जायंगे, अथवा यदि हम चाहें तो कह सकते हैं कि उनका रासायानिक संयोग हो गया।

हां तो हमने यहांतक पदार्थके अणुकी बनावटकी एक अच्छी उपयोगी मनःकल्पित तसवीर खींची है। मूल परमाणु अपने अपने वैद्युतिक मात्राओंकेद्वारा परस्पर मिलकर शिथिल अणु बनाते हैं। परन्तु ये अणु भी तीव्रसे तीव्र सूक्ष्मदर्शकके भी विषयातीत हैं अर्थात् उससे भी वह देखा नहीं जा सकता। एक बार फिर उस दृष्टि अगोचर जीवसूची (microbe) का ध्यान कीजिए। फिर इस बातका अनुभव करनेकी कोशिश कीजिए कि वह लाखों करोड़ों अणुओंसे बना हुआ है, और एक एक अणुमें कई एक परमाणु होते हैं। इस प्रकार हम ठोस लोहेके टुकड़ेको दृष्टि अगोचर परमाणुओंका बना हुआ समझते हैं।

यह बात कि पदार्थका एक ठोस टुकड़ा बिलकुल अदर्शनीय वस्तुओंका बना हो कई एकोंको शायद ताज्जुबमें डालदेगा, परन्तु इसमें भेदकी कोई बात नहीं है। कल्पना कीजिए कि आप एक ख़ूब चौड़ी सड़कपर खड़े हैं। कई एक घुमावोंके उपरान्त आपसे काफ़ी दूरपर वह सड़क किसी पहाड़ीके ऊपर होकर जाती है। यद्यपि दूरी काफ़ी है, तथापि काफ़ी चौड़ी होनेके कारण पहाड़ीपर आप सड़कको अच्छी तरहसे देख सकते हैं। थोड़ी देरतक खड़े रहनेकेबाद आपको एक आदमी दिखलायी दिया जो कि पहाड़ीकी तरफ़ उसी सड़कसे जा रहा है। जैसे जैसे वह आगे बढ़ता जाता है, वैसे वैसे छोटा होता जाता है, और जिस समय वह दूरस्थ पहाड़ीपर पहुंचता है उस समय वह बिलकुल अदृष्ट हो जाता है उसका चिन्ह मात्र भी नहीं दिखलायी देता। पहाड़ी इतनी दूर है कि दूरदर्शक यन्त्रद्वारा भी आप उस व्यक्तिको नहीं देख सकते। यदि आप उस व्यक्तिके अधिक पासतक नहीं पहुंच सकते तो आप किसी प्रकारसे उसे नहीं देख सकते। परन्तु यदि कई लाख मनुष्योंकी सेना उतनी ही दूरपर होती तो आपको एक काले चिन्हकी भांति अवश्य दीख जाती। ऐसा ही है पदार्थका ठोस टुकड़ा जिसको निर्माण करनेवाले परमाणु बिलकुल हमारी दृष्टिसे परे हैं।

यदि आप स्थूल लोहेके एक टुकड़ेको हाथमें लें तो तुरन्त ही यह बात आपके मनमें समा जावेगी कि जिन अदृष्ट कणोंका वह बना है उनके बीच परस्पर बड़ी ही अधिक ग्राहक शक्ति होगी। इस शक्तिको जो अणुओंको परस्पर बांधे सी रहती है संसक्ति (cohesion) नाम दिया गया है—अर्थात् वह शक्ति जिसकी वजहसे अणु एक दूसरेसे बंधे हुए, जकड़े हुए, रहते हैं। हम इस बातको बड़ी सुगमतासे दिखला सकते हैं कि यह शक्ति कितनी अधिक होती है। एक इंचभर मोटी लोहेकी छड़ लीजिए और इसके छोर पकड़कर खींचनेकी कोशिश कीजिए। आप देखेंगे कि इस प्रकारसे खींचकर इसके दो टुकड़े कर देनेकेलिए क़रीब २५ टनके खिचावकी आवश्यकता होती है। एक टन क़रीब २७ मनके होता है। बाज़ बाज़ स्टीलके तार इतने मज़बूत होते हैं कि वे १०० टन प्रतिवर्ग इंचका बोझ उठा सकते हैं। एक बार किसी प्रकारसे अणुओंको अलग अलग करनेमें समर्थ होनेके उपरान्त फिर यदि हम चाहें कि टूटेहुए सिरोंको पास पास रख कर जोड़ दें, तो ऐसा करनेसे वे जुड़ नहीं जायंगे। प्रत्यक्ष है कि अणु तभी परस्पर आकर्षित हो सकते हैं जब कि वे बहुत ही पास पास हों। लोहेकी छड़के टूटे हुए सिरोंको अगर हम गरम करके पास पास रखकर उसपर चोट लगावें तो अणु एक दूसरेके काफ़ी पास आजावेंगे और दोनों सिरोंका जोड़ना सम्भव हो सकेगा। इस प्रकारकी बातोंमें असलमें क्या क्या होता है इसकी मनःकल्पना करनेकेलिए हमें ठोस पदार्थकी बनावटका नक़शा खींचना होगा।

वैज्ञानिकोंकेलिए यह तो बिलकुल ही मामूली सी तुच्छ बात हो गयी है। जिस प्रकार मकानकी दीवारोंकी ईंटें एक दूसरेसे ठोस रीतिसे सटी हुई रहती हैं, अणुओंका वैसा हाल नहीं है। हम लोगोंकेपास इस बातको दिखलानेकेलिए अच्छे अच्छे प्रयोग मौजूद हैं कि अणुओंके बीचमें शून्य स्थान अवश्य रहता है। हमें सारे पदार्थोंको—ठोससे ठोस वस्तुओंको भी–वास्तवमें रंध्रपूर्ण (porous) समझना होगा, स्टील, संगमर्मर, शीशा आदि घनातिघन वस्तुओंको भी स्पंज (sponge) की भांति समझना होगा।

अभी यह बात हम लोगोंकी समझमें आगयी थी कि ये अदृष्ट कण कम्पनशील हैं अर्थात् वे स्थिर नहीं रहते किन्तु कांपा करते हैं। इस कम्पनको हम लोग बोलचालकी भाषामें उसकी उष्णता या उसका तापमान कहते हैं। हथौड़ेकी मारसे लोहेके अणुओंको हम बड़े ही वेगसे कम्पित कर सकते हैं। चोट खाते खाते शीघ्र ही लोहा इतना उष्ण हो जाता है कि हम उसे बिना हाथ जलाए छू नहीं सकते, और यदि हम हथौड़ा उसपर मारते ही रहें तो शीघ्र ही उसे रक्ततप्त कर देंगे। संसारमें ऐसा कोई पदार्थ नहीं जिसमें कुछ न कुछ गर्मी न हो। यदि उसमें गर्मी कम हुई तो हम कहते हैं कि वह ठंडा है। परन्तु इसका यह मतलब कदापि नहीं कि उसमें गर्मी ही नहीं। यह तो केवल एक प्रकारकी तुलना मात्र हुई। जिस कमरेमें आप बैठे हैं यदि उसकी वायुका तापमान ३०° शतांशतक पहुंच जाय तो आपको वहां बहुत ही गर्मी मालूम पड़ेगी; परन्तु यदि आपकी चाय इसी गर्मीकी हो तो वह आपको बहुत ही ठंढी जंचेगी। चाहे कितना ही ठंडा पदार्थ क्यों न हो उसमें कुछ न कुछ उष्णता अवश्य होती है अर्थात् उसके अणु कम्पमान रहते हैं। इस प्रकार हम ठोससे ठोस पदार्थोंको अणुओंसे बना हुआ समझते हैं, जो कि सदैव चला फिरा करते हैं परन्तु कभी भी परस्पर स्पर्शमें नहीं आते।

अब टूटीहुई लोहेकी छड़पर ध्यान दी

जिये। दोनों टूटेहुए सिरोंको हम या तो हथौड़ेकी मारसे या आगमें रखकर गरम करते हैं। आगमें अणु बड़े ही वेगसे कांपते रहते हैं, और ये ही लोहेके अणुओंको भी अधिक वेगसे कम्पमान कर देते हैं। यदि हम लोहेको बड़ी ही तेज़ आंच दें तो उसके अणु इस ज़ोरसे कांपने लगेंगे, उनके पर्यटन इतने बड़े होने लगेंगे कि वे एक दूसरेको पहलेकी भाँति अच्छी तरहसे आकर्षित नहीं कर सकते; उनकी एक दूसरेपर पहलेकी सी पकड़ नहीं रह जाती ; और इस प्रकार ठोस पदार्थ द्रवरूपमें परिणत हो जाता है। यदि हम तेज़ आंच लगाना जारी रक्खें, तो अणुओंका एक दूसरेपर बिलकुल अधिकार नहीं रह जाता। जिनका वेग बहुत ही अधिक है वे द्रव पदार्थके मुख्य अंशकी सीमासे बाहर उड़ उड़कर जाने लगते हैं। धीरे धीरे सारा द्रव पदार्थ उड़ जाता है और वाष्पके रूपमें परिणत हो जाता है। परन्तु यह सब करनेकेलिए बड़ी ही तेज़ आंचकी ज़रूरत होती है। पहले इसके कि अणु स्थूल पकड़के चंगुलसे निकल सकें ढले-हुए लोहेका तापमान प्रायः ३०००° अंश फैरनहीट, अर्थात् प्रायः १७००° शतांश होना चाहिए; और द्रव पकड़की चंगुलसे निकल भागनेके पहले ६०००° फैरनहीट या ३३००° शतांशका तापमान होना चाहिए। जैसे ही वह शक्ति (उष्णता) जो अणुओंको भगा रही है हटा दी जायगी, अणु एक बार फिर एक दूसरेके चंगुलमें फंसने लगेंगे। धीरे धीरे जैसे तापक्रम कम होता जाता है, वे वाष्पीय से द्रव और द्रवसे पुनः स्थूल अवस्थामें आ जाते हैं, यदि साधारण तापमानपर उनकी स्वाभाविक अवस्था स्थूल हो।

आइये एक बार फिर हम पदार्थके संगठनके चित्रपर निगाह फेंकें। हमें सब पदार्थ रंध्रयुक्त दीखते हैं, और सब कम्पमान अणुओंकेद्वारा जो स्थूलावस्थामें भी एक दूसरेको कभी छूतेहुए नहीं रहते निर्म्मित हैं। हम देखते हैं कि जब अणु एक दूसरेके पास पास होते हैं, जैसे कि स्थूलावस्थामें, तो उस समय संसक्तिकी आकर्षण शक्ति उस समयकी अपेक्षा जब वे एक दूसरेसे ज़्यादा दूर होते हैं, जैसे द्रवावस्था, कहीं अधिक होती है। स्थूल दशामें तो हम अणुओंको केवल ( pendulum ) लोलककी भांति कांपतेहुए पाते हैं, परन्तु द्रवावस्थामें इस प्रकारकी गतिके अतिरिक्त उनमें थोड़ी दूरतक पर्यटन करनेकी और एक दूसरेके ऊपर फिसल जानेकी भी स्वतन्त्रता आ जाती है। यदि हम दूध और चाय मिलावें तो दोनों द्रवोंके अणु बड़ी शीघ्रतासे एक दूसरेसे हिल मिल जाते हैं। किसी द्रवके अणु अपनी इच्छानुसार इधर उधर घूमते रहते हैं, यह बात एक बड़े ही सुगम प्रयोगसे दिखलायी जा सकती है। एक कांचके गिलासको तूतिये और पानीकी घोलसे आधेसे कुछ कम भर दीजिये। उसके बाद घोलके तलपर धीरेसे थोड़ा सा साफ़ पानी डाल दीजिए। यह काम इतने धीरेसे करना चाहिए कि घोलका तल अशान्त होकर हिल डुल न जाये पहले तो हमें दोनों द्रव बिलकुल अलग अलग दिखलायी देंगे, परंतु धीरे धीरे हम देखेंगे कि तूतियेके अणु ऊपर, गुरुत्वाकर्षण शक्तिके विपरीत पानीमें जा रहे हैं। यदि काफ़ी समयकेलिए उन्हें इसी प्रकार विना छेड़ छाड़के रहने दें, तो द्रवोंके रंगसे हमें यह बात मालूम हो जायगी कि तूतियेके कण सारे पानीमें पहुंच गये हैं।

विकीर्ण ( diffusion ) का यह दृश्य उस समय और भी प्रत्यक्ष हो जाता है जब कि अणु एक दूसरेकी आकर्षण शक्तिकी सीमाके बिलकुल बाहर निकल जाते हैं, जैसे कि वाष्पीय अवस्थामें। चाहे कितना ही थोड़ासा वाष्पका परिमाण किसी कांचके बरतनमें रखदिया जाय, तुरंत

ही वाष्पके अणु जितना स्थान उन्हें मिल सकता है सबमें फैल जाते हैं। यदि जलाने वाली गैसकी नलीकी काक थोड़ी देरकेलिए खुली रह जाय तो शीघ्र ही हमें उसके अणुओंकी परिस्थितिका ज्ञान हो जाता है, चाहे हम नलीसे कुछ दूरपर ही हों। गैसके अणुओंको हवाके अणुओंके बीचसे होकर हमारी नाकतक पहुँचनेमें बहुत देर नहीं लगती।

यहांतक हमने पदार्थकी तीन अवस्थाओंका वर्णन किया--अर्थात् स्थूल, द्रव और वाष्पीय, किसी आगामी लेखमें हम उस अवस्थाकी विवेचना करेंगे जिसको किसी किसीने पदार्थकी चौथी अवस्था कहकर पुकारा है।

---

## मौलिक और यौगिक

[ ले० वंशीधर लाल शर्म्मा, ]

शाम का सुहावना समय है। सूर्य्य नारायण अस्त होने वाले हैं, चारों ओर हरयाली लहरा-रही है, रंग बिरंगके फूल खिले हुए हैं, फव्वारोंकी धाराएं अपनी मनोहरतासे चित्त खींचे लेती हैं। एक सड़क उत्तरसे दक्षिणको जाती है, और दूसरी इसको काटती हुई पूर्वसे पश्चिमको जा रही है, इन दोनोंके संगमपर चौपड़ या चौराहा है, जिसके बीचमें एक गोल बड़ा सुंदर चबूतरा है, जिसके चौतरफ़ा हरी घासकी झालर है। ऊपर भांति भांतिकी मनोहर कुरसियां पड़ी हुई हैं इन कुरसियोंपर बहुतसे सज्जन जो बागकी हवा खाने आये हैं बैठे बैठे चुपचाप उस जगतकर्ताकी लीलाको निहारते हुए परमानन्दमें मग्न हो रहे हैं। इनमेंसे कोई कोई धीरे धीरे अपने साथियोंसे बातें भी कर रहे हैं। इन्हींमेंसे कुरसियोंपर बराबर बैठे दो स्वाध्यायी लड़के गोपीनाथ और गौरीसहाय भी हैं। यह दोनों अंगरेज़ी पाठशालाकी नवीं कक्षामें पढ़ते हैं। आओ हम भी इनके पास चलकर बैठें और इनका परस्पर संवाद सुनें। ये तो बड़े ही उत्साहसे और मनोहर रीतिसे बातचीत करते दीखते हैं।

गोपीनाथ—अजी हाँ! अच्छी याद आयी, मैं आपको थोड़ीसी तकलीफ़ और देना चाहता हूँ।

गौरीसहाय—फ़रमाइये!

गोपी०—आज मैं स्कूलसे जलदी चला गया था, इसलिये कृपा करके यह बता दीजिये कि सायन्स मास्टर साहबने क्या पढ़ाया।

गौरा०—आज तो उन्होंने बड़ी मनोरंजक और अचरजकी बातें बतलायीं। ( elements ) मौलिकोंका हाल पढ़ाया था। लीजिये मैं आपको अभी समझाये देता हूँ, अच्छी बात है मुझको भी याद हो जायगा।

गोपी०—धन्य है आपको जो इतनी कृपा रखते हैं।

गौरी०--देखिये किसी पदार्थको मौलिक तब कहते हैं जब किसी तरहपर भी उससे दो या अधिक सरल पदार्थ न निकल सकें जिनके गुण और स्वभाव इससे भिन्न हों। जैसे लोहा, सोना, उज्जन इत्यादि।

गोपी०—हाँ मैंने भी एक समय माता जीसे सुना था कि सब वस्तुएँ पाँच तत्वोंसे बनी हैं जिनके नाम यह हैं, मिट्टी, पानी, हवा, आग और आकाश।

गौरी०—अजी नहीं! पहले तो मैं भी यही जानता था परंतु आज तो मास्टर साहिबने पृथ्वीको ही उलट डाला। उन्होंने प्रयोगोंद्वारा प्रत्यक्ष दरसा दिया कि पुराने लोगोंने पाँच तत्व माने थे परंतु वे उन्हें मौलिक या मूल वस्तु समझने में भूलमें थे, उन्होंने जलको मूल पदार्थ माना था, परंतु जल तो उज्जन और ओषजनके योगसे बना है। फिर वायु भी कई प्रकारके

गैसोंसे बनी हुई है। पृथ्वी याने मिट्टी भी सिलिकन, उज्जन इत्यादि कई दूसरे ही मूल पदार्थोंसे बनी है। जल और वायुको भी तोड़-कर उनसे अधिक सरल पदार्थ प्रकट करनेके प्रयोग कल वर्णन करूंगा, क्योंकि आज समय थोड़ा है। अग्नि या ताप तो कोई पदार्थ ही नहीं बल्कि शक्ति है, और आकाशसे तो इन वस्तुओंसे कोई संबंध ही नहीं। आजकलके वैज्ञानिकोंने लगभग अठत्तर मूल पदार्थ खोज डाले हैं जिनमेंसे कुछ थोड़ोंके नाम और सूचक-सूत्र मैं आपको हिन्दीमें उनके परमाणुभार सहित लिखे देता हूँ।"

## मौलिकोंकी सूची

| सं० | हिन्दी नाम | सूचिक सूत्र | परमाणु भार |
|---|---|---|---|
| १ | अलुमिनम | अल | २७·१ |
| २ | सुरमा धातु या सुरमा | सु | १२०·२ |
| ३ | सुमखार या संखिया | सं | ७५·० |
| ४ | टंक या बोरन | बो | ११·० |
| ५ | आंगारक ( कोयला ) | क | १२·०० |
| ६ | तांबा | ता | ६३·६ |
| ७ | स्वर्ण या कंचन | स्व | १९·१२ |
| ८ | उज्जन | उ | १·००९ |
| ९ | आयोडीन | ऐ | १२६·९७ |
| १० | लोहा | लो | ५५·९ |
| ११ | सीसा | सी | २०६·९ |
| १२ | मैंगनीज | मे | ५५·० |
| १३ | पारा | पा | २००·० |
| १४ | निकिल | नि | ५८·७ |
| १५ | नत्रजन | न | १४·०४ |
| १६ | ओषजन् | ओ | १६·०० |
| १७ | स्फुर | स्फु | ३१·१ |
| १८ | प्लाटिनम् | प्ल | १९४·८ |
| १९ | पोटासियम् | पो | ३९·१५ |
| २० | रेडियम् | रे | २२५·० |
| २१ | सिलिकन् ( शिलाकण ) | शि | २८·४ |
| २२ | चांदी, | चां | १०७·९३ |
| २३ | सोडियम् | सो | २३·०५ |
| २४ | गंधक | गं | ३२·०६ |
| २५ | रांग | र | ११९·० |
| २६ | जस्त ( यशद ) | य | ६५·४ |

जेबसे काग़ज़ और पेंसिल निकाल उसने सब नाम और सूचक अक्षर लिखकर दे दिये जिसकी नकल नीचे दी जाती है।

गोपी०—( काग़ज़ जेबमें रखकर ) अच्छा तो अब आज्ञा हो, कल फिर मिलेंगे, नमस्कार!

---

## भोजन विचार

[ले० डाक्टर एस. पी. राय, एम. बी., एम. आर. सी. एस.]

### पकानेकी रीतियां

इस स्थलपर पकानेकी रीतियोंकी चर्चा भी अनुचित न होगी। साधारण रीतिसे पकानेकी विधियोंमें प्रधान विधि उबालना वा भापसे पकाना है। उबालनेके दो मतलब हो सकते हैं, या तो यह कि जिस चीज़को उबालते हैं उसमेंसे सारी पुष्टि-कारक वस्तुएं निकलकर रसेमें उतर आवें, या यह कि वह वस्तुएं पककर उसी पदार्थमें रह जायं। यदि हम किसी पदार्थका सारा सत्त किसी द्रवमें (जैसे पानी) रसेके रूपमें उतार लें तो उस वस्तुके बारीक टुकड़े करके ठंढे पानीमें भिगो देना चाहिए। कुछ देर बाद बहुत धीरे धीरे नरम आंच देनी चाहिए। यदि मांसका रसा बनाते हों तो नरम आंच ज़रूरी

Medecine वैद्यक ]

है, क्योंकि कड़ी आंचसे अलबुमेनका झट थक्का बन जायगा। नरम आंचसे धीरे धीरे अलबुमेन पानीमें घुल जायगा और दूसरे पोषक पदार्थ भी पानीमें उबलनेके पहले ही घुल जायंगे यहांतक कि उबलतेतक मांस सीठा सा रह जायगा, यद्यपि अभी इसमें भोजनकी सामग्री थोड़ी बहुत मौजूद ही है। साधारण शोरवा बनानेमें ज़्यादा देरतक उबलने देते हैं जिसमें अधिक भाग सरेशका उतर आवे और मांस और भी सीठा हो जाय। परन्तु, यदि उबालने-का मतलब यह है कि वस्तुका सारा सत्त उसी-में बना रहे, जैसा कि आलू, गोभी, शलजम, आदि पकानेमें करते हैं, और उसका स्वाद, उसका रस किसी तरह भी पानीमें उतरने न पावे, तो उस वस्तुके बड़े टुकड़े करने चाहिएं और तुरन्त उबलते वा लगभग उबलते पानीमें डालना चाहिए और तुरन्त उबालना चाहिए। ऐसा करनेसे वस्तुमें-का अलबुमेन जो उसके ऊपरी भागमें था झटपट जमकर थक्का हो जाता है और चारों ओर उन टुकड़ोंको ऐसा घेर लेता है कि उसके सारे छोटे छोटे छेद बन्द हो जाते हैं और उसका रस उसके भीतरसे निकलकर पानीमें उतरने नहीं पाता। मांसादि-को ज़ोरोंसे उबलने न देना चाहिए बल्कि थोड़ी देर जोश देकर फिर उसे नरम आंचपर धीरे धीरे चुरने देना चाहिए। मछली पकानेमें भी यही सिद्धांत लगते हैं किन्तु एक बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि मछली बहुधा भंजन-शील होती है अर्थात् बहुधा उबलते जलमें डालते ही टुकड़े टुकड़े हो जाती है। इसलिए उसे ऐसे पानीमें डाले जो उबलता तो न हो पर उबलने वाला ही हो। और पकानेकी सारी क्रिया वस्तुतः उबालके बिना ही समाप्त होनी चाहिए। मूर्ख रसोइये खूब जोश देते हैं, यद्यपि बहुत नरम आंचसे अच्छा पकता है और गरमीका पूरा प्रभाव पड़ता है।

साधारणतः अधिकांश शाक भाजी रसेके-लिए नहीं पकायी जाती। आलू आदिके पकाने-में उसका स्वाद और सत्त सब आलू हीमें रहने देने का प्रयत्न किया जाता है। इस उद्देश्यसे आलूको बिना छीले ही उबालना चाहिए। आलूमें बड़ा ज़रूरी हिस्सा पोटाशका होता है, जो हमारे रक्तकेलिए बहुत आवश्यक है। अगर छीलकर उबालें तो यह पोटाश जो आलू-में-के नमकोंमें आधेके लगभग होता है घुलकर पानीमें चला जाता है।

चावलोंके पकानेकी सबसे अच्छी विधि भापसे पकाना है। भापसे पकानेसे उसका रस और स्वाद ज्योंका त्यों बना रहता है। जो लोग चावल बहुत सारे पानीमें उबालते और अन्तमें मांड पसाकर फेंक देते हैं वह भारी भूल करते हैं। चावलका सत्त वह फेंकते हैं और सीठी खाते हैं।

सभी चावल खानेवालोंको मैं बल पूर्वक यह सलाह दूंगा कि वह भापसे चावल पका-कर खाएं। भापसे पके चावलके स्वादका आ-नन्द जिसे एक बार भी मिल जायगा उसे फिर मांड पसाया चावल फीका और सीठा लगेगा और कभी न रुचेगा। तरकारियां भी जो भाप-से पकायी जाती हैं बड़ी स्वादिष्ट और सुगंध-युक्त होती हैं। उनका कोई अंश नष्ट नहीं होता। गोभी, करमकल्ला, हरी मटर, आलू, परवल, भिंडी, नेनुआ, गाजर, शलगम आदिके विषयमें मेरा अपना अनुभव है। पाठक वृन्द भापसे इन्हें पकाकर मेरे कथनकी जांचकर सकते हैं।

साधारण रीतिसे कहा जा सकता है कि मांस पकानेमें तलनेकी विधि बुरी है। अधिक-तर शाक भाजी भी तलनेसे कम पोषक और पचनेमें गरिष्ट हो जाती है। आलू इसका अप-वाद है। तला हुआ आलू अधिक पोषक है और जल्दी पचता है। बारीक पूरियां घीमें तली हुई

भी अधिक पोषक होती और मोटी पूरियोंकी अपेक्षा जल्दी पचती हैं।

पकानेकी और रितियोंपर विस्तार करके लेख बढ़ाना हमारा उद्देश्य नहीं है क्योंकि हम भारतीयोंकी पकानेकी रीतियां संसारके अधिकांश सभ्य कहलानेवाले देशोंसे अच्छी हैं और शाक भाजी नाज आदिसे जैसे उत्तम और स्वादिष्ट भोजन हमारे देशमें बनते हैं अनेक सभ्य देशोंमें नसीब नहीं। साथ ही हमारे यहांके भोजन रुचिकर पोषक और स्वास्थ्यको लाभ पहुँचानेवाले होते हैं।

अब अगली संख्यामें हम अपने यहांके साधारण निरामिष भोजनोंमेंसे कई एकके विषयमें कुछ विचार प्रकट करके इस भोजन-विचार नामके लम्बे लेखको समाप्त कर देंगे।

---

## ग्रहों की दूरी कैसे नापी गयी ?

[ ले०—महाबीरप्रसाद बी.एस्-सी, एल्. टी. ]

लम्बन—यह साधारण अनुभवकी बात है कि जब दो वस्तुएं एक ही दिशामें एक नेत्र बन्द करके देखी जाती हैं तब दूरवाली वस्तु पासवाली वस्तुसे ढक जाती है और केवल पासवाली ही वस्तु देख पड़ती है ; परन्तु यदि वही वस्तुएं उसी स्थानसे दूसरे नेत्रसे देखी जायँ तो एक सीधमें नहीं देख पड़तीं वरन अलग अलग हो जाती हैं। यदि इसका अनुभव किसी को न हुआ हो तो वह एक आंख बन्द करके किसी दो पतले पतले पेड़ोंके तनोंको जो एक दूसरेसे कुछ दूरीपर हों अथवा मकानकी दीवालके दो किनारोंको वा दो पेन्सिलोंको दूरपर सीधी खड़ी करके ऐसे स्थानसे देखे जहांसे वह दोनों एक सीधमें दिखाई पड़ें, और फिर यह नेत्र बन्द करके दूसरे नेत्रसे देखे तो उसको प्रत्यक्ष हो जायगा कि वह अलग अलग दीख पड़ते हैं और एक दिशामें नहीं हैं।

Trigonometry त्रिकोणमिति ]
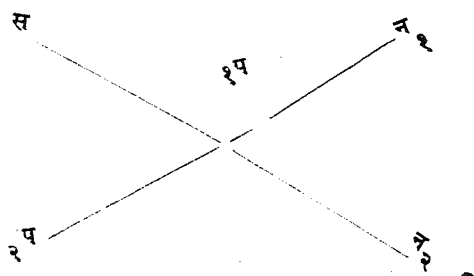
कल्पना करो कि देखनेवालेके नेत्र न१, न२ स्थानोंपर हैं और प१, प२ दो पेन्सिलें हैं जो न२ नेत्र बन्द करके न१ नेत्रसे देखी जानेपर एक ही सीधमें दिखाई पड़ती हैं। ऐसी अवस्थामें प२, प१ से ढक जायगी और केवल प१ दीखाई पड़ेगी। अब न१ नेत्र बन्द करके न२ से देखा जाय तो प२, प१ से ढकी हुई नहीं दीख पड़ेगी वरन् अलग अलग दीखेंगी। पहले प१, प१ प२ दिशामें थी और पीछे प१ स दिशामें दिखने लगी। यह दिक् परिवर्तन स प१ प२ कोणसे नापा जाता है जो न१ प१ न२ कोणके भी बराबर है जो प१ का लम्बन कहलाता है।

चित्र १ से प्रकट है कि यदि प१ बहुत दूर हो जाय तो न१ प१ न२ कोण इतना छोटा हो जायगा कि इस कोणको बनानेवाली रेखाएं आपसमें मिली हुईके समान हो जायंगी और देखनेवाला चाहे किसी नेत्रसे देखे दिशामें कोई परिवर्तन नहीं मालूम होगा, अर्थात् दोनों नेत्रोंके बीचका अन्तर वस्तुकी दूरीके मुकाबिलेमें नहीं सा हो जायगा और दोनों आंखें उसको एक ही दिशामें देखेंगी। यदि देखनेवाला स्थान बदल कर देखे तो अवश्य दिक् परिवर्तन मालूम होगा। इससे यह सिद्ध होता है कि वस्तु जितनी ही दूर हो उसका लम्बन उतना ही कम

होता है और लम्बनका नापना उसी समय सम्भव है जब देखनेवालेके स्थानोंका अन्तर बहुत हो।

यह सभी जानते हैं कि ग्रह, चन्द्रमा, तारे इत्यादि पृथ्वीसे बहुत दूर हैं इसलिए इनका लम्बन एक स्थानसे नहीं मालूम होता और इसके नापनेकेलिए देखनेवालेके दो स्थानोंको बहुत दूर करना पड़ता है। इस कारण किसी ग्रहका लम्बन जाननेकेलिए पृथ्वीके अर्द्धव्यासको (त्रिज्याको) देखनेके दो स्थानोंकी दूरी मानते हैं। पृथ्वीके केन्द्र और देखनेवालेके स्थानसे जो रेखाएं ग्रहके केन्द्रतक खींची जाती हैं और उनसे जो कोण बनता है वही उस ग्रहका लम्बन कहलाता है। मान लीजिए (चित्र २) में क पृथ्वीका केन्द्र (भू-केन्द्र) है द देखनेवाला है और ख देखनेवालेका खस्वस्तिक अर्थात् देखनेवालेके ठीक ऊपर है। ऐसी दशामें यदि कोई तारा ठीक ऊपर ख की ओर दिखाई पड़े तो उसका लम्बन कुछ न होगा क्योंकि देखनेवाला और

चित्र २

भूकेन्द्र दोनों उस ग्रहके एक सीध में हैं, किन्तु त' तारेका लम्बन द त क कोण होगा। पृथ्वी स्वयम् अपने अक्षपर दिन रातमें एक बार घूम जाती है, इसलिए देखनेका स्थान भी तारेसे दूर हट जाता है। जिस समय तारा क्षितिजपर आ-जाता है अर्थात् ठीक अस्त होनेको होता है उस समय देखनेवाले और तारेको मिलाती हुई रेखा खस्वस्तिक रेखासे समकोण बनाती है। जब तारा अस्त होता रहता है तब उससे आनेवाली किरण भूतलकी स्पर्श रेखा भी बन जाती है, इसलिए 'द' स्थान 'द१' को चला जाता है जहांसे देखनेवालेका खस्वस्तिक ख१ हो जाता है और 'त' का लम्बन द१ त क कोण हो जाता है। यह स्वयम् सिद्ध है कि जब 'त' से आनेवाली किरण भूतलकी स्पर्श रेखा बन जाती है तब यह समकोणसे बड़ा कोण खस्वस्तिकके साथ नहीं बना सकती और ऐसी दशामें जो लम्बन बनता है वह सब से बड़ा लम्बन होता है। इसलिए ऐसे लम्बन को 'परम दृग लम्बन' अथवा 'क्षितिज लम्बन' कहते हैं।

सारे खगोलीय गोलोंका लम्बन छोटा होता है। सबसे पासवाले चन्द्रमाका लम्बन ५७ कलाके आस पास रहता है और सबसे पासवाले ग्रहका लम्बन ४० विकलासे अधिक नहीं होता।

त्रिकोण मितिकी निष्पत्तियां—किसी वस्तुका लम्बन जानकर उसकी दूरी जाननेकेलिए त्रिकोणमितिके कुछ नियम काममें लाये जाते हैं, इसलिए इस समय उन नियमोंका जानना बड़ा ही आवश्यक है। क ख ग एक समकोण त्रिभुज है, जिसका क ख ग कोण समकोण है। इसके और दो कोण न्यूनकोण हैं। यदि इसके किसी न्यूनकोणके सामनेके भुजको क ग कर्णसे भाग दें तो भजनफल १ से सदैव कम होता है क्योंकि समकोण त्रिभुजके किसी न्यूनकोणके
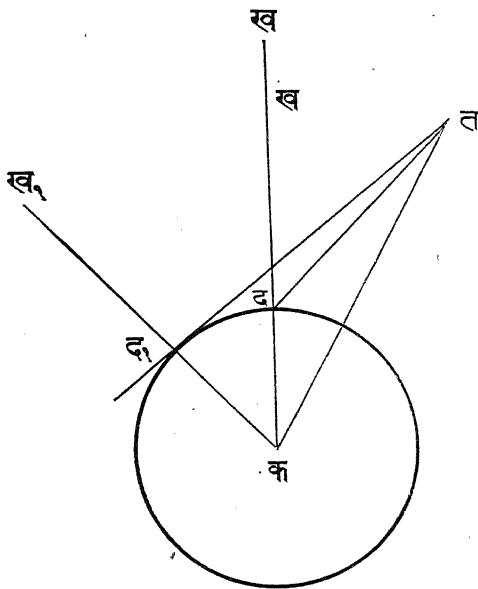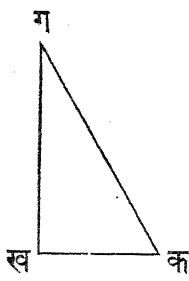
सामनेका भुज, कर्णसे अर्थात् न्यूनकोणके सामनेके भुजसे छोटा होता है। समकोण त्रिभुजके किसी न्यून कोणकी 'ज्या' वह भिन्न है जो उस कोणके सामनेके

चित्र नं० ३

भुजको कर्णसे भाग देने पर आती है, जैसे क ग ख कोणकी ज्या $\frac{कख}{कग}$ है; और ख क ग कोणकी ज्या $\frac{खग}{कग}$। न्यूनकोणके बगल वाले भुजको कर्णसे भाग देनेपर जो भिन्न मिलती है उसको उस कोणकी 'कोटिज्या' कहते हैं जैसे क ग ख कोणकी कोटिज्या $\frac{खग}{कग}$ और क ख ग कोणको कोटिज्या $\frac{कख}{कग}$ है। इन निष्पत्तियों* से यह भी प्रकट होता है कि जो क ग ख कोणकी ज्या है वही ख क ग कोणकी कोटिज्या है। किसी त्रिभुजके तीनों कोण मिलकर दो समकोणके बराबर होते हैं और समकोण त्रिभुजका एक कोण समकोण होता ही है इसलिए बाकी दो कोण एक समकोणके बराबर होते हैं। ऐसे दो कोणोंमेंसे जो मिलकर एक समकोणके बराबर होते हैं प्रत्येकको दूसरे का पूरक कोण कहते हैं। इसलिए साधारण नियम जिससे ज्या और कोटिज्याका सम्बन्ध बतलाया जाता है यह है किसी कोणकी ज्या उसके पूरक कोणकी कोटिज्याके बराबर होती है। समकोण त्रिभुजके किसी न्यूनकोणके सामनेके भुजको उसीके बगल वाले भुजसे भाग देनेसे जो निष्पत्ति आती है उसको उस कोणकी स्पर्शरेखा और यदि बगलवाले भुजको सामनेके भुजसे भागदें तो निष्पत्तिको उस कोणकी कोटिस्पर्श रेखा कहते हैं। यदि कर्णको किसी कोणके सामने वाले भुजसे भागदें तो निष्पत्तिको उस कोणकी कोटिच्छेदन रेखा और कर्णको बगलवाले भुजसे भाग दें तो निष्पत्तिको उस कोणकी 'छेदनरेखा' कहते हैं। दिये हुए त्रिभुजमें क ग ख कोणकी स्पर्शरेखा, कोटि स्पर्शरेखा, छेदनरेखा और कोटिच्छेदन रेखा क्रमसे $\frac{कख}{खग}$, $\frac{खग}{कख}$, $\frac{कग}{खग}$ और $\frac{कग}{कख}$ हैं। इन छः निष्पत्तियोंको त्रिकोणमितीय निष्पत्तियां कहते हैं और इन्हीं छः निष्पत्तियोंपर सम्पूर्ण त्रिकोणमितिका गणित निर्भर है। आगे चलकर पाठकोंको विदित हो जायगा कि ज्योतिष और उच्च गणित शास्त्रमें इनका कितना प्रयोग होता है। इसीलिए यहाँ इनका सविस्तार वर्णन कर देना उचित समझा गया।

### किसी कोणकी त्रिकोणमितीय निष्पत्तियोंका जानना

किसी कोणकी त्रिकोणमितीय निष्पत्ति जाननेकेलिए एक समकोण त्रिभुज ऐसा खींचना होता है जिसका एक न्यूनकोण उस कोणके बराबर हो जिसकी निष्पत्तियां जानना है। फिर त्रिभुजके तीन भुजोंकेद्वारा उस कोणकी अथवा उसके पूरककोणकी निष्पत्तियां नापकर जानी जा सकती हैं। मान लीजिए ६०° अंशवाले कोणकी कोटिज्या जानना है। एक समकोण त्रिभुज क ख ग ऐसा खींचिए जिसका कोण ख क ग ६०° अंशके बराबर हो। ख क ग कोणके बगलका भुज क ख और कर्ण क ग नाप लीजिए। क ख भुजकी लम्बाईको 'क ग' की लम्बाईसे भाग देनेपर जो लब्धि आवे वही ६० अंश वाले कोणकी कोटिज्या होगी। दिये हुए

चित्र नं० ४

* यदि एक परिमाणको दूसरे परिमाणसे जो एक ही इकाईमें नापे गये हों भाग दें तो भजन फलको उन दोनों परिमाणों की निष्पत्ति कहते हैं।
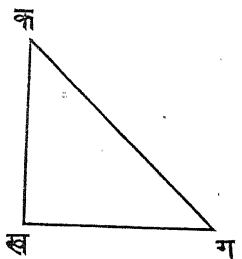
त्रिभुजके भुजोंको नापकर यह जाना जा सकता है कि ६०° अंशकी कोटिज्या $\frac{१}{२}$ होती है, क्योंकि कख की लम्बाई कग की आधी है। कई छोटे बड़े समकोण त्रिभुज ऐसे खींचिये कि प्रत्येकका एक कोण ६०° अंशके बराबर हो। इन सब त्रिभुजोंके द्वारा ६०° (६० अंशकी जो कोटिज्या निकलेगी उसका मान भी $\frac{१}{२}$ ही होगा। इससे यह विदित होता है कि किसी कोणकी कोटिज्या कोणके बनानेवाले भुजोंकी लम्बाईके घटने बढ़नेसे घटती बढ़ती नहीं है वरन् उसका मान सदैव एकसा रहता है। यही दशा और निष्पत्तियोंकी भी है अर्थात् इनका मान कोणके मानानुसार घटता बढ़ता है, परन्तु कोणके बनानेवाले भुजोंके मानानुसार नहीं। इन्हीं सब बातोंसे यह सिद्ध होता है कि त्रिकोणमितीय निष्पत्तियां स्थिर होती हैं।

कोणोंके नापने की इकाइयां—ज्योतिष शास्त्र अथवा उच्चगणित शास्त्रमें कोणों और उनकी निष्पत्तियोंका बहुत काम पड़ता है, इसलिए यहां यह बतलाना आवश्यक है कि कोणके नापने की इकाइयां कौन कौन सी हैं। पञ्चाङ्गोंमें अंश, कला विकला इत्यादिका प्रयोग होता है। यह भी कोणके नापने की इकाइयां हैं। इस समय विस्तार पूर्वक इन्हीं इकाइयों का वर्णन किया जायगा।

यदि कोई कागज़का टुकड़ा दो बार इस प्रकार मोड़ा जाय कि इससे जो चार कोण बनते हैं वह बराबर हों तो प्रत्येक कोणको समकोण कहते हैं। एक समकोणमें यदि बराबर बराबर नब्बे भाग किये जांय तो ऐसे प्रत्येक भागको अंश कहते हैं; और एक अंश के यदि ६० बराबर भाग किये जांय तो ऐसे प्रत्येक भागको कला और एक कलाके ६० बराबर भाग किये जांय तो प्रत्येक भागको विकला कहते हैं। ५ अंश, ३ कला २ विकलाको ५°३′ २″ लिखते हैं।

दूसरी इकाई जिससे कोण नापे जाते हैं बड़ी सहज है और इसमें कला, विकला इत्यादिका कोई झगड़ा नहीं है। यदि किसी परिधिमें उसकी त्रिज्याके (अर्द्ध व्यास) समान एक खंड कर लिया जाय और केन्द्रसे इस खंडके दोनों सिरे जोड़ दिये जांय तो परिधिके इस खंडके सामने केन्द्रपर एक कोण बन जाता है। इसी कोणको इकाई मानते हैं। इस इकाईका नाम त्रिज्याकोण है। मान लीजिए च छ ज किसी वृत्तकी परिधि है वृत्तका केन्द्र क और इसकी त्रिज्या क च, क छ के बराबर है। परिधिका एक खंड च छ उसकी त्रिज्याके बराबर है। इस खंडके सामने केन्द्र क पर जो कोण च क छ बना है इसीको त्रिज्याकोण कहते हैं।
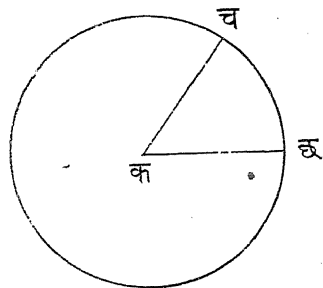
चित्र नं० ५

यदि किसी वृत्तको परिधिकी लम्बाईको उसीके व्यासकी लम्बाईसे भाग दिया जाय तो लब्धि ३·१४२ वा अधिक शुद्ध ३·१४१५६ आती है, अर्थात् परिधि व्यासका ३·१४१५६ गुना होती है। परतु व्यासका आधा त्रिज्या होती है इसलिए परिधि त्रिज्याका २×३·१४१५६ गुना होती है अर्थात परिधिमें त्रिज्याके समान २×३·१४१५६ भाग हो सकते हैं। यह सभी जानते हैं कि परिधिपर एक विन्दु (स्थान) से चलकर फिर उसी विन्दुपर आजाय तो एक चक्कर हो जाता है। यदि चौथाई चक्कर किया जाय तो केन्द्रपर एक समकोण बन जाता है, आधा चक्कर किया जाय तो दो समकोण बनते हैं, तीन-चौथाई चक्कर किया जाय तो तीन और चार-चौथाई वा पूर्ण चक्कर किया जाय तो चार

समकोण बनेंगे। इससे यह सिद्ध हुआ कि एक चक्रमें केन्द्रपर चार समकोण वा ३६०° का कोण बनता है अर्थात पूर्ण परिधिके सामने केन्द्रपर ३६०° का कोण बनता है। यह ऊपर सिद्ध किया गया है कि पूर्ण परिधिमें २× ३·१४१५९ खंड हो सकते हैं इसलिए केन्द्रपर २×३·१४१५९ त्रिज्या कोण भी बनते हैं। इस लिए ३६०°=२×३·१४१५९ त्रिज्या कोण। ३·१४१५९ बार बार लिखनेमें बड़ी असुविधा होती है, इसलिए इसके स्थानपर π यह चिन्ह प्रयोग किया जाता है जिसको पढ़ते हैं "पाई" अब यह कहा जा सकता है कि

$$३६०° = २π \text{ त्रिज्या कोण}$$

$$\text{और १ त्रिज्याकोण} = \frac{३६०°}{२π} = \frac{३६०}{२×३·१४१५९} = ५७°१७'$$

पहले सम्बन्धसे यह भी प्रकट होता है कि ९०° = $\frac{π}{२}$ त्रि० कोण = १ समकोण।

खगोलीय गोलोंकी दूरीका नापना—चित्र २ में यह दिखलाया गया है कि त तारेका परमदृग लम्बन $द_१ त क$ कोण है और $क द_१ त$ कोण समकोण है इसलिए $क त$ अर्थात भूकेन्द्रसे उस तारेकी दूरी समकोण त्रिभुज $त द_१ क$ के कर्णकी लम्बाईके बराबर है। तारेके लम्बनकी

$$\text{ज्या} = \text{'}द_१ \text{ त क' की ज्या} = \frac{\text{सामनेवाला भुज}}{\text{कर्ण}}$$

$$= \frac{द_१ क}{त क} = \frac{\text{पृथ्वीकी त्रिज्या}}{\text{भूकेन्द्रसे तारेकी दूरी,}}$$ अर्थात् $द_१ त क$ की

$$\text{ज्या} = \frac{\text{पृथ्वीकी त्रिज्या}}{\text{भूकेन्द्रसे तारेकी दूरी}}$$ इसलिए भू-केन्द्रसे तारे

$$\text{की दूरी} = \frac{\text{पृथ्वीकी त्रिज्या}}{द_१ \text{ त क की ज्या}}।$$

पृथ्वीकी त्रिज्या सब स्थानोंपर एक ही नहीं है। कई प्रकारकी युक्तियोंसे यह सिद्ध किया गया है कि भूकेन्द्रसे विषुवत् रेखाकी दूरी ३९६३·२९६ मील और ध्रुवोंकी दूरी ३९५०·७३८ मील हैं। यदि उपर्य्युक्त $द_१$ त क विषुवत् रेखा वाला परमदृग लम्बन है तो भूकेन्द्रसे तारेकी

$$\text{दूरी} = \frac{३९६३·२९६ \text{ मील}}{द_१ \text{ त क की ज्या}}।$$

यह कहा जा चुका है कि चन्द्रमाका लम्बन ५७ कलाके आसपास है और सबसे पासवाले ग्रहका लम्बन ४० विकलासे अधिक नहीं होता, इससे यह मालूम हुआ कि खगोलीय गोलोंका लम्बन १° से सदैव कम होता है। यह सिद्ध किया जा सकता है कि एक अंशसे छोटे कोण की ज्या उस भिन्नके समान होती है जो उस कोणके मानको विकलामें लिखकर एक त्रिज्या-कोणके मानसे (जब यह भी विकलामें प्रकट किया जाता है) भाग देनेपर आती है। यह विदित है कि एक त्रिज्याकोणमें ५७° १७' ४५" होते हैं; इस लिए एक त्रिज्याकोण=२०६२६५ विकला। इसलिए भूकेन्द्रसे तारेकी दूरी

$$= \frac{३९६३·२९६ \text{ मील}}{\frac{द_१ \text{ त क}}{२०६२६५}} = \frac{३९६३·२९६ \text{ मील} × २०६२६५}{द_१ \text{ त क}}$$

जहां द१ त क कोण का मान विकलामें समझना चाहिए। यही सम्बन्ध खगोलीय गोलोंकी दूरी निकालनेका 'गुरु' कहा जा सकता है क्योंकि इसीमें द१ त क कोण के स्थानमें किसी तारे वा ग्रहका विषुवतरेखावाले लम्बनका मान विकला-में लिखकर उसकी दूरी जानी जा सकती है। जैसा नीचे के उदाहरणोंसे प्रकट होगाः—

चन्द्रमा की दूरी—चन्द्रमाका विषुवत रेखा वाला औसत लम्बन ५७'२.५" अथवा ३४२२·५" है इसलिए गुरुसे द१ तक का मान ३४२२·५" रखना होगा। अर्थात चन्द्रमा की दूरी

$$= \frac{३९६३·२९६ × २०६२६५}{३४२२·५} \text{ मील}$$

$$= \frac{८१७४८९२४९·४४}{३४२२·५} \text{ मील}$$

=२३८८५७ मील

सूर्य्यकी दूरी—सूर्य्यका विषुवत् रेखा वाला लम्बन ८·८ बिकला है, इस लिए

सूर्य्य कीदूरी= $\frac{३९६३ २९६×२०६२६५}{८·८}$ मील

= $\frac{८१७४८९२४९·४४}{८·८}$ =९२८९०००० मील

## पौधे क्या और कैसे खाते हैं

[ले० बद्रीनरायण जोषी]

कई शताब्दियोंसे वैज्ञानिक समाज इस खोजमें लगा हुआ है कि संसार कितने तत्वोंसे ( Elements ) बना है। आजतक जितने तत्व पृथ्वी, वायु और पर्वत श्रेणीमेंसे खोज निकाले हैं उनकी संख्या ७५ से ८० के लगभग है। परन्तु यह सुनकर आपको आश्चर्य होगा कि इनमेंसे केवल १५ तत्वही पौधे तथा जीवोंके शरीरोंमें पाये जाते हैं, और इनमेंसे भी पौधेके उगनेमें केवल नीचे लिखे दशही तत्वोंकी अत्यन्त आवश्यकता है। कोयला (carbon), ओषजन (oxygen), अभिद्रवजन (hydrogen), नत्रजन ( nitrogen ), गन्धक ( sulphur ), पोटासियम (potassium), फोसफोरस (phosphorous), कालसियम (calcium), मेगनेसियम ( magnesium ), और लोहा ( iron ).

पौधोंके भोजन प्राप्त करनेकेलिए प्रकृतिने दोही मूलस्थान बनाये हैं। एक पृथिवी, दूसरा वायु। बीज जब पृथिवीमें डाला जाता है उस समय जल, वायु और उष्णताको प्राप्त होते ही उसके मध्यमें स्थित अपने सूक्ष्म शरीरसे जिसे ( Embryo ) कहते हैं, दो शाखा प्रकट होती हैं। एक पृथिवीतलमें जाती है उसे ( Radical ) रेडिकल कहते हैं, और यही शाखा शनैः शनैः बढ़ते बढ़ते जड़ोंके रूपमें परिणत हो जाती है। यहां पर यह ध्यान रखना चाहिये कि इन जड़ोंमें अगणित रोमावली ऐसी प्रकट होती है कि जिनकेद्वारा वह पौधा भूमिमेंसे जल आदि भोज्य पदार्थोंको ग्रहण करता है, जिसका वर्णन आगे खोलकर लिखा है। अच्छा, अब बीजकी जो दूसरी शाखा प्रकट होती है वह पृथिवीके भीतर न जाकर पृथिवीके बाहिर निकल आती है जिसमेंसे प्रथम केवल दो पत्र प्रकट होते हैं और किसी किसीमें एक भी होता है इस शाखाको (plumule) पल्युम्युल कहते हैं। अब हमको बिचारना है कि पौधेको बीज रूपसे इस प्रकार अंकुररूप प्राप्त करनेमें कहांसे भोजन मिला तो उत्तर यह है कि जल, वायु तथा उष्णताका संसर्ग होते ही जब उसमें विकास होने लगता है तब वे दोनों सूक्ष्म अंकुररूप शाखायें अपने बीजमें सूक्ष्मरूपसे पूर्व संचित भोजनको प्राप्त करती हैं जिसे हम एंडासपर्म (Endosperm) कहते हैं। और उसी भोजनसे बढ़कर एक शाखा पृथिवीतलमें तथा दूसरी शाखा पृथिवीसे बाहिर आकाशकी ओर हवामें फैलती है। तदनन्तर जड़ें तो अपनी रोमावलीद्वारा भूमिस्थ भोजनको और पत्ते आकाशस्थ वायु रूप भोजनको प्राप्त करते हैं अन्तमें बड़े पौधोंके रूपमें परिणत हो जाते हैं।

अब आपको यह आकांक्षा होगी कि जड़ें रोमावलीद्वारा पृथिवीसे और पत्ते वायुसे पौधेकेलिये कौन कौनसा भोजन लेते हैं, तो सुनिये। पौधे जड़ोंकी रोमावली द्वारा पृथिवीसे जल (Hydrogen and Oxygen), पोटेसियम ( In the form of Potash ) फोसफोरस ( In the form of Phosphate), नत्रजन (Nitrogen in the form of Nitrate) लोहा (Iron) गन्धक (Sulphur), कालसियय (Calcium), मेगनेसियम ( Magnesium ) और एल्युमिनियम ( Aluminum ) लेते हैं और येही अत्यन्त आवश्यक

भी हैं। इनके अतिरिक्त पौधे मेंगनीस (Manganese), सोडियम (Sodium), सिलिकान (Silicon), और क्लोरिन (Chlorine) इनका भी सूक्ष्म अंशसे उपयोग करते रहते हैं।

पौधेकी रचना (composition of plants) किन किन तत्वोंसे होती है और वे तत्व पौधोंको कहां कहांसे मिलते हैं।

| तत्वोंके नाम | फी सैकड़ा | कहांसे मिलते हैं |
|---|---|---|
| कोयला (Carbon) ... ... ... | ४५·० | वायु (air) से |
| ओषजन (Oxygen) ... ... .. | ४२·० | वायु और जलसे (air and water) |
| अभिद्रवजन (Hydrogen) ... ... ... | ६·५ | जल (water) से |
| नत्रजन (Nitrogen) ... ... ... | १·५ | पृथ्वी, वायु व बनस्पत्यणु (Bacteria) से |
| राख व धातुओंके मिश्रित पदार्थ (Ash or mineral compounds, | ५·० | पृथ्वी (Soil) से |

यदि हम बहुतसे पौधोंको लेकर जलावें और उनकी राख तथा गैसोंका, जोकि उनसे निकलते हैं, रासायनिक विश्लेषण करें तो पौधोंमें तत्व फी सैकड़ा नीचे लिखे परिमाण पाये जाते हैं।

इसको देखनेसे यह प्रतीत होता है कि पौधोंको भोजन वायु और जलसे मिलता है पृथिवीसे केवल थोड़ासा ही भोजन मिलता है।

<u>कोयला</u> carbon (जोकि सबसे अधिक पौधोंका भोजन गिना जाता है, पौधोंको हवासे पत्तोंद्वारा मिलता है) यदि एक दियासलाई जलाकर देखें तो जला हुआ भाग काला मालूम होगा (यह काला भाग ही कार्बन है) पौधेके प्रत्येक भागमें यह पाया जाता है। केवल पौधेके पत्ते ही इसको हवासे लेसकते हैं यह जड़ोंके द्वारा एक अणुमात्र भी पौधेको नहीं मिलसकता। पत्ते ही, हरेरंग और सूर्यके प्रकाशकी सहायताद्वारा हवाके* कार्बन-डाई-आक्साइड (carbon-dioxide) से कार्बन लेकर पौधेकेलिये मांड (starch) और खांड (sugar) बनानेका काम करते हैं। बिना पत्तोंके और कार्बनके संसारमें आप लोग कदाचित् खांडको किसी स्वरूपमें भी नहीं पाते। कार्बन और हरे रंगके संयोगसे मांड व खांड बनानेके रासायनिक परिवर्तनकेलिये सूर्यका प्रकाश तो एक शक्ति है और पत्तोंका हरारंग एक यंत्र (machine) है जिनका सम्मिलन ही इस कार्यको संपादन करता है। पृथ्वीका भोजन जड़ोंद्वारा पौधेके कुल शरीरमें पहुंचता है। पौधा इस भोजनको जलमें घुला हुआ होनेसे ही काममें लासकता है। क्योंकि जड़ोंकी रोमावली (Root-hairs) इस भोजनको जलमें घुलनेके पीछे ही पृथ्वीसे लेकर पौधेके शरीरमें पहुंचाती है, यह जड़ोंकी रोमावली छोटी, पतली, बारीक और नाजुक होती है। हम इसको जड़की शाखायें भी कहसकते हैं। यही पौधेकी पृथ्वीस्थ भोजनके खानेकी इन्द्रिय है। यह इतनी छोटी होती हैं कि एक इंचके स्थानमें ३८२०० तक पायी जाती हैं। पृथ्वीसे भोजन लेकर पौधेके शरीरमें पहुंचानेकेलिये इस रोमावलीकी उपस्थिति नितान्त आवश्यक

* पत्तोंमें कार्बन-डी-आक्साइडके रासायनिक शक्तिद्वारा दो विभाग होते हैं और यह कार्य सूर्यके प्रकाशमें हरेरंग (chlorophyl) के प्रभावसे होता है। उन दो विभागोंमेंसे एक ओषजन जो पत्तोंसे निकल कर प्राणिमात्रके जीवनका आधार बनता है और दुसरा कार्बन जो अन्य पदार्थोंसे मिलकर पौधेके लिये मांड व खांड बनाता है।

है। इसके बिना पौधा पृथ्वीसे भोजन नहीं लेसकता, और न मुख्य भद्दी व मोटी जड़ ही, जिससे आप परिचित हो होंगे, स्वयं पृथ्वीसे भोजन लेसकती है, किन्तु इसी रोमावलीकेद्वारा पृथ्वीसे प्राप्त भोजनको पौधेके शरीरमें पहुंचानेका काम करती हैं। यह रोमावली जड़ोंके आदि व अन्तस्थानसे कुछ दूर अर्थात् जड़ोंके मध्यभागमें उगती हैं और उसके द्वारा यह प्रतीत होता है कि पौधा खानेका काम उगनेके स्थानसे कुछ नीचे दूरीपर करता है इस कारण जब खाद व रासायनिक उपज बढ़ाने वाले पदार्थ (Manures and Fertilizers) पौधेंको देना हो तो भोजनेन्द्रियके समीप देना चाहिये न कि पृथ्वीसे मिले हुए धड़ या शाखाके पास। इस कारण ही खेतमें खाद आदिमें डालनेके पीछे हल आदि चलाया जाता है।

रोमावली औसमोसिस (Osmosis) के नियमानुसार पृथ्वीसे अपना भोज्य पदार्थ लेती हैं। औसमोसिस—यदि दो द्रव पदार्थ (जो मिलाने पर मिलसकते हैं) पोरस मेम्ब्रेन मसामदार झिल्ली द्वारा पृथक् किये हुए हैं तो दोनों द्रव पोरस मेम्ब्रेनमें होकर एक दूसरेसे मिलकर एकसा (uniform) मिश्रित पदार्थ बनादेते हैं—इस प्रकारका मिलना जिसमें दोनों पदार्थोंका संपर्क साक्षात् रूपसे (direct) नहीं होता हो किन्तु पोरस मेम्ब्रेनद्वारा होता हो, और दोनों द्रवोंके मिलनेकी परिमिति जुदा जुदा हो तथा घनता (density) के कारण भी परिमिति पृथक् पृथक् हो तो उसको ओसमोसिस कहते हैं। कितनीही सूक्ष्मदृष्टिसे परीक्षा करनेपर भी जड़ोंकी रोमावलीमें छेद नहीं पाये जाते इस कारण रोमावली द्वारा ठोस (solid) पदार्थका एक कणभी पौधेके शरीरमें नहीं पहुंचसकता किन्तु रोमावलीद्वारा जलमें घुला हुआ भोजन ही जड़ोमें और जड़ोमेंसे पौधेके शरीरमें पहुंचता है इसी नियमको औसमोसिस कहते हैं। नीचे लिखी परीक्षा द्वारा यह नियम (Osmosis) सरलतासे समझमें आसकता है। पीतलके बर्तनको जलसे आधा भर कर उसमें मिट्टीका गमला (Flower pot) रखदेवें और उस गमलेमें कुछ खांडका शर्बत भर देवें और यह निश्चय करें कि पीतलके बर्तनमें जलकी ऊपरकी सतह और गमलेके शर्बतकी ऊपरकी सतह दोनों बराबर हैं या नहीं अर्थात् एक लेवल (Level) में है या नहीं यदि नहीं हो तो बराबर करलेवें फिर १० या १२ घंटेतक उसे पड़ा रक्खें और समय समय पर उसको देखते रहें अन्तमें मालूम पड़ेगा कि गमलेमें शर्बतकी सतह (surface) जलकी सतहसे बढ़ती जाती है और पीतलके बर्तनमें जल और डालनेसे गमलेमें शर्बतकी सतह लगातार बढ़ती ही रहेगी इस बढ़नेका कारण पीतलके बर्तनसे गमलेमें जलका आनाही होता है क्योंकि मिट्टीके गमलेके मसामदार होनेसे बाहरका जल सरलतासे उसमें चलाजाता है और गमलेका शर्बतभी जलमें आजाता है पर दोनोंके आवागमनके परिमाण पृथक् पृथक् हैं अर्थात् जल ज़्यादा परिमाणमें चढ़ता है और शर्बत कम प्रमाणसे नीचे जलमें जाता है। इसी प्रकार दोनों द्रव पदार्थोंका मिलन उनकी घनता (Density) पृथक् पृथक् होनेसेभी बदल जाता है। इसी नियम (osmosis) के प्रभावसे जड़ोंकी रोमावली भी पृथ्वीसे जल, रस आदि द्रव लेती है रोमावली द्वारा भी द्रव निकलता है पर दोनों द्रवोंकी आपेक्षिक घनत्वोंमें अधिक अन्तर होनेके कारण उनमेंसे बहुतकम या कभी कभी नहीं भी निकलता है

### रसकी धारायें

प्रतिदिन भोजन इकट्ठा करना ही बढ़े हुए पौधोंका मुख्य कार्य है। इस भोजनको इधरसे उधर अर्थात् जड़ोंसे शाखा तथा पत्तोंमें पहुंचाना और पत्तोंसे तमाम शरीर तथा जड़ोंमें पहुंचानेका कार्य दो धाराओंद्वारा होता है एक जो नीचेसे

ऊपरको जाती है वह रोमावलीद्वारा प्राप्त भोजनको शाखा तथा पत्तोंमें पहुंचाती हैं और दूसरी जो ऊपरसे नीचेको आती है वह धारा पत्तोंमें पकाये हुए भोजनको पौधेके कुल शरीरमें तथा जड़ोंतक पहुंचाती है। रोमावली द्वारा पृथ्वीसे प्राप्त रस (sap) पतला (dilute) होता है और जबतक पत्तोंमें पहुंचाया जाकर पकाया नहीं जावे तबतक पौधा उसे भोजनके काममें नहीं लासकता। इस रसमें खनिज (minerals) और नाइट्रेट्स (Nitrates) घुले रहते हैं ये वहां पत्तोंमें जाकर कार्बनके संयोगसे मांड अथवा मांडसे खांडमें परिणत हो जाते हैं और अधिक जल पत्तोंसे हवामें उड़जाता है। जब गरमीके कारण पृथ्वीसे पौधोंको परिपूर्ण जल नहीं मिलता तब प्रकृति देवी स्वयंही उनकी रक्षार्थ उनके पत्ते सिकुड़ा देती है जिससे कि पत्तोंका मुख बन्द हो जावे और उनकेद्वारा जलका हवामें उड़ना तबतककेलिये बन्द होजावे जबतक कि जड़ोंकी रोमावली फिर पृथ्वीके नीचेसे जल इकट्ठा न करलेवे। जलके बिना पौधा एक क्षणभरकेलिये भी नहीं जी सकता क्योंकि जलके ही कारण पृथ्वीके पदार्थ पौधेमें पहुंचाये जाते हैं पत्तोंमें (पृथ्वीसे प्राप्त पदार्थोंके) पकाये जानेके लिये और उस पक्व भोजनको कुल शरीरमें पहुंचानेकेलिये भी जलकी उपस्थिति नितान्त आवश्यक है। जड़से ऊपरको जानेवाली रसधारा (sap current) धड़के गूदेदार (woody) भागमें होकर पौधेके कुलस्थानोंमें पहुंचती है और पत्तोंसे नीचे आनेवाली रसकी धारा धड़के छिलके में होकर नीचे आती है।

### पौधे अपना खाद्यपदार्थ कैसे उपयोगमें लाते हैं।

प्रारम्भिक अवस्थामें सभी पौधे एकही जीवैक (cell) के बने होते हैं परन्तु तत्पश्चात् धीरे धीरे असंख्य जीवैक बनकर शरीरको स्थूल व दृढ़ बना देते हैं। जीवैक एक घिरीहुई गोल कुप्पीके समान वस्तु है इसमें रस व अन्यपदार्थ, जो उसके बृद्धिके कारणभूत है, भरे रहते हैं। जीवैककी दीवार कोयलेके एक रासायनिक मिश्रित पदार्थ (cellulose) की बनी रहती है। नवीन प्रादुर्भूत जीवैककी दीवार, अंकुर रूप हरे रंगके छोटे पौधेके समान, पतली व नाजुक होती है। पर ज्योंही उसको भोजन मिलने लगा त्योंही वह कड़ी व गूदेदार बनकर मनुष्य व जीवोंके खाने और पचनेके अयोग्य बनजाती है। हवा व पृथ्वीसे प्राप्त भोजनके उपयोगका भार इन्ही जीवैकोंपर है। पौधेके तन्तु (tissue) मिश्रितपदार्थ और फलोंके बनानेका भार भी इन्हींपर है। प्रत्येक जीवित व कार्य करने वाली जीवैकमें जीवाद्यम (protoplasm)—जो जीवैकके जीवनका मूल कारण है—रहता है। पृथ्वीके घुलेहुए पदार्थ—जिनको हम पौधोंका भोजन कहते हैं—जब जीवैकोंकी बनी हुई नालियोंद्वारा पत्तोंमें पहुंचाये जाते हैं तब उनकी भेट स्टार्च ग्रेन्स (starchgrains) व कार्बोनिक—एसिड (carbonicacid) से होती है। यहांपर ये जुदे जुदे मिश्रित पदार्थ उष्णता, सूर्यका प्रकाश, जीवाद्यम तथा हरेरंगके प्रभावसे पृथक् पृथक् अंशोंमें विभाजित किये जाकर रासायनिक क्रियाद्वारा इनकी प्रथम मांड (starch) बनती है। मांडसे खांड बनती है फिर यातो स्वयं मांड या मांडसे बना कोई अन्य पदार्थ, किसी रासायनिक प्रकारसे नाइट्रेटस (nitrates) व गंधक (sulphur) से मिलकर, प्रोटीन (protein) बना देता है। इस अवस्थामें आनेपर पौधे अपने खाद्य पदार्थोंको उपयोगमें लासकते हैं।

### पौधोंकी उन्नति व अच्छी स्थितिका परिणाम

पौधेके शरीरमें रसायनिक परिवर्तनके होनेके पहिले जितने तत्व वायु, पृथ्वी व पर्वत श्रेणी पाये जाते हैं वे मनुष्य तथा जीवोंके कार्य सम्पादनमें नितान्त असमर्थ हैं। पृथक् २ अवस्थामें ये तत्व न खानेके, न पहरनेके और

न अन्यकिसी कामके ही हो सकते हैं। पर ज्योंही ये पौधेके शरीरमें पहुंचते हैं त्योंही रसायनिक परिवर्तनद्वारा ये स्वयं या तो मांड अथवा मांडसे खांड व अन्य पदार्थ बनकर पौधेके उपयोगमें आनेसे उसको शीघ्रही फल फूल देने लायक बना देते हैं जिससे प्राणीमात्र-को भोजन, वसन व आवश्यकीय वस्तुएँ मिलती रहती हैं। इस कारण मनुष्योंको ऐसे उपाय सोचने चाहियें कि किसी प्रकार ये तत्व पौधेके शरीरमें पहुंचकर सृष्टि मात्रका उपकार करें, और यह उपकार जबतक कृषि विद्याकी ओर सर्वसाधारण प्रजाका ध्यान आकर्षित नहीं किया जावेगा तबतक एक प्रकारसे अस-म्भवही है। भारत जैसे कृषिप्रधान देशमें वैज्ञानिक विधिसे कृषि करनेका प्रचार यदि समस्त कृषकोंको बताया जावे अथवा इस प्रका-रकी शिक्षा प्रत्येक प्रान्तमें मिडिलस्कूल व हाईस्कूलोंकी तरह दीजावे और उसके लिये यदि सरकार(गवर्नमेन्ट)से प्रार्थना करके प्रत्येक प्रान्तमें ऐसी शिक्षाका प्रबन्ध कार्यरूपमें परि-णत कियाजावे तो आशा है कि भारतवर्षके एक मुख्य अंगका सुधार हो सकता है।

---

## मुर्चा लगनेके कारण और उनसे बचनेके उपाय।

[ ले० महाबीर प्रसाद बी. एस-सी. एल् टी. ]

यह साधारण नियम है कि किसी कष्टसे बचनेकेलिए उस कष्टके निदानको (कारणको) ढूँढ़ना पड़ता है, इसलिए मुर्चासे बचनेके उपायोंको जाननेके पहले उसके निदानपर विचार करना आवश्यक है। अब प्रश्न यह रहा कि मुर्चा (ज़ंग) कब लगता है और उस समयकी परि-स्थिति क्या होती है। लोहेकी बनी हुई घरेलू वस्तुओंको देखनेसे यह मालूम होता है कि बर्षाकालमें यह मुर्चा लगनेसे बिगड़ जाया करती हैं। अन्य ऋतुओंमें ऐसा कम होता है। वर्षाऋतुमें हवाके साथ साथ जल-वाष्प-की अधिकता होती है क्योंकि कपड़े जल्दी नहीं सूखते और सूखे कपड़े भी गीले गीले प्रतीत होते हैं। इन सब बातोंसे यह मालूम होता है कि मुर्चा लगनेका कारण कदाचित जल वाष्प है क्योंकि हवा तो और ऋतुओंमें भी रहती है परंन्तु उससे कुछ विकार नहीं होने पाता। यदि जल वाष्पके कारण मुर्चा लगता है तो जलसे भी मुर्चा लगना सम्भव है, किन्तु किसी लोहेकी वस्तुको जलमें डुबो देनेसे उतना मुर्चा नहीं लगता जितना गीली लोहेकी वस्तुको हवामें रख देनेसे। इससे यह प्रकट होता है कि मुर्चा लगनेके हवा और जल वा जल-वाष्प दोनों ही कारण हैं। प्रयोगोंद्वारा भी जांच करके यह देखना है कि इसका कारण केवल जल है वा केवल हवा वा जल और हवा दोनों।
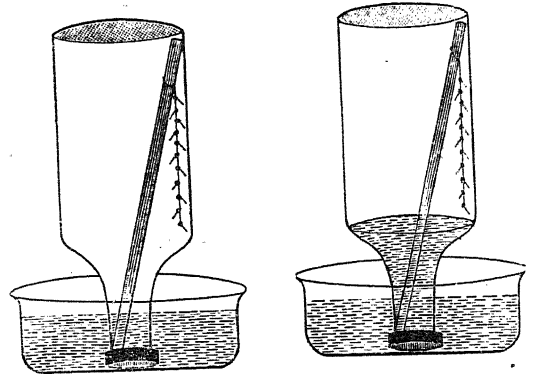
पहला रूप

८, १० दिन के बाद के रूप

यह जांच करनेकेलिए कि मुर्चेका कारण केवल जल है, ऐसा जल लेना होगा जिसमें हवा न घुली हो क्योंकि साधारण जलमें तो कुछ न कुछ हवा अवश्य घुली रहती है और इसी घु लित हवाकेद्वारा जल-जन्तु जलके अन्दर भी

एक विशेष अंगसे सांस ले सकते हैं। जलको वायु रहित करनेकेलिए सहज रीति यह है कि वह उबाल डाला जाय। इसलिए एक रंगहीन कांचकी छोटी शीशीमें लोहेकी छोटी छोटी कीलें खूब साफ़ करके कोई ८ वा १० छोड़ दीजिए और शीशीमें इतना जल छोड़िए कि कीलोंके ऊपर एक वा डेढ़ इंच जल हो जाय। अब इसके जलको उबाल डालनेसे जलकी सारी हवा निकल जायगी। कुछ देरतक उबालनेके बाद शीशीको हटा लेना चाहिए और थोड़ासा मोम छोड़ देना चाहिए जिससे पानीके ठंढा होनेपर भी हवाकी घुसनेका अवसर नहीं मिलेगा क्योंकि मोम पिघलकर पानी-तलपर चारों ओर फैल जायगा और हवाके जानेका मार्ग बन्द हो जायगा। चाहे जितने दिनोंतक यह शीशी रक्खी रहे कीलोंमें मुरचा कदापि न लगेगा।

इससे यह सिद्ध होता है कि केवल जलसे मुर्चा नहीं लगता. शीशीका पानी उबालनेकेलिए शीशीको ही आगमें रख देनेसे वह टूट जायगी इसलिए उसको जल-यन्त्रमें गरम करना उचित होगा अर्थात् किसी ऊंची कटोरीमें आधा पानी भरकर उसको आगपर रख दीजिए और उसीमें शीशी भी रख दीजिए। पानी इतना रहे कि कटोरीका पानी उबलनेपर भी शीशी डूब न जाय। पानीकी गरमीसे शीशी गरम होगी। इससे शीशीके टूटनेका भय नहीं रहता।

यह जाँच करनेकेलिए कि केवल वायुसे भी मुर्चा नहीं लगता, कोई प्रयोग करनेकी आवश्यकता नहीं क्योंकि यह अनुभवसे सिद्ध है कि सूखी हवामें मुर्चा नहीं लगता।

इन प्रयोगोंसे सिद्ध होता है कि मुर्चा लगनेका कारण केवल जल वा केवल वायु नहीं है। गीली वस्तुमें ही मुर्चा लगता है इससे यह कहना पड़ता है कि मुर्चा जल और वायु दोनोंकी उपस्थितिमें लगता है।

विज्ञानके पिछले अङ्कोंमें बतलाया गया है कि वायुमें दो प्रधान गैस होती हैं, एक नाइट्रोजन और दूसरी आक्सिजन। अब यह खोजना है कि इन दोनों गैसोंमें मुर्चा लगानेका काम दोनों करती हैं वा इनमेंसे कोई एक। इसकेलिए नीचेका प्रयोग करना होगा।

एक कटोरीमें एक इंच वा पौन इंच पानी भरकर एक रंगहीन लम्बी शीशी औंधा दीजिए जिसमें शीशीका मुंह पानीमें डूब जाय और शीशीके भीतरकी वायु चारों ओरसे घिर जाय अर्थात् बाहरी वायु और भीतरी वायुमें कोई सम्बन्ध न रह जाय। शीशी औंधानेके पहले एक पतले कांचके क़लम वा छतरीवाले लोहेकी कड़ी वा ऐसी ही कोई और पतली डंडीके द्वारा कुछ स्वच्छ पतली पतली लोहेकी कीलें तागेमें बांधकर और पानीमें भिगोकर शीशेमें लटका देनी चाहिए। औंधानेपर रूप दिये हुए चित्रकी भांति होगा। ( देखो पृष्ठ ८९ )

दोही चार दिनके बाद कीलोंमें मुर्चा दीखने लगेगा और पानी भी शीशीमें कुछ चढ़ा हुआ दीखेगा। एक सप्ताहतक इसी प्रकार रक्खा रहनेसे यह प्रकट हो जायगा कि पानीका चढ़ना रुक गया। अब चाहे जितने दिनोंतक यह शीशी ऐसी रक्खी रहे पानी आगे नहीं चढ़ेगा। कटोरीमें इतना पानी अवश्य रहना चाहिए जितनेसे शीशीका मुंह पानीमें डूबा रहे।

शीशीमें पानी उसी समय चढ़ेगा जब वहांकी वायु कहीं और जगह चली जाय। सिवाय लोहेमें मिलनेके, किसी मार्गसे वायु बाहर नहीं जा सकती इससे यह सिद्ध होता है कि वह वायु जहां पानी चढ़ गया है अवश्य लोहेमें मिलकर उसमें मुर्चा लगानेका कारण हुई है। यदि लोहेकी कीलें इतनी हों कि मुर्चा लगानेवाली

सारी वायु उनके ऊपरी तलोंपर मुर्चाके रूपमें परणित होजाय ते बची हुई वायुमें न तो कोई चीज़ जल सकेगी और न उसमें मुर्चा ही लगानेका गुण होगा। शीशीमें चढ़े हुए जलको नापनेसे यह जाना जा सकता है कि कुल शीशीका जितना आयतन है उसके पांचवे भागके बराबर चढ़े हुए जलका आयतन है। अर्थात् वायुमें पंचमांश मुर्चा लगानेवाली गैस है। इसीको आक्सिजन कहते हैं और इसीके कारण मुर्चा लगता है।

अच्छे कांटेके ( तारजूके )द्वारा सिद्ध किया जा सकता है कि मुर्चा लगनेके पहले कीलोंकी जो मात्रा थी मुर्चा लगनेपर उससे अधिक होजाती है। इसकी जांचकेलिए कुछ अधिक मात्रामें लोहेकी कीलोंको लेना होगा क्योंकि कम कीलोंको लेनेसे मात्रामें इतनी कम अधिकता होती है कि अन्तर नहीं मालूम होता।

जब यह मालूम हो गया कि मुर्चा लगनेके कारण आक्सिजन गैस और जल हैं तब मुर्चासे बचनेके उपायोंका ढूंढ निकालना कुछ कठिन नहीं है। जिन जिन बातोंसे जलवाष्प और आक्सिजन लोहेको एक साथ न स्पर्श कर सकें उन्हीं बातोंको करनेसे लोहा मुर्चाके रोगसे मुक्त रह सकता है। उनमेंसे कुछ यह हैं:—

१—लोहेकी चीज़ोंको खूब साफ़ करके तेलका लेपकर देनेसे मुर्चा नहीं लगता क्योंकि तेलको भेदकर जलवाष्प वा आक्सिजन लोहको स्पर्श नहीं कर सकता। इसमें अवगुण यह है कि यह बहुत जल्दी लोहेके तलसे बह जाता है और तब कुछ कुछ मुर्चा लगना आरम्भ हो जाता है। इसलिए जब किसी चीज़को बहुत दिनतक मुर्चेसे मुक्त रखना हो तब उस चीज़पर (२) वेसिलीनका लेप करना चाहिए। यह प्रायः सभी दवाई बेचनेवालोंके पास मिल जाती है। जिन चीज़ोंपर बार बार तेल वा वेसिलीन लगाना सम्भव नहीं और जिनको बर्षाके जल और वायुमें अरक्षित रखना पड़ता है उनपर जस्तेकी क़लई करदेते हैं। जस्तेकी क़लईके कारण हो छत्तोंको ढकनेवाली लोहेकी चद्दरों और हाता घेरनेवाले वा खबर भेजनेवाले लोहेके तारों वा बालटियों का रंग जस्तेके रंगसे मिलता जुलता है। क़लई करनेकलिए जस्तेको पिघलाकर लोहेको डोब दे देते हैं।

मिट्टीके तेल वाले कनस्टर भी लोहेकी पतली चद्दरोंके बनाये जाते हैं और उनपर रांगे (tin टिन) की क़लई की जाती है। टीनकी कलई होनेके कारण ही वह टीनके कनस्टर कहलाते हैं टीन शब्दसे यह न समझना चाहिए कि वह बिलकुल टीन(रांगेके) बने होते हैं वरन् यही कि लोहेपर टीनकी कलई है। यदि टीनके बने होते तो गरम करनेपर वह अवश्य टीनकी नाई गल भी जाते परन्तु ऐसा देखनेमें नहीं आता। हां, यह अवश्य होता है कि जहां कहीं कलई छूट जाती है वहां मुर्चा लग जाता है।

---

# काशमीरमें बहते हुए खेत

[ ले० मुकुटविहारीलाल दर ]

' पानीके ऊपर बहते हुए खेत '' सुना तो बहुतोंने होगा परन्तु उनको देखनेका अवसर बहुत कम सज्जनोंको प्राप्त हुआ होगा। काशमीर-में श्रीनगरके पास एक अच्छी बड़ी झील है उसका नाम है 'डल'। डलमें ऐसे खेत बहुत देखनेमें आते हैं। डलको छोड़कर इस तरह-के खेत और कहीं नहीं होते। डल कोई चार मील लम्बी और ढाई मील चौड़ी है। इसकी गहराई किसी जगह तीस फ़ीटसे अधिक नहीं है और कहीं कहीं तो इससे भी कम है इसके अंदर बड़ी बड़ी घास और नाना प्रकारके वनस्पतिकी आधिक्यता होनेपर भी पानी बहुत ही स्वच्छ और निर्मल है। इसका कारण यह है कि इसके अंदर बहुतसे स्रोत हैं जिनसे

शीतल जल बराबर निकला करता है इसके अतिरिक्त इसमें कई एक गर्म जलके स्रोत भी हैं।

डल अपने बहते हुए खेतों और निर्मल पानीकेलिए बड़ी दूर दूर प्रसिद्ध है। और जो यात्री काशमीर जाते हैं बिना डलका आनंद लिए और खेतोंके देखे नहीं रहते।

इन खेतोंको बनानेमें कोई विशेष कठिनता नहीं होती।

छोटी डोंगियोंपर (जिसको कि काशमीरमें 'शिकारा' कहते हैं) दो मनुष्य (या बहुधा एक मनुष्य) सवार होकर जिस स्थानपर घास अथवा वनस्पति अधिक है जाते हैं, प्रत्येक मनुष्य एक लम्बा बांस जिसका एक सिरा कुछ टेढ़ा होता है (—) लिए रहता है। इस बांसकी सहायतासे वे लोग नीचेकी घास इत्यादिको टेढ़े सिरेसे उमेठ कर ऊपर नावपर ले आते हैं। ऐसा करते करते जब नाव भर जाती है तो उसे किनारेपर कम पानीमें ले आते हैं और घास इत्यादिको नावमेंसे निकालकर आठ नौ इंच मट्टी उसपर डाल देते हैं। थोड़े दिनमें उसका एक फ़र्श सा बन जाता है. उसमें खीरा कद्दू इत्यादि बो देते हैं। इसमें कद्दू खीरा इत्यादि (अधिक जल चाहनेवाली तरकारियों) के सिवा और कुछ नहीं बोया जा सकता है। यह खेत एक स्थानसे दूसरे स्थान ले जाये जा सकते हैं। बोनेके पश्चात् जहाँ ले जाना हुआ एक मनुष्य एक शिकारे पर बैठकर खेतके एक सिरेको रस्सीसे बांध कर दूसरा सिरा अपने हाथमें रखकर पानीपर घसीटता ले जाता है और जहां ठहराना हुआ वहां चार लंबे बांस खूंटेकी तरह चार कोनोंपर गाड़ कर छोड़ देते हैं। इससे खेत बह नहीं सकते। यदि कोई बहुत बड़ा खेत हुआ तो उसको एक दो टुकड़ोंमें काट देते हैं। इसी तरह काट कर लोग बहुधा चोरी भी करते हैं। खेतोंकी चोरी पहले पहले वहीं सुननेमें आती है।

# वैज्ञानिकीय

## (१) मोमका व्यापार

मोम बड़ी बहुमूल्य वस्तु है, उसका पीला रंग उड़ाकर मोमके व्यापारी उसे ८०) मनतक बेच डालते हैं। बत्ती, खिलौने, फूल, फल, सांचे, ठप्पे तो बनते ही हैं, परन्तु वार्निश आदिमें भी मोम काममें आता है और शल्य चिकित्सामें भी इसका प्रयोग करते हैं। मोम और मधु दोनों वस्तुएं मक्खियोंसे मिलती हैं, और अमेरिका मदागास्कर आदिमें इसका रोज़गार बड़े ज़ोरोंसे होता है। भारतसे भी मोम जाता है। परन्तु सारे संसारकेलिए इतना मोम पर्य्याप्त नहीं होता। हालमें अफ्रिकाकी जंगली मक्खियोंसे लिया जाने लगा है। थोड़े ही दिनोंमें अफ्रिकाके प्रत्येक प्रदेशसे मोमका चलान होने लगा है। गम्बिया, स्वर्णकूल, नीगरिया, अंगुला, सूदान, उगन्दा, ब्रिटिश पूर्वीय अफ्रिका और मोज़म्बीक़से इसका अच्छा व्यापार हो रहा है। गत वर्ष इन स्थानोंसे मोमका चालान बीसों लाख मनतक पहुँच गया। अंगुलाकी रियासतकी आमदनीके तीसरे महत्त्वका उपाय मोमकी बिक्री है। मोमके भारतीय व्यापारी उसे साफ़ करके और रंग उड़ाकर नहीं बेचते। यदि रंग उड़ाकर बेंचें तो लाभ अधिक होनेकी संभावना है।

## (२) नीलकी खेती

नीलका व्यापार भारतवर्षका अत्यन्त प्राचीन व्यापार है। जिस समय सभ्य युरोप जंगली था, मिस्रसे भारतका व्यापार धूम से चल रहा था। भारत संसारके व्यापारका केन्द्र था। चीनका रेशम, मिट्टीके बरतन आदि भारतसे होकर मिस्र जाते थे। उस समय भी भारतसे सोना, चांदी, हीरे, जवाहिर, आबनूस, हाथी दांत, कामदार और जड़ाऊ माल, मसाले सुगन्धके द्रव्य, और नीलका व्यापार मिस्रसे

Miscellaneous फुटकर ]

होता था। नीलका व्यापार भारतमें कमसे कम, पांच हज़ार वर्षसे जारी है। जब इस देशमें अंग्रेज व्यापारी आये, उनमेंसे अनेकने नीलकी खेती और नीलका रोज़गार करना प्रारम्भ कर दिया। परन्तु भारतीय और अंग्रेज किसी भी निलहेने नीलकी पैदावार और तैय्यारीमें उन्नति नहीं की। सस्ता और चोखा माल निकालना ही व्यापारमें जीतका कारण होता है। उधर युरोपमें नक़ली नील बनानेके प्रयोग होने लगे अनेक असफलताओं और हानियोंको उठाकर अन्ततः जर्म्मनोंने कोलटारसे (डामरसे) नील बना ही डाला। यह नील इतना सस्ता बिकने लगा कि भारतीय नीलका चालान संसारके सभी बाज़ारोंमें बड़े वेगसे घटने लगा। संवत् १९५३ में पहले नकला नील विलायतमें रुपये सेरके भावसे बिकने लगा और भारतीय नीलकी मांग आधेसे भी कम होगयी, इसीलिए भारतमें उसकी खेती भी उसी परिमाणसे घट गयी। पहले २ लाख ६३ हज़ार मनके लगभग मांग थी, उसी साल १ लाख २६ हज़ार मन होगयी। १३ लाख एकड़की खेती थी। सो तुरन्त घटकर आठ लाख एकड़की रह गयी।

परन्तु नकली नीलमें रंगनेवाली वस्तु केवल पंचमांश होती थी। गुण यह था कि रंग टिकिया भर बराबर होता था। परन्तु भारतीय नीलकी टिकिया यद्यपि कड़ी होती थी, और रंग निकालनेमें कठिनाई अधिक थी, तथापि उससे रंग अच्छा निकलता था और भारतीय माल अधिक टिकाऊ था। यही बात थी कि ऐसी प्रतियोगितापर भी नीलकी खेती तत्काल ही निर्म्मूल नहीं हुई। परन्तु जर्म्मन लोग उसे निर्म्मूल करनेपर तुले हुए थे। उन्होंने अपना माल लागत पर ही बेचना जारी रक्खा जिसमें कुछ वर्षोंमें नीलकी खेती बन्द हो जाय। इधर नीलके गोदामवालोंने और सरकारने तनमन धन-से रक्षाके उपाय किये परन्तु सफलता न हुई। यहां और विलायत दोनों जगह प्रयोग और शोध-में सात आठ लाख रुपया बिगाड़ा, काम कुछ न हुआ। अन्तमें युद्धने नीलकी खेती को प्राणदान दिया। अब फिर भारतीय नीलसे बाज़ार भर रहा है। जर्म्मनीकी प्रतियोगितासे स्वाभाविक नीलकी दर विलायतमें ३॥) सेरतक गिर गयी थी। फ़रवरीमें १६) सेरके लगभग दर चढ़ गयी थी। आजकल अमेरिकामें भी खेती हो रही है, पर अबतक भारतका सा चोखा माल नहीं उतरता।

* * * *

(३) बैरोमीटरकी दुर्दशा

लिवरपूलके एक जजके दफ़्तरमें एक बैरो-मीटर (ऋतु सूचक वा वायु भारमापक यंत्र) था। वायुसे अधिक संलग्न रखनेकेलिए किसीने उसे जजकी खिड़कीके पास बरामदेमें लगा दिया आधी रातमें एक पुलीसवालेने उसे देखकर समझा कि किसीने बम रक्खा है। अपनी जानको हथेली पर रख उसने उसे उठाया और झटपट दौड़कर पानीके डोलमें डाल दिया! बैरोमीटर बेचारा वहीं ठंढा हो गया!

एक और बैरोमीटरकी ऐसी दशा एक बार हुई थी। एक विलायती गड़ेरियेसे किसीने ऋतुसूचक यंत्रकी प्रशंसा की और बताया कि इस यंत्रकी सुई घूमती है और बतलाती है कि पानी बरसेगा या खुला रहेगा या आंधी आयेगी। एक यंत्र रख लो तो तुम्हें चरनेके-लिए अपना गल्ला दूर भेजनेमें सुभीता रहेगा। गड़ेरियेने एक यंत्र रख लिया। जबतक ऋतु स्वच्छ थी, सुई स्वच्छ पर लगी हुई थी। परन्तु बैरोमीटर बिगड़ा हुआ था। सो ऋतु बदली और मूसलाधार पानी भी बरसने लगा पर सुई न घूमी। स्वच्छ ऋतु ही दिखलाती रही। दो एक दिन तो गड़ेरिया सहता रहा पर पानी बरसता गया और बैरोमीटर आसमान साफ़ ही बताता रहा तो गड़ेरिया क्रोधको रोक न

सका। अन्तको झुंझला कर उठा और यंत्रको पानीकी धारामें डालकर बोला "ले गंवार यंत्र अबतो तुझे विश्वास होगा कि आसमान साफ़ नहीं है !"

* * *

(४) लालटेनसे विज्ञापन

लालटेनसे चित्र दिखलाकर व्याख्यान देना हमारे देशमें अभी अनोखी सी बात है, परन्तु यह कम लोग जानते होंगे कि सभ्य देशोंमें व्यवसायी और व्यापारी लालटेनसे विज्ञापनका काम लेते हैं। जर्म्मन व्यापारियोंने सुना कि शांघाइमें (चीन) कपड़ोंका पुतलीघर वन जानेकी संभावना है। यंत्रोंके व्यवसायियोंने वहां सचित्र व्याख्यान दिलवाये और उनके यंत्रोंमें कितना कम व्ययसे कितना अधिक माल तैयार होगा इसका विश्वास करा दिया।

* * *

(५) सांपके काटेका इलाज

सांपके काटनेसे हर साल असंख्य मनुष्यों-के प्राण जाते हैं। अनेक औषधियां निकाली गयीं परन्तु आजतक कोई अव्यर्थ महौषधि मालूम नहीं हुई। Times of Cylon में यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि Mr. Caudley डाँडले नामक एक सज्जनने परीक्षासे यह सिद्ध किया है कि केलेका रस सांपके काटेको रामबाण है और तुरन्त ही लाभ पहुंचाता है। कई डाकटरोंके सामने इसकी जांच हुई है। ताज़े पकड़े हुए एक विषैले सांपके आगे एक कुत्ता छोड़ दिया गया। सांपने उसे कई जगह काटा कुत्ता पीड़ासे चिल्लाने लगा और शीघ्र ही अचेत होगया। उसके मुहंमें ताज़ा केलेका रस थोड़ा थोड़ा छोड़ा गया। पावसेरके लगभग रस जब उसके पेटमें पहुंचा धीरे धीरे कुत्ता सचेत हो चला और आधे घंटेमें उसे खड़े होनेकी ताक़त होगयी। इसके पीछे कोई बात ऐसी नहीं देख पड़ी जिससे समझा जाय कि कुत्तेके शरीरमें विष मौजूद है। इसी प्रकार डाँडले महाशयने कौएसे परीक्षा की और सफलता पायी। यह साधारण पदार्थ मनुष्यको भी इसी भांति लाभ पहुंचावेगी वा नहीं, इस बातकी परीक्षा भी होनी अवश्यक है।

* * *

(६) चायसे हानि

अमेरिकाके निउयार्क नगरके प्रसिद्ध डाक्टर John Briddle जानब्रिडिलने चायके विषय-में कुछ परीक्षाएं प्रकाशित की हैं। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि आधसेर चायसे १७ हज़ार खरगोश मर सकते हैं। आधसेर चायको तीनपाव पानीमें अच्छी तरह पकाकर उसकी १० बूंदसे ही एक मज़बूत खरगोश ठंढा होगया- साधारणतः एक आदमी सालमें दो सेर चाय पी जाता है। इस हिसाबसे वह नित्य जितनी चाय पीता है उतनी चायसे पौने दो सौ खरगोश मर सकते हैं। चाय पीनेसे थकान दूर होता है, परन्तु इसका कारण उसमें मादक द्रव्यका होना है। इस लिए उससे अपकार छोड़ उपकार नहीं होता। मादक द्रव्यसे न रक्तोत्पादन होता है न मस्तिक पुष्टि होती है। चायमें caffein केफ़ीन नामक पदार्थ विशेष होता है जो औषधिमें विषकी सी सूक्ष्म मात्रामें दिया जाता है। चायके अत्यधिक व्यवहारसे नाड़ी-दौर्बल्य, मंदाग्नि कोष्ठ वृद्धि आदि रोग हो जाते हैं। आदमी पीला पड़ जाता है। यह सब संभवतः इसी केफ़ीन-के कारण होना संभव है

* * *

( ७ ) रंगीन रुई उपजाना

पाठकोंने बरबंकके चमत्कार पढ़े ही हैं। दक्षिणी करोलिनाके ब्राउहम नामक कृषिबिशारद-

ने यह परीक्षा करके सिद्ध किया है कि पक्के रंगमें स्वभावसे हो रंगी हुई रूई खेतसे उपजायी जा सकती है। यह कम लोग जानते हैं कि रंगीन रुई भी उपजती हैं। हमारे देशमें भूरे रंगकी रुई भी होती है। तामड़े रंगकी रुई मिस्र पेरू और हवाईमें होती है। पीली रुई चीनमें, और गुलाबी पेरूमें होती है। ब्राउहमने यह सिद्ध किया है कि रंगीन रूईके बीज जहाँ कहीं बोये जायँ, उसी रंगकी रूई पैदा करेंगे। पहले यह समझा जाता था कि रंगका कारण भूमि है, परन्तु ब्राउहमने बीजको रंगका कारण दिखाया है। बोस्टनके लगर्क नामक वैज्ञानिकने ब्राउहमको सूचना दी है कि हमने नीली रूई भी उपजायी है। इस तरह श्वेत, लाल, भूरी, तामड़ी, पीली, नीली, हरी और काली रुईतक संसारमें मौजूद है। ब्राउहमके मतसे बीजोंमें परस्पर मेल करनेसे चाहे जिस रंगकी रूई पैदाकी जा सकती है। स्वाभाविक रंग पक्का होता है, और सफ़ेद रूईको रंगनेमें कपड़ेमें जो कमज़ोरी आ जाती है वह दोष स्वाभाविक रूईमें हो नहीं सकता। उधर जर्म्मनीने जो संसारके रंगमें भंग डाल दिया, यदि इसमें सफलता हो तो उसका प्रभाव कमसे कम रूई पर न पड़ेगा।

* * * *

### ( ८ ) आग बुझानेके उपाय

आग लग जानेपर मनुष्य इतना घबरा जाता है कि जल्दीमें उसके बुझानेकी रीतियोंपर ठीक विचार नहीं कर सकता। इसीलिए हर किसीको चाहिए कि आग लगने और बुझानेके सिद्धान्तको समझ ले।

( १ ) जलनेकी क्रिया इंधन और वायुके सहारे होती है। वायुके न होनेपर वा रुक जानेपर आगका बुझना आवश्यक है साथ ही आग भड़कानेकेलिए और जलती हुई रखनेकेलिए एक खास तेज़ीकी आंचका होना भी ज़रूरी है। अगर इस आंचको ठंढा करदे, आग या लौ बुझ जायगी।

इन दो सिद्धान्तोंपर आग बुझायी जाती है। इसलिए इन्हें ख़ूब समझ लेना चाहिए। आगको ढांककर वायु रोक देते हैं तो आग बुझ जाती है। या पानी आदिसे उसे ठंढा कर देते हैं। ठंडसे आग बुझ जाती है।

पत्थरके कोयलेको ढेरमें कभी कभी आपसे आप आग लग जाती है। इससे बचनेको ढेरके भीतर लोहेकी ढोलोंमें कार्बोनिक एसिड रखते हैं। आंचसे इस ढोलके मुँहका जोड़ खुल जाता है, और उसके भीतरसे भारी गैस निकलती है जो कोयलेको ढक लेती है। गैसमें कोई चीज़ जल नहीं सकती। सो, आग बुझ जाती है। परन्तु, एक दूसरी हिकमत है जिससे आग आत्महत्या कर लेती है। पत्थरके कोयलेके जलनेसे बहुतसी गैसें निकलती हैं। इसीलिए जहां इसके ढेर रक्खा करते हैं वहां ऊपर ऐसी नली लगा रखते हैं जिसमें गैस होकर नीचेकी नलियोंमें घूमे। वे नलियाँ ढेरके भीतरसे घूमती हुई कुँडलीकी नाई रहती हैं। ये गैसें भी भारी होती हैं और फैल कर कोयलेको ठंढा कर देती हैं और आग बुझ जाती है।

खलियानोंमें भी कभी कभी आपसे आप आग लग जाती है। कारखानोंमें जहां चीथड़े या नम बुरादे इकट्टे होते हैं, इसी तरह आग लग जाती है। ऐसी आग बुझानेकेलिए जो सुगम उपाय सबसे निकट हो उसे ही काममें लाना चाहिए। जहां पानीमें देर हो मिट्टी का ढेर बड़ी सफलता से काम दे देता है। यदि आग बढ़ी हुई न हो तो कम्मलसे चारों औरसे दबा देनेसे भी आग बुझ जाती है। आदमी के कपड़ेमें आग लग जाय तो भागनेसे भड़क उठती है। कम्मल आदि कुछ हो तो झट लपेट

कर वा योंही धरतीपर लोट पोट करने लगना चाहिए, जिससे आग ठंढी हो जाय और दब कर बुझ जाय और हवा लगने न पावे।

कालिफ़ोर्नियाकी एक घटनाने सिद्ध किया है कि ईंधनकी बहुतायतसे भी आग ठंढ़ी हो कर बुझ जाया करती है। रुईके गट्ठोंमें भी आपसे आप आग लगकर भीतर ही भीतर जला देती है, परन्तु इसका बुझना पानी से असंभव है क्योंकि गट्ठेमें दबी हुई रुई के भीतर पानी पहुंचता ही नहीं कालिफ़ोर्नियामें हालमें ही इस तरह आग लगी, परन्तु यह आग मिट्टीके तेलसे बुझायी गयी ! मिट्टीका तेल रूईमें झटपट फैलता है, सो गट्ठेपर मिट्टीका तेल उंडेल दिया गया। तेल बड़े वेगसे सारी रूईमेंपहुंच गया और आगको ठंढाकर दिया। बची हुई रूईको फैला कर सुखानेसे मिट्टीके तेलकी बास जाती रही।

जिन लोगोंने मिट्टीके तेलसे जलकर धोखा उठाया है उन्हें यह सुनकर अवश्य कुतूहल होगा कि मिट्टीकातेल आग बुझानेके काममें आया।

* * * *

(९) सीसेका कीड़ा

हाल हीमें अलवर्ट श्यूल्सने ( Mr. Albert Schules) एक ऐसे कीड़ेकी खोज की है जो काठके कीड़ेकी तरह सीसेको खाजाता है।

आकारमें यह कीड़ा छोटे काले गुबरीला-के सदृश होता है लगभग एक चैाथाई इंचके सख़ परोंसे इसका बदन परिछिन्न रहता है। इसके सिरके अग्रभागमें दे। खनित्र ( Scoops ) होते हैं जिन्हें यह सूराख छेदनेके काममें लाता है।

कहते हैं कि खटमलसा कीड़ा सीसेसे मुड़े हुये टेलीफोन ( telephone ) के तारोंपर उतर उसमें गोलाकार बारीक सूराख कर डालता है। इसके सूराख करनेके हेतुको अभीतक कोई जान नहीं सका है। यद्यपि सीसा इसके प्राणका घातक नहीं होता तौ भी यह उससे कोई पुष्टकारी वस्तुको प्राप्त नहीं कर सकता।

इस कीड़ेके बाबत बहुत देशोंमें चर्चा हो रही है। चायके सीसेके डिब्बोंमें इनकी बहुत संख्या मिलनेसे संदेह किया जाता है कि परमात्माने इसे पूर्वीय देशोंमें ही पैदा किया था और यहींसे यह संसारके और भागोंमें जा बसे हैं। इन कीड़ोंवाले सीसेके पत्रोंको और पत्रोंसे अलग रखने ही से नये पत्रोंकी रक्षा हो सकती है।

* * * *

(१०) पानीमें आग लगाना।

पानीमें आग कई प्रकारसे लगाई जा सकती है, अर्थात् पानीके भीतर आग कई रीतियोंसे पैदा कर सकते हैं। उनमेंसे दे। रीतियाँ यहाँ दी जाती हैं।

(१) फोस्फोरसके कई टुकड़े पानीमें डाल दे।, और थोड़ासा गरम पानी उसमें मिलाकर आक्सिजन गैसकी धारा फोस्फोरसके टुकड़ोंके पाससे बहने दे। जब आक्सिजन फोस्फोरससे मिलैगी, तो फोस्फोरस जलने लगैगा--जब तक आक्सीजन फोस्फोरसके ऊपरसे बहती रहैगी वह भी जलता रहैगा। (२) पोटास क्लोरेट और फोसफोरसके कुछ टुकड़े एक चीनीके प्यालेमें पानीके अन्दर रखदो, और गाढ़ा गंधकाम्ल किसी कांचकी नलिकाकी सहायतासे प्यालीके पेंदे में छोड़दो गंधकाम्ल और पोटासके संयोगसे एक गैस बनैगी जो फास्फोरसको जला देगी।

* * * *

(११) आगका फव्वारा

एक चीनीके प्यालेमें जस्तेका बुरादा और फोस्फोरसके कुछ टुकड़े रख दो। तदनन्तर गंधकका तेज़ाब आहिस्तेसे उसमें डाल दो। जस्ते, और गंधकाम्लके प्रभावसे उज्जन गैस बनैगी, यह वायु फास्फोरससे मिलकर फोस्फीन नामी गैस पैदा करेगी, जिसका गुण यह है कि हवासे मिलते ही जल उठती है। इसके बुलबुले पानीकी सतहपर आते ही जलेंगे और धुआँके चक्र पैदा होंगे जो नृत्य करते हुवे, और फैलते हुवे ऊपरकी ओर हवामें चढ़ेंगे। ऐसे कई चक्र, जिनमें नीचेका सबसे छोटा होता है, देखनेमें बड़े अच्छे लगते हैं।

---

## समालोचना

भारतीय शासन पद्धति, प्रथमभाग, राजनीतिरत्न मालाका प्रथम रत्न, पं. अम्बिका प्रसाद बाजपेयी द्वारा संकलित और सम्पादित, प्रकाशक श्री प्रताप नारायण बाजपेयी, न० ३० श्री नाथराय लेन, कलकत्ता, डबल क्रौन १६ पेजी, १०४+८ पृष्ठ, मूल्य ॥)

अंग्रेजीमें इस विषयके कई ग्रन्थ हैं। सबसे अधिक सप्रमाण ग्रन्थ गेज़ेटियर है, जो सरकारकी ओरसे लिखा गया है। परन्तु हिन्दीमें हमारे देखनेमें यह पहला ग्रन्थ है। साधारण समाचार पढ़नेवाले बहुत कम इस बातको जानते हैं कि भारतका शासनयंत्र कैसे चलता है और किस अधिकारीको कैसे और कितने अधिकार प्राप्त हैं। इन बातोंको बिना जाने पाठकों को राजनीतिक समाचार पढ़कर भी उसका महत्त्व और उसका वास्तविक सम्बन्ध समझमें नहीं आता। बाजपेयीजीने यह पुस्तक लिखकर हिन्दी पाठकोंका बड़ा उपकार किया है। यह अभी पहला भाग है। इसमें इंगलैंडमें भारत-शासन, भारतसरकार, प्रादेशिक सरकारें, जिला-शासन, न्यायालयोंके कार्य्य और अधिकार तथा पुलीस और जेलतकका वर्णन है। शेष विषयोंकी पूर्त्ति दूसरे भागमें होगी। इसमें शासनपद्धतिका वर्णनमात्र है। अनावश्यक टीका टिप्पणियां नहीं दी गयी हैं। भाषा सरल है। जो भारतीय शासन पद्धतिसे अनभिज्ञ हैं, पढ़ा लिखा भारतीय कहलानेके योग्य नहीं हैं।

—रा. गौ.

---

ज्योतिष-शास्त्र—श्रीदुर्गाप्रसाद खेतान, एम्. ए. बी. एल् द्वारा लिखित। साहित्य सम्बर्द्धिनीसमिति, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित। क्रौन अठपेजी १०० पृ० मूल्य ॥)

इस सौ पृष्ठकी छोटीसी पुस्तकमें, पृथ्वी, चन्द्रमा, और अन्यग्रहोंका वर्णन, उनकी गति, सूर्य्य सम्प्रदायका साधारण विवरण, सूर्य्य तथा अन्य नक्षत्रोंका संक्षिप्त वर्णन, उनके अंग्रेजी और हिन्दी नामान्तर तथा सुन्दर चिकने काग़ज़ पर ४६ चित्र दिये हुए हैं। ज्योतिष शास्त्रका अध्ययन प्रारंभ करनेवालेकेलिए यह पुस्तिका अत्यन्त उपयोगी है। नक्षत्रोंके नामान्तरमें हमें कई जगह मतभेद है, परन्तु इस मतभेदसे पुस्तककी उपयोगिता कम नहीं होती। चित्रोंपर विचार करते हुए १०० पृष्ठके आठ आने दाम भी बहुत ज्यादा नहीं हैं। खेतान जीसे हमारा अनुरोध है कि ऐसे और भी वैज्ञानिक ग्रंथ लिखकर हिन्दीकी सेवामें तत्पर रहें।

—रा. गौ.

---

दक्षिण अफ्रिकाके सत्याग्रहका इतिहास

वीर सत्याग्रही, श्री भवानी दयाल जी लिखत, सरस्वती सदन इन्दोरसे म० द्वारका प्रसाद सेवक द्वारा प्रकाशित, डबल क्रौन अठपेजी, १००×१६ पृष्ठ, चित्र संख्या, आर्टपेपर पर-६६। मूल्य १॥) वा ३ शिलिंग

हिन्दी भाषामें भारतीयोंके राजनैतिक आन्दोलनोंका यह पहला इतिहास ग्रन्थ है। ऐसे ग्रन्थोंकी राष्ट्रीय अभ्युदयकेलिए बड़ी आवश्यकता है। दक्षिण अफ्रिकामें लोकमान्य महात्मा गांधीके नेतृत्वमें निष्क्रिय प्रतिरोध रूपी शस्त्रसे भारतीयोंने राजनैतिक लड़ाई की और पूरी सफलता पायी यह बात मोटी रीतिसे सभी पढ़े लिखे भारतीय जानते हैं, परन्तु उसका प्रामाणिक इतिहास उस युद्धके एक वीर सिपाहीके हाथका लिखा अबतक नहीं छपा था। जिसे हम निष्क्रियप्रतिरोध कहते हैं, उसे इस पुस्तकमें सत्याग्रह कहा गया है। शब्द अनुचित नहीं है। भाषा सरल और अच्छी है, वर्णन क्रम उपयुक्त है, चित्रोंके पीछे प्रकाशकने बहुत खर्च किया है, अतः पुस्तकका मूल्य १॥) रक्खा है जो अनुचित नहीं जान पड़ता। प्रेसकी असावधानीसे ग्रंथकारका ही चित्र उलटा छप गया है। परन्तु चित्र प्रायः साफ़ और अच्छे हैं। पुस्तक प्रत्येक भारतीयको पढ़नी चाहिए। उपादेय है। ऐसी अच्छी पुस्तकको इस उत्तम रीतिसे प्रकाशित करनेपर हम प्रकाशक महोदयको सहर्ष बधाई देते हैं।

—रा. गौ.

---

## प्राप्ति स्वीकार

निम्न लिखित सज्जनोंसे धन प्राप्ति सहर्ष स्वीकृति हैः—

१ पं० प्यारेलाल गर्ग एल्. ए-जी. पूसा (१९१५-१६) १२)

२ श्रीमान ठाकुर रजेन्द्रसिंह विसवान जिला सीतापुर (१९१५-१६) १२)

३ श्रीयुत सालिग्राम टंडन, एम्.एस्-सी, डिपुटी कलेक्टर बहरायच (१९१५-१६) १२)

४ श्रीयुत पं० अम्बिका प्रसाद पाण्डेय, एम्. एस-सी, एल्-एल्.बी. वकील बलिया (१९१५-१६) १२)

५ श्री स्वामी हरिशरणानन्द पांवटा (नाहन) (१९१५-१६) ३)

६ श्रीमान, माननीय पं० प्रागनारायण भार्गव रईस लखनऊ (१९१५-१६) १२)

७ पं० हरि रामचन्द्र दिवेकर एम्. ए. महिला आश्रम, पूना (१९१५-१६) १२)

८ बाबू कौशल किशोर बी. ए., एल्. टी. प्रयाग (१९१५-१६) ३)

९ बाबू शिवराम प्रसाद बलिया (१९१५-१६) १॥)

१० श्रीयुत मुखत्यार सिंह वकील मेरठ (१९१५-१६) ५)

८०॥)

ब्रजराज—बी. एस-सी,
एल्-एल्. बी, कोषाध्यक्ष

### स्वीकृति

विज्ञान परिषद् के सभापति माननीय पं० डाक्टर सुन्दरलाल, बी. ए., एल्-एल् डी. सी. आई. ई. ने परिषद्को २००) दान दिया है। इसकेलिए आपको परिषद् धन्यवाद देती है।

## विज्ञापन छपाईके नियम।

| | | |
|---|---|---|
| १—कवरपर प्रति पृष्ठ प्रति मास | ... ... | १५) |
| प्रति पृष्ठ २ कालम | ... ... | १०) |
| १ ,, | ... ... | ५) |
| आधा ,, | ... ... | ३) |
| आधे कालमसे कमका | ... ... | २) |

२—अस्वीकृत विज्ञापन लौटाया न जायगा। जो लोग लौटाना चाहें वह साथमें )॥ का टिकट भी भेज दें।

३—विज्ञापनकी छपाई सर्वथा पेशगी ली जायगी।

४—७) रुपयेसे कम दामका विज्ञापन छपानेवालोंको ।) प्रति कापी पत्रका मूल्य अधिक देना पड़ेगा।

५—विज्ञापन बँटाईकी दर क्रोड़पत्र देखकर बतायी जायगी।

६—अधिक कालकेलिए तथा अन्य बातें पत्र व्यवहार द्वारा तय करनी चाहिए।

निवेदक, मंत्री विज्ञान परिषत्, प्रयाग

---


Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P Sudarshanacharya, B. A, for the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

भाग ३ | मिथुन, १९७३ । June, 1916. | संख्या ३
Vol. III. | No. 3

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची



प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग ।

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

# विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताह से अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले या सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

(४) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरह के पत्र व्यवहारकेलिए पता—

मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग

## विज्ञान-परिषत्‌के कार्य्यकर्त्तृगण—१९१५-१९१६।

### सभापति

माननीय डाक्टर सुन्दरलाल रायबहादुर, बी. ए., एल-एल. डी., सी. आइ. ई., प्रयाग

### उपसभापति

महामहोपाध्याय डाक्टर गङ्गा नाथ झा, एम. ए, डी लिट, प्रयाग

माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय, बी. ए., एल-एल बी. प्रयाग

श्रीयुत एस. एच. फ्रीमैन्टल साहब, जे. पी., सी. आइ. ई., आइ सी. एस., मजिस्ट्रेट और कलेक्टर, प्रयाग

श्रीमती एनी बेसन्ट, पी. टी. एस., मदरास

माननीय राजा रामपालसिंह, सी. आइ. ई., कुर्री सुदौली राज, रायबरेली

राय बहादुर पुरोहित गोपीनाथ, एम. ए., (मेम्बर स्टेट कौंसिल) जयपुर

### प्रधान मंत्रिगण

लाला सीताराम, बी. ए., एफ् ए. यू, प्रयाग

अध्यापक सतीशचन्द्र देव, एम. ए., प्रयाग

### मंत्रिगण

अध्यापक गोपालस्वरूप भार्गव, एम. एस-सी. प्रयाग

अध्यापक मौलवी सैय्यद मुहम्मद अली नामी, प्रयाग

### कोषाध्यक्ष

श्री ब्रजराज, बी. एस-सी, एल-एल. बी., प्रयाग

### अन्तरंगिगण

अध्यापक रामदास गौड़, एम. ए., प्रयाग

,, देवेन्द्रनाथ पाल, एम. ए., ,,

,, शालग्राम भार्गव, एम. एस-सी ,,

,, हीरालाल खन्ना, एम. एस-सी, ,,

,, श्यामसुन्दरदास बी. ए., बनारस और लखनऊ

,, नन्दकुमार तिवारी, बी. एस-सी., लखनऊ और कानपुर

,, पांडेय रामवतार शर्मा, एम. ए., साहित्याचार्य पटना

,, गोमतीप्रसाद अग्निहोत्री, बी. एस-सी., नागपुर

श्रीयुत राधामोहन गोकुल जी, कलकत्ता

### लेखापरीक्षक

श्रीमान पण्डित श्रीधर पाठक, लूकरगंज, प्रयाग

श्रीयुत प्यारेलाल केसरवानी, (हेड असिस्टन्ट ओरिएन्टल लैफ़ आफ़िस) प्रयाग

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात् । विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते ।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति । तै० उ० । ३ । ५ ।

भाग ३ { मिथुन, संवत् १९७३ । जून, सन् १९१६ । } संख्या ३

## मंगलाचरण

विमल बीजसों अंकुर अंकुरसों द्वैदल नव,

द्वैदलसों पौधा प्रिय पौधासों द्रुम अभिनव ।

द्रुमसों नव पल्लव पल्लवसों कली सुहावन,

कली भलीसों कुसुम रुचिर विकसत मनभावन ।

पुनि कुसुम कोषसों होत फल, कारण कर्म समान है,

जो प्रगटत यह जग सत्य सो वन्दनीय विज्ञान है ।

आगरा ।
२८-४-१६

—सत्य नारायण

## रसायन

[ ले० रामदास गौड़, एम् ए. ]

### ३—परमाणुवाद

अणोर्महतश्चोपलब्ध्यनुपलब्धी नित्ये व्याख्याते । कणाद ७।१।८ नित्यं परिमण्डलम् ।७।१।२० एकत्वैक पृथक् त्वयोरेकत्वैक पृथकत्वाभावो अणुत्व महत्त्वाभ्यां व्याख्यातः ।७।२।३

जिस समय अपनी अनेक परीक्षाओं-से रासायनिकोंने यह सिद्ध कर दिखाया कि पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि—यह मौलिक पदार्थ नहीं हैं, वरन् यह ठोस, द्रव और वायव्य इन तीन दशाओंके नाम हैं, और अग्नि कोई वस्तु वा पदार्थ नहीं है, वरन् शक्तिका एक रूपान्तर है-उसी समय एक बड़ा भारी दार्शनिक जिसका नाम डाल्टन था, प्राचीन परमाणुवादपर विचार कर रहा था ।

प्राचीन परमाणुवाद यह है कि संसारकी

Chemistry रसायन ]

समस्त वस्तुएं, चाहे जैसी दशामें हों, अत्यन्त छोटे छोटे टुकड़ोंकी बनी हुई हैं। यह टुकड़े साधारण आखोंसे दिखाई नहीं देते। बन्द कमरेमें किसी पतले छेदसे जब सूर्य्यका प्रकाश धरतीपर पड़ता है, उसकी एक लकीर सी दीखने लगती है और इस लकीरमें अत्यन्त छोटे छोटे पदार्थ बड़े वेगसे इधर उधर उड़ते दिखाई पड़ते हैं। इन्हें त्रसरेणु कहते हैं। किसी त्रसरेणुके ६० टुकड़े किये जाँय तो, बहुतोंके मतसे, प्रत्येक टुकड़ा, प्रत्येक षष्ठ्यंश, परिमाणमें एक अणुके बराबर होगा—

डाल्टनने परमाणुवादको लेकर बहुत कुछ बढ़ाया। उसने नीचे लिखे सिद्धान्त ठहराये:—

( १ ) संसारके सभी पदार्थोंके, जो तुल सकते हैं, अत्यन्त छोटे टुकड़े किये जा सकते हैं, परन्तु टुकड़े करते करते एक ऐसी हद आ जाती है जिसके बाद और छोटे टुकड़े नहीं हो सकते। यह अन्तिम छोटे टुकड़े किसी तरह भी देखे नहीं जा सकते, परन्तु कल्पनामें आ सकते हैं। इन्हें ही परमाणु कहते हैं।

( २ ) एक ही पदार्थके परमाणु एकसे रूप, रंग, आयतन, भार रखते हैं। परन्तु भिन्न भिन्न पदार्थोंके परमाणु भिन्न भिन्न रूप, रंग, आयतन और भारके होते हैं। जैसे सोनेके सभी परमाणु एकसे रूप, रंग, आयतन भार रखते हैं परन्तु सीसेके परमाणुओंसे उनके रूप, रंग आयतन, भार भिन्न भिन्न होते हैं।

( ३ ) जब दो पदार्थ आपसमें मिलकर एक तीसरा पदार्थ बनाते हैं, तो इस क्रियामें दोनों पदार्थोंके परमाणु, बिना टूटेहुए ही, मिल या जुट जाते हैं, और उस नये पदार्थमें ज्योंके त्यों मौजूद रहते हैं। जैसे, तांबा और गंधक साथ ही आंचके बलसे मिलकर कोयलेके रंगका तीसरा पदार्थ ताम्रगंधिद बनाते हैं, तो तांबेका एक परमाणु गंधकके एक परमाणुसे जुटकर एकट्ठा हो जाता है और नये रूपमें बराबर बना रहता है। इसमें तांबा और गंधक मौलिक पदार्थ हैं और ताम्रगंधिद यौगिक पदार्थ।

( ४ ) परमाणुओंके अभेद्य होनेके कारण, जब कभी एक पदार्थ दूसरेसे मिलकर तीसरा पदार्थविशेष बनाता है, दोनोंके परमाणु एक विशेष और निश्चित भार-परिमाणमें मिलते हैं। जैसे, ताम्रगंधिद कहींसे, किसी प्रकारसे बना हुआ हो उसमें तोलमें गंधकके दूनेके लगभग ( ६३·५:३२ ) तांबा होना निश्चित है। और वास्तवमें सदा ऐसा ही पाया भी जाता है। कारण यह है कि गंधकके परमाणुसे तांबेका परमाणु लगभग दूनेके भारी है, और परमाणुके टुकड़े नहीं हो सकते, इस लिए ताम्र-गंधिदमें अगर दोनोंके एक ही एक परमाणु हों तो तांबेको तोलमें गंधकका दूना होना ही चाहिए। परन्तु यदि ताँबा गंधकके साथ कई परिमाणोंमें मिलकर प्रत्येक परिमाणके लिए भिन्न भिन्न मौलिक बनावे, तो भी तांबा गंधकसे तोलमें कमसे कम दूना होगा और उससे अधिक बढ़ेगा तो चौगुना अठगुना आदि हो जायगा। परन्तु यह संभव नहीं है कि डयोढ़ा वा ढाई गुना आदि हो, क्योंकि परमाणु एककी जगह दो, तीन, चार आदि मिल सकते हैं, परन्तु परमाणुओंका आधा तिहाई, डयोढ़ा आदि भाग नहीं हो सकते।

इस अन्तिम नियमको स्थिर-परिमाणका नियम कहते हैं। डाल्टनके समयसे आज सौ बरससे अधिक हुए कि परीक्षासे यह नियम बराबर ठीक और बिलकुल ठीक पाया गया है। तूतिया जहाँ कहींसे आवे जिस किसी रीतिसे बने उसमें यह परिमाण निरन्तर पाये जाते हैं

| | | | |
|---|---|---|---|
| तांबा | = | ६३·५ | अंश |
| गंधक | = | ३२ | ,, |
| ओषजन | = | ६४ | ,, |
| पानी | = | ९० | ,, |
| योग तूतिया | = | २४९·५ | |

यह परिमाण निरन्तर पाये जाते हैं और तूतिया ( नीला थोथा ) के लिए स्थिर हैं।

इसी प्रकार जलका स्थिर परिमाण यह है—

| | | |
|---|---|---|
| ओषजन | = | ८ अंश |
| उज्जन | = | १ " |
| योग जल | = | ९ अंश |

डाल्टनके समयसे ही दो तरहकी जांच की जाने लगी। एक तो यह कि कौन कौनसे पदार्थ मौलिक हैं और कौनसे यौगिक। दूसरे यह कि प्रत्येक मौलिक पदार्थका योगभार –अर्थात् दूसरे मौलिकोंसे मिलनेका स्थिर परिमाण-- कितना है।

जांचसे यह भी मालूम हुआ कि उज्जन सबसे ज्यादा हलका पदार्थ है, इसलिए तोल-के लिए इसके ही परमाणुको प्रमाण मानकर दूसरे परमाणुओंका भार निकाला जाने लगा। उस समय एक ही आयतन उज्जन और उतना ही आयतन ओषजन तोलनेसे पता लगा कि ओषजन उज्जनसे आठ गुना भारी है। जांचसे यह भी पता लगा कि १०० भाग जलमें

११·१ सैकड़ा उज्जन
८८·९ सैकड़ा ओषजन है
१००·००

यदि उज्जनको प्रमाण मानकर, इकाई मानकर इन दोनों अंकोंको ११·१ से भाग दें तो फल होता है

$$\frac{११·१}{११·१} = १ \text{ भाग उज्जन}$$

$$\frac{८८·९}{११·१} = ८ \text{ " ओषजन}$$

९ भाग जल

सुभीतेकेलिए उज्जनकी ही इकाई मानकर उस समयके सभी मौलिक पदार्थोंके योग-भार निकाले गये तो यह फल निकला--

उज्जन—१
ओषजन—८
गंधक—१६
तांबा—३१·७५
जस्ता—३२·५
लोहा—२८
पारा—१००
चांदी—१०८

यह समझकर कि स्थिर-परिमाण नियमसे योग-भार ही परमाणुओंका भार भी होगा, लोग इन अंकोंको पारमाणविक गुरुत्व या पारमाणविक भार भी समझने लगे। परन्तु यह बड़ी भूल थी। इसका रहस्य आगे खुलेगा।

---

# भोजन विचार

[ ले० डाक्टर एस्. पी. राय, एम्. बी, एम्. आर. सी. एस्. ( इंग. ) ]

## साधारण निरामिष आहार

इस लम्बे निबन्धको अब मैं साधारण निरामिष भोजनकी कुछ चर्चा करके समाप्त करूँगा। मैंने स्वयं अपने अनुभव तथा अपनी खोजसे नीचे लिखे अंक ऐसे भोजनके विषयमें इकट्ठे किये हैं।

२४ घंटेके भीतर मध्यम श्रेणीका शाक भोजी वा दूध शाक भोजी इस प्रकार औसत तोलके भोजनमें उनके सामने दिये हुए आवश्यक पदार्थोंका भोजन करता है---

| | तोल | प्रोटीड | कर्बोज्ज (मंडादि) | स्नेह |
|---|---|---|---|---|
| चक्कीका पिसा वेछना आटा | १० छ० | १॥ छ० | ५ छ० | ० |
| दाल | २ छ० | ०·४ छ० | १·१६ छ० | ० |
| घी | १ छ० | ० | ० | १ छ० |
| दूध | ८ छ० | ०·४ छ० | ०·०५ छ० | ०·३ छ० |
| योग | २१ छ० में | २·३ छ० | ६·२१ छ० | १·३ छ० |

Medicine वैद्यक ]

प्रामाणिक परिमाणमें जितने पोषक पदार्थ चाहिएं उससे तुलना करनेपर ऊपरकी तोलमें मंडादि कर्बोज्जोंकी कमी मालूम होती है। कुछ कमी स्नेह (घी आदिके) अंशमें भी है। परन्तु मेरी समझमें मध्यम श्रेणीके सभी शाक भोजी थोड़ी बहुत मिठाई खाकर यह कमी पूरी कर लेते हैं। इससे यह बात स्पष्ट है कि भारतवासी दुग्धशाक-भोजी साधारण रीतिसे जो भोजन करते हैं उसमें कोई दोष नहीं है, और यह युरोपीय विद्वानोंकी बड़ी भूल है और भारी भ्रम है जो उसमें त्रुटि वा कमी समझते हैं। हां, संभव है कि आमिष भोजी युरोपीयनके भोजनकी अपेक्षा देखनेमें भारतीयका भोजन परिमाणमें अधिक मालूम होता हो।

अब जो लोग मेहनत मजूरी करके दिन काटते हैं उनके भोजनपर विचार कीजिए। संयुक्त प्रान्तमें जिन दीन मजूरोंको पेट भर अन्न मिल जाता है उनका भोजन इस प्रकार है---

| अन्न | प्रोटीड | मंडादिकर्बोज्ज |
|---|---|---|
| छटाक | छटाक | छटाक |
| आटा १६ | २·४ | ८ |
| दाल २ | ०·४ | १·१६ |
| योग १८ | २·८ | ६·१६ |

इन बेचारोंको घी दूध तो मिलताही नहीं। परन्तु प्रोटीडका अंश परिमाण (२ छटाक) से अधिक और कर्बोज्जका अंश भी परिमाणसे १ छटाक अधिकही खा जाते हैं। स्नेह तो बिल्कुल ही नहीं मिलता। परन्तु संभवतः मांड आदि जो वह परिमाणसे अधिक खा जाते हैं जीवनके लिए आवश्यक चिकनाईके अंशमें प्रकृतिकी क्रियाओंसे ही बदलकर शरीरमें एकत्र हो जाते हैं। कुछ भी हो श्रमजीवियोंका भोजन हमारे यहां यथोचित नहीं है और यदि उन्हें घी खानेको न मिले तो कमसे कम कुछ वानस्पतिक तैल तो अवश्यही मिलने चाहिएं और उनका आहार बहुत सुधरा हुआ होना चाहिए।

मांस और शाक मिले भोजनकी अपेक्षा केवल शाक दुग्धमय भोजन कई बातोंमें अधिक सुभीतेका है। एक तो यह कि शाक दुग्धमय भोजन मांसकी अपेक्षा शुद्ध और स्वच्छ होता है और उसमें कृमिजन्य रोगोंका भय कम होता है। शाकमय पदार्थ ताजे और स्वास्थ्यकर दशामें पाये जाते हैं और उनसे अनेक तरहके व्यंजन बन सकते हैं। इन प्रान्तोंके लोग, विशेषतः ऊंची जातिके हिन्दू, सभी तरहकी भिन्न भिन्न दालें नहीं खाते। मसूरकी दालसे तो बहुतोंको परहेज़ है। मसूर बड़ी पोषक है और जल्दी पच जाती है। बंगालकी नाईं इन प्रान्तोंमें भी चाहिए कि दालोंको मिलाकर पकाएँ और खाएँ। मिलानेमें भी यदि भिन्न भिन्न परिमाणोंसे काम लें तो भिन्न भिन्न स्वभाव के मनुष्योंके अनुकूल दाल बन सकती है। सर्वभोगी मनुष्य भूतकालमें भी सब तरहके अन्नसे बढ़ता और पुष्ट होता आया है; यह भी देखा चाहिए आधुनिक शाक फलाहारसे उसके विकासमें कैसी सहायता मिलती है।

संसारकी वर्त्तमान परिस्थितिमें सामान्यतः हमको इसीमें किफ़ायत और सुभीता है कि अपने भोजनकेलिए मांड और कर्बोज तो हम वनस्पतियोंसे लें और प्रोटीड तथा स्नेह पशुओंसे लें। वनस्पतियोंके प्रोटीड बहुधा अत्यधिक कर्बोज्जोंसे बुरी तरहसे मिले पाये जाते हैं और साथही स्नेहकी कमी ही रहती है। और बादाम, पिस्ते अखरोट आदि तैलमय बीजोंमें अत्यधिक स्नेहके साथ प्रोटीड मिलता है। मांसमें प्रोटीड विविध परिमाणमें ऐसे स्नेहके साथ मिला मिलता है जो शीघ्र ही पच जाता है। साधारणतः यह सिद्धान्त रूपसे कहा जा सकता है कि वानस्पतिक स्नेहकी अपेक्षा पशु-स्नेह जल्दी पचता है और इसका

एक प्रमाण यह भी है कि संसार भर दूध और दुग्ध स्नेह अर्थात मक्खन घी आदि बहुतायत से खाता है।

परन्तु हमें इस कल्पनामें अविश्वासका कोई कारण नहीं दीखता कि काल पाकर सभ्य मनुष्य वैज्ञानिक कृषि और उद्यानविद्याकी सहायतासे ऐसे वानस्पतिक पदार्थ भी उत्पन्न कर लेगा जिनमें अधिक सुस्वादु और शीघ्र पचनेवाले प्रोटीड, स्नेह और कर्बोज्ज आजकलकी वनस्पतियोंकी अपेक्षा कहीं अधिक समुचित परिमाणमें पाये जायँगे, और मांसको अकेले वा अनाजसे मिलाकर खानेकी बिल्कुल आवश्यकता न रह जायगी। उस समय, भावी मनुष्य अपने भोजनकेलिए पशुहिंसा न करेगा क्योंकि स्वाद और आवश्यकता दोनोंके उद्देश्य सिद्ध हो जायँगे, और उसका रसिक और धार्मिक जीवन आजकलके सिलेखानों (हत्या भवनों) को एक दम दूर करके सुखी और सन्तुष्ट हो जायगा और कमसे कम भोजनकेलिए मांसका निर्दय व्यापार बन्द हो जायगा।

परन्तु जबतक हम ऐसी अवस्थामें न पहुँच जायँ, तबतकके लिए मैं एक माध्यमिक स्थिति वा कार्य्यक्रमका प्रस्ताव करूंगा। हम लोग अबसे ही मांसाहार छोड़कर वानस्पतिक-दुग्धमय आहार प्रारंभ करें, जिसमें मेरी रायमें कई प्रकारके पक्षियोंके ताज़े अंडोंका उपयुक्त परिमाण सम्मिलित हो तो हर्ज नहीं है।

अंडे बड़े पोषक हैं, जल्दी पचते हैं, और पूर्ण भोजन हैं। बढ़नेवाले सभी बच्चोंकेलिए अंडे बड़े महत्वके भोजन हैं। अंडेकी ज़रदी तो मस्तिष्कके लिए भोज्य विशेष समझा जाता है और उसमें लोहा, जो हमारे रक्तका प्राण है, ऐसी दशामें है कि झट रक्तमें मिल जाता है। ओषधि बनानेवालोंने उससे एक नत्रजनीय स्नेह निकाला है जिसका नाम ओवोलेसिथिन (Ovo Lecithin) है। इसी प्रकार आंगारिक लोहा भी निकाला है जिसका नाम ओवोफ़ेरिन (Ovo Ferrin) रक्खा है। इन दोनोंको अब भारी भारी डाक्टर बड़े चावसे औषधियोंमें देते हैं।

दुग्धमय वानस्पतिक भोजनमें ताज़े अंडे, उपयुक्त परिमाणमें मिला देनेसे, भोजन देखनेमें थोड़ा और खानेको पर्य्याप्त हो जाता है, साथही भोजन अधिक पोषक भी हो जाता है। अंडोंके तोड़नेमें फल-फोड़नेकी सी क्रिया होती है। रक्त घात वा हत्या नहीं होती, इससे मनको सन्तोष भी हो सकता हैं। दुग्धवनस्पति-भोजीको अंडेसे कोई आपत्ति न होनी चाहिए क्योंकि दुग्ध रक्तसे बना हुआ अवानस्पतिक पदार्थ है और यदि जीवहिंसाकी कहिए तो वनस्पति वैसे ही सजीव हैं जैसे अन्य प्राणी। अबोल वनस्पतियोंको पीड़ा पहुँचानी वैसी ही जीवहिंसा है, कम नहीं। विज्ञानाचार्य्य श्री जगदीश चन्द्र वसुके जगत्प्रसिद्ध अन्वेषण इस बातके साक्षी हैं।

वानस्पतिक पदार्थ, दूध, अंडे, ताज़े फल, और कुछ सूखे मेवे, सब मिल जुलकर ऐसा उत्तम आहारकी रचना करते हैं जो सभ्य मनुष्यकेलिए सुदृश्य, सुस्वादु, सुपाच्य, और सुपोष्य है,-निदान उसकेलिए आदर्श भोजन है। बहुकालीन स्वभाव और रीतियोंके कारण हम कोई एक दम नया आहार प्रारंभ नहीं कर सकते। और अपने भोजनमें एकाएकी बड़े और मौलिक परिवर्त्तन कर देना हमारे लिए हितकर भी नहीं हो सकता और उससे हमें जल्दी सन्तोष भी नहीं हो सकता। परन्तु मेरे प्रस्तावमें कोई बड़ा और मौलिक परिवर्त्तन नहीं है। दुग्धमय-शाक-भोजीकेलिए अंडोंका बढ़ा देना कोई बड़ा परिवर्त्तन नहीं है। साथ ही वह भोजनके आयतनको घटा सकता है, मांस मछलीको एक दम छोड़ दे सकता है और बड़े सुभीते और किफ़ायतके साथ इनकी जगह दूध और दालोंकी मात्रा बढ़ा सकता है।

# हमारे पारिभाषिक शब्द

[ ले० मुख़्तार सिंह, मेरठ ]

आज दिन किसे संदेह हो सकता है कि किसी जातिकी उन्नतिका रहस्य इस बातपर निर्भर है कि उस जातिके बोलनेकेलिये एक व्यापक भाषा हो। भिन्न भिन्न प्रान्तोंको बोल चालमें सर्वदा कुछ भेद रहता है और रहेगा किन्तु वह भेद इतना नहीं होना चाहिये कि जितना आज बङ्गला और मेलायामें है। यह भी सर्वमान्य सिद्धान्त है कि आर्यभाषा हो सारे भारतवर्षकी व्यापक भाषा हो सकती है। प्रश्न केवल यह रह जाता है कि आर्यभाषा किस प्रकार सर्वतंत्र भाषा हो सकती है। लोग कहते हैं और कुछ हदतक ठीक कहते हैं कि भाषाकी उन्नतिका एक मात्र उपाय पुस्तकोंकी रचना तथा भारत जनताकी रुचि आर्यभाषा बोलनेकी ओर दिलाना है। अंग्रेज़ी भाषा जिन लोगोंने पढ़ी है वे चाहे किसी प्रान्तके रहने वाले क्यों न हों खिचड़ी बोलनेकेलिये विवश प्रतीत होते हैं। जिन महानुभावोंने संस्कृत भी अच्छी पढ़ी हो उन्हें भी प्रायः अंग्रेज़ी भाषाके शब्द बोलनेकेलिये प्रयुक्त करने पड़ते हैं। इसके दो बड़े कारण हैं एक तो यह है कि अंग्रेज़ी पढ़े लिखोंकी पढ़ाईका माध्यम अंग्रेजी रहती है और उन्हें छोटी श्रेणियोंसे ही लघुत्तम गुरुतमके स्थानमें एलसीयम,( L. C. M. ) जी सी एम, ( G. C. M.) सीखना पड़ता है। यद्यपि जितनी उन्नति गणितमें हमारे पूर्वजोंनेकी है और जिसका आजतक पता चलता है और हमारे ज्योतिषी अभ्यास करते हैं वह अंग्रेज़ी भाषाके साहित्यसे कुछ कम नहीं कही जा सकती तथापि आर्यभाषाके माध्यम न होनेके कारण हम इन पारिभाषिक पर्यायोंसे अत्यन्त अनभिज्ञ रहते हैं। दूसरा कारण हमारी भाषामें पारिभाषिक शब्दोंकी कमी है। हमें यह माननेमें संकोच नहीं करना चाहिये कि अंग्रेज़ीमें तथा अन्य विदेशी भाषाओंमें अनेक विज्ञानकी शाखाएं ऐसी उपस्थित हैं जिनका लेशमात्र भी हमारी भाषामें नहीं मिलता। मुझे यह माननेमें तो संकोच तथा संदेह है कि हमारे पूर्वज इन सिद्धान्तोंसे सर्वथा शून्य थे। पुरानी पुस्तकोंके पढ़नेसे पता चलता है कि उन्हें बहुतसे गूढ़ सिद्धान्तोंका पता ही न था प्रत्युत वे उन सिद्धान्तोंको अपने रोज़के व्यवहारोंमें बरतते थे यह संभव है कि उन्होंने उन सिद्धान्तोंको आजकलकी विज्ञान-प्रणालीपर चलकर न प्राप्त किया हो। जहाँ इस बातपर बड़ा ज़ोर दिया जाता है कि पढ़ाईका माध्यम हिन्दी हो वहाँ यह कठिनाई बहुधा उपस्थित होती है कि पढ़ानेकेलिये पुस्तकें कहाँसे आयें पुस्तक रचना शब्दोंपर ही निर्भर है। विज्ञानकी उन शाखाओंकेलिये जिनका कुछ पता हमें अपने पूर्वजोंकी पुस्तकोंमें नहीं मिलता शब्द गढ़ने पड़ेंगे और जिनका पता हमारी पुस्तकोंमें चलता है उनके लिये शब्द ढूंढ़ने होंगे। सौभाग्यसे आर्यभाषाका स्रोत देववाणी है और संस्कृत भाषामें शब्दोंकी रचना और भाषाओंकी अपेक्षा सुगम है।

(२) आज दिन इस ओर अंग्रेज़ी पढ़े लिखोंका ध्यान आकर्षित होने लगा है और वे वैज्ञानिक पुस्तकें लिखनेकी ओर ध्यान देते हैं, कतिपय पुस्तकें भी भिन्न भिन्न विज्ञानकी शाखाओंपर लिखी गयी हैं, मुझे भी कई हिन्दीके प्रेमी और अंग्रेज़ी विज्ञानके विद्वान महानुभावोंसे यह कहनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है कि वह वैज्ञानिक पुस्तक-रचनासे आर्यभाषाके भंडारकी उन्नति करें किन्तु वे असमर्थ हैं कि अपने भावों को हिन्दीभाषामें रख सकें। परन्तु उन्हें कोई ऐसा कोष नहीं मिलता जिसके आधारपर वे इस कमीको पूरी कर सकें। जिस भाषामें अपने

विचारोंको प्रकट करनेकेलिये शब्दोंकी ऐसी कमी हो उसमें उन्नति होना कितना कठिन है, किन्तु यह कोई निराश होनेकी बात नहीं है। मेरठके प्रसिद्ध प्रिंसिपल मिस्टर जैसने साहित्य परिषद्-मेरठके वार्षिक अधिवेशनमें बतलाया था कि अंग्रेज़ी भाषाकी अवस्था तीन सौ वर्ष पूर्व हिन्दी भाषाकी अवस्थासे कहीं हीन थी किन्तु आज वह लोक-प्रसिद्ध भाषाओंमें से एक है।

(३) अंग्रेज़ी भाषाकेलिये किसी और भाषा-का भंडार अपना नहीं कहा जा सकता था किन्तु आर्यभाषाकेलिये संस्कृतका भंडार सब अपना है केवल इस अथाह समुद्रमें गोते लगानेकी आवश्यकता है। मुझे इस समय आपका ध्यान पारिभाषिक शब्दोंके अभावकी ओर दिलाना है। मेरे विचारमें जबतक यह कमी दूर न होगी तबतक विज्ञानकी पुस्तकोंका नितान्त अभाव रहेगा। यदि किसी महानुभावने शब्द गढ़ कर कोई पुस्तक लिख भी डाली तो वह केवल आर्यभाषा जाननेवालोंकी समझमें न आ सकेगी। इस अभावको सबसे पहिले नागरी-प्रचारिणी-सभा काशीने अनुभव किया था और इसके लिये एक वैज्ञानिक कोष निकाला था यद्यपि इस कोषसे नए शब्द रचना करनेकी एक शैली लोगोंके सामने रक्खी गयी और इससे बड़ा उपकार हुआ जिसके लिये हम सबको नागरी प्रचारिणी सभाका कृतज्ञ होना चाहिये किन्तु यह कोष बहुत ही छोटा रहा और विज्ञानकी साधारण पुस्तकोंमें जिन शब्दों-का प्रयोग किया जाता है उनके लिये भी इसमें शब्द नहीं मिलते। यह भी प्रतीत होता है कि रसायन सम्बंधी शब्द रचना करनेमें जो शब्द पहिले ही से उपस्थित थे उनकी परवाह बहुत कम की गयी। बहुतसे पदार्थ जो हमारे देशके बा-ज़ारोंमें मिलते थे और जिनके नाम अंग्रेजीभाषा जाननेवाले नहीं जानते थे उनका ठीक समावेश इस पुस्तकमें नहीं किया गया प्रत्युय अंग्रेज़ी भाषाके शब्दोंकेलिये नए शब्द रच दिये गये इसी कारण बहुतसे नुसखे लोगोंको अंग्रेज़ी दवाई-ख़ानोंसे बहुमूल्य देकर खरीदने पड़े यद्यपि वे बहुत सस्ते पदार्थ बाज़ारमें मिल सकते थे।

(४) लोगोंने अनेक अंग्रेज़ी वैज्ञानिक पुस्तकों-का उलथा किया और उसमें जो शब्द रचना की वह बड़ी ही भ्रान्त और अशुद्ध थी। मैंने कई वर्ष तक अपने कार्यालयमें जब अनेक पदार्थ बना-कर देखे और विवेचना की तो अनेक पदार्थ इन तर्जुमाकी हुई पुस्तकोंके सहारेपर बनानेसे न बन सके किन्तु जब इन्हीं नुसखोंको अंग्रेज़ी पुस्तकोंमें देखा गया तो गलतीका पता लग गया। उदाहरणकेलिये मैंने एक पुस्तकमें देखा कि ग्रैफाइटका तर्जुमा शीशा किया गया है किन्तु जिन लोगोंने कुछ भी वैज्ञानिक अनुभव किया है वह जानते हैं कि यह बिलकुल ग़लत है। इसी प्रकार एक प्रसिद्ध पुस्तकमें जिसका नाम मैं यहाँ नहीं बताना चाहता वाइट लैड (white lead) का तर्जुमा सफ़ैद सीसा किया है हालाँके इसका ठीक उलथा सफैदा है, इसी प्रकार ड्रेगून्स ब्लड (Dragoon's blood) का उलथा इसी पुस्तकमें छापकलीका खून किया गया है जो एक प्रसिद्ध औषधि है और बार्निश बनानेमें बड़ी काम आती है और इसका नाम हिन्दीमें हीरादोखी है जो एक प्रकारका गोंद है। अब आप स्वयम् सोच सकते हैं कि जिस मनुष्यको बार्निश बनाना हो वह कहाँतक छाप-कलीका खून डालकर अपने कार्य्यमें फलीभूत होगा। प्रसिद्ध नागरी प्रचारिणीके कोषमें भी पर-लैश जैसे साधारण शब्दकी टीका मोतीका चूना किया गया है यद्यपि यह एक प्रसिद्ध पदार्थ कार्बनित पोटाश है। इसी प्रकार बहुतसे लोगों-ने पुटाश और सोडेमें अंतर न समझकर दोनों-का उलथा सज्जी किया है। मैं कहाँतक उदाहरण दूँ अभी जब मैं साबुनपर पुस्तक लिख रहा

था और भिन्न भिन्न प्रकारके तेलोंका पता लगा रहा था तो मैंने पामआयलकी खोज की। पता लगा कि उसकी टीका लोगोंने खजूरका तेल किया है। मुझे इस समयतक यह विश्वास था कि यह कोई ताड़-पौदेकी विशेष जाति होगी और संभव है कि इसका उल्था खजूरका तेल ठीक हो। किन्तु जब इस विषयमें अनेक दूकानदारोंको लिखा गया पुस्तकें पढ़ी गयीं और सरकारी कर्मचारियोंसे भी लिखा पढ़ी हुई तो पता लगा कि यह एक बिशेष जातिका तेल है जो अफ़रीका देशमें प्राप्त होता है और भारतबर्षमें यह बिल्कुल नहीं मिलता, जिस पेड़से यह प्राप्त होता है वह पेड़ भी भारतवर्षमें नहीं पाया जाता केवल कुछ पेड़ मंगलोरमें बैसल मिशनके बाग़में हैं। उपर्युक्त कथनसे आप यह भलीभांति समझ सकते हैं कि गलत शब्द रचनासे विशेषकर वैज्ञानिक संसारमें क्या अंधेर नहीं मच सकता। मेरे बिचारमें वह लोग जो अंग्रेजी शब्दोंको ज्योंका त्यों रख देते हैं गलत उल्था करनेवालों की अपेक्षा कहीं अच्छा करते हैं। भारतवर्ष एक सभ्य देश है जिसमें यद्यपि आज वैज्ञानिक शिक्षा नहीं रही तथापि परमात्माकी कृपासे प्रत्येक प्रकारके खनिज तथा बानस्पतिक पदार्थ पाये जाते हैं और अनेक रासायनिक सम्मेलन भी मिलते हैं और बड़ी मात्रामें बनाये जाते हैं। ऐसी अवस्थामें जो लोग वैज्ञानिक पुस्तकें लिखते हैं उनपर बड़ा भारी दायित्व है, उनको यह विचारना चाहिये कि जहाँतक हो सके वहाँतक वे शब्दोंकी खोज करें। इस समय भारतवर्ष तथा आर्यभाषाके लिए बड़ा कठिन समय है। यदि हम जोशमें आकर केवल लिखना ही धर्म समझकर लिखना आरम्भ करेंगे तो संभव है कि हम भाषा तथा विज्ञानको बड़ी हानि पहुँचावें और लोगोंके दिलोंमें विज्ञान सम्बन्धी भाषाकी पुस्तकोंके-लिये अश्रद्धा उत्पन्न करदें इस कारण मैं सब हिन्दी लेखकों से अपील करता हूं कि वे कमसे कम तिजारती शब्दोंकी रचनामें जहाँतक हो सके वहाँतक खोज करें और उसके पश्चात शब्द गढ़नेकी ओर अपना ध्यान लगावें।

(५) वैज्ञानिक शब्दोंको हम दो जातियोंमें विभक्त कर सकते हैं प्रथम तो वे शब्द हैं जो तिजारती शब्द कहे जाते हैं दूसरे वे शब्द हैं जो रासायनिक अथवा विज्ञानकी शाखासे संबंध रखते हैं; जहांतक तिजारती शब्दका संबंध है वहाँतक थोड़ीसी गलतीभी बड़ा अनर्थ करती है जैसा मैंने बताया है कि कहाँ तो छीपकलीका खून और कहाँ हीरादोखी एक वृक्षका गोंद। अतएव आवश्यक है कि हम तिजारती शब्दोंकी रचनामें बहुत ध्यानसे काम लें। सबसे पहले हम इस बातका पता लगावें कि जिस अंग्रेज़ी शब्दका हम उल्था करने लगे हैं वह उसी रूपमें या किसी रूपान्तरमें भारतवर्षमें मिलता है या नहीं और यदि मिलता है तो वह किस नामसे प्रसिद्ध है यदि हम इतना झंझट नहीं करना चाहते तो हमारा कोई अधिकार नहीं है कि हम किसी पुस्तकका गलत तर्जुमा लोगोंके सामने उपस्थित करें। अंग्रेज़ी भाषामें सरकारने इसके लिये बड़ा परिश्रम किया है और इसपर तीन बड़ी बड़ी मोटी पुस्तकें सरकारकी ओरसे छापी गयीं हैं। इन पुस्तकोंमें अंग्रेज़ी शब्दोंके पर्याय भारतबर्षकी अनेक भाषाओंमें दिये गये हैं यद्यपि यह नाम अंग्रेज़ी लिपिमें लिखे जानेके कारण ठीक ठीक नहीं पढ़े जासकते तथापि भाषा जाननेवाले इनके सहारे सही नामका पता अवश्य लगा सकते हैं। जहाँतक मैंने पढ़ा है मैं यह कह सकता हूँ कि आर्यभाषाके लेखकोंने जितने तिजारती शब्दोंकी रचनाकी है वह १०० भाग पीछे ९५ गलत है यदि हमें किसी शब्दके तिजारती नामका पता इन पुस्तकोंसे भी न लगे तो हम सरकारी कर्मचारियोंसे खोजकर पता ले सकते हैं यदि फिर भी पता न चले तो मेरे

विचारमें वह शब्द या तो ज्योंका त्यों रख दिया जाय या उसके नीचे टिप्पणीमें उसका अंग्रेज़ी नाम दे दिया जाय तो पाठकोंको बड़ा सुभीता होगा। तिजारती शब्दोंकी खोजमें न केवल यही लाभ होगा कि हम शब्दोंके ठीक पर्याय दे सकेंगे प्रत्युत जो महानुभाव कोई पदार्थ बनाना चाहेंगे वे देशी चीज़ोंसे काम ले सकेंगे और इस प्रकार पदार्थोंके बनानेकी लागत बहुत कम हो जायगी। पारिभाषिक शब्दोंकी रचना आर्य-भाषामें बड़ी विचित्रतासे हो रही है जो शब्द जिसके जीमें आता है गढ़ लेता है यदि आज कैमिस्ट्रीपर एक आर्यभाषाका प्रेमी ६ पुस्तकें पढ़े तो उसको आक्सीजनके लिये ६ शब्द याद करने पड़ेंगे एक अम्लजन लिखता है दूसरा ऊषजन तीसरा आक्सीजन चौथा अदीजन पाँचवा प्राणवायु छठा वरुण। अब आप स्वयम् सोच सकते हैं कि आर्यभाषा कोई क्यों पढ़े और क्या पढ़े? यह ही नहीं कि एक पारिभाषिक शब्दकेलिये छः पुस्तकोंमें ६ पारिभाषिक शब्द मिलें किन्तु खेद तो तब होता है जब एक ही पुस्तकमें एकही शब्दकेलिये भिन्न भिन्न स्थानों पर भिन्न भिन्न शब्द पाये जायँ। प्रसिद्ध हिन्दी वैज्ञानिक विश्वकोषमें हमने एकही शब्दके पर्याय भिन्न भिन्न स्थानोंपर देखे हैं अब आप स्वयम सोच सक्ते हैं कि आर्य भाषाकी उन्नति इस अवस्थामें कैसे सम्भव है। मैं इस बातका पोषक नहीं कि अंग्रेज़ी भाषाके शब्द ज्योंके त्यों अपनी भाषामें न लिये जाँय और न इस बातका पोषक हूँ कि बिल्कुल नए शब्द जो देववाणी संस्कृतसे निकाले गये हो न बनाये जाँय बल्के मेरे विचारमें दोनों ही तरीके उत्तम हैं। किसी शब्दकी रचनामें पहिली क्रिया उपयोगी है किसीमें दूसरी, किन्तु आवश्यकता इस बातकी है कि जो एक शब्द किसी पारिभाषिक शब्दके लिये गढ़ा जाय अथवा ज्योंका त्यों लिया जाय वह फिर बदला न जाय। जिन लोगोंने अंग्रेज़ी नहीं पढ़ी वे यदि आपकी पुस्तकोंको पढ़ते हैं तो उनको क्या लाभ होगा जब कि एक शब्द नित्य प्रति बदलता रहे और जो लोग अंग्रेज़ी पढ़े हैं उनको बिना किसी कारणके एक ही पदार्थकेलिए कई कई शब्द याद करने पड़ेंगे। हां यह ठीक है कि जो पदार्थ भारतबर्षके बाज़ार-में आज दिन मिलते हैं उनके अंग्रेज़ी भाषाके पर्याय प्रत्येक हिन्दी जाननेवालेको आने चाहियें अन्यथा वह कोई पदार्थ बनाकर परीक्षा करना चाहे तो उन्हें सर्वदा ही अंग्रेज़ी दूकानोंका मोह-ताज बनना पड़ेगा और इसके अतिरिक्त दाम भी कई गुने देने होंगे।

६-मेरा विचार है कि सारे भारतवर्षके वैज्ञानिक लेखकोंकी तथा वैज्ञानिक विद्वानोंकी एक उपसभा बनायी जाय जिसमें संस्कृतके अच्छे विद्वान और पंडित भी सम्मिलित हों और यह कार्य इस सभाके सपुर्द कर दिया जावे। इस सभाका बिशेष कार्य किसी एक वैज्ञानिक विद्वानके निरीक्षणमें रक्खा जाय जो पत्र व्यवहार कर अन्य सभासदोंसे वैज्ञानिक पर्यायोंका निश्चय कर सके। इस समय गुजराती तथा बंगाली भाषामें वैज्ञानिक शब्दोंकी रचना बहुत उन्नति कर चुकी है इस कारण इन पुस्तकोंसे भी लाभ उठाया जाय और जो पर्याय इस भाषाके विद्वानोंने रचे हैं वे यदि संभव हो तो वैसे के वैसेही लेलिये जायँ। यह उपसभा अपना एक कोष छपवा कर प्रकाशित करे और इसकी शब्द रचना सब लेखकोंको ग्राह्य हो। ऐसा करनेसे शब्द रचनाकी कठिनाई और बेमेलपन सुगमता-से दूर हो सकेगा, वे लेखक भी जो पुस्तकें केवल धन कमानेके ख़यालसे ही बिना कुछ अनुभव किये लिखते हैं और किसी एक अंग्रेज़ी पुस्तकका अथवा कई पुस्तकोंका उल्था करना ही अपना कर्त्तव्य समझते हैं साहित्यकी कम सहायता नहीं करते। प्रत्येक देश और प्रत्येक भाषामें ऐसे लेखकोंकी बहुतायत है और प्रायः जब एक

भाषाका ज्ञान दूसरी भाषामें लाया जाता है तो सर्वदा ऐसे ही लेखक सहायता करते हैं। अंग्रेज़ी में जो पुस्तकें इस प्रकार लिखी गयी हैं उनको ऐसा करनेमें बड़ी सहायता मिलती रही है क्योंकि अंग्रेज़ीभाषामें इस प्रकारके कार्य बहुत-से उपस्थित हैं और प्रायः योरपकी तमाम भाषाओंके वैज्ञानिक शब्द एक हैं।

७ मेरे विचारमें वैज्ञानिक शब्दोंकी दो जातियां की जासकती हैं एक वह जिसमें विज्ञान-की किसी विशेष शाखाके पदार्थ या यंत्र सम्बन्धी शब्द हों दूसरी वह जिसमें वैज्ञानिक तिजारती शब्द आते रहें। कभी कभी इन्हीं दोनोंके ख़याल से एकही पदार्थके लिए दो शब्द अन्य भाषाओं-में पाये जाते हैं एक शब्द उस पदार्थका तिजारती नाम होता है दूसरा शब्द उस पदार्थका विशेष विज्ञान शाखा द्योतक होता है। उदाहरणकेलिये साधारण खानेका नमक नमक या लवणके नाम से प्रसिद्ध है यह इसका तिजारती नाम है किन्तु इसका वैज्ञानिक रासायनिक नाम हरित सोडा है जिसका अर्थ है कि नमक दो रासायनिक पदार्थोंका सम्मेलन है जिनमें एक हरिण गैस है जिसे अंग्रेज़ीमें क्लोरीन (chlorine) कहते हैं और दूसरा सोडा है। इस प्रकार दो नाम बहुतसे शब्दोंके हो सकते हैं और यही हमको बहुत पदार्थोंकी दशामें आर्यभाषामें भी करना होगा किन्तु इसके अतिरिक्त यदि रासायनिक लिहाज़ों से भी हम कई कई नाम एक पदार्थके रचें तो कितनी कठिनाइयाँ होंगी।

८—अंग्रेज़ीभाषामें नए आविष्कारोंके बतलानेकेलिये नए शब्दोंके रचनेकी एक शैली सी बन गयी है और यदि कोई आविष्कार किया जाता है तो उसी शैलीके अनुसार शब्द रचना की जाती है इस शैलीसे नियम बद्ध शब्दरचना करनेमें न केवल सुगमतासे शब्द ही रचे जाते हैं प्रत्युत पाठक जिन्होंने उन शब्दोंको कभी सुना भी न हो उस पदार्थ अथवा आविष्कार-का अनुमान कर सकते हैं। शब्द और पदार्थ-का आपसमें घनिष्ट संबंध है और यदि शब्द रचना की कोई नियत शैली हो और रचनाके कोई विशेष नियम हों तो अमुक स्थानपर अमुक नाम वाला वैज्ञानिक पदार्थ व आवि-ष्कार किस प्रकार वा जातिका होगा इसका सुगमतासे ही पता लग जायगा। वे नियम क्या हों वह शैली किन नियमोंपर अवलंबित हो? इसका उल्लेख इस छोटेसे लेखमें नहीं किया जासकता। मेरे विचारमें अंग्रेज़ी भाषा-में अनेक पुस्तकोंमें उस शैली या उन नियमोंका बर्णन है जिस पर अंग्रेज़ी शब्दोंकी रचना निर्भर है जैसे सलफ़रस सलफ़ियूरस, सलफ़ियुरिक, सलफैट, सल-फाइड, सलफाइट, बाइसलफैट इत्यादि। इस प्रकार यदि हम भी सलफर शब्दको ज्यों का त्यों रक्खें अथवा इसकेलिये और कोई शब्द रचना करें तो हमको अपने पाठकोंको केवल यही ज्ञात करा देना होगा कि सलफर शब्द अथवा जो कोई और शब्द इसके स्थानमें रचा गया हो अमुक पदार्थका बोधक है। इसी शब्दमें उपसर्ग और प्रत्यय लगाकर अनेक शब्द बनाये जा सकते हैं इस शैलीका कुछ अनुसं-धान कर नागरी-प्रचारिणी-सभा-काशीने मार्ग दिखला दिया है और हम सबको उसीपर चलना योग्य है किन्तु वह केवल शब्द रचनामें प्रयास मात्र था और इसी कारण उसमें विशेष नियमोंके जोड़नेकी आवश्यकता है। अलबत्ता रसायन शास्त्रके जो मूल तत्व हैं उनमें और लेखकोंने अनेक परिवर्तन किये हैं जो बड़े खेद की बात है। यह अच्छा है कि हम सब मिल कर किसी विशेष पदार्थकेलिए कोई विशेष शब्द नियत करें किंतु जब यह विशेष शब्द नियत हो जाय तब उसमें किसी प्रकारका परिवर्तन करना सब किये कराये पर पानी फेरना है। रही अन्य वैज्ञानिक शाखा सम्बंधी शब्दोंकी

रचना उनके लिये क़रीब क़रीब सभी शाखा सम्बंधी शब्द संस्कृत विज्ञानमें भरे पड़े हैं केवल उनकी खोज करना हमारा कर्तव्य है किन्तु यदि हम खोज न करके नए शब्द रचते हैं तो बड़ी भारी गलती करते हैं। जो लोग किसी विज्ञानकी शाखाको आर्यभाषा द्वारा पढ़ाते हैं उन्हें आरम्भमें कठिनाइयां अवश्य पड़ती हैं किन्तु यदि वे खोजकर देववाणीका सहारा लेकर कार्य करते हैं तो सब कठिनाइयां बड़ी सुगमतासे छिन्न भिन्न हो जाती हैं।

६– तिजारती शब्दोंकी रचनामें अथवा पुराने ही पर्याय शब्द लिखनेमें बड़ी सावधानी की आवश्यकता है हमने कुछ उदाहरण देकर जो आपत्ति उपस्थित होती है उसका प्रारम्भमें ज़िक्र किया है। बहुतसे पदार्थ भारतवर्षमें दैवयोगसे उपस्थित हैं। मेरे विचारमें तो कोई भी खनिज अथवा बानस्पतिक पदार्थ ऐसा नहीं है जो किसी न किसी रूपमें भारतवर्षमें न पाया जाता हो। यदि यह बात भी न मानी जाय कि सब पदार्थ पाये जाते हैं तो भी यह अवश्य मानना पड़ेगा कि तिजारतमें जिन बानस्पतिक अथवा खनिज पदार्थोंकी आवश्यकता होती है वे प्रायः बहुत ज़ियादा भारतवर्षमें मिलते हैं। इन सब पदार्थोंकेलिये शब्द उन स्थानोंमें अवश्य होंगे जहां वे पाये जाते हैं यदि हम उन्हें नहीं जानते तो हमारी भूल है। हमारा कर्तव्य है कि हम इन शब्दों की खोज करें और उन्हीं का प्रयोग करें। इस खोजमें हमको अवश्य कुछ असुविधा होगी किन्तु यदि भारत निवासी यह चाहते हैं कि समस्त भारत देशकी एक भाषा आर्यभाषा हो तो हमारे लिये यह कोई कठिन कार्य न होना चाहिये कि हम अनेक स्थानोंके विद्वानोंकी सहायतासे सुगमता से ही इन शब्दोंकी खोजकर सकें। यदि गुरूकुल जो आर्यभाषा तथा देववाणीका केन्द्र है इस कार्यमें अग्रसर हो काम करे तो सब समाज इस कार्यमें अवश्य सहायता देंगे क्योंकि इस कार्यके करनेमें केवल थोड़ेसे कष्टकी आवश्यकता है। धन आदिके व्यय करनेकी ज़रूरत नहीं हैं, अलबत्ता बहुतसे पदार्थोंको ठीक ठीक जाननेकेलिये और विशेष कर खनिज पदार्थोंके पर्याय जाननेके लिये यह भी आवश्यक होगा कि अन्य देशके नमूनोंसे इनका मुक़ाबिला किया जाय तथा विश्लेषण द्वारा इनकी वास्तविक दशाका पता लगाया जाय। कभी कभी बहुतसे शब्दोंकी खोजमें परीक्षण करना पड़ेगा, और उसपर कुछ धन का व्यय भी होगा किन्तु यदि गुरुकुल जैसा महाविद्यालय अपने परीक्षाभवनमें इस कार्यको करेगा तो अधिक धनकी भी आवश्यकता न होगी। इस प्रकार खोजके पश्चात यदि हम वैज्ञानिक शब्दोंके पर्याय निश्चित करेंगे तो उसका प्रभाव चिरस्थायी होगा और बहुतसे अंग्रेज़ीके वैज्ञानिक विद्वान जो अब आर्यभाषामें शब्दोंके अभावके कारण ही अपने प्रभावको पुस्तक द्वारा प्रकट नहीं करते उनको ऐसा करनेका साहस होगा। गुरुकुल आदि महाविद्यालयोंमें जहाँ आर्यभाषाके माध्यमका महत्व समझा जाता है आर्यभाषामें शिक्षा देना सुगम हो सकेगा।

मैं ऊपरके विचार आप लोगोंकी सेवामें उपस्थित कर यह आशा करता हूँ कि आप उनके अनुसार इस शब्द रचनाकी कठिनाई को शीघ्र दूर करनेका प्रयत्न करेंगे और परमात्मासे प्रार्थना है कि वह हमें विद्याकेलिये प्रेम और विज्ञानकेलिये साहस प्रदान कर हमें इस योग्य करे कि हम भी और देशोंके समान नए नए आविष्कार करनेको समर्थ हों और विद्योन्नति कर परमात्माके प्राकृतिक नियमोंका कौतुक देख सकें।

---

# विस्फोटकोंका इतिहास*

यूरुपीय महायुद्धके आरम्भ होनेपर, यदि हम अपने रण-कुशल शत्रु ( जर्मन ) से जिसके पास सिपाही, तोप, गोला, बारूद, विस्फोटक, आदिकी कमी न थी, बराबरकी चोट न ले सके, तो इसमें हमारी हतक किसी तरहसे न थी। वास्तवमें यह हमारी बढ़ी हुई सभ्यताका सबूत है। शत्रुका आगे बढ़ना जिस मुस्तैदीसे रोक दिया गया है, हमारी युद्ध कौशल और वीरताकी यादगार रहैगी। इस रुकावटसे इस देशको तथा और देशोंको यह लाभ पहुँचा कि युद्ध-सामग्री इकट्ठी करनेका अवसर उन्हें मिल गया।

इञ्जिनियरीमें जो काम शीघ्रतासे कराना पड़ता है, सदैव सर्वोत्तम मनुष्यके हाथमें छोड़ दिया जाता है, और उसे हर तरहकी सहायता दी जाती है। इसी तरह सारे राज्ययंत्रकी ओरसे काम करनेकेलिए मन्त्रिगण चुन लिये जाते हैं।

शत्रुकी असभ्य कुरीतियोंने हेग सम्मेलनको असफल सिद्ध कर दिया। वहाँ एकत्रित हुई जातियोंमेंसे एकने सब प्रतिज्ञाएँ पददलित कर दीं।

विषैली गैसोंका, विषैले गोले और गोलियोंका प्रयोग करना, आत्मसमर्पण करनेपर भी विश्वास-घात करना, कैदियों और न लड़नेवालोंपर निर्दय व्यवहार इत्यादिपर विचार उन सज्जनोंकेलिए छोड़ देना चाहिए जो उचित समयपर इस विषयका प्रतिपादन योग्यतासे कर सकेंगे।

ऐसे महान युद्धकी-जिसका परिणाम सहनशीलतापर या सर्वनाश होनेपर निर्भर है--बीचकी अवस्थाओंका निर्णय केवल युद्धकी सामग्री जुटानेकी शक्ति करेगी। इसलिए यह कहा जा सकता है, कि यह यंत्रों, और गैसोलीन ( पिट्रोल नामक मिट्टीका तेल जो इंजनोंमें काममें लाया जाता है ) और विस्फोटकोंकी लड़ाई है।

युद्ध सामग्रीके आविष्कार और संवृद्धिका इतिहास अब बहुतसे लेखकोंके परिश्रमसे हस्तगत हो गया है, और सम्भव है कि कई ऐसे विस्फोटकोंके विषयमें जिनपर हमारी कुशलता निर्भर है, कुछ यहाँ कहना अवश्य ही मनोरंजक होगा।

विस्फोटक तीन प्रकारके होते हैं---

१. उड़ानेवाले, ध्वनिकारक (Fulminates)
२. प्रेरक, संचालक ( propellants )
३ विदारक, ( fillers )

पहली कक्षाके विस्फोटकोंके सम्बन्धमें सं० १८५६ वि० तक कोई खोज नहीं की गयी, यद्यपि सं० १७१६ वि० में सोने और चांदीके फल्मीनेट्स मालूम थे। इस वर्षमें एडवर्ड हौवर्डने रायल सोसाइटीके सामने एक निबन्ध पढ़ा, जिसमें पारेके फलमीनेट का वर्णन किया था। हौवर्डके प्रयोगोंमें कई बार विस्फोटन हुए। एक अवसरपर उसने गाढ़ा गंधकका तेज़ाब थोड़ेसे पारद फलमीनेटपर डाला, इससे बड़ा भारी विस्फोटन हुआ, उसके समस्त यंत्र टूट गये और वह घायल हो गया। उसने लिखा है कि ऐसी घटनाओंसे उसको रुचि और रासायनिक विषयों की ओर फिरती है। परन्तु इस घटनाके पीछे भी उसने फलमीनेट निहाईपर रखकर हथौड़ेसे चोट दी, जिससे कानके परदे फाड़नेवाली आवाज़ हुई। फिर भी उसने ३४ ग्रेन फलमीनेट एक ऐसी बंदूकमें भरा, जिसमें ६८ ग्रेन बारूद भरी जाती थी। चलानेपर नली फट गयी और टुकड़े टुकड़े उड़ गयी।

* Presidential address before the association of Engineers incharge by FRANK BAILEY, M. Inst. G, E.

Chemistry रसायन ]

सं० १८८० वि. में जोयस कंपनी अच्छी 'टोपियाँ' बनाने लगी और इस समयसे छोटे छोटे हथियारोंमें सुधार होने लगा। यह आश्चर्य्य का विषय है कि हमारी फ़ौज में स्नाइडर रैफिलका प्रयोग जिसमें कारतूस भरते हैं-सं० १६२० वि० में हुआ।

प्रेरकों और विदारकोंका इतिहास पिछले पचास वर्षोंका ही है। राजर बेकनने पहले पहल इंगलैंडमें १२६६ वि० में बारूद बनायी पर उसके बाद ६०० वर्षसे ऊपर बीते कि किसी ने इस विषयमें उन्नति वा उसकी प्रतिद्वंद्विता न की। उसकी विधिमें कोई संशोधन नहीं हुआ। उसने अपनी विधि गुप्त लिपिमें लिखी, जिसका कारण उसने यह बतलाया कि इसका ज्ञान मनुष्य जाति को हानिकारक होना सम्भव है।

बड़ी बड़ी तोपोंके बनानेकी कठिनाईसे बारूदके संशोधनमें रुकावटें पैदा हुईं, जब यह दिखलाया गया कि दानेदार बारूद (carved) बारीक पिसी हुई बारूद (serpentine powder) से अधिक बलवती होगी, तो प्रयोग करनेपर तोपें फट गयीं। जब बड़ी और मज़बूत तोपें बनने लगीं बारूदका दाना भी बढ़ने लगा, यहां तक कि छोटी छोटी सिलें जिनमें बहुतसे छेद होते थे काममें आने लगीं। कई एक सिलें एक बार काममें लायी जाती थीं। तदनन्तर छेदीले त्रिपार्श्व और बेलन बनाये जाने लगे, जो तोपों के छेद और लम्बाईके अनुसार ही गैस पैदा करते थे।

बारूदमें दो ऐब थे, एक तो यह कि बहुत धुआं देती थी, दूसरे तोपें जल्दी ख़राब हो जाती थीं। सं० १८८६ वि० में नानसी निवासी अध्यापक ब्रेकोन्नोटने यह मालूम किया कि स्टार्च (सत्त या मंड), लकड़ीके रेशे और कई प्रकारके गोंदोंको गाढ़ा शोरेका तेज़ाब एक नये रूपमें बदल देता है जिसका उसने जायलोइडीन (xyloidine) नाम रक्खा। इस पदार्थको आज कल नत्रित मंड (nitro starch) कहते हैं। उसने देखा कि यह पदार्थ बड़े वेगसे आग ले जाता है, जिसपर उसने यह विचार प्रकट किया कि यह अग्नेय अस्त्रोंके काममें आ सकता है।

बेल (Bale) नगरके रसायन शास्त्रके अध्यापक शोइन बैन (Schönbein) के भाग्यमें था कि वह गनकाटन (अग्नेय रुई) का प्रयोग संसार को बतलाये। उसपर यह आक्षेप किया गया कि उसने ब्रेकोन्नोटकी खोजोंसे लाभ उठाया, परन्तु यह बात झूठ मालूम होती है, क्योंकि उसके प्रयोगोंके लेखे मौजूद हैं, जिससे मालूम होता है कि उसने पहले ओज़ोन (ozone) बनाया इसके पीछे नत्रजन और ओषजनके यौगिक और अन्तमें रुई और शकर-पर शोरेके तेज़ाबका प्रयोग किया। वास्तवमें वह वीर पुरुष था, क्योंकि छोटे छोटे हथियारों में अग्नेय रुई काममें लाकर उसने पहली वार सं१६०२ वि.में तोपमें गोला- और अग्नेय रुई भरकर चलाया। तब उसने ड्यूमा (Dumas) को लिखा: "इस अद्भुत वस्तुकी बढ़ी चढ़ी विस्फोटन शक्तिके अलावा और तरहसे भी यह सर्वोत्तम बारूदको मात करती है। सुरंग लगाने के और तोपके जितने प्रयोग मैंने किये उनसे यह प्रतीत होता है कि इसका एक पौण्ड साधारण बारूदके २ से ४ पौण्ड तकका काम देता है। यह भी लिख देना उचित है कि विस्फोटनके पीछे इससे कुछ बच नहीं रहता, और धुआं भी नहीं होता। इसके बनानेमें तनिक भी जोखिम नहीं है और न बहु मूल्य सामानकी आवश्यकता है।" यह उनका कहना सच नहीं जान पड़ता क्योंकि पहला अग्नेय रुईका फेवरशाम पर कारखाना, जो लालाजोनहाल और पुत्र वर्गने खड़ा किया बड़े हानिकारक बिस्फोटनसे उड़ गया और २० जाने गयीं।

इसके पीछे फ्रांस और आस्ट्रियामें भी ऐसी

घटनाएं हुई, जिनके कारण अग्नेय रुईका बनाना सोलह वर्ष तक छोड़देना पड़ा। इसी बीचमें ट्यूरिन नगर निवासी एसकेनिओ सोब्रेरो (Ascanio Sobrero) ने नत्रित-ग्लिसरीनका सं१९०३ वि.में आविष्कार किया और मालूम किया कि इसमें तीखा मीठा और सुगंधित स्वाद है। और इस पदार्थकी बहुत थोड़ी मात्रा जीभपर केवल रखनेसे [निगलना और खाना दरकिनार] सिरमें बड़ी भड़क और दर्द होता है और अङ्गोंमें कमजोरी मालूम होती है। और कई तेज़ विस्फोटकोंकी नाई इसका आन्तरिक प्रयोग मित्रोंके लिये और बाह्य प्रयोग बैरियोंके लिये किया जाता है। (समुद्ररोग, दमा आदि रोगोंमें यह औषधि दी जाती है।)

इसकी भयानक प्रकृतिका ज्ञान शीघ्रही हो गया क्योंकि यद्यपि जलती हुई दियासलाई तक इसमें डुबोयी जा सकती है तौ भी यदि इसकी एक बूँद स्याहीसोखके ऊपर डालदी जाय और हथौड़ेकी चोट दी जाय तो, विस्फोटन होता है।

अलफ्रेड नोबेलने (Alfred Nobel) यह बात मालूम की कि पारद फ़ुलमीनेटकी टोपीसे यह द्रव उड़ाया जाय तो धड़ाका और विस्फोटन बड़े ज़ोरका होगा। ऐसा प्रतीत होता था कि वह इस द्रव पर मुग्ध हो गया और स्टाकहोम (Stockholm) के पास हेलेनबोर्ग नगर (Helenbarg) में सं१९१८ वि०में इस द्रवके बनानेका कारखाना खोला। दो वर्ष पीछे यह कारखाना एक बार विस्फोटन होनेसे नष्ट हो गया और इस घटना से कई आदमी मरे जिनमें नोबेलका भाई भी था।

फिरभी हतोत्साह न होकर नोबेलने शीघ्रता से स्वीडन और जर्मनीमें इसके कारखाने खोले। थोड़ेही दिन पीछे उसे यह स्वीकार करना पड़ा कि नत्रित-ग्लिसरीन द्रवावस्था में काममें नहीं लायी जा सकती। उसने यह सोचा कि किसी पदार्थ को इसमें खूब डुबो रक्खें जहां तक वह पदार्थ इस द्रवको पी सके पीने दें और वह काममें लाया जाय। बहुत पदार्थोंकी परीक्षा करनेके पीछे उसने कीसलगहर (kiesulguhr) नामकी मिट्टी छांटी। इस मिट्टीको वह उन बक्सोंके भरनेके काममें लाया करता था जिनमें इस द्रवके पीपे रखकर बाहर भेजे जाते थे।

[नोट—फास्फोरस, सोडियम आदि वस्तु जब कहीं भेजी जाती हैं तो इनकी शीशियां टीनके बक्सोंमें राखमें रख दी जाती हैं, जिसमें शीशी टूटभी जाय तो यह चीज़ें हवाके सम्पर्क से भभक न उठें। राखको यह जला नहीं सकतीं]

इस नये पदार्थका नाम डैनामैट रखा। यह तोपख़ानेके काममें तो नहीं आता था, पर तौभी सं१९२६ से सुरंग आदि उड़ानेमें काममें आने लगा। खाइयोंमें ऐसा प्रयोग होने लगा। इसके अनन्तर विस्फोटक जिलेटीन (gelatine), जेलिग्नाइट gelignite और बाल्लैस्टैटballastite का आविष्कार हुआ।

---

## पानी छिड़कनेसे ठंढक क्यों होती है ?

[ ले० महावीरप्रसाद, बी. एस्-सी., एल्. टी. ]

गरमीके दिनोंमें आंगन इतना गरम हो जाता है कि रातको सुखपूर्वक सोनेकेलिए यह आवश्यक होता है कि जिस समय आंगनसे धूप हट जाय उसमें पानी छिड़कें, नहीं तो सोनेके समय गरमी असह्य हो जाती है। भारतवर्षमें पानी छिड़कनेकी रीति इसी कारण प्रचलित है और बच्चेसे लेकर बूढ़ेतक यह जानते हैं कि पानी छिड़कनेसे ठंढक होती है। फिर इस साधारण बातकी विज्ञानमें चर्चा चलानेकी आवश्यकता क्यों हुई ? इसका उत्तर केवल यही है कि जो बात साधारण होनेसे तुच्छ प्रतीत होती है उसमें भी विज्ञानका कोई

गूढ़ तत्त्व छिपा रहता है। प्रायः सभी वैज्ञानिक का मत है कि विज्ञानका पूर्ण ज्ञान प्राप्त करनेकेलिए साधारण घटनाओंपर भी वैज्ञानिक नियमोंके साथ विचार करना बड़ा आवश्यक है। वैज्ञानिक नियम हैं अवलोकन, तुलनात्मक विचार, ज्ञात नियमोंका प्रयोग, इत्यादि। यह जाननेके साथ साथ कि पानी छिड़कनेसे ठंढक होती है, अनुभवी, समझदार स्त्रियां और पुरुष यह भी जानते हैं कि जिस समय पानी छिड़का जाता है उस समय गरमी बड़े ज़ोरसे ऊपर उठती है। यही समझ कर वह बेसमझ बच्चोंको मना करते हैं कि पानी छिड़कते समय आंगनमें न खेलें नहीं तो लू लग जायगी।

इन बातोंसे यह पता चलता है कि पानी छिड़कनेसे गरमी ऊपर चली जाती है परन्तु कैसे जाती है और ऐसी बात और कहीं होती है या पानी छिड़कनेके साथ ही, इसी पर थोड़ासा विचार करना इस लेखका उद्देश्य है।

यह प्रत्यक्ष है कि छिड़कनेपर पानी कुछ तो उड़ जाता है कुछ पृथ्वीमें चला जाता है और कुछ बह जाता है। पहले जो पानी पृथ्वीमें चला जाता है वह भी बहुत जल्द उड़ जाता है। जहां पानी नीचे नहीं जाने पाता जैसे पक्की गच वहां जल्दी बहने लगता है और वहांकी गरमी भी देर में निकलती है परन्तु जहां पानी पृथ्वीमें घुसकर भी उड़ता है जैसे भुरभुरी भूमि वहां ठंढक जल्दी होती है। इससे यह अनुमान होता है कि गरमी भगानेकेलिए पानीका उड़ना ही आवश्यक है उसके बह जानेसे उतना लाभ नहीं है। इसके प्रमाणमें केवल इतना कह देना बस है कि नहाकर गीले बदन हवामें खड़ा होने वा दौड़नेसे पानी जल्दी जल्दी उड़कर ठंढक पैदा करता है जिससे कभी कभी सरदी लग जाती है और इसीलिए जहां बहुत हवा चलती हो वहां खुली जगहमें नहानेसे बड़ी हानि होती है। यदि ठंढी हवामें नहाकर गीले बदन खड़ा रहे तो सरदी, और गरम हवामें नहावे तो लू लग जाती है यह बात अपढ़ भी अनुभवके कारण जानते हैं। इसीलिए गरमीके दिनोंमें मध्यान्हके बाद बहुत कम लोग नहाते हैं क्योंकि मध्यान्हके बाद ही लू चलनेका समय होता है। ऐसे समय नहानेसे, पहले तो बदनका पानी उड़नेसे वह बहुत ठंढा हो जाता है क्योंकि पानीके साथ बदनकी गरमी उड़ जाती है, फिर ठंढे बदनपर बहुत गरम हवाके लगनेसे वह असाधारण गरम हो जाता है इसीको लू लगना कहते हैं। यदि ऐसे स्थानमें नहाया जाय जहां न तो गरम और न ठंढी हवाका झोंका जासके वहां लू वा सरदी कुछ न लगेगी। इससे भी यही सिद्ध होता है कि पानीके उड़नेसे ठंढक पैदा होती है।

लोग यह भी जानते हैं कि बाहरसे आकर एकबारगी कपड़ा न उतार देना चाहिए नहीं तो गरमी सरदी लग जायगी। इसका कारण यह है कि बाहरसे आकर रुक जानेसे गरमी पैदा होती है अर्थात् चलनेसे जो बल उत्पन्न होता है वह रुकनेपर तापके रूपमें प्रगट हो जाता है जिससे पसीना होता है। यदि यह पसीना धीरे धीरे न सूखे और कपड़ा उतार देनेसे एकबारगी सूखे तो बदन असाधारण ठंढा होनेसे सर्दी खा जायगा।

पानीके उड़नेसे गरमी उड़ जाती है वा पानीकी भाफके साथ गरमी चली जाती है दोनों तरह कहनेमें कोई अशुद्धि नहीं तो भी वैज्ञानिक यही कहते हैं कि पानी की भाफ के साथ गरमी चली जाती है और जब भाफसे भी गरमी निकल जाती है वह रातके समय पानीके रूपमें फिर आजाती है इसी जमी हुई भाफको ओसके नामसे पुकारते हैं।

वैज्ञानिकों ने यह भी जान लिया है कि एक सेर पानीको उबालकर भाफके रूपमें बदल देनेकेलिए उतनी गरमीकी आवश्यकता पड़ती है

जिससे गरमीके दिनोंमें १० सेर पानी इतना गरम किया जा सकता है कि वह उबलने लगे।

---

## लल्लू तिवारी और बिजलीसे बातचीत

[ ले० गंगा प्रसाद बाजपेयी, बी. एस-सी ]

लल्लू तिवारी अपने गांवके प्रतिष्ठित पुरुषोंमें गिने जाते हैं। उनके पिता अच्छे मालदार थे पर नीलके व्यवसायमें उन्हें यकबारगी ५० हज़ारका टोटा पड़ गया। कौड़ी कौड़ी जोड़कर घासीरामने एक लाख रुपया जमा कर लिया था। मारे लोभके उन्होंने अपनी आयुभरमें तीन गाढ़ेकी मिरज़इयोंको छोड़ कभी कोई कपड़ा नहीं बनवाया, गाँवके चमारको जब उधार लेनेको रुपयाकी ज़रूरत पड़ती तो वह कभी कभी एक जोड़ी चमारू जूता घासीरामके नज़र कर देता था। बस इसीमें बाप बेटा गुज़ारा कर लेते थे। घासीरामके घर कभी किसीने सांझ को चूल्हा जलते नहीं देखा था। मारे कृपणताके उन्होंने अपने पुत्र लल्लूको मदर्से तक नहीं भेजा, घर पर ही रामायण बांचने भरको हिंदी पढ़ा दी थी।

फिर भला घासीराम इस बज्रपातको कैसे सह सकते? एक दो नहीं यकबारगी ५० हज़ार रुपये उनके हाथसे निकल गये। यकायक सिरपर बिजली टूट पड़ी, घासीरामको बड़े बेगका ज्वर आ गया। ज्वरके आते ही सन्निपातने घर दबाया। कई दिनों तक अपनी खाटके चारों ओर लाल लाल आँखें किये, दांत पीसते हुए घासीरामकी विकट मूर्ति कभी कभी नाचती देख पड़ी। अँगने चमारने बड़े जन्तर मन्तर किये, पीपलपरके भूतको चना और दूध माना पर कुछ फल न हुआ। घासीरामको ऐसी 'बेआरि लग गई' कि उसने उन्हें लेकर ही छोड़ा। बेचारे घासीराम एक बेटा, एक बेटी, और अपनी विधवा स्त्रीको छोड़ इस असार संसारसे कूच कर गये।

Electricity बिजली ]

(२)

घासीराम जैसे कृपण थे लल्लू वैसेही मौजी निकले। पर अपनी माताके बहुत समझानेसे वे कुछ दिनोंसे ढंगपर आगये हैं और अब लेन देन करने लगे हैं। तौ भी नित सांझको लल्लूके घर भांग छाननेको बड़ी भीड़ इकट्ठी होती है। लल्लू जब नशेके झोंकमें आते हैं तो बड़ी झक लगा देते हैं। अदालतकी बातें उन्हें बड़ी पसंद आती हैं जब देखिए तो मुक़द्मोंका ही झर्रा सुन पड़ता है। इसीलिए गांववाले लल्लूको बालिस्टर कहकर पुकारा करते हैं।

बालिस्टर गांवके दरोगा साहेबकी हाजिरी दिनमें एक बार ज़रूर बजा आते हैं। जब कभी किसी मुक़दमेमें गवाहोंकी ज़रूरत पड़ती तो लल्लू बालिस्टर पुलिसकी ओरसे सबसे पहले गवाही देनेको मौजूद हो जाते। इसके अतिरिक्त केहरी सिंह कांस्टेबलको रोज भांग छनाते और दूध भी पिलाते हैं। इन सब कारणोंसे उनसे और पुलिसवालोंसे अच्छा मेल हो गया है और गांवमें उनकी प्रतिष्ठा बहुत फैल गयी है।

लल्लू बालिस्टरके दरोगा बाबू दयारामकी बदली आगरेको हो गयी। बालिस्टर साहेब भी उन्हें पहुंचाने आगरे आये। एक दिन बालिस्टर साहेब भी कोतवालीमें पड़े सो रहे थे। कोई १२ बजे होंगे कि इतनेमें उन्हें एक घंटी की आवाज़ सुनाई पड़ी। सुनते ही इंस्पेक्टर दयाराम खाटपरसे कूद पड़े। लल्लू भी उनके पीछे पीछे चले गये। लल्लूने देखा कि इंस्पेक्टर साहेबने रस्सी लगी हुई एक चुँगली अपने कानमें लगा ली और एक वैसी ही चुँगली मुँहके आगे लगाकर चिल्लाने लगे।

"दौड़ो! दौड़ो! अभी पीछा करो। पचास हज़ार रूपये गये। देखो जान न निकलने पाये। मारना मत!"

उस अकेले कमरेमें पागल आदमियोंकी तरह चिल्लाकर इंस्पेकृर साहेब लाल लाल आंखें कर खाटके आस पास बड़े जोरसे टहलने लगे। लल्लू इस भयावनी सूरत को देखकर डर गया। उसकी आंखोंमें सन्नाटा छा गया, उसके अपने पिताके मृत्यु-समयकी विकराल मूर्ति सामने नाचने लगी। भूत! भूत! चिल्लाकर लल्लू धड़ामसे ज़मीनपर गिर पड़ा।

(३)

सुबह होनेपर जब लल्लूने अपनी आँख खोली तो इंस्पेक्टर दयारामको अपने सामने मुसकराता पाया। इंस्पेक्टर साहेबका सदा रुष्ट रहनेवाला मुख इस समय शांत था, आग बरसानेवाली उनकी आंखें दया वर्षा कर रहीं थी। आजतक इंस्पेक्टर साहेबके मुखसे कोई भी शब्द बिना गालीके न निकला था पर आज उन्होंने बड़े मधुर स्वरसे पूछा "कहो भाई लल्लू क्या हाल है?" लल्लू नवजात बालककी तरह अपनी आंखोंसे चारों ओर घूर घूरकर देखने लगा पर उसके मुखसे कोई शब्द नहीं निकला।

रात को जब लल्लू बेहोश हुआ तब उसकी बड़ी बुरी हालत हो गयी थी, उसके शरीरसे बड़े बेगसे पसीना निकल रहा था, उसका हृत्पिंड हथौड़ेकी तरह धम धम करता हुआ नीचे ऊपर गिरता था। लल्लूकी यह दशा देखकर बेचारे दयारामके मिज़ाज़ ठिकाने आ गये। घबड़ाकर उन्होंने सिविल-सर्जनको टेलीफ़ोन किया। साहेब भी थोड़ी ही देरमें मोटर धकधकाते आगये।

लल्लूकी परीक्षा हुई। साहेबने कहा कि यदि यह रात भर जीता रहा तो बच जायगा। बड़ी सावधानीसे इसकी सुश्रूषा करनी चाहिए और समय समयपर इसे औषधि देते रहना चाहिए। चलते समय डाकृर साहेबने इंस्पेकृर साहेबको एक बड़े जोरकी डांट बतायी। उन्होंने कहा "मालूम होता है कि तुमने रातके बारह बजे बुलाकर इस ग़रीब आदमीके हृदयको बड़ा भारी धक्का पहुंचाया है। यदि इसकी जान चली गयी तो तुम्हारी भलाई नहीं है"। इंस्पेकृर साहेबने लाख समझाया कि रोगी कोई अपराधी नहीं है उससे इंस्पेकृर साहेबको कोई द्वेष नहीं है पर साहब कब माननेवाले थे। एक तो नशेमें चूर और दूसरे एक बजे रातको दो मील आना, साहेब तो वैसे ही झल्लाये बैठे थे यह रङ्गत देख कर उनका पारा और भी चढ़गया।

यही कारण है कि आज इंस्पेक्टर दयाराम बड़े शान्त और सरल स्वभावके जान पड़ते हैं। वैसे न मालूम कितने आदमियोंकी जानें उनके आंखोके सामने गाली खाते खाते बटेरोंकी जानकी तरह उड़गयीं पर किसीने इंस्पेक्टर साहेबको मरजाने पर भी गालियोंकी बौछार बंद करते आजतक नहीं देखा था।

लल्लूको जो स्मृति-भंग रोग हो गया था वह कई महीनोंके उपचारके बाद ठीक होगया। लल्लूको अब पुरानी बातें एक एक करके याद आने लगीं। डाक्टर साहेबको भय था कि रातवाली उस घटनाकी ठीक ठीक याद आते ही किसी समय लल्लू फिर न बीमार पड़ जाय इसलिए उसके भ्रम मिटानेका भार डाक्टर साहेबने आगरा कालेजके भौतिकशास्त्रके अध्यापकके सर छोड़ दिया।

(४)

आज आगरा कालेजमें पं० शालिग्राम जी-का एक व्याख्यान "बिजलीके कुछ चमत्कारों पर" है। इस व्याख्यानमें इंस्पेक्टर दयाराम लल्लूको लेकर पधारे और आगेकी बेंचपर आ विराजे। व्याख्याता महोदयके व्याख्यानका सारांश इस प्रकार है।

जब हम सुखायी हुई शीशा, गंधक या चपड़ेकी छड़ीको रेशम, ऊन या बिल्लीकी सूखी खालपर रगड़ते हैं तो इन छड़ियोंमें काग़ज़के छोटे छोटे टुकड़े और घास फूसके सूखे तिनकोंको पकड़नेकी शक्ति आजाती है। यह शक्ति उसी प्रकारकी होती है जैसे चुम्बक-में लोहेको खींचनेकी। पर चुंबक केवल लोहा ही खींच सकता है किंतु इस प्रकारके उत्ते-जित पदार्थ प्रत्येक पदार्थको। यह शक्ति बिजली है। कुछ पदार्थ ऐसे हैं जिनमेंसे हो कर बिजली चली जाती है जैसे लोहा, तांबा इत्यादि, पर कुछ ऐसे हैं जिनसे वह निकल कर भाग नहीं सकती जैसे रेशम, आबनूस, लकड़ी इत्यादि। घर्षणसे इस प्रकार बिजली उत्पन्न करनेकी अनेक कलें हैं, व्याख्याता महोदयने उनमेंसे एक पहियादार यंत्र घुमा-कर बिजली उत्पन्न की। यह बिजली पहियेके सामने एक दूसरेसे कुछ दूरीपर लगे हुए पीतलके लड्डुओंपर आकर बैठ गयी। ज्यों ज्यों पहिया अधिक वेगसे घुमने लगा लडडुओं परकी बिजलीकी मात्रा भी बढ़ती ही गयी। थोड़ी ही देरमें यह मात्रा इतनी अधिक हो गयी कि फिर लड्डुओंपर न बैठ सकी। हवाको चीरती हुई, चटचट करती हुई, प्रकाश फैला कर बिजली एक लड्डूसे दूसरे लडडूकी ओर जाने लगी।

लल्लू चिल्ला उठा "क्यों महाराज, क्या यह आकाशकी ही बिजली है ?" व्याख्याता महोदय ने कहा हां आकाशकी बिजली और इसमें कुछ भेद नहीं है। वह परमेश्वरके बड़े कारख़ानेमें पैदा हुई बिजली है और यह मनुष्यके छोटे कारखानेमें। बड़े बड़े बादल आकाशमें चढ़ते समय हवासे रगड़ खाते हैं और उनमें बिजली उत्पन्न हो जाती है।

इस प्रकारकी बिजली बिना बड़े भारी दबावके अपना स्थान परिवर्त्तन नहीं करती। पर यदि हम एक कांचके बरतनमें गंधक-का तेज़ाब भरदें और उसमें एक जस्तेका तथा एक तांबेका चौकोर मोटा पत्तर डालें और इन पत्तरोंके सिरोंको पेंचसे कस पेंचके सरसे तांबेके तार लगादें तो इन तारोंके जोड़-देनेपर बिजली तारोंमें होकर दौड़ने लगेगी।

लल्लूने कहा "यह बात हम कैसे मानलें ?" पं० शालग्रामने "कहा देखो आपसमें मिला देने पर तार गरम होजाते हैं और यदि हम तारोंके बीचका अंतर बहुत थोड़ा रक्खें तो एक छोटीसी फुलझड़ी बनती हुई दिखायी देती है। इसी प्रकारकी बहुतसी बाटरियोंको व्याख्याता महोदयने दिखलाया जिनसे हमारे पाठक फ़र्वरी मासके विज्ञानमें परिचय पा चुके होंगे।

( ५ )

पंडितजीने फिर एक लोहेका नोकदार पत्तर उठाया जो बीचमें चौकोर था और जिसका मध्य एक डंडेपर रक्खा हुआ था। फिर लल्लूके सामने उसे रख लोहेके कुछ कण उसके पास ले गये, पत्तरमें कण लग गये। लल्लू बोल उठा कि यह सूई तो चुंबककी है। पं० जीने भी इस बातका समर्थन किया।

बाटरीके तार सूईके ऊपर लाये गये। सूई इधर उधर नाचने लगी। पं०जीने कहा कि चुम्बककी सूईके नाचनेसे हमें इस बातका पता लग जाता है कि तारोंसे बिजली बह रही है। बिजली तांबेके पत्तरसे जस्तेके पत्तरको ओर चलती है। यदि कोई मनुष्य जिस ओर बिजली-की धारा बह रही है तैरता हुआ माना जाय और मनुष्यका मुख चुम्बककी सुईकी ओर हो तो उसके बायें हाथकी ओर चुम्बककी सुईकी वह नोक रहेगी जो साधारण अवस्थामें उत्तरकी ओर स्थिर रहती है। यदि बिजलीकी धारा गोल तारमेंसे होकर बहायी जाय और उसके बीचमें चुम्बककी सुई रक्खी हो तो धारा और चुम्बकका संबंध इस नियमसे समझा जा

सकता हैः-"यदि हम दाहिनी ओर घूमने वाला एक पेंच लें और उसे ऐसे घुमावें कि बिजलीकी धारा भी उसी वृत्तमें जाती हो तो पेंच जिस ओर घुसेगा चुंबकका उत्तरीय ध्रुव (north pole) उसी ओर रहेगा"। इसी आधारपर वैज्ञानिकोंने कुछ यंत्र बनाये हैं जिनके बीचमें एक चुंबककी सूई रहती है और जो चारों ओर तारके घेरोंसे घिरे रहते हैं। यह तार रेशमके डोरोंसे लपेटे रहते हैं जिससे बिजली बाहर न जासके। इन तारोंमें होकर जब बिजलीकी धारा बहती है तो चुंबककी सूई इधर उधर डगमगा जाती है। सूईके घूमनेसे यह पता लगजाता है कि बिजली किस दिशामें बहती है। ऐसे यंत्रोंको गैल्वनोमीटर कहते हैं।

इन सब बातोंको पं०जीने यंत्रों द्वारा ऐसा अच्छा समझाया कि लल्लूभी इनको मानगया। विज्ञानके पाठक इन बातोंसे परिचित हैं इस लिये इनका विस्तृत वर्णन यहां नहीं कियागया।

( शेष फिर )

---

## अनोखा तारघर।

[ले० चिरंजीवलाल माथुर, बी. ए., एल्. टी.]

आजकल तारसमाचार मामूलीसी चीज़ है। बलिक अब बेतारका प्रचार ऐसा बढ़ रहा है कि किसी दिन तारसे काम लेनेवाले गँवार समझे जाँयगे। परन्तु पहले पहल जब तार चला था लोग अचरज करते थे कि पलभरमें देशके एक छोरसे दूसरे छोरतक समाचार जो पहुंच जाता है, यह विचित्र कला है। परन्तु जबसे प्रकृतिने संसारकी रचना की और उसे जीवोंसे आबाद किया तबसे ही उसने ऐसी तारबरकी लगा रक्खी है जिससे हम छिन छिन और पल पलपर काम लेते हैं पर इतना ज्यादा काममें आनेसे उसका अनोखापन, उसकी विचित्रता हमारे ध्यानमें ही नहीं आती।

हम खड़े खड़े अपने मित्रसे यही बातें कर रहे थे कि एक मच्छड़ गरदनपर पीछे बैठा, और काटने न पाया था कि हमारा हाथ तड़से उसपर वज्रकी नाईं गिरा और उसकी लाश फड़कती हुई हमारी लौटती हुई अंगुलियोंके बीच नजर आयी। हमारे मित्र हमारी इस तेज़ीपर शायद हमारी पीठ ठोंकते पर सच्ची बात तो यह थी कि यह प्रकृतिकी अद्भुत रचनाकी तारीफ़ है। हमारी नहीं। यह उसी तार-बरकीकी बरकत है जिसकी चर्चा हम कर ही रहे थे। बात जो हुई थी उसपर गौर करनेको इतनी जल्दी हमारे मित्रको मौकाही नहीं मिला था, और मिलता तो फिर प्रकृतिकी तारबरकीकी तेज़ी ही क्या समझी जाती?

घटना बड़ी लम्बी चौड़ी हुई थी। मच्छड़ साहब आकर बिना पूछे पाछे, बिना देहकी रज़ामन्दीके, उसपर बैठ ही गये। उनके बैठनेका तात्पर्य्य था काटना, और उन्होंने जल्दी करनेमें कोई कसर भी नहीं लगायी। बैठतेके साथ ही अपनी पैनी सूँड चुभो दी। बस इतनेमें वज्रपात और शत्रुनिपात दोनों ही क्रियाएं हो गयीं। उनके बैठतेके साथही तारद्वारा चित्तको इत्तला हो गयी। इस इत्तलाके साथही वहां शक्ति या चेष्टाके तारोंसे हाथोंको राजाज्ञा मिली कि होनेवाली पीड़ाके कारणको तुरन्त दूर करे। और बन्दोबस्तकी खूबी देखिये कि हाकिमका हुकुम बजा लानेमें देर न हुई। नादिरशाही फ़रमानकी लोग फ़ज़ूल तारीफ़ करते हैं। नादिरशाही फरमान और हुकूमत तो शरीरराज्यमें एक अदना सी बात है। बस, आज्ञा हुई और काम तमाम!

पाठक वृन्द! यह अनोखा तार-घर हमारा

दिमाग, हमारा मस्तिष्क है, जिसकी चर्चा आज हम कर रहे हैं।

देखनेमें सिर हड्डियोंका एक डब्बा है। उसको टटोलते हैं तो जान पड़ता है कि इस डिब्बेको प्रकृति माताने ऐसा मज़बूत इसी लिए बनाया है कि इसमें रक्खी हुई अमूल्य वस्तु सुरक्षित रहे। ऊपरसे बचावकेलिए बालों-की नरम गद्दी लगायी है। खोपड़ीकी हड्डियोंको खोलें तो उनके नीचे एक मुलायम गद्दी और निकलेगी जिससे लाभ यह है कि यदि कोई छोटी मोटी चोट खोपड़ी पर लगे तो उसका असर भीतर न पहुँचे। इन बातोंसे निश्चय है, कि इस हड्डीके डब्बेमें अवश्य कोई बढ़िया चीज़ है।

पाठक! अख़रोट तोड़कर देखिये। उसके भीतर दो भाग की हुई मींगी निकलती है। इसी प्रकार इस हड्डीके डब्बेमें भी भेजा निकलता है। यह भेजा कई झिल्लियोंमें लिपटा होता है और भूरी रंगतका मक्खन जैसा होता है। यही भेजा वह चीज़ है जिसपर मनुष्यकी बुद्धि ही क्या, जीवन भी निर्भर है। सबही जीवोंमें भेजा थोड़ा बहुत अवश्य होता है परंतु मनुष्यमें इसके शरीरको देखते हुए भेजा अधिक भारका होता है। अब इस भेजेका कुछ हाल सुनिये—

जिन पाठकोंने शरीरशास्त्रके पिछले लेख पढ़े हैं उन को याद होगा कि मनुष्यका शरीर कोषोंसे बना है। यह भेजा भी कोषोंका ही बना है परंतु यह कोष उनसे कुछ अन्तर रखते हैं। इनको भेजेके कोष (neurone) कहना चाहिए। इन कोषोंका पालन पोषण भी रुधिरसे ही होता है। भली भांति शुद्ध रुधिर न पहुँचे तो भेजा ठीक न बनेगा। दुर्बल शरीरवाले बालकों-का विभाग भी जैसा चाहिए वैसा नहीं बनता। भेजेकी बनावट ऊपरसे लहरीली होती है, जितनी लहरें अधिक होंगी उतनी ही मानसिक शक्तियां अधिक होंगी। यदि किसी मनुष्यका भेजा बिना लहरोंका हो तो उसकी मानसिक शक्ति पशुके समान होगी।

भेजेको यदि काटकर देखा जावे तो उसमें दो रंग दिखलायी देंगे। भीतरी भाग अधिकतर श्वेत होता है। ऊपरका भाग जिसमें लहरें होती हैं कम श्वेत होता है। इस ऊपरके भागको अंग्रेज़ी भाषामें कौरटेक्स (Cortex) कहते हैं। कौरटेक्स (सूत्रकेन्द्र, भेजे) मेंसे बहुत पतले सूत्र (तार) समस्त शरीरमें फैले हुए हैं। यह धागेके समान नाड़ीका जाल शरीरके प्रत्येक भागमें पहुंचा हुआ है जैसे कलकत्तेके तारघरसे उस प्रांतके समस्त स्थानोंको तार लगे हुए हैं। इन सूत्रों द्वारा शरीरके हर भागसे भेजे तथा मस्तिष्कको समाचार जाते हैं और भेजेसे आते भी इसी रीतिसे हैं। इनसे समाचार मिलनेपर तुरन्त ही और तारों अर्थात् नाड़ियोंसे काम लिया जाता है। जैसे बिजलीसे पंखा आदि चलानेमें तारद्वारा शक्ति भेजते हैं उसी तरह समाचारके सिवा-शक्ति भी तारों या नाड़ियोंसे भेजते हैं। पहले नाड़ीजालको ज्ञाननाड़ी और दूसरेको चेष्टानाड़ी कहते हैं। इस प्रकार दो समूह इन सूत्रोंके हैं। जब आप अपनी अँगुली किसी गरम चीज़पर रखते हैं तो तुरंत ख़बर पहुंचती है कि गरमी है। तुरंत ही नाड़ियों द्वारा हाथकी मांसपेशियां सुकड़ती हैं, और अंगुली हट जाती है।

हर तरहके समाचारकेलिए भेजेमें केन्द्र बन जाते हैं और जितना अधिक गूढ़ समाचार पहुँचता रहता है उतनाही उत्तम केन्द्र बन जाता है। यदि किसी प्रकारका समाचार कभी न पहुँचा है तो उसके जाननेकी शक्तिही भेजेमें उतपन्न नहीं होगी। नाड़ीजालमेंसे यदि कोई नाड़ी किसी कारणसे बेकार हो जावे तो भेजे तक उससे समाचार नहीं पहुँचेगा और जिस शरीरके भागमें वह नाड़ी है बेकार

हो जावेगा। जिसको सुन्नबहरी या लक़वा (Paralysis) कहते हैं वह नाड़ियोंका बेकार हो जाना ही है। ऐसा हो जानेपर उत्तेजक औषधि दी जाती है कि जिससे फिर चेतनता आकर तार ठीक ठीक पहुंचने लगे। मनुष्यकी नाड़ियां जितनी बलवती होंगी उतनाही वह बली होगा। दुर्भाग्यसे यदि किसी मनुष्यकी यह शक्ति कम हो जावे तो उसकी समस्त बातें मंद हो जाती हैं। ऐसी दशामें पुष्टिकारक औषधि (Nervine Tonic) की आवश्यकता होती है।

भेजेका कुछ भाग सिरके पीछेकी ओर होता है। उसी प्रकारका द्रव्य रीढ़की हड्डीकी नलीमें भी होता है। बहुतसी इंद्रियोंकी नाड़ियोंका रीढ़की नलीमेंसे ही सम्बन्ध है। बल्कि यह कहना चाहिए कि मस्तकके भेजेमें बढ़िया और बारीक काम होता है और साधारण बातोंको तो उसके सहायक सिरके पीछेके भाग और रीढ़की नली ही निबटा देती है। रीढ़की हड्डीमें चोट लग जानेसे लोगोंकी इंद्रियां, हाथ पैर सदा-को बेकार हो गये हैं। बालकोंकी गुद्दीपर प्रायः नादान लोग घूसा लगा दिया करते हैं। ऐसा कभी नहीं करना चाहिए क्योंकि इसमें बालकके पीछेवाले दिमागमें चोट आ जानेका भय है। भेजेके किसी भागमें--चाहे मस्तक, गुद्दी, या रीढ़की ही हड्डी हो--चोट लग जानेमें मृत्युतक-का भय है। ईश्वरने शरीरके बनानेमें इन भागों-की रक्षा तो भली भांति कर दी है परंतु फिर भी सावधान रहनेकी आवश्यकता है।

भेजेमें किस प्रकार तार पहुँचता है और क्या विकार पैदा करता है इस बारेमें विज्ञान-वालोंकी सम्मति यह है कि भेजेमें कोष एक दूसरेसे सर्वथा जुड़े नहीं होते, किंतु बहुत ज़रासी ख़ाली जगह एक दूसरेके बीचमें होती है। जब तार पहुँचता है अर्थात् नाड़ीमें स्फुरण या कंपन होता है, नाड़ी कांपती है तो कोष ज़रा बढ़ जाते हैं और एक दूसरेसे मिल जाते हैं, यहांतक कि जो केन्द्र उस प्रकारके तारोंका है वहां समाचार पहुँचकर मनुष्य को ज्ञान हो जाता है। बालकके भेजेमें लहरें बहुत कम होती हैं। तुरंत पैदा हुए बालकके भेजेमें कोई केन्द्र बना ही नहीं होता, वह केवल तनिकसा ज्ञान मातापितासे वंशके अनुकूल लेता है। यदि नये जन्मे बालकके हाथमें अँगुली है तो वह मुट्ठी बंद कर लेगा। इसके अतिरिक्त वह किसी तारका ज्ञान नहीं कर सकता। पाठक याद रक्खें कि लेखक शरीर-विज्ञानके अनुसार लिख रहा है। जीवात्मा पिछले जन्मका क्या क्या ज्ञान कारण-शरीरके साथ लाता है यह प्रश्न इस विज्ञानकी सीमासे बाहरका है।

जब बालक धीरे धीरे बढ़ता जाता है, प्रत्येक इंद्रियसे तार पहुँच पहुँच कर भेजेमें केन्द्र बनने लगते हैं। जैसे जैसे तार पहुँचेंगे वैसे ही भेजा बनता जायगा। यदि बालकके इर्द गिर्द पदार्थ अधिक हैं और ऐसी सामग्री है कि समस्त इंद्रियां भलीभांति अपनी नाड़ियोंके द्वारा समाचार पहुँचा सकें तो बालक शीघ्र ही बुद्धिमान हो जायगा। इसके प्रतिकूल यदि चैतन्य करनेकी सामग्री न हो, केवल झाड़ झींकड़ ही हो तो बालक पशुके समान रह जावेगा। शिक्षा की नई प्रथाके अनुसार जो पदार्थ-पाठ पढ़ाये जाते हैं उनका उद्देश्य यही है कि बालकोंको प्रत्येक इंद्रिय द्वारा ज्ञान भलीभांति हो जाय। मनुष्य जो कार्य्य करता है वह तीन प्रकारकी दशाओंमें होते हैं। एक तो बाहरी का-रणों वा बाह्य संसर्गसे जैसे, अँगुली गरम चीज़पर रक्खी, गरमी न सहकर हटा ली। अँगुलीका हटाना इसी तरहका कार्य्य है। यह कहना चाहिए कि तार पहुँचानेवाली ज्ञान-नाड़ी ( sensory nerves ) के द्वारा समाचार पहुँच कर जो कार्य्य हो वह इसी श्रेणीका होगा। दूसरी दशा वह है कि मनमें किसी कार्य्यके करनेकी इच्छा हुई और शरीरका कोई

भाग काममें लग गया। इस तरहके कार्य्यमें बाहरसे कुछ सूचना नहीं होती, मनमें ही इच्छा उत्पन्न होती है। इस इच्छाके अनुसार चेष्टावाली नाड़ियां ( motor nerves ) काम करती हैं। इसको प्रेरितक्रिया (voluntary action) कहते हैं। इन दोनों प्रकारके कामोंमें मनको ज्ञान होता है कि क्या किया जावेगा और क्या किया जा रहा है। तीसरे तरहका कार्य्य ऐसा होता है जिसमें मनको पता भी नहीं कि क्या हो रहा है और शरीरके भाग स्वयम् कार्य्य कर डालते हैं। इसको प्रतिफलित कर्म्म (Reflex action) कहते हैं। अधिक अभ्यास होनेसे काम आप ही होता रहता है। मन चाहे और किसी काममें लग रहा हो। दो मित्र हवा खाने जा रहे हैं। बातों में लगे हैं। ऐसा विषय छिड़ गया है कि तनकी सुधि नहीं है। मन पूर्ण रीतिसे उसमें लगा हुआ है, परंतु टांगें बराबर चल रहीं हैं, टांगोंके चलानेके वास्ते उस समय न तो इच्छाने काम किया और न बाहरसे प्रस्ताव हुआ।

जिस प्रकार इंद्रियों द्वारा आए हुए तार impressions) अपना केन्द्र भेजेमें बना लेते हैं उसी प्रकार मानसिक शक्तियां भी अपना केन्द्र और स्थान भेजेमें रखती हैं। खोपड़ीसे पहचाननेवाले वैज्ञानिक (phrenologists) भेजे-की बनावटसे ही कह देते हैं कि इसमें अमुक मानसिक शक्ति अधिक है और इसके विचार इस प्रकारके होने चाहिए।

अब भली भांति मालूम हो गया कि सिर मनुष्यके शरीरमें एक विलक्षण वस्तु है। इसी-के द्वारा मनुष्यने क्या क्या नहीं कर दिखाया! जिन बातोंको असम्भव समझते थे वह हो गयीं, ईश्वरकी प्रकृतिको इसीके बलसे मनुष्यने अपने क़ाबूमें कर लिया। ऐसी अमोल वस्तुकी पूरी रक्षा और उचित शिक्षा प्रत्येक मनुष्यका परम धर्म्म है।

# तैरनेकी विधि।

[ ले० पद्मदत्त रतूड़ी, नेपाल ]

गुरु—गोपाल, कल हम लोगोंने भिन्न भिन्न पदार्थोंके आपेक्षिक घनत्वपर विचार किया था। क्या अब तुम तैरती हुई नौकाके सिद्धान्त-को बतला सकते हो?

गोपाल—जी हां, आपने बतलाया था कि जलतलपर तैरनेवाली वस्तु अपनी तोलके बराबर तोलवाले पानीके आयतनको हटाती है। इस हेतु नाव पानीके ऊपर तभी तैर सकती है जब नाव और उसमेंकी चीज़ोंकी तोल पानीके उस आयतन की तोलसे कम हो जिस-को नावका डुबा हुआ भाग अलग करता है।

गु०—ठीक कहा।

मोहन—गत माघ मेलेमें चाचाजीके साथ मैं त्रिवेणीजीमें स्नान करने गया था, किनारेसे मैंने लोगोंके तैरते देखा। मुझे भी तैरनेकी इच्छा हुई और जब हम लोग नहानेकेलिए जलमें चले तो मैंने तैरना चाहा। अनेक बार चेष्टा करनेपर भी मैं सफल न हुआ। तो क्या भगवानने मेरे ही शरीरको पानीसे भारी बनाया है?

गु०—नहीं, मि. राबर्टसन (Mr. Robertson) नामक एक विज्ञानीने दस भिन्न भिन्न मनुष्यों-पर अति सूक्ष्म परीक्षाकर मनुष्यके शरीरका मध्यम आपेक्षिक घनत्व सामान्य नदीके जलसे $\frac{1}{6}$ हिस्सा कम बतलाया है।

मो०—गुरुजी, तो मैं लकड़ीकी नाईं न तैरकर क्यों डूबता रहा?

गु०—तुम पानीसे हलके हो तिसपर भी लकड़ीकी तरह तैरनेकेलिए तुम्हे अपने शरीरको ऐसी दशामें रखना चाहिए जिसके लिए कुछ निपुणताकी आवश्यकता है।

मो०—वह कौनसी दशा है?

Hydrostatics जल-गणित ]

गु०—डा. फ्रेंकलिन (Dr. Franklin) जो एक बड़े निपुण तैराक थे कहते हैं कि तैरते समय मनुष्यको वक्र दशामें पीठके बल रहना और शिरको छोड़ समस्त शरीरको जलके नीचे रखना चाहिये।

ऐसा करनेकी चेष्टामें नये तैराकको डूबने और डूबनेपर मुँह और नाकसे पानी पीते पीते प्राण खो बैठनेकी जोखिम है। इसके अतिरिक्त ठन्ढे पानीसे और भयसे मनुष्यका शरीर सिकुड़ जाता है। इन्हीं कारणोंसे मनुष्य डूब जाता है। पर अच्छे शिक्षकोंकी उपस्थितिमें भी कोई कोई तैरना सीखनेमें सफलता प्राप्त नहीं करता। सचमुच, ऐसे अनेक दृष्टान्त मेरे दृष्टिगोचर हुए हैं।

गो०—गुरुजी, आप कहते हैं कि भयसे भी मनुष्य तैर नहीं सकता है, थोड़े ही दिन हुए कि मैं और मेरा छोटा भाई सैर करते हुए जमुनाजीके पुलपर पहुँचे। हमारे साथ एक कुत्ता भी था। छोटे भाईको मालूम नहीं क्या सूझी उसने कुत्तेको पकड़ जमुनाजीमें फेंक दिया, गिरते समय कुत्ता बहुत ही भयभीत मालूम पड़ता था और पानीमें पहुँचते ही डूब गया। पर क्षणभरमें उसे पानीके ऊपर तैरते देख मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह भी कुशल-पूर्व्वक जलसे निकल आया। अब इसका कारण बतलाइए कि भयभीत होनेपर भी कुत्ता क्यों न डूबा ?

गु०—देखो, ईश्वरकी समस्त सृष्टिमें मनुष्य ही जलमें असहाय हो जाता है। पशु स्वाभावसे ही तैरते हैं क्योंकि उनके तैरने और चलने फिरनेकी रीति एक सी है। फिर उनका धड़ बड़ा और सिरेके भाग छोटे होते हैं, मनुष्यकी बांह और पैर शरीरकी अपेक्षा छोटे होते भी धड़से अधिक आपेक्षिक घनत्व रखते हैं। और सिरका आपेक्षिक घनत्व तो सबसे ज्यादा होता है। मनुष्यकेलिए सिर ही अगले भागको बोझल कर देता है। इसी लिए तैरनेमें मनुष्यको जानवरों से अधिक कठिनाई पड़ती है।

मो०—आगामी रविवारको मैं गङ्गाजी जाऊंगा और डा० फ्रेंकलिनके उपदेशोंके अनुसार तैरनेका प्रयत्न करूंगा।

गु०—पर बहुत गहिरे जलमें तैरनेकी कोशिश पहले न करना। उसमें डूब जानेका डर है।

मो०—कितनी गहिराईके जलमें मैं निर्भय तैर सकता हूं ?

गु०—तुम्हारी उंचाईसे एक फुट तक कम गहिरे पानीमें तैरनेमें कुछ भय नहीं है।

गो० - एक समय मैं अपने उद्यानके तालाबमें कूद पड़ा। उसका पानी मुझसे लग-भग एक फुट कम गहिरा मालुम पड़ता था तिसपर भी मैं उसमें बिलकुल डूब गया। उस समय डूब जानेका कारण मैं अभी तक समझ नहीं सका।

गु० पानी सर्वदा अपनी सच्ची गहराई-से कम गहिरा नज़र आता है। चार फुट गहिरा पानी लगभग तीन फुट गहिरा दिखाई पड़ता है। तुम्हारे डूबजानेका यही कारण है।

मो०—संयोगसे यदि मैं तैरते समय गहिरे पानीमें जाकर डूब जाऊं तो क्या मैं फिर बचने-की आशा कर सकता हूं ?

गु०—क्यों नहीं, यदि तुम डूबनेमें घबरा न जाओ तो थोड़ी सी कोशिशसे पानीके ऊपर उठ सकते हो और डा० फ्रेंकलिनके उपदेशका प्रयोग कर अपनी प्राण-रक्षा कर सकते हो। परन्तु घबरा कर जलसे बहुत ऊंचा उठनेका प्रयत्न न करना। इसमें तुम्हारे फिर डूब जाने-का डर है।

गो०—इसका क्या कारण है ?

गु०—जब मनुष्यका शरीर पानीसे इतना ऊंचा उठ आता है कि पानीके भीतरका हिस्सा अपनी तोलके बराबर तोलवाले पानीके आयतनको नहीं हटाता तब वह प्रकृत गतिसे डूब जाता है। इसी कारण मोहन यदि घबड़ा कर बहुत ऊंचा उठ जाय तो वह फिर प्रकृत गतिसे जलहीके अन्दर चला जायगा और दो चार बार इसी प्रकार जलके भीतरसे बाहर आनेकी कोशिशमें उसका बल क्षीण हो जायगा और प्राण खो बैठेगा।

मो०—जो कुछ हो, मैं जरूर ही तैरना सीखूंगा।

गु०—यह बहुत अच्छी बात है। तैरना जाननेसे बहुत लाभ उठा सकोगे और संभव है कि कभी किसीके प्राणोंकी रक्षा भी कर सको। जब तैरना सीखनेमें तुम्हारी इतनी प्रबल इच्छा है तो मैं तुम्हे दो चार और बातें भी बतला देता हूं। हमारे सिर हाथ और पैर पानीसे भारी होते हैं यद्यपि सारा शरीर मिलकर पानीसे हलका ही है। इसीसे हमें मुँह और नाकको पानीके ऊपर रखनेमें कुछ कठिनाई पड़ती है। यदि हम शरीरको हिलाते रहें और शिरको पीछेकी तरफ़ इस प्रकार झुकाएँ कि सिर पानीके ऊपर ही रहे तो हम आसानीसे साँस ले सकेंगे। यह बात याद रखनी चाहिए कि सिरको पानीके ऊपर रखनेकेलिए बाँह और हाथ अवश्य ही पानीके नीचे रहने चाहिएँ और ऐसा करनेसे कोई कभी भी नहीं डूब सकता। तैरनेवालेको मनमें सदा धैर्य रखना चाहिए। घबराना ही घातक है। अपने बल और बुद्धिपर सदा दृढ़ विश्वास रखना चाहिए।

# फिटकिरी

[ ले० मुख्त्यार सिंह, वकील, मेरठ ]

फिटकिरी दो प्रकारके लवणोंका संगठन है, एकको गंधित एलोमिना दूसरेको गंधित पोटाश कहते हैं। बहुत सी प्रकारकी फिटकिरियोंमें गंधित पोटाशके स्थानमें गंधित नौसादर पाया जाता है। यदि अनुवीक्षण यंत्रसे फिटकिरीको देखा जाय तो इसके दाने अठपहल दीखते हैं। स्वाद कसैला होता है, खानेमें कब्ज़ करती है। प्रायः चोट लग जानेपर दूधमें मिलाकर इसे देते हैं अनेक प्रकारकी औषधियोंमें इसका प्रयोग होता है। फिटकिरीमें नीला लिटमस-काग़ज़ डालनेसे लाल हो जाता है। संसारके जितने क्षार पदार्थ हैं नीले काग़ज़को लाल नहीं करते प्रत्युत लालको नीला करते हैं, किंतु फिटकिरीमें इसके विरुद्ध गुण पाया जाता है। यदि किसी वस्तुको फिटकिरीके पानीमें भिगोकर सुखाकर आगपर रखदें तो बहुत देर-तक नहीं जलता। इसी गुणके आधारपर तमाशा करनेवाले काग़ज़को फिटकिरीके पानीमें भिगोकर और सुखाकर रख लेते हैं और काग़ज़की कढ़ाई बनाकर आगके ऊपर रख अनेक पदार्थ पकाकर दिखाते हैं,* इसी गुणके कारण विलायतमें अनेक पदार्थ फिटकिरी डालकर अदह्य बनाये जाते हैं। फिटकिरी पानीसे १·७२४ गुना भारी होती है और पानीमें बिल्कुल घुल जाती है।

फिटकिरीमें एक सबसे बड़ा गुण यह है कि पानी जितना ही गरम होगा उतनी ही अधिक घुलेगी। दृष्टान्तकेलिये ३२ कक्षा फ० पर १००

* बिना फिटकिरी या कुछ लगायेही काग़ज़की कढ़ाईमें पानी उबाल सकते और पूरियां छान सकते हैं। घी या तेल पकानेमें केवल लौसे रक्षा करनी आवश्यक है। अंगारों वा कोयलोंपर कोई डर नहीं है। सं०

Industrial Chemistry शिल्प रसायन ]

भाग पानीमें केवल ३. २६ घुलती है किन्तु ५० कक्षा फ० पर १०० भागमें ६.५२ घुल जाती है इसीलिए जिन नुसखोंमें फिटकिरीका काम लगता है उनमें यह जानना आवश्यक होता है कि किस कक्षापर पानीमें कितनी मिलायी जा सकती है।

किस कक्षापर एक भाग फिटकिरी कितने पानीमें घुल जाती है यहां लिखते हैं—

| कक्षा | | पानीका भाग |
|---|---|---|
| ५४ | फ़० | १३.३ |
| ७० | ,, | ८.२२ |
| ७७ | ,, | ४.५ |
| १०० | ,, | २.२ |
| १२२ | ,, | २.० |
| १४५ | ,, | १.४ |
| १६७ | ,, | १.१ |
| १८६.५ | ,, | .६ |

गरमीके घटने बढ़नेसे इसका गुरुत्व भी बढ़ता घटता रहता है। जैसे ४६ कक्षापर इसका गुरुत्व घटकर १.००५ होजाता है। अनेक कक्षाओंपर पानीमें अनेक मात्रामें घुलनेके कारण और लवणोंमें यदि फिटकरी मिली हो तो अलगकी जा सकती है। जैसे किसी नमक में जो २१२ कक्षाकी गर्म्मीपर बहुत थोड़ी मात्रामें पानीमें घुलता है फिटकिरी मिला कर यदि २१२ कक्षाकी गर्म्मी दें तो पानीमें १०० भाग पीछे ३५६.४८ भाग फिटकिरी मिल जायगी और वह नमक बहुत थोड़ी मात्रामें मिलेगा। इस तरह फिटकिरी थोड़ासा नमक लेकर पानीमें घुल जायगी पर नमक अधिकांश नीचे बैठ जायगा। इसी विधिसे फिटकिरीको अनेक लवणोंसे अलग करके शुद्ध किया जाता है। फिटकिरीको खानेके नमकमें मिलाकर आग-पर गरम करें तो नमकके तेज़ाब वाली हवा बनकर उड़ती है।

फिटकिरी मिलानेसे वा उसके पानीमें डोब देनेसे रंग चोखा चढ़ता है और कभी कभी पक्का भी हो जाता है। यही बात है कि रंगरेज़ और छीपी इसे काममें लाते हैं। आजतक रंगनेमें जितनी उन्नति हुई है उन सबमें फिटकिरी या उसके यौगिक अवश्य पाये गयेहैं। काग़ज़ बनानेमें और जिल्द-बंदीमें भी काममें लाते हैं। चमड़ा रंगनेवाले भी फिटकिरीसे काम लेते हैं। जिन स्थानोंपर तालाब वा नहरका गदला पानी पीना पड़ता है वहाँ इसको थोड़ी मात्रामें गदले पानीमें डाल कर रख देते हैं तो सब गाद नीचे बैठ जाती है और साफ़ पानी रह जाता है। अधिक मात्रामें पानीमें मिल जानेपर यह हानिकारक होती है। जब अन्न ख़राब हो जाता है तब भी इसमें फिटकरी डालते हैं। बहुतसे विलायतके कार्यालय आटेको अधिक सफ़ेद और लोचदार बनानेकेलिये फिटकरी मिला देते हैं,किन्तु हानिकारक होनेसे राजकी ओरसे ऐसे लोगोंको दंड दिया जाता है। आगसे न जलनेके गुणके कारण जिन काठके संदूकोंमें बहुमूल्य पदार्थ रक्खे होते हैं उनपर इसका लेप करते हैं। कोयलेके साथ मिलाकर फिटकिरीको गरम करें तो एक प्रकारकी प्रस्फुटिक सी बन जायगी और इसमें स्वयम जल उठनेका गुण पैदा हो जायगा। फ़ोटोग्राफ़ीमें भी यह बहुत काम आती है॥

फिटकिरीके बड़े साफ़ चमकदार दाने होते हैं। इसमें कोई चीज़ मिल गयी हो तो तुरन्त ज्ञात हो जाती है। जिस फिटकिरीमें लोहा मिला होता है औषधियोंके काम की नहीं होती। इसके मालूम करनेके बहुतसे उपाय हैं। परन्तु देखनेहीमें यदि दानोंकी सफ़ेदीमें तनिक भी कमी हो, या हरापन या पीलापन हो तो समझ लीजिए कि लोहा मौजूद है। फिटकरीसे रेत आदि पानीमें घोलकर अलग किये जाते हैं।

फिटकिरी एक प्रकारकी मिट्टी या पत्थरों से बनायी जाती है जिसमें इसके अतिरिक्त और भी पदार्थ मिले होते हैं जिनको अनेक क्रियाओंसे दूर किया जाता है। भारतवर्षमें अनेक स्थानोंपर फिटकिरी बनायी जाती है किन्तु इसका बनाना अब बहुत ही कम होगया है। यदि नष्टप्राय भी कहें तो कुछ ग़लती न होगी। विलायतसे जबसे आने लगी है तबसे भारतमें फिटकिरी बनाना बिल्कुल बंद हो गया है केवल मियांवाली जिला पंजाबमें कुछ मात्रामें बनती है। यदि हमारे यहाँके पुरुषार्थी इस ओर ध्यान दें तो कोई कारण नहीं है कि फिटकिरी बननी फिर आरम्भ न होसके। पहिले ज़मानेमें पंजाबके अतिरिक्त बिहार और कच्छमें बनायी जाती थी। इसके बनानेकी रीति बहुतही सुगम थी। फिटकिरीकी मिट्टीको खोद कर महीनोंतक ढेरोंमें पड़ा रहने देते थे। फिर उसको वर्गके रूपमें फैलाकर पानी छिड़कते थे। बारह दिनके पश्चात् एक प्रकारकी फिटकिरी ऊपर जम जाती थी जिसको फिटकिरीका बीज वा तूरी कहते थे। इसको धीरे धीरे उतार कर पानीमें उबालते थे और इसमें जवाखार या पोटाश मिलाकर दो दिनतक मिट्टीके बर्तनमें रख देते थे जिसमें फिटकिरी दानेदार होकर नीचे बैठ जाती थी।

## फिटकिरीके पत्थरसे फिटकिरी बनाना

फिटकिरीका पत्थर, जिसको अंग्रेज़ीमें एलम्स्टोन या एल्यूमिनाइट कहते हैं, लेकर दो तीन फुट ऊंचे ढेरमें जमा करके चूना फूकनेकी तरह फूंक देते हैं किन्तु यह ख़याल रखते हैं कि बहुत ज्यादा आंच न लगने पाये क्योंकि ऐसा होनेसे कई पत्थरोंके आपसमें जुड़ जानेकी संभावना रहती है। फिटकिरी पिघलकर नष्ट भी होजाती है; अथवा गंधकका तेज़ाब जो इसमें मौजूद होता है उड़ जाता है, इसलिए इन पत्थरोंको सीधी आंच नहीं दी जाती। केवल कोयलेकी आगकी लपटसे गर्म्मी पहुंचायी जाती है। फिर घुलजाने पर जब यह पत्थर चूनेके पत्थरोंकी तरह चूरा होजाते हैं तो इनको पानीमें घोलकर नितरे पानीको अलग कर लेते हैं, और पानीको उड़ाकर फिटकिरी बना देते हैं फिटकिरीका जो पत्थर गंधित ऐलोमीना है वह शिवालका और सन्नीकी खानोंमें तथा सैलाट और बिलोचिस्तानमें पाया जाता है भारतवर्षके अतिरिक्त यह पत्थर टैालफा, रूमके प्रान्तमें और हंगरी देशके वैरग सैज़ और मुसैज़ स्थानोंपर पाया जाता है। जहाँ ज्वालामुखी पहाड़ होते हैं वहाँ भी यह मिलता है। रूमकी फिटकिरी जो सबसे प्रसिद्ध मानी गयी है ऊपरका विधिसे बनती है। इसी प्रकार बहुतसे स्थानोंपर फिटकिरीको मिट्टीके टुकड़े मिलते हैं जिनको फिटकिरीके पन्ने कह सकते हैं। इनसे भी उसी तरह फिटकिरी बनाते हैं। पहिले इनको इकट्ठी करके फूंक दिया जाता है और कुछ देरतक पड़े रहनेपर ठंढा करके पानीमें घोल कर फिटकिरी बना लेते हैं। जैसा हम ऊपर लिख चुके हैं, फिटकिरी बनानेमें अधिक गर्म्मी पहुँचनेपर गंधकाम्ल उड़नेका भय रहता है इसलिए प्रायः ६०० से ६५० कत्ता फ़० तककी गर्म्मी काफ़ी होती है और जलाते जलाते इसको कभी कभी थोड़ा सा फुका हुआ मसाला लेकर उसकी फिटकिरी बनाकर देख लेते हैं कि आग काफी लग गयी या नहीं। बहुतेरे पत्थरों या फिटकिरीकी मिट्टोमें गंधकका तेज़ाब बहुत अधिक मात्रामें मिला होता है जो तेज़ आंच लगनेपर उड़ जाता है। विलायतमें विशेष प्रकारकी भट्ठियोंमें इन पत्थरोंको फूंकते हैं और चिमनीसे जो धुआं निकलता है उसे बटोर कर गंधकका तेज़ाब बनाते हैं। इसप्रकार गंधकका तेज़ाब बिल्कुल नष्ट नहीं होने पाता, आगमें फूंकने का तात्पर्य यह है कि पत्थरमें फिटकिरी इस योग्य हो जाती है कि वह भली भांति पानीमें मिल सके।

पानीमें घोलनेका काम अधिकतया लकड़ीके बर्तनोंमें किया जाता है क्योंकि यदि किसी धातुके पात्रमें यह कार्य्य किया जाये तो उस धातुमें गंधकाम्ल मिलकर फिटकिरीको ख़राब कर देगा। किन्तु लकड़ीके वर्तनोंके टूटनेका भय रहता है। अब पत्थरके पीपोंसे भी यह काम लिया जाता है। इन पात्रोंको मिट्टीकी सीढ़ी बना कर ऊपर नीचे रख दिया जाता है और ऊपरवाले पात्रमें इन फुके हुए पत्थरोंको घोल कर टोंटी द्वारा दूसरे पात्रोंमें ले आते हैं। इसी प्रकार धीरे धीरे चार पांच पात्रोंमें करनेसे सब गाद पात्रोंमें बैठ जाती है और पानीमें घुली हुई फिटकिरी नीचे आ जाती है। नितरे हुए पानीको आगपर उड़ा देते हैं। जहाँ अधिक मात्रामें फिटकरी बनानी होती है, वहाँ पात्रोंके स्थानमें पक्के हौज़ ऊपर नीचे बने होते हैं और इनपर छप्पर डाल देते हैं जिससे वर्षा वायु और धूपमें भी सुगमतासे काम किया जासके। नितरे हुये पानीका साधारण गुरुत्व १·०६ से १·१५ तक होता है, इस पानीको जलाने पर इसका गुरुत्व १·४ से १·५ तक हो जाता है आगपर पानी उड़ानेकेलिये प्रायः तांबेके पात्र काममें आते हैं। जब यह पानी उड़कर गाढ़ा हो जाता है तो इसमें गंधित पुटाश या हरिद पुटास या कारबनित अमोनियाँ मिला देते हैं और इसको मिलाते ही फिटकिरी नीचे बैठ जाती है। इस कार्य्यकेलिए अधिकतया गंधित पोटाससे ही काम लेते हैं। हरिद पुटासका १ भाग ३ भाग पानीमें घुल जाता है इस कारण इस क्षारका प्रयोग अधिक उपयोगी होता है, यदि सस्ती मिल सके। क्योंकि इस क्षारके प्रयोगसे उपस्थित लोहा हरिण लोहमें परिणत हो जाता है और इस कारण फिटकिरीमें लोहेके मिलनेकी संभावना बहुत ही न्यून हो जाती है। कितनी मात्रा गंधित पुटास या किसी और क्षारकी डाल कर फिटकिरी नीचे बढ़ायी जावे यह भी जानना अत्यन्त आवश्यक है किन्तु यह केवल परीक्षण और अनुभवपर निर्भर होता है। प्रायः इसमेंसे थोड़ासा अर्क़ लेकर उसमें धीरे धीरे क्षार मिलाते रहते हैं जब कोई वस्तु नीचे बैठनी बंद हो जाती है तब समझते हैं कि क्षारकी पर्याप्त मात्रा पहुंच चुकी है, फिर इसी अनुमानसे हिसाब लगाकर, सारे अर्क़में क्षार मिला देते हैं। किन्तु यह परीक्षण सर्वदा प्रत्येक घानके साथ करना चाहिये क्योंकि संभव है कि उपस्थित फिटकिरीकी मात्रा पहिले घानकी अपेक्षा दूसरे घानमें न्यूनाधिक हो गयी हो। जब अर्क़की सारी फिटकिरी नीचे बैठ जाय तो इस नितरे हुये अर्क़को अलग कर लो। अनुमान किया गया है कि यदि किसी अर्क़में गंधित एलुमीना उपस्थित हो तो १०० भाग फिटकिरी अलग करनेकेलिये १८·३२ गंधित पोटाश की आवश्यकता होती है और इसी प्रकार १३·८६ गंधित अमोनियाकी और १५·६६ हरिद पोटासकी। गंधित अमोनिया सम भाग गरम पानीमें और दो भाग ठंढे पानी में घुल जाता है, इसी प्रकार हरिद पुटास ३ भाग पानी में और गंधित पोटाश १० भाग पानीमें और फिटकिरी १ भाग पानीमें मिलती है। इसी कारण फिटकरीका कुछ भाग इस अर्क़में मिला रहता है और इसे फिर गरम कके गाढ़ा करना पड़ता है और फिर फिटकिरी अलग करनी होती है।

बहुत प्रकारके अर्क़ोंमें हीरा कसीस अर्थात् गंधित लोहेकी मात्रा अधिक होती है और यह आवश्यक होता है कि सुगमतासे कार्य्य करनेकेलिए इसे अलग कर दिया जाय। इसलिए पहिले हीराकसीसको अलग करनेकेलिए अर्क़को इतना पकाते हैं कि उसका गुरुत्व १·४ हो जाये। फिर पत्थरके बर्तनोंमें छोड़ रखनेपर हीराकसीस नीचे बैठ जाता है उसे इकट्ठा

करके बेच डालते हैं। जब सब हीराकसीस नीचे बैठ जावे अर्कको नितार कर गरम करते हैं। जब उसका गुरुत्व १.०४ हो जाता है, क्षार डालकर फिटकरी अलग कर लेते हैं।

जो फिटकिरी नीचे बैठ गयी है उसमें फिटकरीके अतिरिक्त और भी अनेक पदार्थ उपस्थित होते हैं जिनको अलग करना आवश्यक होता है सुगम रीति यह है कि ठंढे पानीसे दो एक बार धो डाले, धोते समय फिटकिरी तो बहुत कम मात्रामें घुलती है और दूसरे पदार्थ अधिक मात्रामें घुल जाते हैं। इस धोवन को फिटकिरी के डलोंके धोनेके काममें लाते हैं, कि फिटकिरीका कुछ भी अंश निरर्थक न जावे। अब यदि फिटकिरीको मोटे डलों अथवा रवों में बदलना हो तो उसकी बहुत थोड़ी मात्रा पानीमें डाल कर आगपर पकाते हैं और पानीकी बहुत कम मात्रा होनेपर सीसेके पात्रोंमें इस अर्कको डाल देते हैं। दस या बारह दिनमें यह फिटकिरी डलोंके रूपमें बदल जाती है।

---

# भुनगा पुराण

[ ले० रामदास गौड़, एम्. ए. ]

## कपाल खण्ड

महाप्रलय तथा भूगर्भ वर्णन

इतनी कथा सुन श्री भुनगेश जी महाराज परम बिनीत भावसे शिर नवा पर जोड़ जुंग ऋषिजीसे बोले "महाराज, यह मनोहारिणी कथा सुन चित्त आह्लादित हो गया और अधिक सुननेकी ओर रुचि बढ़ गयी, परन्तु हे कृपासिंधो! आपने जो यह कहा कि मनुष्य ग्रह है, इसमें मुझे बहुत शंका है, क्योंकि भुनगा-भुवनमें यह बात प्रसिद्ध है कि मनुष्य एक पहाड़ है जो डोलता फिरता है। इस पहाड़में अनेक गुफाएं, अनेक नदियां आदि हैं। इसे आपने ग्रह किस प्रकारसे समझा, सो मुझे विस्तार पूर्वक सुनाइये। और मेरी शंकाको दूर कीजिए"।

यह प्रश्न सुन जुंग महामुनि आत्मगौरवसे फूल कर प्रसन्न हो बोले "हे वत्स, क्या तुमने वह यंत्र देखे हैं जिनके बलसे जुंगोंकी जातिने इस ग्रह तथा अनेक ग्रहोंकी खोजकी है? भुनगा-भुवनमें यह यंत्र कहां। जुंगोंके ढाई सौ वर्ष हुए होंगे कि ग्रहों और तारोंकी चाल नापनेके लिए जुंगोंमेंसे एकने एक ऐसा यंत्र बनाया जिसके द्वारा मालूम हुआ कि यह ग्रह नियमित समयसे आकाश-मंडलमें चक्कर लगाता है। जब इसका एक युग पूरा हो जाता है, तो एक स्थानपर स्थिर दूसरे युगभर स्थिर रहता है। तीसरे युग फिर चक्कर लगाता और चौथेमें फिर स्थिर हो जाता है।

महाराज! इस आकाशमंडलमें ऐसे सैकड़ों ग्रह इसी प्रकार भ्रमण करते और फिर आराम करते हैं। इन ग्रहोंके आराम करनेका युग सब एक साथ ही होता है। और चक्कर लगानेका युग भी साथ ही आता है"।

इतनी कथा सुन भुनगेश्वरजीने प्रार्थना की "कृपानिधान, युगका परिमाण भी कृपा कर बताइये।"

श्री जुंगेश्वर जी बोले "हे भुनगानन्दन, हमारे यहां भी वही युगका परिमाण है जो भुनगा-भुवनमें है। दोनोंमें तनिक भी भेद नहीं। अर्थात् जितनी देरमें एक बार पंखका फट फट होता है उसे एक पल, उस पचीस पलका एक घंटा और उस चौबीस घंटेका एक अहर्निश, ३६० अहर्निशका एक वर्ष, १२ वर्षका एक युग। सो, जो जुंग भुनगादि संसारका एक युग होता है, इस मानव ग्रहके ब्रह्माका एक रात वा दिन होता है।

हे महाराज आपके प्रश्नोंमेंसे मैंने यह बताया कि यह कौन देश है और यहांके पेड़ कैसे हैं। अब इस पवित्र उर्वरा भूमिकी कथा सुनिए।

लवणामृतके स्रोत जहँ बहत सहस्रन धार,
रक्तसेत मछरी जहाँ अहनिसि करत विहार,
जेहिके बल यह चिकुर बन रहत निरंतर स्याम,
जुंगादिक जेहि पानकरि राजत पूरन काम,
सबै जु ंग निज मातु सम मानत धरती जेहि,
जासु नेह बस देह निज तृन समान तजिदेहिं।

भगवन्, जैसी देश भक्ति जु ंगोंमें है भुनगोंने कभी सपनेमें भी न देखी होगी। जिस पवित्र भूमिपर आप विराजमान हैं, एक कल्पसे हमारे ही पूर्वजोंके अधिकारमें चली आयी है। यह पुण्यमयी धरती पहले तो बड़ी उपजाऊ है। द्वियुगीमें कम से कम एक बार तो अवश्य किसी समय इस जंगलमें बड़ा तूफ़ान आता है। मेघकी बड़ी घोर वर्षा होती है, पर इस घने जंगलके ऊपर ही ऊपरसे पानी प्रायः बह जाता है और हम लोगोंके भीगनेकी नौबत बहुत कम आती है, परन्तु वर्षाके बाद ही बड़ा घोर बज्रपात होता है* बिजली चमकती है और इन्द्रदेव और वायु कुपित हो बज्र और आंधीसे चिकुरोंको दलित और मर्दितकर डालते हैं। इस घोर विपदमें बहुतेरे जुंगोंके, जो उस समय अपनी गुफाओंसे बाहर होते हैं, व्यर्थ ही प्राण जाते हैं। इस देशमें वर्षा भी भाँति भाँतिकी होती है। तेल, झाग, पानी, मिट्टी, सब कुछ बरसता है। किसी किसी ग्रहमें कल्पके अन्तमें और किसीमें बीचमें ही महाप्रलय हो जाता है। महाप्रलयके समय यह जंगल बिलकुल कटकर साफ हो जाता है और जुंगोंका नाश हो जाता है। धरतीपर चिकुर मूलको छोड़ और कुछ नहीं रह जाता, बल्कि एक पर्त्त पृथ्वी भी छिलसी जाती है। इस महाप्रलयमें पहले गरम जल बरसता और साथ हो बड़े ज़ोरका झकोरा आता है और एक ओर से ही सैकड़ों हजारों चिकुर इस तरह कटते जाते हैं, कि कोई इतनी तेज़ीसे खेत भी नहीं काटता। निदान इस महाप्रलयमें कोई नहीं बचता। हमारे ऋषियोंने अपनी दिव्य दृष्टिसे यह जान लिया है कि महा प्रलयमें भी यह धरती शेषनागके* फनपर टिकी रहती है और अनेक युगोंके बाद ब्रह्मा फिरसे सृष्टि रचते हैं। धीरे धीरे फिर बड़े बड़े चिकुरोंका जंगल खड़ा हो जाता है और फिर जु ंगावतार होता है"।

*नहानेके बाद कंघी।

इतनी कथा सुनाय श्री जु ंगेश्वरजी भुनगेश जीसे बोले "भगवन, यह तो पृथ्वी तलकी कथा हुई। यह तो सर्वसाधारणको भली प्रकार विदित है। जु ंगपुराणमें अनेक स्थलोंमें इसका वर्णन हुआ है। परन्तु आज मैं वह गुप्त रहस्य वर्णन करना चाहता हूँ जो मैंने अपनी आंखों देखा है और जिसे त्रैलोक्यमें और कोई नहीं जानता। तुम्हें अपना परम प्यारा भक्त जानकर कहता हूँ।

हे भुनगानन्दन! वसन्त ऋतुका सुहावन समय था, सीरी सीरी मंद मंद सुगन्धसे सनी, घनी चिकुरावलीमें बहती हुई वायु प्रत्येक शाखाको हिलाती अटखेलियां करती जा रही थी। जहां मैं सुखसे बिचर रहा था वह इस कपाल-खंड भूमिका वह स्थान था जहां धरती के दो भागसे हो गये हैं और जरासा ही खोदने से बड़ा भयानक दरार दीखने लगता है। ऐसे स्थानमें मैं खड़ा ही था कि एका एकी अनभ्र बज्रपात अथवा उल्कापात हुआ। आकाश मंडलसे कोई तारा इस वेगसे टूटा और धरतीपर गिरा कि उस स्थानपर २५ गज व्यासका गड्ढा हो गया। कुशल हुआ, मैं बाल बाल बच

* शेषनागका फन मनुष्यकी गरदन है।

गया, क्योंकि मेरे एक गजपर ही यह भयानक गड्ढा फटा था" ।*

भुनगेश्वरजीने बात काटनेकी क्षमा मांगते हुए इस स्थलपर पूछा "महाराज, आपने काल-का परिमाण तो बताया, पर देशका परिमाण अर्थात लम्बाईका परिमाण भी बतलाने की कृपा करें"।

जुंगेश्वरजी बोले "हे वत्स! हमारा शरीर जुंगसंसारका दो गज होता हैं। †इसी गजसे २० गजका एक मील होता है। ऐसाही जानना।

सो हे भुनगानन्दन जी, उस दुर्घटना का प्रभाव इतना बुरा मेरे ऊपर पड़ा कि मैं उसी समय मूर्च्छित हो गया। परन्तु यह मूर्च्छा शीघ्रही दूर हो गयी और मैं सचेत हो उठ खड़ा हुआ, वह बज्र जिससे यह गड्ढा हुआ उछलकर आकाशमें चला गया था। इन्द्रका आयुध इस मृत्युलोकमें कैसे ठहर सकता है।

जब मेरा मन शान्त हुआ, मैंने विचार किया कि इस गड्ढेमें प्रवेश करके धरतीमाताके गर्भके रहस्य जानने चाहिएं। जब मैं अपनी जवानीमें शिखा-वनमें जुंग-महाविद्यालयमें शिक्षा पाता था उस समय भूगर्भ विद्याकी ओर मेरी बड़ी प्रवृत्ति थी और अनेक बार अपने शुंड-शूलसे मैं ने खोद खोद परीक्षा भी की थी। परन्तु ज्योंही परीक्षा करने लगता त्योंही ऐसी बड़ी आंधी आ जाती+ कि सारा चिकुरवन बिदलित हो जाता था और शान्तिपूर्वक परीक्षा हो न सकती थी। इस बार उस विराट नर-परमात्माकी कृपासे मैं निर्विघ्न परीक्षा करनेमें समर्थ हुआ।

बड़ी सावधानीसे मैं गड्ढेके किनारेपर पहुँचा। देखा कि यद्यपि दस गजसे कम गहरा न होगा तथापि उसके चारों ओर नीचे ऊंचे छोटे छोटे गड्ढे इतने बन गये थे कि उनके सहारे उतर जाना कोई बात न थी। सो मैं धीरेसे उतरकर एक नन्हेंसे गड्ढेके सहारे खड़ा होकर धरतीके स्तर देखने लगा।

पहले पांच स्तर चीमड़े और बहुत ही छेदीले थे जिनके भीतर नलिका सरीखे असंख्य छिद्र थे। उन्हीं छिद्रोंके भीतरसे चिकुरमूल धरतीमें गड़े थे और धरतीसे अपना भोजन एक घुंडीके द्वारा खीचते थे। इसके नीचे कोषोंका एक स्तर था जिनमें पीयूष सरीखा रस भरा था। इनके नीचे के पर्त्तसे असंख्य छोटी छोटी नालियोंका झुंड था। कोई नीली और कोई पीली थीं। नीलीमेंसे नीला रक्तयूष बह रहा था † और कई बड़ी नालियां थीं, उनमें से विशुद्ध लाल लाल रक्ता-मृतकी धारा फव्वारेकी तरह निकल रही थी। इस स्तरके नीचे बड़ाही कठोर पत्थर था जिसे देव भाषामें अस्थि कहते हैं। इस उल्कापातमें यह कठोर पत्थर भी फट गया था और उसके नीचे कोमल भूरी भूरी मिट्टी थी जिसमें लाखों करोड़ों ममाखियोंके से कोष बने हुए थे। रक्तामृतकी नालियां भी जगह जगहपर बह रही थीं और उस भूरी भूरी मिट्टीमेंसे असंख्यों पीले पीले रेशे१ थे जो उलझेसे बड़ी दूर दूर फैले थे और एक स्थानमें तो गुच्छसे हो गये थे।

गड्ढेमें मैं कुछ आगे बढ़ा। रक्तामृतकी धारा बह रही थी। उसमें बड़ी अद्भुत लीला हो रही थी। लाल और श्वेत मछलियां बड़े वेगसे उनमें घबरायी हुई चल रही थीं। श्वेत मछ-लियां बड़ी विकराल थीं। आप समझ सकते हैं कि रक्तामृत२ जैसा स्वादिष्ट रसको पीनेका

*सिरमें गोली लगी †जूं साधारणतः २ मिलीमीटर लम्बी होती है। अतः जुंगऋषि का गज १ मिलीमीटर हुआ। २५ गज एक इंचके लगभग हुआ।

+ सिर खुजलाना।

† सिरा वा Veins जिनमें नीलिमा युक्त अशुद्ध रक्त बहता है। धमनी arteries में शुद्ध लाल रुधिर बहता है।

१ पीले रेशे नाड़ियां nerves हैं।

२ रक्तामृत रुधिरका वह वर्णहीन रस जिसमें रक्त और श्वेत रुधिराणु रहते हैं और जो खूनके जमनेपर अर्क सा बच रहता है। यह नमकीन होता है।

किसे हौसला न होगा और जब इस तरह उसकी धारा बहती हो तो अपनी तृष्णाको कौन दबा सकता है। सैकड़ों छोटे छोटे जीव आकर उस धारामें अमृतपानके लिए टूट पड़े और उनका रक्तमें आना था कि उनपर वह श्वेत मछलियां बड़े बिकराल रूपसे टूटपड़ीं और उन्हें छिन्न भिन्न करने लगीं। बस, दोनों पक्षों में बड़ा घोर युद्ध मचा। इधर तो काले जीवों और सफ़ैद मछलियोंमें देवासुर संग्राम होता था। उधर लाल मछलियां अपने शरीरसे उस बड़े गढ्ढे को पाटनेमें लग गयीं। धरती माताके गर्भके यह चरित्र देख मैं दंग रह गया। इस भीतरी दृश्यको देखनेका आजतक मेरे सिवा किसी जुंगको सौभाग्य न हुआ। इस अवसरसे लाभ उठानेको मैं भी आगे बढ़ा। चाहता था कि एकाध घूंट रक्तामृत मैं भी पान कर लूं कि एकाएकी मूसलाधार विषैले जलकी ऐसी बाढ़ आयी* कि मेरे छओं पैर बेकाबू हो गये और मुझे मूर्च्छा आ गयी।

आधे युगतक मैं मूर्च्छामें ही रहा। आंखें खुलीं तो देखता क्या हूँ कि अपनी कुटीके पास एक चिकुरके नीचे सुख शय्यापर सो रहा हूँ। जुंगनी देवी पंखा झल रही हैं। बाल बच्चे घेरे हुए हैं। मुझे सचेत देख जुंगनी जो ने नर-परमात्माके अनेकानेक धन्यवाद दिये, धरती माताको सीस नवाया, मुझे एक घूँट ताज़ा रक्तजल पिलाया। मेरा चित्त जब शान्त हुआ, मैंने अपनी धर्म्मपत्नीसे शेष कथा सुनी।

मैं जब मूर्छित होकर गढ्ढेसे बाहर बह आया, तो एक चिकुर मूलसे लिपटा पड़ा रहा। इतनेमें उस बाढ़से गढ्ढे का बहुत सा भाग धुल गया। फिर उसमें बड़े विषैले धूल† की ऐसी वर्षा हुई कि गड्ढा भर गया। फिर उसपर बड़ी-मोटी टट्टी‡ चिकुर सरीखे मोटे पेड़ोंके डंठलों की पड़ गयी। यह अद्भुत टट्टी धरतीकी रक्षा केलिए देवताओंने आकाशसे गिरायी थी। इस टट्टीने सारी धरतीका एक कटिबन्धका कटि-बन्ध ही घेर लिया। युगमें एक बार यह टट्टी उठ जाती थी और पहलेकी नाईं विषैले जलकी वर्षा और विषैली धूलका झोंका आता था और फिर टट्टी पड़ जाती थी। इस प्रकार कई छियुगियोंमें यह गढ्ढा इन्द्रदेव की कृपासे पट गया और टट्टी गायब हो गयी"।

इतनी कथा सुनाय श्री जुंगजी महाराज भुनगेशजीसे बोले "भुनगेश जी, इस पुण्यमयी धरतीपर देवताओंकी बड़ी कृपा रहती है। वह सदा इसकी रक्षा करते रहते हैं। समयानुसार यथोचित वर्षा आदि करते हैं। और बुद्धि-में तो यह आता है कि वह जो कभी कभी इस धरतीपर महाप्रलय लाते हैं, अथवा जो प्रति-युग आंधी पानी वज्रपात आदि से कुछ जुंगों-का नाश भी कर देते हैं, यह भी हमारी भलाई-केलिए है। मारना भी रक्षाका एक अंग है। हम लोग नर-परमात्माकी सृष्टि हैं। वह हमें अपनी अद्भुत शक्तिसे उत्पन्न करता, हमारे पालनके-लिए पहलेसे ही उपाय कर रखता है, हमें उसीने आहार विहारादिके लिए शक्तिमती इंद्रियां दीं, और अन्तमें जब जुंग-जगतमें पाप अधिक फैल जाता है, जुंग नारियां कुलटा हो अनेक वर्णसंकर उत्पन्न करती हैं, जुंग पुरुष लोग अनधिकार कर्त्तव्य करने और देवताओंके नियमके विरुद्ध सीमोल्लंघन करने तथा धरती खोदना आदि अनेक उत्पात करने लगते हैं तब हमारी अच्छी जाति उत्पन्न करनेकेलिए वह नर परमात्मा महाप्रलय कर देता है—

ज्याय पालि मारत केहि भांती धन्य अखिल रखवाल !

देखिये जुंगवेद में क्या कहा है—

* घाव कार्बोलिक लोशनसे धोया गया। †एडोफ़ार्म और बोरिक एसिड (सुहागाम्ल) का चूर्ण।

‡ कपड़े की पट्टी।

"परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्
धर्म्म संस्थापनार्थाय ग्नौर कर्म्म करोम्यहम्।"
इत्यार्षे श्री भुनगा महापुराणे कपालखंडे भूगर्भ वर्णनो नाम द्वितीयोऽध्यायः।

---

## चीज़ोंकी रंगत।

[ ले० श्रीयुत वासुदेवलाल, क्वींस कालिज, काशी ]

हम जिन चीज़ोंको नित्य देखते हैं उनकी विचित्रता हमारी आंखों-से रोज देखते ही देखते ओझल हो जाती है और हम यह विचार नहीं करते कि उन वस्तुओंका तत्त्व क्या है। एक बहुत साधारण सी बात रंग है। पत्तियां हरी, फूल लाल पीले नीले बैंगनी, क्यों दिखायी देते हैं? इनपर सूरजकी रोशनी तो सफ़ेद पड़ती है, फिर इनके रंगीन दीखनेका कारण क्या है? रातको लाल माहताबीकी तेज़ रोशनीमें क्या रंगोंकी यही हालत रह जाती है? क्या नीली माहताबी रंगोंके उस समाको बदल नहीं देती? जब हम इन साधारण अनुभवोंपर विचार करते हैं, तब हमारे मनमें यह भाव उदय होता है कि हो न हो रंगोंका संबंध प्रकाशसे हो, सूर्य्यकी किरणों-से हो। आज हम इसी विषयपर विचार करते हैं।

जिसे हम सफ़ेद रोशनी कहते हैं असलमें क्या है? सूरज, बिजली, गैस, तेल, जाली कहीं-से आये, एक दूसरेमें भेद होता ही है, पर साधारणतः प्रकाश उजला ही होता है। परंतु कभी कभी नलके पानीसे धूपके सामने छींटा या फुहारेके उड़नेपर इन्द्र-धनुषके रंग दिखाई देते हैं। पानीपर मिट्टीके तेलका अंश तैरता है और रोशनीके सामने तिरछा करके देखते हैं तो भी कई रंग दीखते हैं। लाल रंग जो विला-यती बुकनीसे बनता है उसमें भी विचित्र बात देखते हैं कि है तो लाल पर रोशनी पड़ने पर हरा दीखता है। यहां तक कि रवे भी हरे रंगके होते हैं पर रंगनेपर लाल रंग होता है। इन बातोंसे यह शंका पैदा होती है कि सफेद रोशनी कई रंगोंकी बनी हुई है। इसकी परीक्षा दो तरहकी हो सकती है। एक तो यह कि प्रकाशके टुकड़े करके देखे जायँ और दूसरे यह कि अनेक रंगोंको साथ रखकर तेज़ घुमाया जाय और देखा जाय कि सब इकट्ठा दिखाई पड़ें तो उजला रंग देख पड़ता है या नहीं। हम यह दोनों परीक्षाएं इस प्रकार कर सकते हैं—

Light प्रकाश ]

एक अंधेरी कोठरीमें सूर्य्यका प्रकाश किसी लम्बे छेदसे लाया जावे और छेदसे थोड़ी ही दूरपर एक सफ़ेद परदा रक्खा जावे तो परदे-पर एक लम्बा पतला प्रकाश पड़ेगा। इस प्रकाशका रंग बिल्कुल श्वेत होगा। अब यदि प्रकाशके रास्तेमें एक तिपहल बिल्लूर या कांच (prism) ले जांय जैसा अकसर झाड़से लटकता रहता है और उसको इस प्रकार एक किनारेसे थांभे रहे कि इसका एक पहल (तल) या तो ऊपरकी ओर समधरातल हो या नीचेकी ओर और प्रकाश किसी दूसरे तलसे घुसे तो परदेपर जहां पहले श्वेत प्रकाश पड़ता था वहां एक रंगीन पट्टी दिखाई देगी। इस रंगीन पट्टीको रश्मिचित्र (spectrum) कहते हैं। यदि पहल ऊपरकी ओर सम-धरातल होगा तो रश्मिचित्र कुछ ऊपर पड़ेगा और नीचेकी ओर समधरातल होगा तो वह नीचेकी ओर चला जायगा। पहलेमें सबसे ऊपरका रंग बैंगनी होगा और उसके नीचे क्रमसे नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी और लाल रंग होंगे। परंतु जो रश्मिचित्र नीचे चला जायगा उसमें सबसे ऊपर लाल रंग होगा और उसके नीचे क्रमसे नारंगी, पीला, हरा, आस्मानी, नीला और बैंगनी रंग होंगे। ऐसे भी सूर्य्यके प्रकाशमें तिप-हल कांचके रखनेसे प्रायः इन्हीं सात रंगोंकी

पट्टी दिखायी पड़ती है। यही रंग उपर्युक्त क्रमसे इन्द्रधनुषमें भी दीख पड़ते हैं।

आपने जो बिल्लूरका तिपहल लगाया था वह सफ़ेद है। रोशनी भी सफ़ेद ही थी। फिर यह सात रंग कहांसे आये? बिल्लूरको एक विशेष स्थितिमें रखनेसे एक कोनेसे छेदवाली रोशनीको जब जाना पड़ा तो उसमेंकी किरणें अलग अलग हो गयीं। इस प्रकार उस छेदकी रोशनीके अनेक टुकड़े हो गये जिनके अनेक रंग सफ़ेद दीवार या परदेपर पड़कर दिखाई देने लगे। यह तो विश्लेषण अर्थात् टुकड़े टुकड़े करनेकी विधि हुई। अब दूसरी विधि लीजिए।

एक कागज़की दफ़तीका गोल टुकड़ा जिसका व्यास एक बिलस्तसे कम न हो लेकर पेंसिलसे उसके चार बराबर हिस्से करें और हर एक हिस्सेके सात भाग इस हिसाबसे करें जिस हिसाबसे कि रोशनी ऊपर दिखलाये हुए रश्मि-चित्रमें थी। अब इन सातों हिस्सोंमें क्रमसे वे ही सात भिन्न भिन्न रंग लगा कर रंग दें। अब अगर हम इस टुकड़ेके बीचमें किसी तागेको लगाकर जोरसे किसी अच्छी रोशनीकी जगहमें नचावें तो हमको टुकड़ा सफ़ेद या करीब करीब सफ़ेद रंग का दिखलायी देगा। इस परीक्षासे प्रकट है कि सूरजकी अनेक रंगकी किरणें एक साथ आती हैं इसी लिए सबके मिलनेसे रोशनी सफ़ेद मालूम होती है।

यही सफ़ेद रोशनी सब चीज़ोंपर पड़ती है। जो चीज़ें किरणोंको बिलकुल नहीं सोखतीं, वह सभी किरणें फेंकती हैं। सब किरणोंके साथ ही फेंके जानेसे वह चीज़ें सफ़ेद दीखती हैं। पर बहुतेरी चीज़ें कुछ किरण सोखकर बाकी फेंक देती हैं। जो किरणें फेंकी जाती हैं उन चीज़ोंपर उन्हीं किरणोंका रंग झलकता है। इसीसे वह चाज़ें रंगीन दिखायी पड़ती हैं। पत्तियां हरी इसीलिए दिखायी पड़ती हैं कि और सब किरणें पत्तियोंमें प्रवेश कर जाती हैं पर हरी किरणें प्रवेश नहीं करतीं। इसलिए पत्तियां हरी दीखती हैं। अगर हम एक रश्मि चित्र (spectrum) जैसा कि ऊपर बनाया गया था बनावें और छेद और प्रकाशके बीचमें एक लालका टुकड़ा रख देवें तो हमको केवल लाल रोशनी चित्रपर दिखलायी देगी। और बाकी रंग एक भी नहीं दीखेंगे। वजह यह है कि लाल सब प्रकारके रंगोंको सोख लेता है और केवल लाल रंगकी रोशनीको अपने बीचसे होकर जाने देता है इसलिये यह लालका टुकड़ा लाल दिखलाई देता है। इसी तरह जिस रंगकी चीज़ हम लालकी जगह रखदें वही रंग हमको रश्मि-चित्रमें दिखलायी देगा। अगर एक सफ़ेद कागज़का टुकड़ा रक्खा जावे तो रश्मिपट सुफ़ेद हा दिखलायी देगा। अगर एक गुलाबी फ़ीतेका टुकड़ा रक्खें तो वह रश्मि-चित्र के उस हिस्सेमें जहां लाल है और भी चमकीला लाल दिखलाई देगा लेकिन और हिस्सोंमें अर्थात् हरा, पीला, इत्यादि की जगह काला दिखलायी देगा। अगर एक हरी पत्तीको बीचमें रक्खें तो हरे की जगह रश्मि चित्रमें हरा दिखलाई देगा लेकिन और जगहोंमें काला। इसी तरह और पदार्थोंका भी हाल होगा।

इसलिए, फल यह निकला कि पदार्थ किसी विशेष रंगका इस कारण दिखलायी देता है कि वह अपनी धरातलसे उस रंगकी रोशनी को अर्थात् किरणोंको फेंक देता है। इसलिए आंखको वही रंग दिखलायी देता है। रोशनीके बाकी रंगोंको या किरणोंको वह सोख लेता है जिससे कि वह रंग आंख तक नहीं आने पाते।

पुराणोंमें यह कथा प्रसिद्ध है कि भगवान दिवाकरके रथमें सात घोड़े हैं। घोड़ोंका रंग सफ़ेद है। कद्रू और बिनता कश्यपकी दो स्त्रियां थीं। उनमें होड़ लगी। कद्रूने कहा कि घोड़े काले हैं और इसे सिद्ध करनेको उसने

अपने पुत्र सर्पोंसे घोड़ोंके अंग ढकवा दिये जिससे घोड़े काले दीखने लगे। विनता हार गयी। हमारा अनुमान है कि सूर्य्य भगवानके सातों घोड़े यही सात रंगकी किरणें हैं जो एक साथ आनेसे सब श्वेत दीखती हैं। जो वस्तु इन किरणोंको बिलकुल नहीं सोखतीं सफ़ेद दीखती हैं। जो सारीकी सारी किरणें सोख लेती हैं बिलकुल काली दीखती हैं। पुराणका इस कथामें संभवतः इसी प्रकार किरणोंका सोख लिया जाना वर्णन किया है और किसी समयके सूर्य्य ग्रहणको इसप्रकार चित्रित कर रक्खा है।

---

## कोकेन—मनुष्य-जातिका एक भयानक शत्रु।

[ ले० गोपाल स्वरूप भार्गव, एम् एस्-सी. ]

इस वस्तुका नाम सुनकर प्रायः लोगोंके कान खड़े हो जाया करते हैं। इसके संबन्धमें बहुत सी कहानियाँ मशहूर हैं। इस प्रान्तके शहरोंमें यह खुल्लम खुल्ला बिका करती है और कुछ नवयुवक पानके बीड़ोंमें रखकर इसका सेवन करते हैं और इसी कारण इसका दाम मनमानी लिया जाता है। परन्तु हममेंसे बहुत कम लोग जानते होंगे कि यह क्या है और इसके दुरुपयोगसे कितनी हानि पहुँचती है।

कोकेन क्या है? यह कोका वृक्षकी पत्तियोंका सत्त है। इसका वृक्ष दो तीन गज़ ऊंचा होता है। दिये हुए चित्रमें इसके आकारका पता चल जायगा। कोकेन इसी वृक्षकी पत्तियोंसे तैयार की जाती है। यह रवादार ठोस पदार्थ है। पानीमें यह नहीं घुलती परन्तु अल्कोहल, क्लोरोफ़ार्म आदि घोलकोंमें बड़ी सुगमतासे घुल जाती है।



कोकेन कहां बनायी जाती है? यद्यपि भारतवर्षमें कोका वृक्षकी खेती अब की जाती
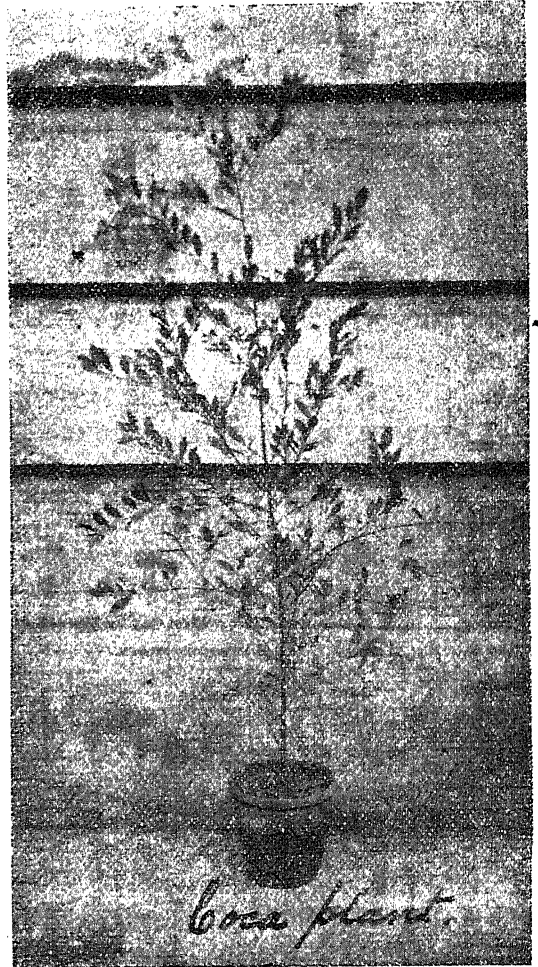
कोकेका पौध

है तथापि कोकेन तैयार करनेकेलिए इसकी पत्तियां सुखाकर अन्य देशोंको भेजी जाती हैं। लंकामें इसकी खेती बहुतायतसे होती है। वर्त्तमान महायुद्धके छिड़नेके पहले पत्तियां अधिकांश जर्मनीको जाया करती थीं। वहांसे ही कोकेन तैयार होकर आया करती थी। इङ्गलेण्डमें कुछ कारखाने इसको तैयार करते हैं।

कोका वृक्ष भारतवर्षमें पहले नहीं होता था। तम्बाकूकी नाईं यह भी हमें पाश्चात्योंसे मिला। जिस प्रकार प्लेग, गर्मी इत्यादि रोग पच्छिमी देशोंके नीचे दर्जेके मनुष्यों द्वारा आकर भारतके लाखों मनुष्योंको गारत कर रहे हैं उसी प्रकार कोकेनके खानेकी आदत भी नीचे दर्जे के युरुपियनोंसे पहले पहल बङ्गालके कुछ मनुष्योंने सीखी। अब बढ़ते बढ़ते समस्त भारतमें इसने अपना राज्य जमा लिया है, थोड़ेसे गावों को छोड़, सब बड़े बड़े शहरोंमें इसका प्रयोग होने लगा है जो बढ़ता ही जाता है।

इसी कारणसे सं० १६०५ में सरकारने यह नियम बना दिया कि दवा बेचनेवालोंके सिवा कोई मनुष्य रत्तीके सोलहवें भागसे अधिक कोकेन अपने पास नहीं रख सकेगा। अधिक मात्राकेलिए औषधालयोंको भी सर्कारी आज्ञा पत्र ( license ) रखनेकी आवश्यकता होगी। परन्तु इन नियमोंसे कोकेनका बाहरसे आना कम नहीं हुआ। केवल इतना ही अन्तर हो गया, कि छिपाकर मंगाने, बेचने, और मोल लेने वालोंको नयी नयी युक्तियां निकालनी पड़ीं। इन युक्तियोंका हाल समाचार पत्रोंमें प्रायः पढ़नेमें आया करता है। खुफिया पुलिसने भी बहुत खोज की और पता लगाया, परन्तु इस औषधिका प्रयोग इतना अधिक होने लगा है कि जब तक शिक्षित जन समुदाय भी इस काममें हाथ न बटाएगी, तब तक कुछ सफलता न होगी।

### कोकेन क्यों खाया करते हैं ?

इस बातका उत्तर देना बड़ा कठिन है। यदि शराब क्यों पिया करते हैं? तम्बाकू क्यों खाया करते और भाँग क्यों खाते पीते हैं इत्यादि प्रश्नोंके उत्तर दिये जा सकते हैं, तो इस का भी उत्तर दे सकते हैं। तम्बाकू पीनेवाले जब पहले पहल तम्बाकू पीना सीखते हैं तब आंखे लाल हो जाती हैं, जी मिचलाता है, मुंहसे दुर्गन्धि निकलती है और यदि धांस लग जाती हैं तो खांसते खांसते परेशान हो जाया करते हैं फिर भी तम्बाकू पीना नहीं छोड़ते। इसका कारण क्या? संगका प्रभाव। एकवार प्रयोग किया, उससे कष्ट हुआ, परन्तु मित्रोंने उत्तेजना दी, उसकाया, फिर दुबारा प्रयोग किया, दो चार बार प्रयोग करनेसे शरीरमें नयी नयी ऐसी विषैली वस्तुएं पैदा हो जाती हैं जिनका प्रभाव दबा रखनेकेलिए उसी वस्तुका फिर प्रयोग करना पड़ता है। यही आदत पड़नेका कारण है। परन्तु यदि मनुष्य चेत जाय और थोड़े मानसिक बलसे भी काम ले तो आदत छूट सकती है।

विज्ञानके बहुतसे आविष्कारोंका मूर्खोंने बड़ा दुरुपयोग किया है। जिस डाइनेमाइटके ज्ञानसे पहाड़ोंको चीरकर नदियोंका जल मनुष्यके लाभकेलिए एक स्थानसे दूसरे स्थानपर पहुंचाया गया, जिसके प्रयोगसे महीनोंका रास्ता स्वेज़ और पनामाकी नहरों द्वारा दिनोंमें तै होने लगा उसीसे आज युरूपमें करोड़ों मनुष्य कालके गालमें भेजे जा रहे हैं। जिन विमानोंसे सभ्यताके एक नये कल्पके आरम्भ होनेकी आशा थी, उन्हीं विमानोंसे बम्ब गिरा गिराकर हज़ारों निरपराध मनुष्य और स्त्रियां मारी जाती हैं। कोकेन भी डाक्टरी चीर फाड़का काम करनेके समय मनुष्यका कष्ट कम कर देनेकेलिए निकाली गयी थी, परन्तु अब उसीसे लाखोंका सर्वनाश हो रहा है।

कब और कैसे खायी जाती है? प्रायः नौसिखे इसे संध्याकालमें खाया करते हैं, यह बहुधा पानमें खायी जाती है और कभी कभी इसकी गोलियां भी बनाकर खाते हैं। इसकी खानेकी मात्रा निश्चित नहीं है, अभ्याससे इसकी खुराक बढ़ायी जासकती है, जैसे लोग अफीम और संखिया की मात्रा बढ़ा लिया करते हैं। एकबारगी अधिक खा जानेसे आदमी मर भी गये हैं।

खानेके बाद क्या दशा होती है? जीभ और होठ सुन्न हो जाते हैं। यदि जीभके नीचे तापमापक रक्खा जाय, तो उससे तापक्रम बढ़ता हुआ नहीं मालूम होगा। सिर भारी होने लगता है, हृदयकी धड़कन और गरदनकी नसोंका फड़कना तेज़ हो जाता है। नाड़ीकी चाल गम्भीर और तीव्र हो जाती है, पर प्रति मिनट ११० से अधिक नहीं बढ़ती। इसी अवस्थाको मनुष्य परमानन्द मानने लगता है और एकान्तमें रहना चाहता है। मुंह वह इस भयसे बन्द कर लेता है कि कहीं राल न टपक पड़े। गाल पीले पड़ जाते हैं, नाक की फुनगी ठण्डी हो जाती है, गर्दन और माथेमें पसीना वेगसे निकलने लगता है और उंगलियोंके सिरे ठण्डे हो जाते हैं। यह दशा आध घण्टे तक रहती है। इसके पीछे होठ गीले हो जाते हैं, पसीना भी बन्द हो जाता है, पर मलिनता और ग्लानि मालूम होती है। अधिक कोकेन खानेको जी चाहता है। यह इच्छा केवल भ्रममात्र है, यदि चाहैं तो आसानीसे रोक सकता है।

कोकेन खानेसे क्या हानि होती है? अन्य मादकोंकी नाईं यह भी उद्दीपक और उत्तेजक होती है। परन्तु यह याद रखना चाहिए कि साधारण अवस्थामें सभी उद्दीपक हानिकारक होते हैं। एक मामूली उदाहरणसे यह बात भलीभांति स्पष्ट हो जायगी। मान लीजिए कि आपने एक अंगीठीमें कुछ कोयले जलाये जिसकी आग साधारण अवस्थामें आध घण्टे तक ठहरेगी, पर यदि आप उसे धौंकनीसे धौंकें तो यद्यपि आंच अधिक तेज़ हो जायगी, तथापि कोयले अब दस ही मिनटमें खतम हो जायँगे। उद्दीपकोंसे जो शक्ति बढ़ी हुई मालूम होती है, वह क्षणभरके लिए है, उसके बाद कमज़ोरी और ग्लानि बढ़ने लगती है। इसी कारण अफीमका सत (morphia), इत्यादि भी बड़े हानिकारक होते हैं। स्वस्थावस्थामें प्रायः सभी उत्तेजक जिसे लोग भूलसे बलवर्द्धक समझते हैं हानि पहुंचाते हैं।

कोकेन सेवन करनेके पीछे उसको और अधिक खानेकी उत्कट इच्छा होती है। नींदका आना बन्द होजाता है। पहले कष्टसाध्य अजीर्ण हो जाता है जो अन्तमें संग्रहणीका रूप धारण कर लेता है। मनुष्य बहरा हो जाता है और उसे सदा डर लगा रहता है जिससे वह बात बातमें चौंक उठता है। होठ और जीभ बिलकुल स्याह हो जाती हैं। यह बड़ी मंहगी मिलती है, यहां तक कि फुटकर लेनेमें १५०) रुपया तोले तकका भाव हो जाता है। इसके जुटानेके लिए प्रायः मनुष्य अपना समस्त धन सम्पत्ति नष्टकर दिया करते हैं, और अन्तमें चोरी, जालसाज़ी, और अन्य बुरे काम करनेपर उतारू हो जाते हैं।

डाक्टर कैलाशचन्द्रबोसके मतसे इसके सेवनके दुष्परिणाम यह हैं 'सिरमें दर्द होना, शरीरका सूखना, नीन्दका न आना, दाँत और जीभका काला हो जाना, पुतलीका फैलना, नाड़ीका तीव्र तथा बलहीन होना, या कभी २ यथाविधि न चलना, मूर्च्छा, मोह, असंगत सम्भाषण, कपकपी आना, संग्रहणी, बावलापन इत्यादि।

मूर्खोंमें यह विचार फैल गया है कि कोकेन खानेसे आदमी कई दिन तक बिना भोजन किये रह सकता है जो केवल भ्रम है। इसका कारण यह है कि पेटकी झिल्ली जिसके द्वारा हमें भूखका ज्ञान हुआ करता है कोकेन खानेसे सुन्न पड़ जाती है, और इसीसे हमें भूखका बोध नहीं होता।

अमेरिका देश में कोकाकी पत्तियोंका व्यवहार। अमेरिका देशके आदिम निवासी इस वृक्षकी पत्तियां उसी प्रकार खाया करते हैं, जैसे यहां सुरती खायी जाती है। वृक्षकी कुछ सूखी हुई टहनियां पत्ती समेत प्रत्येक मनुष्य अपने पास रखता है। चूना और टहनियां प्रायः वे बटुओंमें रक्खा करते हैं।

जहां जहां पत्ती खानेकी प्रथा है, वहां वहां दिनमें चार बार काम बन्दकर दिया जाता है। टहनियोंसे पत्तियां झाड़ ली जाती हैं और मुंह-में रखकर उनकी गोलीसी बना ली जाती है। इस गोलीपर जिसे अक्यूलिको कहते हैं थोड़ा सा चूना स्वादकेलिए लगा दिया जाता है।

इन पत्तियोंपर पीरू देशके लोगोंकी बड़ी श्रद्धा है। होमों और उत्सवोंमें पत्तियोंकी धूप दी जाती है। पत्तियां सूर्य्यकी भेंटमें चढ़ायी जाती हैं। पूजा करते समय पुजारियोंको पत्ती चबाना आवश्यक है, नहीं तो उनके देवता प्रसन्न नहीं होते।

इन पत्तियोंका भी वही प्रभाव पड़ता है जो उनके सत्त कोकेनका होता है, परन्तु यह इतनी तीव्र नहीं होती।

ऊपरके कथनसे मालूम होगा कि यह पत्तियां और उनका सत्त बड़ी हानिकारक वस्तुएं हैं। भूलकर भी कभी इनका प्रयोग न करना चाहिए। शस्त्रोपचारोंमें कोकेन बड़े कामकी चीज़ है। जहाँ, जिस स्थानपर चीरा लगाना होता है, वहांपर कोकेनका घोल लगा दिया करते हैं, इससे वहाँ बिलकुल सुन्न हो जाता है, और चिरानेमें रोगीको पीड़ा नहीं होती। इसकी सहायतासे दांत बड़ी सुगमतासे उखाड़े जा सकते हैं, पर इसको खाना कभी न चाहिए। जहाँ तक हो सके प्रत्येक देश-हितैषीका कर्तव्य है कि इसके प्रचारको रोके। *

* इस विषयमें यदि अधिक जाननेकी इच्छा हो तो पं० अयोध्या प्रसाद भार्गव, बहादुरगंज, प्रयागकी बनाई हुई पुस्तक 'कोकेन और उसका हानिकारक परिणाम' अवश्य पढ़िए।

# प्राकृत और संस्कृत।

[ ले० स्वर्गीय पं० बदरीनारायण मिश्र ] *

यस्यनिश्वसितं वेदा योवेदेभ्योऽखिलं जगत्।
निर्म्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थ महेश्वरम्॥

संभव है कि कोई पाठक हमारे मंगलाचरणपर यह आक्षेप करें कि लेखक वेदका पक्षपाती है, इसलिए प्रस्तुत विषयसे उदासीन हो जाँय। वेदका वस्तुतः ऐसा ही गौरव है कि वह विद्याओंका भांडार है क्योंकि सबका बीज उसमें मौजूद है, परन्तु "जिन खोजा तिन पाइयां गहरे पानी पैठ" की कहावत है, और विशेषतः आज जिस विषयपर हम लेखनी उठाते हैं, उसका मूल भी वेद ही है।

प्राकृत और संस्कृतके सम्बन्धमें इस लेखमें केवल उतना ही लिखना है जिससे साधारण शिक्षकों और विद्यार्थियोंको कुछ बोध हो जाय। साथ ही मैंने स्वयं जो थोड़ा बहुत अध्ययन किया है वह भी निष्फल न जाय।

इस विषयपर प्राचीन आचार्य्योंने बहुत कुछ लिखा है, पर उनके ग्रन्थोंका अब न तो प्रचार है और न बहुतेरे खोजनेपर भी मिलते हैं। सबसे बड़े महत्त्वका ग्रन्थ जिसका पता लगता है वररुचिका प्राकृत-प्रकाश है। इसमें उन्होंने महाराष्ट्री, शौरसेनी, मागधी, और पैशाची नाम चार भाषाओंका व्याकरण दिया है, जिनमें महाराष्ट्रीको प्रधान माना है। महाराष्ट्रीका पहले ९ अध्यायोंमें और शेष ३ भाषाओंका पिछले एक एक अध्यायमें वर्णन है। दूसरा ग्रन्थ गुजराती जैन पंडित हेमचन्द्र सूरि-का हैम-व्याकरण है जिसके आठवें अध्यायमें

* एक अपूर्ण लेखका अंश जो पं० मोहनलालजी मिश्रसे प्राप्त हुआ। लेखकके वृत्तान्तकेलिए विज्ञान भाग १ संख्या ३ पृष्ठ १३५ की टिप्पणी देखनी चाहिए। सम्पादक

Philology भाषा-विज्ञान ]

इन चार प्राकृतोंके सिवाय चूलिका, पैशाची और अपभ्रंशका भी वर्णन है। तीसरा ग्रंथ कात्त्यायनका पाली व्याकरण है। चैाथा त्रिविक्रमकी प्राकृत सूत्रवृत्ति है। पांचवां चन्द्रकृत षड्भाषा चन्द्रिका है। छठा लक्ष्मीधरका है *। यह तो प्राचीन आचार्य्य हैं जिनके ग्रन्थरत्न लुप्तप्राय हो गये हैं। युरोपीय विद्वानोंने परिश्रम करके इनका पुनरुद्धार किया जिनमें ग्रिम्म, बाप्प, पाट्ट आदि जर्म्मन विद्वान जिन्होंने वस्तुतः इस मार्गको प्रशस्त कर दिया, तथा टर्नूट, फ़ौसबोल, सिनार्ट, क्लौ, चिल्डर्स, बर्नूफ़, लासेन, कोवेल, होडर्नली, बीम्स आदि विद्वानों के नाम उल्लेख्य हैं और इनके श्रमकेलिए हम कृतज्ञ हैं।

संस्कृत और प्राकृत क्या हैं इनमेंसे कौन किससे बना है इन प्रश्नोंपर जो कुछ विचार हुआ है उसकी मीमांसाके पहले हम पाठकोंके सामने दो उदाहरण उपस्थित करते हैं--

(१) संस्कृत

श्रावस्त्यां किलादत्तपूर्वकोनाम ब्राह्मणो भूत। तेनकस्मैचित्किंचिददत्तपूर्वं तेन तमदत्तपूर्वकस्त्वेवसमज्ञासत। तस्यैकपुत्रकोभूत्प्रियोमनोज्ञः। तस्यषोडशवर्षकाले पाण्डुरोगउदयादि। मातापुत्रमवलोक्य ब्राह्मणपुत्रस्यतेरोगउत्पन्नश्चिकित्सयैनमित्याह। भवति स चेद्वैद्यमानेष्यामि भक्तवेतनं दातव्यंभविष्यति। त्वंममधनच्छेदनं नावलोकयसि। अथकिंकरिष्यसिब्राह्मणेति। यथा मेधनच्छेदोनभवति तथाकरिष्यामीति। सवैद्यानामन्तिकं गत्वामुकरोगस्यनाम यूयंकिंभैषज्यं कुरुथेत्यप्राक्षीत्। अथास्यतेयद्वातद्वा वृक्षत्वगाद्या चक्षते। स तदा हृत्यपुत्रस्यभैषज्यं करोति। तत्कुर्वतएवास्यरोगो बलवानभूत्॥

पाली (प्राकृत)

सावत्थियं किर अदिराण पुब्बकोनामब्राह्मणो अहोसि। तेनकस्सचि किंचिददिराणपुब्बं तेन तं अदिराण पुब्बको त्वेव सं जानिंसु। तस्सेक पुत्तको अहोसि पियो मनापो। तस्स सोलस वस्स काले पराडुरोगो उदयादि। माता पुत्त ओलोकेत्वा ब्राह्मण पुत्तस्स ते रोगो उप्पन्नो तिकिच्छापेहि नन्ति आह। भोति स चे वेज्जं आनेस्सामि भत्त वेतनं दातब्बं भविस्सति। त्वं मम धन च्छेदनं न ओलोकेसीति। अथ किं करिस्ससि ब्राह्मणा ति। यथा मे धन च्छेदो न होति तथा करिस्सामीति। सो वेज्जानं सन्तिकं गन्त्वा अमुक रोगस्स नाम तुम्हे किं भेसज्जं करोथा ति पुच्छि। अथस्स ते यंवा तंवा रुक्ख तच्चादिं आचिक्खन्ति। सो तं आहरित्वा पुत्तस्स भेसज्जं करोति। तं करोन्तस्सेवस्स रोगो बलवा अहोसि॥

(२) संस्कृत

सर्वे त्रसन्ति दण्डस्य सर्वे बिभ्यति मृत्योः।
आत्मानमुपमां कृत्वा न हन्यान्नघातयेत्॥
सुखका मानि भूतानि यो दण्डेन विहिनस्ति।
आत्मनः सुखमिच्छन्प्रेत्य सन् लभतेसुखम्॥
मावोचः परुषं कंचिदुक्ताः प्रतिवदेयुस्त्वाम्।
दुःखाहि संरम्भकथा प्रति दण्डाः स्पृशेयु स्त्वाम्
सचेन्नेरस्यात्मानं कांसमुपहतं यथा।
एष प्राप्तोसि निर्वाणं संरम्भस्ते न विद्यते॥

पाली

सब्बे तसन्ति दराडस्स सब्बे भायन्ति मधुनो।
अत्तानं उपमं कत्वा न हनेय्य न घातये॥
सुख कामानि भूतानि यो दराडेन विहिंसति।
अत्तनो सुख मेसानो पेच्चसो न लभते सुखं॥
मा वोच फरुसं कञ्चि वुत्ता पटि वदेय्युतं।
दुक्खाहि सारम्भकथा पटि दराडा फुसेय्युतं॥
सचे ने रेसि अत्तानं कंसो उपहतो यथा।
एस पत्तोसि निब्बानं सारम्भो तेन विज्जंति॥

संस्कृत आदि है वा प्राकृत इस प्रश्नपर सदासे वाद विवाद होता चला आया है। संस्कृतके पक्षपाती कहते हैं कि संस्कृत प्रकृति है और जो प्रकृतिसे बने वह प्राकृत है। संस्कृत

* यहां चराडकृत प्राकृत लक्षण भी उल्लेख्य है। सं०

देववाणी है और वेदवाणी है और वेदसे पुरानी भाषा कहीं नहीं है और न हो सकती है। साथही पाली नाम पुरानी प्राकृतके देखने, पढ़ने सुननेसे तुरन्त बोध होता है कि यह बिगड़ी हुई संस्कृत है और कच्चायनको छोड़ शेष प्राकृत लेखकों ने यही माना है और अपने व्याकरणोंमें सूत्र दिये हैं जिनसे संस्कृत शब्द बिगड़कर प्राकृत बन जाते हैं और जिससे ऐसा ही सिद्ध होता है कि संस्कृत ही आदि है।

प्राकृतके पक्षपाती कहते हैं कि जो कुछ प्रकृतिसे पैदा हुआ वह प्राकृत है। अर्थात् जो भाषा स्वभावजात है वही प्राकृत है। संस्कृतको प्रकृति नहीं कह सकते क्योंकि संस्कृतका अर्थ ही है जिसका संस्कार किया गया अथवा जो प्रकृत रूपमें और था अब संस्कार पानेसे जिसने संस्कृतरूप धारण किया है। संस्कृत अवश्यमेव देववाणी और वेदवाणी है, पर वह प्राकृत अर्थात् साधारण लोगोंकी वाणी तबतक नहीं हो सकती, जब तक प्राकृत लोग पंडितोंकासा परिश्रम और प्रयत्न न करें; और ऐसा हो नहीं सकता। इसमें सन्देह नहीं कि संस्कृत बिगड़कर पाली बनी है और भी कोई कोई देश भाषाएं जो प्राकृत कहलाती हैं, संस्कृतसे बिगडी हों, पर सभी देश भाषाओंके विषयमें ऐसा नहीं कहा जा सकता कि वह सबकी सब संस्कृत से निकली हों। क्योंकि द्राविड़ नामकी भाषाएं भी देश भाषा होनेसे प्राकृत हैं, पर वह संस्कृतसे निकली नहीं सिद्ध होसकतीं। इसी भांति भारतवर्ष छोड़कर अन्य सब देशभाषाओं-परं यह प्रयोग नहीं हो सकता। हां कोई कोई संस्कृतसे ज़रूर निकली हैं जिनके बोलनेवाले आदिमें आर्यजाति थे और अब भी आर्यजाति होनेका दावा करते हैं। उनका यह भी कथन है कि प्राकृत भाषा सरस्वतीकी बालभाषा है यानी सरस्वतीजी बचपनमें ऐसा ही बोलती थीं, जब सयानी हुईं तब संस्कृत बोलने लगीं अथवा स्पष्ट बोलने लगीं। इसका अर्थ यही हो सकता है कि मनुष्यकी स्वभावजात भाषा प्राकृत है और उसमें संस्कार वा सुधार होनेसे संस्कृत भाषा बनती है जिसका प्रयोग विद्वान् और प्रतिष्ठित-लोग करते हैं।

पर हमारा यह कहना कि मनुष्यकी स्वभाव जात भाषा प्राकृत है उस अर्थमें ठीक नहीं जिस अर्थमें प्राकृत शब्द माना जाता है, क्योंकि यदि बालकको बोलना न सिखलाया जावै तो वह आं बा सरीखे कुछ व्यर्थ शब्दोंको छोड़ कुछ भी न बोल सकेगा। इसकी खोज दिल्लीपति अक-बर शाहंशाह हिन्दने की थी। यह जाननेकेलिये कि कौनसी भाषा कुदरती है कुछ तुरन्त पैदा हुए बच्चोंको एक महलमें रक्खा और उनकी परवरिशका माकूल बन्दोबस्त कर दिया। पर यह ताकीद थी कि कोई नौकर चाकर उनके सामने कुछ भी न बोले।

निदान जब वह बच्चे परवरिश पाकर बड़े हुए और बादशाहके रूबरू लाये गये तो गूंगे निकले, यानी कुछ न बोल सकते थे। ऐसाही उन बच्चोंका हाल भी देखा गया है जिनकी परवरिश भेडियोंने की है और जो पीछेसे पकड़कर बस्तीमें रक्खे गये हैं। वह भी कुछ बोल नहीं सकते और उन्हें सिखलाना कठिन पड़ता है। सारांश यह है कि जो मां बाप या शिक्षक बोलेगा वही लड़का बोले और समझेगा। प्राकृत और संस्कृतका विवाद निबटानेके निमित्त यही कहा जा सकता है कि प्राकृत एकाध सूबेकी भाषा है जिसको वहींके लोग समझ सकते हैं और संस्कृत देश भरमें काम दे सकती है। इसका प्रमाण देख लीजिए कि आजकल कलकत्ता मद्रास बम्बईमें जो संस्कृतका विषय सब सूबों-में पढ़नेके निमित्त छापा जाता है वह संस्कृत भाषा और देवनागरी अक्षरोंमें लिखा जाता है और जो प्रान्तिक होता है वह उसी प्रान्तकी

भाषा और अक्षरोंमें लिखा जाता है। सार्वत्रिक भाषा सीखना कठिन है और प्रान्तिक सीखना सहज है। अर्थात् संस्कृतका सीखना कठिन है और प्राकृतका सहज है। यहां पर प्राकृत शब्द-से हिन्दी भाषा मुराद है, हिन्दी भाषा पढ़ते पढ़ाते समय बहुधा यह प्रश्न उठा करता है और परीक्षा-पत्रोंमें भी आता है कि अमुक शब्दका शुद्ध वा संस्कृत रूप लिखो। इसलिये यहांपर कुछ नियम उदाहरण सहित लिखे जाते हैं जिनसे पहिचानना आसान हो। शब्द वा अक्षर संस्कृतसे बिगड़कर प्राकृत वा हिन्दीमें कौनरूप धारण करते हैं।

स्वर—

ऋ ॠ लृ ॡ स्वर हिन्दी भाषामें नहीं आते और ऋ स्वर जहां लिखा जाता है वहां वह संस्कृतका रूप दिखाता है। भाषामें उसका रूप 'रि' हो जाता है जैसे ऋषि=रिखि अथवा 'इ' हो जाता है जैसे 'कृत'=कि अ=कि आ=किया 'उ' होजाता है जैसे 'मृत'=मुअ=मुआ=मुवा 'इर' " जैसे 'स्मृ'=समिर=सुमिर=सुमिरन अर " जैसे 'मृत'=मर+अ=मरा

कृत=कर+अ=करा

'ऐ' का 'ए' या 'अइ' कभी इ या ई होता है जैसे कैवर्त=केवट; कैलास=कइलास; ऐतवार =एतवार=इतवार

'औ' का 'ओ' वा, अउ और कभी उ हो जाता है जैसे मौक्तिक=मोती; कौशल्या=कउ-सिल्ला। नोट-ऐ औ अपने संस्कृतरूपमें भी लिखे जाते हैं।

व्यंजन—

प्राकृत हिन्दीमें तालव्य श या मूर्द्धन्य ष नहीं होता दोनोंके स्थानमें स होता है और जहां यह आते हैं वहां तत्समसें आते हैं और मूर्द्धन्य ष का उच्चारण कवर्ग ख की तरह होता है और आदिवर्त्ती य का ज हो जाता है

जैसे शुकसे सुग्गा=सुआ

कृषाणसे किसान; यमुनासे जमुना

(१) स्वर—

(क) प्राकृतमें ऋ, ॠ, लृ, ॡ, ऐं, औ, को छोड़ संस्कृतके बाकी स्वर हैं। ऋ आदिमें हो तो, और अयुक्त हो तो, रि हो जाता है। कहीं कहीं संयुक्त भी 'रि' हो जाता है। अन्तिम दशा में संयुक्त व्यंजनका लोप हो जाता है। संयुक्त ऋ का बहुधा अ, इ, उ हो जाता है, जैसे

मृगांक=मयंक
कृत=किअ=किया
मृत=मुअ=मुआ
स्मृत=समिर=सुमिर
कृत=कर+अ=करा
मृत=मर+अ=मरा

(ख) ऐका 'ए' या 'अइ', कभी 'इ' या 'ई' और औ का 'ओ' या 'अउ' कभी 'उ' या 'ऊ', जैसे

कैवर्त्त=केवट
कैलास=कइलास
ऐतवार=एतवार, इतवार
मौक्तिक=मोती
कौसल्या=कउसिल्ला

(ग) 'ए' 'ओ' गुण नहीं माने जाते। मात्रामें लघु या गुरु होते हैं। दो व्यंजनोंके पहले दीर्घ हो तो ह्रस्व हो जाता है, जैसे

एटा (स्थान विशेषकानाम, दीर्घस्वर है)
एक्का (वाहन विशेष, ह्रस्व-स्वर)

जो दीर्घ स्वर बना रहे तो एक व्यंजनका लोप हो जैसे, ईश्वर = ईसर

(घ) दो व्यंजनोंके पहलेका स्वर कभी कभी दीर्घ हो जाता है और एक व्यंजन निकल जाता है, जैसे जिह्वा जीहा।

(२) व्यञ्जन—

(क) प्राकृत वा हिन्दीमें "श" और "ष" नहीं होता। कभी आता भी है तो शुद्ध संस्कृत शब्दोंमें (तत्समोंमें) और "ष" लिखते भी हैं

तो "ख" के स्थानमें, जैसे " जाना चह बलबुद्धि बिसेषा " में बिसेषा का ।

(ख) शब्दके आदिमें 'य' हो तो 'ज' होजाता है जैस, यमुना = जमुना ।

(ग) अन्तिम केवल व्यंजन गिर जाते हैं, सिवाय म, और कभी कभी न के जो अनुस्वार हो जाते हैं । कृतः = किआ = किया ।

(घ) शब्दके मध्यमें जो व्यंजन आते हैं उनमें क ग, चज, तद, पब, व.य, का विकल्पसे लोप हो, परन्तु क,च,ट, त,प का जब लोप नहीं होता तब ग, ज, ड, द और ब, हो जाते हैं, जैसे

कोकिल = कोइल
शृगाल = सिआल = सियार
शूकर = सूअर
प्रकट = प्रगट
मकर = मगर
विकार = बिगाड़

(ङ) ख घ थ ध भ या तो ज्योंके त्यों रहते हैं या उनके स्थानमें ह हो जाता है, जैसे

मुख ॥ मुह
माघ = माह
दधि = दही
नाथ = नाह

(च) र और ल, ब और व, ड और ल में तो संस्कृतमें ही परस्पर बदलनेका नियम है ।वैसाही भाषामें जानना ।

(छ) श और सके स्थानमें भी ह हो जाता है, जैसे दशका दह, मास का माह

(ज) विजातीय व्यंजनोका योग नहीं रहने पाता, एक न एक गिर जाता है, और बाकीको द्वित्त्व हो जाता है । और बहुधा जब संयोगमें सकार होता है तो उसकी जगह सहवर्त्ती व्यंजनका घोषवान आ जाता है, जैसे

ष्क, क्षके स्थानमें क्ख, रक्षाका रक्खा

शुष्कः = सूक्खा = सूखा

जब र योगमें आता है, कभी कभी अनुस्वार भी हो जाता है, जैसे अश्रु = अंसु = आंसू

उदाहरण—

पक्व = पक्का
पक्ष = पक्ख = पाख
अग्नि = अग्गी = आगी
अग्रे = अग्गे = आगे
स्थान = ट्ठाम = ठाम
वृद्धः = बुड्ढा
कवित्त्व = कवित्त
पत्र = पत्ता

(झ) संस्कृतमें जहां तीन व्यंजनोंका योग हो वहां अर्धस्वर होनेसे हमेशा गिर जाता है जैसे मत्स्य = मच्छ ।

---

## दूधके व्यवसायका इतिहास

[ ले० एल्. एजी. ]

मनुष्योंको दूधका उपयोग बहुत प्राचीन कालसे विदित है । दूध सम्बन्धी वैज्ञानिक खोज बहुत काल पीछे प्रारम्भ हुई । अरस्तूका कथन है कि दूध रक्तका परिष्कृत रूप है । यह विचार आधुनिक वैज्ञानिकोंकी छानबीनके अनुसार भी सर्वथा सत्य है । १५३८ ई० में पैसीटस (Pacitus) ने दूधको रज-रक्तका परिवर्तित रूप बतलाया और मक्खन, दही, तोड़ इत्यादिको दूधके भिन्न भिन्न अङ्ग कहा । १६१९ ई० में बारटो लैटस ( Bartolatus ) ने दूधको रक्तकी भांतिका गन्धक, पारा और नमक मिश्रित पदार्थ बतलाया । इसी समयमें ल्यूटोविकोटैस्टी ( Luto-Vicotasti ) ने दुग्ध-शर्कराको खोज निकाला । १७२२ ई० में क्षुद्रवीक्षण यन्त्र द्वारा दूधकी जांच की गयी और मेद-बिन्दु (Fat Globule) का पता लगा ।

१७४४ ई० में डोने (Donne) ने गाय और स्त्रीके खट्टे दूधके चित्र प्रकाशित किये। इसी कालके लगभग बौरहावे ( Bourhaave ) ने पशु-रसायन-शास्त्रकी नीव डाली। इसी वैज्ञानिक ने दूधकी हर तरहपर खोज की। १७८० ई० में शूले ( Schule ) ने दुग्धाम्ल ( Lactic Acid ) और कैलसियम फ़ौस्फ़ेट (Calcium Phosphate) की स्थिति दुग्ध अलब्यूमेन (albumen) में बतलायी। १८४० ई० में दूधको छना हुआ रक्त और स्तन को छन्ना (filter) माना गया परन्तु दूध और रक्तके रासायनिक विश्लेषण द्वारा यह बात रद की गयी। दूधके अङ्ग रक्तमें नहीं पाये जाते। वे स्तनकी गिल्टियोंमें, प्रवाहित रक्तमें, और लिम्फ़ ( Lymph ) में बनते हैं। दूधकी बनावटके बारेमें भिन्न भिन्न कल्पनाएँ हैं परन्तु अभीतक वैज्ञानिकोंकी समालोचना द्वारा कोई कल्पना ठीक नहीं मानी गयी है।

हमारे प्राचीन ग्रन्थोंमें ऋग्वेदमें दूधका वर्णन आया है। गायोंको उत्तम चारा देनेसे अधिक दूध पानेकी चर्चा है। दही, घी और अधिक मक्खनवाले दूधकी बड़ी प्रशंसा है। ईसा से ४०० वर्ष पूर्व हम चरक संहितामें निम्न लिखित बातें पाते हैं—

(१) गाय, भैंस, उटनी, घोड़ी, गधी, भेड़, हथिनी, बकरी और स्त्रीके दूधके गुण।

(२) दही, मक्खन और घी के गुण।

(३) छाछ तोड़ इत्यादिका वर्णन।

इससे स्पष्ट है कि प्राचीन कालसे हिन्दू आर्य्य दूधका अध्ययन भोज्य पदार्थकी दृष्टिसे और आयुर्विज्ञानकी रीतिपर करते आये। परन्तु गत कई सौ बरसोंसे ही पाश्चात्य वैज्ञानिकोंने दूधको हर तरहपर अध्ययन किया है।

इधर पाश्चात्य रीतिसे भारत वर्षमें दूधका व्यवसाय सन् १८८६ ई० से प्रारंभ हुआ। बम्बई प्रांतकी सरकारने ही यह काम पहले पहल उठाया।

सन् १८५६ में लन्दनकी एक दूध संबन्धी यंत्र बेचनेवाली कम्पनी ने अपने एक एजेंटको क्रीम-सेपरेटर (cream separator एक प्रकारकी मथानी) का प्रचार करनेकेलिए भेजा। इनका नाम हाउमन (Howman) था। ये मिस्टर कीवेन्टर (Keventer) को अपना सहायक बना कर लाये। बम्बई सरकार ने कीवेन्टरकी देख-रेखमें बम्बई शहरमें एक दुग्ध-कार्यालय खुलवाया। यह भारतवर्षमें प्रथम दुग्ध-कार्यालय था। इसमें मक्खन इत्यादि बनानेके विविध यन्त्र भी थे। थोड़े दिनोंमें यह कार्यालय ख़ूब चल निकला। इसे देख कर दो बम्बई निवासियोंने भी दो कार्यालय खोले और पूनामें भी एक कार्यालय स्थापित होगया। फिर मि० कीवेन्टर को युक्त प्रान्तकी सरकारने माँग लिया और कानपुरमें एक कार्यालय खोला गया। थोड़े दिनों पीछे उन्होंने अलीगढ़में सरकारसे रिआयत पर कुछ ज़मीन ख़रीद कर अपना निजका कार्यालय खोल दिया। इस समय इसकी कई शाखाएँ हैं जिनमें से एक शिमला, एक दारजिलिंग और एक कलकत्तेमें है। सैनिक विभाग द्वारा भी प्रधान प्रधान छाउनियोंमें कार्यालय खुले हुए हैं। भारतवासियोंने भी निजके दुग्ध कार्यालय खोले हैं और सब मिला कर १००० कार्यालय हैं।

इन सब कार्यालयोंमें निजके पशु नहीं हैं। कोई तो ग्वालोंसे दूध ख़रीद कर मक्खन बनाते हैं। कोई दुधार पशु किराये पर रखते हैं। किसी किसी के निजके पशु भी हैं तो चारेके लिए ज़मीन नहीं है।

एक उत्तम कार्यालयमें निजके पशु और ज़मीन होनी चाहिए और दूध से मिलनेवाले पदार्थ कार्यालयमें ही बनने चाहिए। इस लिए दुग्धका व्यवसाय करनेकेलिए निजकी ज़मीन, पशु, पशुशाला और आवश्यक यन्त्रोंसे सज्जित दुग्धालय होना चाहिये। इस अन्तिम विषयकी चर्चा हम फिर कभी करेंगे।

# वैज्ञानिकीय

व्यापारी विजयकी तय्यारी

जिस तरह अपने पड़ोसी राज्योंके आक्रमणसे बचनेकेलिए और आये दिन उनका सामना करनेके लिए आजकलके सभ्य संसारमें हर एक राज्य तय्यार रहता है, उसी तरह सभी उन्नतिशील देश, सभी सभ्य वर्द्धमान जाति अपने पड़ोसियोंके शिल्पी और व्यापारी आक्रमणसे बचने तथा आये दिन उनका सामना करनेकेलिए तय्यार रहती है। इतना ही नहीं, आक्रमणपर सामना करनेकेलिए तय्यार रहनेसे यह भी ध्वनि निकलती है कि पड़ोसी केवल सामना ही करनेको नहीं वरन् आक्रमण करनेको तय्यार हैं; हर एक जाति दूसरीके प्रति ऐसा भाव ही नहीं रखती वरन् बाहरसे तो यह प्रकट करती है कि हम केवल सामना करनेकेलिए तय्यार हैं, परन्तु वस्तुतः चढ़ाई करनेका अवसर देखा करती है। सो व्यापारी चढ़ाई तो बेखटके सदैव होती ही रहती है।

आज युरोपीय महायुद्धके कारण व्यापारकी धाराने अपनी दिशा बदल दी है। जब दो शेर लड़ते हैं तो लोमड़ीतकको शिकार छीन ले जानेका हौसिला होता है। फिर प्रतिस्पर्द्धी शेरोंका क्या कहना है। जापानने इस महायुद्धके शुभ अवसरका पूरा लाभ उठाया और उठा रहा है। अपने पड़ोसमें तो उसने व्यापारिक विजयलाभ कर ही लिया है। युद्धके बाद जापानको बेदखल करना पाश्चात्य देशोंके लिए टेढ़ा काम होगा।

जिन जिन देशोंसे अमेरिका का व्यापारी सम्बन्ध था उन देशोंसे युद्धदुंदुभी बजनेके दिनसे ही अमेरिकाके पौ बारा हे। इतनेपर भी अमेरिकाको सन्तोष नहीं है। ४ मार्चके सायंटिफिक अमेरिकनने अपना शिल्पीय विशेषांक निकाला है जिसमें उसने राष्ट्रपति विलसनका ११ फरवरीका पत्र यथातथ्य छापा है जिसमें राष्ट्रपतिने समस्त राष्ट्रको आजकलके सुअवसरसे पूरा लाभ उठानेकेलिए उत्तेजित किया है और इस बातको विशेष महत्त्व दिया है कि शिल्पी और वैज्ञानिक परस्पर सहायता करते हुए यदि काम जारी रक्खेंगे तो संसारमें अमेरिका अवश्य सबसे आगे रहेगा।

अन्तरंग-मंत्रीने इस विषयमें सर्वसाधारणको पूरी जानकारी करानेकेलिए एक सुबोध लेख द्वारा अमेरिकाकी पूरी व्यापारी और माली परिस्थिति दिखलायी है। संयुक्त राज्योंमें दो एक खनिजोंको छोड़ शेष सभी जो शिल्पमें चाहिएं बहुतायतसे मिलते हैं। संसारका ६६% मिट्टीका तेल, ६०% तांबा, ४०% लोहा और कोयला और ३२% सीसा और जस्ता निकलता है। रंग, निकल आदि कुछ ही धातु अपर्य्याप्त होते हैं। युद्धपोत, हवागाड़ी, रेलकी सड़क, कारखाने, मशीन (सिवाय रबड़के हालके), सभी चीज़ें अमेरिकाकी खानियोंकी पैदावारसे बन सकती हैं। सबसे बड़ी बात तो अमेरिकाकी जल-शक्ति है। नदीसे ६ करोड़ अश्वबलके लगभग शक्ति भी मिल सकती है।

साथ ही मंत्रीने राष्ट्रको यह भी चेताया है कि मिट्टीके तेलसे निश्चिन्त न हो बैठो। जो लोग चिल्लाया करते हैं कि कोयला पृथ्वीका खर्च होता जा रहा है, उनकी भूल है। उससे कहीं अधिक जल्दी उससे भी अधिक महत्व की चीज़ मिट्टीका तेल ख़तम होता जा रहा है। पार्थिव-मान की रीतिसे जो यह आँका गया है कि अभी धरतीसे २३ अरब पीपे भरे जा सकते हैं, कोई बड़ा अंक नहीं है क्योंकि हमारा खर्च भी तो २६॥ करोड़ पीपे वार्षिकका है। कितना ही बहुतायतसे मिले, मिट्टीके तेलको कोयले की नाईं इंधन की जगह

काममें न लाना चाहिए, इससे वहुमूल्य वस्तुएं निकालनी चाहिएं, बल्कि यह आप बहु मूल्य है। पेड़ फिरसे उगाये जा सकते हैं, पर मिट्टीका तेल फिरसे नहीं मिल सकता। न जाने कितने युगोंमें प्रकृतिने मिट्टीका तेल अपने धरतीके भीतरवाले कारखानेमें खींचकर रक्खा था। हम उस रीतिको बिलकुल नहीं जानते। संभव है कि उसके बदलेकी कोई चीज़ आगे मालूम हो जाय पर अभीतक तो मालूम नहीं हुई है। मशीनको चिकनाई देनेकेलिए संसारमें यह एक मात्र तैल समझा जाता है। उसके बिना रेल, चरखी कुछ नहीं चल सकती। उससे ही तुरंत धड़ाका करनेवाली गैस मिलती है जिसके बल मनुष्य पृथ्वी और आकाशके कुलाबे मिला रहा है, जहाँ जी चाहे उड़ता फिरता है।

अमेरिकाके मंत्रीने जितनी बातें अपने देशके विषयमें कहीं, मिट्टीके तेलको छोड़ सभी हमारे देशपर पूरा पूरा लागू है। हमारा अनुमान है कि मिट्टीके तेलके विषयमें पर्य्याप्त खोज नहीं हुआ है। भारतवर्ष जिस तरह अमूल्य खनिजोंसे भरा पड़ा है उसी प्रकार खेतीके व्यवसायमें भी अनादिकालसे प्रसिद्ध है। शिल्पमें भाफ, कोयला, बिजली आदिके पहले युगोंमें इसका सामना कोई करनेवाला नहीं था। यहाँ की धरती माता कामधेनु हैं, संसारकी सभी चीज़ें अपने पुत्रोंको दे सकती हैं, किंतु कलिकालमें कुछ ऐसी परिस्थिति सी आगयी है सब कुछ होते हुए हम अद्धीकी सुईकेलिए भी औरोंका मुँह तकते हैं। और युगोंमें पृथ्वीसे दुहनेवाले पृथुराज थे पर अब पृथुराज नहीं रहे। क्या भारतीय अब भी न चेतेंगे कि जिस अवसरसे जापान और अमेरिका लाभ उठा रहे हैं उसे क्यों चूकते हैं?

* * * *

### जल-शक्ति-संचय

जल-शक्ति भारतवर्षमें अमेरिकासे अधिक नहीं तो कम भी किसी प्रकारसे नहीं है। नयागरा जल-प्रपात नहीं तो उससे घटकर सही जल-प्रपात यहां भी हैं। और जल-शक्ति जल-प्रपात पर ही क्या ख़तम है? जल शक्ति प्रत्येक नदी, नहर आदिमें है। बम्बई प्रान्तमें नकली नदी बहाकर जब शक्ति बटोरी जाती है तब भारतके अन्य प्रान्तोंमें स्वाभाविक नदियोंसे क्यों नहीं काम लेते?

ऊपरसे नीचेकी ओर बहने या गिरनेमें जल किसी चरखी वा चक्रको चला सकता है। इस प्रकार बिजलीमें शक्तिको परिणत करनेकेलिए इसी जल-प्रवाहसे डैनमों नामक यंत्र चल सकता है और उस शक्तिका संचय करके जहाँ चाहें ले जाकर उसका प्रयोग किया जा सकता है। इस कार्य्यकेलिए ऐसी कम्पनियोंके बननेकी आवश्यकता है जो इस, शक्तिका, जो प्रकृति हमको सहज ही बिना दाम देती है, संचय करके सस्ते दामों बेचें, जिससे सभ्य संसारकी सभी हाथसे वा मशीनसे बननेवाली चीज़ें बन सकती हैं और इस शक्तिसे सस्ती मेहनत लेकर हम संसारके व्यापारसे यदि प्रतियोगिता न भी कर सकें तो कमसे कम अपने देशको तो औरोंका मुहताज न रक्खें।

[ हरद्वारमें दुद्धीबन्दपर Power-house बलागार बन रहा है जिसमें गंगाकी धाराप्रवाहसे शक्ति-संचय किया जायगा और आसपास प्रान्तमें वितीर्ण होगा। परन्तु हमारी समझसे इसमें समय बहुत लग रहा है।]

* * *

ब्रिटिश सरकारने प्लाटिनम बेचनेवालोंको आज्ञा दी है कि उनके पास जितना प्लाटिनम हो उसकी सूची बनाकर दें और बिना सरकारी आज्ञाके न बेचें। प्लाटिनमका नाम भारतमें

तो विज्ञानके ही सम्बन्धमें आता है परन्तु विलायतके शौकीन इसके गहने भी बनवाने लगे थे, यद्यपि रंगमें यह चांदीकी नाई शुद्ध श्वेत और सोनेकी नाईं सुन्दर नहीं होता। [युरोप-वाले पादरी संसारकी अन्य जातियोंके गहने पहननेकी असभ्यतापर हंसी उड़ाते थे!] विज्ञानकी दृष्टिसे प्लाटिनम सोना चांदी आदि धातुओंकी अपेक्षा कहीं अधिक उपयोगी है। हज़ारों काम इसी प्लाटिनमके सहारे निकलते हैं। आजकल प्लाटिनमकी सहायतासे गंधकका तेज़ाब तक बनता है। प्लाटिनमको गलानेके-लिए प्रायः सभी धातुओंकी अपेक्षा अधिक आंच चाहिए। बिजलीके काममें तो अद्वितीय है। इस धातुका सैकड़ा पीछे ६५ भाग रूससे आता था। युद्धके पहले संसार भरमें ७॥ लाख तोले-के लगभग प्लाटिनम निकलता था। युद्ध होनेसे ६। लाख तोलेके लगभग हो गया।

* * *

आजकल जिधर देखिए उधर ही ऐनक लगाये नवयुवक दिखाई पड़ते हैं। यह दृश्य शहरोंमें ही अधिक है। देहातोंमें भी वहीं देखनेमें आता है जहां शहरोंका सम्बन्ध है। अधिकांश लोगोंकी दृष्टि समीप-दर्शी हो जाती है, अर्थात् बहुत पाससे ही उनकी आंख काम करती है। दूरकी चीज़ नहीं देख सकते। बहुतेरोंकी दशा उलटी है। अर्थात् वह दूरकी चीज़ें तो साफ देखते हैं पर पासकी नहीं देख सकते। पचास वर्षोंके भीतर ही भीतर आंखे कमज़ोर हो गयीं और ऐनकें चढ़ गयीं। यह दशा एक हमारी ही नहीं है। संसार भरमें समस्त सभ्य समाजपर यह बुरा प्रभाव पड़ा है। इसका कारण क्या है?

अमेरिकाके सबसे प्रसिद्ध आंखके विद्वान् डाक्टर एलिस आलगरकी राय है और उससे सभी समझदार लोग सहमत होंगे कि गत पचास बरसोंके भीतर रोशनीके जितने नये उपकरण, मिट्टीका तेल, गैस, बिजली आदि आविष्कृत हुए हैं, सबमें प्रकाश असाधारण रीतिसे तेज और हानिकर किरणोंसे भरा होता है, जिनसे आंखें बलहीन हो जाती हैं। इनसे पहले वानस्पतिक तैल मोमबत्ती आदिकी नरम रोशनीसे काम लेते थे। इन चीज़ोंकी रोशनी कम होती है, ज्यादा रोशनी दरकार हुई तो कई बत्तियां जलानेसे काम हो सकता है। परन्तु बत्तियां कितनी ही जलावे उनकी रोशनी 'ठंढी' होती थी और आंखोको हानि नहीं पहुंचाती थी। आजकल जिन प्रकाशोंसे हम काम लेते हैं उनमें रोशनी जितनी चाहें तेज़ हो सकती है, उनसे चिकित्सा भले ही करें, हड्डियों-का चित्र भले ही उतार लें, परन्तु पुस्तक पढ़नेकेलिए रोशनी ज्यादा ही हो तो क्या, उसमें आंखको हानि पहुंचानेवाली किरणें इतनी अधिक हैं कि आवश्यक परिवर्त्तन करना मनुष्य जातिकी दृष्टि-रक्षाकेलिए बड़े महत्वका प्रश्न है। सिरका गंजा हो जाना भी बहुधा हानिकर किरणोंका ही बुरा फल होता है। आँखकी बारीक रगोंपर आघात पहुंचाकर संभवतः यह किरणें मोतियाबिन्दका कारण होती है। कांच फूंकनेवाले जो तेज़ आंच और रोशनीके सामने रहा करते हैं, इसी प्रकार अपनी आंखे जल्दी खो बैठते हैं।

देखने और पढ़नेकेलिए लाल और पीली किरणें सबसे अच्छी होती हैं। और यही किरणें हमारे पुराने दीपकों और बत्तियोंसे प्रायः आती हैं। पढ़नेवाले इन बातोंपर आरंभ-से ही ध्यान दें तो आंख सा अमोल रत्न न खो बैठें।

* * *

खानिमें प्राण हानि

कोयलेकी खानिमें, जो पृथ्वीमें कई सौ फुटके नीचे होती है, सैकड़ों आदमी दीपकके प्रकाशमें कोयलेकी खुदाईका काम करते हैं।

कोयला खोदते खोदते उसके दरारोंके भीतरसे मिथेन नामकी एक वायु निकलती है जो साधारण वायुसे मिलकर ऐसा विस्फोटक मिश्रण बनाती है कि दीपककी लौसे लगकर बड़े ज़ोरका धड़ाका होता है जिसके पीछे खानिका सारा वायुमंडल ऐसा दूषित हो जाता है कि धड़ाकेसे बचे हुए प्राणीकी सांस घुट जाती है। ऐसी दुर्घटनासे हज़ारोंके प्राण जाते थे और अब भी कुछ न कुछ हानि होती है। सौ बरस हुए डेवीने एक जालीदार लालटेन बनायी जिसमें वह वायु घुसती है तो लौ भभकने लगती है, पर उस लौ और भभकका प्रभाव जालीसे बाहर नहीं पड़ता। भभक देखते ही खानिवाला समझ गया कि वह वायु निकली है, और खानिसे तुरन्त बाहर निकल आये। सौ वर्षमें उस लालटेनमें अनेक तरहका सुधार-कर लिया गया है, परन्तु यह जाननेकेलिए कि कब कितनी विस्फोटक गैस वायुमंडलमें मौजूद है, अबतक खोज हो रही है।

सं० १९७० में हाबर नामक जर्म्मनने [Natur-wissen schaften, Berlin] एक यंत्र बनाया जिसमें स्वर-भेदसे उस गैसकी नाप की जा सकती है। इस यंत्रका नाम ( Schlagwetterpfeife ) मिथेन-सीटी रक्खा गया। जर्म्मनीके (chemiker zeitung) एक पत्र में हालमें बेकमनने अपने नवीन यंत्रोंका वर्णन प्रकाशित किया है, जिसमें रासायनिक रीतिसे खानिवायुके एक विशेष परिमाणको लेकर विस्फोटन-पात्रमें जलाते हैं और जलनेके बाद वायुचाप अर्थात् वायुके दबावमें जो कुछ परिवर्त्तन होता है, उसे नापकर मिथेनका परिमाण निकाल लेते हैं। इस यंत्रसे यह मालूम किया जा सकता है कि वायुमें धड़ाका होनेकेलिए पर्य्याप्त मिथेन है या नहीं। इसका नाम उन्होंने मिथेनपिस्तौल रक्खा है। यह धातुका होता है जिसमें हवाका एक पम्प, हवाका दबाव नापनेकेलिए मालाकार नलिका, और धातुका विस्फोटन तार होता है। जब पम्पकी मुठिया खींची जाती है उसके बेलनके भीतर खानिकी हवा खिच आती है। तब वायु-मार्गको बन्द कर देते हैं और मिथेनको विस्फोटक तार द्वारा दाग देते हैं। विस्फोटन होनेपर धातुका बेलन गरम हो जाता है और दबावकी अधिकतासे यह प्रत्यक्ष हो जाता है कि मिथेन इस परिमाणमें है। वायुमें ७ से १०·३% मिथेन होनेसे धड़ाका होता है।

परन्तु बहुधा १ से ७% तकके मिथेनका परिमाण निकालनेकी आवश्यकता भी पड़ जाती है। या कभी १०% से अधिक मिथेनका परिमाण जानना हुआ तो इस यंत्रमें उचित परिवर्त्तन करना आवश्यक होगा। यह परिवर्त्तन इस प्रकार हुआ है कि विस्फोटन तारकी जगह प्लाटिनमकी एक कुंडली लगा दी है जो बराबर लाल रहकर सारे मिथेनको जलाकर कार्बनद्विओषित (कार्बनिकएसिड गैस) और जल बना देता है और यह दोनों शीघ्र ही दाहक सोडामें विलीन हो जाते हैं। इनके विलीन होने से हवाका दबाव घटता है और घटनेकी अधिकतासे मिथेनकी अधिकताका परिमाण मिलता है।

इस यंत्रमें यह विचित्रता है कि जितनाही अधिक विस्फोटनका डर होगा उतनीही जल्दी यह यंत्र सूचित भी कर देगा।

(Scientific American)

* * * *

जितना प्रकाश हम देख सकते हैं उससे कहीं अधिक प्रकार की किरणें हैं जिनका दीखना हमारे लिए असंभव है। जिसे हम अंधेरा घुप समझते हैं वह बहुधा प्रकाशमय है, और इस प्रकाशको प्रायः छोटे छोटे जीव देखते भी हैं। हमारी नेत्रेन्द्रियोंकी अशक्यता है जिसके कारण हम प्रकाशमें बैठे भी दिया सलाई ढूँढते फिरते हैं।

## समालोचना

रसायनशास्त्र—प्रो० महेशचरण सिंह लिखित पृष्ट ४१६, चित्र ६१, क्रौन अठपेजी, मूल्य ३॥)। ग्रन्थकार, गुरुकुल कांगड़ीसे प्राप्य ।

हिन्दीमें रसायनशास्त्रपर हमारे देखनेमें दो ही पुस्तकें आयीं। यह पहली है। रसायनशास्त्रके नियम, सिद्धान्त, प्रयोग तथा मूलतत्त्वोंके जाननेकेलिए यह पुस्तक उपयोगी है। यह ग्रन्थ रसायनके ज्ञानसम्पादनके लिए है। मनोरंजनकेलिए नहीं। इसी लिए बिक्रीकी अत्यन्त कम आशासे इसका मूल्य ३॥) रक्खा गया। पुस्तक इंडियन प्रेसकी छपी सुन्दर जिल्द बंधी है। तब भी मूल्य अत्यधिक है।

विद्युत शास्त्र—उक्त ग्रंथकार कृत पृ० २७० चित्र १३० आकार वही, मूल्य ३)।

यह पुस्तक भी विद्युत शास्त्रपर अपने ढंग की पहली ही है। प्रयोग करनेवालोंको रोचक भी है। इसमें सर्वसाधारणके लिए अनेक उपयोगी बातें भी हैं। परन्तु मूल्य फिर भी अत्यधिक है।

वनस्पति शास्त्र—उक्त ग्रन्थकार कृत, पृ० ३००, आकार वही, मूल्य २)।

हिन्दीमें वनस्पति-विज्ञानपर यही एक पुस्तक है। यह इस दृष्टिसे भी बड़ी उपयोगी है कि इसमें प्रोफेसर महोदयने इस विद्याके विषयके सारे पारिभाषिक शब्द बड़ी उत्तमतासे गढ़े हैं और उनका कोश भी दे दिया है जो ग्रन्थकारोंकेलिए भी बड़ा ही उपयोगी है। पुस्तक उपादेय है। मूल्य फिर भी बहुत है। हमारा अनुरोध है कि हिन्दी संसारका सच्चा उपकार होगा यदि महोपाध्याय जी इन पुस्तकों को आधेसे भी कम मूल्यपर दे डालें।

शकर—पवित्र वस्तु प्रचारक कम्पनी कानपुरने समालोचनार्थ शकर भेजी है जो देखनेमें सफ़ेद रवादार स्वच्छ है। रसायनकी दृष्टिसे व्यवहारतः शुद्ध ही है, अर्थात् कोई विकारी पदार्थ नहीं मिला हुआ है। हिन्दूधर्म्मकी दृष्टिसे इसकी शुद्धता कितनी है नहीं कहा जा सकता है। जिन्होंने कानपुरके सदरलैंडवाले कारखाने को देखा है उसकी रीति शुद्ध बताते हैं।

इस समालोचनाके सम्बन्धमें हम यह भी निवेदन कर देना चाहते हैं कि जो महाशय वस्तुपरीक्षा पूर्वक विज्ञानमें समालोचना चाहें उन्हें लिखा पढ़ी करके परिषद् द्वारा अपनी चीज़की रासायनिक परीक्षा करानी चाहिए जिसके लिए उन्हें फ़ीस देनी होगी। परिषद् जिन वस्तुओंकी इस तरह परीक्षा करेगी उनपर परिषत्का विज्ञानद्वारा सम्मति प्रकाश करना सुसंगत होगा। सम्पादकों द्वारा वस्तु-परीक्षा सर्वथा असंगत है। सं०

---

## प्राप्ति स्वीकार

निम्न लिखित सज्जनोंसे धन-प्राप्ति सहर्ष स्वीकृत हैः—

१. राव बहादुर सदाशिव, जयराम देहादराय जबलपुर (१६१५-१६) १२)
२. श्रीयुत लाला सीताराम बी. ए., एफ् ए. यू., प्रयाग (१६१५-१६) १२)
३. श्रीमान् पं० श्रीधर पाठक प्रयाग (१६१५-१६) ४)
४. श्री मान् पं० रमेशदत्त पाण्डेय बी. ए., एस्. सी., सेक्रेटरी एज्यूकेशन डिपार्टमेंट जम्मू (१६१४-१५) १२)
५. श्री महाराजाधिराजा झालावाड़ (१६१५-१६) १२)
६. श्रीयुत् मंगला प्रसाद एम. ए., कलकत्ता (१६१५-१६) १२)

## विज्ञापन छपाईके नियम ।

१—कवरपर प्रति पृष्ठ प्रति मास ... ... १५)
प्रति पृष्ठ २ कालम ... ... १०)
१ ,, ... ... ५)
आधा ,, ... ... ३)
आधे कालमसे कमका ... ... २)

२—अस्वीकृत विज्ञापन लौटाया न जायगा। जो लोग लौटाना चाहें वह साथमें )॥ का टिकट भी भेज दें।

३—विज्ञापनकी छपाई सर्वथा पेशगी ली जायगी।

४—७) रुपयेसे कम दामका विज्ञापन छपानेवालोंको ।) प्रति कापी पत्रका मूल्य अधिक देना पड़ेगा।

५-विज्ञापन बँटाईकी दर क्रोड़पत्र देखकर बतायी जायगी।

६—अधिक कालकेलिए तथा अन्य बातें पत्र व्यवहार द्वारा तय करनी चाहिएं।

निवेदक, मंत्री विज्ञान परिषत्, प्रयाग ।

# विज्ञानसे

## विद्यार्थियोंको सुभीता

जो विद्यार्थी विज्ञानके छः ग्राहक बनाकर उनके चन्देके १८) भिजवा देंगे उनके नाम साल भर विज्ञान बिना मूल्य जायगा और उस वर्ष छपनेवाली किसी पुस्तकको बिना मूल्य पानेका उसे अधिकार होगा।

विज्ञानकी ग्राहक संख्या बढ़ाना वास्तवमें विद्याका प्रचार करना और हिन्दी भाषियोंका आनन्द बढ़ाना है। इसमें विद्यार्थियोंको यत्नवान होना दूने लाभका कारण है।

---

## एजंटोंकी ज़रूरत

जो लोग और और कामोंसे साधारणतः घूम घूमकर एजंटी करते हैं, उनके लिए विज्ञान-की एजंटी करना बहुत आसान है। वह सहज ही बहुत कुछ मासिक कमा सकते हैं। जो लोग ऐसी एजंटी करना चाहें **मंत्री, विज्ञानपरिषत् प्रयागसे** शीघ्र पत्रव्यवहार करें।

मंत्री

# विज्ञान

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—गोपालस्वरूप भार्गव एम्. एस्-सी.,**

**मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग।**

---

Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P Sudarshanacharya, B A for the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

भाग ३ | कर्क, १९७३ । July, 1916. | संख्या ४
Vol. III. | No. 4

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

## विषय-सूची



प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग।

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

## विज्ञानके नियम

( १ ) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

( २ ) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

( ३ ) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

( ४ ) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

( ५ ) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

( ६ ) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग

## विज्ञान-परिषत्‌के कार्य्यकर्त्तृगण—१९१५-१९१६।

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३।५।

भाग ३ { कर्क, संवत् १९७३। जुलाई, सन् १९१६। } संख्या ४

## मंगलाचरण

अजब तेरी माया, जानी न जाय।

बीजमें वृक्ष वृक्षमें फल पुनि फलमें बीज छिपाया,
तुझमें जग जगमें हिय मेरा, मेरे हिय कैसे समाया,
कारण कौन कौनसा कारज, दोनोंमें मन उलझाया,
किसने रची बुद्धि कुंठित, पुनि व्यर्थका नाच नचाया,

क्यों अनन्त ब्रह्मांड निरन्तर व्योम बीच भरमाया,
सत्यासत्य मिलाया किसने जैसे धूप औ छाया,
तुझे देख जिस दिशिमें देखा तुझको ही लख पाया,
तुझे देख जब निज दिशि देखा अपना आप गँवाया॥

ज्वालापुर
१४-६-१६

—रामदास गौड़

## विज्ञान और देशानुराग

[ ले० रामदास गौड़, एम्.ए. ]

### सच्चे देशप्रेमका अभाव

आजकल भारतवर्ष क्या, सारे संसारमें स्वदेश-भक्तिकी धूम है। देशभक्त लोग देश-भक्तिकी अनेक प्रकारकी कल्पनाएं कर लेते हैं और अपने अपने आदर्शके अनुसार देशकी भक्ति करते हैं। कुछ लोग अपने देशपर मरते हैं, बहुतेरे अपने देशकेलिए जोते भी हैं। कोई व्यापारमें, कोई व्यवहारमें, कोई वेषभूषामें, कोई अपनी बोलचालमें, निदान जिस रूपमें जिसे रुचता है देश-भक्तिका परिचय देता है। लेखक इस विषयका पंडित नहीं जो इसपर विशेष विवेचनायुक्त बातें लिख सके, किन्तु उसका विश्वास है कि आजकलका हमारा शिक्षित समाज अपनेको कितना ही

General साधारण

देश-भक्त कहे, वैज्ञानिक दृष्टिसे उसे देश-भक्त कहनेमें हमको संकोच होगा।

जिस भारत-सन्ततिने अपने देशको अपने धर्म्ममें ऐसा लीन कर लिया कि नदी, वन, पहाड़, झरने, नाले, गड्ढे, पेड़, लता, पशु, पत्ती, बालक, बूढ़े, जवान, कहाँतक कहें कंकड़ पत्थर तकको देवता माना, बड़ेसे बड़ा आदर दिया, छोटेसे बड़े तकको पूजा, मिट्टीको सिर-पर चढ़ाया और प्यारे भारतको त्यागकर बाहर जानेको महापातक ठहराया,—उसीसे उद्‌भूत आज हमारा शिक्षित समुदाय ऐसे वायुमंडलमें रहते हुए भी जिसमें उसे इन प्राकृतिक वस्तु-ओंकी ख़बर नहीं, देशभक्तिका दम भरता है! हम जिस देशको प्यार करते हैं, उसके वृक्ष और लताका पता नहीं, उनके सौंदर्य्य, उनके जीवनका जानना तो दूर रहा, नामतक मालूम नहीं। जिन पक्षियोंकी सुन्दरताके वर्णन हम कवियोंकी रचनामें पाते हैं, उनके दर्शन भी कभी हुए? जिन लताओं और पुष्पोंके नाम काव्योंमें पढ़े उनमेंसे कितने देखे हैं, कितनोंके सौंदर्य्यका नयनानन्द प्राप्त किया है? जो कीड़े मकोड़े हमारे जीवनकेलिए अत्यावश्यक हैं जिनका प्रत्युपकार करनेमें हम असमर्थ हैं, उनमें किस किसको हम जानते हैं? जिस अंधेरी रातसे हमें घृणा है, उसमें ही स्वच्छ नीलाकाशमें सारे महिमंडलको शोभा पहुँचाते हुए तारोंसे कितने शिक्षित लोग वार्त्तालाप करते हैं? शिक्षित समुदायने अपने मस्तिष्कपर शास्त्रके विषयोंका बोझ लाद लेना ही शिक्षाका फल समझ रक्खा है और रसज्ञताको एकदम विदा कर दिया है।

विज्ञानद्वारा सच्चे देशप्रेमकी शिक्षा

**जिस स्थितिका हमने ऊपर वर्णन किया है उस स्थितिको बदलनेकेलिए क्या उपाय हैं? हम किस तरह सच्चे देशभक्त, सच्चे भार-**तीय बनें? हम जिस देशको अपना कह रहे हैं उससे किस तरह गहरी जान पहचान करें? यही प्रश्न हमारे सामने पेश हैं और विज्ञान ही उन सब प्रश्नोंका प्रत्यक्ष उत्तर है।

हम जब किसीसे गहरी दोस्ती, गाढ़ा प्रेम करना चाहते हैं, तो क्या दूर दूरसे बात चीत करने वा "लग्घो पानी पिलानेसे" काम चल सकता है? जिससे हम प्रेम करना चाहते हैं उसकी भाषामें उससे बात चीत करते हैं। उस-के दुःखके साथ दुःख सहते, उसके सुखमें सुखी होते, उसके दोषोंको दूर करते, निदान* सब तरहका मैत्रीका सलूक करते हैं। घूमने फिरने वा काम काजसे इधर उधर जानेमें सैकड़ों पौधे देखनेमें आते हैं। इनसे मैत्री कर-नेकेलिए हमें थोड़ी सी वनस्पति-विद्या जाननी चाहिए। हमारी मातृभाषा भाइयोंसे, मनुष्यों-से, बातचीतकेलिए है; वनस्पतिसे बातचीत करनेको हमें वनस्पति-विज्ञानद्वारा बतायी हुई भाषाका प्रयोग करना होगा। बस थोड़ी सी विद्यासे ही हम जिधर जाते हैं मित्रोंके कुटुम्ब-का कुटुम्ब स्वागतकेलिए खड़ा पाते हैं। कोई टहनी नहीं, कोई पत्ती नहीं जो हमारा जी बहलानेको एक नयी कहानी लेकर खड़ी न हो। फूल, पखड़ियां, केशर, पराग मकरन्द जिनपर हमारे कवियोंने अपनी सरस्वतीको वार दिया है आज भी हमारेलिए बागकी रविशोंको परि-स्तानका तमाशा और सड़कके किनारोंको इंद्र-के अखाड़ेका दृश्य बना रहे हैं। अमृतमय मधुपको पान करके मस्त भौंरे, और वनस्पति-योंमें घूम घूमकर चहकनेवाले पक्षी हमको

* कुपथ निवारि सुपंथ चलावा, गुन प्रकटै अवगुनहिं दुरावा, देत लेत मन शंक न धरई, बल अनुमान सदा हित करई, निज दुख गिरि सम रज करि जाना, मित्रक दुख रज मेरु समाना; बिपतकाल कर सतगुन नेहा, श्रुति कह संत मित्र गुन एहा। (तुलसी)

नन्दन वनका आनन्द देनेको स्वागत कर रहे हैं। पर, हम हैं पढ़े लिखे गंवार, हम पढ़ लिख कर भी इनकी भाषा नहीं समझते। हमारी आँखोंपर ऐनक चढ़ी हुई है, पर हम पत्तियों, फूलों, फलोंके सौंदर्य्यको देखनेमें असमर्थ हैं। क्यों? क्योंकि हमारी आँखोंको विज्ञानका प्रकाश नहीं मिला है, हमने ज्योति ठीक करनेको ऐनक तो ली पर अज्ञानके अंधकारसे निकलनेकी फ़िक्र न की।

घूमना घामना देशान्तरकी सैर करना फ़ैशनके अनुकूल है, परन्तु उसका उद्देश्य मुख्यतः दसपांच मित्रोंके साथ गपशप और सहभोजको छोड़ अधिक नहीं होता। हम अपने प्यारे देशके विशेष-स्थानोंको भी विस्तारपूर्वक नहीं देखते। किस भूमिमें किस प्रकारकी मिट्टी वा चट्टान हैं, क्या उपजता है, कैसे पत्थर वा खनिज हैं, कितनी ऊंचाई है, कैसी ऋतु रहती है, कैसा तापक्रम रहता है, कैसी वर्षा होती है, इत्यादि सैकड़ों बातें उस स्थानपर पहुँचकर मालूम करने और अनुभव प्राप्त करनेसे सच्ची जानकारी होती है। परन्तु हमारे सैर करनेवाले इन बातोंको भूगोलकी पुस्तकमें तह कर रखते हैं और पाठशालाकी परीक्षाओंकेलिए ही इनकी जानकारी सार्थक समझते हैं।

यह समझ बैठना भी भूल है कि इन जानकारियोंसे अपने दिमाग़ क्यों थकावें। इनसे दिमाग़को थकान नहीं होता वरन् आराम मिलता है। आंखों, कानोंके नाड़ीजाल जो घरेलू वा कामकी चीज़ें देखते सुनते थके रहते हैं, इन आनन्ददायक परिवर्त्तनोंसे उन्हें आराम मिलता है, उनकी पुष्टि होती है। रास्तेका चलना नहीं खलता, दूरसे दूरका रास्ता आनन्दमें कट जाता है, साथ ही मनको बड़ा सन्तोष, बड़ा सुख होता है कि हम अपनों-में ही विचर रहे हैं। यह वनस्पति, यह खनिज सब हमारे ही हैं।

थोड़ी देरकेलिए हम मान भी लें कि इस तरह जंगलोंकी ख़ाक छाननेको हमें फ़ुरसत नहीं है। ख़ैर साहब, अपने काम काजसे बाज़ार गये बिना तो चल नहीं सकता। आप बाज़ारमें जाकर सैकड़ों हज़ारों तरहकी चीज़ें देखते हैं। उनमें बहुतेरी चीज़ें आप अपने नित्यके काममें लाते हैं; क्या यह आपको मालूम है कि तेजपात, कहांसे आता है, कैसे पेड़में होता है? लवंगका फूल कहांसे आता है? कत्था कैसे निकालते, बनाते हैं, सुपारी कहांसे मंगवायी जाती है। कहांतक कहें हज़ारों चीज़ें हैं जिनपर सफ़्हे नहीं काग़ज़के रीमके रीम रंगे जा सकते हैं, परन्तु हमको कभी मनमें यह उत्कंठा नहीं होती कि जो वस्तुएं हमें नित्य स्वाद और सुख देती हैं कहां, कैसे होती हैं किस प्रकार आती हैं। जिनसे हम इतना सुख उठावें उनका बिल्कुल हाल न जानें, यह कैसे दुःखकी बात है। यह सच है कि आप इन सब चीज़ोंको पैसे देकर लेते हैं, परन्तु पैसे आप उपजाने, लाने, साफ़ या तय्यार करनेकी मज़दूरीमें देते हैं। इनके स्वादकेलिए, इनसे मिलते हुए सुखकेलिए क्या हम कुछ दे सकते हैं? इतनेपर भी हम इन्हें जाननेका ज़रा भी प्रयत्न नहीं करते। यह हमारी अज्ञानता ही है जिसके कारण धीरे धीरे यह चीज़ें हीं हमारे देशसे बाहर चली गयीं और अब हमारे पास हमारे ही अपने, हमारी अयोग्यतासे, मेहमान बनकर आती हैं। जापानी आदि विदेशी व्यापारी इन बातोंकी छानबीन करके अपने यहांके मालसे बाज़ार भर देते हैं, पर हमारे कानोंपर जूं नहीं रेंगती। रसायन, भौतिक वा प्राणि-विद्यामें ही विज्ञान सीमित नहीं है। विज्ञान बहुत ही व्यापक शब्द है। मेंथी मँगरेला सोंठ काले नमककी जानकारी भी विज्ञान है, और वह जानकारी इतनी ही

नहीं है कि "दिसावरसे मँगाते हैं"। उसका पूरा वृत्तान्त जानना विज्ञान है। आपको वनस्पतियों और खनिजोंसे यदि राहमें, जंगल मैदानमें, मैत्री करनेको अवसर नहीं मिलता तो बाज़ारमें ही उनके सजातियोंसे प्रेम पैदा कीजिए। फ़िर तो हर बनिएकी दूकान आपकेलिए प्रदर्शिनी वा नुमायशगाह हो जायगी। हर कुंजड़ेकी डाल आपको खुली हुई किताब मिलेगी।

जब आप विज्ञानके सहारे अपने देशकी वस्तुओंको इस तरह जानेंगे। जब आप कंकड़ कंकड़से और पत्ती पत्तीसे दोस्ती कर लेंगे, जब आप अपने प्यारे देशको जान जायँगे, जब आपको पत्ती पत्ती पहचानने लगेगा, तब जो देशप्रेमका आनन्द आपको होगा उसका स्वाद अवर्णनीय है। तब जो आनन्द और प्रेमका समुद्र आपके हृदयमें उमड़ेगा उसमें सारे संकुचित भाव सदैवकेलिए डूब जायँगे। अपने देशको प्राणपणसे प्यार करते हुए भी किसी अन्यसे द्वेष न होगा। कोई अपने माता पिताको चाहे, उनका आदर करे, तो यह औरोंके मा बापसे द्वेष करना कोई पशु ही समझेगा।

इन्हीं बातोंपर विचार करनेसे समझमें आता है कि हमारी देशभक्ति कोरी क्यों रहती है। हम भक्ति करते हैं पर जानते नहीं कि किसकी भक्ति करते हैं। पहले जो अन्धविश्वास-से देशभक्तिको परम्परागत पूजामें व्यक्त करते थे, सुधारकोंकी कृपासे वह हमारे दिलके पन्ने-से ऐसा उड़ गया जैसे स्कूलके काले तख़्तेपरका लिखा लिखाया झाड़नके एक दौरेमें साफ़ हो जाता है। अब हम किसी दृष्टिसे भी प्रकृतिके दर्शन नहीं करते, न धर्म्मकी श्रद्धासे, न ज्ञान-की पिपासासे। यही बात है कि कोरा ज़बानी जमा खर्च रह गया। ऐसी दशामें विज्ञानको छोड़ दूसरा उपाय ही नहीं। विज्ञानके ही प्रकाशमें सत्यरूपी तेजस्वी बालक अपने शुद्ध सात्विक आकारमें देख पड़ेगा। विज्ञानसे ही हम अपने देशको जान जायंगे। जान ही न जायँगे बल्कि उसे संसारमें सबसे ऊंचा स्थान दिलवायेंगे। विज्ञान सच्ची देशभक्ति, सच्चे देशप्रेमका अमूल्य शिक्षक है।

### विज्ञानसे जीवनका सुख

संसारमें कोई ऐसा मनुष्य नहीं जिसके हृदयमें अपने देशके अनुरागका अंकुर न हो। सच्चा व्यवहारिक विज्ञान इसी अंकुरको सींच-कर पल्लवित, पुष्पित करता तथा उन्नत होने-पर भी फलभारसे नत कर देता है। परन्तु यह असंभव नहीं कि ऐसा भी कोई निखट्टू हो जिसे पशुकी नाईं अपने पेट पालनेके सिवा कोई व्यापार नहीं है। ऐसे निखट्टुओंका जीवन भी विज्ञानकी बदौलत आनन्दमय हो जाता है। अपनी वास्तविक स्थितिको समझकर वह निखट्टू भी अपनेको संसारकी एक सम्बन्ध रखनेवाली व्यक्ति समझने लगता है। विज्ञान उसे पशुसे मनुष्य बना देता है। विज्ञान सच-मुच आदमी बनानेवाली विद्या है।

आजकल स्कूलोंमें (object lessons) प्रत्यक्ष वस्तुओंकी शिक्षापर बहुत ज़ोर दिया जाता है, परन्तु हमारा अनुमान है कि हमारा सा आदर्श अपने सामने रखकर भी शिक्षा विभाग पूरी पूरी सफलता नहीं पा सकता। क्योंकि हम तो प्रत्यक्ष देखते हैं कि इस शिक्षाकी आव-श्यकता बड़ोंको लड़कोंकी अपेक्षा अधिक ही है। इस आवश्यकताकी पूर्ति विज्ञान द्वारा अवश्य हो सकती है यदि देशके सच्चे हितू इसको सफल करनेमें तन मन धनसे उद्योगशील हों।

# अङ्कपाश

[ ले० महावीर प्रसाद बी. एस-सी. एल्. टी. ]

चक्रवाले लेखमें* पाठकोंसे दो भाई कुंजविहारी और व्रजविहारीका परिचय कराया गया था। यह दोनों भाई साथ साथ रहते हैं। कुंजविहारी मेट्रीक्यूलेशनमें उत्तीर्ण होकर अब एफ्. ए. कक्षामें पढ़ते हैं और वृजविहारी सातवीं कक्षामें। एक दिन किसीने वृजविहारीसे यह प्रश्न किया "३, ४, ५ और ६ अङ्कोंसे जितनी भिन्न भिन्न चार-अङ्कवाली ऐसी संख्याएं जिनमें वही अंक दो बार न आया हो बन सकती हों उनको बतलाओ और उनका योगफल भी बतलाओ"। उस समय योगफल बताना तो दूर रहा, व्रजविहारी यह भी नहीं उत्तर दे सका कि इनसे कितनी संख्याएं बन सकती हैं। परन्तु व्रजविहारीकी आदत ऐसी थी कि जो प्रश्न वह स्वयम् नहीं कर सकता था उसे निरुत्साही होकर छोड़ नहीं देता था वरन् अपने बड़ोंसे पूछकर उसके मर्म्मको अच्छी तरह समझ लेता था। इसीलिए छोटे दर्जेमें होनेपर भी उसे बहुत सी ऐसी बातें मालूम हो गयी थीं जो उससे बड़े लड़कोंको भी नहीं मालूम थीं। जब यह प्रश्न उसकी समझमें नहीं आया तब बड़े भाई कुंजविहारीसे उसने यही प्रश्न किया। कुंजविहारीने जिस प्रकार इस प्रश्नको समझाया उसीका वर्णन यहां किया जाता हैः—

कुंज—यदि केवल दो अङ्क ५ और ६ हों तो दो—अङ्कवाली कितनी ऐसी संख्याएं बनेंगी जिनमें वही अंक दो बार न आवे ?

व्रज—दो संख्याएं ५६ और ६५।

कुंज—अर्थात् यदि ५ को दहाईके स्थानमें रक्खो तो ६ को इकाईके स्थानमें रखनेसे एक संख्या बनेगी और जब ६ को दहाईके स्थानमें रक्खो तो ५ को इकाईके स्थानमें रखनेसे दूसरी संख्या बनेगी। इसी प्रकार ४, ५ और ६ से बननेवाली संख्याएं यों बनेंगी—यदि ४ सैकड़ाके स्थानमें रक्खा जाय तो दहाई वा इकाईके स्थानमें ५ रक्खा जा सकता है और बचे हुए स्थानमें ६; अर्थात् जब ५ दहाईके स्थानमें होगा तो ६ इकाईके स्थानमें पड़ेगा और जब ६ दहाईके स्थानमें होगा तब ५ इकाईके स्थानमें। इस तरह ४ को सैकड़ाके स्थानमें रखनेसे दो संख्याएं ४५६ और ४६५ बनेंगी। अब यदि ५ को सैकड़ाके स्थानमें रक्खो और ४, ६ को दहाई वा इकाईके स्थानमें तो भी दो ही संख्याएं ५४६ और ५६४ बनेंगी। इसी तरह ६ को सैकड़ाके स्थानमें रख कर ४ और ५ को दहाई वा इकाईकी जगह रक्खो तो दो संख्याएं ६४५ और ६५४ बनेगी। इस प्रकार तीन अङ्कोंकी कुल ६ संख्याएं बन सकती हैं। यह बात ध्यानमें रखनी चाहिए कि जब तीनमेंसे कोई एक अङ्क सैकड़ाके स्थानमें होता है तब बचे हुए दो अङ्कोंको दहाई वा इकाईके स्थानमें बदलनेसे २ संख्याएं बनती हैं और तीनों अङ्कोंको बारी बारीसे सैकड़ाके स्थानमें रखनेसे ३ × २ संख्याएं बनती हैं।

तीन अङ्कोंसे बनी हुई संख्याओंके पहले चौथा अङ्क ३ रख दिया जाय तो चार अङ्कवाली ६ संख्याएं बन जायंगी जो यह हैं: ३४५६, ३४६५, ३५४६, ३५६४, ३६४५ और ३६५४। इसी तरह ४ को हज़ारके स्थानमें रख कर ३, ५ और ६ से दूसरी ६ संख्याएं यह बनेंगी ४३५६, ४३६५, ४५३६, ४५६३, ४६३५ और ४६५३। ५ को हज़ारके स्थानमें रखनेसे तीसरी ६ संख्याएं यह हैं: ५३४६, ५३६४, ५४३६, ५४६३, ५६३४ और ५६४३। और ६ को हज़ारके स्थानमें रखनेसे चौथी ६ संख्याएं यह होंगीः ६३४५, ६३५४, ६४३५, ६४५३, ६५३४ और ६५४३।

---

* देखिए भाग २ संख्या ४ पृ० १४६

है। इसीलिए जो लोग क्रमको बिना सोचे हुए संख्याओंका लिखना आरम्भ कर देते हैं वह आगे चलकर कहीं न कहीं अवश्य 'पाश'-में फंस जाते हैं। ऐसे ही लोगोंकी कठिनाइयोंके विचारसे ऐसे प्रश्नोंका नाम 'अंक-पाश' रक्खा गया है। परन्तु जो लोग इसके फंदोंको अच्छी तरह समझ चुके हैं उनकेलिए वह प्रश्न भी सुगम हो जाते हैं जिनके करनेमें 'अङ्क पाश' की सहायता लेनी पड़ती है। अब मैं वह क्रम समझाता हूं जिससे कुल संख्याओंका लिखना सुगम हो जायः—यदि चार अंक दिये हों तो उनमेंसे कोई एक लेकर हज़ारके स्थानमें रख दो और बचे हुए तीन अङ्कोंमेंसे कोई एक सैकड़ाके स्थानमें रख दो फिर बचे हुए दो अंकोंमेंसे किसी एकको दहाईके स्थानमें रख दो और चौथेको इकाईके स्थानमें, इस तरह एक संख्या बन जायगी। दूसरी संख्याकेलिए हज़ार और सैकड़ा वाले अंकोंको वैसे ही रहने दो, केवल दहाईवाले अंकको इकाईके स्थानमें और इकाईवाले अंकको दहाईके स्थान-में रक्खो, जैसे ३४५६ और ३४६५। तीसरी संख्या लिखनेकेलिए दूसरी संख्याके हजार वाले अंकको वहीं रखकर सैकड़ावाले अंकको इकाईके स्थानमें लेजाओ और इकाईवाले अंकको सैकड़ाके स्थानमें; चौथी संख्याके-लिए तीसरी संख्यावाले हज़ार और सैकड़ाके अंकोको बिना हटाये दहाई और इकाईके अंकों-का परिवर्तन कर दो जैसे ३५६४ और ३५४६। पांचवीं संख्या लिखनेकेलिए चौथी संख्यामें वैसाही परिवर्तन करो और ६वींकेलिए पांचवीमें जैसे ३६४५ और ३६५४। सातवीं संख्या बनाने-केलिए ३ को छोड़कर किसी दूसरे अंकको जैसे ४ को हज़ारके स्थानमें रक्खो और उसी नियम-से संख्याएं लिखते जाओ जैसे पहली छः संख्याओंको लिखा है, यह याद रक्खो कि इन छः संख्याओंके हज़ारके स्थानमें एक ही इसप्रकार चार भिन्न भिन्न अंकोंकी संख्याएं कुल ४×६ वा ४×३×२ हुईं।

ब्रजविहारी—यह तो समझ गया, परन्तु कुल संख्याओंको जल्दीमें लिखकर योगफल निकालना कठिन मालूम होता है।

कुंज—क्रमसे लिखनेका नियम बिना समझे सब संख्याओंका लिखना अवश्य कठिन अंक रहे। तीसरी छः संख्याओंके हजारवाले स्थानोंमें ५ रक्खो और चौथी छः संख्याओंके हज़ारवाले स्थानोंमें ६।

इसी तरह यदि ५ अंकवाली संख्याएं जानना हो तो किसी एकको दस हज़ारके स्थानमें रखकर उपर्युक्त नियमानुसार बचे हुए चार अंकोंके परिवर्तनसे २४ अर्थात् ४×३×२ संख्याएं बन सकती है। अब किसी दूसरे-को दस हजारके स्थानमें रक्खें तो बचे हुए चार अंकोंसे फिर ४×३×२ संख्याएं बन सकती हैं। पांचों अंकोंमेंसे प्रत्येकको बारी बारी-से दस हज़ारके स्थानमें रखनेसे चौबीस चौबीस संख्याएं बनती हैं। इसलिए कुल संख्याएं ५×२४ वा ५×४×३×२×१ हुईं।

इसीतरह ६ अंकोंकी कुल संख्याएं

६×५×४×३×२×१,

७ अंकोंकी ७×६×५×४×३×२×१

८ " ८×७×......३×२×१,

और 'अ' अंकोंकी अ (अ–१)×(अ–२)........ ३×२×१ होंगी।

जब ऐसी संख्याओंका गुणनफल प्रकट करना होता है जो क्रमसे एक एक घटती हुई १ तक पहुंच जाती हैं तब सब संख्याओंको न लिखकर सबसे बड़ी संख्या की बायीं ओर एक खड़ी लकीर और नीचे एक पड़ी लकीर मिला-कर खींच देते हैं जैसे |९ के लिखनेका यह तात्पर्य्य है

९×८×७×६×५×४×३×२×१। इत्यादि

यदि ६ अंक दिये हों और कहा जाय कि दो भिन्न अङ्कोंवाली कितनी संख्याएं बन सकती हैं तो उसकेलिए यह विधि है:—यह जानते हो कि दो अङ्कोंवाली संख्याएं इकाई और दहाईके स्थानोंमें रक्खी जाती हैं। इसलिए दहाईके स्थानमें ६ अंकोंमेंसे कोई एक अंक रख दो और बचे हुए पांच अंकोंमेंसे कोई एक अंक इकाईके स्थानमें रखदो, एक संख्या बन जायगी। इस तरह दहाईके प्रति अंकके साथ इकाईके स्थानमें बारी बारीसे बचे हुए अंकोंमें-से एक एक अंक रखनेसे ५ संख्याएं बन सकती हैं, और दहाईमें बारी बारी से ६ परिवर्तन किया जा सकता है इसलिए कुल६ × ५ संख्याएं बनेंगी जैसे मानलो ९,८,७,६,५,४ अंक दिये हुए हैं।

इनसे उपरोक्त नियमानुसार नीचे लिखी हुई संख्याएं बनेंगी:—

९८, ९७, ९६, ९५, ९ ; ८९, ८७, ८६, ८५, ८४; ७९, ७८, ७६, ७५, ७४; ६९, ६८, ६७, ६५, ६४; ५९, ५८, ५७, ५६, ५४; ४९, ४८, ४७, ४६, ४५;

यदि उपर्युक्त ६ अंकोंमेंसे तीन भिन्न अंकों-की संख्याएं निकालनी हो तो सैकड़ाके स्थानमें उन अंकोंमेंसे कोई एक अंक रखनेसे ६ परिवर्तन हो सकते हैं। ऐसे प्रत्येक परिवर्तनके साथ दहाईके स्थानमें बचे हुए ५ अंकोंमेंसे कोई एक बारी बारीसे लेनेमें ५ परिवर्तन किये जाते हैं इस-लिए सैकड़ा और दहाईके स्थानोंमें मिलाकर कुल ६ × ५ परिवर्तन हो सकते हैं। ऐसे प्रत्येक परिवर्तनके साथ बचे हुए ४ अंकोंमेंसे एक एक बारी बारीसे इकाईके स्थानमें लिया जाय तो ४ संख्याएं बन सकती हैं इसलिए कुल संख्याएं हुई ६×५×४। संक्षेपमें—

६ अंकोंमेंसे २ भिन्न भिन्न अंकों वाली संख्याएं
= ६×५
" ३ " = ६×५×४
" ४ " = ६×५×४×३
" ५ " = ६×५×४×३×२
" ६ " = ६×५×४×३×२×१

इससे यह सिद्ध होता है कि जितने अंक दिये हुए हों उतनाही गुणन खंडोंका पहला अंक मानकर उससे एक एक कम अंकोंको गुणनखंड क्रमसे बनाते जाओ, जब उतने गुणनखंड लिख चुको जितने भिन्न अंक प्रतिबार लेकर संख्याएं बनानी हों तब बंद कर दो। इन्हींका गुणन-फल संख्याओंका परिमाण होगा।

इसी तरह यदि ६ अक्षर लिये जायँ और उन-से दो भिन्न भिन्न अक्षर लेकर शब्द बनाये जायँ तो शब्दोंका परिमाण ६×५ होगा; यदि तीन भिन्न भिन्न अक्षर लिये जायँ तो शब्दोंका परिमाण ६×५×४ होगा इत्यादि। यदि दिये हुए अक्षर क, ख, ग, घ, ज, झ हों तो दो भिन्न अक्षरोंके शब्द यह हैं : कख, कग, कघ, कज, कझ ; खक, खग, खघ, खज, खझ ; गक, गख, गघ, गज, गझ ; घक, घख, घग, घज, घझ ; जक, जख, जग, जघ, जझ ; झक, झख, झग, झघ, झज। तीन भिन्न अक्षरोंके पहले २० शब्द जब उनका प्रथम अक्षर क हो यह हैं : कखग, कखघ, कखज, कखझ ; कगख, कगघ, कगज, कगझ ; कघख, कघग, कघज, कघझ ; कजख, कजग, कजघ, कजझ और कझख, कझग, कझघ, कझज इसी तरह २० ऐसे शब्द हो सकते हैं जिनका पहला अक्षर ख हो और २० ऐसे जिनका पहला अक्षर ग हो इत्यादि। अर्थात् कुल ६ × ५ × ४ शब्द बन सकते हैं।

ब्रजविहारी—ऐसे प्रश्न बड़ी उलझनके होते हैं।

कुंजबिहारी—इसमें कोई सन्देह नहीं। इसी उलझनके कारण कुछ लोग पिङ्गलकी छंद-संख्या, मर्कटी पताका इत्यादिके नियमोंको झंझट मात्र समझते हैं। परन्तु गणितके प्रेमी-को इससे एक अद्भुत आनन्द मिलना चाहिए क्योंकि यह सब नियम सिद्ध करते हैं कि हमारे पूर्वज गणितकी इस शाखामें कितना आगे बढ़े हुए थे। यदि तुम्हें इच्छा होगी तो आगे चलकर वह सब नियम और श्लोक भी बतलाये जाँयगे जो लीलावती और भास्कराचार्य्य इत्यादिके ग्रन्थोंमें इस विषयमें कहे गये हैं।

# आकाश तथा आकाशकी लहरें

[ ले० कृष्णदेवप्रसाद गौड़, काशी ]

यह नीली नीली वस्तु जो ऊपर देख पड़ती है, क्या है ? प्राचीन लोगोंमें कुछ समझते थे कि यह कोई ठोस पदार्थ है जिसके ऊपर देवता रहते हैं और कदाचित उसीके ऊपर सर्वशक्तिमान जगदीश्वर भी विराजमान हैं। यथार्थमें यह कोई वस्तु नहीं है। जिस तरह गहरी नदीके ऊपरसे देखें तो कोई ज़मीनकी तहको नहीं देख सकता बल्कि नीलोज्वल रंगका पानी दीखता है और दृष्टि दूरतक नहीं जा सकती, उसी तरह हवाके पारदर्शी होते हुए भी, ज़्यादा घनी होनेपर, जहाँ दृष्टि बँध जाती है नीला रंग दीखता है। साधारणतः हम आकाश इसीको कहते आये हैं। पर जिस आकाशका हम आज वृत्तान्त सुनाते हैं वह एक प्रकारके अत्यन्त सरल पदार्थका नाम है जो वायुसे कहीं ज़्यादा पतला और सूक्ष्म अनुमान किया गया है और वह सारे जगतमें, समस्त विश्वमें व्यापक है। कोई ऐसी जगह ख़ाली नहीं है जहाँ ईश्वर न हो, उसी तरह कोई स्थान ऐसा नहीं जहां आकाश न हो। अंगरेज़ी भाषामें इसको ईथर* कहते हैं।

भौतिक विज्ञानकी बहुतेरी नयी खोजोंसे आकाश तथा आकाशके लहरोंका बड़ा संबंध है। साथ ही यह भी जान लेना चाहिए कि अभीतक इन खोजोंका आधार उच्च श्रेणीका गणित है, और कल्पनाका घनिष्ट सम्बन्ध है। पश्चिमी वैज्ञानिकोंका मत है कि पहले पहल (Plato) अफ़लातूनके समय लोगोंने इस वस्तुपर विचार किया था। (Newton) न्यूटन, (Descartes) डेकार्ट और दूसरे वैज्ञानिक धुरन्धरोंने इसका होना माना है, और आजकलके भौतिक शास्त्रके पढ़नेवाले भी इसे मानते हैं। चालीस बरस पहले लोग इसका नाम बड़े मज़ेमें लेकर विचित्र विचित्र गढ़ंत बनाया करते थे जिनके बारेमें वास्तवमें कोई कुछ न जानता था।

परन्तु विद्युत्शास्त्रने पिछले चालीस बरसोंमें जो उन्नति की है उसने कुछ औरका और कर डाला। विद्युत् शास्त्रके नये नये आविष्कारों तथा क्रियाओंने नयी नयी बातें प्रकट कर दी हैं। और अब ईसाकी बीसवीं शताब्दिकी आदिमें प्रकाश (light) विद्युत्, अश्रव्य स्वर (inaudible sound), अदृश्य प्रकाश (invisible light) लिनार्ड (Lenard) और (Rontgen) रंजनके किरणोंके बारेमें, जीवित पदार्थोंका स्फटिकीकरण (crystalliztation), तथा विचारोंके स्थानान्तर (transference of thought) आदिके बारेमें नये नये विचारों और आविष्कारोंकी ऐसी ऊंची दीवारें खड़ी हो गयी हैं कि उनके पार जाना कठिन है। परन्तु वैज्ञानिकोंका विश्वास है कि इन कठिनाइयोंका दमन करके लोग आगे बढ़ेंगे और ईसाकी इस नयी शताब्दिमें पिछलीकी अपेक्षा कहीं अधिक अद्भुत बातें मालूम होंगी।

वैज्ञानिक संसार आकाशको कैसा समझता है इसकी कल्पना सर्वसाधारणको करा देना अत्यन्त दुस्तर है, पर मोटी रीतिपर एक स्थूल प्रयोगसे कुछ थोड़ी सी कल्पना हो सकती है। एक बरतनमें चीनीका गाढ़ा शरबत घोलिये और उसमें कुछ नन्हे नन्हे दाने ख़मीरकी टुकतीके डाल दीजिये और इस कुलको एक शीशेके गिलासमें रख अपने सामने रख लीजिये। शरबत बिना रंगका हो तो उत्तम होगा। क्यों-

* ईथर नामका एक द्रव पदार्थ भी है जो मद्यसार और गंधकाम्लकी संक्रियासे प्राप्त होता है। क्लोरोफ़ार्मकी नाईं यह भी बेहोशी लाता है। बहुत तरल है। अति शीघ्र भाप बनकर उड़ जाता है। आकाश वाची ईथर इससे भिन्न है। सं०

Physics भौतिक शास्त्र ]

कि आकाशका रंग नहीं माना जाता और क्रिया देखनेमें भी सुभीता होगा। दानों समेत कुल शरबतको तो समझिये ब्रह्माण्ड, कुल विश्व और दानोंको समझिये सितारे, सौरमंडल आदि। शरबतको इतना पतला और सूक्ष्म समझिये कि वह नुकतीके दानोंके परमाणु परमाणुमें भिना हुआ है। यहाँतक कि यदि शरबतकी सूक्ष्मतासे और परमाणुओंके आकारसे मुकाबिला किया जाय तो हर एक परमाणु उसी प्रकार शरबतसे घिरा हुआ है जैसे एक दाना बरतनमें कुल शरबतसे घिरा हुआ है। मतलब यह कि शरबत लगातार सब स्थानमें है और कहींपर शरबतमें एक बिन्दुके बराबर जगह भी ख़ाली नहीं है। यदि हम धीरे-से अपनी अंगुलीसे बरतनके नीचे मार दें या मेज़पर ऐसी हलकी थपकी दें कि गिलास समूचा शरबत समेत हिल जाय परन्तु दाने न हिलें तो शरबतमें एक लहरसी उत्पन्न हो जायगी। जो दानोंके भीतर प्रवेश करती हुई फैलेगी क्योंकि यह अनुमान किया जा सकता है कि दानोंके परमाणु परमाणुमें शीरा भिन गया है। तात्पर्य्य यह कि जिस प्रकार शरबत दानोंमें खूब भिना हुआ है, उसी प्रकार आकाश भी सब चीज़ोंमें घुसा हुआ है, और इतना सूक्ष्म है कि शीशा, पत्थर, धातु, लकड़ी मांस, जल, शून्य स्थान सब जगह वर्त्तमान है और इसीके हिलनेसे अथवा इन्हींमें लहर पैदा होनेके कारण विद्युत्की किरणें, प्रकाशकी किरणें रंजनकी किरणें इत्यादि पैदा होती हैं, और अपना अपना अद्भुत काम करती हैं। प्रकाशके कारण हम लोग देखते हैं। जितनी प्रकाशकी किरणें किसी प्रकाशदायक वस्तुसे आती हैं सब आकाशमेंकी लहरें हैं। यही नहीं, हवामें लहर चली आ रही है और सामने एक शीशेका टुकड़ा पड़ जाय तो लहर रुकती या लौटती नहीं यदि ऐसा होता तो शीशेमेंसे हम लोग न देख सकते। लहर आती है सामने शीशा रख दिया उसमें से लहर चली गयी, क्योंकि आकाश तो कांचके टुकड़ेमें भी व्याप रहा है। यह लहरें बड़ी सूक्ष्म होती हैं। बहुतेरे पदार्थोंमें, यह सच है कि साधारण लहरें नहीं जा सकतीं लकड़ी, दीवार आदिमें प्रकाशकी लहरें, आकाशमें व्यापक होते हुए भी प्रवेश नहीं कर सकतीं। इनके सामने आकर कुछ समा जाती हैं और कुछ टकराकर लौट जाती हैं। परन्तु साधारण प्रकाशसे भिन्न भी लहरें हैं जो धातमें तो नहीं जाती पर दीवार लकड़ी आदिके पार हो जाती हैं। इन्हें अध्यापक रंजनने पहले पहल देखा था, सो यह रंजन रश्मि कहलाती हैं। इसी प्रकार बहुत सी ऐसी वस्तुएं हैं जिनमेंसे रंजनकी किरणें चली आयंगी परन्तु प्रकाशकी किरणें न जा सकेंगी। मामूली विद्युत्की किरणें या कम थरथराहट या स्फुरण वाली या कम कम्पनवाली विद्युत्की किरणें, प्रकाश और रंजन दोनों किरणोंसे इस मामलेमें भिन्न हैं। बड़े थरथराहटकी विद्युत् किरणें तो और भी भिन्न हैं। बहुतसी किरणें जिनका जन्म अभी नहीं हुआ है वह और भी भिन्नता दिखाएंगी।

आकाशका घनत्व उस बलसे ( energy ) निकाला जाता है जिस बलसे सूर्यकी किरणें पृथिवीपर गिरती हैं। उसका घनत्व इतना कम है कि हम लोगोंकी अंककल्पनासे बाहर है। दशमलवके बाद इक्कीस शून्य पड़ते हैं तब जाकर अंक आरंभ होता है! इसके घनत्वसे इसकी दृढ़ता ( rigidity ) भी निकाली गयी है और वह भी अत्यन्त कम है। तब भी घनत्व और दृढ़ता मालूम हो जानेसे यह बात जान ली गयी कि आकाश चाहे कितना ही सूक्ष्म हो, पर कुछ पदार्थ अवश्य है, उसका अस्तित्व है। यह भी समझा जाता है कि यह दबाया नहीं जा सकता क्योंकि यदि ऐसा होता तो लहरें जैसे उसमेंसे गुज़रती हैं, न प्रवेश कर

सकतीं। बड़े बड़े वैज्ञानिकोंने इस बातपर दिमाग़ लड़ाया है कि जब पृथ्वी अपने रास्ते-पर सूर्यके चारों ओर उन्नीस मील फ़ी सेकेण्ड-के हिसाबसे चलती है तो आकाशके ओतप्रोत-व्यापी विश्व-सागरमें कोई विकार उत्पन्न होता है, आकाशपर कोई प्रभाव पड़ता है, या नहीं? जिस तरह नाव पानी चीरती हुई नदीमें जाती है उसी प्रकार अकाशको चीरती हुई पृथ्वी बढ़ती जाती है, या जिस तरह चलनी पानीके ऊपर दबानेसे पानी ज़ोरसे ऊपरको छनता जाता है उसी प्रकार आकाश पृथ्वीके सूक्ष्म छेदोंमेंसे छनकर एक ओरसे दूसरी ओर निकला जाता है। परन्तु इस बातका निर्णय कोई ठीक रीतिसे न कर सका। संभवतः आकाश जैसे सूक्ष्म पदार्थके लिए पृथ्वी ठोस है ही नहीं, उसके परमाणु अलग अलग हैं, इस-लिए आकाशमें पृथ्वी बिना हलकोरेके इस वेगसे चक्कर लगाती रहती है। वैज्ञानिक इतना जान गये हैं कि यदि आकाश किसी ठोस वस्तु-में बन्द रहे तो उसमें लहरोंके ले जानेकी शक्ति कम रहती है। यदि आकाश साधारण रीतिसे खुली अवस्थामें रहे तो उसकी शक्ति बढ़ी रहती है। अकेले शीशेमें तिरछी लहरें एक सेकण्डमें तीन मील जाती हैं। शीशेमें यदि आकाश हो तो यह आकाश एक सेकण्डमें १,२४,००० मील लहरोंको ले जाता है। और आकाश जब हवाके साथ खुला रहता है, तो एक सेकण्ड में १८२००० मील ले जा सकता है। यह भिन्नता क्यों पायी जाती है इसका कोई उत्तर नहीं है। आकाशकी लहरें भिन्न भिन्न प्रकार और नामकी हैं, ये तापकी लहरें प्रकाशकी लहरें, (Hertz) हर्ज़की लहरें (Lenard) लिनार्डकी लहरें तथा (Rontgen) रंजनकी लहरें बोली जाती हैं। इनमें जो भिन्नता है वह भी बड़ी मोटी और आसान है और वह मालूम कर ली गयी है। इनमें जो फ़रक़ है वह केवल उन लहरोंकी लम्बाई और एक सेकण्डमें उनकी थरथराहट या स्फुरण वा कम्पनका है। तापके लहरोंका स्फुरण दो खरबसे चार खरबतक (२००,०००,०००,०००—४००,०००,०००,०००) एक सेकण्ड में होता है। प्रकाशकी लहरोंमें चार खरबसे आठ खरब तक (४००,०००,०००,००० — ८००,०००,०००,०००) प्रति सेकंड होता है। लम्बी और धीमी लहरों-से लाल रंग देख पड़ते हैं और ज्यों ज्यों कम्पन बढ़ता जाता है, नारंगी, पीले, हरे, आस-मानी नील और बैंजनी आदि रंग मालूम पड़ते हैं।

चार खरब प्रति सेकंडसे कम थरथराहट-की लहरोंका कुछ भी प्रभाव नेत्रोंपर नहीं पड़ता। ये वह लहरें हैं जिन्हें अदृश्य प्रकाश (invisible light) कहते हैं, जिस तरहसे हवामें यदि स्फुरण वा कम्पन एक सेकंडमें ३०से कम हो तो शब्द सुनाई नहीं पड़ सकता और उसे अश्रव्य स्वर (inaudible sound) कहते हैं। रंजन की लहरोंसे भी थरथराहट एक सेकंडमें (८) आठ खरबसे ज्यादः अनुमान की जाती है। कलकत्तेके डाक्टर बोसने बहुत सी परीक्षायें छोटी बड़ी लहरोंके साथ की हैं। उसी प्रकार पश्चिमीय विद्वान (Mar-coni) मारकोनी ने भी परीक्षायें की हैं। यह लोग अभी ऐसी लहरोंतक पहुंचे हैं जिनकी थरथराहट एक सेकंडमें ढाई खरबतक है।

सन् १८४२ में अमेरिकन विद्वान (Joseph Henry) युसुफ हेनरीने अपने मकानकी छतपर एक तारके अन्दरसे एक इंचकी गति-वाली विद्युतकी चिनगारी भेजी और बादको मालूम हुआ कि उसके नीचेके कमरेके तारमें भी बिजलीकी धारा बह रही है, यद्यपि उन दोनोंमें कोई लगाव नहीं था। इसपर उसने अनुमान किया कि ऊपरके तारमेंकी बिजली-की धाराने आकाशमें एक लहर पैदा कर दी

जिसके कारण नीचेके तारमें भी विजलीकी धारा चल पड़ी। हेनरीने जो परीक्षा की थी उसमें नीचेके कमरे और ऊपरके कमरेके बीचमें चौदह इंच मोटी छत थी। इसमें एक प्रलोभक (induced) लहर पैदा हो गयी थी जिससे नीचेके तारमें बिजलीका प्रवाह पाया गया। इसीकी आधार पर बेतारकी तारबरकी या चलती हुई गाड़ी अथवा जहाज़पर तार भेजना लोगोंने निकाला है। १८८८में (Hertz) हर्ज़ने बतलाया कि यह लहरें पत्थर तथा लकड़ीमेंसे जा सकती हैं परन्तु धातुओंमें से नहीं।

मनुष्यने अपनी खोजसे सभी तरहके पदार्थोंकी परीक्षा की। परन्तु आकाशकी सूक्ष्मतापर अभीतक उसका कोई अधिकार नहीं हुआ है। उसने रसायनके कांटेपर तारों और नीहारिकाओं तकको तोल डाला जिनका प्रकाश हमतक हजारों बरसमें पहुंचता है, परन्तु वह आकाश जो परमात्मा की नाईं हर जगह मौजूद है अबतक उसकी समझके कांटों पर न उतरा। पूर्ण कवि ने कहा है।

तोहिं अनादि अनन्त विचारत,
ध्यान अपार गगनको धारत।

परमात्माके अनादि और अनन्त होने की उपमा लोग आकाशसे देते हैं जो बड़ाईमें सारे विश्वमें व्यापक एक पदार्थ है और छुटाई वा बारीकीमें भी ऐसा है कि हमारी इन्द्रियों की गति वहाँ तक नहीं है, बल्कि कल्पनाका भी प्रवेश "निषिद्ध" है। कौन जाने आकाशसे भी सूक्ष्म "पदार्थ" हो जिसका समाचार भी हमारी बुद्धिको नहीं मिला है, परन्तु उसका हाल जान लेनेपर भी यह संभव नहीं दीखता कि "अणोऽणीयान् महतो महीयान्" ब्रह्म बुद्धि-ग्राह्य हो जाय। अपने थामनेवाले हाथको भी कभी चीमटा पकड़ सकता है?

# संवत २०५० विक्रमाब्द

## भविष्यका सपना

[ ले० रामदास गौड़, एम. ए. ]

हरद्वार नगरके मायापुरवाले बड़े औषधालयके पँचमंजिलेपर अपने कार्य्यालयमें बैठे आचार्य्य देवदत्त जी कोनेकी मेज़पर लगे हुए यंत्रकी ओर एक टक देख रहे थे। उससे आप ही आप कभी कहते "ठीक"! कभी बोले "तो इसमें हर्ज ही क्या है" मानों यंत्रसे बात चीत कर रहे हैं। इतनेमें उनके पीछे घंटीने तीन शब्द किये, आपने झट अपनी कुरसीमें लगे बटनको दबाया। सड़कपरके दरवाजेपर सबसे नीचेसे घंटीका बारीक शब्द गूंज गया। इतनेमें पंचमंजिलेके बारजेपर कुछ सरसराहट सी हुई और एक और बारजा उस बारजेसे दमके दममें आन मिला। यह बारजा बिजलीके बलसे ८० फ़ीट नीचेसे चला आया। उस तख्तेपर एक चौकी थी जिसपर एक पुराने फ़ैशनका बहुत बूढ़ा ब्राह्मण बैठा दीख पड़ा। यह जंगम बारजा जोहीं स्थिर हो गया पंडित जी झट कुरसीपरसे उठकर देवदत्तजीके कार्य्यालयमें चले आये। देवदत्तजीने उठकर अभिवादनपूर्वक उन्हें एक आराम कुर्सीपर बिठाया और उनकी ओर मुँह फेर बात चीत करने लगे।

देवदत्त—कहिये जोशीजी महाराज, आज नगरकी दशा कैसी है?

जोशी०—क्या बताऊं महाराज, सारे नगरमें हाहाकार मच रहा है। अब तो कोई उपाय बचनेका नहीं दीखता। सारा नगर उजड़ा जा रहा है, दक्षेश्वर और कनखलमें तो आदमी ढूंढ़े नहीं मिलते। वहांसे कांगड़ीतक सारा बाज़ार उजड़ गया है। नहरों और धाराओंपरके पांचों पुल जिनपर देहसे देह छिल जाती थी आज

सुनसान हैं। सारा जनसमूह डोईवालेके मैदानोंमें पड़ा त्राहि त्राहि कर रहा है। आज हरद्वार उस दशासे भी गया बीता है जो मेरी बाल्यावस्थामें थी।

देवदत्त—क्या आपकी बाल्यावस्थामें भी ऐसी कोई संक्रामका व्याधि फैली हुई थी?

जोशी०—क्यों नहीं, महाराज, उस समय भी महामारीकी धूम थी। हरद्वारकी कुल आबादी उस समय-जब मैं नव बरसका था—तीस हज़ार मनुष्योंकी थी। मेरी दृष्टिमें यही बहुत बड़ी जनसंख्या थी। उसमें भी गिल्टी-वाले ताऊन वा महामारीमें सैकड़ों समाप्त हो जाते थे। उस समय महामारीसे अधिक विकराल कोई रोग ही न था। उन दिनों हरद्वार एक छोटासा क़स्बा था, मायापुरमें कोई आबादी न थी, ज्वालापुर क़स्बा मायापुरसे ढाई मीलपर था। कनखल भी अलग था। देखते ही देखते ६०-७० बरसमें यह सब कैसा बड़ा नगर हो गया जिसकी आबादी आज ३ लाखसे कम न होगी। हां, यहां मेला बारामास लगा रहता था। सो तो थोड़ा बहुत अब भी है। पर महामारीके डरसे लोग इतना नहीं भागते थे जितना आज इस भयानक निद्रा रोगसे। अब देवदत्त जी, मेरा भी रहना असंभव है, मुझे भी क़ीटाणुओंका असर हो गया है, कितना ही बल कर रहा हूँ, निद्राका नशा चढ़ा आ रहा है। आते आते मेरी दशा बदल गयी। अब मैं यही कहने आया कि अपना वादा जो अभी बेतारके टेलिफ़ोनसे किया था पूरा नहीं कर सकूंगा। दस पांच मिनिटमें तो मैं सो जाऊंगा, इतनेमें पूनामें महाबलेश्वर कैसे पहुँच सकता हूँ। हरद्वारसे पूना पहुँचनेमें डेढ़ घंटेसे कम न लगेगा।

देवदत्त—महाराज जी, आपको भी उसका असर हो रहा है, बड़ी बुरी सुनायी।

जोशी०—क्या करूं महाराज, सैकड़ों रोगियोंको देखते स्पर्श करते कहांतक बच सकता हूँ। लो, अब निद्रा गहरी आ रही है। तुम जानो!

इतना कहते ही बूढ़े भुवनेश्वर जोशी जी ख़र्राटे लेने लगे। देवदत्त तुरन्त उठा। अलमारीमेंसे एक गहरे सुर्ख रंगकी शीशी निकाली और जोशी जीको सुँघाने लगा। दो तीन मिनिटमें जोशीजीने आंखें खोलीं। देवदत्तने रूमाल तर करके सूँघनेको दिया।

देवदत्त—देखिये पंडित जी, मैंने कल ही यह मिश्रण बनाया था। मेरे पास इस मिश्रणको २ तोला मात्र है। आपके सिवा उस जड़ीको कोई पहचाननेवाला संसारमें नहीं। अब आप किसी न किसी ढब तीन चार घंटे इसके द्वारा सचेत रहकर महाबलेश्वरसे कमसे कम सेर भर बूटी लाइये। फिर उसे सिद्ध करके मैं स्वयं महाबलेश्वर जाकर लाऊंगा। मुझे पहचानना ही चाहिए, बस।

इतना कहकर देवदत्तजी जोशीजीका हाथ पकड़ उस जंगम बारजेपर ले गये और एक बटन दबानेकी देर थी कि उस मकानके अठ-मंजिलेकी छतपर पहुँच गये। यहाँ एक सेलूलैडका बना सुन्दर विमान था। देवदत्तजीने पुकारा "चन्द्रधर"! और तुरन्त एक कोठरीसे एक आदमी 'जी' कहता निकल आया। दोनों महाशयोंका अभिवादन किया और विमानपर बैठ गया। बिना कुछ कहे सुने जोशीजी भी शीशी और रूमाल लिये बैठ गये।

छत बहुत लम्बी थी। हरद्वारकी सार्वजनिक म्युनिसिपलिटीके नियमानुसार सारे मकान दो मीलतक एक ही ढंग और एक ही ऊंचाईके बने थे इसलिए कि उड़ाकोंको अठमंजिलेपर सहज ही उतरनेकेलिए स्थान मिले। नीचे सड़कोंपर बिजलीकी ट्राम चलती थी। भूमिके नीचे नीचे सुरंगोंमें एक छड़वाली रेल चलती थी जिसकी चाल घंटेमें १२० मील थी,

पर इनपर प्रायः गरीब लोग ही सवारी करते थे, मालकी आमद रवानगी होती थी। अमीर भूमिपर मोटर और आकाशमें विमानपर चलते थे। मोटरकी गति १५० मील घंटा और विमानकी गति साधारणतः ३५० मील प्रतिघंटा थी पर आवश्यक होने पर विमान घंटेमें ४०० मीलतक चलता था। रेलसे जो स्थान १००० मील पड़ता विमानसे सीधे जानेके कारण ७०० मील होता था। रेलपर रेंगते जाना कम लोग पसन्द करते थे। नवयुवक पुस्तकोंमें पढ़कर आश्चर्य्य करते थे कि ४५ मील प्रतिघंटा चलनेवाली रेलोंपर सवारी करना पहलेके फ़ेशनवाले लोग कैसे पसन्द करते थे। घर बाहर सर्वत्र बिजलीकी रोशनी थी। बिजलीकी आँचसे रोटी पकती थी खेतीमें बिजलीके प्रयोगोंसे गेहूं उत्पन्न किया जाता था। घरमें झाड़ू बिजली देती थी। निदान कोई काम ऐसा न था जो बिजलीसे न लिया जाता हो। हरिद्वारमें जलकी बहुतायतने बिजलीको अत्यन्त सस्ता कर रक्खा था। हरकी पैड़ीपर यात्रीके पहुँचानेकेलिए हरिद्वार जङ्कशनसे सुरंग रेल थी, हरकी पैड़ीके पास ही खड़ी होती थी। यात्री वहींके वहीं उतरते थे जिनके पास पंडोंका टिकट न होता था और वह सीधे स्नान करके लौटना चाहते थे, झट जंगम बारजेपर, जिसपर एक पंडेका ठेका था, दो पैसे देकर सवार हो जाते और क्षण भरमें हरकी पैड़ीके कुंडके बीचोबीच पहुँच जाते थे, इस बारजेके आगे सीढ़ी लगी थी जिससे कमरभर नीचे उतर जाते और उसके नीचेवाले तख़्तेपरसे स्नान करके चले जाते थे। हरद्वार नगर भी बहुत ही विस्तृत था। उत्तरमें सत्यनारायण, दक्षिणमें पुरुषपुर पूरबमें कांगड़ी और पच्छिममें भरोना उसके अन्तिम महल्ले थे। सौ बरस पहले जो चंडी पर्वत था आज भी चंडीधाम कहलाता है पर उसके चारों ओर ऊपर नीचे मकान ही मकान हैं। मोटरकी सड़कें हैं। विमानके उतरनेकी छतवाली लम्बी सड़क है। यदि कोई सौ बरस पहलेका बूढ़ा एकाएकी स्वर्गसे लौट आता तो हरद्वारको न पहचानता। उस समयके कलकत्ते बम्बईसे भी हरद्वार बढ़ गया था। परन्तु आजकलके कलकत्ते बम्बईका क्या कहना है। यह तो राजनगर हैं। वहाँके सामान ही निराले हैं। ख़ैर, हमें पुराना रोना रोनेसे काम ही क्या!

हम इन कल्पना तरंगोंमें भूत और वर्त्तमानकी तुलना करते करते ऊंघ रहे थे कि झर्र झर्रके शब्दके साथ घंटी बजी, बारजेपर चढ़ देवदत्तजी अठमंजिलेपर पहुँचे और देखा कि विमानपरसे जोशीजी उतर रहे हैं। चन्द्रधर सो गया था।

देवदत्त—महाराज, इसे क्या हुआ?

जोशी—वही! और विपत्ति तो यह कि आधी राह आ चुके तबही इसने ख़र्राटे लेना प्रारंभ कर दिया। मेरी दवा समाप्त हो चुकी थी। करता क्या? मैं आप डर रहा था कि फिर मुझे नींदका दौरा न आ जाय पहुँच गया।

देखिये, इतनी ही मिली है।

यह कहते जोशीजीने एक बोरी थमा दी जिसमें चार पांच सेर वनस्पति होगी। और आप देवदत्तके कंधेपर हाथ रखकर खड़े खड़े सो गये।

देवदत्त—हाँ, बड़ी दुर्दशा है! पंडित जी ज़रा ठहरो तो, कुछ तो सम्हलो।

ऐसा कहते हुए पासकी एक चौकी खसकाकर पंडितजीको बैठाल दिया। स्वयं नीचे गए। नौकरोंको आवाज़ दी। सब सो रहे थे। स्वयं उस महौषधिपर वैद्युत् क्रिया की और १५ मिनिटमें पूरी साढ़े चार लीटरकी भरी बोतल दवाई बनायी। स्वयं सूंघा। जोशीजीको सचेत किया। चन्द्रधरको जगा दिया। फिरसे

देवदत्तके कार्य्यालयमें जागते आदमी दीखने लगे।

देवदत्तजी, जोशीजीसे बोले' 'महाराज, इस भयंकर रोगसे बचता कोई है ही नहीं, प्रकृतिने जो उपाय सभी मनुष्योंको बता रक्खा है, लाचार हो उसीका अवलम्बन करना पड़ेगा। मनुष्यने जो बड़े बड़े नगर बसाये अब उनमें वह रह नहीं सकता। निद्रारोगके कीटाणुओंने उनपर दख़ल कर लिया है। पहलेके जंगलियों-की नाईं जंगलोंमें रहनेसे ही प्राण बचेंगे। इस बूटी द्वारा जो सिरम और घोल मैं बनाता हूं वह केवल निद्राभंगके कामका है। कीटाणुओंके विषको दूर करेगा, परन्तु कीटाणुओंके नाशका कोई उपाय नहीं हुआ। इन कीटाणुओंने संसार-के बड़े बड़े नगरोंको उजाड़ दिया कलकत्ते बम्बईको निर्जन कर छोड़ा अब नन्हें नन्हेंसे नगरोंको भी छोड़ा नहीं चाहता। प्राणरक्षाका अब एक मात्र उपाय जंगलोंमें रहना ही है।''

उस दिन सायंकालमें म्युनिसिपलिटीके मैदानमें भिषग्रत्न पंडित भुवनेश्वर जोशीजी म्युनिसिपलिटीके चेरमैनके सभापतित्वमें पं० देवदत्तजी विज्ञान विशारदका व्याख्यान हुआ जिसका सारांश यह था—

प्राचीनकालके मनुष्य बड़े बलवान और साहसी होते थे। उनका शरीर पुष्ट था, बहुतेरे जानते नहीं थे कि रोग किसे कहते हैं। परन्तु उनका जीवन हमारा सा अस्वाभाविक नहीं था। वह प्रायः जंगलोंमें ही घर बनाकर रहते और शुद्ध वायु, स्वाभाविक जल, सादे अन्नपर जीवन बिताते थे। पैदल चलते फिरते, मेहनतका काम करते थे। अपने व्यक्तिगत सुखकेलिए जितनी सामग्री आवश्यक थी अपने हाथों उपजाते बनाते थे। यह सच है कि बिजलीसे गुलामी नहीं कराते थे, परन्तु उनके शरीरकी शक्तियां काममें आती थीं, अपाहज नहीं हो गये थे। यही बात है कि उनके रक्तके श्वेताणु ऐसे प्रबल होते थे कि उनके शरीरमें रोगाणु दमभर भी ठहर नहीं सकते थे। हमने सैकड़ों उपायोंसे अपने श्वेताणुओंकी शिक्षा की, उन्हें बलवान बनाया परन्तु वे फिर भी रोगाणुओंका सामना करनेमें परास्त हो जाते हैं। बीस वर्षके अध्ययनके पीछे, विज्ञानके प्रत्येक पक्षपर विचार करके मेरी अब यह निश्चय धारणा हो गयी है कि कमसे कम साल साल भरकेलिए सब ही नागरिक वनवास करें फल मूलाहार करके शरीरको शुद्ध करें। एक वर्षकी ही कठिन तपस्यासे फिर दस पांच वर्ष रोगोंसे मुक्त रहेंगे। फिर जब रोगोंकी संभावना देखें। वनवासका आश्रयलें।

मेरी प्रार्थना है कि सभी नागरिक देहरेके जंगलोंमें दूर दूर पर कलहसे ही निवास करें तो अवश्य इस निद्रारोगसे बचेंगे। शहर भी कुछ दिन वायु परिवर्तन और सूर्य्यके प्रकाशसे शुद्ध हो जायगा।''

इस व्याख्यानके अन्तमें श्रोतागणने अनु-मोदन और समर्थनके प्रदर्शनमें बड़ा घोर हर्ष-नाद किया। इस शोरोगुलमें एकाएकी मेरी आंखें खुल गयीं, देखता हूं कि वही संवत १९७२ है।

'ख़्वाब था जो कुछ कि देखा,
जो सुना अफ़साना था।'

---

## तारों भरी रात

### खगोल दर्शनसे अनुमान

[ले० केशवचन्द्र सिंह चौधरी, एम. एस-सी. एल-एल. बी]

कल्पना कीजिये कि एक मनुष्य किसी ऊँची जगहमें रातको स्वच्छ आकाशका तमाशा देख-ने बैठा है, वह आकाशमें बहुतसे तारे बेतरतीबेसे छिटके हुए कुछ कम

Astronomy ज्योतिष ]

और कुछ अधिक चमकीले देखेगा। आकाश उसे गोलाकार दीखेगा परन्तु उसके सिरके ऊपरका हिस्सा क्षितिजकी दूरीसे कम जान पड़ेगा।

थोड़ी देर बाद निरीक्षकको मालूम होगा कि तारोंकी जगहोंमें कुछ तबदीली हो गयी है। वह देखेगा कि पच्छिमकी ओर कुछ तारे क्षितिजके नीचे अदृश्य हो गये हैं और पूर्वकी ओरके क्षितिजमें कुछ नये तारे निकल आये हैं। परन्तु तारोंके अन्य सापेक्ष (relative) स्थानोंमें कोई भेद नहीं होगा। और यदि निरीक्षक सैक्सटैन्ट (sextant) अथवा और किसी कोण मापक यंत्रसे दो तारोंके कोणको नाप ले तो उसे ज्ञान होगा कि इस कोणमें कोई तबदीली पैदा नहीं होती। यह कोणकी अचलता निरीक्षक केवल उसी रातको नहीं पायेगा प्रत्युत यदि वह महीनों अथवा वर्षों पश्चात उस कोणको फिर नाप ले तो वह ठीक उतना ही निकलेगा। इस बातसे जान पड़ता है कि तमाम तारोंमें यह तबदीली एक ही ओर को, एक सी पैदा होती है। अतएव इनकी अन्य सापेक्ष जगहोंके स्थिर होनेके कारण इनको स्थिर तारे कहते हैं। थोड़े से ऐसे भी तारे हैं जिनके स्थान इन स्थायी तारोंके बीचमें सदैव बदलते रहते हैं। उनको अस्थिर तारे अथवा ग्रह और उपग्रह कहते हैं परन्तु उनकी संख्या इन स्थिर तारोंसे देखनेमें अत्यन्त कम है।

सम्पूर्ण स्थिर तारोंकी इस एक सी चालको जाननेकेलिए निरीक्षकके पास बहुतसे बराबर लम्बाईके डोरे होने चाहिएँ जो एक ओरसे एक ही जगह बँधे हों*। कल्पना कीजिये कि निरीक्षक किसी तारेको देखता है, और एक डोरा उसी ओरको बांध देता है, थोड़ी देर पश्चात नए तारेको फिर देखता है और उसकी बदली हुई उसी जगहकी ओर दूसरा डोरा कर देता है। इसी तरहसे तीसरा चौथा डोरा इत्यादि करता जाता है।

ऐसे बँधे हुए डोरोंके दूसरे सिरे एक परिधिपर (circumference) होगें। भिन्न भिन्न तारोंकेलिए भिन्न भिन्न वृत्त होंगे परन्तु उनके केन्द्र सब एक ही सामान्य रेखापर होगें और यदि निरीक्षक अपनी जगह न बदले तो वह रेखा सदैव स्थिर रहेगी और क्षितिजसे एक विशेष कोणपर उठी हुई होगी। यदि यह रेखा उत्तरकी ओर बढ़ायी जाय तो ध्रुव तारासे मिल जायगी। इसीलिए इस रेखाको खगोलीय धुरी वा अक्ष कहते हैं क्योंकि सारा खगोल इसी रेखाके चारों ओर चक्कर लगाता हुआ दीख पड़ता है। इस अक्ष और (horizontal plane) क्षितिज तलसे जो कोण बनता है वही उस स्थानका अक्षांश कहलाता है। इसलिए किसी स्थानका अक्षांश जाननेकेलिए वहां से ध्रुव तारेकी ऊंचाई अंशोंमें नाप लेनी चाहिए।

जो तारे इस अक्षसे बहुत दूर हैं उनके वृत्तका थोड़ा ही सा अंश हमें दिखाई पड़ता है और वे थोड़ी ही देरतक क्षितिजके ऊपर रहते हैं। जो तारे ठीक पूरबमें उगते हैं वे शीर्षपर आकर ठीक पच्छिममें डूबते हैं। इनके वृत्तका आधा हिस्सा हम देख सकते हैं और यह १२ घंटेतक क्षितिजके ऊपर रहते हैं। जो तारे अक्षके पास हैं वह पूर्व-पच्छिम दिशासे भी उत्तर उदय और अस्त होते हैं। इनके वृत्त आधेसे भी अधिक देख पड़ते हैं और ये १२ घंटेसे अधिक क्षितिजके ऊपर रहते हैं। जैसे जैसे उत्तरकी ओर दृष्टि जायगी, यह विश्वास होने लगेगा कि अक्षके पासवाले अथवा ध्रुव ताराके पासवाले तारे और अधिक देरतक क्षितिजपर रहते हैं और उनके वृत्त

* और दूसरा सिरा जिस ओरको चाहे बांध दिया जा सकै।

लगभग पूरे देख पड़ेंगे यहांतक कि लघु सप्तर्षिके सब तारे २० अक्षांशके उत्तर सब स्थानोंमें रातदिन क्षितिजके ऊपर ही दिखाई देंगे।

ऐसे निरीक्षणसे हमें ज्ञात होता है कि तारे ध्रुव धुरीके चारों ओर घूमते हैं। यह सच है कि दिनके निकलनेसे निरीक्षक पूरे वृत्त नहीं बना सकेगा परन्तु यदि प्रत्येक रात्रिको यह निरीक्षण किये जायं तो ज्ञात होगा कि तारे सदैव वही वृत्त बनाते हैं और केवल इतना भेद पाया जायगा कि यदि पहली रात्रिको एक तारेने वृत्तके किसी विशेष जगहसे विशेष समयमें प्रारम्भ किया था तो दूसरी रातको उस जगहसे कुछ मिनिट पहले प्रारम्भ करेगा अथवा उस जगह कुछ मिनट पहले पहुँच जायगा और यदि हम कुछ मास पश्चात निरीक्षण करें तो ज्ञात होगा कि तारे वृत्तका वह हिस्सा बना रहे हैं जो हम दिनके कारण पहली बार न बना सके थे।

कल्पना कीजिये कि निरीक्षक एक तारेका वृत्त बनाते समय डोरा बराबर समयसे बांधता जाता है ऐसी दशामें वह देखेगा कि प्रत्येक दो पासवाले डोरोंके बीचका कोण बराबर है। इससे हमें ज्ञात होता है कि तारे सामान्य गतिसे अथवा एक ही चालसे धुरीके चारों ओर चक्कर लगाते हैं। यह नहीं कि कभी तेज़ीसे और कभी सुस्तीसे। केवल यही नहीं,यदि सब वृत्तोंमें डोरे बराबर समयमें बांधे जांय, तो किसी वृत्तके दो पासवाले डोरोंका कोण दूसरे वृत्तके ऐसे ही कोणके बराबर होगा। अतएव न केवल प्रत्येक तारेकी गति समान है प्रत्युत प्रत्येक तारेका कोणीय वेग (angular velocity) बराबर है। और यह बात हमारी ऊपर कही हुई इस बातसे भी घटित होती है कि तारोंके सापेक्ष स्थानोंमें कोई परिवर्तन नहीं होता।

हमने ऊपरके निरीक्षणोंसे यह नतीजा निकाला है कि तारे उस धुरीके चारों ओर जो पृथ्वीमें होकर गुज़रती है घूमते हैं और वे २३ घन्टे ५६ मिनिटमें धुरीका एक चक्कर लगाते हैं और हमारी पृथ्वी स्थिर है जैसा कि साधारणतः जान पड़ता है। परन्तु हम जानते हैं कि गतिके निरीक्षणमें हमें कभी कभी बड़ा धोखा हो जाता है और जब वस्तुएं (relative motion) सापेक्षिक गतिमें हों तो कभी कभी यह बतलाना कठिन हो जाता है कि सचमुच कौन वस्तु चल रही है और कौन स्थिर है। जब हम किसी चलती रेलगाड़ीमें होते हैं तो हमें मालूम होता है कि घर और पेड़ दूसरी ओरको भागे जा रहे हैं और हम केवल अपनी ज्ञान शक्ति और स्मरण शक्ति ही द्वारा जानते हैं कि घर और वृक्ष स्थिर हैं और हम चल रहे हैं। परन्तु जब गाड़ी किसी स्टेशनपर पहुँचती है जहांसे दूसरी गाड़ियां भी छूटती हैं तो यह बतलाना कठिन हो जाता है कि हमारी गाड़ी चलती है अथवा दूसरी अथवा दोनों चलती हैं।

अतएव हम थोड़ी देरकेलिए यह मान लेते हैं कि तारे धुरीके चारों ओर नहीं घूमते वे स्थिर हैं। अब हमें देखना है कि हम पृथ्वीको कौन सी गति दें जिसमें कि हमारा निरीक्षक उन्हीं निरीक्षणोंको कर सके जिनके द्वारा हम इस सिद्धान्तपर पहुंचे थे कि तारे २३ घन्टा ५६ मिनटमें धुरीके चारों ओर चक्कर लगाते हैं और पृथ्वी स्थिर है।

कल्पना कीजिये कि पृथ्वी पश्चिमसे पूरबकी ओर उसी धुरीपर अथवा उसके समानान्तर धुरीपर समान गतिसे घूमती है और २३ घन्टा ५६ मिनटमें एक पूरा चक्कर लगा डालती है। ऐसी दशामें तारे पूरबसे पश्चिमकी ओर समान गतिसे उस धुरीके चारों ओर घूमते पाये जायंगे और हमारे निरीक्षकके निरीक्षणोंमें कोई भेद नहीं आवेगा। अतएव चाहे हम तारोंको धुरीके चारों ओर घूमता

हुआ मानें और पृथ्वीको स्थिर अथवा पृथ्वीको उसके विपरीत उसी धुरीके चारों ओर घूमता हुआ मानें और तारोंको स्थिर, इन दोनों सिद्धान्तोंमें कोई ऐसी बात नहीं है जिसके कारण हमारे निरीक्षणोंमें कुछ भेद पैदा हो और अभीतक हमारे पास कोई ऐसी बात नहीं जिसकेद्वारा हम एक सिद्धान्तको मान लें और दूसरेको झूठा समझें अगले लेखमें हम इस बात को साबित करनेका प्रयत्न करेंगे कि कौन सिद्धान्त सच्चा है और कौन झूठा।

---

# फूलोंके संसारमें एक पागलका प्रवेश

[ले० गंगा प्रसाद वाजपेयी बी. एस-सी]

१—फूलोंका असली रूप

वासंतीने मकरध्वजको अङ्गीकार कर लिया। मधुकर कमलिनी-के प्रेमजालका बंदी बना, संध्या दिग्वधूने अपने जीवन सर्वस्व भास्करको छिपा लिया। रजनीवाला शर्वरीशको अंधकारमें ढूंढने चल पड़ी, पर इस उन्मत्त चित्तकी प्रेमतृष्णा बुझानेवाली प्रणयवधू कहां है? मेरे हृद्गत भावोंकी सूची किसके मंजुल मुखपर अङ्कित दिखलाई पड़ेगी? मेरी हृदयतंत्री किस कोकिल कंठसे ध्वनित होगी? नीरव निशामें चंद्रकला मेरा उपहास क्यों कर रही है? इस शून्याकाशमें मेरा हृदय किसके कोमल पैरोंकी आहटकी प्रतीक्षा कर रहा है? आंखें, शान्ति धारण करो तुम्हारी जलवर्षासे किसी विदग्ध हृदयकी आग न बुझेगी। रुको, इस अशान्त हृदयकी तरह तुम भी बेहाथ न हो जाओ! हां! तो तुम नहीं मानोगे, अच्छा जी खोलकर रो लो।

रोते रोते रात बीत गयी। प्राची दिशामें सौभाग्य-सिंदूरकी वर्षा कर देखो जगतको हंसानेवाली ऊषा दिनकरसे मिलने आ गयी! मलय मारुतने आकर प्रिय संदेस सुनाया। कमलिनीको छोड़ हृदयग्राही गुंजारोंसे गुन गुनाते हुए मधुकरने आकर मुझे सांत्वना दी। चकईने आकर चकवाके वियोगके आंसू पोंछे। हृदय-नेत्र! अपने पलक खोलो, देखो प्रकृति माता तुम्हारे विनोदकेलिए कितने खिलौने लेकर आयी हैं, एक छोटेसे खिलौनेपर तुम इतना क्यों मचल रहे हो? मधुकरने गुनगुना-कर इसका समर्थन किया। मलय मारुतने आकर धीरे धीरे गुदगुदाया। उस रातका रोना मुझे कभी भूलनेका नहीं। शीतल चांदनी-में टहल टहलकर जिसकेलिए मैं जलवर्षा कर रहा था वह हृदयकी आग बुझानेमें समर्थ न हुआ। पश्चिम प्रदेशके उस मनोहर उद्यानमें न मालूम कितने पुरुषोंने पराग बरसाकर मेरा चित्त आकर्षित करना चाहा, पर बिगड़ा हुआ दिल कब माननेवाला था! हिमालयमें बढ़ी हुई गङ्गाका वेग कहीं बांधसे रोके रुकता है? रो रोकर उद्यान निवास भी छोड़ना पड़ा। रोते रोते घर लौटे। तबसे प्रियमिलाप तो कई बार हुआ पर हृदय मिलाप न हो पाया।

नहीं नहीं मैं भूल गया! तभीसे नववधू-का मिलाप हुआ। पुष्पकलिकाने मेरे हृदयके भाव पहचाने। मेरी वेदनाकी वही भागिनी हुई। अब जब कभी मेरा हृदय उन्मत्त प्रलाप करने लगता है, इस नवीन बधू पुष्प कलिकाका मिलाप होता है। मेरे सूखते हुए हृदयके साथ ही साथ वह भी सूखने लगती है, मेरी प्रसन्नता-के समय भौरोंको बुलाकर वह गाना सुनवाती है। उस दिनसे पुष्पकलिकाही मेरी प्राणाधार बन बैठी है।

पर उन्मत्तोंकी कुछ कथा ही निराली है। जिसने एक बार उन्हें प्रेम मद पिला दिया बस उसीके हाथ बिक गये। जिस हृदयसे एक बार हृदय लग गया, लाख ठोकरें खानेपर भी उसकी मंजुल मूर्ति स्मृतिपटलसे एक क्षणकेलिए

विलग नहीं होती। प्रेमकी सी हृदय वेदना अप्रकट भले ही रहे पर वह प्रिय-दर्शन बिना कभी मिटनेवाली नहीं।

थोड़ेही दिन हुए एक रात लोगोंने मेरे सोते हुए हृदयको फिर जगा दिया। सूर और तुलसीकी कविता पीयूषने बहकर मेरे निर्जीव चित्तको फिरसे हरा कर दिया। स्मृति-पटलने भी अपने पुराने अङ्कित चित्र शीघ्रतासे आंखोंके सामने घुमा दिये। हृदयकी वीणा बजने लगी। नीरव निशामें शून्यताका भाव फिरसे छा गया। दुःख पयोद एक बार फिरसे उमड़ आये नेत्रोंने झड़ी लगा दी। निशाचरी रजनी मेरी वियोग वेदनापर हँसते हँसते विलीन हो गयी।

### २—फूलोंका जीवन रहस्य

दूसरे दिन मित्रोंमें फिर पुरानी बातें चल पड़ीं। संसार अपने ढंगपर फिर चला, किसीके हृदयकी बात कोई क्या जाने? कुछ साथी मूलीके फूल* उठा लाये। देखतेही मैं दौड़ पड़ा। आज मेरा हृदय फूलोंसे पूरा परिचय पानेकेलिए उत्कंठित हो रहा था। उसके अंग छिन्न भिन्न कर साथी मुझे समझाने लगा।

देखो, फूलके नीचे जो हरा भाग दिखाई पड़ता है उसे वहिर्वास कहते हैं। इसके प्रत्येक पत्रको छद कहते हैं। इन छदोंके ऊपर जो चक्र है उसे अन्तर्वास कहते हैं। मूलीके फूलमें ४ दल एक स्वस्तिकके रूपमें अलग अलग रहते हैं। इन दलोंके भीतर जो यह पाले छत्रदंड दिखायी देते हैं उनका बाहरी भाग पुरुष-वास है। प्रत्येक दंडका नाम पुमङ्ग हैं। इसके भीतरके चक्रको स्त्री-वास कहते हैं और उसकी प्रत्येक नलिकाका नाम ग्रीवा है। इस फूलमें ऐसी एक ही नलिका है जिसके नीचेके भागको जिसमें बीज पलता है डिम्बाशय कहते हैं। डिंबाशयमें छोटे छोटे दाने होते हैं जिन्हें रज-कण वा डिम्ब कहते हैं। इस नलिकाके ऊपर जो छत्र सा लगा रहता है उसे मुंड कहते हैं। (देखो चित्र १ २ ३)

चित्र नं० १
मूलीका पूरा फूल

चित्र नं० २
मूलीका फूल जिसके दो दल निकाल लिये गये हैं
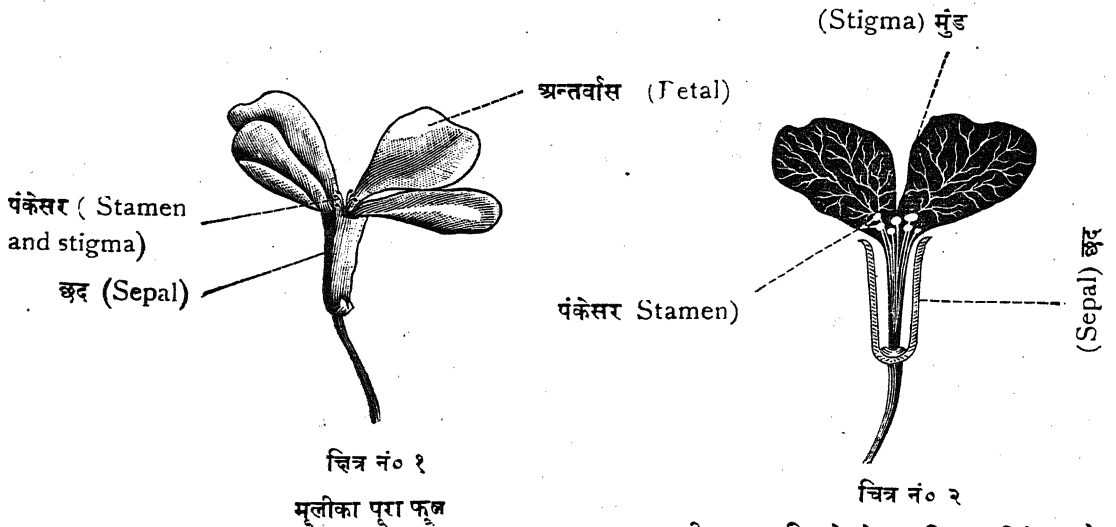
*पाठक यदि फूल हाथमें लेकर परीक्षा करें तो समझनेमें अधिक सुगमता होगी। और फूलोंसे भी कुछ बोध [illegible]ा सकता है, जिनमें यह भाग स्पष्ट हों। सं०
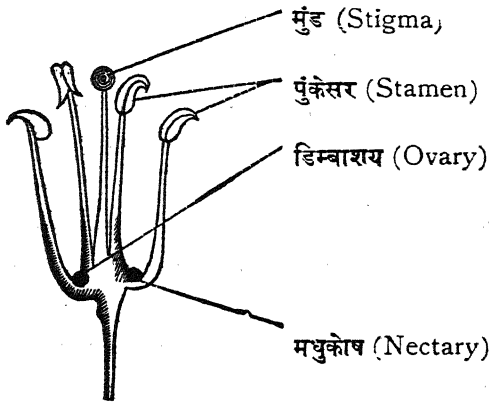
चित्र नं० ३

मूलीके फूल जिसके दल और पुट अलग कर दिये गये हैं

पुमङ्गके ऊपर जो छत्र रहता है उसे परागाशय कहते हैं। इस छत्रके बीचमें एक सीधी लकीर सी होती है। छत्रके भीतर प्रत्येक भागमें दो रागकोष होते हैं जिनमें रङ्ग रङ्गके परागकण भरे रहते हैं। यह छत्र एक सूत्रपर स्थित है जो भिन्न भिन्न आकार और मोटाईका हुआ करता है। चित्र नं ४ अ में पुमङ्गके सामनेका

चित्र नं० ४

Stamenes, showing insertion of (*anthers.*)

चित्र दिया हुआ है और ब में पीठका। यह सूत्र केसर कहलाता है और एक योजक द्वारा छत्रसे जुड़ा रहता है। यह योजक कभी आगे, कभी पीछे और कभी बीचमें होता है।

चित्र नं० ५ में परागकणका बहुत बड़ा रूप क्षुद्रवीक्षणयंत्र द्वारा देखकर बनाया

पराग बिंदु (Highly magnified)
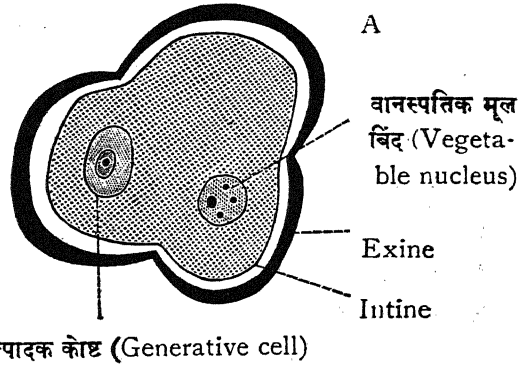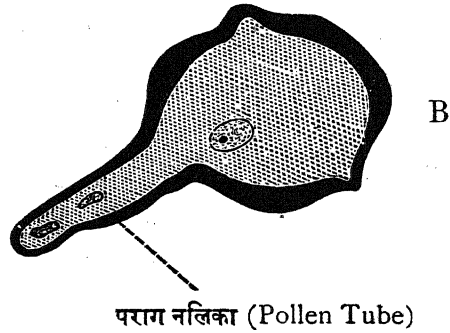
चित्र नं० ५

पराग बिंदुका उद्भेद Germination of Pollen grain

गया है। कणको नीचे रखनेसे जैसा रूप यंत्र द्वारा दिखलाई पड़ता है वह अ में अङ्कित है। और सामने रखनेसे जो उसका रूप दिखायी पड़ता है वह ब में दिया हुआ है।

चित्र नं० ३

मूलीके फूल जिसके दल और पुट अलग कर दिये गये हैं

पुमङ्गके ऊपर जो छत्र रहता है उसे परागाशय कहते हैं। इस छत्रके बीचमें एक सीधी लकीर सी होती है। छत्रके भीतर प्रत्येक भागमें दो रागकोष होते हैं जिनमें रङ्ग रङ्गके परागकण भरे रहते हैं। यह छत्र एक सूत्रपर स्थित है जो भिन्न भिन्न आकार और मोटाईका हुआ करता है। चित्र नं ४ अ में पुमङ्गके सामनेका

लिंग छत्र (Anther)

केसर योजक (Connective)

लिंग सूत्र (Filament)

ब (सामना)

अ (पीठ) चित्र नं० ४

Stamenes, showing insertion of (*anthers.*)

चित्र दिया हुआ है और ब में पीठका। यह सूत्र केसर कहलाता है और एक योजक द्वारा छत्रसे जुड़ा रहता है। यह योजक कभी आगे, कभी पीछे और कभी बीचमें होता है।

चित्र नं० ५ में परागकणका बहुत बड़ा रूप क्षुद्रवीक्षणयंत्र द्वारा देखकर बनाया

पराग विदु (Highly magnified)

चित्र नं० ५

पराग विंदुका उद्भेद Germination of Pollen grain

गया है। कणको नीचे रखनेसे जैसा रूप यंत्र द्वारा दिखलाई पड़ता है वह अ में अङ्कित है। और सामने रखनेसे जो उसका रूप दिखायी पड़ता है वह ब में दिया हुआ है।

चित्र नं० ३ मेंसे दो पुमङ्गोंके बीचमें थैलियां हैं जिन्हें मधुकोष कहते हैं। इन थैलियोंमें मधु भरा रहता है।

मेरे प्यारे फूलोंकी यही अङ्ग रचना है। प्रकृतिने इनकी यह रचना बड़ी अद्भुत रीतिसे की है। सब पुष्पोंमें कुछ न कुछ भिन्नता अवश्य देखनेको मिलती है। जब कली खिलती है यह सब भाग प्रकट हो जाते हैं। फूलोंका रूप रंग संतानोत्पत्तिमें सहायता देनेकेलिए ही बनाया गया है। संतानोत्पत्तिकेलिए ग्रीवा और पुमङ्गका होना आवश्यक है।

इतनेमें नर्गिसका फूल हाथ लगा। इसके दल एक दूसरेसे अलग नहीं थे किंतु एकमें ही संसक्त थे। इसमें तीन ग्रीवा थे और उन तीनोंके अलग अलग डिम्बाशय फूलके नीचे थे। इसके तीन पुमङ्ग भी थे। परागाशयको खोलते ही पीला पराग उड़कर बाहर आगया।

प्यारे फूलोंका इतना परिचय पानेपर मेरा उनपर बहुत अनुराग बढ़ गया। उनका गृहस्थ जीवन जाननेकी मुझे बड़ी लालसा हुई, उनकी रचना देखकर मुझे बड़ा आनंद हुआ। उसी दिन अपने प्रक्षुब्ध हृदयको लेकर, शीतल समीर और भ्रमर वृन्दके साथ मैं उद्यान और खेतोंकी ओर चल पड़ा। उनके स्वर्गीय गानसे मनरूपी पखेरू संसारसे उड़कर परमात्माकी विशालात्मामें लीन हो गया, जीमें बार बार तरङ्गें उठने लगीं कि इस फूले फले सरसोंके खेतमें उन्मत्तोंके समान पड़े लोटते रहें।

इन फूलोंकी रचनाकी विचित्रताका वर्णन करना कठिन है। प्रकृति देवीने इस अनूठी रचनामें चतुराईकी हद कर दी। रास्तेमें पोस्तका फूल मिला। इसके दल एक दूसरेसे अलग थे इसमें अनेक वर्तल थे, पर डिम्बाशय सबसे ऊपर था। यह ऊर्ध्वमुँड फूल है। अनारके फूलको देखा तो उसके बीचमें उठी हुई एक लाल प्यालेके समान वस्तु थी इसे स्तंभक कहते हैं। इसके चारों ओर वहिर्वास और अन्तर्वास थे, डिम्बाशय उसी समतलमें एक घेरेमें था जिसमें ग्रीवा एक दूसरेसे अलग थे। यह सम योनि पुष्प दिखलायी पड़ा। नर्गिस तो अधोयोनि पुष्प है। पुष्पके भिन्न भिन्न चक्र भिन्न भिन्न पुष्पोंमें भिन्न भिन्न प्रकारसे लगे होते हैं। उनके भिन्न भिन्न अवयव भी कभी एक दूसरेसे जुड़े होते हैं। सुना गया है कि जपा और गुड़हलमें पुमङ्ग और ग्रीवा एकमें मिली हुई होती हैं।

एक उगाये हुए गुलाबके फूलको मैंने देखा। गुलाबने मुझे भुलावा दिया। उसने पूछा "कहो, हमारे ग्रीवा और पुमङ्ग कहां हैं" ? मैं बहुत ढूंढ़ता रहा पर न मिला। प्रकृतिने मुसकराकर उत्तर दिया इसके पुमङ्ग और ग्रीवा दलमें परिवर्तित हो गये हैं। आगे चलकर एक पपीतेका पेड़ मिला, उसके किसी फूलमें ग्रीवाका पता ही न था। पूछनेपर मालूम हुआ, इसमें कभी फल नहीं लगते। दूसरा पपीतेका पेड़ देखा तो उसमेंसे बहुतसे फूल पुमङ्गहीन और बहुतसे ग्रीवाहीन दिखाई पड़े। तीसरे पेड़में सब पुमङ्गहीन फूल थे। एक फूलमें केसर तो थी पर परागाशय देखनेमें नहीं आया।

इस प्रकार प्रत्येक फूलकी एक नयी ही नगरी देखनेको मिली। किसी नगरीमें नपुंसक ही नपुंसक थे, किसीमें स्त्रियोंकी ही आबादी और कोई स्त्री पुरुष सभीसे परिपूर्ण थे। एक एक वृक्ष एक प्रांत था और एक ही जातिके वृक्ष मिलकर खंड बनाते थे। कुछ फूलोंके केसर नीचे मोटे और ऊपर गोपुच्छाकार थे, कुछके पतले और लंबे थे।

गेंदा वायुके भारसे झुक आगे बढ़कर झूम रहा था। कविवर केशवदास द्वारा सम्मानित गेंदाको झूलता देख मुझे उनका पद्य याद आगया। "मनों चित्त चैागानके मूल सोहैं।

हिये हेमके हाल गोला बिमोहैं " यह पद्य उन्होंने दानवेंद्र रावणकी प्राणेश्वरी मंदोदरीके उन्नत उरोजोंकी प्रशंसामें लिखा था। गेंदाको मैंने यह पद्य सुनाया। सकुचाकर उसने अपना सर नीचे कर लिया। गेंदाका रूप देखकर मैं भी मोहित रह गया। मुझे उसकी रचनाकी विचित्रता समझ ही न पड़ी। घर लौटकर आनेपर मालूम हुआ कि गेंदाके नीचेवाला हरा भाग वहिर्वास नहीं है, किन्तु पत्तियोंका एक परिवर्त्तित रूप है जिसे वृन्तपत्र कहते हैं। इसके भीतर जो घुंडी सी रहती है,वह स्तंभक है और उस घुंडीसे निकलनेवाले नालपर स्थित गेंदेकी प्रत्येक पखड़ी एक स्वतंत्र फूल हैं, जिसमें पुट और दल एकमें मिले हुए हैं, पर मुन्ड औ पुमङ्ग स्पष्ट अलग लगे हुए हैं। यह पखड़ियां बाहर तो बड़ी होती हैं पर ज्यों ज्यों भीतरकी ओर जाती हैं छोटी होती जाती हैं। इस प्रकारके अपरिमिति पुष्प व्यूहको पुष्पशेखर कहते हैं।

### ३—फूलोंका विवाह

वैज्ञानिकोंने न मालूम संसारके कितने कोने छान डाले हैं। इन योगिराजोंके सामने पर्दा करनेका पाप कौन कर सकता है? पुष्प कलिकाओंके भी अङ्ग प्रत्यंग इन्होंने देख लिये हैं। छोटे रजकण जो डिम्बाशयमें मिलते हैं उन्होंने भी अपनी रचना वैज्ञानिकोंको दिखला दी है। बड़े बड़े सूक्ष्मदर्शक यंत्रों द्वारा उन्होंने जो कुछ देखा है उसका चित्र नीचे दिया जाता है।
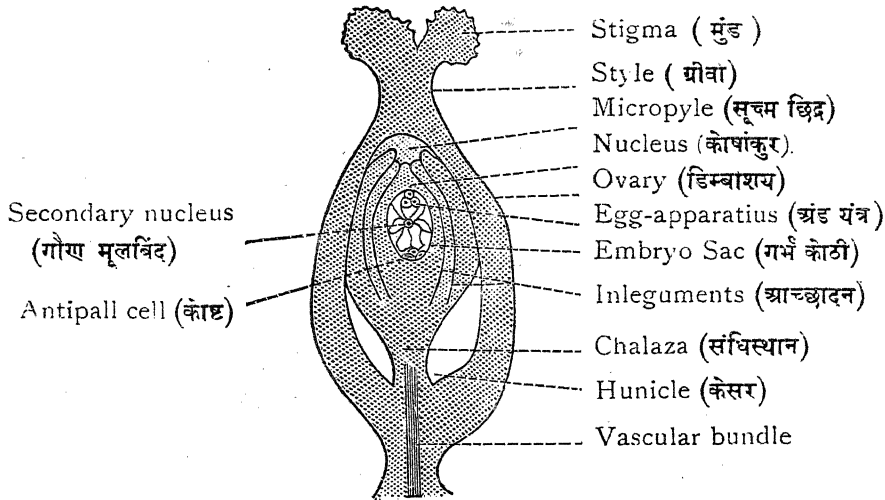
चित्र नं० ६　(Ovule of *Polygovum*) बहुभुज पुष्पकी रजोपेटी (Longitudinal action.)

इस चित्रमें ऊपर मुन्ड है उसके नीचे ग्रीवा है जो डिम्बाशयसे लगा हुआ है। पाठक शायद मुन्ड और ग्रीवाको चित्रमें पहचान सके होंगे, पर उन्हें ध्यान रखना चाहिये कि यह चित्र साधारण आँखोंसे देखा हुआ नहीं है। इस डिम्बाशयमें एक उभरी हुई दीवाल रहती है। उसी दीवालसे रजोपेटी केसर द्वारा लगी होती है। यह नाल सबसे नीचे दिखलायी गयी है। इस नालसे हटकर भीतरकी ओर कई कोष या सेलोंकी मोटी तहें हैं जिससे रजोपेटी घिरी हुई है। उन्हें आच्छादन कहते हैं। यह आच्छादन मुन्डकी ओर मिलकर एक सूक्ष्म छिद्र बनाते हैं। इन आच्छादनोंके भीतर अंडाकार कोषपुंज हैं जिन्हें न्यूक्लिअस वा कोषांकुर

कहते हैं। कोषांकुर नीचेकी ओर जिस स्थान-पर आच्छादनोंसे मिलता है उसे संधिस्थान कहते हैं। इन कोषपुंजोंके भीतर एक अंडाकार बड़ा कोष है जिसे गर्भकोष (डिम्बकोष) कहते हैं।

साधारणतः इस गर्भकोषके केंद्रमें एक मूल-बिंदु रहता है और दूसरा एक अंडयंत्र। इस अंडयंत्रके सूक्ष्म छिद्रके सिरेपर तीन कोष होते हैं जिनमें ऊपरवालेका नाम रजोबिंदु है, इसके नीचे दो सहायक कोष होते हैं।

ऊपरके चित्रमें जो गर्भकोष दिखलाया गया है वह रजोपेटीका खिला हुआ रूप है। इस कोषमें पहले केवल एक मूलबिंदु बीचमें रहता है। फिर इस मूलबिंदुके दो टुकड़े हो जाते हैं जिनमेंसे एक कोषके ऊपर चला जाता है और दूसरा नीचे। यहां प्रत्येक टुकड़ेके फिर दो टुकड़े होते हैं और यह फिर दो बार विभक्त हो जाते हैं। इस विकसित अवस्थामें गर्भकोष-के ऊपर भागमें सूक्ष्मछिद्रके समीप चार मूल-बिंदु हो जाते हैं, और चार नीचे। किन्तु अगली अवस्थामें सूक्ष्म छिद्रके पाससे एक बिंदु आकर केन्द्रमें पहुंच जाता है और दूसरा बिंदु नीचेसे आता है। यह दोनों बिंदु मिलकर केन्द्रपर गौणबिंदु बनाते हैं। ऊपरके शेष तीन बिंदु मिलकर अंडयंत्रकी रचना करते हैं और नीचे-के तीन बिंदु कोष बनाते हैं। इन परिवर्तनोंके होते समय कोषकी दीवारमें कुछ ऐसे परिवर्तन हो जाते हैं जिनसे गर्भकेलिए भोजनकी सामग्री मिलती रहती है।

रजःपेटीमें जब इस प्रकारके परिवर्तन हो जाते हैं तब वह गर्भ धारण करनेके योग्य हो जाती है। ऐसी अवस्थामें मुन्ड चिपचिपा हो जाता है और कुसुमपुरीकी युवतियां व्याहने योग्य हो जाती हैं। अब यदि परागकण आकर मुन्डपर पड़ें, तो वे चिपक जाते हैं, अन्यथा वे छत्रपर गिरकर नष्टभ्रष्ट हो जाते हैं। परागकणों-को जब डिम्बाशयकी लसी मिलती है तब उनसे एक नलिका निकलती है, यह नलिका डिम्बाशयके तंतुओंपर आश्रित हो ग्रीवाके बाहर निकलकर रजःपेटीके सूक्ष्म छिद्रतक पहुंच जाती है। यहां उसका मूलबिंदु रजोबिंदु-तक पहुंच जाता है और फिर दोनों मिलकर "गर्भबिंदु" बना देते हैं। इसी प्रकार फूलोंमें गर्भस्थिति होती है, पर गर्भस्थिति होनेके पूर्व परागाशयसे परागकण निकलकर मुन्डपर चिपक जाने आवश्यक हैं। इसे सेचन या संयोग कहते हैं। भिन्न भिन्न बीजोंमें सेचन और गर्भस्थितिमें अन्तर भी पड़ता है।

### (४) विवाहमें जाति और देशका भेद

जहांतक हो सकता है प्रकृति देवी यह नहीं चाहती कि एक ग्रामकी बधू उसी ग्रामके वरसे व्याह करले। सुदृढ़ और सुंदर संतानके-लिए प्रकृति एक गांवकी लड़कीका दूसरे गांव-के लड़केके साथ व्याह रचाती है। इस व्याह रचानेकेलिए नाई और ब्राह्मण भौंरे, तितली और दूसरे कीट पतङ्ग हैं। कभी कभी पवन देवता भी पुरोहिती कर दिया करते हैं। नाई और पंडित भला अपने नेग दस्तूर बिना बरेखी क्यों कराने लगे? यह लोग कुसुमपुरसे पराग-कण लूट लूटकर लाते हैं, इन परागकणोंमें मूल-रस बहुत रहता है, मधु मक्खियां और भौंरे नेगमें इन्हींका भोग भी लगाते हैं। किन्तु अधिकांश फूलोंके परागकण चिपचिपे होते हैं। लूट मचाते समय यह कण उनके कूंचो या ब्रश समान अंगोंमें लग जाते हैं। गुंजार करते हुए भौंरे जब दूसरी नगरीकी युव-तियोंको राग सुनाने आते हैं तो कुछ पराग उनकी देहसे लगकर पहुंच जाते हैं। गांवमें जाते ही उनका उचित सत्कार होता है। कुसुमपुरी अपने मधुकोषोंको दिखाती है। नया रस पान करनेकेलिए भौंरे या मधुमक्खियां गुंजार

करती अंग रगड़ती स्त्रोवासमें पहुंचाती हैं। बस यहीं वरबधू-मिलाप हो जाता है। प्रत्येक मुन्ड अपनेलिए एक एक कण चुन लेता है जो कण उसीके ग्रामके हुए उनसे गर्भ नहां रह सकता।

इस तरह संयोग होनेवाली कुसुमपुरीमें डिम्बाशय और परागाशय अधिक सुरक्षित रहते हैं।

इस प्रक्रियाको परिसेचन क्रिया कहते हैं। किसी किसी जातिके फूलोंकी पुरोहिती वा परिसेचन कभी कभी वायु द्वारा भी होता है। ऐसे फूलोंके परागाशय बड़े और उनकी केसर हलकी होती है जिससे ज़रासा हिलनेसे छत्र फट जाते हैं। छत्रोंमें पराग अधिकतासे होता है और ऐसे फूल अधिक भड़कीले नहीं होते। भड़क और ठाट तो वहां होता है जहां अधिक लालची नाई ब्राह्मणकी मुहताजी रहती है। जहां पवनदेव स्वयं निरपेक्ष भावसे पुरोहिती करते हैं वहां फूलोंमें छत्र सुरक्षित भी नहीं रहते।

इस बातकेलिए कि एकही ग्रामके स्त्री पुरुषोंमें संयोग न हो जाय प्रकृति बड़े यत्न करती है। एक ही कुसुमपुरीमें परागाशयका और मुन्डका विकास साथ नहीं होता, आगे पीछे हुआ करता है। यदि विकास एक साथ भी हुआ तो कहीं केसर बहुत बड़ी और कहीं ग्रीवा बहुत छोटी होती है। इन्हीं सब ढंङ्गोंसे प्रकृति आत्मसेचन निवारण करती रहती है वा भाई बहिनका विवाह नहीं होने देती। यदि आत्मसेचन हुआ भी और बाहरसे भी पराग कण आ गये तो बाहरके ही परागकण गर्भाधान करते हैं।

कुछ फूलोंमें फिर भी आत्मसेचन ही होता है। मूलीका फूल इसी प्रकारका है। सेचन सजातीय फूलोंमें ही होता है। वैज्ञानिकोंने प्रकृतिको अपने नियमके परिपालन करनेमें बहुत सहायता दी है और इसी कारण प्रकृतिने उनको अनेक उपहार भेंट किये हैं। वैज्ञानिक मधुमक्खी, भौंरे तितली अथवा अन्य कीड़ों मकोड़ोंकी अपेक्षा बड़ी दूर दूरसे सजातीय वर विदेशीय बधुओंसे मिलाते हैं और इस प्रकार सुन्दर विचित्र, और दृढ़ बीजोंकी उत्पत्ति करते हैं। परिसेचनकी क्रिया वैज्ञानिक समझ गये हैं, एक वृक्षके फूलके पुरुषवास विकसित होनेके पूर्वही उड़ा देते हैं और दूसरे फूलके स्त्रीवास। फिर इन फूलोंको बाहरसे आये हुए पराग कणोंसे न मिलनेकेलिए बारीक जालीसे बांध देते हैं। जब एक फूलकी ग्रीवा विवाह योग्य हो जाती है तो दूसरे फूलोंके युवक परागसे उनका ब्याह रचाते हैं। और एक नयी सृष्टि करते हैं। अमेरिकाके उद्यान-विद्या विशारद बरबंकने इन्हीं क्रियाओं द्वारा अनेक चमत्कार दिखलाये हैं जिनका वर्णन पाठक विज्ञानमें पढ़ चुके हैं।

### (५) बसन्तका अन्त

बसंतकी बहारका अब अंत हो रहा है। निदाघ सूचक, तप्त वायु बहने लगी है। आज बहुत दिनोंके बाद मुझे प्यारे फूलोंसे फिर भेंट हुई है। पर फूलोंका वह रंगरूप कहां?

पोस्तेके फूलको देखा! उसके वहिर्वास गर्भधारण करनेके पहले ही गिर पड़े थे। कुछ वहिर्वास फूलोंके गर्भधारणके बाद गिरते हैं, पर सेब कद्दू और नाशपाती अपने वहिर्वास गर्भ धारणके बाद भी नहीं गिराते। अन्तर्वास भी योंही या तो गर्भ धारणके पहले या पीछे गिर जाते हैं। तोरई और खीरा इत्यादि कुछ ऐसे फूल हैं जिनके अन्तर्वास फल लगनेके समयतक भी नहीं गिरते। इसी प्रकार मुन्ड भी गिर जाते हैं। फूलोंका वह रूप और यौवन कहाँ गया? बसंतके बाद निदाघ क्यों आ गया? बर्षा शरद और हेमंत फिर फिर क्यों आती हैं? क्या प्रकृतिने रूप और यौवन अपने कार्य्य

संपादनकेलिए ही बनाया है, उन्मत्तताके लिए नहीं ? वे भौंरे जो अधखिली कलियोंसे अड़ रहे थे, उनके यौवन बीतनेपर कहां चले गये ? बिहारीने जिनकी उन्मत्तताका वर्णन करते हुए कहा था " नहिं पराग नहिं मधुर मधु नहिं विकास यहि काल। अली कली ही तें रम्यो आगे कौन हवाल " वे ही अलिवृन्द मधुर मधु, पराग और विकासका आनंद लेकर उड़ गये। रसाल मंजरीमें छोटे छोटे आम लगते ही इन कीटोंने विदाईका राग चलाया। रूप रसके प्यासे मधुकर प्रेमका आनंद क्या जानें ?

गूलरकी कलियोंने हँस हँसकर इन फूलोंका उपहास किया। उन्होंने कहा "सहयोगिनियों, देखो, न तो मैंने वहिर्वास खोले न अन्तर्वास न भौरोंको बुलाया न पराग उड़ाया। बहनों तुम बुड्ढी बुड्ढी कह कर मेरा उपहास करती थीं कहो तुम्हारी जवानी अब कहां चली गयी.? तुम्हारी चित्रशालाओंकी करतालध्वनि क्या हुई। तुम्हारी भ्रमर वीणाकी मधुर गुँजारें क्या हुईं ? बहनों एक बार फिर भी बसंत अलापो !"

बहिनोंने भी आंसू भरकर कहा " मधुकर यह कारेकी रीति "

इस प्रकार व्यंग बोलनेवाली गूलरकी कलियां विना खिले ही गर्भ धारण कर लेती हैं। उनके भीतर एक छोटा परागाशय होता है जिसमें थोड़े से परागकण होते हैं। इन पराग कणोंका विकास होनेके पहले पुमङ्गके भीतर ही केसर निकल आती हैं। कलिकामें मुन्ड होता ही नहीं। यही केसर परागाशयके नीचे होकर डिम्बाशयके रजोविदुतक पहुंच जाती हैं। इस बातको जाननेवाले वैज्ञानिकने हँसकर कहा "गूलरकी कलिका तुम व्यर्थको विलाप क्यों करती हो ? क्या तुमने कभी संयोगका आनंद नहीं लूटा, तुम्हारे प्रेमीने क्या तुम्हें कभी नहीं अपनाया ? तुममें अन्तर्वास भले ही नहीं पर तुम्हारे ग्राममें स्त्री पुरुष तो रहते ही हैं ? " किंतु उद्धवके इस उपदेशको भ्रमर-विरह पीड़िता कलियोंने कुछ नहीं सुना उन्होंने फिर भी यही कहा " बहनों, भला किया जो तुमने उस कालियासे नाता नहीं जोड़ा "

इस प्रकारकी बातें सुनकर मेरा दिल उमड़ सा आया ? वाहरे प्रेम ! इस असार संसारमें यदि कोई वास्तविक है तो तुम्हीं हो। सत्य प्रेम यावज्जीवन नष्ट नहीं होता। सत्यप्रेम रूप और लावण्यताका चेरा नहीं, उसमें स्वयं ही वह कमनीयता विराजमान है जो कभी नष्ट नहीं होती। प्रेमकी आंखें ! तुमने जिस ओर एक बार निगाह फेरी सुकुमारता और लावण्यताका समुद्र उमड़ आया। सच है, प्रेमकी सीता संसारको प्रेममय बना देती है। उसकेलिए गोस्वमीजीका यह कहना युक्त ही है।

" जहं बिलोक मृगशावक नैनी।
जनु तंह बरस कमल सित श्रेनी "।

प्रेमकी अग्निमें तपाया हुआ चित्त सुवर्ण सा स्वच्छ होकर निकल आता है। सच्चे प्रेम की पयोधिमें स्नान करनेपर किस दुराचारीके पाप नहीं धुले और स्वर्गके कपाट नहीं खुले। संसारमें इसके समान निर्मल तीर्थ और कहां है ?

जगज्जननी, भव भय हारिणी मां, तुम्हारा प्राकृतिक सादर्य, तुम्हारी दिव्य मूर्ति, तुम्हारा निश्छल प्रेम कौन अभागा भूल सकता है ? इतने निरुत्साही, भीरु आलसी और निकम्मे पुत्रोंका उदर पालन करनेवाली दूसरी शुभ्र मूर्त्ति कहां मिलेगी ? जीवन दायिनी सुरवंदिता भगवती ! तुम्हारे कुचसे उत्पन्न हुआ यह उन्मत्त हृदय, तुम्हारे जीवन रससे पला हुआ यह निकृष्ट शरीर दुःख और प्रेम विरह वेदना-के समय तुम्हारे ही चंद्रालोकमें, तुम्हारे ही केश पाश गुम्फित, हिमाच्छादित शिखरोंके बन-कुसुम और तुम्हारे चरण स्पर्श कर बहनेवाले मलय समीरके कारण सांत्वना पाता

है। मां, जिस प्रेमसे तुम इस तुच्छ जीवको प्यार करती हो, क्या इसे भी वैसे ही अपना प्यार करना सिखाओगी ? माँ, तुम्हारे अश्रु विन्दुओंको देखकर क्या यह पैशाचिक नेत्र भी रोना सीखेंगे ? मेरे प्रेमधन मांके प्रेमका अद्भुत धन यदि तुम मुझे दिला सको तो मैं अपनी पूर्व विरह-वेदना बहुत कुछ भूल जाऊंगा। मेरा उन्मत्त प्रलाप कम हो जायगा। मेरे नव जात वधू-मिलापमें एक नवीन आनन्दका संचार होगा। प्रेम ! पयोद अपनी पीयूष धारा बहाकर इस शुष्क हृदयको एक बार तो आर्द्र कर दो।

---

# वायुमण्डलपर विजय

[ ले० रामदास गौड़, एम. ए. ]

### विमान

सौ वर्षसे अधिक हुए (Sir George Cayley) सर जार्ज केलेने पक्षीके उड़ानको पूरा हिसाब लगाया था और जब डैने फैलाकर पक्षी मँडलाता हुआ उतरता है उस समय जितनी शक्तियां लगती हैं उनकी जांच की थीं। साथ ही कई परीक्षाएं विमान-निर्म्माण-पर भी की थीं। उसने एक विमान बनाया भी था जिसकी पूंछमें पतवार लगी थी जिससे स्थिरता पूर्वक चढ़ता उतरता था। परन्तु उस समय भापका इंजन अपूर्ण था। इस कठिनाई-पर विचार करके केलेने यह विचित्र भविष्यवाद किया था कि इसकेलिए गैस और हवाके विस्फोटनसे इंजन चलानेका उपाय किया जाय तो सुगम होगा। इसी कठिनाईपर उसने अपनी खोज समाप्त कर दी।

गुबारा और पवनपोतने अनेक कालतक उसकी खोजको दुहरानेकेलिए किसीको उत्साहित न किया। सं० १६२४ (१८६८ ई०) में अध्यापक लांग्लेने वायुमें चलनेवाले समधरातलपरके दबावपर कई परीक्षाएं कीं। इसी समय वेन्हमने सिद्ध किया कि विमान चलानेमें जितनी शक्तिकी आवश्यकता समझी जाती है उससे कहीं कममें ही काम चल सकता है। सं० १६२८ (१८७२ ई०) में पीनोने वेन्हमके कथनकी जांच की और सच पाया, परन्तु पीनोके विमान बहुत छोटे थे। उसे भी इंजनकी कठिनाईने रोक रक्खा। सं० १६४१में होरेशिओ फ़िलिप्सने वेन्हमके सिद्धान्तमें इतना परिवर्तन कर दिया कि समतलकी जगह झुके हुए डैने जैसे पक्षियोंके होते हैं लगाकर परीक्षाएं कीं। कुछ बरसों पीछे जर्म्मन ओटो लिलिएंथलने भी डैनोंके रूपकी उपयोगिता स्वतंत्र रूपसे समझ ली और अपने उड़ानयंत्र पक्षीके अनुरूप बनाये। उसके पीछे फ्रांसमें फ़ार्बर और अमेरिकामें रैट भी उसी रीतिपर उड़ने लगे। इंजनके अभावमें कोरे विमानकी रचना करके यह लोग किसी पहाड़की चोटीपरसे विमान लेकर बड़े वेगसे अपने डैनोंद्वारा मंडलाकर पृथिवीपर आते थे। प्रेरक आदि कुछ न था।

रैटका मंडलानेवाला सादा पतंग आजकलके विमानके ही अनुरूप था, केवल कुछ यंत्रोंकी कमी थी। इन मँडलानेवाले मानव-पक्षियोंमें लिलिएंथल सबसे कुशल था, परन्तु सं० १६५२में जब उसने इंजन लगाया और प्रग्रह-यंत्रकी परीक्षा कर रहा था, एक अनिष्ट आंधीसे उसका पतंग उलट गया और बेचारा गिर गया और रीढ़ टूट गयी। सं० १६५६ में इंगलैंडमें पिलचर भी मोटरसे काम लेनेको ही था कि विमानकी एक पसली टूट गयी और वह ३० फुटसे गिरकर मर गया। पिलचरने मँडलानेवाले पतंगमें पहिये भी लगाये और कई और परिवर्तन किये। सं० १६५५में फार्बरने मोटर और प्रेरक लगवा देनेकेलिए फ्रांस सरकारसे सहायता मांगी, पर न मिली। अमेरि-

Aviation वायु यात्रा ]

काके रैट बंधुओंको बड़ा अच्छा अवसर मिला। जो कठिनाई औरोंके आड़े आती थी, रैटने उन्हें देखा और उनके महत्त्वको समझा।

केल्विनका भ्रम

लार्ड केल्विनका नाम विज्ञानमें विख्यात है। ईसवीकी उन्नीसवीं सदीमें केल्विन भौतिक शास्त्र-वेत्ताओंमें एक ही थे। उनसा कोई दूसरा पंडित भौतिक शास्त्रका न था। लार्ड केल्विनको अन्ततक यह विश्वास था कि हवासे भारी मशीन वायुमें चल नहीं सकती। इस बातको उन्होंने गणितसे सिद्ध कर रक्खा था। सचमुच यह बड़े अचरजकी बात थी कि भारी इंजनवाला एक बड़ा पतंग लोहेकी पसुलियोंसे घिरा और रबड़के कपड़ेसे मढ़ा हुआ वायुमें चिड़ियोंसे भी दूनी तेज़ीसे चल सके। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि लार्ड केल्विनके सिद्धान्तको वास्तविक व्यवहारने भ्रमात्मक सिद्ध किया।

लोग समझते हैं कि चिड़िया हवामें बहुत तेज़ उड़ती है। हालमें खोजसे प्रकट हुआ है कि तेज़से तेज़ चिड़िया घंटामें ५० मीलसे अधिक नहीं चलती। परंतु आजकल विमान १०० मील प्रति घंटा चल सकते हैं। विमानका रूप चिड़ियाका सा होता है। पहले पहल रैट बँधुओंने जो मंडलानेवाला विमान बनाया, वही रूप अबतक बना हुआ है। चिड़ियाके अंगकी जगह इसमें ऊपर नीचे दो लम्बे लम्बे पंखे लगे हुए हैं और जहां डैने होने चाहिए वहां ऊपर नीचे बेंड़े बेंड़े दो बड़े पंखे लगे हुए हैं। इनकी पसलियां पहले बांसकी बनती थीं पर अब धातुकी बनने लगी हैं। इन पसलियोंपर रबड़ चढ़ा हुआ कपड़ा लगा दिया जाता है। इनकी बनावट सीधी सपाट नहां है। किनारे इस प्रकार क्रमशः झुके हुए हैं कि पूरा पंखा नतोदर रूपका हो जाता है। इसपर हवाका दबाव अच्छा पड़ता है। यह दो बेंड़े पंखे विमानके सिरेके पास होते हैं विमान चलानेवाला जिसे हम विमानी कहेंगे उस स्थानपर बैठता है जहां आड़े बेंड़े दोनों पंखे मिलते हैं। इसी जगह सम्पूर्ण यंत्रका गुरुत्व केंद्र होता है। पंखोंको बांधनेवाली रस्सियां यहीं आकर मिलती हैं। उन सबोंको मनमानी रीतिपर खींचनेका विमानीको पूरा मौक़ा रहता है। विमानका इंजन इसी स्थानपर रहता है। जैसे मोटरगाड़ी चलानेवाले अपने हाथमें एक पहिया लिये बैठे घुमाया करते हैं वैसे ही विमानी भी अपने हाथमें पहिया लिये विमानको चलाता है। इस पहियाको हम प्रग्रह-चक्र कहेंगे।

इस *चित्रके विविध अंगोंको देखिए। प्रग्रहचक्र हाथमें लिये विमानी बीचोबीच बैठा हुआ है। इंजन उसके पैरोंके पास चल रहा है। इसी इंजनसे वह प्रेरक चक्र चलता है जो आगे गोलसा दिखाई देता है। प्रेरकसे विमानीकी ओर बड़े ज़ोरका झोंका आता है। प्रेरक यहां वही काम कर रहा है जो घोड़ा करता है। विमानको घसीटे जा रहा है। विमानी और आकाशयात्री इस प्रेरककी आंधीसे तभी बच सकते हैं जब प्रेरक पीछे लगा हो। पर पीछे लगानेमें प्रेरक एक तो ठेलनेका काम करता दूसरे उसे विमानके पीछे रहनेसे पूरी हवा छेदनेमें रुकावट होती। परन्तु प्रेरक अपने सुबीतेसे किसी विमानमें बीचमें किसीमें आगे और किसीमें पीछे लगाते हैं।

विमानकी अस्थिरता

विमान चलानेमें ऊपर नीचे और दहने बाएँ दोनों तरह सारा ढांचा डगमगाता है। साथ ही विमानीको कभी ऊपरकी ओर जाना है कभी नीचे उतरना है, कभी दहने मुड़ना है और कभी बाएं मुड़ना है। इन सब बातोंमें ही कुशलता प्राप्त करना विमान विद्याकी पराकाष्ठा

* समयपर चित्र न बननेसे यहां नहीं दिया जा सका। अगले अंकमें इसी लेखमें यह चित्र मिलेंगे। सं०

है। ऊपर नीचे फेरनेको विमानके अग्र भागमें एक शिखापक्ष या सिरा बना होता है। यह एक प्रकारकी पड़ी पतवार है, जिसे ऊपर या नीचे कर देनेसे विमान ऊपर या नीचेकी ओर चलता है। इसी प्रकार दहने बाएं फेरनेको पूछमें खड़ी पतवार लगी होती है। इसकी रस्सीसे विमानीके प्रग्रह चक्रसे सम्बन्ध रहता है।

### विहंग और पतंग

जिन विमानोंमें ऊपर नीचे दोहरे पखने लगे होते हैं उन्हें biplane बैप्लेन और जिनमें इकहरे लगे होते हैं उन्हें मनोप्लेन monoplane कहते हैं। परन्तु इन दोनों शब्दोंमें "प्लेन" भ्रम मूलक है। क्योंकि पखने सम धरातलके नहीं होते। मेरे मतसे biplane को विहंग और monoplane को पतंग कहना उचित होगा। पतंग गुड्डी, सपक्ष कीड़ा और चिड़िया तीनोंको कहते हैं। इनमें monoplane गुड्डी और कीड़ेके अनुरूप है। विहंग पक्षीको कहते हैं और "वि" और bi से शाब्दिक समानता भी है।

आजकल अब विहंगोंका प्रचार कम हो रहा है। पतंगोंका प्रचार अधिक बढ़ता जाता है। पतंग विमान विहंगकी अपेक्षा अधिक वेगसे चलता है। जोखिम उसमें कम है। विहंगकी अपेक्षा कुछ हलका ही होता है। पतंग और विहंग दोनोंकी बनावट देखनेसे पता चलेगा कि पतंग उससे सहज है और उसका रूप पतंगेसे अच्छी तरह मिलता है।

अगले विमानी चिड़ियोंकी पूँछका महत्व नहीं जानते थे। उड़नेकी सामग्रीमें चिड़ियाका सारा अंग शामिल है, पर उनमें पूँछका कर्त्तव्य बड़े ही महत्वका है। रैटने पहले पूँछ नहीं लगायी थी इसीसे उसे आदिमें सफलता नहीं हुई। अन्तको उसे पूँछ लगानी ही पड़ी। पूँछ केही सिरेपर खड़ी पतवार लगी होती है जो दहने बाएं फेरनेके काममें आती है।

रैट बन्धुओंने डैने लगानेकी रीति बड़ी उत्तम निकाली। डैनेकी जड़पर घुमानेकेलिए रस्सी लगायी जिसे सिरसे पैरतक सीधे बंधे हुए रस्सेमें बाँधा। इस रस्सेको खींचनेसे डैने फैलते और सिकुड़ते हैं। यह भी प्रग्रहचक्रमें लगा होता है। डैनेके फैलाने और सिकुड़नेसे विमानका दहने बाएं झुकना रोका जाता है। जब कभी विमानको मोड़ते हैं बाहरकी ओरसे झुक आता है। सभी गाड़ियोंकी यही दशा होती हैं। ऐसे समयमें भी पूँछ काममें आती है।

हवामें उड़ते समय समधरातलसे लगभग आठ अंशके ( ८° ) विमान नीचेको झुका या ऊपरको उठा हुआ चलता है। इस प्रकार झुककर चलनेमें और पंखोंके नतोदर होनेमें हवाका अच्छा दाब पड़ता है।

हवाके झोंकेका इस प्रकार ऊपरको उछालते हुए चलना विमानको हवामें बहता हुआ रखता है। हवाका पूरा दबाव पंखोंके क्षेत्रफलपर अवलम्बित है। जिस गतिसे विमान चलता है उस गतिके वर्गफलके बराबर यह दाब होता है। जैसे, अगर चाल २० से ४० मील प्रति घंटा कर दी जाय तो ऊपरकी ओर दबाव वा उठानेवाली शक्ति चौगुनी हो जायगी। परन्तु इसमें कोई विशेष सुबीता न समझना चाहिए। क्योंकि चाल दूनी करनेको अठगुना बल लगाना पड़ता है। इस प्रकार दाब उत्पन्न करनेमें मशीनको अत्यन्त बलका व्यय करना पड़ता है।

विहंग और पतंग यही दो विमान हमने बताये हैं। कुछ दिनों ऊपर नीचे तिहरे पंखोंका भी विमान परीक्षा क्षेत्रमें आया था। इसे त्रिपक्षी कहते परन्तु इसकी चाल उठ गयी।

जलमें विमानका बोझ लेकर बहने योग्य नौका भी अब नीचेकी ओर लगी रहती है। इसे जलविमान कहते हैं।

---

# औद्योगिक गुरुकुल

## विना-मूल्य शिक्षा

[ ले० गोपालनारायण सेन सिंह, बी. ए. ]

वर्तमान शिक्षा-प्रणालीमें अनेक दोषोंके होते हुए भी हम लोग इतने दिन इसका आश्रय पकड़े रहे तो केवल इसी विचारसे कि और नहीं तो इस शिक्षाके सहारे हमें इस कठिन कालमें एक जीविका तो मिल जाती है। चलो उदरपालन जब हो जायगा तब और उद्देश्यों की पूर्ति होती रहेगी। परन्तु इसमें भी अब हमें असफल और निराश होना पड़ता है। दो चार महीने वा दो चार शहरोंकी बात अलग जाने दीजिए, इधर कितने ही सालसे सारे देशमें मध्यम श्रेणीके शिक्षित समुदायमें जीविकाका अभाव सा हो गया है। सहस्रों रुपयोंके व्ययसे वर्षोंके परिश्रमके उपरान्त बड़ी बड़ी डिगरियां लाभ करनेपर भी थोड़े ही लोग ऐसे निकलते हैं जिन्हें कोई अच्छी जगह मिलती है, बाक़ी दो दो तीन तीन साल विज्ञापन देखकर निवेदनपत्र लिखा करते हैं और नौकरीकी खोजमें भटका करते हैं। उस अवस्थामें उनके क्लेशोंका वर्णन नहीं हो सकता। विवाह वन्धनमें पड़कर भी अपनी स्त्रीको घरपर न लाना, या लाकर उसे खाने पहरनेका कष्ट देना या परिवारकी अन्य स्त्रियोंसे अपमानित कराना, अपने नन्हे बच्चोंको भूखा, नंगा वा रोगी देखनेको विवश होना किससे सहा जा सकता है। पर क्या उपाय है? स्कूल कालेजसे जिस योग्यताको लेकर हमारे नवयुवक सांसारिक जीवनमें प्रवेश करते हैं उससे वे केवल क़ानून, डाक्टरी और सरकारी दफ़्तरोंमें भरती हो सकते हैं। परन्तु उनमें इतना स्थान कहाँ कि सबका ठिकाना लग सके। फिर भी धनी और प्रतिष्ठित पुरुषोंके लड़के पहलेसे ही ऐसे उच्चपदोंपर अपना अधिकार जमाये रहते हैं। हालमें सर्व-साधारणमें शिक्षा प्रचारसे निम्न श्रेणीवाले अलग अपना स्वत्व मांगने लगे हैं। बस मारे गये बिचारे मध्यम श्रेणीवाले जिनके कुलकी न इतनी प्रतिष्ठा है कि मुँह मांगी सरकारी नौकरियाँ मिलें और न जिन्होंने ऐसी शिक्षा ही ग्रहण की है कि बड़ोंके सामने अपना गुण दिखलाकर उच्च पदके भागी हों वा स्वतंत्र व्यवसाय करके निष्कंटक जीवन व्यतीत करें।

यह हुआ उन भाग्यवान पुरुषोंका हाल जो स्कूल वा कालेजकी एक वा अधिक परीक्षा पास कर चुके हैं। अब एक दृष्टि उन कर्महीन युवकोंपर डालिए जो स्कूल या कालेजकी एक कक्षामें कई साल अपनी मिट्टी ख़राब कर चुके हैं। यूनिवर्सिटी परीक्षाको भी जाने दीजिए। स्कूलकी परीक्षाओंमें सबसे बड़ी नवीं कक्षा है। इस साल ( मई १९१६ ) प्रयागके दो स्कूलोंका ही फल ले लीजियेः—

| | संख्या | उत्तीर्ण |
|---|---|---|
| शिवराखन स्कूल | ६४ | १७ |
| कायस्थपाठशाला | ६० | १७ |

विचार करनेका स्थल है। ये अभागे लड़के क्या करेंगे और कहां जायंगे, इतने सालकी शिक्षा और इतने धनव्ययके पश्चात वे किस मरज़की दवा हुए। किस भरोसे और कहांसे उनके माता पिता रुपया लाकर उन्हे स्कूलमें पढ़ायें। कितनेके तो मा बाप भी नहीं हैं। जैसे तैसे वे अपना निर्वाह करते थे। स्कूलसे निकम्मे ठहराये जानेपर उन्हें अपना जीवन भार हो जाता है। समझते हैं कि हमसे अब कुछ हो ही नहीं सकता। पर किसी मनुष्यकी दशा एक सी बनी नहीं रह सकती। यदि कोई पुरुष बढ़कर समाजका विश्वासपात्र सेवक नहीं बनता, तो झट ही उच्छृंखल होकर उसकी

ही जड़ खोदने लगता है। शिक्षाप्रणालीकी त्रुटियोंका यह भयानक परिणाम होता है। पर यह अनिवार्य नहीं है।

अब एक अनुभवकी बात सुनिये। स्विज़र-लैन्डके अधिवासियोंसे जिनमें "कर" देनेकी अधिक सामर्थ्य नहीं है, जब दरिद्र निठल्ले आदमियोंके निर्वाहकेलिए चंदा मांगा गया तो उनमेंसे एक सज्जन केलरहालने (Her Otto Kellerhall) उनके भरण पोषणका भार अपने ऊपर ले लिया और उन्हें विज़विल ग्राममें ( Witzwil, Berne ) बसाकर इस रीतिसे काम काज सिखलाया कि अपनी जीविका आप कमाने लगे।

कितने ही चतुर मनुष्योंके खोले हुए व्यवसाय जैसेके तैसे रह गये, पर इन निर्धन, भगेड़ू और आलसी मनुष्योंका कारख़ाना चल निकला। इसका विशेष कारण था। उन्होंने वे ही पदार्थ तय्यार करने आरम्भ किये जिनकी नित इन मनुष्योंको आवश्यकता पड़ती थी। ये अपने व्यवहारके निमित्त ही माल बनाते थे। इसलिए उनके बेचनेकेलिए उन्हें दूर नहीं जाना पड़ता था और किसी प्रकारकी कठिनाई या हानि भी नहीं उठानी पड़ती थी कभी कभी उन्हें ऊपरसे कुछ रुपयेकी जरूरत पड़ती थी जैसे कि रेलके सफ़रमें या ऐसी चीज़ोंके ख़रीदनेमें जो वह नहीं बना पाते थे। यह ख़र्च ये अपने यहाँ के बचे हुए आलू साग भाजी फल फूल वा घी दूधको बेचकर निकाला करते थे। इस तरह बिना किसीसे एक कौड़ी दान लिए ही वे सब काम चला लेते थे।

अब यहां ऊपरवाली घटनासे दो तीन बड़ी महत्वपूर्ण बातें सिद्ध होती हैं। संसारमें कार्यका अभाव नहीं है। चाहे जनताकी संख्या कितनी ही बढ़ जाय हम अपने नितके परिश्रमसे समाजमें परस्पर हितसाधन करके अपनी रोटी कमा ले सकते हैं। लोकमें कुछ ऐसी सामग्रियां हैं जिनका उपजानेवाला कभी बैठा नहीं रह सकता। आहार द्रव्य, वस्त्र, गृह, बर्तन, गृहस्थीके उपकरण तथा औषध बनानेवालोंको उनके श्रमका फल आदरपूर्वक दिया जायगा।

इससे निश्चय है कि हमारे देशवासियोंकी सबसे बड़ी भ्रान्ति या मोह जिससे हम इस दुर्दशा और संकटमें हैं, यह मिथ्या धारणा है कि संसारमें अनावश्यक तथा भोग विलासकी वस्तुओंके उपजानेवालेकी आवश्यकता ( जैसे वकील, सिपाही, गवैये, शायर, दफ़्तरके बाबू, गंधी, अत्तार, रंगसाज, नाटक मंडलियां, रेशमी ज़री कपड़े बुननेवाले ) अपरिमित संख्यामें होती है। इसी निराधार भावनाके वशीभूत होकर हमलोग सारा झगड़ा अपने सर मोल लेते हैं। तनिक गम्भीरतासे सोचनेपर यह स्पष्ट होजायगा कि निरर्थक या अपेक्षा भावसे कम आवश्यक पदार्थोंकी उत्पत्तिमें मानव जातिके जो शक्ति और समय व्यर्थ जाते हैं बस उन्हींके कारण अगणित मनुष्योंको बे धन्धे रोज़गार बैठना पड़ता है और फलतः कष्टसे जहां तहां हाहाकार सुननेमें आता है।

मिलजुलकर यदि सहकारी कारख़ाने ( Co-operative Workshops ) खोले जांय और उनमें केवल प्रतिदिनके व्यवहारके आवश्यक पदार्थ तैयार किए जाँय तो हमारी यह डींग सच निकले " भूखे पेट कोई नहिं सोता, ऐसा है यह भारत "।

यह व्यवस्था उन्हींकेलिए नहीं है जो बेकार बैठे हों वा जिनका रोज़गार न चला हो क्योंकि विद्यालयोंमें जबतक कोरे साहित्य-ज्ञान-संचयकी निष्फलता और औद्योगिक शिक्षाका महत्व नहीं समझाया जायगा तबतक ऐसे लड़कोंकी कमी न होगी जो आगे चलकर बे-धन्धे रोज़गारवालोंकी संख्या बढ़ाया करेंगे।

इस विचारसे आरम्भसे ही एक संस्था बनाकर बालकोंको कृषि वा शिल्पकी शिक्षा और साथ साथ पढ़ना लिखना सिखलाया जाय तो अनेक कुरीतियां जो हमारे समाजमें घुस पड़ी हैं दूर हो जांय। शारीरिक ह्रास वा दौर्बल्य नवयुवकोंका एक साधारण सा दोष बतलाया जाता है। नगरकी तंग और गंदी गलियोंसे दूर खेतोंमें या कारखानोंमें जब हमारे युवकोंको रहनेका अवसर मिलेगा तो वहाँ स्वच्छजल वायु और शुद्ध आहारके सेवनसे यह शिकायत न रहेगी। स्कूलके पाठ जिन्हें फीके वा अरुचिकर जचते हैं, ग्राम यात्रा वा वन उपवनकी सैर करते हुए कारखानोंमें पहुंचकर वे एक अपूर्व आनन्द लाभ करेंगे और अपने समयका पूरा उपयोग करके अपना तथा समाजका उपकार कर सकेंगे। परीक्षाओंमें बार बार अनुत्तीर्ण होकर और निरुद्यमी पुरुषोंकी गणना बढ़ाकर वे अपनी जाति वा देशको कलंकित न करेंगे वरन किसी न किसी उपायसे अपनी जीविका कमाकर देशकी सम्पत्तिमें योग देंगे तथा उसके यश और प्रभुताकी वृद्धि करेंगे।

ध्यान रहे यह कोई सुख-स्वप्न नहीं है। ठीक इसी ढंगका काम कप्तान पिटावेलके अनुरोधसे और माननीय महाराजा सर मनीन्द्रचन्द्र नान्दीकी उदारतासे कलकत्तेके निकट बरहमपूरमें हो रहा है। वहां किसी जाति वा संप्रदायका लड़का भी यदि वह चरित्रवान और परिश्रमी है, भरती किया जाता है। पढ़ाई की कोई फ़ीस नहीं ली जाती। प्रथम तीन मास उसे आश्रमवासकेलिए ८) मासिक देने पड़ते हैं। इन तीन महीनोंकी शिक्षाके उपरान्त वह इस योग्य होजाता है कि अपने कामसे वह अपना ख़र्च निकाल ले। यदि ऐसा न कर सका तो वह निकाल दिया जाता है। इस विद्यालयका मुख्य उद्देश्य बालकोंको साधारण शिक्षाके अतिरिक्त उद्योगधन्धा सिखलाकर अपनी जीविका उपार्जन करनेकी क्षमता प्रदान करना है। संसारकी भावी सभ्यतामें आत्मनिर्भरता और स्वतंत्रता रूपी महान गुणोंका अनुशीलन इसी शिक्षा पद्धतिसे हो सकेगा। प्रजा तंत्रका मार्ग भी हमें यही दिखायेगी।

---

## साबुन बनानेकी अनोखी क्रियाएँ

[ ले० मुख़्त्यार सिंह, वकील, मेरट ]

साधारण साबुन बनानेकी जो क्रिया भारतवर्ष तथा अन्य देशोंमें प्रचलित है उसका विस्तारपूर्वक वर्णन मैं अपनी पुस्तक शुद्ध साबुनमें दे चुका हूं। आज पाठकोंके विनोदार्थ वे क्रियाएं जिनका कहीं कहीं अवलम्बन किया जाता है तथा जो अधिकांश ऐसे ही स्थानोंमें काममें लायी जाती हैं जहां विज्ञानका अधिक प्रचार हो, लिखता हूं।

(१) सब जानते हैं कि तैल बनस्पतिके बीजोंसे प्राप्त होता है। साबुन बनानेमें तैल तथा दाहक सोडेका पानी ही मिलाना पड़ता है और साधारण साबुन बन जाता है। इस प्रकार दो कार्य्य करने होते हैं एक तो बीजोंसे तैल प्राप्त करना और द्वितीय उस तैलको साबुनमें परिणत करना। यदि किसी क्रियासे बीजोंमें उपस्थित तैलको दाहक सोडेसे मिला दिया जाय तो सीधा बीजोंसे ही साबुन प्राप्त हो सके, और ऐसा हो जानेमें तैल निकालनेकी झंझट भी जाती रहे। इसी बातको ध्यानमें रखकर अनेक स्थानोंपर सीधा बीजोंसे ही साबुन बनाया जाता है। क्रिया इस प्रकार है। जिस बीजका साबुन बनाना हो उसको पीसकर दाहक सोडेका पानी डालकर आगपर पकाना आरम्भ करो। आगकी गरमी पाकर बीजोंका उपस्थित तैल पतला होकर निकलना आरम्भ होगा जो दाहक सोडेके पानीमें मिलकर साबुन बनने लग जायगा। अब हमारे पास दो पदार्थ मिलेहुए रह जायँगे

Industrial Chemistry औद्योगिक रसायन ]

एक तो साबुन है और दूसरे बीजोंका वह भाग है जो साबुनमें परिणत नहीं हो सकता अर्थात् जो बीजोंमें तैलके अतिरिक्त भाग है, वह साबुनमें मिला हुआ रह जायगा। साबुनमें इसके बने रहनेसे न केवल साबुनका रंग ही भद्दा प्रतीत होगा प्रत्युत साबुन धीरे धीरे सड़ जायगा। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक होगा कि साबुनको इस भागसे अलग कर दिया जाय। इस हेतु साबुनको बीजके अनावश्यक भागोंसे मिले जुले पानीके साथ, एक प्रकारकी कलमें* डालकर फिराया जाता है। यह कलें ऐसी ही होती हैं जैसी राबसे खांड बनानेकी कलें अनेक कार्य्यालयोंमें बरती जाती हैं। इन कलोंमें एक जाली होती है और इसके द्वारा दोनों भाग अलग हो जाते हैं। अब जो साबुन प्राप्त हुआ अलग करके और पकाकर टिकियोंमें जमा दिया जाता है। यह क्रिया गोले आदिके साबुन बनानेमें अधिक उपयोगी है क्योंकि गोलेमें तैलकी मात्रा अधिक होती है।

(२) वानस्पतिक तैलोंमें प्रायः दो भाग होते हैं। एक अम्ल या तेज़ाब होता है और दूसरा पदार्थ ग्लिसरीन। गरम क्रिया तथा ठंडी क्रिया भी जिसमें साबुन ऊपर तैरा कर नहीं जमाया जाता दोनोंमें ही साबुन बनाते समय ग्लिसरीन साबुनमें मिला हुआ रह जाता है किंतु जिन कार्य्यालयोंमें कलोंसे काम लिया जाता है तथा साबुन बनानेका काम विद्वानोंके हाथमें है वहां इस उपयोगी और बहुमूल्य पदार्थको अलग कर लेते हैं। ग्लिसरीन निकले हुए तैलके अम्ल मात्र, तैलिकाम्ल (oleic acid) चार्बिकाम्ल (Stearic acid) अथवा तड़िकाम्लको लेकर उनसे ही साबुन बनाये जाते हैं। इन अम्लोंको साबुनमें परिणत करनेकेलिए दाहक सोडेकी आवश्यकता नहीं होती। केवल कार्बनित सोडे अथवा सज्जी खारसे ही साबुन बन जाता है। भारतवर्षमें यह अम्ल बनाये नहीं जाते और बने बनाये महँगे मिलनेसे साबुन बनानेका कम प्रचार है। हां, जहां मोमबत्ती बनायी जाती है वहां इस क्रियाका अवलम्बन किया जाता है और इन अम्लों या तेज़ाबोंसे साबुन बनाया जाता है।

(३) दाहक सोडा कार्बनित सोडेकी अपेक्षा अधिक महँगा होता है और अब तो इसका दाम युद्धके कारण दूना हो गया है। यदि कार्बनित सोडेसे अर्थात् सज्जीखार या सोडेसे ही काम लिया जाय तो साबुन बड़ा सस्ता बन सके किंतु साधारणतया तैलोंपर कार्बनित सोडेका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वैज्ञानिक विद्वानोंने अब यह निश्चय किया है कि यदि अधिक दबाव देकर गरमी पहुँचायी जाय तो तैल कार्बनित सोडेसे ही मिलकर साबुनमें परिणत हो जायँगे। इस क्रियाको फलीभूत करनेकेलिए अनेक यंत्र बनाये गये हैं जिनमें अधिक दबावके कारण तैल सुगमतासे साबुन बन जाता है।

* सेंट्रिफ़िउगल मशीन Centrifugal Machine.

---

## पौधेकी ठटरी

[लि० कान्तिचन्द, बी. एस-सी]

यह मालूम हो चुका है कि जीवन मूल एक बहुत ही नरम वस्तु है जो ऐसा बड़ा दबाव नहीं सह सकता जैसा हम वृक्षको सदा सहते देखते हैं। इस दबावको सहनेकेलिए वृक्षमें किसी कठोर पदार्थकी आवश्यकता है जो वृक्षको जहां उपजा है वहां ही स्थिर रख सके। या यों कहो कि मुलायम जीव मूल किसी चीज़के सहारे रहे। यह बतला आये हैं कि कोषके चारों ओर एक और वस्तु होती है जिसे कोषकी दीवार या झिल्ली कहते हैं बस यही झिल्लीही इसके कठोर आश्रयका काम देती है। यह ध्यान रहे कि ऐसी

Botany वनस्पति शास्त्र ]

दशा आरम्भमें ही होती है और वृक्षकी उत्पत्ति स्थापन और विकासके अनुसार इस झिल्लीमें भी परिवर्तन होता रहता है। और स्थान आदि की भिन्नताके कारण केवल झिल्लीमें परिवर्तन होकर कोषकी सूरत बदल जाती है। उदाहरणार्थ वह वनस्पति जो पानीमें उगती और केवल एक कोष मोटी पांतिकी होती है उसे जलमें होनेके कारण कुछ बहुत कठोरताकी आवश्यकता नहीं होती और कोषकी झिल्ली भी मोटी नहीं पड़ती। कोषके भीतरके पानीके अंशसे ही दबाव रोकनेकी आवश्यकता पूरी हो जाती है।

यह भी देखा गया है कि वेगसे बहनेवाले जलमें जो वनस्पति होती है उसकी शाखा बहुत नरम होती है और उसके पत्ते भी कटे हुऐ होते हैं जिससे पानीके वेगसे उसे कुछ हानि नहीं होती। अब यदि भूमिपरकी वनस्पतिपर ध्यान दें तो उसमें बहुत मोटा लकड़ीका तना और मोटी जड़ देख पड़ती हैं, क्योंकि उसे वेगसे चलनेवाले वायुका सामना करना पड़ता है। अगर कोई नरम शाखावाली वनस्पति दिखाई पड़ती है तो वह किसी सहारेपर होती है। ऐसे आश्रयको जिससे वृक्षको सहारा मिलता है वृक्षकी ठटरी कहें तो अनुचित न होगा।

अच्छा अब यह तो देखो कि उस झिल्लीका वैज्ञानिक रूप क्या है जिसकी करामातसे वनस्पति थमी रहती है। साधारण रीतिसे यह कोषकी झिल्ली प्रारम्भमें एक साफ़ और खींचनेसे बढ़ जानेवाली चीज़ होती है जो जीव मूलके रस निकालनेसे बनती है। इस झिल्लीमें बहुत सा पानी सोखकर मोटे हो जानेका गुण है। उस पदार्थको जिसकी यह झिल्ली बनी है सेलूलोज़ (cellulose) कहते हैं जो रासायनिक रीतिसे माड़ या शकर आदि वस्तुओंसे मिलती जुलती होती है और जो कुछ दवाओंके प्रभावसे उससे शकर बन भी जाती है और जानदारोंके पोषणके काम आती है। परन्तु बहुतही कम कोषोंकी झिल्ली ख़ालिस (cellulose) सेलुलोज़ की होती है। इसमें अधिकतर चूने और पिकरिक नामके तेज़ाबके (compound) यौगिक मिले रहते हैं पर उनका बोध अभी हमें बहुत कम है। गंधकके तेज़ाब और (iodine) आयोडीनके प्रभावसे उसका रंग नीला हो जाता है। सेलूलोज़ भी कई तरहका देखा गया है। जहां वृक्षको बहुत कठोरता चाहिए वहां (lignin) लिगनिनमें बदल जाता है जो लकड़ीके कोषकी झिल्लीमें होता है। रासायनिक दृष्टिसे इसमें और (cellulose) सेलूलोज़में बहुत अंतर है, इसमें खिचकर बढ़नेका गुण नहीं है न इसमें से पानीही छन सकता है। नमकके तेज़ाब और फ़्लोरोसीनसे यह लाल रंग देता है। यह भी अनुमान किया जाता है कि लिगनिन कोई एक वस्तु नहीं है; इसमें कई चीज़ें मिली हुई हैं जो सेलूलोज़से बनी हुई हैं। लिगनिनके गुण वृक्षकेलिए बड़े उपयोगी हैं। उच्च श्रेणीकी वनस्पतिके किसी ख़ास हिस्सेके कोषकी झिल्ली (cutin) क्यिउटिनमें या सुबरीनमें भी बदल जाती है। क्यूटिन सबसे ऊपरवाली पत्तीके कोषोंमेंही पायी जाती है (suberine) सुबरीन उन कोषोंकी झिल्लीमें मिलता है जो (cork) कागमें बदल जाती हैं। इनका काम वृक्षके पानीको उड़जानेसे रोकना है क्योंकि इनमें से जल रिस नहीं सकता, और उन पुराने वृक्षोंको जिनका तना खोखला हो जाता है और जो बाहरकी मोटी छालपर ही खड़े रहते हैं यह (suberine) स्थिर भी रखती है, क्योंकि छालमें अधिकांश काग ही होता है। बहुधा देखा गया है कि जिन पेड़ोंमें कोषकी झिल्लीमें कोई रासायनिक परिवर्तन नहीं होता उनकी झिल्लीपर बालू या और पदार्थ जम जाते हैं। जब भूमिपर उगनेवाले वृक्षोंमें ऊपर

कहे हुए मामूली कोषकी झिल्लीके परिवर्तनसे काम नहीं चलता तो उसको मज़बूती देनेको तरह तरहके तन्तुओंमें तबदीली हो जाती है। यह बहुधा या तो कोषकी झिल्लीके चारों कोनोंकी मुटाईके रूपमें होती है या कोषकी झिल्ली लिगनिनमें बदल जाने और उससे ही मोटे हो जानेसे देखनेमें आती है या पानी और खाना ले जाने वाले अंगोंके रूपमें प्रकट होती हैं।

पहले दो तो केवल पौदेको खड़ा रखनेके कामके हैं। अगर हम सूरजमुखीके पेड़की एक कोमल डालीको तोड़कर और उसका एक पतला वर्क़ काटकर सूक्ष्मदर्शक यंत्रमेंसे देखें तो दिये हुए चित्रके मुताबिक अंग दिखाई पड़ेंगे इसके अतिरिक्त पानी ले जानेवाली नालियाँ भी वृक्षको खड़े रखनेमें बड़ी उपयोगी हैं। इन सब अंगोंको हम वृक्षकी ठटरी कह सकते हैं '

---

## फिटकिरी

[ ले० मुख़्त्यारसिहं, मेरट ]
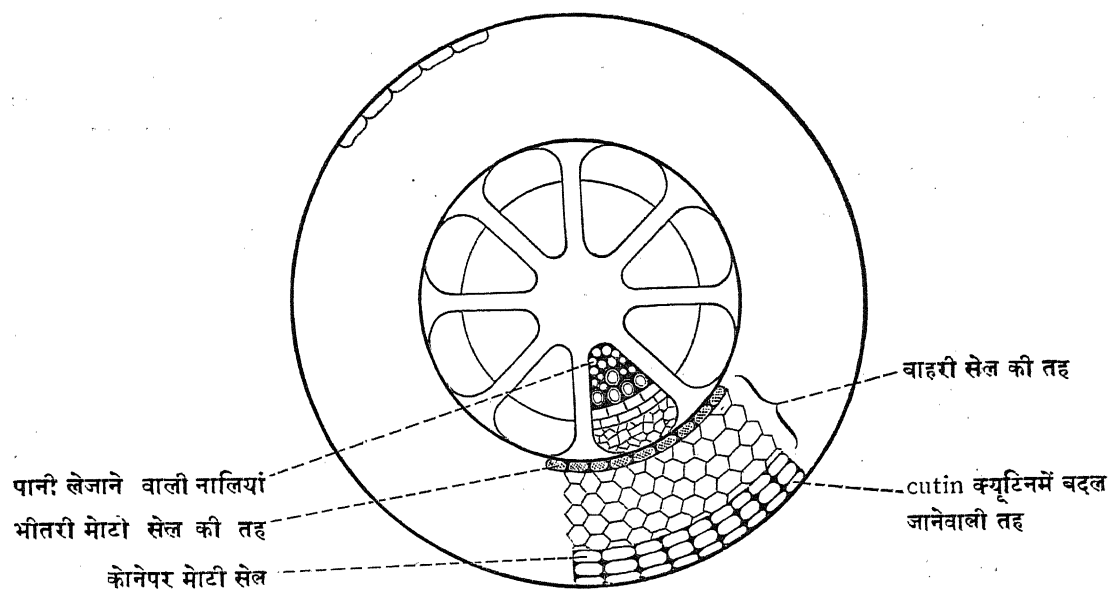
### चिकनी मिट्टीसे बनाना

चिकनी मिट्टीसे फिटकिरी बनानेके तरीक़े लिखनेसे पहले हम यह बता देना आवश्यक समझते हैं कि सभी चिकनी मिट्टीमें एलुमीना रहता है। इसमें गंधकका तेज़ाब डाल दें तो गंधित एलुमीना बन जायगा।

गंधित एलुमीनामें गंधित पोटाश या गंधित अमोनिया मिलानेसे फिटकिरी बन जाती है। यों तो हर चिक़नी मिट्टीसे फिटकिरी बनायी जा सकती है पर चिकनी मिट्टीसे कमसे कम इतनी फिटकिरी मिलनी आवश्यक है जिसमें मेहनत और क़ीमत निकल सके, इसलिए केवल ऐसी ही चिकनी मिट्टीसे फिटकिरी बनायी जाती है जिसमें एलुमीनाका अधिकांश उपस्थित हो। फ्रांस और इंगलिस्तानमें चिकनी मिट्टीसे फिटकिरी बनती है। पिछले दिनों भारतमें भी रोहतकके ज़िलेमें चिकनी

Industrial Chemistry औद्योगिक रसायन ]　　५

मिट्टीसे फिटकिरी बनायी जाती थी, किन्तु अब नहीं बनती। चिकनी मिट्टीको पहले आगपर भून लेते हैं। इससे दो लाभ होते हैं, एक यह कि जो घास फूस चिकनी मिट्टीमें होता है जल जाता है और मिट्टीमें वायुका संचार भली-भांति होने लगता है, दूसरे सब पानी जल जाता है। किन्तु आंच बहुत ही धीमी और थोड़ी देरतक पहुँचानी चाहिये, ऐसा न हो कि अधिक आँचसे चिकनी मिट्टी पककर ईंट हो जाय या इतनी कड़ी हो जाय कि और किसी काममें न आ सके। फिर इस मिट्टीको टुकड़े टुकड़े कर सीसेके मकानमें डाल देते हैं, अथवा साधारण कमरेमें भली भांति चारों ओर ऊपर और नीचे सीसेकी चद्दरें लगा देते हैं। इसी कमरेमें गंधक वा शोरा मिलाकर जलानेसे गंधकका तेज़ाब भाप बनकर सारे कमरेमें फैल जायगा और चिकनी मिट्टीके डले गंधित एलुमीना बन जावेंगे। ऐसा करनेसे चिकनी मिट्टी फूलने लगेगी और यदि मिट्टीके डले अच्छी तरह पोले होंगे तो यह भाप बड़ी शीघ्रतासे असर करेगी। कमरेमें सीसेका लगाना अथवा सीसेके कमरेमें यह कार्य्य करना इसलिए आवश्यक है कि गंधकका तेज़ाब सीसेके सिवा सब धातुओंको गला डालता है। यदि लोहे वा पीतल या और किसी धातुके पात्र काममें लाये जायँ तो न केवल वह पात्र ही शीघ्र ख़राब हो जायेंगे बल्कि फिटकिरी ख़ालिस मिलना असम्भव होगा। इस कमरेमें इन डलोंको पलटते रहना चाहिये जिसमें इस भापका खूब प्रभाव पड़ सके परन्तु पलटना उस समय उचित है जब यह भाप कमरेमें बिल्कुल न हो क्योंकि इसका धुआं शरीरकेलिए बड़ा हानिकर है।

विलायतमें इस कार्य्यकेलिए छोटी सी कल काममें लायी जाती है। एक लकड़ीके मूसलेमें छोटे छोटे लकड़ीके टुकड़े लगे होते हैं जो एक चक्रसे घूमते रहते हैं और इस प्रकार बिना किसी मानुषी सहायताके मिट्टीके टुकड़ोंको उलटते पलटते रहते हैं। जब गंधकका तेज़ाब भली भांति मिल जाय तो उन टुकड़ोंको पानीमें घोलकर नितार लो और फिर ऊपर कही हुई क्रियाके अनुसार गंधित पोटाश अथवा गंधित अमोनियां मिलाकर फिटकिरी बनालो। चिकनी मिट्टीको भूननेसे पहले भली भांति धो लिया जाय और रेत और कंकर दूर कर दिया जाय तो व्यय कम होता है।

सबसे उमदा फिटकिरी ऐसी चिकनी मिट्टीसे बनती है जिसमें लोहा बहुत कम हो। इसकेलिए चीनी मिट्टी अधिक उपयोगी होती है। यद्यपि गंधक और शोरेके धुएंके स्थानमें गंधकका तेज़ाब भी काममें लाया जा सकता है तो भी वह इतना उपयोगी नहीं होता, क्योंकि द्रवकी अपेक्षा भापके रूपमें अधिक प्रभावशाली होता है।

फ्रांसमें चिकनी मिट्टीको लेकर हल्की लाल आंचसे भून लेते हैं और फिर बारीक करके १·४५ गुरुत्वका गंधकका तेज़ाब लेकर आधी मात्रामें मिलाते हैं और इस भीगी हुई मिट्टीको भट्टीपर इतनी गर्मी देते हैं कि गंधकका तेज़ाब उड़ने लगे फिर उसको निकालकर कुछ दिनतक पड़ा रहने देते हैं जिसमें गंधकका तेज़ाब अपना खूब प्रभाव कर सके। फिर ऊपर कही हुई क्रियासे फिटकिरी बना लेते हैं। बहुतसे स्थानोंपर कुम्हारोंकी चिकनी मिट्टी लेकर साधारण लाल आगपर पकाते हैं और फिर बारीक करके सीसेके पात्रमें ६६ * बामी दर्जेका गाढ़ा गंधकका तेज़ाब मिलाते हैं। और दोनोंको भली भांति मिलाकर गरम करते हैं और खूब हिलाते रहते हैं। जब यह सूख जाता है तो

* दो प्रकारके गुरुत्वमापक यंत्र बरते जाते हैं एकको ट्वाडल कहते हैं और दूसरेको बामी यहां यह तातपर्य है कि बामीके गुरुत्व मापक यंत्रसे कच्चा ६६ हो।

ताज़ा खौलता हुआ पानी डालकर गंधित एलुमीना जो पानीमें घुल जाता है अलगकर फिटकिरी बना लेते हैं इस क्रियामें ६०० अंशकी गर्म्मी दी जाती है। इससे अधिक गर्म्मी हानिकर होती है।

भारतवर्षकेलिए फिटकिरी बनाना कोई नयी बात नहीं है। इसका वृत्तान्त अनेक स्थलोंपर आता है। फिटकिरी भारतवर्षके अनेक स्थानोंपर बनायी जाती थी जिनमें प्रसिद्ध यह हैं-रोहतक कालाबाग़, मध्यप्रान्त, भेरा, (लाहौर), अनन्तपूर (मद्रास), बिलोचिस्तान, बन्नू, बिलारी, कच्छ, देराग़ाज़ीख़ां, लडखाना, (शिकारपुर), मैदानीपहाड़ी. मेहार, शाहाबाद, ट्रावंकोर, इत्यादि। सब बातोंसे पाठक वृन्द यह भली भांति समझ सकते हैं कि फिटकिरी बनाना कितना सुगम कार्य्य है, और इसकेलिए जिन उपकरणोंकी आवश्यकता है वे भी भारतवर्षमें यथेष्ट मिलते हैं। पाठक इस ओर ध्यान दें तो भारतके सैकड़ों भूखे मनुष्योंका पेट भरे। कालाबाग़में एक स्थान चटाआ है जहाँ फिटकिरी बनानेका काम बहुत किया जाता था। यहां एक प्रकारकी मिट्टी जिसे ऐल कहते हैं २०० फ़ीट मोटी पायी जाती है। इसको झाऊकी लकड़ीके ढेरमें फूंकते रहते थे और इसपर और मिट्टी तथा लकड़ी डालते जाते थे। प्रायः यह ढेर एक मासतक जलता रहता था, जल चुकनेपर इसका रंग गुलाबी हो जाता था। इसको पानीमें घोलकर नितार लेते थे, और नितरे पानीको आगपर गाढ़ा करते थे। फिर इसमें एक प्रकारका नमक डालते थे जिसका नाम जनसन था, और जो रेह या कल्लरकी मिट्टीसे निकाल कर बनाया जाता था। इस तरह फिटकिरी बन जाती थी। यह नमक अवश्य भारतीय गंधित पुटाश या गंधित अमोनिया होगा। यह नमक अनिकतर टट्टी और गाड़ी गांवमें जो नमकके पहाड़ (Salt range) से ८ या ९ मीलकी दूरीपर है बनाया जाता है और फिटकिरी बनानेवाले इसको वहींसे ख़रीद लेते हैं। यदि पाठकवृन्द इस नमकका विशेष विश्लेषण करें तो संभव है कि गंधित पुटास या गंधित अमोनिया जैसी वस्तु भारतमें थोड़े दामोंपर मिल सके।

### फिटकिरीसे लोहा दूर करना

औषधियोंके प्रयोगमें तथा अनेक रासायनिक यौगिकोंमें लोहा मिली फिटकिरी काम नहीं देती। इसीलिए लोहाहीन वा अलोह फिटकिरी अधिक महँगी बिकती है। लोहा फिटकिरीमें किसी न किसी लवणके रूपमें रहता है, किन्तु ज्यों ज्यों पानीमें मिलाकर उड़ाया जाता है त्यों त्यों इसकी मात्रा कम होती जाती है। ३० बामी गुरुत्वपर जिस फिटकिरीमें १९·८ ग्राम प्रति लीटर लोहा होता है, ४२ गुरुत्वपर १३·२० और ४५ पर ११·५६ और ४७ पर ८·८ और ४९ पर ८·०४ रह जाता है। इससे यह प्रत्यक्ष है कि यदि अर्क अधिक गाढ़ा करके फिटकिरी दानेदार बनायी जाय, तो सब लोहा नीचे बैठ जायगा। कभी कभी लोहा ओषजिदके (oxide) रूपमें उपस्थित हो जाता है और फिर अर्कको गाढ़ा करनेपर भी दूर नहीं होता। इसका इलाज यह है, कि एक प्रकारकी लकड़ीकी छुपेटियाँ जिसको अंग्रेजीमें पोपलरवुड कहते हैं, अर्कमें डाल देते हैं। यह लकड़ी भारतवर्षमें कई जातियोंकी पायी जाती है, और इसकी सफ़ेद जातिको काशमीर देशमें फ्रांस कहते हैं। इसके डालनेसे भी लौह ओषजिद स्याह रंगका चूर्ण बनकर नीचे बैठ जाता है।

### सोडा फिटकिरी

जैसा हम ऊपर लिख चुके हैं, प्रायः फिटकिरी बनानेमें गंधित पुटास मिलायी जाती है, किन्तु यदि गंधित पुटासके स्थानमें गंधित सोडा डाला जाय, तो सोडा फिटकिरी बन जायगी। यह फिटकिरी अधिकतर काग़ज़ बनानेके काममें आती है। इसके अर्कको ३९ से ४० बामी कक्षा-

तक पकाकर सीसेकी चद्दरोंपर फैला देते हैं, और उस कमरेकी गर्मी कुछ कम रखते हैं। यदि दाना पड़ते समय इसमें पहले बनी हुई सोडा फिटकिरीका चूर्ण डाल दें, तो दाने जल्दी जल्दी बनने लगते हैं। बहुतसे स्थानोंमें ४० भाग गंधित सोडा और १०० भाग गंधित एलुमीना ५३ बामीका मिलाकर दाना जमा लेते हैं।

### अमोनिया फिटकिरी

हम इसका वृत्तान्त फिटकिरीके ही विषयमें लिख चुके हैं। यदि गंधित पोटाशके स्थानमें गंधित अमोनियाँ बरता जाय तो अमोनियाँ फिटकिरी बन जाती है। अधिकतर यह फिटकिरी एक प्रकारकी स्याह चिकनी मिट्टीसे बनायी जाती है, जिसमें बे गले लकड़ीके टुकड़े मिले होते हैं। यह चिकनी मिट्टी इंगलिस्तानके लंकाशायर प्रान्तमें बहुत निकलती है, और भारतवर्षमें भी बीकानेर आदि स्थानोंमें पायी जाती है, आगमें यह मिट्टी जल जाती है। इसको पहले धीमी आंचमें लकड़ी मिलाकर भून लेते हैं, और पोली हो जानेपर बड़े बड़े खुले बरतनोंमें डाल पानीमें घोलते हैं। फिर इसमें ३४ बामी गुरुत्वका गंधकाम्ल मिलाते हैं, और गंधित अलूमीना बन जानेके पीछे एक ओरसे अमोनियांकी भाप पहुँचायी जाती है। अमोनियांकी भाप उस समयतक मिलाते रहते हैं जब तक यह फिटकिरीमें परिणत होती रहे। फिर थोड़ी देर छोड़कर अर्क़को नितार आगपर उड़ाकर दानेदार बना लेते हैं। २१ मन स्याह चिकनी मिट्टीसे २७। मन अमोनियां फिटकिरी तैयार होती है।

### गंधित एलुमीना या गंधित फिटकिरी

अबतक रंगनेके कामोंमें फिटकिरीका ही प्रयोग होता था, किंतु अब गंधित अलुमीना बहुत काममें आने लगी है। यहां चिकनी मिट्टी आदिसे जैसा ऊपर फिटकिरीके अन्तर्गत लिखा जा चुका है, बनायी जाती है। किंतु अधिकतर फिटकिरीके पत्थरसे और एक प्रकारके और पत्थरसे जिसको बोक्साइट कहते हैं, बनायी जाती है। फ्रांस तथा जर्मनीमें अधिक बनती है। यदि फिटकिरी बनाते समय गंधित पुटास या गंधित अमोनिया न मिलाया जावे और इस अर्क़को गाढ़ा करके जमा लिया जाय तो दानेदार गंधित एलुमीना या गंधित फिटकिरी प्राप्त होगी। बोक्साइट (bauxite) तथा क्रीयोलाइट (cryolite) नामी पत्थरोंसे सोडा बनाया जाता है जिसके बनानेका प्रकार हम सोडेके अन्तरगत लिखेंगे। सोडा बनानेपर जो मिट्टी बच जाती है, उसमें अलुमीना नीचे रह जाता है। अबतक इस मिट्टीको फेंक दिया जाता था। किंतु अब इससे गंधित एलुमीना बना लेते हैं। इस गंधित एलुमीनामें न रेत होता है न लोहा। इसको बनानेकेलिए मिट्टीको सीसेके बरतनोंमें डाल ५३ ब० गुरुत्वका गंधकाम्ल डाल और भापकी गर्म्मी ८० से ९० कक्षा श०की पहुँचाकर जब सब अर्क़ गंधित एलुमीना बन जाता है तो नितारकर जमा लेते हैं। यदि वाक्साइटसे गंधित एलुमीना बनाना हो तो उसको पहले खूब बारीक पीस लो और उसमें करबनित सोडा मिलाकर तेज़ आंच दो और दोनों वस्तुओंको मिलाते रहो, ५ घंटे इस प्रकार करनेके पश्चात् इसको पानीसे धोना आरम्भ करो। इस धोवनको जो सबसे गाढ़ा होता है कुछ और गाढ़ा कर गरम करते हैं और एक ओरसे कर्बन द्विओषिद पहुंचाकर छोड़ देते हैं। तो यह शुद्ध एलुमीना बन जाता है फिर इसमें गंधकका तेज़ाब मिलाकर गंधित एलुमीना बना लेते हैं।

बहुतसे स्थानोंपर पहले बोक्साइटको भूनकर बारीक पीस लेते हैं, और बड़े बड़े तालाबोंमें १·४५ गुरुत्वका दाहक सोडा (कास्टिक सोडा) भरकर यह चूर्ण डालते

जाते हैं, और हिलाते रहते हैं। फिर वाष्पके द्वारा जिसका दबाव ७०—८० प्रति वर्ग इंच हो दो तीन घंटेतक गरम करते हैं, तत्पश्चात् इस अर्कको दूसरे तालाबोंमें ले जाते हैं, और इसमें पानी मिलाकर उसका गुरुत्व १·२३ कर लेते हैं, और फ़िल्टर प्रेसमें दबाकर साफ़ साफ़ अलग कर लेते हैं, इस तरह करनेसे एक प्रकारकी लाल मिट्टी प्राप्त होती है, जो केवल फेंक दी जाती है, और उसका कोई उपयोग ज्ञात नहीं हुआ जब इस अर्कमें अनार्द्र एलुमीनियम ( एलुमीनियम हाइड्रौक्साइड ) जो पहिला बना हुआ मौजूद है, डालकर हिलानेसे एलुमीना बैठ जाता है, और फिर गंधकाम्ल मिलाकर गंधित एलुमीना बना लेते हैं।

गंधित एलुमीनामें भी लोहा मिला होता है, और उसको अनेक प्रकारसे अलग करना पड़ता है हम नीचे कुछ क्रियायें लोहा दूर करनेकी लिखते हैं।

( १ ) बौक्साइटको यदि औकज़ैलिक एसिडमें घोलकर भूना जाय तो लोहा बहुत कम हो जाता है।

(२) यदि पोटास सोडा मग्नएलुमीना या इसी प्रकार कोई और लवण गंधित एलुनियमके अर्क़में गरमकर ठंडी अवस्थामें मिला दें, तो ख़ालिस एलुमीना नीचे बैठ जायगा, और लोहा पानीमें रह जायगा।

(३) गंधित एलुमीना लेकर इसमें इतना पानी डालो कि वह २० ब० तक गाढ़ा हो जावे फिर सीसे लगे लकड़ीके बर्तनमें भरकर पुटाशियम फ़ैरोसाइनाईड डालो, तो सब लोहा प्रूशियन बिल्यू ( यह एक प्रकारका प्रसिद्ध नीला पुड़ियाका रंग है, और अनेक वारनिशोंमें काम आता है ) के रूपमें नीचे बैठ जायगा, जबतक यह नीचे बैठता रहे, पुटेशियम फ़ैरोसाइनाईड डालते रहो, किंतु ऐसा करनेमें जैसा पाठक स्वयम् अनुमान कर सकते हैं, अर्क़ बहुत पतला रखना पड़ता है, तथा कभी कभी यह अर्क़ साफ़ करनेकेलिए पंद्रह दिनतक रखना पड़ता है, इसलिए जहाँ लकड़ी सस्ती हो, वहीं यह काममें लाया जा सकता है।

(४) सीसा द्विअम्लजिद (lead dioxide) इस प्रकार बनाया जाता है, कि ३६ ब० गुरुत्वका शोरेका तेज़ाब ७५ भाग लेकर १०० भाग ठंढे सिंदूरमें मिलाते हैं, मिलानेसे सिंदूरका रंग भूसला हो जाता है, कभी कभी स्याह भी हो जाता है, किन्तु स्याहकी अपेक्षा भूसला अधिक अच्छा होता है, फिर पानीसे धोकर तेज़ाबका प्रभाव कम कर देते हैं, इसी प्रकार सीसा द्विअम्लजिद संगे जराहतसे जिसको अंग्रेज़ीमें लिथार्ज ( litharge ) कहते हैं, बनता है। संगे जराहत दो भाग लेकर एक भाग साधारण नमक मिला थोड़ा सा पानी डाल खूब रगड़ो जब अच्छी प्रकार सफ़ेद हो जाय तो इसको एक बरतनमें डालकर धोनेके चूर्णमें जिसको अंग्रेज़ीमें ब्लिचिङ्ग पाऊडर ( bleaching powder ) कहते हैं, भले प्रकार मिलाकर इतनी देरतक आगपर पकाओ, कि उसका रंग भूसला हो जाय, फिर इसमें धोनेका चूर्ण और मिलाकर कई बार धोकर नितारकर साफ़ करो, दोनों उपर्युक्त प्रकारमेंसे चाहे जिस प्रकार द्विअम्लजिद सीसा बनाया गया हो, उसको गीला काममें लाना अच्छा होता है, जब इस द्विअम्लजिद सीसेको फ़ैरोसाइनाईड आफ़ पोटासकी भांति अर्क़में डालनेसे सब लोहा लोहित सीसा बनकर नीचे बैठ जायगा। इसी प्रकार सीसा अम्लजिदके स्थानमें मांगलद्विअम्लजिद काममें ला सकते हैं।

### किसी मिट्टी अथवा पत्थरमें एलूमोनियमकी मात्रा जाननेकी रीति

किसी चिकनी मिट्टी अथवा पत्थरमें पृथक करण या विश्लेषण द्वारा हम यह जान सकते

हैं, कि कितनी मात्रा किस पदार्थकी उसमें उपस्थत है, ऐसा करनेसे कार्य्यकर्ता यह भली भांति समझ सकता है, कि किस मिट्टी वा पत्थरसे फिटकिरी बनाना लाभप्रद होगा, यद्यपि विशेष रूपसे इसका वृतान्त यहाँ निरर्थक है तथापि हम वह बातें लिखते हैं, जिनका जानना सुगम और आवश्यक है।

चिकनी मिट्टी वा चीनी मिट्टीमें प्रायः १० चीज़ें पाई जाती हैं। (१) पानी (२) पानीकी वह मात्रा जो मिट्टीमें सुखानेपर भी बनी रहती है, (३) ऐन्द्रिक पदार्थ, (४) एेलूमीनियम, (५) लोह अम्लजिद, (६) न घुलनेवाले पदार्थ, (७) चूना कलई, (८) मग्न (६) पोटाश (१०) सोडा।

(१) यदि मिट्टीको लेकर तोलें और फिर १२० श० कक्षाकी गर्मी पहुँचावें और फिर तोलें तो जो दोनों परिमाणोंमें अन्तर होगा वह पानीकी मात्रा होगी, (२-३) इस सूखी हुई मिट्टीको लेकर यदि सुर्ख़ आगपर भूनें तो ऐंद्रिक पदार्थ और प्राकृतिक जल जो सूखनेपर भी उपस्थित रहता था उड़ जायगा और अब तोलनेपर इसकी मात्रा ज्ञात हो सकेगी। (६) इस भुनी हुई मिट्टीको लेकर अच्छी प्रकार पीसो, और इसमेंसे एक ग्राम लेकर उसमें ४ या ५ ग्राम ख़ालिस बिल्कुल सूखा हुआ कारबनित सोडा मिलाकर एक प्लाटीनमकी कुठालीमें गरम करो, और धीरे धीरे खूब लाल करनेपर यह मिट्टी दो पदार्थोंमें फट जायगी, एक ओर रेतके नमक ( *silicates ) और एलूमीनियम लवण होंगे, दूसरी ओर चूना कलई मग्न और लोह अम्लजिद होंगे, जब यह मिट्टी बिल्कुल गलनेके करीब हो, तो उसको तुरन्त पानीमें डालकर ठंडा करो, इस तरह करनेसे कुठालीमें लगा सब मसाला सुगमतासे निकल आयेगा, अब इसको लेकर चीनी मिट्टीके प्यालेमें रक्खो और उसमें १५ से २० भागतक नमकका हल्का तेज़ाब मिलावो, जब सब पदार्थ इस तेज़ाबमें घुल जायं तो कुठालीको लेकर धोवो और धोवनको भी इसी अर्क़में डालकर आगपर उड़ाकर सुखा लो फिर थोड़ेसे नमकके तेज़ाबके बहुत हलके घोलसे धोकर फ़िल्टर करो और भूनकर तोलो, तो जो तोल होगी वह रेत और न घुलनेवाले पदार्थकी होगी, उपरोक्त परीक्षामें फ़िल्टर करनेसे जो पानी निकला है, उसका १ भाग लेकर ब्रोमीनका पानी (ब्रोमीन वाटर) मिलाकर आगपर उबालो और धीरे धीरे अमोनियाँका पानी मिलाना आरम्भ करो,इसमें और पानी मिलाकर फ़िल्टर करो, और जो ठोस पदार्थ प्राप्त हो उसको आगपर सुखाकर तोलो तो यह लोहा अम्लजिद और एलोमीनाका परिमाण होगा इसमेंसे लोहेका भाग अलग किया जा सकता है, अथवा पहिलेसे ही जो उपरोक्त (६) में पानी प्राप्त हुआ है, उसमेंसे थोड़ा सा गंधकका तेज़ाब मिलाकर इकट्ठा कर लो और तबतक आगपर उड़ावो कि उसमेंसे सफ़ेद धुवाँ निकलने लगे तब इसमें जस्त और पानी मिलाकर पुटेशियम परमेंगीनेट डालकर लोहेका भाग ज्ञात करो लोहा प्रायः बहुतही कम मात्रामें होता है इस कारण उसको अलग निकालना निरर्थक होगा साधारण कार्य्यकेलिए केवल एलोमीनियाँ और लोह अम्लजिदकी मात्रा मिली हुई ही ज्ञात करना पर्य्याप्त होता है, (७) जो अर्क़ लोहा और एलोमीनिया बनाते समय प्राप्त होता है उसमें यदि एमोनियां औक्ज़ेलेट (oxalate) मिलादें तो चूना सब नीचे बैठ जाता है, (८) फ़िल्टर करके चूना निकालनेके पश्चात् यदि इसमें प्रस्फुरित सोड़ा मिला दें, तो मग्न नीचे बैठ जाता है (९-१०) सोडा और पोटासका पता लगाना बड़ा ही मंहगा पड़ता है और न कोई उससे अधिक लाभ होता है इसलिए उसका यहाँ पता लगाना

* Silicate सिलीकेट

निरर्थक समझते हैं। पोटास तथा सोडेके अन्तरगत लिखेंगे।

उपरोक्त क्रियाके अतिरिक्त यदि हम थोड़ी सी मिट्टी अथवा पत्थर लेकर उसकी फिटकरी बनाकर देख लें तो अधिक सुगम होगा। उदाहरणतः जिस मिट्टी वा पत्थरमें फिटकरीकी मात्रा देखनी है उसमेंसे ५० ग्राम लो और इस मिट्टीको चीनी मिट्टी या प्लाटीनमकी कुठालीमें रखकर भून लो जब मिट्टीकी रंगत लाल हो जाय, तो कुठालीको उतारकर तोलो तो जो अन्तर इसकी मात्रामें पड़ गया है वह ऐन्द्रिक पदार्थ पानी आदि आगमें जल जानेवाले पदार्थोंकी मात्रा है, इस भुनी हुई मिट्टी में १०० ग्राम ६० ब० गुरुत्वका गंधकाम्ल डालकर खूब हिला दो, और इसको आगपर इतना गरम करो, कि वह सूखकर सख्त हो जाय, इस प्रकार सब एलोमीनियम गंधित एलोमीनियम बन जायगा अब इसको लेकर उबलते हुए पानीमें मिलावो, और फ़िल्टर करो, फ़िल्टर किये हुए पानीको आगपर इतना गाढ़ा करो, कि वह ३५ ब०गुरुत्वका हो जाय, अब इस अर्क़में गंधित पुटास या गंधित अमोनियां मिलाकर फिटकिरी अलग कर लो।

Alum cake ( एलम केक ) तईकी फिटकरी

साधारण काग़ज़ बनानेमें इस प्रकारकी फिटकिरी बहुत काममें लाई जाती है, इसमें साधारण गंधित एलोमीनियम और रेत होता है, अधिकतर इंगलिस्तानमें बनती है, और चीनी मिट्टी और अन्य प्रकारकी मिट्टियोंसे बनाई जाती है। पहिले चीनी मिट्टीको खूब बारीक पीसकर और ढले हुए लोहेके कढ़ावमें डाल देते हैं, और गरम करके ५३ ब० गुरुत्वका गंधकका तेज़ाब डालते हैं गंधकका तेज़ाब ५३ गुरुत्वका मिट्टीकी अपेक्षा ड्योढ़ा डाला जाता है, फिर इसको खूब हिलाते हैं, और आगपर पकने देते हैं, जिसमें गंधकका तेज़ाव अपना प्रभाव भली भांति कर सके फिर सख्त होनेपर सांचेमें डाल देते हैं। यह तईकी फिटकिरी बन जाती है। और काग़ज़ बनानेके काममें लाई जाती है।

(२) ५० भाग ५० ब. गुरुत्वका गंधकका तेज़ाब लो, और उसको गरम करके ४० भाग बोक्साइट नामी (bauxite) पत्थर चूर्ण करके धीरे धीरे मिलादो, शीशेके बरतनोंमें खूब पकाकर गाढ़ा कर सांचोंमें डाल दो।

---

# बिजलीकी रोशनी

[ले० जगद्विहारी सेठ बी. एस–सी. इंगलड]

हमारे पाठक डायनेमो अर्थात् बिजली पैदा करनेवाले इंजनके नामसे अवश्य परिचित होंगे। यदि उसका प्रादुर्भाव न हुआ होता तो कदाचित् आजदिन हम बिजलीकी रोशनीसे लाभ न उठा सकते। डायनेमोके आगमनके पहले भी इस बातका ज्ञान अवश्य था, कि विद्युत्के द्वारा बड़ी तेज़ रोशनी की जा सकती है, परन्तु सुधीर अर्थात् समवेगमें आनेवाली और पर्याप्त बलवाली धारा मिलनेका तबतक कोई उपाय न था।

विद्युत्यंत्रोंसे प्रयोग करने वालोंने बिजलीकी चिनगारीकी आभाका अवश्य अवलोकन किया था; और वे लोग भी, जिनको कि बैटरियोंसे काम करना पड़ता था, इस बातको जानते थे कि यदि कई एक विद्युद्घट जोड़कर, उनके सिरे दो तारोंसे मिला दिये जायँ, तो तारोंका यह सम्बन्ध तोड़ते समय चिनगारी निकलती है, अथवा किसी बैटरीके सिरेसे जुड़े हुए दो तारोंका केवल स्पर्शमात्र कर, स्पर्शको तोड़ते समय अवश्य एक चिनगारी निकलती है।

Electricity विद्युत शास्त्र ]

उन्नीसवें शतकके प्रारम्भ कालमें लण्डनके रायल इंस्टीट्यूशनमें एक बड़ी भारी बैटरी थी। इस बैटरीमें दो हज़ार वोल्टाइक विद्युत् घट थे; और सर हम्फ्रेडेवी (Sir Humphrey Davy) और उनके सहायक तथा उत्तराधिकारी माइकेल फैरेडे (Michael Faraday), इससे काम करते थे। इस बड़ी बैटरीका दो तारोंसे सम्बन्ध कर, सर हम्फ्रेडेवीने लक्ष्य किया कि जब इन तारोंका सम्बन्ध तोड़ दिया जाता था, और यह एक दूसरेसे इस प्रकार हटा दिये जाते थे कि उनके बीचमें थोड़ा ही सा, अंतर रह जाता था तो केवल एक बड़ी चमकीली चिनगारी मात्र ही न निकलती थी वरन् एक लगातार अग्निशिखा सी उत्पन्न हो जाती थी। यह अग्निशिखा इतनी ज़्यादा गरम थी कि उसके कारण तारोंके सिरे तुरंत ही पिघल गये। इस-लिए डेवीने तारोंके सिरोंपर कोयलेके टुकड़े बांध दिये; और इनको एक दूसरेसे छुलाकर, फिर थोड़ा सा अलग कर देने से, वह एक बड़ी भारी सभाको बड़ी चमकीली, चौंधिया देनेवाली रोशनी दिखला सका।

इन प्राथमिक प्रयोगोंमें डेवीने अंगार (कोयले) की घुंडियां बराबर बराबर क्षितिज समसूत्र रेखामें, रक्खी थीं; और गरम हवाकी वजहसे अग्निशिखा अंगार घुंडियोंके बीच ऊपरको उठकर मेहराब सी बनाती थी। इस मेहराबकी वजहसे कोई कोई इसको प्रकाशकी आर्क (arc=चाप) या चापके नामसे पुकारने लगे। आजतक इस प्रकारके प्रकाशको आर्क प्रकाश (arc light) कहते हैं, यद्यपि जब अंगार या कर्बन खण्ड ऊपर नीचे रक्खे जाते हैं, जैसे कि आजकल वे बहुधा रक्खे हुए होते हैं, तब इस चाप या मेहराबका (arc) नाम निशान भी नहीं होता। काशी नागरी प्रचारिणी सभाके वैज्ञानिक कोषमें इसका पर्यायवाचक वोल्ट विद्युत् प्रकाश न जाने क्या समझकर लिखा गया है। किसी उपयुक्त शब्दकी अनुपस्थितिमें हम इसे चाप प्रकाशके नामसे अभिरहित करेंगे।

इस बातका पता जल्दी ही चल गया कि जब धारा एक अङ्गार घुण्डीसे दूसरीको जाती है, तब वह अङ्गारके बहुतही छोटे छोटे कण अपने साथ लेती जाती है, वास्तवमें घुण्डियोंके बीच अंगारकी वाष्पका एक पुल बंध जाता है। यदि दोनों अंगार बिंदु बहुतही निकट लाये जायँ, परन्तु परस्पर स्पर्श न करने पावें, तो चाप नहीं बनता, क्योंकि धारा इस थोड़ेसे अन्तरमात्रको भी पार नहीं कर सकती। परन्तु जैसे ही अंगार घुंडियोंका परस्पर स्पर्श हुआ, वैसेही उनकी शिखाएं आंचसे लाल हो गयीं, क्योंकि वैद्युत् धाराके वहन मार्गमें वे बड़ा भारी प्रतिरोध खड़ा करती हैं। यदि ये लाल शिखाएं बहुत थोड़ी सी अलग कर दी जावें, तो बीचकी जगह अंगार वाष्प-से परिपूर्ण हो जाती है, और तब धारा इस वाष्पीय पुलपर होकर पार जा सकती है। परन्तु इस अवस्थामें भी धाराके रास्तेमें, जो प्रतिरोध होता है वह इतना अधिक होता है कि उसके कारण अंगार शिखाओंका ताप-मान बहुत ही अधिक हो जाता है, जिसकी वजहसे बड़ा तीव्र श्वेत प्रकाश निकलने लगता है। यही श्वेत प्रकाश हमारे आर्क लैम्प, चाप दीपकमें दिखलायी पड़ता है।

डेवाने अपने प्रयोगोंमें (wood charcoal) लकड़ीके कोयलेकी छड़ियों या पेंसिलोंका व्यवहार किया था, जो इतनी अधिक उष्णताके कारण शीघ्र ही जल जाती थीं। परन्तु अन्य प्रयोगकर्त्ताओं ने उसकी जगहपर कड़े गैस-कोक (gas-coke) या (coke-carbon) कोक-कर्बनका व्यवहार किया, जो बड़ा ही लाभदायक सिद्ध हुआ। आजकल महीन पिसी हुई कर्बनकी लेईको पानीके (hydraulic pressure) दबाव द्वारा ढालकर पेंसिल बनाते हैं,

तत्पश्चात् उनपर कुछ और क्रियाएं करके वे श्वेत तापमें रक्खी जाती हैं। श्वेत तापसे निकलनेके बाद लम्पोंमें लगायी जाती हैं।

यह स्पष्ट है कि निरन्तर और सुधीर अर्थात् सदा एक ही तेज़ीका, वैद्युत् चाप देनेवाला लैम्प इस प्रकारका नहीं हो सकता कि उसमें कर्बन पेंसिलोंको पकड़नेकेलिए दो ग्राहक मात्र लगे हों। पहले तो, उस समयतक कोई चाप बन ही नहीं सकता जबतक कि शिखाएं एक दूसरेसे छुलाई जाकर फिर अलग न की जायं। इस क्रियाको "चापका बनाना" कहते हैं। दूसरी बात यह है कि कर्बन पेंसिलें जलती रहती हैं, एक पेंसिल दूसरीसे दुगनी तेज़ीके साथ जलती है। इसलिए कोई ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि जो कर्बन पेंसिलोंको आगे हटाती रहें और दोनोंके बीच एक स्थायी अन्तर क़रीब क़रीब एक इंचके आठवें हिस्से भरका रक्खें। हाल में ही इस बातका भी पता लगा है कि कर्बन पेंसिलोंका ( composition ) संगठन बदल देनेसे, चापकी लम्बाई आध इंच-तक की जा सकती है।

पहले जो चाप लम्प बनते थे उनमें घटीकर्म के ( घड़ीके कल पुरज़े–clock work ) द्वारा सब आवश्यक कार्य कराये जाते थे, अर्थात् चापको बनाना और कर्बन पेंसिलोंको इस प्रकारसे सरकाते रहना कि पेंसिल-शिखाओंके बीच सदा ठीक अन्तर रहे, इन कामोंको करानेकेलिए लम्पमें घड़ीके समान कलपुरज़े लगा दिये जाते थे, जो चाबी देनेपर चलने लगते थे और उपयुक्त काम करते रहते थे। परन्तु आधुनिक लम्पोंमें घटीकर्मके स्थान ( electro-magnet ) विद्युच्चुम्बकसे काम लिया जाता है। इसके बनानेकी विधि जानने और इससे विशेष परिचय प्राप्त करनेकेलिए विज्ञान भाग ३ संख्या १ पृष्ठ ३०, चित्र नं० ३ देखिए।

विद्युच्चुम्बककी कुण्डलीको ( solenoid ) सर्पिलचुम्बकके नामसे पुकारते हैं। इस सर्पिलचुम्बककी आकर्षण शक्ति उसमेंसे प्रवाहित धाराके प्राबल्यके अनुरूप होती है, और यदि भीतरी लोहेका टुकड़ा अर्थात् लोह "गर्भ" ( core ) इस प्रकारसे रक्खा जाय कि वह ऊपर नीचे सरकनेमें स्वतन्त्र हो, तो सर्पिलचुम्बककी धारा कम या ज़्यादा होनेसे लोह गर्भ भी नीचे ऊपर होता जायगा। जिस प्रकारसे एक पिचकारीमें बाहिरी बेलनाकार खोखला होता है और एक उसका 'डट्टा' उसी प्रकार सर्पिलचुम्बक और लोह गर्भमें भी इसी खोखल और डट्टेका सम्बन्ध रहता है। यह स्पष्ट है कि यदि एक कर्बन पेंसिलका इस लोह गर्भसे सम्बन्ध कर दिया जाय तो वह पेंसिल ऊपर या नीचे होती रहेगी, जैसे जैसे सर्पिलचुम्बककी धारा बढ़ेगी या घटेगी। अब यदि दोनों कर्बन शिखाएं एक दूसरेको छूती हुई रक्खी जायं और उनमेंसे होकर धारा सर्पिलचुम्बकमें जाय, तो पहिले तो धारा एक शिखासे दूसरी शिखाको सुगमतासे जा सकेगी, क्योंकि दोनों शिखाएं परस्पर स्पर्शमें हैं, परन्तु ज्यों ही यह धारा सर्पिलचुम्बकको उत्तेजित करेगी लोह गर्भ ऊपरको उठ जायगा, और इस प्रकारसे चाप बन जायगा। यदि धारा बन्द कर दी जाय, तो सर्पिलचुम्बक गर्भको खींचना भी बन्द कर देता है, और कर्बन फिर नीचे गिर जाता है; परन्तु जैसे ही धारा फिर खोल दी जाती है वैसे ही चाप फिर बन जाता है। सर्पिलचुम्बकका यह व्यवहार कर्बन शिखाओंके बीचका अन्तर भी विधिवत् रख सकेगा। यदि कर्बन बहुत पास पास हो जाँयगे धारा एक शिखासे दूसरी शिखातक अधिक सुगमतासे जा सकेगी, और इसलिए सर्पिलचुम्बकमें अधिक धारा प्रवाहित होनेके कारण गर्भ ऊपर उठ जायगा और कर्बन अलग अलग हो जाँयगे। इसके विपरीत यदि कर्बनोंके बीचका

अन्तर ज़्यादा हो गया हो, तो धाराको एक शिखासे दूसरी शिखातक पहुंचनेमें अधिकतर प्रतिरोधका सामना करना पड़ेगा, और इसलिए सर्पिल चुम्बकमें धारा कम पहुंचनेके कारण गर्भ गिर पड़ेगा और कर्बन फिर पास पास हो जायँगे।

अब इस बातका स्थूल ज्ञान हो गया होगा कि चाप लम्पके मुख्य सिद्धान्त क्या हैं। व्यवहारमें बहुधा दोनों कर्बन सर्पिलचुम्बकों और गर्भोंद्वारा संयममें रक्खे जाते हैं। इन सर्पिलचुम्बकोंमें बहुधा दोहरी दोहरी कुण्डलियां रहती हैं, एक कुण्डली तो 'श्रेणीमें' अर्थात् धाराकी मुख्य राहसे सम्बद्ध रहती है, और दूसरी 'समानान्तरमें' सम्बद्ध होती है। परन्तु प्रधान और मनोरञ्जक बातें इतनी ही हैं कि लम्पकी कैंची (switch) या सूचको बन्द कर देनेसे लम्पमें चाप स्वयमेव बन जाता है, और धारा सर्पिलचुम्बकोंमें पहुंचकर कर्बनोंके बीचका अन्तर ठीक रखती है, जिससे कि चाप सुधीर अर्थात् एक रूप रहता है। यदि चाप लम्पमें सनसनाहट की आवाज़ होने लगे तो समझना चाहिए कि कर्बन शिखाएं बहुत ही पास पास हो गई हैं; और यदि उसमें भभक या धधक सी उठने लगे अथवा फड़फड़ाहट सी होने लगे और बुझने लगे, तो समझना चाहिये कि कर्बनों में अन्तर अधिक हो गया है। चाप लम्प जब पहले पहल काममें लाये गये थे तो बहुधा इस प्रकारके तमाशे देखनेमें आते थे, परन्तु आजकलके लम्प बहुत ही ठीक तरहसे जलते हैं।

चापलम्पका प्रकाश बहुत ही तीव्र होता है। यदि चापलम्पको परवलयी (parabolic) शीशेके (focus) नाभिस्थानमें रख दें तो बहुत ही ज़्यादा तीव्र प्रकाश मिल सकता है। इस प्रकार हमें बड़ी ही अच्छी सर्च लाइट (search light) मिल सकती है। वास्तवमें, कर्बनोंका परिमाण, और इस प्रकार धाराकी मात्रा, बढ़ाकर हम प्रकाशको जितना चाहें उतना बिना किसी अन्तके—तीव्र बना सकते हैं। यहाँतक प्रस्तावित किया जा चुका है कि यदि चाहें तो हम इतना तीव्र चाप प्रकाश उत्पन्न कर सकते हैं जो मङ्गलग्रहसे भी दिखलाई दे सके।

आजतक संसारमें जितने भी कृत्रिम प्रकाश आविष्कृत हुए हैं, उन सबमें चाप प्रकाशकी ही पहुंच सूर्य प्रकाशके निकटतम हुई है। इसीलिए बहुत पहले ही फ़ोटोग्राफ़रने अंधेरेमें सूर्यास्तके उपरान्त अथवा कुहरे या बादलोंके होते हुए, तसवीर खींचनेकेलिए बिजलीको अपना सहायक बनाया। मैग्नेशियमका फ़ीता (magnesium ribbon) अथवा फ़्लैश-लाइट पाउडर (flash-light powder) के प्रकाशमें भी यह गुण होता है कि उसकी सहायतासे तसवीर ली जा सकती है। परन्तु इन प्रकाशोंमें ली गयी तसवीरोंमें छाया और आलोकके बीचमें बहुत ही अधिक वैषम्य हो जाता है जिसके कारण तस्वीरमें एक अजीब झलझलाहट सी मालूम पड़ती है। पहिले पहल चापलम्पके प्रकाशमें ली हुई तस्वीरोंमें भी इसी प्रकारका दोष रहता था। परन्तु अब एक बड़े भारी घिसे शीशेके (ground glass) परदेके पीछे कई एक चापलम्पोंको इस प्रकारसे क्रमानुसार रखते हैं कि इस व्यवस्थासे दिनकी रोशनीकी बहुत ही अच्छी नक़ल हो जाती है। इस प्रकारके प्रकाशमें ली हुई और दिनमें ली हुई तसवीरोंमें बड़े बड़े निपुण चित्रकार भी कोई भेद नहीं बतला सकते।

किसी अकेले चापलम्पकी परछांई बहुत ही विषम होती है। इसलिए बहुधा ऐसे लम्प जोड़ोंमें लगाये जाते हैं, जिससे कि एक लम्पकी परछांईको दूसरे लम्पका प्रकाश निराकृत कर सके।

एक कुतूहलकी बात यह है कि दोनों कर्बन पेंसिलोंपर धाराका जुदा जुदा असर पड़ता है।

यदि प्रारंभमें दोनों पेंसिलें नुकीली हैं, तो हम देखेंगे कि जल्दी ही अन्तर्नायक (leading in) कर्बनकी नुकीली शकल जाती रही है और ज्वालामुखीके मुखकी भाँति उसके बीचोंबीच एक गड्ढा हो गया है, परन्तु वहिर्नायक (leading out) कर्बनकी शिखा अभी भी नोकीली है, यद्यपि उसका क्षय अवश्य हो रहा है। दूसरी कुतूहलजनक बात यह है कि दोनों कर्बन शिखाओंका तापमान भिन्न भिन्न है। अन्तर्नायक कर्बनके मुखके पासका तापमान प्रायः ३५००° शतांश होता है, परन्तु वहिर्नायक कर्बनका तापमान प्रायः इससे एक सहस्र अंश कम होता है। कर्बनोंके बारेमें ये बातें उन्हीं लम्पोंमें लागू हैं जो कि निरन्तरगामी धारा वाले (continuous current) डायनमो द्वारा "खिलाये" जाते हैं, अर्थात् जिनमें इस प्रकारके डायनमोसे आयी हुई विद्युत्धारा पहुंचती है। यदि अन्योन्यान्तर (alternating) गामी धारावाले डायनमोसे काम लिया जाय तो दोनों कर्बनोंपर एकही सा असर पड़ेगा, क्योंकि दोनों ही बारी बारीसे अन्तर्नायक और वहिर्नायक सिरे होते रहेंगे।
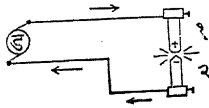
दिये हुए चित्रमें कर्बन नं० १ जिससे धारा निकलकर कर्बन नं० २ को पहुंचती है अन्तर्नायक वा भीतर लानेवाला सिरा, कहलाता है और है नं० २ वहिर्नायक वा बाहर लेजानेवाला सिरा कहलाता है। अन्यान्योन्तरगामी धारासे यह क्रम सदा बदलता रहता है। एकवार नं० १ अन्तर्नायक होता है, दूसरी बार नं० २, फिर नं० १ इत्यादि।

---

# ग्रहोंकी दूरी कैसे नापी जाती है ?

[ले० महावीरप्रसाद श्रीवास्तव, बी. एस्-सी., एल.टी.]

पिछले लेखमें यह कहा गया था कि १° (एक अंश) से छोटे कोणोंकी ज्या उस भिन्नके समान होती है जिसका अंश उस कोणका मान है और हर एक त्रिज्याकोण-का मान। यह सिद्ध कर देनेके पीछे वह रीतियां बतलायी जायँगी जिनसे चन्द्रमा और मंगलकी दूरी नापी गयी है।
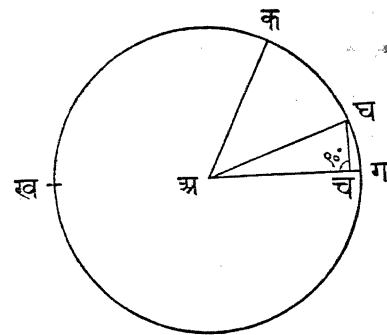
चित्र नं० १

कल्पना कीजिए कि क ख ग एक वृत्त है जिसका केन्द्र 'अ' है और जिसका चाप (परिधि-खण्ड) 'कग' अर्द्ध व्यास (त्रिज्या) के समान है। परिभाषानुसार क अ ग कोण एक त्रिज्या कोणके समान हुआ। इसी कोण में एक बहुत छोटा कोण घ अ ग है। घ बिन्दुसे एक लम्ब अ ग पर गिराया जाय तो घ अ च त्रिभुज समकोण होगा, जिसका कर्ण अ घ है। परिभाषानुसार घ अ ग कोणकी ज्या $\frac{\text{घच}}{\text{अघ}}$ के समान है। अब यदि घ अ ग कोण बहुत छोटा हो तो लम्ब घ च और चाप घ ग एक दूसरेके इतने पास हो जाते हैं कि इनकी लम्बाइयोंमें कुछ भिन्नता नहीं मालूम होती

Astronomy ज्योतिष ]

और यह मानकर हिसाब लगानेमें कुछ अशुद्धि नहीं पड़ती। ऐसी दशामें घ अ ग कोणकी ज्या $\frac{गघ}{अघ}$ के समान समझ लेनेमें कुछ भी अशुद्धि नहीं है। यह पहले ही माना गया है कि अ घ = कग, इसलिए घअग की ज्या = $\frac{गघ}{कग}$। यह प्रत्यक्ष है कि केन्द्रपर गघ और कगके सामनेके कोणोंकी वही निष्पत्ति है जो गघ और कग चापोंकी, इसलिए $\frac{गघ}{कग} = \frac{गअघ}{कअग} = \frac{गअघ}{एक\ त्रिज्या\ कोण}$। इस अनुपातमें यह ध्यान रखना चाहिए कि दोनों कोण एक ही इकाईसे नापे जायं। $\frac{गघ}{कग}$ गअघ कोणकी ज्या है इसलिए गअघ. कोणकी ज्या उसी कोणको एक त्रिज्या कोणसे भाग देनेपर निकल आयी।

अब ग्रहों और उपग्रहोंके लम्बन निकालनेकी रीति केवल उदाहरणके अर्थ लिखी जाती है क्योंकि किसीके लम्बनका ज्ञान होनेसे उसकी दूरी पहले लेखमें दिये हुए गुरकी सहायतासे बहुत जल्दी निकल आती है। ग्रह वह चमकते हुए पदार्थ हैं जो पृथ्वीकी नाई सूर्य्यकी परिक्रमा करते हैं और उपग्रह वह हैं जो किसी ग्रहकी परिक्रमा करते हुए उसके साथ साथ सूर्य्यकी भी परिक्रमा कर आते हैं। इसलिए उपग्रहोंकी चाल कुछ टेढ़ी होती है और इनका लम्बन निकालना भी पेंचदार होता है। यदि यह स्थिर होते तो इनका लम्बन पृथ्वीकी भ्रमण-गतिके द्वारा ही निकल आता, दो स्थानोंपर जानेकी आवश्यकता न पड़ती। यदि किसी उपग्रहको (चन्द्रमा इत्यादिको) एक स्थानसे किसी समय देखें और दो चार घंटेके पश्चात फिर देखें तो उसकी स्थिति एक सी नहीं रहती वरन् उसके परिक्रमण गतिसे भिन्न हो जाती है इसलिए यथासम्भव उपग्रहको एक ही समय दो स्थानोंसे देखते हैं। इसकेलिए देखनेके दो ऐसे स्थान चुने जाते हैं जो प्रायः एक ही देशान्तर रेखापर होते हैं क्योंकि एक ही देशान्तर रेखापरके सब स्थानोंपर मध्याह्न एक ही समय होता है अर्थात ऐसे स्थानोंपर किसी वस्तुकी छाया ठीक उत्तर दक्षिण एक ही समय पड़ती है। ऐसे स्थानोंपर एक ही समय कोई ग्रह उपग्रह (circle of meridian) याम्योत्तरवृत्त पर आता है। इसी कारण चन्द्रमाका लम्बन नापनेकेलिए इसको ग्रीनिच और उत्तमाशा अन्तरीपसे उस समय देखते हैं जब वह याम्योत्तर वृत्तपर आता है। (ग्रीनिच और उत्तमाशा अन्तरीप एक ही देशान्तार रेखाके आसपास हैं) कल्पना कीजिये कि ग और उ ग्रीनिच और उत्तमाशा अन्तरीपके स्थान हैं और गवि, उवि, खगोलीय विषुवत* रेखा है, च चन्द्रमाका स्थान है और दोनों
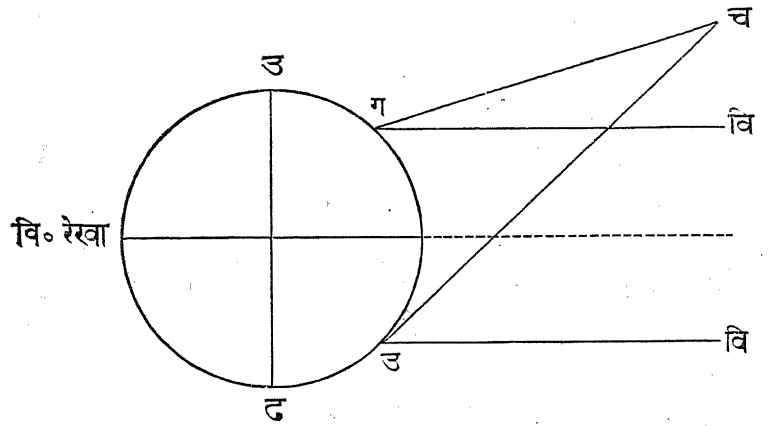
चित्र न० २

*-खगोलीय विषुवत रेखा भूगोलीय विषुवत रेखाके

स्थानोंके खगोलीय विषुवत रेखाओंके उत्तरमें हैं। ग्रीनिचसे चन्द्रमाकी क्रान्ति † चगवि कोण है और उत्तमाशा अन्तरीपसे चउवि कोण।

यह दोनों कोण दूरबीनसे नाप लिये जाते हैं। चपवि कोण चउवि१ कोणके समान है क्योंकि गवि, उवि१ खगोलीय विषुवत रेखाके समानान्तर है। ग च प कोण (वा ग च उ) चन्द्रमाका लम्बन है जो चपवि और गप कोणों-के अन्तरके समान है।

इसलिए चन्द्रलम्बन = ∠ग च उ = ∠चपवि-∠च ग प = ∠चउवि१-∠चगवि = उत्तमाशा अन्तरीप और ग्रीनिचसे चन्द्रमाकी क्रान्तियोंका अन्तर। कई परीक्षाओंसे यह सिद्ध हो गया है कि चन्द्र लम्बन ५७ कला होता है। इसका परम दृग लम्बन विषुवत रेखा पर ३४२२·५ विकला है। इसीके अनुसार पहले लेखमें चन्द्रमाकी दूरी २३८८५५ मील निकाली गयी थी।

समानान्तर होता है और जो तारे इस रेखाकी सीधमें होते हैं वह खगोलीय विषुवत रेखापर कहे जाते हैं।

† क्रान्ति उस कोणको कहते हैं जो कोई खगोलीय पदार्थ (याम्योत्तर वृत्तपर आकर) खगोलीय विषुवत रेखा-से भूकेन्द्रपर बनाता है।

---

# वैज्ञानिकीय

Miscellaneous स्फुट ]

## १—बिहारमें रेडियम

गयाजीके पास सिंगर नामकी रियासत है। हालमें ही यहां रेडियमका पता लगा है। चार बरससे मिस्टर टीरी इस खोजमें हैं। अबरखी पहाड़ीमें अभ्रककी खानिमें, जहांसे अब अभ्रककी खुदाई समाप्त हो चुकी है, उन्हें ट्रिपलैट नामक खनिजके कुछ टुकड़े मिले। इस खनिजमें लौह-मांगल-फुस्फुटके सिवा युरेनियम-ओषिदका खुरंड भी जमा हुआ मिला। साथ ही कोलम्बैटका भी पता लगा। यह खनिज पेगमाटैट नामक खनिजके उन पर्तोंमें मिला जो स्तर रूपसे उस प्रान्तके पश्चिमोत्तर और पूर्व दक्षिण भूभागमें समानान्तर तलमें फैले हुए हैं और चट्टानके ऊपरतक कभी कभी दीख जाते हैं, पाठक जानते होंगे कि युरेनियम ही रेडियमका पिता है। अतः इसके मिलनेसे युरेनियमके खनिज "पिचब्लेंडके" मिलनेकी भी सहज ही आशा हो सकती थी।

खुदाई करनेसे पहले तो हवासे खाया हुआ पिचब्लेंड मिला। फिर और नीचे जानेपर शुद्ध पिचब्लेंड मिल गया। जुलाइ १९१३ से फ़र्वरी १९१४ तक छः मासमें अबरखी पहाड़से सवा ग्यारह मन पिचब्लेंड निकला। साथही १९३॥ मन युरेनियमका कूड़ा और १६ हज़ार मन ट्रिपलैट आदि निकले। अकेले अबरखी पहाड़से लैसंस लेकर यह खनिज निकले। मार्च १९१४ में सिंगर रियासतमें साठ वर्गमील भूमि तीस बरसकेलिए परजौटपर ली गयी और कम्पनी बन गयी। परन्तु सरकारसे व्यापारी सनद मिलनेको था कि महाभारत छिड़ गया। इस कम्पनीमें जर्म्मन हिस्सेदार भी थे, अतः यह कम्पनी तोड़ दी गयी।

यहांतक तो रेडियमवाले खनिजोंकी खुदाई-में कोई विशेष महत्त्व नहीं समझा गया था और उस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया गया था क्योंकि अबरखी पहाड़में रेडियमका पाया जाना दस बरससे मालूम था किन्तु अत्यन्त कम परिमाणमें समझा जाता था, इसलिए किसीको उसकी परवाह न थी। क्योंकि संसार-में कहीं भी रेडियम ऐसी बहुतायतसे नहीं पाया गया है कि पौने तीनसौ मन खनिजसे एक माशासे अधिक निकले। जहां इससे कम परिमाणमें मिलता है, वहांका परिश्रम व्यर्थ गिना जाता है।

मेगलसरायसे गया लैनपर गया स्टेशनसे (ग्रांडकार्डलैनपर) सातवां स्टेशन गुरुंडी है। अबरखी हपाड़ गुरुंडी स्टेशनसे ६ मील पूर्वोत्तर है। इस पहाड़से पच्छिम लिये हुए पश्चिमोत्तरकी ओर ७ मीलपर एक गाँव पिचौली है। पिचौलीके पहाड़में अभ्रककी चुकी हुई कुछ खानि हैं। यहीं टीरीजीको स्तरके स्तर युरेनियम खनिज मिले हैं जिसके साथ ही टंटलम निओबियम्, थोरियम्, कोरियम्, यित्रियम्, प्रभृति दुष्प्राप्य धातु भी मिले हैं। अब यह निश्चय हो गया है कि रेडियमवाले खनिजोंका एक सूत ही नहीं है वरन् समानान्तर तलमें कई मीलतक फैले हुए पर्त्त हैं जिनकी खुदाईमें बड़े महत्त्वके लाभकी आशा की जा सकती है।

—रा. गौ.

* * *

२—टंटलम और ईस्पात

ईस्पात बनानेमें टंग्स्टन बड़े कामकी धातु है। इसके मिलनेसे ईस्पात बहुतही सुदृढ़ बनता है। युद्ध कालमें सुदृढ़ ईस्पातकी कितनी आवश्यकता है, बिना कहे ही प्रकट है। ब्रह्मदेशमें तवाय नामक स्थानमें टंग्स्टनोत्पादक खनिज बुल फ्रूम, बहुत मिलता है। शस्त्रास्त्र और कवच निर्म्माणमें टंग्स्टनवाले ईस्पातका बड़ा महत्त्व है। इसीलिए ब्रह्मदेशका अधिकार ग्रहण करते ही छोटेलाट सरहार्कोर्ट बटलर इस खनिजकी निकासी बढ़ानेमें तनमन धनसे तुल गये। विलायतके तीस बड़ी ईस्पात कम्पनियोंने एक बृहत् कम्पनी है-स्पीड-अलोयज़, लिमिटेड High speed Alloys Ltd. नामकी बनायी है जिसने तवायकी खुदाईका भार ले लिया है और जिनका कुछ वर्णन अभी हालमें प्रकाशित हुआ है।

यदि टंग्स्नकी जगह टंटलम ईस्पातमें पड़े तो उसके गुण कई गुने अधिक हो जायं। यह बात ईस्पातवालोंको मालूम थी पर टंटलम अत्यन्त थोड़ा मिलता है इसीलिए उससे अधिक मिलनेवाले टंग्स्टनसे काम लेते थे। उपर्य्ययुक्त अबरखी और पिचौली पहाड़ोंपर अब रेडियमके खनिजोंके साथ ही टंटलमका भी पता लगा है और परिमाणभी अधिक है। आशा है कि सम्प्रति टंटलमकेलिए पिचौली पहाड़के गर्भ अवश्य टटोले जायँगे। सम्बन्धमें डाक्टर चौधरी Ph D. एक रिपोर्ट प्रस्तुत कर रहे हैं और संभवतः सर टामस हालैंड तथा है-स्पीड अलोयज़के दक्ष खनिज शास्त्री भी सिंगरके खनिजोंकी परीक्षा करेंगे।

—रा० गौ०

* * * *

३—तलछटसे तेल

कम लोग जानते हैं कि मिट्टीका तेल किस प्रकार निकाला जाता है। तैल कूपोंसे पहले पहल बहुत गाढ़ा और कालासा तैल निकलता है। इसे भभकेसे खींचते हैं। हलका होनेसे पिट्रोल (हवा गाड़ी तेल) पहले टपकता है। फिर साधारण मिट्टीके तेल, और उसके पीछे कई प्रकारके मशीनमें लगानेके तेल निकलते हैं। देगमें अन्ततः वेसलीन (सादा मरहम) अलकतरा आदि सरीखे पदार्थ रह जाते हैं।

इनमें सस्ते मशीनके तेल आदि देगके पदार्थ कूड़ा सरीखे समझे जाते थे और इसी भाव बिकते भी थे। अमेरिकाके डाक्टर स्नेलिंगने अब ऐसी रासायनिक रीति निकाली है जिससे देगकी तलछटको फिर गाढ़े कालेसे तैलमें परिणत करके उसमेंसे और भी पिट्रोल आदि निकाल लेते हैं। पहले गाढ़े काले तेलसे ५०% केरोसीन, २०% पिट्रोल, २५% मशीनतेल और शेष कोयला निकलता था। अब तलछटसे ३०% केरोसीन और १५% पिट्रोल निकालते हैं। नहीं मालूम

यह क्रिया कितनी बार हो सकेगी, परन्तु पिट्रोलका परिमाण अवश्य बढ़ जायगा।

—रा गौ

* * *

### ४—धातुओंकी प्राचीनता

वैज्ञानिक दृष्टिसे इस धरतीपरकी अनेक वस्तुएं, विशेषतः खनिज, अत्यन्त पुरानी हैं। धातुओंकी प्राचीनता तो भारतीय कलाकी कल्पनासे भी बढ़ी चढ़ी है। रैडियम बहुत अल्पायु धातुओंमें है। उसका पिता युरेनियम कोई सात अरब बरसोंका समझा जाता है। हिन्दुओंका कल्प चार अरब बत्तीस करोड़ मानव वर्षोंका होता है। अर्थात् युरेनियम लगभग पौने दो कल्पोंका हुआ। यह बात भी प्रयोग-सिद्ध सी है कि जिन जिन धातुओंमें तेज-विकीरण (radio-activity) जितनाही अधिक है उतनेही वह अल्पायु भी हैं। यही बात है, कि कम तेज-विकीरक युरेनियम रेडियमकी अपेक्षा दीर्घायु है। यह बात भी मालूम की गयी है कि लगभग सभी धातु थोड़े बहुत तेज-विकीरक हैं, परन्तु कम तेज-विकीरक होनेसे इनकी आयु युरेनियमकी अपेक्षा अत्यन्त अधिक है। यह निश्चिय है कि कोई और धातु दो कल्पसे कम आयुकी तो है ही नहीं। इस प्रकार विज्ञानसे यह निश्चत है कि धरती इतनी पुरानी न भी हो, तो भी इसके मसाले जहां कहीं बने हों जहां कहींसे आये हों, अत्यन्त पुराने हैं।

—रा. गौ.

* * * *

### ५—संसारमें सबसे पुराना पेड़

धातुओं और खनिजोंकी प्राचीनता स्वाभाविक है। इसपर आश्चर्य्य नहीं हो सकता। प्रश्न केवल दहानेवाले शून्योंका रह जाता है।

वनस्पतियोंकी आयु थोड़ी होती है परन्तु वृक्ष भी कई हज़ार बरसतक जीते हैं। भारतवर्षमें ही दो दो हज़ार बरससे अधिकके वृक्ष बताये जाते हैं। आयुकी परीक्षा वृक्षके काटनेपर ही हो सकती है। इसीलिए इस विषयमें अनुमान और गणितसे ही काम लिया जाता है। सरो (शमशाद) बहुत सीधा वृक्ष प्रसिद्ध है। यह बहुतही धीरे धीरे बढ़ता है। जिस प्रकार हर पेड़में प्रतिवर्ष एक पतली तह लकड़ीकी चढ़ जाती है, इसमें भी चढ़ जाती है। सम-क्षितिज धरातलमें चीरनेसे इन तहोंकी परिधि स्पष्ट दिखाई देती है। [देहरादूनमें जंगलात कालिजके वनस्पति-अद्भुतालयमें एक नौ सौ बरस पुराने पेड़का इस प्रकार चीरा हुआ भाग है जिसमें प्रत्येक परिधि-अलग अलग दीखते हैं। दर्शकके सुभीतेके लिए प्रत्येक परिधिपर बरसोंकी संख्या भी लिखी हुई है।]

अमेरिकामें भारतवर्षसे सीधे कुदलन्तरपर मेक्सिकोमें सन्ता मरिया-डेल-टूले नामक स्थानमें एक सरोका पेड़ है जिसके तनेकी लपेट चौरीसी हाथ (१२६ फ़ीट) है। उसीके पास एक सरोका पेड़ था जिसके तनेकी परिधिकेवल १४ फ़ीट थी। इसे काटकर आसा-ग्रे नामक अमेरिकन वैज्ञानिकने इसकी आयु ६७० वर्ष निकाली। उक्त वैज्ञानिकने इसीका हिसाब करके सिद्ध किया कि १२६ फ़ीट परिधिवाले सरोकी आयु पांच-छः हज़ार वर्षोंके बीच अवश्य होगी। अन्य वैज्ञानिकोंने भी इस बातका समर्थन किया है।

जिस समय ईसामसीहका जन्म हुआ था यह वृक्ष कमसे कम ३००० वर्ष पुराना था और जिस समय आदमवाला अदनका बाग़ लगाया गया होगा मेक्सिकोमें यह सरोका पेड़ भी लगा होगा। भारतवर्षमें महाभारतका युद्ध जिस समय हुआ था, मेक्सिकोमें यह एक नया निकला हुआ सौ दो सौ वर्षोंका पेड़ रहा होगा। इस पेड़ने खड़े खड़े मेक्सिकोके

अनेक स्वदेशी राज्यों और सभ्यताओंका अभ्युदय और अधः पतन देखा, अब इधर युरोपीय बच्चोंका आक्रमण और अधिकार भी देखा, उनका प्रजासत्ताक राज्य भी देखा और आज उनसे और पड़ोसियोंसे घोर संग्राम भी देख रहा है। परन्तु आशा है कि इस बूढ़ेकी रक्षा जैसे पहलेके सभी दोनों पक्षोंनेकी है इस बार भी शत्रु मित्र दोनोंही युद्धमें भी इसकी रक्षाका ध्यान रक्खेंगे। प्राचीनताके उपासक प्राचीन भारतकी उभयपक्षसे यही प्रार्थना है।

* * * *

६—मिठाई खानेमें हरज नहीं है

जिन दिनों मद्यपानके विरुद्ध मित्रराष्ट्रोंमें आन्दोलन प्रारंभ हुआ था, अनेक मद्यभक्तोंने प्रस्ताव किया था कि मिठाई खाना व्यर्थ है, मद्यके बदले इसेही उठा देना चाहिए। मद्यके स्पष्ट अवगुणोंके, बाहुल्यके सामने वह प्रस्ताव नक्क़ारखानेमें तूतीकी आवाजकी तरह दब गया था। हालमें फिर किसीने यही प्रश्न उठाया था जिसपर विलायतके बड़े प्रसिद्ध डाक्टर Sir Lauder Branton सर लाडर ब्रंटनने घोर विरोध किया है और यह विश्वास करा दिया है कि मिठाईका उचित समयपर युक्ताहार कभी हानिकारक नहीं है। उनका कहना है कि पेटभर खानेपर भी एक प्रकारकी भोजनकी रुचि कभी कभी बनी रहती है जो मिठाईसे ही मिटती है। कभी कभी और समयोंपर भी इसकी इच्छा होती है जिसकी पूर्तिसे उसी प्रकारकी गरमी बदनमें आती है जो सुरा आदिसे होती परन्तु नशा न होनेसे सुराका अवगुण नहीं आता। यह सच है कि भोजनोंके बीच बहुत अन्तर देकर अधिक परिमाणमें मिठाई-खानेसे अजीर्ण हो जाता है, परन्तु भोजनके साथ वा ठीक उसके बाद ही थोड़ीसी मिठाई खानी लाभकारी है। शर्करा पोषक द्रव्य है परन्तु मद्य पोषक द्रव्य नहीं है।

७—खोदनेकी कल

साधारणतः जितनी मिट्टी एक मनुष्य धरतीसे खोदकर फेक सकता है वस्तुतः थोड़ी ही होती है। परन्तु अब एक ऐसा यंत्र बन गया है कि दिन भरमें एक मनुष्य उससे चार लाख मनसे ऊपर मिट्टी खोदकर फेक सकता है। इस यंत्रके बनानेमें ११ लाख रुपयेके लगभग खर्च हुआ है और साढ़े चौअन हज़ार मन भारी है। इसमें बड़े बड़े २७ डोल लगे हैं। हर एक डोल ५५ मनसे ऊपर भारी है और उसमें १६ घन फुट अमाता है। चारसौ अश्वबलके मोटरसे बिजलीद्वारा इस बड़े यंत्रको एक आदमी चलाता है। जलतलसे ४७ हाथ नीचे यह डोल घुसकर मिट्टी खोदकर भर लेते हैं। और ऊपर यथेष्ट स्थानपर ले जाकर उँडेल देते हैं। इस यंत्रसे पहाड़ खोदकर सहजही दूसरी जगह हटा सकते हैं। और भी सैकड़ों काम हो सकते हैं। आजकल मेरीज़विले (Marysville) कालिफ़ोर्नियामें सोनेकी खुदाईमें इससे काम लिया जा रहा है।

* * *

८—वैज्ञानिक रीतिपर बने हुए प्राचीन नगर

पाश्चात्य संसारको अपनी सभ्यताका ऐसा अभिमान है कि वह प्राचीके प्राचीनोंकी सभ्यताका विश्वास नहीं कर सकता। पाठक प्राचीन भारतमें गृह और नगर निर्म्माण आदिपर म. म. डाक्टर झा महोदयका गवेषणापूर्ण लेख पढ़ही चुके हैं। हालमें प्रो० किंगने इराकके भव्यलूनपुरी अर्थात बैबिलनकी खुदाईका परिणाम प्रकाशित किया है जिससे सिद्ध होता है कि आजकलकी वैज्ञानिक रीतिपर ४००० वर्ष पूर्वकी एशियाई भव्यलूनपुरी भी बसी थी। सड़कें सीधी, चौड़ी, बाग़ और वाटिकाओंसे शोभित थीं। स्वास्थ्यके सिद्धान्तोंपर पूरा ध्यान दिया गया था।

———

---

# विज्ञानसे

## विद्यार्थियोंको सुभीता

जो विद्यार्थी विज्ञानके छः ग्राहक बनाकर उनके चन्देके १८) भिजवा देंगे उनके नाम साल भर विज्ञान विना मूल्य जायगा और उस वर्ष छपनेवाली किसी पुस्तकको विना मूल्य पानेका उसे अधिकार होगा।

विज्ञानकी ग्राहक संख्या बढ़ाना वास्तवमें विद्याका प्रचार करना और हिन्दी भाषियोंका आनन्द बढ़ाना है। इसमें विद्यार्थियोंको यत्नवान होना दूने लाभका कारण है।

---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—गोपालस्वरूप भार्गव एम्. एस-सी.,**
**मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग।**


Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P Sudarshanacharya, B. A, forthe Vernacular Scientific Society, Allahabad

भाग ३ सिंह, १९७३ । August 1916. संख्या ५
Vol. III. No. 5

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

## विषय-सूची



**प्रकाशक**

**विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग ।**

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

# विज्ञानके नियम

( १ ) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

( २ ) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

( ३ ) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

( ४ ) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

( ५ ) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

( ६ ) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३। ५।

भाग ३ } सिंह, संवत् १९७३। अगस्त, सन् १९१६। { संख्या ५

## मंगलाचरण

हमैं कोइ सांची बात बतावे,
केहिकी खोज सकल जग भरमै,
पद पद ठोकर खावे।
कितै सूर यहि खोज प्रभा निसि,
दिवस चहूँ दिसि धावे।
कबहूँ मिले कि ताहि प्रभाकर,
सुथिर शान्ति जेहि पावे?
बीचि बाफ घन जल हिम सर,
सरि बनि पुनि सागर आवे।
कित वह यहि चिंता तरंग,
बल खाइ खाइ मिटि जावे।
जिततैं चल्यो उतै पुनि आवत,
धावत जन्म गंवावे।
तबहुँ कि अपने रूपसिंधुको,
लेशमात्र लख पावे?
निज कल्पना भीति पर सन्तत,
लिखि लिखि चित्र मिटावे।
कबहुँ कि मन निज चित्रकार कौ,
लघु सादृश्यहु पावे?

—रामदास गौड़।

---

## हमारा औद्योगिक पुरुषार्थ

[ ले० गोपालनारायण सेन सिंह, बी. ए.]

कोई बड़ी जांचकी ज़रूरत नहीं है। अपने घरमें ही बैठे बैठे किसी शहरमें किसी दिन और किसी घड़ी ज़रा कान देकर सुनिये। बस लीजिये कितने ढंगके खेल-नाच-रंग-तमाशेवाले आपके मुहल्लेसे होकर निकलते हैं। सबेरा हुआ नहीं कि इधर इकतारा और मंजीरा लेकर "हर गंगा" वाले कवित्त पढ़ने लगे। उधर दिन चढ़े मुसलमान फ़कीर झुण्ड बनाकर "दीनके फ़िकरे" सुनाने लगे। दोपहर तक "पीर साहब"के डफाली

और ढोलकवाले आये और घंटों दरवाज़े दरवाज़े भीड़ लगाते फिरे। एक ओरसे सपेरा अपनी तुमड़ीके झनकारपर लहरा मार गया। दूसरी ओरसे कोई चिकारा या सारंगीपर गोपीचन्दके बैरागकी कहानी सुना गया। इतनेमें नट या बांसपर चढ़नेवालोंकी डुगडुगी बजी। पीछेसे उनके चचेरे भाई मदारी भी डमरू हिलाते अपने पालतू रीछ बन्दर और बकरोंकी मंडली लेकर सामने आये कहाँतक गिनायें, तीसों दिन हमारे बाज़ारोंमें मेला लगा रहता है। न कोई खिलाड़ी या तमाशेवाला खाली बैठता है और न उसे दर्शकोंका अभाव होता है। कसेरा इधर वर्तन पीट रहा है और उधर चंगपर लावनी सुनता जाता है, बढ़ई लकड़ी खराद रहा है और साथही पुतलोंका नाच देख रहा है। बात क्या है कि हमारे कारीगर मज़दूर बनिये महाजन तमाशेके पीछे इतने बावले रहते हैं? उत्तर मिलेगा कि वह काममें एकबारगी दिल जमा नहीं सकते। उनके स्वभावमें झोल पड़ गया है, उनमें ढील देनेकी आदत आगयी है। वह जी तोड़ काम नहीं कर सकने। उनसे पसीना चुलाकर काम सर नहीं हो सकता सुस्तीकी मात्रा अवश्य बहुत बढ़ गयी है। इसी कारण उन्हें छुट्टी त्यौहार मनानेकी अधिक आवश्यकता पड़ती है महीनेमें कितने ही दिन वह घर बैठना चाहते हैं। दूकानमें या कामपर आते हैं भी तो देरसे और वहां भी बात पीछे हुक्का तंबाकू, गोटी, ताश या कौड़ी खेलनेकी सुरत चढ़ी रहती है। कारखानेके अन्दर जाकर देखिये। जबतक कोई चौधरी या मेट इनके सिरपर सवार न हो तबतक यह कामसे छिपते फिरते हैं जहाँ दाव मिला कि भाग निकले और इधर उधर डोलने लगे। कामके समय भी न्हाने खाने और हुक्का चिलमका ये झमेला लगाये रहते हैं। चाहे इन्हें दुगुनी और तिगुनी मज़दूरी पानेका लोभ भी दिलाया जावे, पर इनसे काम नहीं सपरता। यह तो हुआ कमकर मज़दूरोंका हाल इधर पढ़ेलिखे बाबू भी कुछ सराहने योग्य नहीं हैं, उनपर भी सदा आलस्य छाया रहता है। वे भी दिन दोपहर जम्हाई ले लेकर चुटकियां बजाया करते हैं। उनके रगोंमें एक प्रकारसे सुनबहरी मार गयी है, फिर जब शरीरमें शक्ति नहीं तो साहस और उत्साह कहांसे आवे। अपनी जीविका कमानेमें पूरा पूरा श्रम नहीं होता तब लोकहितकेलिए हाथ पैर हिलाना दूर रहा। भोजन अहारकी सामग्री जुटानेमें जब सारी आयु खप जाती है तब देशमें नीति, स्वतंत्रता और सुख फैलानेका प्रयत्न कौन करे। रोग और रोगकी निर्बलतामें किसीने हिसाब लगाकर देखा है कि भारतवासियोंके जीवनका तिहाई भाग बीत जाता है अर्थात् यदि किसीकी आयु ४५ वर्ष की हुई तो १५ साल उसके निरन्तर जूड़ी, बुखार, खांसी, चेचक और हैज़ामें ही सर्फ हो जाते हैं। तभी तो हिन्दुस्तानियोंकी औसत उमर इतनी थोड़ी ठहरती है। नीचेका लेखा देखिये।

| देश | प्रोढ़ होने का समय | औसत उमर | कितने साल काम करते हैं |
|---|---|---|---|
| उत्तर भारत | १६ | २२½ | ६ वर्ष |
| भारत | १६ | २५ | ९ |
| यूरोप | १७ | ३५ | १८ |
| अमेरिका | १८ | ३८ | २० |

भारतवर्षमें लड़के बहुत शीघ्र जवान हो जाते हैं और काम करने योग्य हो जाते हैं पर वे दीर्घायु नहीं होते। वे अपने कुटुम्बी और देशवासियोंको धोखा देकर कुछ ही दिनोंके बाद अर्थात् जवान होनेके ६ वर्ष पश्चात उनसे अपना पल्ला छुड़ा लेते हैं और इस संसारसे कूच कर जाते हैं। यूरूपवासी जहां १८ वर्ष और अमेरिकानिवासी २० वर्ष अपनी सामर्थ्यसे

देशका उपकार करते हैं वहाँ ६ वर्ष भी भारतवासी जमकर काम नहीं कर पाते। उनके लालन पालन और शिक्षामें जो खर्च बैठता है वह भी भले प्रकार नहीं सधता। ज्योंका त्यों उनके शिर ऋण चढ़ा जाता है। इससे बढ़कर शोचनीय विषय क्या हो सकता है?

यह केवल नगर और नगरवासियोंपर ही घटता हो यह बात नहीं है। ग्रामवासियोंकी दशा और भी हीन है। वहां अकर्मण्यताका अलग ही एक अटल राज्य है। शहरसे दो चार दिनकेलिए भो गांवमें जाकर देखिये, चित्त कैसा अकुला जाता है। जिधर आप दृष्टि डालेंगे उधर ही बैठा बैठी देखेगें। लोग दिशा जंगल, खाने नहानेमें दो दो चार चार घंटे लगा देते हैं। समयका कोई मोल ही नहीं। दोपहरको नित ही लोग सोया करते हैं। नींद लेकर उठते हैं भी तो द्वारपर बैठे बैठे झंखा करते हैं, मक्खी मारा करते हैं। यदि पूछिये कि खेतीका काम फिर कौन करता है तो कहना पड़ेगा कि सिवा कमिये, हलवाहे, बोने काटनेवालेके कोई खेत पर नहीं रहता। केवल सांझ सवेरे लोग घूम आते हैं, और फिर खेतीका काम क्या सब ऋतुओंमें होता है? घरमें जो बिलकुल अकेला है और जो खरीफ़ और रबी दोनों ही जोतता है वह भी चार महीने घरमें निठल्ला बैठता है। इसके अतिरिक्त घरके सब प्राणी जो कृषिके सहारे बैठे रहते हैं उनके हिस्से तो सालमें यदि आपसमें काम बांटा जाय तबभी कुछ काम नहीं पड़ता। कल्पना कीजिये एक परिवारमें १० प्राणी हैं, इनमें ५ पुरुष और ५ स्त्री बच्चे हैं, इनके बीच १० या १५ बीघेकी खेती होती है। अब क्या १०, १५ बीघेकी खेतीमें, जिसमें ऊपरसे मज़दूर भी लगाये जाते हैं ५ आदमी बराबर लगे रह सकते हैं, कभी नहीं! विशेषकर कुलीन व उच्च जातिके पुरुष तो खेतीके बहाने गांवमें बैठे बैठे दिन काटा करते हैं, वे अपने हाथसे खर तक तो उसकाते नहीं खेती करनेका दम भरते हैं, इसमें और कोई बात नहीं। हमलोग कामसे मुंह मोड़ते हैं और साथही किसी हीलेसे घरपर बैठे बैठे एककी कमाईमें हिस्सा बटाकर पेट पोसना चाहते हैं। यह इन्हीं "पर मुण्डी फलाहार करनेवालोंके" कारण देखा जाता है कि विहारमें जहाँ भारतवर्षके सब प्रान्तोंसे अधिक जनता वा आवादी है—अर्थात् मुजफ़्फरपुरमें ८३७ प्रतिवर्ग मील और सारनमें ८५३ मनुष्य—थोड़ी ज़मीनके जोतमें अधिक मनुष्योंके सम्मिलित होनेसे प्रत्येक मनुष्यपर बड़ी कठिनतासे आधी एकड़ भूमि पड़ती है जबकि पंजाबमें प्रति मनुष्य ३ एकड़ और मद्रासमें ८ एकड़का हिसाब बैठता है। संभव है इससे किसीके मनमें यह संदेह उत्पन्न हो कि आवादी बढ़ जानेके कारण थोड़ी ज़मीनकेलिए खींचातानी करनेके कारण यह स्थिति देखनेमें आती है। पर ऐसा सोचना महा भूल है। कारण, जिनके पास भूमि है वह और जिनके पास भूमि नहीं है वह भी सभी कृषिके आधार पर बैठ रहते हैं। सरकारी गणनासे पता चलता है कि यदि भारतवर्षकी कुल जनताका दश भाग किया जाय तो उसमें ६ भाग कृषिके आश्रित हैं। यह इस बातसे और भी प्रत्यक्ष जान पड़ता है कि हमारे देशमें शहरमें रहनेवालोंकी आवादी बहुत ही थोड़ी है, यहां तक कि प्रायः सब लोग गांवमें ही रहते हैं जबकि इंगलैंडमें ७७ फी सदी लोग शहरोंमें बसे हुए हैं। अब हमारे यहां इतने लोगोंके गावमें रहनेका फल यह होता है कि वे सबके सब किसी न किसी प्रकार खेती बारीसे ही अपनी जीविका निकालते हैं अर्थात् जो कुछ उपज होती है उसीमें हिस्सा लेते हैं और स्वभावतः उन्हें केवल चुटकी ही मिलती है। देखिये समूचे भारतवर्षमें पिछली मनुष्यगणना (१६१०) और १६०१ की मनुष्यगणनाके

बीच निम्नलिखित जातियोंकी संख्या किस तरह बढ़ी है।

| | |
|---|---|
| ज़मींदार और काश्तकार | २,०७५३००० |
| मज़दूर | १६ ७३६००० |
| जानवर पालनेवाले | ३६७००० |

इससे यह प्रमाणित होता है कि कृषिकार्य-पर निर्भर रहनेवालोंमें अब उनकी संख्या अधिक बढ़ती जाती है जिनके पास अपनी भूमि नहीं है पर तब भी जो अपना निर्वाह उसीके आश्रयमें करते आते हैं। अकालके दिनों-की जाने दीजिये ऐसे भी सालमें कितने ही महीने जनताके इस बड़े समूहको बिना धन्धे रोज़गारके बैठना पड़ता है जो एक बड़ी भयानक और दुःखकी बात है। कमसे कम इन पंक्तियों-के लेखकके मनकी व्यग्रताका ठिकाना उस क्षण-से नहीं रहा है जबसे उसके ध्यानमें आया है कि अनगिनत भारतवासी अपने जीवनके बहुत बड़े अंश—१२ महीनोंमें कई महीने और चौबीस घंटोंमें कितने ही घंटे—का गला घोटते हैं और कहते हैं कि उनकेलिए कोई काम ही नहीं, यही भारतवासियोंका बहुत बड़ा पाप है। इसका जबतक वे प्रायश्चित नहीं करते तबतक इस अकर्मण्यताका दण्ड स्वरूप दरिद्रता उन्हें भुगतनी पड़ेगी। जो सोवे सो खोवे—कभी मिथ्या होनेवाला नहीं है। हम सालके ३६५ दिनमें १०० या १५० दिन आधे जीसे लल्लो पत्तो काम करेंगे और चाहेंगे कि धरती फाड़कर हमारे घर लक्ष्मी प्रकट हो जाये। यह भी कहीं देखा गया है?

संसारमें कर्मशीलता, कार्यकुशलता और अविरत परिश्रम—बस इन्हींकी पुकार है, इन्हीं-का सब मोल है, इन्हींका व्यवहार है, इन्हींके बदलेमें पृथिवीके किसी खण्ड किसी देशमें चाहे जो वस्तु क्रय करले। संसारके एक कोनेमें बैठा हुआ डिज़ नामी मनुष्य लालटेन बनाता जाता है, या मिलर नामी व्यक्ति ताले गढ़ता है। बस हाथों हाथ वे दशों दिशाओंमें बट जाते हैं और उन्हीं टीन और लोहेके पुरज़ोंके पलटेमें उसके घर जगतकी अखिल सम्पत्ति उमड़ी चली आती है। हां वे लालटेन या ताला बनाने-का ढंग जैसा जानते हैं वैसा दूसरा कोई नहीं जानता लालटेन और ताला बनानेमें जैसी मुस्तैदी और मिहनत करते हैं अन्य कोई उनसे पार नहीं पासकता तभी तो उनके अकेले लोहे टीनके कामके बदले कश्मीरमें लोग शालदुशाले बुनते हैं, चीनमें चायकी खेती करते हैं, ओस्ट्रे-लियामें भेड़ चराते हैं, अमेरिकामें कपास उप-जाते हैं, शेफील्डमें चाकू कैंची खरीदते हैं, अफरीकामें हीरा कोयला वा सोना खोदते हैं, फ्रांसमें शराब चुलाते हैं और रशियामें तेल खोदते हैं। डीज़ और मिलर इन भिन्न भिन्न देशवालोंके हाथ अपना लालटेन और ताला धरा देते हैं और उनसे सुखकी सारी सामग्री फल मिष्टान्न वस्त्र गृह, पुस्तक, अखबार, तस-वीर, मोटरगाड़ी, तार, टेलीफोन, बिजलीकी रोशनी, चाय, चीनी, चुरुट, नाचघर वा थियेटर-का तमाशा सब प्रकारका भोग विलास लूटते और आनन्द करते हैं। कैसे? हम दुहराकर पूछ सकते हैं। डीज़ और मिलर इतने लोगोंके परिश्रमके फलके अधिकारी क्योंकर हो गये? दूसरोंसे काम लेनेकी कोई हद भी है? कहना पड़ेगा कि जिस परिमाणसे मनुष्य दूसरेके काममें अपनी विद्या बुद्धि और कला-कौशलसे सुभीता डालता है और जितनी अधिक संख्यामें मनुष्योंका उपकार वह करता है, उसी परि-माणसे और उतना ही अधिक मनुष्योंसे सेवा लेनेका उसे सत्व प्राप्त होता है। यदि कोई जंगली कोल भील लाख और महुआ चुनकर बाज़ारमें लाता है और उस लाख और महुए-को भी सर्वसाधारणके उपयोगी बनानेमें बहुत खर्च बैठता है तो केवल दो ही चार पैसे उसे मिलेंगे, पर एडिसनके फोनोग्राफ बनानेपर

चूंकि लाखों करोड़ों मनुष्योंको तत्काल मनोरञ्जन होता है इसलिए बंकमें उनके नाम लाखों डौलर जमा हो गये हैं जिससे वे सहस्त्रों प्रकारके द्रव्य और सेवा लिया करते हैं। प्रश्न है भारतवासी आज क्यों ऐसे छूछे हैं? कहनेमें आता है उनके ऐसे ही लक्षण हैं। किसी प्रकारके शिल्प वाणिज्यसे वे दूसरी जाति और दूसरे देशवालोंपर अपना ऋण नहीं चढ़ा सकते, फिर वे वसूल क्या करेंगे? संसारके उन्नत राष्ट्र और जातियोंके सुख-समृद्धि देखकर ये तड़पा करते हैं पर इनसे आप कुछ नहीं बन पड़ता। ये हौसले तो बहुत रखते हैं पर इस योग्य हों तो न कुछ मिले। अन्तमें हारकर प्रायः ये संतोष, सरल रहन सहन और परिमित व्ययकी बातें बनाने लगते हैं। पर इनमें सच्चे त्यागी बहुत थोड़े होते हैं। अधिकांश मनुष्य धन और शारीरिक सुखके लोलुप होते हैं जो मन ही मन दूसरोंके ऐश्वर्य्य और संपत्तिपर कुढ़ा करते हैं। ऐसे लोगोंको चाहिये कि खुले खुले वे अर्थोपार्जनमें प्रवृत्त हों और उनके उचित साधनका प्रयोग करें। क्योंकि—

"कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान् विमूढ़ात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥"

अर्थात् मनसे विषयोंका ध्यान करता हुआ भी जो इन्द्रियोंका संचालन उसकी सिद्धिके हित नहीं करता वह निरा दंभी है और एक ढोंग रच रहा है।

इसलिये प्यारे भारतीयो अब भी मिथ्या भ्रम और मोहसे अपना पीछा छुड़ाकर इस अमूल्य औद्योगिक बलकी रक्षामें तत्पर हो जाओ।

---

## रक्तके काम

[ले० डा० त्रिलोकीनाथ वर्म्मा, बी. एस-सी., एम-बी. बी. एस]

१. रक्तसे शरीरकी सेलोंको (कोषोंको) वह सब पदार्थ मिलते हैं, जो उनके बढ़ने और काम करनेकेलिये आवश्यक हैं। यह पदार्थ प्रोटीन (protein) मेद वा बसा (fat) शकर (sugar) जल (water) कई प्रकार के लवण (salts) और ओषजन (oxygen) गैस हैं। इनमेंसे ओषजनको छोड़कर और सब पदार्थोंको रक्त (alimentary canal) अन्न मार्ग की दीवारोंमेंसे ग्रहण करता है। ओषजन गैस (lungs) फुप्फुसोंसे मिलती है।

२. रक्त शरीरके विविध भागोंमें भ्रमण करता हुआ सेलोंके आस पाससे उन मलिन और हानिकारक पदार्थोंको ग्रहण करता है जो रसायनिक क्रियाओंके होनेसे हर समय बनते रहते हैं। वह इन पदार्थोंको उन अंगोंमें ले जाता है जिनका काम यह है कि इन पदार्थोंको उसमेंसे निकाल लें और फिर उनको या तो शरीरसे बाहर पहुंचादें और या उनसे ऐसे नये पदार्थ बना लें जो शरीरको किसी प्रकारकी हानि न पहुंचा सकें। शरीरके मुख्य अंग जिनमें रक्तकी शुद्धि होती है यह हैं:— फुप्फुस या फेफड़े, वृक्क या गुरदे, त्वचा वा खाल यकृत वा जिगर (liver) आदि। फुप्फुसोंद्वारा रक्तसे कर्बनद्विओषित ($CO_2$) गैस और अन्य उड़न शील पदार्थ बाहर निकलते हैं, जो वायु सांस लेनेसे बाहर निकलती है अर्थात् प्रश्वास उसमें फुप्फुसोंके भीतर जानेवाली सांस अर्थात् निःश्वासकी अपेक्षा अधिक कर्बनद्विओषिद गैस होती है। गुरदोंमें मूत्र (urine) बनता है; मूत्र द्वारा रक्तके यूरिया (urea) यूरिकअम्ल (uric acid) और अन्य कई पदार्थ शरीरसे बाहर निकल जाते हैं। त्वचा भी पसीनेकेद्वारा रक्तकी कुछ शुद्धि करती है।

३. रक्तका तीसरा काम यह है कि वह बहुतसे रोगोंसे शरीरकी रक्षा करता है। अब यह बात निश्चित होगयी है कि बहुतसे

रोगोंके कारण अत्यन्त सूक्ष्म जन्तु हैं, जब यह जन्तु शरीरके भीतर पहुंचते हैं तो रोग पैदा हो जाते हैं।

हम पहले इन सूक्ष्म जन्तुओंके विषयमें लिखेंगे, उसके पीछे यह बतलाएँगे कि रोग कैसे उत्पन्न होते हैं और रक्त किस प्रकार शरीरकी रक्षा करता है।

सूक्ष्म जन्तु (Micro-organisms)

कुल जीवित सृष्टि दो वर्गोंमें विभाज्य है:—

(१) प्राणिवर्ग (animal world) (२) बनस्पतिवर्ग (vegetable world) दोनों वर्गोंमें बड़ेसे बड़े और छोटेसे छोटे व्यक्ति होते हैं। प्राणिवर्गके सबसे छोटे व्यक्ति एकसेलयुक्त हैं अर्थात उनके शरीर केवल एक ही सेलसे बनते हैं; इन प्राणियोंको आदि-प्राणी (Protozoa) भी कहते हैं। आदिप्राणी इतने छोटे होते हैं कि वह बिना अणुवीक्षणकी सहायताके दिखाई नहीं देते। अमीबा एक आदिप्राणी है। कुछ आदिप्राणी ऐसे हैं कि यदि वह शरीरके भीतर प्रवेश करें तो तरह तरहके रोग पैदा करते हैं। उदाहरणार्थः—

(१) मलेरिया ज्वरके (Malarial fever तिजारी, चौथिया या मोसमी बुखार) जन्तु।

(२) काला अज़ार (Kalazar) ज्वरके जन्तु।

(३) सिलीपिंग सिकनेस अर्थात् अतिनिद्रोगके (Sleeping sickness) जन्तु।

(४) एक प्रकारके आमातिसारके (Dysentery) जन्तु।

(५) आतशक उपदंश या फिरंग-रोगके (Syphilis) जन्तु।

बनस्पति वर्गमें भी एक सेलवाली बनस्पतियां बहुत हैं। सबसे छोटी बनस्पतियां तो इतनी सूक्ष्म होती हैं कि उनकी सेलके भीतर मींगी (Nucleus) और प्रोटोप्लाज़्म जुदा जुदा दिखायी नहीं देते। इन अति सूक्ष्म बनस्पतियोंको जिनके भीतर मींगी दिखाई नहीं देती बकटीरिया (Bacteria) कहते हैं।

बकटीरिया

यह सूक्ष्म जन्तु हर जगह पाये जाते हैं। संसारमें जो कोई भी जीवित चीज़ोंके रहने योग्य स्थान है वहां किसी न किसी प्रकारके बकटीरिया बहुधा रहते ही हैं। वह जल, वायु भूमि भोजनके पदार्थ, कपड़े आदि चीज़ोंपर बास करते हैं। वह हमारी त्वचा, मुख और (intestines) आंतोंमें भी रहते हैं। एक तरहसे उनको सर्वव्यापक कहना अनुचित न होगा। बकटीरियाकी बहुतसी जातियां हमारेलिये बहुत उपयोगी हैं, परन्तु कुछ जातियां हानिकारक भी हैं; इनके शरीरके भीतर घुसनेसे रोग उत्पन्न हो जाते हैं। बहुतसे बकटीरिया संसारमें बहुत बड़े और आवश्यक काम करते हैं। यदि वह सबके सब नष्ट कर दिये जायँ तो हमारा जीवन कठिन और असंभव हो जाय। मनुष्यका जीवन बनस्पतिवर्ग पर निर्भर है; यदि पलभरकेलिये यह मान लिया जाय (जो एक असंभव बात है) कि मनुष्य केवल मांस खाकर ही जीवित रह सकता है तो भी उसके जीवनकेलिये बनस्पतियोंका होना आवश्यक होगा, क्योंकि जिन जानवरोंसे वह मांस प्राप्त करता है वह बनस्पति खाकर जीते हैं। विज्ञानने यह बात सिद्ध की है कि पौदोंकेलिये बकटीरियाका होना बहुत आवश्यक है। यह बकटेरिया पौदोंकेलिये विशेष प्रकारके नत्रजनीय पदार्थ बनाते हैं जिनको पृथ्वीसे ग्रहण करके वह बढ़ते हैं। जब कोई जानवर मर जाता है तो उसका शरीर सड़ने लगता है; यह सड़ावकी क्रिया भी एक प्रकारके बकटीरियाके उस मृत शरीरमें उपजनेसे होती है; शरीरके सड़नेसे कई प्रकारके पदार्थ बनते हैं जिनमेंसे एक चीज़ नत्रजन गैस है; इस गैसके अतिरिक्त नत्रजनीय पदार्थ भी बनते हैं। नत्रजन गैस वायुमें मिलजाती है

परन्तु एक और जातिके बकटेरिया नत्रजनीय पदार्थोंसे ऐसे पदार्थ बनाते हैं जिनको पौदे आसानीसे ग्रहण कर सकें।

मलविष्टासे खादका बनना भी बकटीरिया-के ऊपर निर्भर है। यदि बकटीरिया न हों तो मृत जानवरोंके शरीर और मलविष्टा कभी न सड़ें और उनसे वह पदार्थ कदापि न बन सकें जिनकी पौदोंको आवश्यकता है। जिस खेतमें यह विशेष प्रकारके नत्रजनीय पदार्थ बनानेवाले बकटीरिया कम होते हैं वहां पैदावार अच्छी नहीं होती; इस विशेष जातिके बकटीरियाको उस ज़मीनमें बोनेसे पैदावार अच्छी की जा सकतीहै।

बकटीरिया और भी बहुतसे आवश्यक काम करते हैं जैसे दूधको जमाकर दही बनाना; गन्नेके रससे शिरका बनाना आदि।

दूसरी ओर दृष्टि डालनेसे हमको बहुतसे हानिकारक बकटीरिया भी दिखाई देते हैं। उदाहरणार्थः—

१. क्षयरोग के (थाइसिस, तपेदिक़ Phthisis) बकटीरिया।

२. न्यूमोनियाके (फुप्फुस प्रदाह = Pneumonia) बकटीरिया।

३. टैफोयड (Typhoid) ; हैज़ा ; पेचिश ; प्लेग या महामारी रोगोंके बकटीरिया।

४. फोड़े फुन्सी और मुंहासोंके ,,

५. प्रसूतरोग (Puerperal fever); नज़ला, (catarrh) जुकाम (cold) खांसी आदि रोगोंके बकटीरिया।

बकटीरियाका आकार और परिमाण

बकटीरियाका आकार कई प्रकारका होता है। बहुतसे तो बिन्दुकी भांति गोल गोल होते हैं (जैसे पीप पैदा करनेवाले); कुछ शलाकाकी तरह लम्बे लम्बे होते हैं (जैसे टाइफोयड ; क्षय रोगके ;) बहुतसे बकटेरिया मुड़े होते हैं जैसे हैज़ेके जो द्वितीयाके चन्द्रकी शकलके होते हैं; और हेर फेरके ज्वरके (Relapsing fever) जो कर्षणीके सदृश पेचदार होते हैं। आकारानुसार कुल बकटीरियाकी तीन जातियां कही जा सकती हैः—

. बिन्द्वाकार (cocei)

२. शलाकाकार—कभी कभी शलाका मुड़कर चन्द्राकार बन जाती है जैसे हैज़ेकी (Bacilli)

३. कर्षण्याकार या चक्राकार (Spirillums) परिमाणमें वह इतने सूक्ष्म होते हैं कि साधारण अणुवीक्षणोंसे तो वह दिखाई भी नहीं देते। इनको देखनेकेलिये बहुत अच्छे यन्त्रोंकी आवश्यकता है। यही कारण है कि जब तक बड़े बड़े यन्त्र न बने किसीको इस बातका ख़याल भी न हुआ कि बहुतसे जन्तु ऐसे भी होते हैं जिनको हम देख न सकें परन्तु जो अनेक प्रकारके भयानक रोग उत्पन्न करनेमें समर्थ हैं।
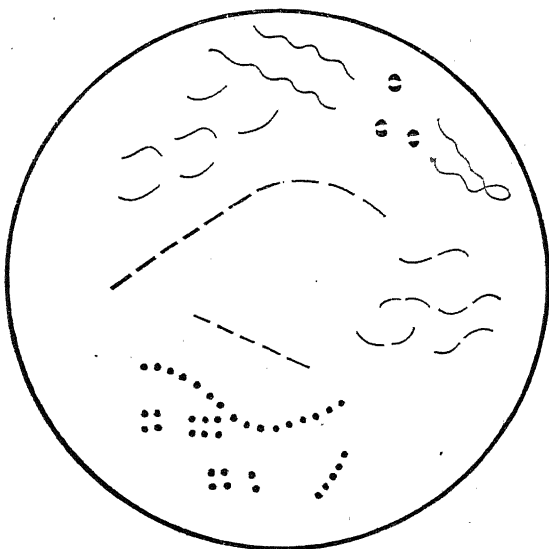
चित्र नं० १ कई प्रकारके बकटीरिया

उनकी मोटाई $\frac{१}{२५०००}$ इंचसे अधिक नहीं; होती; लम्बाई $\frac{१}{५०००००}$ से $\frac{१}{५००}$ 'च तक होती है। इन अंकोंसे आप उनकी सूक्ष्मताका अन्दाज़ा

लगा सकते हैं। कुछ बकटीरिया गति कर सकते हैं; कुछ नहीं कर सकते। जिस तरलमें बकटीरिया हैं यदि उसकी एक बूंद अणुवीक्षण-से देखें तो गति करनेवाले बकटेरिया बड़ी तेज़ी-से इधर उधर दौड़ते हुए दिखाई देंगे।

बकटीरिया मृत पौदों और प्राणियोंसे जिन पर वह वास करते हैं अपना भोजन प्राप्त करते हैं, जब रोग उत्पादक जातियां हमारे शरीरमें रहती हैं तो वह हमारे रक्त और शरीरके तंतुओंसे (tissues) भोजन ग्रहण करते हैं।

विशेष जातिके बकटीरिया एक विशेष ताप परिमाण (temperature) पर रहना पसंद करते हैं यदि इससे अधिक या न्यून गरमीमें रक्खे जायँ तो वह अच्छी तरहसे न बढ़ेंगे। रोग उत्पादक जन्तु हमारे शरीरके ताप ३५°–३६° शतांश को (Centigrade) पसंद करते हैं। सड़ाव पैदा करनेवाली जातियां इससे कम गरमीको पसंद करती हैं। कुछ बकटीरिया ६०°—७०° शतांश की (Centigrade) गरमीपर रहना चाहते हैं। साधारणतः बहुतसे बकटी-रिया ५७° श०की गरमीमें कुछ देरतक रक्खे जानेसे मर जाते हैं। उबालनेपर (१००° श०) कोई बकटेरिया नहीं जी सकते किसी चीज़को बकटेरियारहित करनेकी सहल विधि यह है कि उसको कुछ देरतक १००° श०की गरमी पहुंचाएँ ( यदि यह गरमी उस चीज़को किसी प्रकारकी हानि न पहुचाए।

सूर्यके प्रकाशको बकटोरिया बहुत देर तक नहीं सह सकते। बहुत सी जातियोंके बकटीरिया १$\frac{१}{२}$ घन्टेतक धूपमें रहनेसे मर जाते हैं। बिजलीकी तेज़ रोशनीसे भी वह मर जाते हैं।

रोग उत्पादक जन्तु किस प्रकार शरीर में प्रवेश करते हैं।

(१) वायु द्वारा—क्षयरोगीको खांसी रहा करती है। खांसते समय उसके मुंह से कफ़के (बलग़म) अति सूक्ष्म ज़र्रे निकलकर वायु-में मिल जाते हैं। इन ज़र्रोंमें क्षयरोगके जन्तु (बकटेरिया) रहते हैं। जो मनुष्य उस रोगी-के पास रहते हैं उनके फुफ्फुसोंमें यह जन्तु स्वांसके द्वारा जा सकते हैं। यही नहीं, यदि कोई भोजनकी वस्तु जैसे दूध उस रोगीके पास रक्खी हो तो कफ़के ज़र्रे उसमें मिल जांयगे और जो मनुष्य उसका सेवन करेगा उसके शरीरमें ( अंत्र में ) यह जन्तु पहुंच सकते हैं। फुफ्फुस प्रदाह ( न्युमोनिया) neu-monia) ज़ुकाम, नज़ले, चेचक, खसरा आदि रोगोंके जन्तु एक मनुष्यसे दूसरे मनुष्यके शरीमें वायुद्वारा पहुंच सकते हैं।

(२) भोजन द्वारा—यदि किसी प्रकार रोगोंके जन्तु भोजनमें मिलजायँ तो उस दूषित भोजनके सेवनसे शरीरमें पहुंच सकते हैं। हैज़ा, पेचिश, टैफ़ोयड (typhoid) प्रवा-हिका (diarrhoea) आम तौरसे भोजन और जलद्वारा ही पहुंचा सकते हैं। एक मनुष्यसे और मनुष्योंको हैज़ा कैसे हो सकता है? हैज़ेके रोगीके मल और वमनमें अनेक सहस्र हैज़ेके चन्द्राकार बकटीरिया रहते हैं। यदि वमन या मल का कोई अंश किसी दूसरे मनुष्य-के भोजनमें मिल जाय तो यह जन्तु उसके शरीरमें पहुंचकर हैज़ेका रोग पैदा कर सकते हैं। रोगीके पास रक्खी हुए दूध, जल, फल आदि भक्ष्य पदार्थोंपर वमन या मलकी छींटें पड़जानेसे यह पदार्थ और मनुष्योंमें रोग उत्पन्न करने योग्य बन जाते हैं।

रोगीके वमन और मलको एक स्थानसे उठाकर दूसरे स्थानमें लेजानेवाले मनुष्य-के हाथों और कपड़ोंमें जन्तु लग सकते हैं, यदि यह मनुष्य अपने हाथोंको विशेष साधनों-

से शुद्ध किये बिना किसी पीने या खानेकी वस्तुको छू ले तो विषैले हो जाते हैं और उनके सेवनसे और मनुष्योंको हैज़ा हो सकता है। कभी कभी वमन और मलके छींटे आस पास रक्खे हुए बरतनोंपर पड़ जाते हैं यदि इन बरतनोंसे किसी कुएंसे जल निकाला जाय तो उस कुएंका जल भी खराब हो सकता है और उस कुएंके जलको पीनेवालोंको हैज़ा हो सकता है। हैज़ेके रोगियोंके मल और वमनसे छोटी नदियोंका पानी भी ज़हरीला हो जाता है। जब मक्खियां वमन और मल-पर बैठती हैं उनके पैरोंमें इन चीज़ोंका कुछ अंश लग जाता है; मक्खियां एक स्थानसे उड़कर दूसरे स्थानपर जा बैठा करती हैं कभी मलपर बैठती हैं कभी दूध, मिठाई और भोजन-की अन्य वस्तुओंपर; यदि हैज़ेके वमन और मलपर बैठी हुई मक्खी भोजनपर जा बैठे तो उसके पैरोंमें लगे हुए मलका कुछ भाग भोजन-में लगजाता है और उस दूषित भोजनको खानेवालोंको हैज़ा हो सकता है। मक्खी एक घरसे उड़कर दूसरे घरमें भी चली जाती है और वहां रहनेवालोंके भोजनको भी ज़हरीला बना सकती है। जिस प्रकार हैज़ा एक मनुष्यसे और मनुष्योंको भोजनद्वारा हो सकता है उसी प्रकार पेचिश, टैफ़ोयड, प्रवाहिका (दस्त) रोग भी हो सकते हैं।

आजकल इस बातके प्रति दिन नये नये प्रमाण मिल रहे हैं कि बहुत से रोगोंके जन्तु मक्खियोंकी सहायतासे हमारे भोजनमें पहुँचते हैं। वास्तवमें यह एक बहुत ही गन्दा जानवर है; इससे जहांतक बचा जाय उतना ही अच्छा है; जिस भोजन पर वैठे उसे त्यागना उचित है। मक्खीको गन्दगीसे प्रेम होता है और सफ़ाईसे चिढ़। भोजनके पदार्थोंको साफ स्थानमें ढककर रखना चाहिए।

(३) जानवरोंके काटने से—

कुछ जानवरोंके मुख या पेटमें रोग उत्पादक जंतु रहा करते हैं; जब यह जानवर रक्त चूसनेकेलिये मनुष्यको काटते हैं तो उनके मुखसे थूकद्वारा यह जन्तु शरीरमें प्रवेश करते हैं। मच्छरोंकी एक विषैली जाति है इस जातिके मच्छरोंके मुख और पेटमें मलेरिया ज्वरके (मौसमी बुखार) जन्तु (आदिप्राणी) रहते हैं। जब विषैले मच्छर काटते हैं यह जन्तु शरीरमें पहुंच जाते हैं और वहां जाकर बढ़ते हैं और मलेरिया ज्वर पैदा करते हैं। काला आज़ार ज्वर अधिकतर बंगाल, आसाम, मद्रास प्रान्तोंमें होता है; संयुक्तप्रान्तमें कम होता है।

---

बहुत लोगोंका विचार है कि बालकोंको अधिक मीठा खिलानेसे उनके पेटमें कीड़े हो जाते हैं। इस विचारमें कुछ सत्य है और कुछ असत्य। असत्य इतना है कि मीठेके कम या अधिक सेवनका कीड़ोंके होने या न होनेसे कोई विशेष सम्बन्ध नहीं है। और सत्य यह है कि कीड़े अधिक उनहीं बालकोंके पेटसे निकलते हैं जो हलवाइयोंकी दुकानकी गन्दी मिठाई खाया करते हैं। वास्तवमें बात यह है कि पेटमें कीड़े बननेकेलिए उन कीड़ोंके अन्डे होने चाहियें; यदि मिठाई या किसी और भोजनीय पदार्थमें यह अन्डे हैं तो उसके खानेसे पेटमें कीड़े बन सकते हैं (चाहे बालक खाय और चाहे प्रौढ मनुष्य)। हलवाइयोंकी दुकान-पर मिठाई खुली रक्खी रहती है और उस पर सहस्रों मक्खियां भिनका करती हैं। इनमेंसे बहुत सी मक्खियां अभी मलपर बैठ कर आई हैं; यदि मलमें कीड़े और उनके अन्डे हों तो कुछ अन्डे इन मक्खियोंके पैरोंद्वारा मिठाई-तक पहुंच जाते हैं। जो बालक या मनुष्य इस मिठाईको खाता है उनकी आंतोंमें यह अन्डे बढ़ते हैं और उनसे कीड़े बन जाते हैं।

उपर्युक्तसे विदित है कि कीड़ोंके कारण अन्डे हैं न कि शुद्ध मिठाई जिसमें कीडे और उनके अन्डे न हों।

शिक्षित मनुष्योंका यह फ़र्ज़ है कि वह साधारण मनुष्योंको ऐसी मिठाई व अन्य भोज्य पदार्थोंको जिन-पर मक्खियां भिनकती हों न खानेकी शिक्षा दें उनका फ़र्ज़ यह भी है कि वह हलवाइयोंको अपनी मिठाईको शीशे-दार या जालियोंदार बकसों या अलमारियोंमें रखकर बेचनेकी हिदायत करें।

इसके विषयमें वैज्ञानिकोंका विचार है कि यह एक विशेष जातिके खटमलोंके काटनेसे होता है।

अफरीका देशके ( sleeping sickness ) अतिनिद्ररोगके जन्तु एक विशेष जातिकी मक्खियोंके मुखमें रहते हैं; जब यह मक्खी काटती है तो यह जन्तु मनुष्यके शरीरमें पहुंच जाते हैं।

दक्षिण अमरीका और अफरीका देशोंका भयानक पीला ज्वर ( yellow fever ) एक विशेष विषैली जातिके मच्छरोंके काटनेसे होता है।

भारतवर्षकी महामारीके ( प्लेग ) विषयमें यह विचार है कि इस रोगके जन्तु ( बकटीरिया ) एक विषैली जातिके पिस्सुओं-द्वारा मनुष्यके शरीरमें पहुंचते हैं।

पागल कुत्ते या गीदड़के काटनेसे बहुत-से मनुष्योंको एक रोग ( पागलपन ) हो जाता है; इस रोगके जन्तु पागल कुत्ते या गीदड़के थूकमें रहते हैं।

(४) ज़खमोंद्वारा—यदि खाल चोट लगनेसे कहींसे कट जाय या फट जाय और फिर उस पर गन्दा जल, गन्दी धूल मिट्टी या गन्दी वायु लगे तो कई प्रकारके जन्तु शरीरमें घुस सकते हैं। ज़खमोंमें पीप पैदा करनेवाले जंतु इसी प्रकार पहुंचते हैं।

## वृक्षोंसे लाभ

[ ले० तेजशंकर कोचक, बी. ए., एस्. सी, ]

वृक्षोंसे क्या लाभ होता है? वृक्ष हमारे किस कामके हैं? क्या इस संसारमें वृक्षोंका जन्म व्यर्थ है? हम इन प्रश्नोंका उत्तर इस लेखमें देंगे। विस्तारके साथ वर्णन करनेसे लेख बहुत बढ़ जायगा, यहां हम केवल सारांश मात्र लिखेंगे।

(१) तरह तरहसे यह बात सिद्ध की गई है कि हमारे वायुमण्डलमें दो प्रकारकी वायु अपूर्व काम करती हैं। एक आक्सिजन ( ओषजन ) दूसरी कारबोनिक एसिड गैस ( कर्बन द्विओषिद )। परीक्षा करके यह भी सिद्ध हुआ है कि वृक्ष वायुमण्डलसे कारबोनिक एसिड गैसका आहार करते हैं और आक्सिजन गैस अपनेमेंसे निकाल देते हैं। कारबोनिक एसिड गैस वायुमण्डलमें बहुत थोड़ी मात्रामें है। यदि इस गैसका वृक्ष योंही आहार करते रहें और इसमें किसी प्रकारसे बढ़ती न हो तो कुछ समयमें यह सब ही ख़र्च हो जायगी और फिर वृक्ष पृथवीपर जीते न रह सकेंगे।

मनुष्य वायुमण्डलसे आक्सिजन गैस लेकर अपने काममें लाते हैं और कारबोनिक एसिड गैस अपनी देहसे फेफड़ोंकेद्वारा बाहर निकाल देते हैं। आक्सिजनकी मात्रा वायुमण्डलमें थोड़ी है और इसकी भी बढ़तीका प्रबन्ध न हो तो कुछ समयमें सारी ख़र्च हो जायगी और मनुष्य पशु पक्षीका पृथवीपर जीता रहना असंभव हो जायगा। परमात्माने सृष्टि ऐसी रची है कि वृक्षोंकी सहायतासे मनुष्य इत्यादि और मनुष्य इत्यादिकी सहायतासे वृक्ष अर्थात् स्थावरकी सहायतासे जंगम और जंगमकी सहायतासे स्थावर सुगमतासे पृथ्वीपर जीते रह सकते हैं।

(२) ज़रा ध्यान देकर अपने दिलमें सोचिये हमारी जितनी आहारकी वस्तुएं हैं, नानाप्रकारके भाँति भाँतिके स्वादिष्ट भोजन, सब ही वृक्षोंसे पैदा होते हैं। दाल, गेहूं, चावल, तरकारियां फल इत्यादि सब वृक्षोंसे ही मिलते हैं। मांस और दूध दही भी हमको वृक्षोंसे ही प्राप्त होते हैं, क्योंकि जिन पशुओंसे यह हमको मिलते हैं वह अपना पालन वृक्षोंसे ही करते हैं। जरा सोचिये तो, देखिये क्योंकर आप वृक्षोंकी सहायता बिना जीवित रह सकते हैं?

(३) हमारे उत्तमसे उत्तम वस्त्र हमको वृक्षों-से हीं प्राप्त होते हैं। क्या राजा क्या प्रजा क्या धनवान क्या दरिद्री सब अपने पहिनने ओढ़ने-की वस्तुएं वृक्षोंसे ही प्राप्त करते हैं। सूती कपड़े रुईसे बनते हैं। रुई कपासके पेड़से प्राप्त होती है। रेशम कीड़ोंसे प्राप्त होता है, और यह कीड़े अन्डी सहतूत इत्यादि वृक्षोंपर अपना जीव निर्वाह करते हैं। ऊन भेड़, बकरी इत्यादिसे प्राप्त होता है। इनके जीवके उद्धारके-लिये भी वृक्षोंकी आवश्यकता होती है। अगर संसारमें वृक्ष न हों तो हम बिलकुल नंगे फिरैं और जाड़े गर्मीसे अपनेको बिलकुल न बचासकें और हमारी दशा बिलकुल जंगली मनुष्योंकी तरह हो जाय।

(४) हमारे नानाप्रकारके मसाले धनियां, मिरच, हल्दी, अदरख, सोंठ, राल, लौंग, इलायची, हींग, जावित्री, कथ्था, सुपारी, पान इत्यादि सब वृक्षोंसे ही प्राप्त होते हैं। तरह तरहकी लकड़ी तरह तरहके रंग लाख, माजू-फल, गोंद, नानाप्रकारके सुगंधित इत्र और तेल सब हमको वृक्षोंसे हीं प्राप्त होते हैं।

(५) वृक्षोंकी एक और अपूर्व लीला देखिये जहां कहीं वृक्ष बहुतसे एकत्रित होते हैं भूमि उनके जड़ोंके कारण स्पंजकी तरह पोली होती है और जो आकाशसे वरषाका पानी ऐसे स्थान-पर पड़ता है वह भूमिमें उसी तरह समा जाता हैं जैसे स्पंजमें पानी समा जाता हैं। क्योंकि यहांपरकी भूमि स्पंजकी ही तरह पोली होती है इसके पश्चात् यह रसकर चुवान तक पहुंच जाता है, और फिर पृथ्वीके गर्भमें जो जलकी धाराएँ होती हैं उनमें मिल जाता हैं। और यहां धीरे धीरे बहकर नदियोंमें आता रहता है। ऐसे स्थानपर बहियाके रूपमें पानी बहकर बहुत कम नष्ट होता है। नदियोंमें भी पानी बिलकुल नहीं सूख जाता, जिन देशोंमें जंगल काट डाले गये हैं वर्षाकी ऋतुमें बहुत वेगसे बहिया आती है और सब पानी वहजाता है और फिर भूमि पत्थरके समान सूखी रह-जाती है। ऐसे स्थानोंमें नदियां भी एक ऋतुमें पानीसे खूब भरी रहती हैं और दूसरी ऋतुमें बिलकुल सूख जाती हैं, यही हाल आजकल हमारी गङ्गाजीका हो गया है।

बादलकी धाराएँ जो समुद्रोंसे उड़कर अन्य अन्य देशोंपर आती हैं उनसे कभी जल प्राप्त होता है और कभी नहीं प्राप्त होता। जबकि हमारे स्थानपर वायुमण्डलकी हवा सूखी होती है बादलोंसे पानी नहीं प्राप्त होता। पहले यह सूखी हवा नम होती है और इसमें नमी प्रति दिन बढ़ती जाती है। इसके पश्चात् पानी बरसता है। जंगलोंके ऊपरकी हवा हमेशा नम रहती है। क्योंकि वृक्षोंसे लाखों मन पानी उड़ता रहता है। इस कारण ऐसे स्थान पर जब कभी बादल उड़ कर आते हैं कुछ न कुछ जल अवश्य बरसा जाते हैं। ऐसे स्थानोंपर ऐसा नहीं होता कि पानी महीनों न बरसै और बरसै भी तो बहुतसा एकदम बरस जाय, जहां कहीं वृक्ष बहुत लगे होते हैं वह स्थान धूपसे ज़्यादा गरम नहीं होते। जंगलोंमें लू नहीं चलती, और जाड़ेमें वहां ज़्यादा सर्दी भी नहीं होती।

(६) शहरोंमें तंग छोटे मकानों और तंग गलियोंमें रहनेसे मनुष्य रोगी दुर्बल और पीड़ित रहते हैं। खाना नहीं पचता, मिहनत-का काम नहीं हो सकता। नगर-वासियोंकी आयु बहुत थोड़ी हो जाती है। और राजयक्ष्मा (क्षयी) आदि रोग बहुत वेगसे फैलता है। विज्ञान वेत्ताओं ने यह सिद्ध किया है कि नगर-निवासियोंको रोग केवल उनको काफ़ी मात्रा-में स्वच्छ वायु न मिलनेके कारण होते हैं। इसका बहुत उत्तम उपाय यह निकाला गया है कि बड़े बड़े नगरों में जगह जगह पर बाग़, और लान बनाएँ और इनमें सुन्दर वृक्ष लगावें

जिसके कारण वायुमें आक्सिजन गैस अधिक मात्रामें फैल जाती है और नगरकी वायु स्वच्छ और बलदायक हो जाती है इससे नगर निवासी नीरोग रहते हैं, सायंकाल और प्रातः काल कुछ समय बागोंमें आनन्दसे व्यतीत करनेसे स्वास्थ अच्छा हो जाता है।

(७) आज कल हमारे देशमें जितने विद्यार्थी मैडीकल स्कूल या कालिजसे पढ़ कर निकलते हैं, मानों यूरूपीय औषधोंकी विक्री-की उतनी हीं एजेंनसियां हो जाती हैं और जड़ी बूटीसे जो औषधें प्राप्त होती हैं, उनकी उतनी ही मांग कम होती जाती है और प्रति दिन इसमें कोई कमी होती नहीं दिखाई देती है। कृषि कर्ममें भी हम अपनी जिन्सके अति-रिक्त जो कोई वृत्त खर पतवार, वीडस इत्यादि पाते हैं सब खोदकर नष्टकरडालते हैं। इन वृत्तोंमें जो खर पतवार कहलाते हैं अनेक बहुतसे रोगोंकी अनमोल औषधि हैं, परन्तु यह सब नष्ट हो जाती हैं। विलायतमें एक कारखानेमें दो सौ बीघेका बाग़ है जिसमें केवल औषधियोंकेलिये जड़ी बूटी ही बोयी जाती हैं। हमारे देशको यही दुर्दशा रही तो किसी समयमें यह जड़ी बूटियां सम्पूर्ण नष्ट हो जायँगी। कोई वृत्त ऐसा नहीं है जिसकी जड़ छाल, पत्ती, फूल, बीज इत्यादि किसी न किसी रोगकी औषधि न हो।

(८) नहिं पराग नहिं मधुर मधु,
नहिं विकास यहि काल।
अली कली ही सों रम्यो,
आगे कौन हवाल। (विहारी)

हमारे कवि और सर्बसाधारण भी जानते हैं कि जिन बृत्तोंमें फूल होते हैं उनमें शहद भी होता है परन्तु इस देशमें सिवाय कवियों-के किसीने उस "मधुर मधुकी" क़दर न की। इस शहदको काममें लानेकी कोई तरकीब नहीं निकाली। जैसे हम भेड़ पालते हैं और घास चराकर उनका ऊन अपने काममें लाते हैं अमेरिका और अन्य अन्य देशोंमें शहदकी मक्खियां पालकर फूलोंसे शहद एकत्रित कराकर अपने काममें लाते हैं। इस प्रकार अमेरिकामें हज़ारों मन शहद इकट्ठा होता और बिकता है।

(९) जटलेन्ड वह देश है जिसके उत्तरमें अभी हमारी सरकारने ज़र्मनोंके बेड़ेको परास्त किया है। यहां हजारों बीघा भूमि रेत-से ढकी पड़ी है और बेकार है Mr. Christian Dalgas डलगसने इस भूमिको काममें लाने-की एक नयी तरकीब निकाली है। जिस स्थान-पर अच्छी ज़मीनकी हद आ जाती है और रेत पड़ने लगतो है वहांपर वह जंगल लगाना आरम्भ कर देते हैं और हर साल इन जंगली बृत्तोंकी सीमाको रेतकी तरफ़ आगेको बढ़ाते जाते हैं। जब कुछ सालोंमें भली भांति यह बृत्त रेतकी तरफ़ उग आते हैं तो पीछेकी तरफके वृत्त काटे जाते हैं। इस तरह वृत्तोंके-द्वारा मरुभूमि बड़ी उपजाऊ और उत्तम भूमि हो जाती है।

इसी प्रकार राजपूताना इत्यादिमें जो रेतीले मैदान पड़े हुए हैं उनमें वृत्त लगा कर हम सुधार सकते हैं और खेतीके योग्य बना सकते हैं।

(१०) भांति भांतिके पत्ती बृत्तोंपर ही बैठ-कर अपनी मधुरबानीसे हमको अपने आनन्द दायक सुर सुनाते हैं। वृत्त न हों तो यह पत्ती कहां रहेंगे? बृत्तोंके ऊपर यह पत्ती बसेरा लेते हैं और अपने शत्रुओंका शिकार होनेसे बचे रहते हैं। बृत्त न हों तो यह सब एकदमसे नष्ट हो जायँगे। हम लोगोंको भी बृत्तोंकी छाया बड़ी आनन्द दायक मालूम होती है।

(११) भूगर्भशास्त्र हमको यह बतलाता है कि पृथिवी जैसी है, ऐसी सदैव नहीं थी और न रहेगी। जल, वायु और जाड़े गर्म्मीके

प्रवाहसे इसमें भांति भांतिके परिवर्तन होते रहते हैं और इसका रूप बदलता रहता है। जहां कहीं वृक्ष पाते हैं भूमि पानीके कटावसे बची रहती है। और जाड़े गर्म्मीका उसपर कम प्रभाव होता है। बर्षाके समयमें किसी खुले मैदानको देखिये उसकी कितनी मिट्टी पावीसे कट कट कर बह जाती हैं। और जगह जगह पानीके कटावके निशान दिखाई देंगे।

वृक्षोंसे यह पृथ्वी अति सुन्दर हो जाती है। पहाड़ोंको देखिये वृक्षोंसे ढके हुये कैसे सुन्दर मालूम देते हैं। भाँति भाँतिकी सुगंधित और रंगीन फूलोंको झाड़ियाँ अत्यन्त सुन्दर आनन्द-दायक मालूम देती हैं। जिस किसी स्थानपर कोई पार्क बना होता है वह सुन्दर वृक्षोंसे ऐसा भला मालूम होता है कि कभी वहाँ से हटनेको जी नहीं चाहता।

(१२) अगर परमेश्वरकी रचना देखना हो और यह देखना हो कि परमेश्वर सर्वव्यापी हे और जीव वृक्षोंमें भी है तो वृक्षोंको हीं दृष्टि-गोचर कीजिये। वृक्षोंमें फूल पत्ती, सुगंध कोई चीज़ व्यर्थ नहीं है सबका कोई न कोई कारण अवश्य है। फिर यह देखिये कि वृक्ष शत्रुओंसे बचनेके लिये, अपना भोजन प्राप्त करनेके लिये, अपना वंश आगे चलानेकेलिये, भांति भांतिके यत्न करते हैं जिसको देखकर मनमें यही ज्ञात होना है कि मानों वृक्षोंमें भी मनुष्यही कीसी बुद्धि है।

"संत विटप, सरिता, गिरि, धरनी,
परहित हेतु सबनकी करनी। (तुलसी)

---

## बबूलकी उपयोगिता

[ ले० सत्यनारायण, कविरत्न ]

पीत पुष्प बबूलका परिचय हम लोगोंसे गुप्त नहीं है। यह शूलधारी वृक्ष इस देशमें प्रायः सर्वत्र मिलता है। दीर्घ कण्टक होते हुए भी यह इतना सरस है, कि घोर ग्रीष्म कालमें भी इसका हरा भरा पन बना रहता है। इसकी सुन्दर श्यामल छटा, सूर्य ताप-से संतप्त पथिकके नयनोंको दूरसे ही शान्ति प्रदान करती है, भीनी भीनी वर्षा हो रही है उस समय इसके पुष्पोंकी सुगन्ध बड़ी आनन्द विधायिनी होती है। इसीसे इसका नाम 'षट पद मोदिनी' कहा जा सकता है, यह अपने आप इतनी अधिकतासे होता है, कि सर्व-साधारणका ध्यान इसकी ओर आकर्षित नहीं होता, इसीसे इस विचारेको अपना कांटा चुभोकर सब किसीका ध्यान खींचना पड़ता है। जैसे इस देशमें तुलसी, नीम, पीपलादि वृक्ष अपने अपने उपकारकेलिये प्रसिद्ध हैं, यदि बबूलका यथार्थ उपयोग किया जाय तो किसी दशामें यह भी उनसे कम नहीं है। इसके छोटे छोटे छटादार पत्तोंमें बड़ी लस होती है, उन्हें पीसकर ठंडाईकी तरह पीनेसे प्यास अधिक तंग नहीं करसकती। इसकी छाल चमड़े रंगनेमें काम आती है। कत्थाभी एक प्रकारके बबूलसे ही पकाकर बनाया जाता है। इसे कुछ काल उपयोगमें लानेसे कफ-विकार कास स्वांस, आमरक्त, अतिसार एवं पित्तदाह-का, कष्ट निस्सन्देह नष्ट हो जाता है। इसके कोमल नव पल्लव दलका चूर्ण अतिसार तथा उपदंशके दूर करनेमें हितकारी कहा जाता है, नेत्र रोग विशेषकर ढलकेमें, इन्हें महीन पीस-कर मधुके साथ लगानेसे लाभ होता है। इसकी अन्तर छालके काढ़ेको विशेष गाढ़ा

करके एक बत्तोसी बनाली जाय और शुद्ध कड़वे तैलमें घिसकर लगानेसे भी नेत्र विकार प्रायः दूर होते हुए देखे गये हैं। हड्डी टूटनेपर इसकी छालका चूर्ण मधुके साथ सेवन करनेसे हड्डी वज्रके समान दृढ़ हो जाती है। जलोदर रोगमें इसकी छालका काढ़ा औटाकर गाढा कर, मठेके साथ पीनेसे कठोर रोग भी नष्ट हो जाता है। इसका गोंद प्रातः बटिका बनानेके काममें आता है किन्तु यह रक्तातिसार, नकसीर, प्रदर प्रमेहादि भयंकर रोगोंकी अव्यर्थ औषधि है। इसकी फलियोंके गुण अकथनीय हैं, उनके विषय में निम्नलिखित श्लोक ही पर्याप्त होगा—

बब्बूलस्य फलंरुक्षं विशदं स्तम्भनंगुरू
कृषायं मधुरं शीतं लेखने कफ पित्तहृत्।

ग्रीष्मऋतुमें इसके पंचांग सेवनका बड़ा महात्म्य कहा गया है। औरतोंको इसके शूल कांटेभी जलमें औटाकर पिलानेसे उदर शूलमें उपयोगी सिद्ध हुए हैं।

लेखकने श्वासरोगमें इसकी छालका प्रयोग किया है और कराया है आरम्भिक अवस्थामें बहुधा लाभ होते देखा गया है, इसके साथ जो और वस्तु मिलायी जाती हैं वह निम्नलिखित हैं—

१ भाग बबूलकी अन्तर छाल
१० भाग जल
$\frac{१}{१६}$ भाग काली मिर्च
$\frac{१}{८}$ भाग मुलहठी (मधुयष्टि, जेठीमधु) चूर्ण
$\frac{१}{८}$ भाग बबूलका गोंद
$\frac{१}{४}$ भाग मिश्री

इसके अवलेहसे कास श्वासमें आश्चर्यजनक उपकार होता है सुनागया है कि इसके पुष्पित वृक्षोंमें वहने वाली वायुके सेवनसे क्षयका भी क्षय हो सकता है। चीड़ वृक्षका (जो एक प्रकारका देवदारु होता है) इसे सम कक्षही समझिये। यदि यह ग्राही (कब्ज करनेवाला) न होता तो इसे कल्प द्रुम कहनेसे भी अति शयोक्तिका दोष नहीं होता। सेवन करनेके समय इसके उक्त अवगुणसे बचनेकेलिये सर्व मंगलमयी जननी हरीतकीका आश्रय लेनेमें ही श्रेय है। माताकी पाणिपल्लव-छायामें इसके शूल रोग रिपुओंके नाशार्थ त्रिशूल हो जाते हैं।

---

## भोजनकी पुकार

[ ले० चिरंजीलाल माथुर बी. ए., एल्. टी. ]

कहते हैं कि राजा बीर बिक्रमाजीतके राजमें केवल जीवजन्तुओंकी नहीं किंतु वनस्पति इत्यादिकी भी पुकार सुनी जाती थी। जिस प्रकार सुलेमानने चींटीकी पुकार सुनी थी, भारतमें विक्रमके विषयमें कहा जाता है कि निर्जीव वस्तुका भी न्याय करता था। एक समय भोजनने आकर पुकार की, "अन्याय, अन्याय, मेरे साथ बड़ा अन्याय होता है?"

राजा—किसने तुम्हारे साथ अन्याय किया, किसके खिलाफ़ तुम्हारी शिकायत है?

भोजन—महाराज समस्त मनुष्य जाति मेरे साथ जुल्म करतो है और खासकर वैद्य हकीम।

राजा—अपना सब वृत्तांत कह सुनाओ। मनुष्य जाति तुम्हें किस प्रकार दुःख देती है और वैद्य हकीम तेरा क्या करते हैं।

भोजन—महाराज मैं भली भांति अच्छा रूप बनाकर गंध इत्यादि धारण करके अपने उत्तम स्वभाववश उनकी सेवामें उपस्थित होता हूँ तो वह निर्दयी मुझे अपने पास तो बिठला

लेते हैं, फिर जैसा बरताव करते हैं मैं ही जानता हूँ और महाराज वैद्य हकीम समस्त मनुष्योंको मेरी बुरी गत बनानेकी सम्मति देते रहते हैं।

राजा—अरे भोजन! भाई तनिक विस्तार-पूर्वक बतलाओ, तुम्हारे साथ क्या बरताव होता है?

भोजन—महाराज ज्यों ज्यों मैं उनकी दुष्टतासे छूटनेकेलिए उनसे भलाई करता हूं, वह मेरे साथ खुटचाल करते हैं।

राजा—अच्छा तो पूर्ण रीतिसे अपनी सब कहानी कह सुनाओ, हो सकेगा तो हम तुम्हारी रक्षाका प्रबंध करेंगे।

भोजन—आपका बोल बाला रहे। आपने मुझे रक्षाकी आशा दिलायी है, तो मैं भी अपना हाल पूर्ण रीतिसे निवेदन करता हूँ। ध्यान देकर सुनिये तो आपको मालूम होगा कि मेरे साथ क्या सलूक होता है—

सरकार! जब मैं उनके समीप उपस्थित होता हूँ, पहले तो आसन सहित मुझे अपनी ओर खींच लेते हैं. या स्वयम् मेरे पास आ जाते हैं। इस समागमसे मेरा चित्त प्रसन्न होता है, परंतु शीघ्र ही यह बेमुहब्बत मेरे ऊपर हाथ साफ़ करने लगते हैं। पहले तो मेरे टुकड़े करके अँगुलियोंके बीच दबाते हैं और फिर मुँह में रख लेते हैं। मुँहमें पहुंचतेही उनको प्रसन्न करनेकेलिए अच्छा स्वाद देता हूँ कि इससे ही मेरा पीछा छोड़ दें, परंतु इन निर्दयी विश्वास घातियोंसे मेरी आशा व्यर्थ थी। मेरे ऊपर तो उनके दांत पहलेसे ही थे. सो स्वाद लेकर भी मेरे अंग अंग दांतोंसे पीसकर चूर्ण कर डाले। भला करे परमेश्वर वैद्य हकीमोंका! यह उनको उकसाते हैं कि भोजनको खूब चबाओ। बत्तीस बत्तीस बार दांतसे पीसो। महाराज! मनुष्यके मुखमें छोटी छोटी गोलीसी दांतोंके पास बनी हैं, उनका मैंने कुछ बिगाड़ा नहीं परन्तु फिर भी मुझे विष देनेकी कोशिश करती हैं। मैं पिसा कुटा तो होता ही हूं, उनमेंसे निकला हुआ घुलानेवाला अरक मुझे पानी सा पतला कर देता है। इस स्थानपर एक बात तो अवश्य अच्छी होती है। मेरेमें जितना कुछ ( starch ) स्टार्च अर्थात् मंड है उसकी ( sugar ) शर्करा बन जाती है। शायद इसी परिवर्तनकेलिए दांतोंकी चढ़ाई मेरे ऊपर अधिक होती है। और महाराज! जीभ भी मुझे खूब उलट पलटकर पद दलित करती है और अंतमें मुझे एक गुफामें ढकेल देती है। इस खड्डमें गिरती बेर मेरे होश उड़ जाते हैं। केवल इतना मालूम होता है कि गुफा तंग है उसमें भी मुझे थोड़ा थोड़ा दबकर अंदर जाना पड़ता है। जान पड़ता है कि गुफाकी भीतोंमें दबानेकी शक्ति है। यही बात है कि नट लोग बांससे औंधे लटके हुए भी मुझे हड़पकर जाते हैं। इस नली रूपी गुफासे निकलकर एक चौड़े मैदानमें पहुंचता हूं। यह मैदान भी मेरे साथ कसर नहीं करता। कई विषकी गरम गरम धाराएं आकर मुझे डुबाकर, दम घोंट लेती हैं और मेरे प्राण निकाल लेती हैं। वहाँ मुझे कमसे कम तीन घंटे कैद रहना पड़ता है। मेरा जीव अथवा सत निकलके एक नलीमें होकर दूसरी ओर चला जाता है और रक्त बनकर भ्रमण करने लगता है और मेरी निर्जीव लाश फिर एक खड्डमें ढकेल दी जाती है। फिर एक नलीमें होकर घसीटी जाती है। जिस नलीमें होकर मैं मैदानमें आया था उसकी अपेक्षा यह नली मुलायम और कोमल तो है परंतु पेंचदार है, सर्पकी सी लपेटें लिए हुए हैं कई फ़ुट लम्बी है। इसके दो भाग हैं। ऊपरके भागमें जबतक मैं घसीटा जाता हूँ तबतक मेरा कस निकालनेमें कसर नहीं छोड़ी जाती। और जितना बलवान मनुष्य होता है उतना ही अधिक कस खेंचता है। इस सर्पाकार नलीके नीचेके भागमें जब मेरा शव पहुंचता है, बिल-

कुल बेकार हो जाता है। फिर उसे निकाल फेंकनेकी सूझती है। कोई घरमें और कोई घरसे बाहर उस शवको निकाल देते हैं। कभी कभी शव रुक जाता है बाहर नहीं निकलता। फिर मनुष्य अंडीका तेल पहुंचाकर चिकनाकर देता है, जिससे लाश फिसल पड़ती है। ऐसा ऐसा बरताव मेरे साथ होता है। अब न्याय आपके हाथ है। महाराज, मेरा न्याय हो।

राजा—इतना हाल तो सुन लिया। अब जो कुछ और कहना हो सो कहो।

भोजन—और महाराज क्या निवेदन करूँ। मनुष्यने मेरे रूपमें भी बड़े बड़े भयानक परिवर्तन कर दिये। कोई तो पशुओंकी आंत ओजड़े मुझमें मिला देते हैं। कोई पशुओंके अंडे ही मुझमें डाल देते हैं। मनुष्यके सिवाय और किसी प्राणीने मेरी ऐसी दुर्गति नहीं की, सब अपना प्राकृतिक भोजन साधारण रीतिसे पालेते हैं परन्तु मनुष्यने कोई वस्तु ऐसी नहीं छोड़ी जो मुझमें न डालदी हो। दाल भात खावें उसमें मच्छी मांस भी डाल दें। घी चीनीके लड्डू बनावें उसमें अंडेकी ज़रदी मीठा पाक बनावें उसमें बंग चांदी पारा इत्यादिकी भस्म भी मिलादें! इस प्रकार मेरे रूपको बिगाड़ते हैं। सो, धर्म्मावतार, कृपाकर मेरा न्याय कर दीजिये।

राजा—सुनो भाई भोजन तुम्हारी शिकायत सर्वथा यथार्थ है। इसमें संदेह नहीं तेरे साथ मनुष्य अपने स्वार्थके हेतु ऐसा ही करता है। परंतु सुन, संसारमें उपकार भी कोई वस्तु है। कष्ट देने वालेसे कष्ट पानेवालेका पद ईश्वरकी दृष्टिसे ऊँचा है। कष्ट उठानेवालेको कोई बुरा नहीं कहता और दुःखके पीछे सदा सुख होता है। सो तुमको संतुष्ट रहना चाहिए। रहा तुम्हारे स्वरूपको बिगाड़ना। सो भाई सुन, ईश्वर स्वयम् न्याय कर देता है। जो तेरा रूप बिगाड़ते हैं, दुःख भोगते हैं। तेरेमें मांस मिलानेवालोंका हृदय कठोर हो जाता है, बारीक बातोंको समझनेकी शक्ति खो बैठते हैं। उनके चित्तका झुकाव पशु वृत्तिकी ओर अधिक हो जाता है। इससे बढ़कर और क्या दंड होगा? भस्मसे जो तेरा रूप बिगाड़ते हैं उनका रक्त अशुद्ध हो जाता है. उष्णता बढ़कर रोग उत्पन्न हो जाते हैं, इन सबको ईश्वर दंड देता है।

भोजन—महाराज! आपका उत्तर सुनकर मुझे बड़ी शांति हुई अब मैं संतुष्ट हूं। मुझे जानेकी आज्ञा हो! इतना कह प्रणाम कर भोजन जी महाराज अपने स्थानको पधारे।

---

## तार कैसे भेजे जाते हैं?

[ ले० वी-एस तम्मा, एम्. एस-सी. ]

भूपाल—भाई साहब, आपने कल उन व्यवस्थाओंके समझानेका वादा किया था जिनकी सहायतासे हम लोग मीलों दूर होनेपर भी आपसमें बड़ी सुगमतासे बातचीत कर सकते हैं यदि आपको अवकाश हो तो समझानेकी कृपा कीजिये।

गोपाल—ऐसी व्यवस्थाओंके समझानेका वादा तो अवश्य मैंने किया था पर मेरी इच्छा यह है कि पहले तुम्हें उस व्यवस्थासे परिचित करूं जिसके द्वारा हम लोगोंके संदेशे एक स्थानसे दूसरे स्थानतक थोड़े ही अवकाशमें भेजे जा सकते हैं। लगभग एक महीनेके हुआ जब बाबूके नामपर एक तार आया था सो तुम्हें याद ही होगा। वह तार पिताजीने कोल्लूरसे भेजा था। क्या तुम्हें मालूम है कि उस तारको कोल्लूरसे यहां आनेमें कितना समय लगा?

भूपाल—यह तो मुझे याद है कि तार आया था पर इस बातकी मुझे कुछ भी ख़बर नहीं कि उसे यहां आनेमें कितनी देर लगी।

गोपाल—तार पिताजीने कोल्लूर तारघरसे

दिनमें ठीक ११ बजे दिया था और वह बाबूको उसी दिन लगभग ३ बजे यहां मिला। तुम्हें यह तो मालूमही है कि कोल्लूर यहांसे लगभग १६०० मील दूर है।

भूपाल—क्या इतनी दूरसे तारके यहां आनेमें केवल ४ ही घंटे लगते हैं ?

गोपाल—नहीं इतनी देर तो इस कारण लगती है कि कोल्लूर एक छोटा सा गांव होनेके कारण तार वहांसे सीधा यहां नहीं भेजा जाता परन्तु वहांसे कई अन्य स्थानोंमें होता हुआ यहां आता है।

भूपाल—मानो कोल्लूर एक छोटासा गांव है परन्तु यह मेरी समझमें नहीं आता कि वहांसे भेजा हुआ तार यहां पहुंचनेके पहिले रास्तेमें क्योंकर भटका फिरे ?

गोपाल—इसका कारण समझनेकेलिये यह तुम्हें जानना चाहिए कि तार एक स्थानसे दूसरे स्थानतक विद्युत्प्रवाहकी सहायतासे भेजा जाता है। यह तो तुम्हें मालूमही है कि विद्युत्प्रवाहोत्पादक पात्रके दोनों छोर जबतक किसी तांबेके तारसे न जोड़े जाएँ तबतक विद्युत् प्रवाह शुरू नहीं होता। साधारणतः वस्तुएँ दो प्रकारकी होती हैं—जिन वस्तुओंमें विद्युत्प्रवाह सुगमतासे होता है उन्हें विद्युद्वाहक कहते हैं; परन्तु जिनमें इस प्रवाहका अवरोध (अटकाव) होता है उन्हें विद्युदवरोधक संज्ञा दी गई है। धातुएं विद्युद्वाहक होती हैं। रवर, कांच, रेशम गंधक इत्यादि विद्युदवरोधक पदार्थोंके उदाहरण हैं। मनुष्यका शरीरभी विद्युत्वाहक होता है। इन बातोंके जाननेपर विद्युत्प्रवाह उत्पन्न करनेके लिये तांबेके तारकी योजना क्यों की गई थी यह तुम समझ सकते हो।

भूपाल—यह तो सरल है क्योंकि तांबा विद्युद्वाहक होनेके कारण विद्युत्प्रवाहोत्पादक पात्रके छोर तांबेके तारसे जोड़े जानेपर विद्युत्का प्रवाह होनेकेलिए रास्ता खुल जाता है। परन्तु यह मेरी समझमें नहीं आता कि मेरे प्रश्नसे और इन बातोंसे क्या सम्बन्ध है ?

गोपाल—तार एक स्थानसे दूसरे स्थानतक विद्युत्प्रवाहकी सहायतासे भेजे जानेके कारण यह अत्यन्त ही आवश्यक है कि दोनों स्थान विद्युद्वाहक तारोंकेद्वारा मिले हों एक तार तो प्रवाहको ले जानेवाला हो और दूसरा उसे लौटा लानेवाला हो। अब तुम यह समझ सकते हो कि कोल्लूरसे भेजा हुआ तार यहां आनेतक मार्गमें भटकता हुआ क्योंकर आया होगा ?

भूपाल—मुझे जान पड़ता है कि इसका कारण केवल यही हो सकता है कि कोल्लूरसे चलनेवाले तार प्रायः सीधे यहांतक नहीं आये होंगे।

गोपाल—तुम्हारा अनुमान बिलकुल ठीक है। तेनाली सीधा कोल्लूरसे तारद्वारा मिला है। कोल्लूरसे पहले तार वहीं भेजा जा सकता है, फिर वहांसे और दूसरे किसी स्थानको इसी कारण कोल्लूरसे चलनेवाला तार कई स्थानोंमें होता हुआ यहा पहुंचता है।

यदि किसी पानीके हौदसे भिन्न भिन्न व्यासके नल निकलते हों तो उनमेंसे नलोंके व्यासानुसार पानीका बहाव थोड़ा व अधिक होगा। इसी तरह विद्युद्वाहक पदार्थोंमें विद्युत्का प्रवाह वाहक तारोंके व्यासानुसार थोड़ा व अधिक होता है इस प्रवाहमें विशेषता यह भी है कि भिन्न भिन्न वाहकोंके बने हुए समव्यासके तारोंमें भी भिन्न भिन्न प्रमाणसे विद्युत्का प्रवाह होता है। इसी कारण दो स्थानोंको मिलने वाला तार पहले तो मोटा होना चाहिए दूसरे ऐसी वस्तुका होना चाहिए जो उत्तम वाहक हो धातुओंमें सबसे उत्तम वाहक चाँदी है उसके अनन्तर ताँबा, परंतु साधारणतः लोहेके तारोंका ही उपयोग किया जाता है क्योंकि ताँबेके तार लगानेमें अधिक द्रव्यकी आवश्य-

कता होती है। लोहेके तारको ज़ंगसे बचानेके-लिए उसपर जस्तकी कलईकी जाती है।

भूपाल—भाई साहब, आपने तार ही तार-पर बहुत कुछ कह डाला। यह भी बतलाइये कि तारके सिवा संदेशा भेजनेमें और भी किसी वस्तुकी आवश्यकता होती है।

गोपाल—जिन यंत्रोंकेद्वारा तार एक स्थान-से दूसरे स्थानको भेजा जाता है उसके विषयमें मैंने तुम्हें कुछ भी नहीं बतलाया। अबतक तो दोनों स्थानोंको जोड़नेवाले तारके ही विषयपर बात चीत हो रही थी। अभी यह तो तुम्हें बतलाया ही नहीं कि यह दोनों स्थान तारोंसे किस तरह जोड़े जाते हैं।

भूपाल—यह तो मुझे मालूम है तारके खंभों-पर लगे हुए तारोंसे ही तो जोड़े जाते हैं। दोनों स्थानोंके बीच ऐसे ही खंबे गाड़कर तार एक स्थानसे दूरसे स्थानको लेजाते हैं।

गोपाल—परंतु तारके खंभोंपर तार जो चीनी मिट्टीकी गुढियोंमें लगे होते हैं उन गुढियोंका प्रयोजन भी तुम्हें कुछ मालूम है?

भूपाल—यह तो मैं नहीं जानता।

गोपाल—चीनी मिट्टी विद्युदवरोधक है। तारके खंभे प्रायः लोहेके होते हैं और वे ज़मीनमें गड़े होते हैं-लोहा और पृथ्वी दोनों विद्युद्वाहक होनेके कारण तार यदि खंभोंसे ही बाँध दिये जावें तो विद्युत्प्रवाह खंभोंमें होकर धरतीमें ही होने लगेगा। इसी कारण चीनी मिट्टीकी गुढियों-का उपयोग किया जाता है। तार गुढियोंके गले-पर ही लपेटनेके कारण प्रवाह खंभेकी ओर नहीं झुक सकता। प्रायः दो प्रकारकी गुढियोंका उपयोग किया जाता है, भेद इतना ही है कि एकमें तार और खंभेके बीच चीनी मिट्टीकी एक ही तह होती है और दूसरेमें दो तह।

दूसरे प्रकारकी गुढियाका उपयोग करनेसे खंभेमें प्रवाहके जानेकी संभावना बहुत घट जाती है।

मैंने तुम्हे यह बतलाया था कि एक स्थान-से दूसरे स्थानको दो तारोंद्वारा मिलाना पड़ता है जिससे एक तारसे विद्युत्प्रवाह एक स्थानसे दूसरे स्थानको जावे और दूसरे तारसे लौट आवे। परन्तु वास्तव-में एकही तारका उपयोग किया जाता है, दूसरे तार-के बदले धरतीका ही उपयोग किया जाता है क्योंकि धरती भी विद्युद्वाहक है।
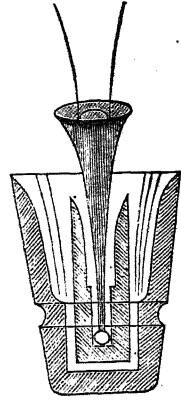
चित्र नं० १

अब तक में दोनों स्थानोंके जोड़नेवाले तारोंके विषयमें ही कह रहा था तार एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजनेमें इसके अति-रिक्त और दो यंत्रोंकी आवश्यकता होती है। एकतो वह जिससे तार भेजा जाता है और दूसरे जिससे वह तार पढ़ा जाता है। तुम्हें याद ही होगा कि जब किसी तांबेके तारमें विद्युत्प्रवाह होता हो और उस तारके समीप यदि दिशा सूची चुम्बककी सुई लाई जावे तो सुई उत्तर दक्षिण नहीं बतलाती किन्तु घूम जाती है। इस नियमका उपयोगकर एक विद्युत्प्रवाहमापक यंत्र निर्माण किया गया है। इस यंत्रकी रचना बहुत सरल है। किसी लकड़ी वा पीतलकी रील पर सूत वा रेशमसे ढका हुआ तांबे वा जर्मनसिलवरका तार लपेटा है। जो तार विद्युतप्रवाहको ले जानेकेलिए रीलपर लपेटा जाता है उसपर पहले सूत या रेशमके धागोंको लपेटना बड़ा आवश्यक है नहीं तो विद्युत-प्रवाह तारकी पूरी लपेटका चक्कर न लगाकर एक लपेटसे दूसरे लपेटको उस स्थानसे अवश्य चला जायगा जहां दोनों लपेटोंका स्पर्श होगा और यह प्रत्यक्ष है कि जब रीलपर तार पास पास लपेटा जायगा तब एक लपेटका दूसरी

लपेटसे और दूसरीका तीसरीसे स्पर्श अवश्य ही होगा। दिये हुए चित्र २से यह बात अच्छी
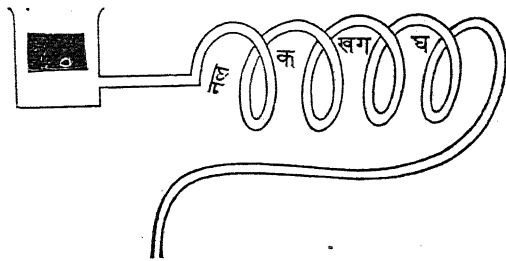
चित्र नं० २

तरह समझमें आ जायगी। एक चौखूंटा हौद पानीसे भरा हुआ है जिसमें कई लपेटोंका एक कुंडलाकार नल लगा है। जिससे पानी बाहर निकलता है। ऐसी दशामें पानी कुल लपेटोंमें होता हुआ बाहर निकल सकता है। यदि इन लपेटोंके क, ख, ग, घ स्थानोंमेंसे कोई दो तीन वा चारों एक सीधे नलसे भी जोड़ दिये जायँ तो पानी पहली, पहली दोनों वा पहिली तीनों लपेटोंमें चक्कर न लगाकर सीधा ही वह जायगा। जैसे यहां सीधा नल लगा देनेसे लपेटोंमें पानीका जाना बन्द हो जाता है वैसे ही रीलपर लपेटे हुए तारकी लपेटोंके स्पर्श मात्रसे विद्युतप्रवाह स्पर्श स्थानोंसे सीधा चला जाता है चक्कर नहीं लगाता। रेशम वा, किसी विद्युद्वरोधक पदार्थको तारमें लपेट देनेसे स्पर्श नहीं होने पाता, जिससे विद्युद्धाराको चारों ओर घूमना पड़ता है और उसका प्रभाव भीतरवाली चुम्बक सुईपर अच्छी तरह पड़ता है।

विद्युत्प्रवाहमापक यंत्रोंमें रीलपर तारोंके लपेटोंके कई तह होते हैं। हर एक तहके बीच भी कोई विद्युद्वरोधक वस्तुका एक स्तर दिया जाता है। इस रीलके मध्य भागमें एक बारीक बे बटे हुए रेशमके डोरेसे दिशा सूची सुई लटकाई जाती है। जब इस तारके दोनों छोर विद्युत्प्रवाहोपादक पात्रके दोनों छोरोंसे जोडे जाते हैं तो इस तारमें विद्युत्प्रवाह होता है और दिशा सूची सुई अपने स्थानसे घूम जाती है विद्युत्प्रवाह जैसा अल्प वा अधिक हो वैसे ही सुई भी अपने स्थानसे छोटा वा बड़ा कोण बनाती है*। इसके सिवाय तारोंकी जितनी अधिक लपेटें होती हैं सुईका घुमाव उतनाहा अधिक होता है यदि विद्युतप्रवाहका बल निश्चित हो।

इस विद्युत्प्रवाहमापकके सुईके घुमावका ही तारोंके पढ़नेमें उपयोग किया जाता है। आङ्गल भाषामें जितने अक्षर हैं उन सबकेलिए इस सुईके घुमाव रूपी चिन्ह बना दिये गये हैं। चित्र ३ में आङ्गल भाषाके अक्षर और उनके विवक्षित चिन्ह दिये गये हैं। तारोंके पढ़नेमें

| A | B | C | D | N | O | P | Q |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| \/ | /\\\ | /\/\ | /\\ | /\ | /// | \//\ | //\/ |

| E | F | G | R | S | T |
|---|---|---|---|---|---|
| \ | \\/\ | \\/ | \/\ | \\\ | / |

| H | I | J | U | V | W |
|---|---|---|---|---|---|
| \\\\ | \\ | \/// | \\/ | \\\/ | \// |

| K | L | M | X | Y | Z |
|---|---|---|---|---|---|
| /\/ | \/\\ | // | \//\ | /\// | //\\ |

चित्र नं० ३

जिस विद्युत्प्रवाहमापक यंत्रका उपयोग किया जाता है वह चित्र ४ में दिया है। इसमें सामान्य विद्युत्प्रवाहमापकके सदृश तारसे लिपटा हुवा एक ही रील नहीं होता किन्तु दो रील तारसे लिपटे हुवे होते हैं। इन दोनों रीलोंके

* और प्रवाहकी दिशा बदलने परसुईका घुमाव भी बदल जाता है।

बीचमें दिशा सूची चुम्बककी सुई होती है यह दोनों रील एक बक्समें बन्द होते हैं जिसका
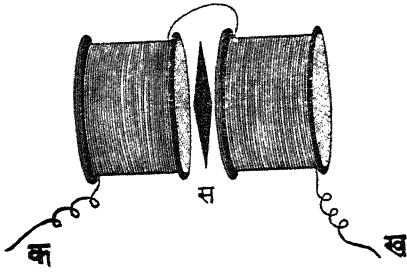
चित्र नं० ४
विद्युत्प्रवाह नापक यंत्र स. सूई,
क, ख, रीलय-लिपटे हुवे तारोंके छोर, जो बाटरकी दोनों तखतियोंसे जोड दिये जा सकने हैं

सामना घड़ीके चेहरे (डायल) सा होता है। दिशा सूची सुईमें लगा हुआ कांटा इस डायल-पर घड़ीकी सुईके सदृश घूमता है। इस डायल-पर आङ्गल भाषाके अक्षर व उनके विवक्षित चिन्ह छपे हुए होते हैं। डायलपर कांटा थोड़े ही घेरेमें घूम सकता है इस कांटेके दोनों तरफ दो खूंटियां लगी हुई होती हैं जिससे घूमता हुआ कांटा रुक जाता है। इस विद्युत्प्र-वाहमापकका एक छोर धरतीमें गाड़ दिया जाता है और दूसरा छोर उस तारसे जुड़ा रहता है जो दूसरे स्टेशनोंको जाता है।

आज इतना ही बतलाऊंगा । तार भेजनेके समय किस प्रकार दिशा-सूची सुई दायें बायें घुमाकर दूरके स्टेशनों पर अक्षरोंका बोध कराया जाता है और इसके सम्बन्धकी और बातें फिर कभी कहूंगा।

# अभ्रक और उसका व्यापार

[ ले० गोपाल नारायण सेन सिंह बी. ए. ]

यह बड़े संतोषका विषय है कि इस बीसवीं शताब्दिमें भी भारतवर्ष अभ्रकके व्यापारमें आज संसार-भरके सब देशोंसे आगे बढ़ा है, और उसके लाभका अधिकांश दिनोंदिन इसीके हिस्से आता जाता है, जैसा कि नीचे दी हुई तालिकासे स्पष्ट है।

भारतकी खानोंसे निकले हुए अभ्रकका औसत वार्षिक मूल्य पिछले बीस सालमें इस प्रकार उतरा है।*

| | | |
|---|---|---|
| १८९४—९८ | ६३, २०३ | गिन्नी |
| १८९९—०३ | ८५, ३७० | ,, |
| १९०४—०८ | १७३, ५११ | ,, |
| १९०९ - १३ | २३९, १३० | ,, |

यह रक़में संसारके कुल निकासका सैकड़े पीछे ६५.१ भागकी कीमत हैं।

इसका विशेष महत्व हमको उस समय मालूम होता है जब हम जानते हैं कि इस औद्योगिक क्षेत्रमें कैनेडा और संयुक्तदेश अमेरिकावाले हमारे प्रतिद्वन्द्वी हैं और उनके उन्नत वैज्ञानिक और शिल्पीय ज्ञानके सामने हमने अपना पांव जमा रक्खा है। साथ ही जब हम यह स्मरण करते हैं कि वर्त्तमान समयमें अभ्रककी उपयोगिता बढ़ रही है, नित नयी नयी सैकड़ों प्रकारकी चीज़ें इससे बनती जाती हैं और ऐसी अनेक जगहोंपर इसकी आवश्य-कता पड़ती है जिसमें आगे कमी हानेकी कोई संभावना नहीं है, यहांतक कि वर्तमान

* भारतवर्षमें रुपया अधिक चलता है, परन्तु देशा-न्तरके व्यापारमें सोनेके सिक्कोंकी चाल है। अतः सब रक़में पौंड वा गिन्नियोंमें दी जाती हैं। सं०

Industry उद्योग ]

युरोपीय युद्धमें भी इसलिए कि शत्रु अभ्रकसे लाभ न उठाने पावें हमारी सरकारका विशेष विज्ञप्तिद्वारा अभ्रककी रफ़्नी बाहर जानेको रोकना सिद्ध करता है कि यह हमारे धन प्राप्तिका बड़े महत्वका सूत्र है और इससे आगे आने वाले औद्योगिक प्रयासमें हमको अच्छा सहारा मिलने वाला है।

इसीलिए अभ्रककी चर्चा इस स्थानमें अनुचित नहीं जान पड़ती।

### उत्पत्ति

प्रायः सभी तरहके आग्नेय चट्टानोंमें अभ्रक मिलता है क्योंकि अभ्रक उन चट्टानोंका आदिम और अत्यावश्यक अंग है। कई प्रकारके शिलकेत नामक खनिजोंमें जो परिवर्त्तन पृथ्वीकी धधकती ज्वालासे किसी समय हुए थे, उन परिवर्त्तनोंका अन्तिम रूप अभ्रक है। साथ ही वायुके प्रभावसे शिलकेतोंमें अब भी इसी प्रकार धीरे धीरे परिवर्त्तन हो ही रहा है। कई प्रकारके शिलकेतों एवं अभ्रकके संलग्न तथा भूगर्भके निरन्तर होने वाली पारिवर्त्तिक क्रियाओंसे नया अभ्रक बनताही रहता है। बहकर एकत्र होकर जमे हुए चट्टानोंमें नीचे वाले अंशमें भी पाया जाता है।

युरोपीय खानि-विशारदोंने अभ्रक देनेवाले खनिजोंके यह नाम जातिके अनुसार दिये हैं—

| | |
|---|---|
| १—मस्कोवैट | Muscovite |
| २—बयोटट | Biotite |
| ३—लेपिडो लैट | Lepidolite |
| ४—सेरिसैट | Sericite |
| ५—डमोरैट | Damourite |
| ६—सिन्नवल्डैल | zinnwaldite |
| ७—लौह अभ्रक | |
| ८—श्याम अभ्रक या वज्राभ्र | |

विदेशोंमें स्वीडन, नारवे, सैबेरिया, पेरू तथा चीनमें भी अभ्रक मिलता है।

भारतीय खानियोंसे मस्कोवैट जाति निकलती है और इसके दो ही प्रधान केन्द्र हैं। पहला बिहार उड़ीसा प्रान्तका हज़ारीबाग़ ज़िला और दूसरा मद्रास हातेका नेलोर ज़िला। बिहारका साधारणतः कुछ गुलाबी लिए हुए होता है और नेलोर वालेमें थोड़ा हरापन रहता है। नेलोरके इनिकर्नी खानिसे निकली हुई "चादरें" दस वा पन्द्रह फीट चौड़ी होती हैं और कभी कभी ३०×२४ इंचके चौखूँटे टुकड़े बिना ख़राश या निशानके भी पाये गये हैं। इसीलिए नेलोरवाला अभ्रक बिहारवालेसे बढ़िया समझा जाता है।

भारतमें अभ्रकके कई कारख़ाने हैं उनमें नीचे बताये हुए उल्लेख योग्य हैं—

१. बंगाल मैनिंग असोसिएशन, एजेन्ट D, L. Cowie 4. Hastings Street

२. चटकारी मैका मैनिंग कम्पनी, एजेन्ट, Hasting Street 2

३. छोटा नागपूर कोल और मैका कम्पनी गिरिडीह।

४. कोलिवर्न मैका वर्क्स, हज़ारीवाग,

### उपयोग

अभ्रकमें (अबरक) कई महत्त्वके गुण हैं। यह पारदर्शक है अर्थात इसके आरपार दीखता है। गरमी और आंचको सहता है। सरदी गरमीके एकाएकी घट बढ़ जानेसे, जैसे कांच चटख या टूट जाता है, यह नहीं टूटता या चटखता। यह बातें देख, अब इसे लोग कांचकी जगह काममें लाते हैं। इसका व्यवहार खिड़की, अंगीठी, लालटेन, तनूरका मुंह, लम्पकी चिमनी और गैसबत्ती इत्यादि कई चीज़ोंमें करने लगे हैं। किसी समय रूसी युद्धके जहाज़ोंमें अभ्रककी झिलमिली लगी होती थी। इसीलिए उसे मसकोवी शीशा कहते थे। यह सजावटके काममें भी बहुत आता है। भारतमें तो बहुत पुराने समयसे झाड़ फ़ानूस, आतशबाज़ी, कुमकुमे, खिलौने

और कपड़ेकी छपाईमें इससे काम लिया जाता था। इसके अतिरिक्त आयुर्वेदीय औषधियोंमें भी इसका प्रयोग होता आया है। दीवाल पर लगनेवाले फूलवरकागजकी तय्यारीमें, थिएटर-के परदेमें और कई प्रकारके रंग और काग़ज़के बनानेमें अभ्रकका बारीक चूर्ण डाला जाता है।

इसका चूर्ण मशीनके पुर्ज़ोंमें जहां तेल नहीं दिया जा सकता चिकनाई लानेकेलिए लगाया जाता है। कई कृमिनाशक औषधियों तथा नैट्रोग्लिसरीन नामके विस्फोटकको यह सोख लेता है, अतः इस काममें भी उपयोगी है। इसकी साफ़ चमकीली सुथरी चादरोंपर चित्रकारीका काम होता है। विशेषतः हमारे देशकी यह पुरानी कला है। अभ्रक खंडोंपर लालटेनद्वारा दिखनेवाले चित्र बनते हैं, छाया-चित्र वा फोटोग्राफ़ीकी झिल्लियां वा परदोंके-लिए चौकठा भी बनता है। प्राचीन ऐतिहासिक चित्र और पुस्तककी प्रतिलिपियोंको सुरक्षित रखनेकेलिए इसीके तह दिये जाते हैं। अजायबख़ानोंमें छोटे जीवोंको स्पिरिटमें डाल-कर सहेजने के पहले अबरख ही पर उन्हें मढ़ते हैं। पर आजकल सबसे अधिक व्यवहार इस-का विजलीके कल कारखानोंमें है।

बिजलीके दौड़ने और फैलनेमें अभ्रक रुकावट डालता है, इसीलिए यह <u>अवरोधक</u> (insulator) वा इनसुलेटरका काम देता है इस-के चिकने लचीले परदे डैनमोके चुम्बकत्वरक्षक बनते हैं। और भी बहुत तरहके पुरज़ोंमें यह काम आता है, जैसे अभ्रकके चोंगे (sound box) ग्रामोफ़ोन बाजेमें दिये जाते हैं। अभ्रकमें पोटासियम होनेके कारण इसका खाद भी बनता है। निदान, अभ्रकके अनेकानेक उपयोग हैं, जिनका विस्तार लेखकी सीमाको अतिक्रम कर जायगा।

### खुदाई, तय्यारी और मोल

और खानोंकी तरह अभ्रककी खानमें भी यहां अंग्रेज़ोंने ही अपना इजारा करलिया था, पर उनसे यह काम बहुत दिनतक नहीं चल सका। वे हारकर बैठ गये। यहांतक कि दक्खिनकी जितनी बड़ी कम्पनियां हैं वे कुछ दिन पहले तो विदेशियोंके हाथमें रहीं, पर जब उन्हें घाटे पर घाटा होनेलगा, वे छोड़ कर चले गये और कम्पनियां हमारे देशी भाइयोंके हाथ आयीं। वे तबसे बड़ी सफलता पूर्वक चलने लगीं। इससे हमारे दक्खिनी भाइयोंके धैर्य, व्यवहार-कुशलता और औद्योगिक साहसका प्रमाण मिलता है। पर यही बातें उत्तर भारतके कारखानोंके विषयमें नहीं कही जा सकतीं। यहांकी खुदाईका ढंग बिलकुल पुराना दकयानूसी चला आ रहा है, जिससे मालका एक बड़ा हिस्सा बरबाद जाता है। यहांकी खान बहुत करके खुली और उनकी सुरंगें बेतरह टेढ़ी और तिरछी होती हैं। इससे पहले तो बहुत सा अभ्रक खराब जाता है और दूसरे मालके साथ मिली हुई मिट्टी रेत वा अन्यद्रव्यको बाहर खींचकर लानेका परिश्रम व्यर्थ होता है। "बेलुम" के (रजौली) आस पास जो खान मैंने देखी हैं, दूरतक फैली हुई पहाड़ी क़तारोंके किनारे हैं, जिनके ऊपर साल और महुआकी घनी झाड़िया हैं उन खानों-में काम करनेवाले भी दरिद्र रजवर, मुसहर और अन्य जंगली जातियां होती हैं। ये मज़दूर अपने भाई स्त्री और बच्चोंकी एक मंडली बनाकर खानिके भीतर काम करते हैं।

बहुधा अभ्रक अलग अलग धारी धारीमें पाया जाता है जिसे वहांके लोग "कजरा' कहते हैं। इसलिए अधिक लाभ और सुभीता उस ढंगकी खुदाईमें होता है जो लोहे तांबे और अन्य धातु-ओंकी खानिमें देखा जाता है। अर्थात जिसमें खड़ी सुरंगें होती हैं, कैंचिया काट होता है और जिसकी खुदाई एक बारगी उसी तहके बराबर बराबर होती है, जहां तक अबरखकी धारीका

एक सूत गया हो। उस दशामें यह ऊपर ही ऊपर निकाला जासकता है और कूड़ा मिट्टी इत्यादि उन्हीं गढ्ढोंके भरनेमें काम आसकता है।

तय्यारीमें अभ्रककी गड्डियां जहांसे फटी होतीं हैं वहींसे चीरी जाती हैं। तब जिस नापकी चादरोंकी जरूरत हुई उसमेंसे एक बड़ी सी तेज़ छुरीसे जिसे "हसुसा" कहते है तराशली जाती हैं और जिसमें दाग़ वा निशान होता है वह अलग कर दी जाती हैं, फिर अच्छी चादरोंमें भी लम्बाई, चौड़ाई, सफ़ाई आदिके विचारसे बढ़िया घटिया माल अलग कर दिया जाता है। बचे हुए टुकड़े और बुरादोंसे भी विलायतमें एक प्रकारका Micanite मैकानैट द्रव्य बनता है।

मालके घटिया वा बढ़िया होनेपर दाममें बहुत अन्तर पड़ जाता है। सब प्रकारके मिली हुई चादरोंका औसत मोल ४) सेर उतरता है लेकिन बड़ी नापकी चादरोंकी कीमत कभी कभी ६०) सेरतक पहुँच जाती है। वर्तमान युरोपीय युद्धसे इन दिनों दाम बहुत गिर गया है और कारखानोंको बहुत घाटा हो रहा है पर तब भी उन्होंने काम नहीं रोका है और खुदाईमें इसी आशा पर खर्च लगाते जाते हैं कि शायद युद्ध शांतिके बाद भावकी तेज़ी और एकाएक अधिक मांगसे पुरानी लागत निकल आवे।

---

## रजो निःसरण

[ ले० डा० उमराव सिंह गुप्त, बी. एस-सी., एम्. बी. बी. एस. ]

द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्व मापञ्चाशत्समाः स्त्रियः।
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्रवेत्॥
—भावप्रकाश

अर्थात्—१२ वर्षकी आयुसे ऊपर ५० वर्षकी आयु पर्यन्त महीने महीने स्वभावसे ही स्त्रीके आर्तव (रक्त) गिरता है। इस क्रियाको रजो निःसरण कहते हैं। इसके और भी अनेक नाम हैं जैसे ऋतुस्राव, रजोस्राव, मासिक धर्म, इत्यादि। स्त्री जो इस दशामें होती है अनेक नामोंसे पुकारी जाती है–रजस्वला, ऋतुमती, पुष्पवती, स्त्रीधर्मिणी, इत्यादि।

यह क्रिया बनमानुषों और दूसरे जानवरोंमें भी पायी जाती है। इसका कालान्तर मनुष्योंमें २२–३५ दिनतक होता है किन्तु बहुधा यह २८–३० दिनके पश्चात् ही हुआ करती है। यदि स्वास्थ अच्छा हो तो यह नियत समयपर होती रहती है किन्तु कभी कभी, रोगके अतिरिक्त, किसी विशेष कारणसे, जैसे किसी गर्म स्थानसे बहुत ठंडे स्थानको जानेसे, यह समय घट बढ़ जाता है किन्तु यह भेद बहुत दिनतक नहीं रहता है। ऋतुकी क्रिया गर्भावस्था और दूध पिलानेकी अवस्थामें बन्द रहती है।

### ऋतुका आरंभ

रजो निःसरणका आरम्भ निम्नलिखित बातों पर निर्भर हैः—

१. देश
२. जाति
३. स्वास्थ
४. सामाजिक अवस्था
५. पैतृक संस्कार ( Heredity )

१ देश—गर्म देशोंमें रजोनिःसरण ठंडे देशोंकी अपेक्षा जल्दी आरम्भ हो जाता है।

२. जाति—भारतवर्षकी स्त्रियां बहुधा १२वें वर्षमें रजस्वला हो जाती हैं। रजोदर्शन कभी कभी ग्यारवें वर्षमें हो जाता है और कभी कभी पंद्रहवें वर्षतक भी नहीं होता किन्तु डाक्टर दासके * लेखानुसार ११ वर्ष १० मासका औसत है। युरोपकी स्त्रियोंमें १४ वर्षमें आरंभ

* Hand book of Obstetrics by Kedar nath Das M. D. Page 52

होता है। किन्तु उन युरोपवासियोंमें जो भारत-वर्षमें रहने लगे हैं १३वें वर्षमें हो जाता है।

३—स्वास्थ-जिन लड़कियोंका स्वास्थ अच्छा होता है और जो हृष्टपुष्ट होती हैं वह रोगी अथवा दुर्बल लड़कियोंकी अपेक्षा शीघ्र रजस्वला हो जाती हैं।

४—बड़े घरोंकी लड़कियां शीघ्र पुष्पवती हो जाती हैं। नीची श्रेणीके घरोंमें जहां लड़कियोंको काम अधिक करना पड़ता है, खानेको अच्छा और ठीक समयपर नहीं मिलता, और उन्हें अपनी अवस्थापर विचार करनेका अवसर नहीं मिलता वह देरमें रजस्वला होती हैं। कुछ विद्वानोंका कथन है कि भारतवर्षमें स्त्रियोंके जल्दी रजस्वला होनेका एक कारण बालविवाह भी है। हमारा विचार है कि जहां भावमिश्रके समयमें रजस्वलाकी आयु "१२ वर्षके ऊपर" होती थी वहां आज "१२ वर्षके पूर्व" ही है।

५. यह देखनेमें आया है कि जो स्त्रियां स्वयं शीघ्र ऋतुमती होती हैं उनकी कन्यायें भी जल्दी ही पुष्पवती हो जाती हैं। और जो स्वयं देरमें रजस्वला होती हैं उनकी लड़कियां भी देरमें स्त्रीधर्मिणी होती हैं। किन्तु यह नियम अटूट नहीं है। कभी कभी इसके विपरीत घटनाएँ भी देखी जाती हैं।

रजोनिःसरण प्रौढावस्थाका एक चिह्न है। यह इस बातका सूचक है की बालिका बाल्यावस्थाकी डोरी तोड़कर युवावस्थामें प्रवेश कर रही है। इसके साथ ही और दूसरे चिह्न भी दीखने लगते हैं शरीर सुडौल हो जाता है। ( Pelvic-cavity ) वस्ति-गह्वर बड़ा हो जाता है, बिटपदेश और कक्षाओंमें बाल निकलने लगते हैं। कुच बड़ी होने लगती हैं। व्यक्ति विशेषको अपने अस्तित्वका ज्ञान होने लगता है। और उसके मानसिक आकाशमें लज्जा और संकोचके नक्षत्र, जो युवावस्थाके आभूषण हैं, उदय हो जाते हैं।

हम ऊपर कह आये हैं कि ऋतुदर्शन युवावस्थाका सूचक है। अर्थात् इस समय अथवा इस समयसे युवती गर्भवती हो सकती है। किन्तु इस स्थानपर एक बात स्मरणीय है कि यद्यपि वह इस अवस्थामें गर्भवती हो सकती है किन्तु होनी नहीं चाहिए। कारण? (Anatomy ) शरीर-संस्थान विद्याके जाननेवाले बताते हैं कि इस समय शरीरकी बिशेषकर वस्तिकी–दशा ऐसी होती है की वह गर्भका भार नहीं संभाल सकता। यह समय है कि शरीर स्वयं अपनी उन्नति करे न कि किसी दूसरे जीवका पोषण। इस समय वस्तिकी हड्डियां कोमल होती हैं, हड्डियोंके कई जोड़ भली प्रकार जुड़ने भी नहीं पाते, और गर्भका बोझ पड़नेसे उनकी आकृति सदाकेलिए बिगड़ जाती है। इसके अतिरिक्त आन्तरिक जननेन्द्रियोंका कार्य्य इतना सुदृढ़, और जरायु ( Uterus ) और योनि (Vagina) आदि का परिमाण इतना बड़ा नहीं होता कि उनमें एक स्वस्थ, नीरोग और सुडौल बालककी स्थिति, पोषण और उत्पत्ति हो सके। यह विज्ञान शास्त्रकी आज्ञा है। जो व्यक्ति अथवा जाति इसका उल्लंघन करती है आप अपनी जड़पर कुल्हाड़ी चलाती है। माता पिताको जिनकी दृष्टि कालचक्रकी गति देखते देखते दीर्घ हो जाती है, चाहिए कि ऐसे समयमें अपनी कन्याओंकी ओर अधिक ध्यान दें, क्योंकि उनके जीवनमें यह ऋतु महत्त्वके परिवर्त्तनका समय है और इसका प्रभाव उनके सारे आगामी जीवनके ऊपर पड़ता है। हमारा विचार है कि इस समय विवाह करदेनेसे वह ऐसे घोर पापके भागी बनते हैं जो कन्याबधके तुल्य है।

विद्वानोंने रजो निःसरणको तीन अवस्थाओंमें विभक्त किया है—

१. स्रावपूर्व अवस्था
२. रजोस्राव अवस्था

३. स्रावोत्तर अवस्था

१. स्रावपूर्व अवस्था

बहुत सी स्त्रियोंमें यह अवस्था आती ही नहीं अर्थात् उनमें रक्तस्राव ही रजोनिःसरणका पहिला लक्षण होता है। किन्तु कुछ स्त्रियोंमें देखनेमें आता है कि रक्तस्रावके ६-७ दिन पहिलेसे पेड़ूमें कुछ कसकसाहट सी प्रतीत होने लगती है। कमर, उदर और जांघोंमें दर्द रहता है। कुच फूल जाती हैं और उनमें एक प्रकारकी पीड़ा होती है। शरीरमें शिथिलता, सिरमें भारीपन और दर्द, और निद्राका अभाव हो जाता है। कभी कभी स्वभाव बड़ा चिड़-चिड़ा हो जाता है।

२. रजोस्राव अवस्था

इसकी अवधि ३से ६ दिनतक होती है। कभी कभी स्राव दो तीन दिन भली प्रकार होता है। फिर एक दिनके वास्ते बन्द भी हो जाता है, तदन्तर एक दो दिन फिर होता रहता है। रज-का परिमाण बहुत सी बातोंके ऊपर निर्भर है और इसका व्यक्तिकी आयु ओर स्वास्थसे घनिष्ट सम्बन्ध है। यह ३ छटांकके लगभग होता है। प्रथम तो यह केवल श्लेष्मा (mucus) ही होता है, किन्तु पीछेसे श्लेष्मा और रक्त मिलकर आता है। इस कारण इसका रंग लाल हो जाता है। रजमें बहुतसे ( white hood cells) श्वेताणु (epithelial cells) पृष्ठावरणके सेलें श्लेष्मा और (calcium salts) खटिक लवण मिले होते हैं और श्लेष्माके मिश्रित होने-के कारण रज जमता नहीं है। कभी कभी जब स्राव अस्वाभाविक और अधिक होता है तो रज योनिमें आकर जमजाता है और छोटे छोटे छीचड़ोंके आकारमें निकला करता है।

लक्षण—इस अवस्थामें पीड़ा और दूसरे बाधक लक्षण बहुधा उपस्थित नहीं होते। किन्तु कुछ स्त्रियोंमें इसकी गति असाधारण होती है। पेड़ू, कमर और जंघाओंमें दर्द होता है, शरीर शिथिल और दुर्बल प्रतीत होता है, जी मचलाता है और भूख बहुत कम लगती है। पित्त रस प्रधान होता है और वस्तिमें बोझ प्रतीत होता है। कुच, भग (vulva) और फलक ग्रंथि (thyroid gland) स्फीत हो जाते हैं और रजस्वलाका मन भली प्रकार किसी काम करनेको नहीं चाहता।

३. स्रावोत्तर अवस्था

इसमें स्राव बन्द हो जाता है और जरायु-की श्लेष्मा (mucous membrane or mucosa) अपनी साधारण दशाको प्राप्त हो जाती है।

रजो निःसरणका मूल कारण क्या है?

यह एक ऐसा प्रश्न है जिसका उत्तर देना बड़ा कठिन है। इस विषयमें बहुत सी परीक्षाएं की गयी हैं जिनसे यह सिद्ध है कि इसका ( fallopian tubes )* अण्डप्रणालीसे कोई सम्बन्ध नहीं है क्योंकि इन नलिकाओंके निकाल लेनेपर भी रजो निःसरण होता रहता है, और इसका आधार (womb) जरायु अथवा किसी जरायुरसपर भी नहीं है क्योंकि यदि जरायुको भी निकाल डाला जावे तो भी रजोनिः-सरणके सारे लक्षण रक्तस्रावके अतिरिक्त ज्योंके त्यों बने रहते हैं। किन्तु (ovaries)† अण्डाधारों-को निकालनेसे ऐसा नहीं होता। यदि दोनों अण्डाधारोंको निकाल दें तो यह क्रिया सदाके वास्ते बन्द हो जाती है। एक भी अण्डाधारका यदि थोड़ासा भाग शरीरमें शेष रह जावे तो यह क्रिया बन्द नहीं होती। इससे यह सिद्ध होता है कि रजो निःसरणके वास्ते अण्डाधारके कुछ भागका शरीरमें होना अति आवश्यक है। वैज्ञानिकोंका विचार है कि अण्डाधार एक रस

* यह दो छोटी छोटी नालिकाएं हैं जो जरायुके दोनों कोनों में खुलती हैं। इनके द्वारा अण्डाधारसे अण्ड ( ovum ) जरायमें आ जाता है।

† यह दो कमलकी कलीके समान गांठें होती हैं इनमें ही अण्ड बनते हैं।

बनाते हैं और यह रस प्रत्येक मास रक्तमें मिल जाता है। इस रसका प्रभाव जरायुकी श्लेष्मा (mucosa) और (glands) ग्रंथियोंपर पड़ता है और रजोस्रावकी क्रिया उपस्थित हो जाती है।

अनुमान किया जाता है कि इस रसका (calcium salts) खटिक लवणोंसे घनिष्ट संबंध है, क्योंकि जिस समय अन्य कार्य्योंके वास्ते इन लवणोंकी शरीरमें अवश्यकता होती है, उस समय या तो यह रस पैदा ही नहीं होता या इसका प्रभाव जरायुपर नहीं पड़ता अर्थात् रजोनिःसरण नहीं होता। उदाहरणार्थ—बाल्यावस्थामें जब बालिकाकी हड्डियों और शरीरके अन्य अंगोंके पालन पोषण-के वास्ते चूनेके लवणोंकी शरीरमें आवश्यकता होती है तो वह रजस्वला नहीं होती। प्रौढ़ा-वस्थामें जब स्त्री गर्भवती होती है तो खटिक-लवण बच्चेके शरीरके बनानेके काममें आते हैं। जब दूध पिलाती है, यह लवण दूधका अंश हो जाते हैं। इन दोनों अवस्थाओंमें स्त्री रजस्वला नहीं होती और यह तो हम जानते ही हैं कि खटिक लवण रजमें अधिक परिमाणसे होते हैं।

रजोनिवृत्ति

मासिक धर्म ५० वर्षकी आयुके पश्चात् नहीं होता। साधारणतः यह ४५ और ५० वर्षके बीचमें बन्द हो जाता है। प्रायः देखनेमें आया है कि बन्द होनेसे पहिले इनका कालान्तर बढ़ जाता है और यह फिर धीरे धीरे बन्द हो जाते हैं। साधारणतः रजका परिमाण भी कम होने लगता है और अन्तमें बन्द हो जाता है। कभी कभी स्राव एक दम बन्द हो जाता है। कभी कभी रजका परिमाण एक दो मासके वास्ते बढ़ जाता है किन्तु फिर कम हो जाता है।

रजोनिवृत्तिके पश्चात् जननेंद्रिय क्षीण और भ्रष्ट होने लगती है। वाह्य जननेंद्रिय सुकुड़ जाती है। वसा (fat) सूख जाती है, और उसके ऊपरके बाल टूट टूटकर गिर पड़ते हैं। अण्डाधारके वाह्य-पृष्ठ पर झुर्रियाँ पड़जाती हैं और थोड़े समयमें वह सुकुड़ कर (corpora alba) श्वेत गांठोंका एक समूह रह जाता है। (body of uterus) जरायु गात्र सुकुड़ने लगता है और उसका (muscular coat) मांस स्तर (connective tissue) सौत्रिक तंतुमें परिणत हो जाता है। (cervix) ग्रीवाकी भी यही गति होती है। कुचोंकी वसा भी सूख जाती है। उनका अर्धगोलाकार जाता रहता है और लुच-लुची होकर नीचेको लटकने लगती हैं। स्त्रीका शरीर मोटा होजाता है।

ऐसा बहुत ही कम होता कि स्त्रीको इस समय कुछ भी कष्ट न हो। रजोनिवृत्तिके लक्षण यह हैं—

१. समय समयपर अधिक गर्मी और सरदीका प्रतीत होना।
२. शिरोबेदना, चक्कर आना, कानमें घूं घूं होना।
३. पेट अफरना, अजीर्ण।
४. हृदयका धड़कना।
५. मूत्रका बारबार आना, उसमें लवणोंका असाधारण परिमाणमें आना।
६. हाथ पैरोंमें सुइयां सी चुभना, हाथ पैरोंका सुन्न होना।

---

## पौधेमें जल कैसे पहुंचता है ?

[ ले० कान्तिचन्द्र बी. एस-सी. ]
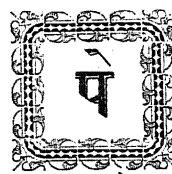
पेड़ तो हम सब नित्य ही देखते रहते हैं पर इस बातपर बहुत कम लोगोंने ध्यान दिया होगा कि इनकी बना-वट क्या है। यदि आप वृक्षका कोई भी अंग लें और उसके एक नन्हे टुकड़ेको बहुत तेज़ (खुर्दबीन) सूक्ष्मदर्शक यंत्रमेंसे देखें तो

* Botany वनस्पति शास्त्र ]

आपको उसके उसी अंगमें बहुत छोटी छोटी कोठरियां सी दिखाई देंगी जैसी बर्रके छत्तोंमें हुआ करती हैं। इनही नन्हें छिद्रोंको (cell) कोष कहते हैं और यदि आप इसको किसी और तेज़ सूक्ष्म दर्शक यंत्रमेंसे देखें तो इस कोषके भीतर एक धुँधली वस्तु भरी मिलेगी जिसे protoplasm या जीवैक या जीव मूल या मूलरस कहना चाहिये। जीवैकके भीतर इसी पदार्थकी रवेदार चीज़ रहती है जिसे केन्द्र कहते हैं यह बात सब जानते हैं कि वृक्षके जीवित रहनेकेलिए जलकी अत्यंत आवश्यकता है जिसका यह अर्थ हुआ कि कोषोंमें जल अच्छी तरह रहना चाहिये। वृक्ष भी सब एक तरहके नहीं होते, जैसे काई भी जो पानीपर जम जाती है बनस्पति ही गिनी जाती है। बहुतेरी बनस्पति जलमें या जलके पास उगती हैं, बाकी पृथ्वी पर।

जो बनस्पति जलमें या जलके किनारे उपजती है उसे जलकी कमी होही नहीं सकती, और जो जलमें ही है तो पानी एक कोषमेंसे छनकर दूसरेमें सुगमतासे पहुंच सकता है और किनारे पर भी मिट्टी गीली होनेसे जल सहज ही मिल जाता है पर और वृक्षोंको जो पानीसे दूर हैं, बाहरसे जल आसानीसे नहीं मिल सकता। उनका सहारा वह जल है जो मिट्टीमें मौजूद है। यहाँ यह प्रश्न भी हो सकता है कि जो भूमि देखनेमें सूखी है उसमें जल कहांसे आया। इसके उत्तरमें हमें साधारण ज़मीनकी बनावटका जानना आवश्यक है। मिट्टी एक दानेदार पदार्थ है जिसमें अधिकांश शिलाका चूरा और उसपरके सड़े गले पौधों और जन्तुओंके अंश हैं। प्रत्येक दानेके बीचमें बहुत ही सूक्ष्म जगह है जिसमें अधिकांश तो वायु रहती है, पर जल भी होता है और पृथ्वीके इन दानोंके चारों ओर पहले पतली सी जलकी तह होती है फिर चारों ओर वायु रहती है पर यह जल मिट्टीके दानोंके साथ ऐसा मिला हुआ है कि साधारण दृष्टिमें नहीं आता। यदि किसीको इसकी परीक्षा करनी हो तो थोड़ी मिट्टीको जिसमें जलकी संभावना न हो एक बरतनमें अच्छी तरह गरम करें–भाप निकलती दिखाई देगी। भाप जलसे ही बनती है। सो मिट्टीमें जलका अंश न होता तो भाप कहांसे आती? इससे मालूम हो गया कि प्रायः सभी मिट्टीमें पानी थोड़ा बहुत रहता ही है।

अब यह शंका उठती है कि वृक्षमें यह जल कैसे आता है? यदि किसी पौधेको जड़से उखाड़ा जावे तो उसकी बहुत नन्हीं नन्हीं जड़ें देख पड़ेंगी। अच्छी तरह ध्यानसे देखा जाय तो सिरोंपर बहुत बारीक बालसे देख पड़ेंगे जो केवल जड़के ऊपरी कोषोंका फैलाव हैं।

यही पतले तंतु मिट्टीके उन दानोंके बीचके छेदोंमें जहां पानी और हवा है घुस जाते हैं। यह तंतु दो रीतिसे पौधेकेलिए उपयोगी हैं—एकतो वह पौधेको स्थिरता देते हैं, दूसरे मिट्टीसे जलको इस सूक्ष्मरीतिसे खींच लेते हैं। अब यह प्रश्न उठता है कि जल मिट्टीसे इन तंतुओंमेंसे होकर कैसे पौधेमें समा जाता है उसका उत्तर उदाहरणसे देते हैं जो जल्दी समझमें आजावेगा। यदि एक कांचकी हांड़ी लें जिसकी पेंदीमें छेद हो और उस छेदमें एक कांचकी नली इस भांति लगायी जावे कि उसमेंसे हवा या जल न निकल सके और हांड़ीके मुंहको बारीक झिल्लीसे मढ़दें और इसको उस पानीसे जिसमें बहुत नमक घुलाहो भर दें और फिर इस यंत्र को पानी के एक बरतन में रखदें तो थोड़ी देरमें पानी नली में चढ़ जावेगा और बड़े बरतनका पानी कुछ नमकीन हो जावेगा।

परन्तु भेद इतना है कि उदाहरण जिस वस्तु का दिया गया है वह निर्जीव है और

पीछेकी जड़के तंतुके कोषोंमें जीवित पदार्थ भरा है। यह पहले कह आये हैं कि हर कोषमें इन तंतुओंके जलमें एक तरह का तेज़ाब भी मिला रहता है और बाहर मिट्टीमें केवल पानी ही है तो उदाहरणके अनुसार मिट्टीका जल तंतुमें आजावेगा जो फूल जावेंगे फिर पौधेके और बाहरी कोष फूल जावेंगे।

अब जहां बाहरी और भीतरी मोटे कोष मिलते हैं वहां पानी बाहरी कोषोंसे छनकर भीतरी मोटे कोषोंमें पहुँच जाता है जो पौधेके बीचों बीचसे जाते हैं। पानीके इन भीतरी मोटे कोषोंमें आनेसे बाहरी कोष पटक जाते हैं और फिर इसी रीतिसे और पानी ज़मीनसे खींच लेते हैं। भीतरी मोटे कोषोंमें पानीका दबाव अधिक होनेसे पानी भूमिसे ऊपरको चढ़ने लगता है।

---

## प्राचीन भारतमें आकाश भ्रमणके साधन

[ ले० कन्नोमल, एम् ए. ]

आकाश मार्गसे जानेकी चेष्टा अति प्राचीन कालसे होती रही है। प्रत्येक प्राचीन सभ्य देशमें ऐसी चेष्टाकी गयी है। अनेक ऐसे प्रमाण मिलते हैं जिनसे ज्ञात होता है कि आकाश-गमन-साधनके बहुत प्रकारसे प्रयत्न किये गये थे। यूनान देशमें इकेरस नामके मनुष्यने कृत्रिम पंख लगा कर उड़नेकी चेष्टा की थी। पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हुई। अरबकी ऐतिहासिक कथाओंसे भी वह सूचित होता है कि उस देशके मनुष्योंने भी आकाश मार्गसे जानेकी चेष्टामें सफलता भी प्राप्तकी थी। सहस्ररजनी चरित्रमें लिखा है कि एक कारीगरने ऐसा लकड़ीका घोड़ा बनाया था कि उसपर सवार होकर मनुष्य स्वेच्छानुसार आकाशमें भ्रमण कर सकता था। इसी तरह एक गलीचेका भी ज़िकर है जिसपर बैठकर कई मनुष्य उड़ सकते थे। इस प्रकारकी चेष्टा और और देशोंमें होना भी मालूम होता है परन्तु इस कार्यमें पूर्ण सफलता प्राचीन भारतवासियोंको ही प्राप्त हुई थी। हिन्दू साहित्य इतिहास पुराण आदिके देखनेसे पता लगता है कि प्राचीन भारतवासियोंने इस विद्यामें अन्तिम सीमाकी उन्नतिकी थी। आकाशगमनके कई साधन निकाले थे। रामायण आदि ग्रन्थोंसे अभ्रान्त प्रमाण मिलते हैं कि उस समयमें बड़े बड़े विमान विद्यमान थे। लंकाजीतकर जब श्रीरामचन्द्रजी अयोध्याको लौटे तो उनकी सवारीकेलिए पुष्पक विमान* आया। इसमें अपनी सेनाका कुछ भाग लेकर श्री रामचन्द्रजी आये थे। इसके अतिरिक्त अनेक विमानोंका उल्लेख है जिनमें बैठकर देवताओंने राम रावण युद्ध देखाथा और जिनसे समय समयपर रामचन्द्रजी और उन-

* पुष्पकविमान कुवेरका था, रावण उससे छीन लाया था, विभीषणने वही विमान अन्तमें रामचन्द्रजीको दिया। यथा, वाल्मीकीये—

"...प्रत्युवाच विभीषणः। ...पुष्पकं नाम भद्रन्ते विमानं सूर्य्यं सन्निभम्। ममभ्रातुः कुवेरस्य रावणेनाहृतं वलात्। हृतं निर्जित्य संग्रामे कामगं दिव्यमुत्तमम्। त्वदर्थं पालितं चैव तिष्ठत्यतुल विक्रम। ...तेन यास्यसियानेन त्वमयोध्यां गतज्वरः।" [ युद्धसर्ग १२३, श्लो ८-१० ] इस प्रसंगमें जो कुछ वर्णन हुआ है, उससे स्पष्ट होता है कि विमान ( सूर्य्यं सन्निभम् ) सूर्य्यकी नाईं चमकता था, (कामगं) सभी दिशाओंमें चल सकता था, अधिकांश सोने चांदीका था, उसमें कई कमरे थे सजावट वढ़िया थी, झंडा उजला था, छोटी छोटी घंटियां मधुर शब्द होनेकेलिए लगी थीं, कई धवरहरे थे, आकारमें पहाड़की चोटी सा था, और बड़ाईमें भी पहाड़ सा ही दीखता था। [ पाठक गण १२३वां सर्ग युद्धकांडका पढ़लें ] इस वर्णनमें यंत्र सम्बन्धी कोई बात नहीं कही गयी। १२४ वें सर्गमें "हंस युक्त" कहा गया है, जिससे "पक्षयुक्त" समझनेमें कोई हानि नहीं प्रतीत होती। (वि० सं०)।

की सेनापर पुष्पवर्षा हुई थी। रामायण और महाभारतसे यह भी पता लगता है कि राम-रावण अथवा कुरु- पांडव युद्धोंमें आकाश युद्ध भी हुये। इस समय जो हवाई जहाज़ोंमें बैठकर युद्ध होते हैं वैसे प्राचीन कालमें भी होते थे। पुष्पकविमानके सिवा कामग विमान भी नामी था। इस विमानको राजा शल्वने महादेवजीकी प्रसन्नतासे प्राप्त किया था। इस विमानमें बैठकर उसने श्रीकृष्णचन्द्रजीसे युद्ध किया था। इन सब विमानोंका बनानेवाला विश्वकर्मा था। जैन इतिहास जो प्राचीन इतिहासोंमेंसे है बताता है कि विद्याधरनामकी एक जाति किसी बहुत ऊंचे पर्वतपर रहती थी। यह जाति विमान-निर्माण कलामें पूर्ण कुशल थी। अथर्व वेद* में विमान बनानेकी विधि लिखी है। और प्राचीनग्रन्थ भी ऐसे हैं जिनसे इस विद्याका ज्ञान हो सकता है।

विमानोंके सिवा इन्हीं पुस्तकोंसे यह भी ज्ञात होता है कि प्राचीन समयमें कोई कोई रथ भी ऐसे बनाये जाते थे जो आकाश मार्गसे जा सकते थे। इन रथोंके हांकने वाले बड़े चतुर होते थे और इनमें कोई विशेष जातिके घोड़े जोते जाते थे। राजा दशरथ, राजा दलीप राजा दुष्यन्तने ऐसे रथोंमें बैठकर ही आकाश लोककी यात्राकी थी। दमयन्तीके दूसरे स्वयंवरके अवसरपर राजा नल भी रथको आकाश मार्गसे ही लेगये थे। महाभारतमें उल्लेख है कि राजा युधिष्ठिरका रथ पृथिवीसे ऊंचा चलता था।

इस विषयके सम्बन्धमें यह लिखना अप्रासङ्गिक नहीं होगा कि उड़नेवाले घोड़ोंकी रवायत कई देशोंमें चली आती है। प्राचीन मिश्र असीरिया देशोंके चित्र और ऐतिहासिक कथाओंसे ज्ञात होता है कि पेचदार घोड़े होते थे। अभीतक ताज़ियोंके मेलोंमें बुर्राख़ें निकलती हैं। यह पुरानी रवायतकी याद दिलाती हैं।

आकाश मार्गकी यात्राका तीसरा साधन-यह था। बहुतसे सिद्ध महात्मा और ऋषि योगबलसे स शरीर आकाशमें भ्रमण कर सकते थे। माघकविरचित शिशुपालबध काव्यमें पहले नारदजीका आकाशसे उतरनेका ही वर्णन है। पातञ्जल-योग-शास्त्रमें जहां विभूतियोंका उल्लेख है वहां आकाशमें जानेकी सिद्धि भी बतायी है। यह सिद्धि बहुत योगियोंको प्राप्त थी।

पिछले समयमें एक और साधन निकला था। यह योग और आयुर्वेद विद्यासे सम्बन्ध रखता था। कुछ ओषधियां मिलाकर गुटके बनाये जाते थे। इन गुटकोंको मुखमें धरकर मनुष्य उड़ सकते थे। योगी लोग ये गुटके अपने चेलोंको दिया करते थे। इनके प्रभावसे ये आकाश भ्रमण कर सकते थे।

---

* योग्य लेखकने इस विषयमें प्रमाणका उल्लेख किया होता तो अच्छा होता। हमने अथर्ववेदके प्रसिद्ध भाष्यकार पं० क्षेमकरणदासजी त्रिवेदीसे इस विषयमें पूछा। उत्तर उद्धृत है—

"बीस कांड़ोंमें से अथर्ववेद भाष्यके छः छप चुके हैं, सातवां छप रहा है। अथर्ववेदमें अब तक कोई मन्त्र विमान-निर्माण-विधि सूचक नहीं देखा, आगे भी ध्यान रक्खूंगा। ऋग्वेदमें एक मन्त्र कुछ विधि सूचक है, उसकी प्रति सेवामें भेजता हूं।

**आ विद्युन्मद्भिर्मरुतः स्वर्कैः रथेभिर्यात ऋष्टिमद्भि रश्वपर्णैः। आवर्षिष्ठया न इषा वयो नपप्तता सुमायाः ॥१॥ ऋग्वेद १। ८८। १॥**

(मरुतः) हे शूर महात्माओ! (विद्युन्मद्भिः) बिजुली-वाले (स्वर्कैः) अच्छी ज्वालावाले [वा अच्छे विचारों से बनाये गये] ऋष्टिमद्भिः) दोधारा तलवारोंवाले [आगे-पीछे, दायें-बायें, ऊपर-नीचे चलानेकी कलाओंवाले] (अश्वपर्णैः) व्यापनशील अग्नि आदिसे पूर्तिवाले (रथेभिः) रथोंसे (आयात) तुम आओ, और (सुमायाः) हे उत्तम बुद्धिवाले! (नः) हमारे लिये (वर्षिष्ठया) अति उत्तम (इषा) अन्नके साथ (वयः न) पक्षियोंके समान (आपप्तत) उड़कर चले आओ॥" (वि० सं०).

पूर्वोक्त उदाहरणोंसे सिद्ध है कि प्राचीन भारतमें आकाश मार्गसे भ्रमण करनेकी विद्यामें बड़ी उन्नति हुई थी। ऐसे ऐसे साधन तब ही निकल सकते हैं जब यह विद्या पूर्ण परिपक्वता को प्राप्त हो जाय। आधुनिक सभ्यतामें आकाश मार्गसे गमन करनेका केवल एक ही साधन निकला है अर्थात् हवाईजहाज़* परन्तु हिन्दुओंकी प्राचीन सभ्यतामें चार साधन वर्त्तमान थे अर्थात् विमान, रथ, गुटके, और योगबलसे सशरीर उड़ना।

जब किसी देशकी दशा गिरी हुई होती है तो उसके प्राचीन इतिहासकी बातें भी गप्प मालूम होती हैं। इस तरह भारतवर्षका हाल है। महाभारतके युद्धसे इस देशकी दशा अधोमुख होती आयी हैं। जो जो विद्याएँ और कलाएं प्रचलित थीं लोप हो गयी हैं और अब ऐसा मालूम होता है कि यह देश सदैवसे ही ऐसा दीनहीन है। इसकी गौरवशाली सभ्यताको बतानेकेलिए अब भी कुछ ऐसे ग्रन्थ बच रहे हैं जिनके देखने से यह बातें सत्यमानी जा सकती हैं और विश्वास हो सकता है कि यह विद्यायें प्राचीन कालमें अपने पूर्ण विकासित रूपमें होंगी। यदि परिश्रम कर इन ग्रन्थोंकी खोज की जाए तो अब भी कुछ हाथ लग सकता है।

* वायुसे हलके और वयासे भारी, वस्तुतः यह दो प्रकारके पोत हवाई जहाजके नामसे प्रसिद्ध हैं। स०

---

## तारों भरी रात

### पृथ्वी चलती है या स्थिर है?

[ ले० केशवचन्द्र सिंह चौधरी, एम्. एस्-सी, एल्-एल्. बी. ]

१. प्रत्यक्ष देखनेसे ऐसा ज्ञात होता है कि आकाश एक खोखली गोलाकार वस्तु है जिसमें भीतरकी ओर प्रकाशमान उज्ज्वल तारे सूर्य्य चांद इत्यादि जड़े हुए हैं, और यह गोलाकार वस्तु पृथ्वीके चारोंओर चक्कर लगाती है। परन्तु अधिक ध्यानसे देखनेके पश्चात ज्ञात होगा कि यह बात भ्रम पूर्ण है। हम जानते हैं सूर्य्य चान्द और दूसरे गृह और उपगृह अपनी जगह इस गोलाकार आकाशमें बदलते रहते हैं। सूर्य्य और चन्द्रग्रहणसे हमें मालूम होता है कि कभी चन्द्र पृथ्वी और सूर्य्यके बीचमें आजाता है और कभी पृथ्वी चन्द्र और सूर्य्यके बीचमें। इसी तरहसे और उपगृह भी सूर्य्य और पृथ्वीके बीचमें आजाते हैं और आपसमें भी एक दूसरेको ढक लेते हैं*। इन बातोंसे ज्ञात होता है कि न तो यह आकाशमें जड़े हुए हैं और न यह पृथ्वीसे बराबर दूरीके फासले पर हैं। वैज्ञानिकोंने स्थायी तारोंकी दूरीका भी हिसाब लगाया है और उन्हें मालूम हुआ है कि ये कोई कम और कोई अधिक दूरीपर हैं। कोई पृथ्वीसे लाखों गुना बड़े हैं और कोई करोड़ों गुने। स्थायी तारोंमें भी कुछ ऐसे दो दो तारोंके जुट हैं (double stars) जो एक दूसरेके चारों ओर चक्कर लगाते हैं और जिनको स्थायी तारे कहना ठीक प्रतीत नहीं होता। इन सब बातोंसे हमें प्रतीत होता है कि खोखले गोलाकार आकाशमें वे जड़े हुए नहीं हैं; प्रत्युत इनका एक दूसरेसे ऐसा कोई सम्बन्ध नहीं† ऐसी दशामें यह बात असंभव सी प्रतीत होती है यह कि करोड़ों और अरबों तारे जो एक दूसरेसे बहुत फासले पर हैं पृथ्वीके चारों ओर एक ही ओरको एक ही समयमें चक्कर लगावें। अतएव हमें पृथ्वीका ही चक्कर लगाना अधिक संभव प्रतीत होता है।

२. यदि हम यह मानें कि पृथ्वी अपनी धुरीके चारों ओर २३ घन्टा ५६ मिनटमें चक्कर लगाती है तो भूमध्यरेखापरके स्थानोंको इतने

Astronomy ज्योतिष ]

* एसी घटनाएँ दूरबीनकेद्वारा नित्यप्रति देखनेमें आसकती हैं (वि० सं०)

† प्रकृतिमें हमें कोई भी दो वस्तुए एक सी नहीं मिलतीं।

समयमें करीब २५००० चलना पड़ेगा, अथवा उनकी चाल $\frac{2}{7}$ मीलकी सैकिण्ड होगी। यह बड़ी तीव्र गति है। परन्तु यदि हम दूसरे सिद्धान्तको ठीक मानलें तो स्थायी तारोंकी गति अरबों, खरबों और संखों मील प्रति सैकिण्ड आवैगी।

३. सूर्य्य और गृहोंको ( जिनमें से बहुतसे पृथ्वीसे बड़े हैं ) दूरबीनसे देखनेसे ज्ञात होता है कि वे भी अपनी धुरीके चारों ओर, जो उनके केन्द्रोंमें होकर गुज़रती है, चक्कर लगाते हैं।

४. पृथ्वीके आकारसे भी हम एक दलील पृथ्वीके घूमनेके पक्षमें निकाल सकते हैं। यदि हम एक प्यालेमें पानी भरकर एक लकड़ीसे उस पानीको जल्दी जल्दी घुमावें तो किनारे किनारे पानी उठ आवैगा और बीचमें गड्ढा सा हो जावैगा। जैसे जैसे पानीके घूमनेकी गति धीमी होती जावैगी यह किनारेका उठाव कम होता जावैगा। प्यालेके केन्द्रको केन्द्र मानकर कुल पानी एक साथ वृताकारमें घूमता है। अतएव केन्द्रसे दूरीपर वाले किनारेके वृत्तोंकी अधिक गति होती है। इससे हम यह सिद्धान्त निकालते हैं कि जब एक वस्तु दूसरेको केन्द्र मानकर घूमती है तो वह अपने केन्द्रसे दूर भागना चाहती है। यदि आप एक डोरेमें एक ईंट बांधकर शीघ्रतासे घुमावें तो आपको ज्ञात होगा कि डोरा सदैव तना रहता है मानों ईंटका टुकड़ा हाथको खींच रहा है और केन्द्रसे दूर जाना चाहता है। जितना ही तेज़ीसे आप घुमावें; उतनाही आपको अधिक ज़ोरसे अपनी ओर खींचना पड़ेगा और यदि डोरा कमज़ोर हुआ तो एक समय आवेगा कि वह टूट जावैगा। पृथ्वी नितान्त गोलाकार नहीं है। प्रत्युत वह दो जगहोंमें चपटी है इनको ध्रुव कहते हैं और यह पृथ्वीके एक व्यासके दोनों कोनोंपर हैं। केवल यही नहीं, एक और विचित्र बात यह है कि इन दोनों ध्रुवोंको जोड़नेसे जो व्यास बनता है वही हमारी धुरी है, जिसकी चारों ओर स्थायी तारे घूमते हैं या पृथ्वी-इस बातकी खोज हम लगा रहे हैं। इन दो चपटी जगहोंमेंसे एक उत्तरमें और एक दक्षिणमें होनेके कारण हम इनको दक्षिण और उत्तरीय ध्रुव कहते हैं। वैज्ञानिकोंने पता लगाया है कि ध्रुवी वाल्य व्यास भूमध्य रेखाके व्याससे २६$\frac{1}{4}$ मील कम है। यदि हम यह मानलें कि पृथ्वी धुरीके चारों ओर घूमती है तो चपटे होनेका कारण हमें तुरन्त समझमें आजाता है। पृथ्वी पहले वाष्पमय थी फिर तरल रूपमें हुयी और अब ठोस है। यदि पृथ्वी ही धुरीके चारों ओर घूमती है तो सबसे तेज़ीसे वे हिस्से घूमेंगे जो भूमध्यरेखा पर हैं और ध्रुव तो स्थिरही रहेंगे। ऐसी दशामें भूमध्यरेखाका व्यास अधिक होना ही चाहिए। अभी तक हमने जो प्रमाण दिये हैं वे सब सम्भावना ही पर निर्भर है। अगले पाठमें हम कुछ परीक्षाएं देंगे जिनसे प्रत्यक्ष ज्ञान होगा कि पृथ्वी घूमती है।

---

## निद्रा एक शारीरिक आवश्यकता है

[ ले० चिरंजीलाल माथुर, बी. ए., एल्. टी. ]

जिन पाठकगणोंने शरीर विज्ञानके (Physiology) लेख ध्यान पूर्वक पढ़े हैं उनको मालूम होगा कि मनुष्यके शरीरमें कर्बन द्विओषित गैस सदा बनती रहती है। चलने फिरने इत्यादि कार्य्यसे कोषों का नाश होता रहता है। नाश होनेमें जो कार्बन अलग होता है वह ओषजनसे (ओक्सीजन) मिलकर कार्बन द्विओषिद बन जाता है। यह हवा स्वच्छ रुधिरको अशुद्ध बना देती है।यह अशुद्ध रुधिर क्रमशः शुद्ध होनेकेलिए फेपड़ोंमें आता है यहां सांससे लायी हुई शुद्ध हवाके ओषजनसे

Physilogy शरीर विज्ञान ]

मिलकर रुधिर तो शुद्ध हो जाता है पर फेफड़ोंमें कर्बन द्विओषिद रह जाती है। यह हवा फेफड़ेसे बाहर हमारे सांस लेनेसे निकलती है। परन्तु साधारण सांस इतना हलका लिया जाता है कि सारी कर्बन द्विओषिद गैस नहीं निकल पाती और मनुष्य काम बराबर करता रहता है। जब अधिक तेज़ीसे काम किया जाता है तो उस हवाको निकालनेकेलिए सांस भी स्वयं तेज़ हो जाता है, फिर भी दिन भरके कामसे फेफड़े इतने भर जाते हैं कि इस बातकी आवश्यकता होती है कि काम बिलकुल न किया जावे और गहरा सांस लेकर फेफड़ोंसे वह हवा निकाल दी जावे। यह कार्य्य निद्रामें होता है। यदि कोई मनुष्य चाहे कि निद्रा न लेकर बैठे ही बैठे फेफड़ोंको हलका करदे सो असम्भव है, क्योंकि बिना निद्रा इंद्रियां कुछ न कुछ कार्य करती ही रहती हैं। ऐसी दशामें न तो सांस गहरा लिया जा सकता है और न इस हवाका बनना बंद होता है। इस कारण यह अति आवश्यक है कि शरीर दिन भरके कामके पीछे ऐसी दशामें होजाय कि समस्त बाहरी इंद्रियां अपना काम बंद करदें और फेफड़ोंको भली भाँति कार्य करनेकी फुरसत दें। इसी दशा का नाम निद्रा है।

निद्राकी आवश्यकता प्रत्येक सांस लेनेवाले प्राणीको पड़ती है। भयानक मांस अहारी जीवोंको छोड़कर जिनका पेट पालनही लुटेरेपनसे होता है समस्त प्राणी रातको ही सोते हैं। ईश्वरने दिन काम करने को बनाया और रात सोनेको। रात और दिनकी लम्बाईभी इसी सिद्धाँतपर रक्खी है। जाड़ेमें काम अधिक किया जा सकता है, और अधिक निद्राकी आवश्यकता है, इसलिए रात लम्बी बनादी। गरमीमें अधिक कार्य्य नहीं हो सकता, अधिक निद्राकी आवश्यकता नहीं, इसलिए रात छोटी बनायी। मनुष्यको ईश्वरकी दीहुई वस्तुसे कभी संतोष नहीं। यह प्रत्येक बातमें अपनी तिकड़म लगाता रहता है। दंडपर दंड मिलनेपर भी बाज़ नहीं आता। निद्राके समबंधमें भी इसने प्रकृतिके नियमोंको तोड़नेका उद्योग किया है। तेल बिजली इत्यादिकी रोशनी करके रातको दिन बनाना चाहता है। धनके लालची तो यही कहते होंगे कि रात क्यों बनायी और निद्रा क्यों आजाती है। बिना निद्रा रहनेका प्रयोग किया गया है। सुनते हैं कि अमेरिकामें एक मनुष्य कई महीने नहीं सोया। बिना निद्रा लिये यदि मनुष्य जीवित भी रहे तो काम कुछ नहीं कर सकता। जितना अधिक काम करेगा उतनी ही अधिक निद्राकी आवश्यकता होगी।

अब यह प्रश्न है कि मनुष्यको कितनी निद्रा चाहिये? साधारण रीतिसे देखनेमें आता है कि बालक सबसे अधिक सोते हैं और ज्यों ज्यों अवस्था ज़यादा होती जाती है निद्रा कम आने लगती है। यहाँतक कि बुढ़ापेमें घंटे दो घंटे सोने लगते हैं। बालकपनमें तो प्रकृति माताकी गोदमें सब एकसे होते हैं, परन्तु बादमें एक अवस्थाके मनुष्योंको भी बराबर निद्रा नहीं आती। एक तीस बर्षके किसानको जो दिन भर खेतमें परिश्रम करता है जैसी निद्रा आती है वैसी एक तीस बर्षके अमीरज़ादेको जो सदा चारपाईपर लेटा रहता है या ताश चौपड़ खेलता है कभी नहीं आ सकती। किसी परिश्रम करनेवाले मज़दूरको निद्राकी शिकायत करते नहीं सुना होगा। परन्तु आलस्यमें समय बिताने वालोंको तो लेखकने हकीम साहबसे नुसखा लिखवाते देखा है। हकीम साहब भी अपने भारी भ्रमके अनुसार कई दवाओंके नाम रगड़ डालते हैं। जिसको निद्रा न आती हो उसको चाहिये कि दो चार मीलका चक्कर लगावे, भारी भारी चीज़ें उठाकर अपने ठीक स्थानपर घरमें रखे। यदि वह

ऐसा करे तो उसको हकीम साहबके पास कभी जाना न पड़े। परन्तु शोकसे कहा जाता है कि हमारे भारतवर्षमें शिक्षित युवकोंको श्रमसे बड़ी घृणा होती है। किसी पत्रमें एक बड़े भारी विद्वान्का कथन पढ़ा था। उन्होंने कहा था कि आजकलकी शिक्षासे हमारे हाथ बिलकुल बेकार हो जाते हैं सिवाय इसके कि हाकिमके सामने हाथ जोड़कर खड़े हो जावें, और काम नहीं कर सकते। एक बड़ा आदमी यात्रामें गया था उसका नौकर पीछे रह गया। वह बिना जूता खोले पानी नहीं पीते थे। दो घंटे प्यासे बैठे रहे परंतु अपना जूता अपने हाथोंसे नहीं खोला गया। जब श्रमसे घृणा इस सीमातक है तो शरीर स्वस्थ किस प्रकार रह सकता है: जब ही तो हम देखते हैं कि सैकड़ों मेडीकल हाल ( दवाखाने ) खुल गये हैं। और दिनपर दिन भारतनिवासी निर्बल होते जाते हैं। पुराने मकानोंकी खूँटीतक हाथ नहीं पहुंचता और दादा की लाठी देखकर कहते हैं कि इस लकड़ीको हाथमें रखकर घरमें ही टहलते होंगे, दूर इसे लेकर किससे चला जायगा।

स्मरण रहे कि श्रम करनेवालोंको निद्रा भी ठीक आती है। समस्त शरीर नीरोग रहता है और औषधोंकी आवश्यकता नहीं होती। आलस्यवश पड़े रहनेवालोंको अनेक रोग लग जाते हैं, और सदा हकीमकी शरण पड़ा रहना पड़ता है।

निद्राके वास्ते घंटे नियत नहीं कर सकते। परिश्रमके ऊपर निद्राकी मात्रा निर्भर है। बालकके शरीरमें कोष जल्दी जल्दी बनते बिगड़ते हैं क्योंकि वह बढ़ रहा है और फेफड़े छोटे भी हैं। इस कारण जल्दी निद्रा आजानी चाहिए। जब बच्चा जम्हाई ले तो मालूम होता है कि फेफड़ेमें अधिक कर्बनद्विओषिद आ गयी, और मुँह फाड़कर निकालना चाहता है बहुत छोटे बच्चे ज़रासी देरके वास्ते जागते हैं। माँका दूध पिया और फिर सो गये। बड़े बालक दिन भर खेलते फिरते हैं। श्रम पूरा पड़ता है और बढ़नेमें कोष भी अधिक काममें आते हैं इसलिए खूब निद्रा आती है। बुढ़ापेमें श्रम नहीं होता है और न शरीर बढ़ता है, इसलिए निद्रा कम आती है। और गहरी नींद भी नहीं आती, ज़रासी आवाज़पर झट आँखे खुल जाती हैं। बच्चेको झड़झड़ायाकरो तो भी नहीं उठता है। जब श्रमके बाद निद्रा आती है तब अवश्य गहरी होती है। श्रम न करनेवालोंको गहरी निद्रा नहीं आती, तो निद्रासे उनको लाभ भी अधिक नहीं होता। अच्छी निद्रासे उठनेके बाद चित्त प्रसन्न और फेफड़े हलके हो जाते हैं, परंतु जब निद्रा अच्छी नहीं होती, उठनेपर उल्टा सिरमें दर्द हो जाता है। गहरी निद्रा न होनेपर पड़े रहनेसे भी ऐसा ही होता है।

सोनेसे पहले कई बातोंका ध्यान रखना चाहिए। प्रथम चित्तको बिलकुल शांत कर लेना चाहिए। यदि सोचते हुए या किसी विचारमें पड़े हुए निद्रा आगयी तो दिमाग़का काम जारी रहेगा और निद्रा ठीक ठीक नहीं आवेगी। शरीरतो शांत रहेगा परंतु दिमाग़के केंद्रोंमें खलबली रहकर कभी कोई बात आगयी, कभी उसकी प्रस्तावनासे कुछ और इसी तरह होता रहेगा। स्वप्न दीखेगा। जब स्वप्न दीखें तो समझना चाहिये कि निद्रा जैसी चाहिए वैसी नहीं आती। श्रम करनेवालेको बहुत कम स्वप्न आते हैं। आलसी वा रोगग्रस्तको प्रायः स्वप्न आया करते हैं, और लोग उनके तरह तरह के अर्थ लगाते हैं। दूसरे मल मूत्रादिको दूर करके सोना चाहिये, इनकी गर्मी दिमागको पहुँचकर खलबली डालती है, और वही हाल हो जाता है। तीसरे बिलकुल बंद मकानमें या मुँहको लिहाफसे लपेटकर नहीं सोना चाहिये क्योंकि ऐसा करनेसे निद्रामें जो गहरा सांस

लेनेसे हवा निकलती है वह ठीक ठीक नहीं निकल सकेगी।

निद्राके समय शरीर बिलकुल आराममें होता है, परंतु शरीरके अंदरकी इंद्रियां, दिल (हृदय या यकृत), पेट इत्यादि बराबर काम करते रहते हैं, बल्कि जागते हुएसे अच्छा काम होता है। रुधिर भली भांति शुद्ध होता रहता है। मल मूत्र इत्यादि शरीरके बाहर निकाले जानेको तय्यार हो जाते हैं। यदि रोग न हो तो दो तीन समयका खाया हुआ भोजन सब रातको सोती समय पच जाता है।

निद्रा आरोग्यकेलिए अति आवश्यक है। उसमें कमी करना अपने पैरोंमें कुल्हाड़ी मारना है। प्रायः विद्यार्थी लोग परीक्षाके कुछ दिन पहले बड़ा परिश्रम करते हैं। बरसोंके कामको महीनों और दिनोंमें करना चाहते हैं। इस धुनमें वह निद्रामें कमी करते हैं। यह बड़ी भूल है। ऐसा करनेसे दिमाग़ और शरीर दोनोंपर बुरा प्रभाव पड़ता है और परिणाम यह होता है कि या तो परीक्षाके दिनोंमें बीमार पड़ जाते हैं या सदाकेलिए आरोग्यको खो बैठते हैं, निद्राको ठीक ठीक समय न देना प्रकृतिसे लड़ाई लड़ना है। इस लड़ाईमें जीतनेकी आशा कभी नहीं हो सकती। कुशल इसीमें है कि प्रकृतिके नियमोंके अनुसार जीवन व्यतीत करके सुख लाभ करें।

---

## आजकलके सूरदासकी शिक्षा

( ले० गोपालनारायण सेन सिंह बी. ए. )

एक अमेरिकानिवासी सज्जनको मुझसे यह सुनकर बड़ा अचम्भा हुआ कि हमारे देशमें अधिकांश अन्धे सूरदास और फकीरके नामसे पुकारे जाते हैं। कारण? उन्होंने हमारे देशके अन्धोंकी तरह कभी अपने देशमें किसीको लाचार और अपाहज नहीं पाया था। उनके यहां अन्धे, मज़ेमें अपना सब काम करलेते हैं। घर बाहर यथासम्भव, अपनी सामर्थ्य भर जीविका भी कमालेते हैं। किसीके आश्रय में उन्हें दिन काटना नहीं होता। साफ़, सुथरे, स्वस्थ, चतुर और फुरतीले होते हैं। संसारके प्रायः सभी सुख उठा सकते हैं। इसीलिए उनका जीवन कभी बोझ सा नहीं होता। इसके विपरीत हमारे यहां बचपनसे ही ऐसे भाग्यके खोटे पुरुष या स्त्री घरके कोनेमें दिनरात बैठे, सिर झुकाये, दैवके नामपर रोया करते हैं। कहां क्या होता है, उन्हें कुछ मालूम नहीं। घरमें कौन आता जाता है, इसका भी पता नहीं। बड़े होनेपर कभी कभी उड़ती खबर सुनकर और अपनी कल्पनासे जोड़ तोड़कर वे संसारकी कुछ अटकल करलेते हैं। विरला ही कोई भाई बन्धु मन चित्त देकर अन्धोंके पास बैठता है और कुछ रुचिसे हाल सुनाता है। लोग अन्धोंको देखकर मुंह मटकाते हैं और यह कहते हुए टल जाते हैं कि "अन्धोंके आगे रोवे और अपने दीदे खोवे"। फल इसका यह होता है कि ये अभागे अन्धे निरे जड़ मूर्ख रह जाते हैं, घर पर आलसमें बैठे बैठे उनका शरीर पुष्ट नहीं होने पाता; समाजसे अलग होनेके कारण वे कोई काम धन्धा वा हुनर नहीं सीख सकते। शरीरके कुढंगे और ऐबी होनेके अलावा चिड़चिड़े और लड़ाके बन जाते हैं। संसारमें उनका जीना न जीना बराबर हो जाता है। न तो आप सुखचैनसे रह सकते न अपने जीवनसे समाजहीको कोई लाभ पहुंचा सकते हैं। हमारे देशमें अन्धे लाचारोंका हिसाब प्रत्येक १० हज़ारमें १४ और कुल संख्या छः लाखके ऊपर है। इतने लोग हमारी भूमिके भारसे हो रहे हैं। इनका बोझ हमारे निर्धन दुखिये गृहस्थोंको सहना पड़ता है। देशके पूत बनकर हमारे उन्नतिमार्गमें योग देना तो दूर रहा

इनके कारण हम लोगोंको भांति भांतिकी आपत्तियां झेलनी पड़ती हैं। देशके प्रत्येक निवासीकी ( efficiency ) योग्यताके ऊपर ही देशकी सम्पत्ति और समृद्धि निर्भर होती है। पर दुर्भाग्यवश यहां देश सेवामें सहायक होनेके पहले इतने आदमी उसमें बाधक बनते हैं। यह कितनी चिन्ताकी बात है।

हम जानते हैं कि भारतके अन्धोंने यदि बहुत कुछ किया तो खंजड़ी मंजीरा बजाने लगे या ढोलकपर भजन गाना सीख लिया, या कहीं कहीं अति दरिद्र होनेके कारण चक्की पीसने, तम्बाकू कूटने या सन पटुआ बटनेका काम कर लिया। इससे आगे नहीं बढ़ सकते। वहीं इनकी कार्यकुशलता और मनोरञ्जनका अंत समझिये।

परन्तु पश्चिमी देशोंमें आज बहुतेरे ऐसे सुशिक्षित हैं जिनके आगे हमारे यहांके बड़े बड़े विद्वान् नहीं ठहर सकते। ये केवल अपनी प्रतिभाके कारण ही ऐसे योग्य नहीं बने हैं, वरन उनके देशमें पढ़नेलिखने और काम सीखनेकी वही सुविधा अन्धोंकेलिए है जोकि और भले चंगे मनुष्योंकेलिए, यही उनकी असाधारण उन्नति और योग्यताका कारण है। बालककी आँखें खराब होगयीं तो कोई चिन्ता नहीं, फिर भी वह बहुत कुछ कर सकता है। माता पिता उससे निराश नहीं हो बैठते। उसे सीधे "अन्धोंके स्कूल" में भेज देते हैं–जहां मोटे कागज़पर उठे हुए अक्षरोंको हाथसे टटोलकर पढ़ना सिखलाया जाता है। वह कुछ ऐसा कठिन नहीं है। लड़के बहुत जल्द सीख लेते हैं। फिर उन्हीं अक्षरोंमें छपी हुई किताबें उन्हें दी जाती हैं। धर्म, विज्ञान, साहित्य सब विषयोंकी पुस्तकें बनी बनायी बाज़ारमें बिकती हैं जिन्हें पढ़कर अन्धे लड़के भी अन्य बालकोंकी तरह शिष्ट सुविज्ञ और धर्मात्मा बनजाते हैं। और बहुत कुछ उनकी बराबरी भी करलेते हैं। लेखकको एक ऐसेही प्रज्ञाचक्षु विद्वानसे कालिजमें पढ़नेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उन्होंने अमेरिकाके एक विश्वविद्यालयमें पढ़कर दर्शन शास्त्रमें सम्मान सहित बी. ए.की उपाधि पायी थी और यहांके प्रयाग विश्वविद्यालयमें मनोविज्ञानका अध्ययन करते थे। इनका अनुभव और विद्याबुद्धि देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि उनपर भगवानका कोप था, और नेत्रहीन होकर अपने पूर्वजन्मका फल भोग रहे थे। पाठकवर्ग उद्योग और साहससे क्या नहीं सिद्ध हो सकता। तनिक आगा पीछा सोचकर और हाथ पैर हिलाकर देखलेना चाहिए। तब प्रारब्धको दोष देना चाहिए।

हमारे देशमें भी अन्धोंकी शिक्षाका कहीं कहीं प्रबन्ध है। सुना है, कलकत्तेमें बिलकुल नये, हालमें आविष्कृत ढंगपर, जिसे ब्रेल सिस्टम (Braill system) कहते हैं, पढ़ाई होती है। मद्रासमें पल्लमकोटाका स्कूल पादरियोंके निरीक्षणमें बहुत काम कर रहा है। उसकी ख्याति दिनोंदिन बढ़ रही है। वहांके पढ़े हुए लड़के लिखने पढ़नेके सिवा गाने बजाने और अनेक कलाओंमें दक्ष होते हैं। लड़कियां रसोई पानी, सीना पिरोना भी करलेती हैं। बम्बईमें भी एक महती पाठशाला है। उसमें अन्धे गूंगे दोनोंहीकेलिए एक शिक्षाप्रणाली है। यह स्कूल "The Bombay Institution for deaf and mutes" के नामसे प्रसिद्ध हैं। उसका पता है—Nisbet Road, Bombay. उसमें लड़के ही लड़के भरती होते हैं। चाहे वे केवल दिनमें पढ़नेकेलिए आवें वा वहीं पर छात्रालयमें ठहरें। लड़कोंकी अवस्था भरती होते समय ६ और १६ वर्षके बीचमें होनी चाहिये। केवल दिनमें पढ़नेवालोंसे ३) फीस ली जाती है और बोर्डरोंसे १५) मासिक। यदि कोई अन्धे लड़केको उसके माता पिता वा संरक्षकसे कहकर यहां

भिजवादें तो उसकी कैसी काया पलट होजाय और वह अपने जीवनको कितना धन्य मानें !

देखा जाता है कि बहुधा दरिद्र दुखियोंकी संतान लड़कपनमें पालन पोषणकी असावधानी-के कारण अपने नेत्र खो बैठती है। उस दशामें वे उनकी शिक्षाका खर्च बिलकुल नहीं देसकते और लाचार हो उन्हें सूरदास वा साधू फकीर बनना पड़ता है। ऐसी स्थितिमें यदि कोई धनी मानी अपने नगर वा ग्रामके एक दो लड़कोंको बटोरकर अपने व्ययसे ब्लाइन्ड स्कूलमें भेज दें तो न केवल उन्हीं गरीबोंके दिन फिरें वरन वे शिक्षा प्राप्त करें। अपने घर लौटनेके उपरान्त निजका स्कूल खोल सकते हैं और सैकड़ों अन्धे भाईयोंका जीवन सुधारकर अपना तथा उनका जन्म सुफल कर सकते हैं। अब देखना है, इस सात्विक दानकेलिए कौन अपनी मुट्ठी खोलता है।

---

## रसायन विद्या❀

[ ले० डा० बी. के. मित्र, एल्. एम्. एस्. ]

### पहला अध्याय

"पञ्चतत्व"

प्राचीनोंके मतमें सारा जगत पांच तत्वोंसे बना हैः—"क्षित्यप तेज मरुत् व्योम" अर्थात् पृथिवी, जल, अग्नि, वायु, और आकाश। उनके मतमें कोई भी पदार्थ ऐसा नहीं है जिसमें ये न हों। यथा मनुष्य देह, इसको चितापर जलते देखकर ऐसा विचार बहुत अमूलक नहीं प्रतीत होता कि शरीरको वायु हवामें मिलगयी, जलवाष्प बनकर उड़-गया, तेज अग्निमें परिणत होगया, पृथिवी भाग भस्म हो गया, आकाश उसमें ही लय हुआ।

❀ सर्वाधिकार लेखकके अधीन हैं। (सं०)

Chemistry रसायन ]

इसीका नाम "पञ्चत्व" प्राप्त होना है। इसी तरह सब पदार्थोंमें ये पांचों "भूत" न्यूनाधिक पाये जाते हैं। पत्थरमें अग्नि भाग न होनेके कारण वह नहीं जल सकता। तैलादिमें "स्नेह" रूप आग्नेय पदार्थ रहनेसे वह सुगमतासे जलते हैं इत्यादि। अतएव ये पञ्च भूत सर्व पदार्थोंके उपकरण होनेसे "मौलिक" पदार्थ समझे जाते थे।

परन्तु आधुनिक गवेषणासे प्रमाणित हुआ है कि जल वायु आदि मौलिक पदार्थ नहीं हैं; अर्थात् इनमें भिन्न भिन्न प्रकारके उपादान मौजूद हैं। तेजको (अग्नि) तो पदार्थ ही नहीं कह सकते, कारण वह पदार्थकी अवस्था मात्र है। अग्निसे उत्तप्त लौह गोलक तेजयुक्त होने-पर भी शीतल अवस्थासे भारी नहीं होता। आधुनिक मतमें पदार्थ वह है जिसमें भार हो और जो हमारे ज्ञानेन्द्रियद्वारा उपलब्ध होसके।

आधुनिक मतमें पदार्थ दो प्रकारके हैंः—

( १ )—मौलिक पदार्थ—"एलिमेन्ट"।

( २ ) - यौगिक पदार्थ—"कम्पौण्ड"।

मौलिक पदार्थ वह हैं कि जिनमेंसे हम किसी रीतिसे कोई नूतन पदार्थ निकाल नहीं सकते, यथा—सोना, चान्दी, गन्धक, आदि। इनकी संख्या न्यूनाधिक ८० है।

यौगिक पदार्थ वह हैं जो एकाधिक मौलि-क पदार्थोंसे गठित होनेके कारण उनमेंसे रासा-यनिक क्रियाद्वारा भिन्न भिन्न प्रकारके पदार्थ निकाले जा सकते हैं। यथा कशीश, तूतिया, चीनी, ( शर्करा ) घृत, आदि। इनकी संख्या अगणित है। मौलिक पदार्थ अपने प्राकृतिक तथा रासायनिक गुणोंके अनुसार दो बड़े बड़े गणोंमें विभक्त हैं:

( १ ) धातु ( मैटिल्स )

( २ ) अधातु—नोनमैटिल्स।

धातुओंमें एक विशेष प्रकारकी चमक और झंकार शब्द होता है, और यह सुगमतासे

उत्तप्त हो जाते हैं। बिना रासायनिक परिवर्तनके यह किसी पदार्थके अन्दर घुल नहीं सकते। अधातु विपरीत गुण विशिष्ट पदार्थ हैं। इनके भेद आगे विस्तारसे वर्णन होंगे।

आधुनिक रसायनशास्त्रके विषय यथा क्रम वर्णन करनेके पूर्व हम पूर्वोक्त तत्वोंके सम्बन्धमें आलोचना करेंगे।

पृथिवी

पृथिवी, जिसपर हम रहते हैं, वह भिन्न भिन्न मौलिक पदार्थोंसे बनी हुई है। इसमें ऑक्सिजन (एक वायु) प्राय अर्द्धांश है, सिलीकन एक दूसरा मौलिक पदार्थ प्रायः चतुर्थांश है। ये दोनों धातु नहीं हैं, बाकी प्रायः चतुर्थांशमें अल्मूनियम, (१) लौह, क्यल्सियम, मेग्नी सियम, (२) सोडियम, (३) पाटासियम, (४) आदि भिन्न भिन्न धातु तथा सल्फर आदि अधातु सम्मिलित हैं।

पृथिवीके वाह्य पीठपर कहीं मीट्टी व कहीं पत्थर हैं। ये दोनों अधिकतर पूर्वोक्त सिलिकनके यौगिक है।

अगर पृथिवीको खोदा जाय तो इसमें भिन्न भिन्न स्तर दिखाई देंगे इन स्तरोंके नीचे फिर पत्थर मिलेंगे। यदि इन पत्थरोंको देखा जाय तो उनके दो बड़े बड़े भेदकर सकते हैं। एक वो जो स्तरोंमें सज्जित हैं यथा लाल पत्थर, स्लेट, आदि दूसरे वो जो पिघलकर जमे हुए मालूम पड़ते हैं यथा नीला पत्थर (संग खारा)। पूर्वोक्त पत्थर पृथिवीकी पीठपरसे मृत्तिका धुल धुलकर समुद्रगर्भमें विस्तृत होनेके कारण स्तर सज्जित होकर बनता है; अतएव ये जलज वा स्तरान्वित कहलाते हैं। शेषोक्त भूगर्भस्थ उत्तापसे मृत्तिकाके पिघलनेके कारण उत्पन्न होते हैं। अतएव अग्निज प्रस्थर कहलाते हैं।

पृथिवीके नीचे उद्भिज पदार्थ किसी समय दब जानेके कारण वह आजकल खानोंके अन्दर पत्थरके कोयलोंके रूपमें पाये जाते हैं। इसी प्रकार खड़ियाके स्तर हैं जो कि एक क्षुद्र जलज प्राणीके देहावशेष हैं। मूंगा भी इसी प्रकारका एक और प्राणीके वाह्यावरणसे प्राप्त होता है। भिन्न भिन्न प्रकारके रत्न यथा मणि, मरकत, आदि साधारण पार्थिव पदार्थोंके रूपान्तर हैं। पृथ्वीके स्तरोंके मध्यमें कहीं कहीं "कच्चे" धातुओंकी "शिरायें" मिलती हैं, जिनमेंसे असंस्कृत अवस्थामें धातु निकाले जाते हैं और फिर रासायनिक क्रियासे साफकर ली जाती हैं।

देखा गया है कि पृथवी जितनी गहरी खोदी गई है, उतना ही उसका ताप बढ़ता गया है। भूपीठसे दो मील नीचे उसका उत्ताप इतना है कि वहां पानी पहुंचनेसे वाष्पमें परिणत हो जाता है। इसीके कारण कहीं कहीं उष्ण प्रस्रवण झिरने देखनेमें आते हैं। पृथ्वीके गर्भमें जो उतप्त पदार्थ है वह भी कभी कभी भूपीठपर अपना मार्ग करके अग्नि वा वाष्प आदि पदार्थ उद्गीर्ण करता रहता है जिससे आग्नेय गिरि बनता है। कारण ये उत्क्षिप्त कठिन पदार्थ अपने मुंहके चारों ओर स्तूपाकार होकर एक पर्वत बना लेता है। इस भूगर्भस्थ उत्तापद्वारा पृथ्वीके अन्दर एक्सप्लोज़न (स्फोटन) होनेके कारण भूमिकम्प होता है। परन्तु एक और कारण यह है कि पृथ्वीपीठ सुकड़कर सहसा भूगर्भमें डूब जानेसे भी भूकम्प हुआ करता है। इन घटनाओंसे ऐसा अनुमान किया गया था कि पृथ्वी किसी समय तरल तथा आग्नेय अवस्थामें थी। केवल उसका वहिर्पीठ शीतल होकर जीवोंके रहने योग्य हो गया है। परन्तु आधुनिक गवेषणसे ऐसा भी अनुमान किया जाता है कि पृथ्वीका उत्ताप उसके मध्यमें "रेडियम" नामके एक पदार्थद्वारा उत्पन्न होता है।

पृथ्वी अधिकतर कठिनवस्थामें है। उसका

(१) फटकरीप्रद धातु (२) सुवर्ङ्ग (३) लवणक (४) चारक

कारण यह है कि जिन पदार्थोंसे पृथ्वी बनी हुई है उनके छोटे छोटे कण व अणु (मोलिक्यूल्ज़) आपसमें ऐसे संबंद्ध हैं कि उनमें स्थानान्तर चेष्टा अधिक नहीं हो सकती। अतएव वो अपने आकारको परिवर्तन नहीं कर सकते। उत्ताप-द्वारा इनके अन्तराणुस्थान अधिक हो जानेके कारण कठिन पदार्थोंकी परिमाणमें भी वृद्धि होती है, यह सामान्य परीक्षाओंके द्वारा दिखाई जासकती है ( तेज देखो )

शीशा, कलई, आदि कठिन पदार्थ उत्ताप-से तरल हो जाते हैं अर्थात उत्तापद्वारा उनके अणुओंको संबद्ध रखनेवाली शक्ति ( कोहिज़न ) इतनी शिथिल हो जाती है कि वह सुगमतासे स्थानान्तर चेष्टाकर सकते हैं। अतएव तरल पदार्थोंका कोई निर्धारित आकार नहीं होता है और अन्तराणु स्थानमें भी वृद्धि होनेके कारण प्रायः ठोस अवस्थासे अधिक परिमाण रखते हैं। पारद, गन्धक, जल, कर्पूरादि, कितनेही प्रकारके पदार्थ उत्ताप द्वारा सुगमतासे वायवीय आकार धारण करते हैं–सब प्रकारके वायुओंके अणु अतिमुक्त भावसे सञ्चलन करते हैं और उनमें "कोहीज़न" लुप्त होजाता है–अतएव उनमें न केवल कोई निर्दिष्ट आकार ही होता प्रत्युत उनका परिमाण भी निर्दिष्ट नहीं है।

### जल

जल—समुद्रोंमें तथा भूपीठ पर प्रचुर परिमाणमें पाया जाता है। समुद्रपीठ भूपीठ का प्राय तिगुना है। जल सब प्रकारके उच्च प्राणियोंकेलिये अत्यावश्यक है। मनुष्य देह-का यह दो तृतीयांश है। कितने ही प्रकारके घन दानेदार रासायनिक पदार्थ यथा लवणादिके अन्दर प्रचुर परिमाणमें जल रहता है। साधारण जल तरल पदार्थ है परन्तु प्रकृतिमें यह कठिन यथा वर्फ, और वायवीय यथा वाष्प, आकारमें भी पाया जाता है। जलके जमनेका और वाष्प बनकर उड़नेका ताप हमारे व्यवहारोपयोगी होनेके कारण उनपर साधारण तापमान यन्त्रोंका ग्राम बनाया गया है। सेन्टी-ग्रेट स्केलके अनुसार जल शून्य दरजे पर जमता है और १०० दरजे पर वाष्प बनकर उड़जाता है। जलका भार भी और घन पदार्थों के आपेक्षिक गुरुत्व का मान स्वरूप व्यवहार होता है। जो पदार्थ जलके सम भार रखता है वह जलके मध्यमें स्थित रहता है। जिस पदार्थका आपेक्षिक गुरुत्व जलसे अधिक होता है वह साधारणतः डूब जाता है। और जिसका आपेक्षिक गुरुत्व लघु होता है वह जलमें तैरता रहता है।

संतरणशील पदार्थोंके संबन्धमें एक सिद्धान्त यह जाननेके योग्य है कि जितना भाग उस पदार्थ का जलमें डूबा रहता है उतने परिमाण जलका भार उस सम्पूर्ण पदार्थके भारके समान होता है। कारण? चारों ओर का पानी अपनी उत्तोलन शक्तिसे (बोयन्सी) जिस पदार्थ को तैयार रखता है वह केवल डूबे हुए भागसे स्थानान्तहित जल राशीको सहज अवस्थामें धारण कर्ता है। अतएव लौहादि पदार्थोंका जलसे आपेक्षिक गुरुत्व अधिक होनेपर भी वह भाण्ड रूपमें जलके ऊपर सुगमता-से तैरते हैं। उपरोक्त सिद्धान्त आर्किमिडीज़का आविष्कृत है। इस वैज्ञानिकने स्नान करते हुए परिपूर्ण जलाधारमें अपने निमग्न शरीरसे स्थानान्तरित जलराशीको देखकर यह निर्धारित किया कि पदार्थ जितना गुरुभार विशिष्ट होगा उतनाही अल्प परिमाण जलको स्थानान्तिरित करेगा। भिन्न भिन्न प्रकारके तरल पदार्थोंका आपेक्षिक गुरुत्व भिन्न भिन्न होनेके कारण उन-की उत्तोलन शक्ति ( बोयन्सी ) भी भिन्न भिन्न होती है। यथा, एक कठिन लौह खण्ड पानीमें डूब जानेपर भी पारदमें सुगमतासे तैरता है। इसी सिद्धान्तपर भिन्न भिन्न प्रकारके आपेक्षिक

भारमान यन्त्र बनाये गये हैं यथा यूरिनैामीटर ( मूत्रमान ), लेकटौमीटर ( दुग्धमान ) एल्कोहोलोमीटर ( सुरामान ) आदि इनके व्यवहार जाननेके योग्य हैं।

जल यौगिक पदार्थ है। यह वैद्युतिक विश्लेषणद्वारा दो भिन्न भिन्न प्रकारके वायुओंमें परिणत हो जाता है। इनमेंसे एकका नाम हैड्रौजन ( उज्जन ) दूसरेका नाम औक्सिजन ( अम्लजन ) है। इन वायुओंको हम और रीतिसे उत्पादन करके भी रासायनिक परिमाणमें मिश्रित करके यदि उनके अन्दर विद्युत्स्फुलिङ्ग डालें तो वो संयुक्त होकर जल बना देते हैं। इन परीक्षाओंके लिये जटिल यन्त्रोंकी आवश्यकता है। [ हाइड्रोजनके वर्णनमें इसका एक स्थूल प्रमाण दिया जायगा। ]

जलमें बहुधा पदार्थ द्रव हो सकते हैं एक साधारण रीति इस बातके निर्णय करनेकी कि कोई कठिन पदार्थ इसमें द्रव होते हैं या नहीं यह है कि किसी परीक्षा नलिकाके अन्दर विशुद्ध अर्थात [ तिर्यक् ] पातित जल लेकर उस पदार्थको उसमें चूर्णित करके डालें। यदि द्रव न होनेके विषयमें सन्देह हो तो उसमें उत्तापदें फिर इसमेंसे थोड़ासा जल लेकर कांचके पात्रमें रखकर जलको मृदु तापद्वारा उड़ादें। यदि कोइ कठिन पदार्थ बचे तो जाना जायगा कि परीक्षित पदार्थ द्रवणीय है परन्तु कई प्रकारके वोलेटैल ( उद्वायी ) पदार्थ इस प्रकारसे घनावस्थामें नहीं मिलते अतएव साधारण द्रवणीय पदार्थोंको जलमेंसे केवल उत्तापद्वारा निकाल सकते हैं। परन्तु उद्वायी पदार्थोंके निकालनेके विशेष प्रकारका (तिर्यक् ) पातन यन्त्र (जैसा कि सुरासार निकालनेमें) व्यवहार होता है। जलमें इस प्रकारकी द्रावक शक्ति रहनेसे बहुधा गंभीर कूपोंका जल खारी होता है। परन्तु अल्प गंभीर कूप तथा तालावका पानी मीठा होनेपर भी उसमें भूपीठसे धुलकर बहुधा प्राणिज पदार्थ मिश्रित रहते हैं। प्राणिज पदार्थोंके आधिक्यसे उसमें बहुत सारे जीवाणु उत्पन्न हो जाते हैं जिनमेंसे कितनेही शरीरके लिये हानिकर हैं। अतएव पीनेका पानी यथा संभव जीवाणु तथा खनिज पदार्थोंसे रहित होना चाहिये। पानीके उबालनेसे सब प्रकारके जीवाणु नष्ट होजाते हैं। एक प्रकारका साधारण खार भी जलमेंसे स्खलित ( प्रेसिपिटेट ) हो जाता है। परन्तु तिर्यक् पातन प्रक्रियाद्वारा जलमेंसे सभी प्रकारके पदार्थोंको निष्कासन कर सकते हैं। *

---

## स्वास्थ्य-रक्षा

[ ले० डा० वी, के. मित्र, एल. एम. एस. ]

प्रस्तावना

स्वास्थ्य विधानका प्रधान उद्देश्य शरीरको सुखी रखना है। इसके उपाय शारीरिक शक्तियोंका संवर्द्धन करना, तथा रोगोत्पत्तिका निवारण करना, और इसका फल दीर्घ जीवन लाभ है। वैदिक समयमें बहुधा "शतायु" कामना तथा पार्थिव सुख भोगकी आकांक्षा होनेपर भी, परवर्ती कालमें

* [ तिर्यक पातनः—इस देशमें सबसे प्रथम नागार्जुनजी ने तिर्यग पातनक्रिया प्रवर्तित की थी। यही महापुरुष इस देशमें रसायन विद्याके आदि गुरु हैं। इनका ख्रिष्टपर २ प० शताब्दीमें प्रादुर्भाव हुआ था इन्होंने ही धातुओंकी सर्व प्रथम "अयस्कृति प्रक्रिया" प्रवर्तितकी जिससे परवर्ती समयमें जारण मारण आदि रासायनिक प्रक्रियाएँ आविष्कृत हुईं। यह केवल रस सिद्ध ही न थे किन्तु समग्र आयुर्वेदके तत्वज्ञ भी थे। ये आधुनिक सुश्रुत संहिताके प्रति संस्कर्ता और उसके उत्तर तन्त्रके रचयिता भी थे इसके अतिरिक्त यह भी जाननेके योग्य हैं कि ये "महायान" वौद्ध धर्मके प्रवर्तक भी थे। नागार्जुन विरचित रसरत्नाकर तन्त्र जो पुस्तक विद्यमान है प्रतीत होता है कि वह उनके कुछ शताब्दीवाद संकलित हुआ है। ]

Hygiene स्वस्थ्य विधान ]

वेदान्तादि दर्शनोंके प्रभावसे इस देशमें लोग शरीर पालन विषयमें बहुत ही उदासीन हो गये हैं। कठोर तपस्यामें शरीर नष्ट करना जो धार्म्मिक-जीवनकेलिए अनावश्यक तथा हानि कर है-इस विषयको बुद्धादि महात्माओंने स्वकीय अभिज्ञतासे प्रचलित किया था। तथापि इस देशमें तान्त्रिक दुराचार तथा हठ योगके अप्राकृतिक अभ्यासोंका प्रभाव हमारे धर्म्म जगतपर अत्यन्त प्रबल है। बहुधा मनुष्य धार्मिक जीवनकेलिए शरीर पतनको परस्पर सम्बद्ध समझते हैं। परन्तु हिन्दू धर्म्मका मूल मंत्र इसके विरुद्ध है। जहां तक मुझे विदित है, भारत ही एक मात्र देश है जहां धर्म्मको लौकिक जीवनसे पृथक नहीं किया गया।

बङ्गदेशके एक महापुरुष बङ्किमने अपने प्रधान ग्रन्थ "धर्म्मतत्व" में प्रचार किया है कि हिन्दू धर्म्मकी मुख्य शिक्षा शरीरको सारी वृत्तियों-का सामञ्जस्य रखना है। इनमेंसे पाशविक वृत्तियां, पूर्व संस्कार हेतु बड़ी प्रबल हैं। और सात्विक वृत्तियोंका संस्कार नवीन होनेके कारण अधिकतर उनका अनुशीलन तथा इतर वृत्तियोंके संयमकी आवश्यकता रहनेपर भी कोई भी वृत्ति प्रकृति विरुद्ध नहीं है। अतएव सम्पूर्ण मनुष्यत्वके विकासकेलिए सारी वृत्तियोंका यथा विधि अनुशीलन ही धर्म्म है। इस देशके महापुरुषोंने वैराग्यका यथेष्ट आदर करते हुए भी कर्मयोगीको सबसे प्रधान रक्खा है। इसकेलिए गीताका बचन और श्रीकृष्णजीकी जीवनी यथेष्ट प्रमाण है।*

तथापि इस देशमें इस अमानुषिक वैराग्यको दूरकरनेकेलिये हमें कटिबद्ध होना चाहिये। हमें अपने प्राचीन 'आइडियल'-को (आदर्शों) पुनःस्थापन करनेकेलिये भौतिक (physical) प्रमाणोंके अतिरिक्त शास्त्रोंके बचनोंकी भी सहायता लेनी चाहिये। अतएव चरकजीका एक बचन उद्धृत किया जाता है।

"धर्मार्थ काम मोक्षाणामारोग्यं मूलमुत्तमम्"
रोगा स्तस्या पहतरीः श्रेयसो जीवितस्यच।

अर्थात् धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्ष, इनकी प्राप्तिकेलिए उत्तम आधार शरीरको नीरोगता है। रोग शरीरके और कल्याण तथा जीवनके भो नाश करनेवाले हैं।

स्वास्थ्य विधान। (hygiene)

स्वास्थ्य विधानके दो भाग हैं।

(१) व्यक्तिगत-(personal health)

(२) सार्वजनिक-(public health)

व्यक्तिगत वह है जो प्रत्येक मनुष्यके यत्न साध्य हो, यथा, स्नान, आहार विहारादि।

सार्वजनिक वह है, कि जिसको कार्यमें परिणत करनेकेलिए प्रजावर्ग तथा राजाका यत्नसापेक्ष हो, यथा, जलादिका प्रबन्ध करना।

यदि सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाय तो हमारे व्यक्तिगत कार्य भी बहुधा मनुष्योंकी सहायतासे सम्पन्न होते हैं। अपरञ्च, व्यक्तिगत वा सार्वजनिक विधियोंके मध्यमें कोई अन्तर नहीं है, प्रत्युत व्यक्तिगत यत्नके न होनेसे सार्वजनिक वा राजकीय स्वास्थविधान बहुधा अकारथ हो जाते हैं।

यहां केवल व्यक्तिगत विषय वर्णन किये जायंगे।

*ये व्याख्यान देहलीके आयुर्वैदिक और यूनानी तिब्बी कालेजके आयुर्वैदिक विभागमें पाठ्य पुस्तक न होनेके कारण इसके लेखक डाक्टर बी. के. मित्र, एल्. एम्-एस्., द्वारा मौखिक दिये गये थे। स्वास्थ्य रक्षा विषयपर अंग्रेजी भाषामें भारतवासियोंके उपयोगी कई सरल पाठ्य पुस्तक होनेपर भी, लेखकने इन व्याख्यानोंका आधार कलकत्ता निवासी राय बहादुर डाक्टर चुन्नीलाल वसु प्रणीत बङ्ग भाषाकी "शरीर स्वास्थ्य विधान नामक पुस्तकपर रक्खा है। छात्रवर्ग भिन्न २ प्रान्तोंके होनेके कारण इनकी भाषामें संस्कृत शब्द अधिक आये हैं। लेखकने सब अधिकार स्वाधीन रक्खे हैं। सं०

प्रातरुत्थान

इस विषयमें प्राचीन तथा अर्वाचीन पण्डित मन्डलियोंका मत भेद नहीं है। धर्मशास्त्रकारोंने ब्राह्ममुहूर्तको उपासनाकेलिये प्रशस्त कहा है। युवकोंकेलिए संयमकी साधना ही उपासनाका मुख्य भाग है। प्रातरुत्थान केवल अभ्याससे सहज हो जाता है। स्वास्थ्यके अतिरिक्त इससे लोग एक मनोहर प्राकृतिक दृश्य तथा विशुद्ध वायु सेवनका सुख भोग भी कर सकते हैं। अपरञ्च, इस समयको प्रातर्भ्रमण तथा व्यायामादियोंमें सद्व्यवहार किया जाय तो मनुष्य दीर्घ जीवी होता हैं। यदि जीवन काल न बढ़े तो भी प्रति दिन एक घंटाके हिसाबसे मनुष्य साधारण जीवन कालके अन्दर प्रायः चार वर्ष अधिक जीवन सुख भोग करता है।

शौचादि क्रिया

प्रातकालमें उठकर शौच क्रियासे निवृत्त होना चाहिये। यथा सम्भव शारीरिके वेगोंको रोकना नहीं चाहिये। चरक जी कहते हैं :—

नवेगान्धारये द्धीमान् जातान् मूत्र पुरीष्ययोः इत्यादि ( नवेगान्धारणीय अध्याय ) कितने ही लोग केवल आलस्यके कारण शय्यामें पड़े रहकर मलत्यागादिके प्राकृतिक बेगोंको समयपर अनुरोध करनेसे अनेक व्याधिग्रस्त हो जाते हैं। यदि स्वतः वेग न हो तो जलपान वा लघु भोजनके अनन्तर यह क्रिया सुसाध्य होती है। क्वचित पूर्णावस्थाके लोगोंकेलिए धूम पान, की ( तमाकू पीने ) भी आवश्यकता होती है। यहां प्राचीनोंका एक बचन शोधित रूपसे उद्धृत किया जाता है।

भोजनान्ते पिवेत्तक्रं निशान्ते च पिवेज्जलम्।
निशामध्ये पिवेद्दुग्धं किं वैद्यस्य प्रयोजनम्॥

आजकल शीतल जलके स्थानमें क्वचित चाहका व्यवहार भी प्रचलित हुआ है। यह एक निर्दोष पानीय है। और उष्ण तथा उत्तेजक होनेके कारण पूर्ण वयस्क मनुष्योंकेलिए उपकारी भी है। परन्तु "नातिकुत्रापिशोभनम्"

दन्त धावन

यह सब सम्मत है कि किसी प्रकारके भोजनके पूर्व मुख प्रक्षालन करना चाहिये। यथा विधि दन्तधावन करनेसे बहुधा रोग नहीं होने पाते। दन्त रोग स्थानीय होनेपर भी उनके छिद्रमेंसे रोग विष अथवा जीवाणु शरीरके अन्दर प्रवेश करके यक्ष्मादि उत्कट रोग उत्पादन कर सकते हैं। समस्त रात्रीमें मुखके भीतर बहुतसा मल जो भोज्य पदार्थके अवशिष्टांशसे सञ्चित होता है। यदि मुख प्रक्षालन न किए हुए भोजनके साथ उदरस्थ हों तो भिन्न भिन्न प्रकारके उदर रोग उत्पन्न हो सकते हैं। दन्तधावन विषयमें चरकप्रोक्त विधिसे करञ्जकवरी आदि कटु, तिक्त, कषाय, मृदु, वृक्षशाखाओंसे दन्तधावन करना श्रेष्ठ है। परन्तु नीम वा कीकर इस प्रान्तमें सुलभ होनेसे अधिकतर व्यवहार होते हैं। इनका व्यवहार शूकर, केशर तथा गवास्थि निर्मिति महार्घ गुच्छ (बुरुष) से अधिक स्वास्थकर है। बुरुष एक बार व्यवहारके अनन्तर मलीन हो जाते हैं। अपरञ्च इनमें किसी मञ्जनकी आवश्यकता होती है। भिन्न भिन्न मञ्जनोंमें कितनेही अस्वास्थकर रासायनिक पदार्थ ( यथा क्षार वा अम्ल) सम्मिलित रहते हैं। निम्नलिखित एक योग दन्तधावनार्थ दिया जाता है।

८ भाग शोधित खड़िया मिट्टी ( भीटा पिपरेटा )

२ भाग कत्था ( शोधित खदिर )

२ भाग बीजा बोला वा मुर ( Myrrh )

इनको मिला देनेसे अत्युत्तम मञ्जन बनता है। इसमें गुलाबकी पत्तियां भी वा अन्य सुगन्धि द्रव्य यथा पीपरमेन्टका तेल आदि, अल्पपरिमाणमें मिलाये जा सकते हैं।

जिह्वाको भी साफ़ करना चाहिये जिसकेलिए दतौन चीरकर अत्युत्तम "जीभि" बन सकती है। परन्तु चरकमतके सुवर्ण, रौप्य, ताम्र, शोशा वा पीतल, निर्मित। जिजिह्वा निर्लेखनीके विषयमें शीशा अनुचित प्रतीत होता है।

प्रातर्भ्रमण

प्रातरुत्थानके अनन्तर यदि यह समय भ्रमणमें व्यय किया जाय तो स्वास्थकेलिए अत्यन्त हितकर होता है। इसके विषयमें अन्यत्र कहीं सविस्तार वर्णन किया जायगा।

( नोट—प्रातः कालमें उठकर भ्रमण वा अन्य कार्य्यकेलिए बाहर जानेसे पूर्व लघुभोजनकी रीति प्रशस्त है, कारण, उससे आमाशयके भीतर थोड़ासा हाइड्रोक्लोरिकएसिड ( लवण द्रावक ) निःसरण होनेके कारण जीवाणुओंके आक्रमणसे शरीर संरक्षित रहता है। )

स्नान तथा तैलाभ्यंङ्ग

स्नानकेलिए कोई निर्दिष्ट समय न होनेपर भी इसकेलिए शौचादिके अनन्तर प्रातः कालका समय प्रशस्त है। परन्तु अधिक परिश्रमके वा दीर्घ उपवास वा गुरु भोजनके अनन्तर स्नान करना उचित नहीं है। किन्तु यदि व्यायाम वा प्रातर्भ्रमण किया जाय तो शरीरकी क्रान्ति दूर होनेके अनन्तर स्नान करनेसे यह लाभ होता है कि कार्य क्षेत्रमें जानेसे पूर्व शरीरका घर्म आदि मल धुल जाता है।

स्नानके पूर्व शरीरमें तैलाभ्यङ्ग करना प्राचीनोंके मतसे आधुनिक स्वास्थ्य तत्व वेताओंका एकमत है। तैलमर्दनसे त्वचा कुछ उत्तप्त होनेके कारण शीतल जल हानि कारक नहीं होता। अपरञ्च इसके मर्दनमें यदि यह कार्य स्वयं किया जाय तो यथेष्ट व्यायाम होता है। तैल त्वचाद्वारा भी शरीरके भीतर प्रवेश करके देहका उत्कर्ष साधन करता है। अति क्षीण देह शिशुओंके शरीरपर कौडलीवर आयल ( मत्स्यतैल ) प्रलेप किया जाता है। और उनको दुग्धसे निलहान भी हितकर समझा गया है। तैलाभ्यङ्गके अनन्तर नहाकर तैल छुटानेकेलिए अंगुछेका व्यवहार भी शरीरके लिए अत्यन्त आवश्यकीय है।

कारण आर्द्र शरीरमें अधिक काल रहना अनुचित है। स्नानमें साबुनका व्यवहार भी प्रशस्त है। इससे शरीरका अधिक तैल अन्य मलोंके साथ धुल जाता है। तैल केशोंको भी दृढ़ करता है। प्राचीन शास्त्रोंमें तैलके अनेक गुण वर्णन किये हैं। उनमें अत्युक्ति रहनेपर भी तैलका मर्दन हितकारक है। कहते हैं तैलमर्दनसे मच्छर तथा अन्य कीटादि कम काटते हैं। क्या बङ्ग तथा मद्रास प्रान्तमें प्लेग न होनेका यह भी एक कारण है। यद्यपि बङ्गदेशीय लोग सर्षपतैलका अधिक व्यवहार करते हैं तथापि लेखकके मतमें विशुद्ध नारियलका तैलही प्रशस्त है। कारण इसमें किसी प्रकारकी दुर्गन्धि नहीं होती। अपरञ्च, यह केशोंके अन्दर नहीं चिपकता। सम्भवतः यह त्वचाद्वारा शोषण भी अधिक हो सकता है।

स्नानके लिए शीतल जल प्रशस्त है। परन्तु बहुतसा अभ्यासपर निर्भर है। यदि जलकी शीतलता, कष्ट हेतु हो तो उसमें उष्ण जल मिला सकते हैं। स्नानान्तर शरीरको पोंछकर वस्त्रसे ढांकना चाहिये। गीला कपड़ा पहिनकर नदी वा कूपादिसे घर आना सुरुचिहेतु भी ( विशेषतः स्त्रियोंके लिए ) सर्वथा अनुचित है।

अवगाहन ( डूबकर ) का स्नान सबसे उत्तम है। परन्तु बलवान पुरुषको भी ५। ७ मिनटसे अधिक जलके अन्दर नहीं रहना चाहिये। समुद्र स्नान एक अत्यन्त बलकारक विधि है, जो वृद्ध, दुर्बल, तथा शिशुओंके लिए निषिद्ध है। इनको शीतल जलमें भी स्नान

नहीं करना चाहिये। उष्णजलसे स्नान खुले स्थानमें न करना चाहिये कारण उससे शीत लग जानेकी अधिक सम्भावना है। विशेषतः शिशुओंकेलिए, कि जिनकी त्वचाका परिमाण बड़ोंकी अपेक्षा अधिक होता है। जिनमें फुस-फुसादिके रोग भी अधिक होते हैं।

स्नानसे केवल त्वचाका मल ही त्याग नहीं होता किन्तु नाडीय सम्बन्धसे सब शरीरकी स्फूर्ति होती है। ज्वर रोगमें स्नान ताप हरण करके क्वचित ज्वरघ्न औषधियोंके स्थानमें व्यवहार होता है।

---

## वैज्ञानिकीय

### (१) कान्ति लोहेमें गन्धक

Stabl U Eisen नामक पत्रमें E. Leber लीबरका लेख है कि कान्ति लोहेमें गन्धकका कुछ अधिक अंश रहनेसे अधिक दृढ़ता और लचक आजाती है। परन्तु साथही गन्धकका परिमाण बढ़ जानेपर दरार पड़ जाने वा गन्धकके अलग इकट्ठे हो जानेकी भी प्रवृत्ति रहती है। गंधकके इकट्ठे हो जानेसे उतनी हानि नहीं है, जितनी दरारों वा बुलबुलोंके पड़ जानेसे। इस अवगुणसे बचनेके लिए लोहेको जितनाही तप्त और जितनीही जल्दी ढालें उतनीही सफलता होगी। अब तक असफलता इसके विरुद्ध व्यवहारसे हुआ करती थी।

* * *

### (२) शोरसे शक्तिका दुरुपयोग

जिस कारखानेमें बहुत शोर होताहो समझना चाहिये कि उसमें शक्तिसे पूरा लाभ नहीं उठाया जाता। कल पुरज़ोंके परस्पर संघर्षमें उनका ठीक ठीक न लगाया जाना सिद्ध होता है। मशीन अल्पायु हो जाती है। काममें उचितसे अधिक शक्तिका अपव्यय होता है। शोरसे कामकरनेवालोंको भी उलझन होती है, दिमाग़ खराब हो जाता है। एक ही काम करनेवाले दो कारखानोंमें अधिक चुपचाप काम करनेवाला कारखाना अधिक सफल भी होता है। इसीलिए शोरसे बचना शक्तिके अपव्ययसे बचना है।

Miscellanious फुटकर]

मनोविज्ञान शास्त्री इस बातको मुक्त कंठसे स्वीकार करते हैं कि शोर गुलके भीतर काम करनेवालेको अपना मन काममें लगानेकेलिए और शोरसे अपना हर्ज न होने देनेकेलिए विशेष प्रयत्न करना पड़ता है। इस प्रकार विशेष मानसिक बलका शोरके कारण अपव्यय करना पड़ता है। शोर करनेवाले या व्यर्थ बोलनेवालेकी शक्तिका भी इसी प्रकार अपव्यय होता रहता है और वह अपने काममें जल्दी थक जाता है। भारतवर्षमें मौनव्रत धारण भी साधनाके अन्तर्गत है। जिन्हें इस व्रतका अनुभव है इस बातको स्वीकार करते हैं कि कुछ कालतक मौनव्रत धारण करनेसे मानसिक शक्तियोंका थकान मिट जाता है और फिरसे बलवती हो जाती हैं।

रा० गौ०

* * *

### (३) प्राचीन कालकी छेनी

लंडनके Institution of mechanical Engineers यंत्र शास्त्रि-संस्थामें व्याख्यान देते हुए, कुछ दिन हुए Sir Robert Hadfeld सर राबर्ट हैडफ़ील्डने कहा कि जब मैं लंकामें था एक दिन कोलम्बोके अद्भुतालयमें मैंने असाधारण कठोरता रखनेवाली छेनियां देखीं। मुझे समझमें न आया कि कठोर वस्तुओंको काटनेकेलिए यथेष्ट कठोरता लोहेमें प्राचीनकालमें कैसे लाते थे। विश्लेषणसे मालूम हुआ कि छेनियोंका लोहा शुद्ध लोहा था। केवल धारपर कर्बनका (कोयले का) संयोग संभाव्य था। बिना कर्बन-

के संयोगके ऐसी कठोरता आनी संभव न थी यह छेनी संभवतः सन ईसवीके आदिमकालकी थी, इसलिए स्पष्ट है कि उस समय ऐसी हिकमत मालूम थी कि धारको कोयलेके योगसे-शुद्ध लोहेको कोयलेकी आंच में देर तक रखकर—सहज ही कठोर कर लेते थे।

रा० गौ०

*　　*　　*

(४) नौहड़—लकड़ीका सम्बन्ध

पत्थरका कोयला कुछ कठिनाईसे जलता है और बहुत ज़्यादा धुआं देता है। दुर्गंधमय गैस निकलती है। इस अवगुणके दूर करनेका एक आसान नुसखा है। प्रति मन कोयलेकेलिए आधसेर पानीमें एक तोला नमक घुलाओ और उसे सावधानीसे सारे कोयलेपर छिड़क दो। कोई कोयलेका टुकड़ा बे छिड़का न रहे कोयला बहुत कम धुआं देता हुआ तेज़ आंचसे जलेगा और राख कम छूटेगी। ईंधन की किफ़ायत होगी। नमकके दाम चौगुने व्याज सहित निकल आवेंगे।

*　　*　　*

(५) शरीरकी क्रियाओंका प्रत्यक्ष दर्शन

वह यंत्र किसने नहीं देखा जिसमें कलकत्ते बम्बई आदिके चित्र मेलोंमें दिखाया करते हैं। इस यंत्र को stereoscope कहते हैं। इसमें आंखोंके बराबर दो ताल लगे रहते हैं। इन्हीं तालोंके मुकाबिले एकही तरहके दो चित्र चौकठेमें लगाकर एक विशेष दूरीसे देखनेसे बड़ाई छुटाई, ऊंचाई, नीचाई मोटाई आदि सभी बातोंमें चित्रका विषय बिलकुल स्वाभाविक दिखाई पड़ता है। इस प्रकारकी दोहरी फ़ोटो बहुत मिलती हैं। यंत्रभी थोड़े दामोंमें मिल जाता है। ऐसी फ़ोटो लेनेकेलिए केमरामें दो ताल मनुष्यकी दोनों आंखोंकी नाईं दूरी पर लगा देते हैं। क्यों? क्योंकि हम जिस वस्तुको देखते हैं दोनों आखोंसे इस प्रकार देखते हैं कि दोनों चित्र एकसे होकर स्वाभाविक रूपमें दिखाई पड़ते हैं। यही क्रिया इस केमरेमें की जाती है।

X Rays एक्स-रश्मिका एक नया यंत्र कुछ ऐसेही ढंग पर बनाया गया है। एक एक्स-रश्मिकी नलिका ऐसी बनायी गयी है जो आंखोंके बराबर दूरीपर दो किरणें देती है, जो शरीरमें प्रवेश करके एक जगमगाते परदेपर दो प्रतिबिम्ब डालती हैं। यह प्रतिबिम्ब बहुत बड़े होते हैं। जिस शरीर वा वस्तुका चित्र ले रहे हैं उतने ही बड़े होते हैं और बारीबारीसे शीघ्रतापूर्वक परदेपर पड़ते हैं। ढकने इस चतुराई से लगाये गये हैं कि नलिकाके किरणोंके साथही खुलते और बन्द होते हैं। जब दहिनी प्रतिबिम्ब परदे पर पड़ता है दाहिनी ही आंख देखती है और बांई के सामने ढकना आ रहता है। इसी प्रकार बाईंके लिए भी समझना चाहिए। यह अदला बदली इतनी जल्दी होती है कि आंखोंको खुलना मुँदना नहीं मालूम होता, बल्कि आंखोंके चित्रपटपर ठीक स्वाभाविक चित्र बनते हैं और शरीर ठीक ठीक स्वाभाविक रूपमें दीखता है।

इस यंत्रसे अब मनुष्यके शरीरमें रक्त प्रवाह, हृदयंत्रकी चाल, भोजन नलिका और आमाशय आदिकी क्रिया भी देखनी सहज है। जो बातें अनुमान और स्पर्शसे जानी जाती थीं अब आंखोंसे देखी जा सकेंगी। फुप्फुसका चलना हृदयकी धुकधुकी आदि प्रत्यक्ष देखकर अब डाकृर महत्व की बातें जान सकेंगे।

*　　*　　*

(६) बिजली तापना

अमेरिकामें Pittsburg नामक एक बड़ा नगर है। यहां सरदी बहुत पड़ती है। पुलिसके सिपाही जो पहरे पर कई घंटे खड़े रहते हैं

सरदीमें अकड़ जाते हैं, इसलिए इनके पैरों कों गरमानेकेलिए इनके बूटोंके तलोंमें गरमानेका यंत्र लगा रहता है, जिसमें गरमीकी कमी बेशी चार दरजेतककी इच्छानुसार हो सकती है। इस यंत्रका सम्बंध सबसे पासके बिजलीकी रोशनीके तारसे रहता है, जिसके द्वारा पहरेका सिपाही अपनी डिउटीपर खड़े खड़े तापता रहता है और सुखसे पहरा देता है।

जाड़ोंके युद्धमें खाइयोंके भीतर हमारे सिपाही कई पहर ठिठुरते रहते हैं। क्या अच्छा होता यदि इनकेलिए भी ऐसा ही प्रबन्ध होता वा किया जा सकता।

* * *

(७)—नौकरीके लिए उड़ाकेकी परीक्षा

जैसे भारतमें सरकारी नौकरीके उम्मीदवारोंकी डाक्टरी परीक्षा होती है, उसी तरह इंगलैंडमेंभी उड़ाकोंकी डाक्टरी परीक्षा करली जाती है। इस परीक्षाके पीछे भी अनेक उड़ाके व्यवहारमें अयोग्य ठहरते और सरकारी अपव्ययके पीछे निकाल दिये जाते हैं। फ्रांसमें डाक्टरी परीक्षा बड़े ढंगसे होती है।

पहले तो यह देखते हैं कि उम्मीदवार कितनी देरमें शब्द ग्रहण करता है, कितनी देरमें रूप ग्रहण करके उत्तर दे सकता है। इसमें उसकी समझकी फुर्त्ती कितनी है। इन बातोंकी जाँचके लिए Dr. d'Arsonval डारसन वलका chronoscope समय दर्शक लगाते हैं। इसमें घड़ीके से चक्रपर सौ विभाग रहते हैं जिनपर १ सेकंडमें सुईका दौरा पूरा हो जाता है। चुम्बक-बिजलीकी एक हथौड़ीसे परीक्षक इसे चला देता है और परीक्ष्यके दहिने हाथमें पकड़े हुए दो धातुके मुड़े हुए पत्तरोंके दबानेसे यह तुरन्त बन्द भी हो सकता है। शब्द ग्रहणकी परीक्षाकेलिए परीक्षक एक टीनके बक्सपर हथौड़ी मारकर घड़ी चला देता है। दूसरी तरफ़ परीक्ष्यर्थी हथौड़ीका शब्द सुनतेही धातुके पत्तरोंको दबाकर चालको रोक देता है। इस अन्तरमें सुईजितनी चल चुकी है उसे देखकर परीक्षक जानलेता है कि परीक्षार्थीने कितना समय इस कार्य्यमें लगाया। इसी प्रकार उसके स्पर्श ग्रहणकी परीक्षा हथौड़ीसे उसका अंग छूकर की जाती है। रूप ग्रहणकी परीक्षामें डाक्टर हथौड़ीको उसके सामने मेज़पर दबाता है, यह देखते ही परीक्षार्थी सुईको रोक देता है। इस क्रियामें समयान्तर देखकर उसके रूप ग्रहण शक्तिकी जाँच हो जाती है। अच्छा वा सफल परीक्षार्थी वह होगा जिसने १५ विभागमें शब्द या स्पर्शको ग्रहण कर लिया और १९ विभागमें रूपको ग्रहण कर लिया। असफल परीक्षार्थी क्रमशः शब्दके लिए १८-३३ विभाग और रूपके लिए २२-४८ विभागतक पहुंचेगा। साधारणतः कान और स्पर्शसे आंख तेज़ समझी जाती हैं। पर बात उलटी ही ठीक है।

इसके बाद परीक्षार्थीकी मानसिक धक्का सहनेकी शक्ति देखी जाती है। उसकी छाती चारों ओरसे pneumograph श्वास-लेखक यंत्रसे वेष्टित कर दी जाती है। इस यंत्रसे उसकी सांसकी चालका पता लगता है। उसके बाएं हाथकी पहली दो अँगुलियां एक और यंत्रमें लगादी जाती हैं जिससे उसकी नाड़ीका पता लगता है। दहने हाथमें वह Verdin वर्डिनका trembler कम्पक यंत्र थामे रहता है जिससे उसके हाथकी स्थिरता उसी प्रकार मालूम होती रहती है जिस तरह Milne मिलनेका seismograph कम्प-लेखक धरतीका कम्प लिखता जाता है। इन तीनों यंत्रोंका सम्बन्ध एक एक कलमसे रहता है जो कजली लगे घूमते हुए बेलनपर रेखा खींचते जाते हैं। अब धक्का पिस्तोल छोड़कर या मगनीसियमकी तेज़ चमकसे या बेजाने ही बरफ़के पानीमें तर कपड़ेको खुले अंगपर रखकर मानसिक धक्का

पहुंचाते हैं। बेलनपर इसी समय जो रेखा खिंचती है परीक्षार्थीके मानसिक बलकी दशा बतला देती है।

अब मानसिक थकानको और हाथों और बांहोंकी नाडियोंके थकानको सहनेकी शक्तिकी परीक्षाकी जाती है। इस परीक्षामें M. Camus कामुसद्वारा परिवर्त्तित Mosso मस्सूके ergograph अर्गोग्राफ़से काम लेते हैं। उड़ाकेको बड़ी देरतक मज़बूतीसे प्रेरक चक्रके डंडेको पकड़े रहना और घुमाते रहना पड़ता है। इसी पर उसका और विमानका जीवन निर्भर है। इस परीक्षाको इसीलिए महत्व देते हैं।

* * * *

( ८ ) बालूके छन्ने

यह नल-जलवालोंको विदित है कि बालूद्वारा छाननेकी क्रियामें अबतक दो एक बातें अस्पष्ट हैं। यह बात मानी जाती है कि पानीके कल सम्बन्धी छाननेवाले तालाबोंमें बालूकी सतहपर एक काईकी झिल्लीसी पड़ जाती है जो छाननेके काममें विशेषतः उपयोगी होती है। पेरिसके Maquenne माक्वेन महाशयने परीक्षासे मालूम किया है कि छन्नेमें जानेके पहले जलमें ओषजनकी मात्रा कम रहती है और छन जानेपर बढ़ जाती है। इसका कारण उन्होंने यह बतलाया है कि इस झिल्लीमें एक विशेषप्रकारके बानस्पतिक अणु रहते हैं। बनस्पतिके हरित अंशसे वायुका कर्बनद्विओषित कटकर ओषजन छोड़ देता है। इसी ओषजनको यह अणु छनते हुए जलमें संपृक्त कर देते हैं। अतः यह झिल्ली छन्नेका सबसे महत्त्वका भाग है और छन्नेके कार्य्यारंभके ४-५ दिनमें बनती है, ताज़ा रहनेपर उत्तमतासे काम करती है, काल पाकर उसका प्रभाव घट जाता है और थोड़े ही सप्ताहमें छन्नेको बन्दकरने और साफ़ करनेकी आवश्यकता होती है।

रा. गौ.

(९) पवन पोतमें उन्नति और उसके शत्रु

गत मार्चमें ब्रिटिश समुद्र तलपर पवनपोतोंके आक्रमणोंसे कई नयी बातें मालूम हो गयीं। जो पवनपोत बेकार होकर गिर गये उनकी परीक्षासे ज्ञात हुआ कि आजकल शत्रुओंने पवनपोतोंमें उनकी रक्षार्थ कुछ आवश्यक परिवर्त्तन किये हैं। वह विशेषतः तीन हैं। (१) एक पांचवां प्रेरक पोतकी पूँछपर लगाया है कि जब पोत नाक उठाकर सीधे ऊपरको उठना चाहे तो यह पंचम प्रेरक उसे ऊपरकी ओर उठनेमें सहायता दे सके। (२) झूलेमें चारों ओर लोहा मढ़वाया है अर्थात् उसे कवचसे रक्षित कर रक्खा है। साथही उसके इंजनको झूलेके भीतरकी ओर डुबा रक्खा है। उद्देश्य यह है कि श्रापनेल आदि छिटकनेवाले अस्त्रोंसे बचाव हो (३) धुआँ पैदाकरनेका ऐसा प्रबंध किया है कि जब चाहें इतना अधिक धुआँ फैला दें कि पवनपोत धरतीवालोंके लिए धूममेघसे छिप जाय और निशाना न लग सके।

सबसे बलहीन भाग गुबारा है जिसकी रक्षाकेलिए यह सारे उपाय हैं। परंतु सुनते हैं कि फरासीसियोंने ऐसे ऐसे उत्तम अस्त्र भी निकाले हैं जिनके सामने ऊपरके सब साधन निष्फल हो जाते हैं। इंगलैंडमें भी इस कार्य्यमें बहुत पीछे नहीं हैं। परन्तु इन अस्त्रोंकी रचनाका रहस्य अभी प्रकाशित नहीं हो सकता। अनुचित है। पवन पोतके नाशक पवनपोतोंका निर्म्माण भी सोचा जाता है। परंतु बहुमत फरासीसियोंका अनुयायी और पवनपोत निर्म्माणके विरुद्ध है। पवनपोतोंके काम विमानोंसे अधिक सुभीतेसे हो सकता है। पवनपोत किसी स्थानपर कुछ देरतक निरीक्षणके लिए रोका भी जा सकता है, विमान नहीं। यही कमी विमानोंमें है। परंतु पवनपोत अब तीन तीन सौ गज़ लम्बाईके बनते हैं, जिससे विमानकी

अपेक्षा कहीं आसानीसे गोलीका निशाना बन सकते हैं। ( Ill. Lond. News. 15.4.16. )

रा. गौ.

---

## समालोचना

### १—पदार्थोंके गुण और स्वभाव

ले० पं० प्रेमबल्लभजोशी, बी. एस-सी फूलसकैप अठ-पेजी १०४×४८ पृष्ठ। मूल्य ।≈)। गवर्न्मेंट स्कूल अजमेरमें लेखकसे प्राप्य।

विज्ञानकी आरंभिक बातें जाननेकेलिए यह पुस्तक बहुत उपयुक्त है। बीच बीचमें पूरे पृष्ठोंमें चित्रभी दिये हुए हैं, अन्तमें वैज्ञानिक यंत्रोंके एक क्रेताकी नोटिस भी है, परन्तु हमारी समझमें यंत्रोंके दाम अधिक रक्खे गये हैं। विज्ञानके यंत्रोंके बेचनेवाले ऐसी पुस्तकोंके-लिए सस्ते यंत्र देकर न केवल विज्ञानप्रचारमें सहायक होंगे वरन् अपने यंत्रोंकी अच्छी बिक्री कर सकते हैं। इस पुस्तकमें विषय-सूचीका अभाव है। आशा है, अगले संस्करणोंमें अवश्य इसकी पूर्त्ति हो जायगी।

* * *

### २—साइन्स दर्पण

ले० पं० भवानीदत्त पांडे, बी. ए., मुख्या ध्यापक मेफ़ील्ड पाठशाला शिमलासे प्राप्य। मूल्य ॥।) कौन अठ-पेजी, पृ० १४४+१२+४ सचित्र।

यह पुस्तक अंग्रेजीके बालफ़ोर स्टुअर्टके फिजिक्स प्रैमरका अनुबाद है। टैटिलपेजपर (बिल्फ़ोर स्कार्ट है) अशुद्ध है इसमेंभौतिक विज्ञानान्तर्गत पदार्थोंके गुण, धर्म्म और ताप, शब्द, प्रकाश विद्युदादि विषयोंके आरंभिक वर्णन हैं। नागरी प्रचारिणी सभाद्वारा संशोधित होनेपर भी भाषाकी त्रुटियां रह ही गयी हैं, परन्तु विषयकी दृष्टिसे अनुवाद अच्छा है। अनुवादमें-स्वतंत्रताका अभाव होता ही है। मूल पुस्तक विलायतके स्कूलोंके लिए है। यहांके स्कूलोंके-लिए कई योगोंमें ऐसे परिवर्त्तनहो सकते हैं जिनसे अधिक सुभीताहो और कम खर्चमें काम चलसके। हम अनुवादके विरोधी नहीं हैं। अनुवादोंमें देशकालानुसार टिप्पणियोंद्वारा ऐसा परिवर्त्तन संभव है कि पुस्तक अपने देश-के लिए अधिक उपयोगी हो जाय, सो, ऐसी टिप्पणियां भी नहीं दी गयी हैं। ऐसी दशामें इस अनुवादमें उस अनुवादकी अपेक्षा जो गुरुकुल कांगड़ीमें भौतिकके नामसे पढ़ाया जाता है कोई विशेषता, नहीं, पायी जाती। यह प्रसंगवश लिखना पड़ा। फिर भी पुस्तक अच्छी ही है। स्कूल लीविंग और मैट्रिकके विद्यार्थी इसे पढ़े तो उन्हें बड़ी सहायता मिल सकती है। मूल पुस्तक पहले इन श्रेणियोंमें यहां पढ़ायी भी जाती थी।

### ३—हर्बर्टस्पेंसरकी अज्ञेय मीमांसा

### ४—भारतवर्षके धुरंधर कवि—

यह दोनों पुस्तकें लाला कन्नोमल, एम्. ए. ने लिखी हैं और इंडियन प्रेस प्रयागने प्रकाशित की हैं। प्रत्येकका मूल्य ।) है। पहलीमें लेखकने बड़ी योग्यतासे स्पेंसरकी अज्ञेय मीमांसाका संक्षिप्त वर्णन किया है। मूल पुस्तक, जिसके आधारपर यह लेख है, बहुत भारी ग्रंथ है।

आजकल संसारमें इतने ग्रन्थ निकल रहे हैं कि उन सबका पढ़ना मनुष्यके अल्प जीवनमें असंभव है। इसी दृष्टिसे विलायतके अनेक प्रकाशकोंने बड़े बड़े ग्रंथोंका सार छोटी पुस्तकों-के रूपमें निकालना प्रारंभ किया है। इसका बहुत ही अच्छा नमूना Jacks' Peoples' Books Series है। समालोच्य पुस्तक भी इसी ढंगकी हैं। दो घंटेमें पाठक सहज ही कई सौ पृष्ठके बड़े आकारकी अंग्रेजी पुस्तकका-सो भी एक प्रसिद्ध दर्शन ग्रन्थका-सारांश इसकेद्वारा जान सकते हैं। भाषा अच्छी है, शैली सुबोध है। पृ० ३३ आकाश शब्दका प्रयोग Space-केलिए ठीक नहीं हुआ है। देश शब्दका

प्रयोग इसी अर्थमें हमारे प्राचीन साहित्यमें होता आया है और उसमें कोई दोष नहीं दीखता। हमारी समझमें आकाशका अंग्रेजी रूप Ether है, जिसके लिए पृष्ठ ५० पर हवा लिखकर लेखकने दूसरी भूलकी है। अपने यहां आकाशको ओतप्रोत व्यापक मानते हुए भी भौतिक पदार्थ ही माना है और विज्ञानमें ईथरको जिस प्रकार मानते हैं उससे आकाश और ईथर दोनोंका कम से कम समान वाची होना स्पष्ट है। इसी प्रकार पृष्ठ ५२ पर "ज्ञान" के स्थानमें "चेतना" शब्द अधिक उपयुक्त होता। हिन्दीमें वैज्ञानिक परिभाषा विचारणीय विषय है, इसीलिए इन बातोंका यहां उल्लेख हुआ है।

पुस्तकका विषय महत्त्वका है। प्रत्येक पढ़े लिखे सभ्य हिन्दी भाषा भाषीको पढ़ना चाहिए "विज्ञान" पत्रके निकलनेकी पूर्व सूचना पढ़कर कई होनहार ग्राहकोंने यह प्रश्न किया था कि "विज्ञान" नास्तिक पत्र तो न होगा। अनेक धार्म्मिक सज्जनोंकी समझमें विज्ञान धर्म्मका विरोधी है ईश्वरको नहीं मानता। विज्ञानके विषयमें इस मिथ्या कल्पनाका प्रचार गंभीर अध्ययनके अभावसे ही हुआ है। अज्ञेय मीमांसासे यह स्पष्ट हो जाता है कि विज्ञान धर्म्मका बड़ा भारी समर्थक, पोषक और सहायक है, बल्कि धर्मके रहस्योंको यथावत् समझनेके लिए विज्ञानका अध्ययन अनिवार्य्य और आवश्यक है। धर्म्म और विज्ञानका लक्ष्य एक सत्य ही है। ऐसी दशामें एकको दूसरेका विरोधी समझना अनभिज्ञताके सिवा कुछ नहीं। पाठकगण इस पुस्तकको अवश्य पढ़ें।

दूसरी पुस्तकका विषय नामसे ही स्पष्ट है। इसमें संस्कृत और हिन्दी दोनोंके प्रसिद्ध कवियोंका संक्षिप्त वर्णन है। हिन्दी साहित्य-सम्मेलनकी प्रथमा परीक्षावाले परीक्षार्थी इसे बाहरी ग्रन्थोंमें पढ़ें तो उन्हें अवश्य लाभ होगा। साधारण साहित्य प्रेमियोंको जिन्हें भारी ग्रंथोंकेलिए समय नहीं मिलता, कमसे कम यह छोटीसी पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये।

बालोपदेश—पं० रामनारायण मिश्र बी० ए० लिखित और सरस्वतीसदन केम्प इंदोरसे प्रकाशित। डबल क्रौन १६ पेजी, ७०×१० पृष्ठ मूल्य ।)

इस अमूल्य पुस्तिकामें बालकोंके चरित्र-सुधार वा चरित्र-रचनापर, छोटे छोटे २३ पाठ हैं, जिनमें उद्दिष्ट विषय प्रायः किसी दृष्टान्त वा कथासे प्रारंभ करके बड़ी ही रोचक और मनोहर रीतिपर समझाया गया है। हमारी समझमें ऐसी उत्तम लेखमाला बालकोंके लिए हिन्दीमें तो छपी ही नहीं थी। अन्य देशी भाषाओंमें भी संभवतः न होगी। इसके अनुवाद हो जाने चाहिएं। इस पुस्तकको प्रत्येक छात्रको पढ़ना चाहिए और इसकी प्रतियां लाखोंकी संख्यामें बिकनी चाहिए। शिक्षा-विज्ञानके प्रयोगका यह एक अमोल यंत्र है।

नये संस्करणकेलिए प्रकाशकसे हमारा अनुरोध है कि इसमें छापेकी भूलें बिल्कुल न रहें, छपाई और भी साफ़ हो, टैप ज़रा बड़े हों, काग़ज़भी कुछ और अच्छा लगाया जाय। इन परिवर्त्तनोंकेलिए दाम बढ़ाये जायँ तो हमारी समझमें हर्ज नहीं है।

रा. गौड़

### शुद्धिपत्र

प्रेसकी भूलसे सरत पंक्तियां (इस प्रकार ...अवश्य कठिन) जो भाग ३ संख्या ४ के १५० पृष्ठके दाऐं कालमके आरम्भमें कमपोज़ हुई हैं – बांए कालमके आरम्भमें होनी चाहिए थीं। पाठक यह अशुद्धि ठीक करलेंगे।

## शुद्धिपत्र

| पृष्ठ | कालम | पंक्ति | | अशुद्ध | | शुद्ध |
|---|---|---|---|---|---|---|
| १६८ | १ | २६ | ... | अतिनिद्रोग | ... | अतिनिद्ररोग |
| २०० | २ | १५ | ... | शरी में | ... | शरीर में |
| २०६ | २ | ३० | ... | मिलने | ... | मिलाने |
| २१२ | १ | ४ | ... | नापक यंव | ... | मापक यंत्र |
| ” | ” | ५-६ | ... | इस तरह पढ़िये ... | | |

'रीलपर लिपटे हुवे तारोंके छो २, जो वाटरीके दोनों तखनियोंसे जोड़ दिये जा सकते हैं।

| पृष्ठ | कालम | पंक्ति | | अशुद्ध | | शुद्ध |
|---|---|---|---|---|---|---|
| २१७ | १ | २५ | ... | hood | ... | blood |
| २४० | २ | २६ | ... | सरत | ... | सात |

## विज्ञापन छपाईके नियम।

१—कवरपर प्रति पृष्ठ प्रति मास ... ... १५)
प्रति पृष्ठ २ कालम ... ... १०)
१ „ ... ... ५)
आधा „ ... ... ३)
आधे कालमसे कमका ... ... २)

२—अस्वीकृत विज्ञापन लौटाया न जायगा। जो लोग लौटाना चाहें वह साथमें )॥ का टिकट भी भेज दें।

३—विज्ञापनकी छपाई सर्वथा पेशगी ली जायगी।

४—७) रुपयेसे कम दामका विज्ञापन छपानेवालोंको ।) प्रति कापी पत्रका मूल्य अधिक देना पड़ेगा।

५—विज्ञापन बँटाईकी दर क्रोड़पत्र देखकर बतायी जायगी।

६—अधिक कालकेलिए तथा अन्य बातें पत्र व्यवहार द्वारा तय करनी चाहिए।

निवेदक, मंत्री विज्ञान परिषत्, प्रयाग।

## विद्यार्थियोंको सुभीता

जो विद्यार्थी विज्ञानके छः ग्राहक बनाकर उनके चन्देके १८) भिजवा देंगे उनके नाम साल भर विज्ञान बिना मूल्य जायगा और उस वर्ष छपनेवाली किसी पुस्तकको बिना मूल्य पानेका उसे अधिकार होगा।

विज्ञानकी ग्राहक संख्या बढ़ाना वास्तवमें विद्याका प्रचार करना और हिन्दी भाषियोंका आनन्द बढ़ाना है। इसमें विद्यार्थियोंको यत्नवान होना दूने लाभका कारण है।

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—गोपालस्वरूप भार्गव एम्. एस-सी.,**
**मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग।**

Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P Sudarshanacharya, B. A., for the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

भाग ३ कन्या, १९७३ । September 1916. संख्या ६
Vol. III. No. 6

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

## विषय-सूची




**प्रकाशक**

**विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग**

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

# विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३। ५।

भाग ३ } कन्या, संवत् १९७३। सितंबर, सन् १९१६। { संख्या ६

## मंगलाचरण

"करी हमने बिन मोल चेराई,*
ना कहुँ बही नहीं कहुँ लेखा
ना कहुँ सही करायी।
निसि दिन करत हमारी सेवा
दै तन मन धन प्रान,
स्वारथ औ' परमारथ हम पै
वार दिये बिन आन,[१]
काहूतें न कहे अपने दुख
कोटिन जौन उठाये,
परहित हेत समरपे सारो
मम समेत जो पाये।
तातें भयी कनौड़ी[२] जित तित
हौं लौंड़ी सी धावौं
जऊ अजोग तऊ तिनकी
सन्तति-सेवा मन लावौं।
देस तिहारे जे विज्ञानी
भे रिखि सूरि[३] महान,
तिनकी भगति बिबस बहु जुग लौं
करति रही कल्यान।
बोस[४] राय[५] सम अजहुँ देस यहि
भक्त अनन्य जु होवैं,
क्यों भारत-भरनी देविन कौं
सुभ करनी बिन खोवैं।"
सेत-दीपतें[६] उपस्रुति[७] देवी
जन-समीप निसि आयी,
"उत रीझीं, हमतें क्यों रूठीं"
पूंछे पै, तिन गायी।

प्रयाग
भाद्र, सोमवती, ३०। ७३ } **रामदास गौड़**

* दासत्व।

१—आन = सीमा। २—कनौड़ी = उपकृता। ३—सूरि = विद्वान ४—बोस = विज्ञानाचार्य्य श्री डा० जगदीश चन्द्र वसु। ५—राय = विज्ञानाचार्य्य श्री डा० प्रफुल्ल चन्द्र राय। ६—श्वेतद्वीप = युरोप। ७—उपश्रुति देवी = सन्देह-निवारिणी रहस्योद्घाटनकारिणी देवी जिसके शब्द रातको सुन पड़ते हैं। अंग्रेज़ीमें इसे Revelation या Inspiration कह सकते हैं। विज्ञानकी सभी महत्वकी खोजोंमें आविष्कारकके हृदयमें देववाणी सी होती है। इसी देव-वाणीको विज्ञानकी गवेषणा शक्ति वा देवी मानकर उसके मुखसे यह पद कहलाये गये हैं। [ नक्तं निर्गत्य यत्किञ्चिच्छुभा शुभकरं वचः, श्रूयते तद्विदुर्धीरा देवप्रश्नमुपश्रुतिम् —हारावलिः ]।

## रक्तके काम।

[ले० डा० त्रिलोकीनाथ वर्म्मा बी.एस्-सी,एम-बी, बी. एस्. ]

गत संख्यामें "रक्तके काम" वाले लेखमें रोगवाले कीटाणुओं-का वर्णन हम कर चुके हैं। अब थोड़ी देरकेलिए मानलो कि रोग उत्पादक जन्तु शरीरमें किसी न किसी प्रकार पहुँच गये हैं। यह जन्तु वहाँ पहुँचकर क्या करते हैं? और शरीरमें उनकी चढ़ाईको रोकनेका क्या प्रबन्ध है।

( १ ) सृष्टिके दो बड़े नियम

सजीव सृष्टिमें दो बड़े नियम काम करते हुए दिखाई देते हैं। सबको इन नियमोंका पालन करना पड़ता है:—

१. आत्म-रक्षा ( self preservation )

२. स्वजाति-रक्षा ( race protection )

प्रत्येक जीवधारीकेलिए यह आवश्यक है कि वह अपनी रक्षाका प्रबन्ध करे। अपनी रक्षाका प्रबन्ध करनेके बाद उसको अपनी जाति-की रक्षाकेलिए यत्न करना चाहिये। जिसमें (चाहे मनुष्य जाति हो और चाहे बकटीरिया जाति) इन दोनों नियमोंका पालन नहीं हो सकता वह जाति शीघ्र ही नष्ट हो जाती है। आत्मरक्षाके मुख्य साधन भोजन करना, उसको भली प्रकार पचाना और मल त्यागना है; अपने शत्रुओंको मारनेका यत्न करना भी बहुत आवश्यक है।

स्वजातीय रक्षाका मुख्य साधन अपनी मृत्यु-के बाद अपना वंश चलानेकेलिए स्वस्थ और बलवान संतानको छोड़ जाना है।

बकटीरिया और अन्यरोग उत्पादक जन्तु भी इन नियमोंका पालन करते हैं। जो जो काम वह औरोंके शरीरके भीतर करते हैं वह भी इन नियमोंको पालनेकेलिए ही होते हैं।

Bacteriology कीटाणुशास्त्र ]

शरीरमें पहुँचकर पहले तो यह खूब खाते पीते हैं और ऐसी वस्तुएं बनाते हैं जिनसे शरीर-के कोषोंको जो उनके शत्रु हैं हानि पहुँचे। यह आत्मरक्षाकेलिए उन्हें करना पड़ता है। जब खा पीकर मोटे और बड़े होते हैं तो संतान उत्पन्न करते हैं जिससे जातिकी रक्षा होती है अर्थात् यदि वह मर जायँ या मार दिये जायँ तो उनका वंश नष्ट न होने पाये।

(२) बकटीरियामें सन्तानोत्पत्ति

इनमें स्त्री पुरुषका कोई भेद नहीं होता। जब कोई व्यक्ति खा पीकर बड़ा हो जाता है तो वह बीचमेंसे फटकर दो भागोंमें विभक्त हो जाता है। इस क्रियासे एकसे दो बन जाते हैं। धीरे धीरे इनमेंसे हर एक बड़ा होता है और उसके फटनेसे दो व्यक्ति बनजाते हैं। यह बढ़ने और फटनेका सिलसिला बड़ी शीघ्रताके साथ चलता है; एक ही जन्तुसे थोड़े ही समय-में अनेक जन्तु बन जाते हैं। जिस शीघ्रतासे बकटीरियाकी संख्या बढ़ती है, उसका अन्दाज़ा भी लगाना सामान्य मनुष्यकेलिए बहुत कठिन है। बहुतसे बकटीरिया आध घन्टेमें ही फटकर एकसे दो बन जाते हैं। यह समझिये कि वह आध घन्टेकी आयुमें संतान उत्पन्न करने योग्य हो जाते हैं और बहुतेरे एक घन्टेमें। यदि एक घन्टा ही समझें तो हिसाब लगानेसे मालूम होगा कि २४ घन्टेमें एक व्यक्तिसे एक करोड़ साठ लाख व्यक्ति बन जायँगे; आध घन्टेके हिसाब-से ३ पदमके लगभग (२८१४७४९७६७१०६५६०) बन जायंगे।

बकटीरिया तेज़ीसे तभी बढ़ सकते हैं जब उनको अच्छा भोजन मिले और जहाँ वह हों वहाँका ताप ऐसा हो कि वह न केवल सह सकते हों बल्कि अधिक पसंद करते हों। रोग उत्पन्न करनेवाले बकटीरियाकेलिए रक्तका ताप परिमाण जो ३७.८° शतांश ( centigrade ) होता है, सबसे अच्छा होता है।

शरीरमें पहुँचकर बकटीरिया केवल बढ़ते ही नहीं; बढ़ते समय वह विषैली वस्तुएँ भी बनाते हैं। यह विष दो प्रकारके होते हैं :—

( १ ) वह विष जो बकटीरियाके शरीरसे बाहर निकलकर रक्तमें घुल जाते हैं और इस द्रवके साथ सम्पूर्ण शरीरमें भ्रमण करते हैं, और फैल जाते हैं।

( २ ) वह विष जो उनके शरीरसे बाहर नहीं निकलते। जब तक बकटीरिया जीवित रहते हैं विष उनके शरीरमें ही रहता है; परन्तु जब बकटीरिया मरते हैं या मारे जाते हैं तो विष शरीरसे निकलकर रक्तमें मिल जाते हैं। जिस प्रकार सांपके शरीरमें रहते हुए भी विष उसको कोई हानि नहीं पहुँचाता उसी प्रकार यह बकटीरियाके विष उनके शरीरमें रहते हुए भी उन्हें हानि नहीं पहुँचाते।

बकटीरियाके बनाये हुए ज़हर उस स्थान-की सेलोंको जहां वह रहते हैं बहुत हानि पहुँचाते हैं। इतना ही नहीं, यह ज़हर लिम्फ* ( lymph ) और रक्तमें मिलकर शरीरके और स्थानोंमें भी जाते हैं और जहां जहाँ पहुँचते हैं अपना ज़हरीला प्रभाव डालते हैं।

( ३ ) शरीरकी सेलोंका इन जन्तुओंके साथ व्यवहार

शरीरके कोष इन जन्तुओंका स्वागत नहीं करते। शत्रुका स्वागत कौन करता है ? शरीर-के सेल भी बकटीरियाकी भांति नियमोंसे जकड़े हुए हैं। आत्मरक्षाके निमित्त वह ऐसे काम करते हैं जिनसे जन्तुओंका नाश हो। सेलों और इन जन्तुओंमें बड़ा भारी युद्ध होता है। यदि सेलें बलवान हैं और उनके पास विषों-को हरनेवाली वस्तुओंके पैदा करनेकेलिए पूरे सामान हैं तो वह अपने शत्रुओंपर विजयी होती हैं, शत्रु हारते हैं और शरीर रोग रहित हो जाता है। पर यदि शत्रु बलवान हैं या उनकी संख्या अधिक है और उनके ज़हर इतने तेज़ हैं कि शरीरकी सेलोंको उनका नाश करनेका अवसर ही नहीं मिलता, तो रोग बढ़ता जाता है और मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है।

(४) युद्ध

शरीर एक बड़े राज्यके समान है, जैसे राज्य-की रक्षाकेलिए सेना होती है, इस शरीर रूपी राज्यकी रक्षाकेलिए भी सेना है। इस सेनाके सिपाही श्वेत कण † ( leucocytes or white corpuscles ) हैं जो अधिकतर तो रक्त और लिम्फ * में रहते हैं, परन्तु थोड़े बहुत और

*लिम्फ ( lymph )—रक्त नलियोंमें होकर बहता है जो बहुत बारीक होती हैं। इतनी बारीक कि विना अणुवीक्षण यंत्रके दिखाई नहीं देतीं। ऐसी बारीक रक्तकी नलियोंको केशिकाएं ( capillaries ) कहते हैं। केशि-काएं जालरूपमें समस्त शरीरमें फैली हुई हैं। जब रक्त इन केशिकाओंमेंसे होकर भ्रमण करता है, तो उसका द्रव भाग इनकी दीवारोंमेंसे चू जाता है। इस चुए हुए द्रव-में पौष्टिक पदार्थ घुले रहते हैं। अंगोंकी सेलोंसे यह द्रव मिला रहता है। रक्त सेलोंसे मिला नहीं रहता। रक्त और सेलोंके बीचमें केशिकाओंकी दीवार होती है। शरीरकी सेलें इस द्रवसे पौष्टिक पदार्थ ग्रहण करती हैं। इस द्रवको लिम्फ ( lymph ) कहते हैं। लिम्फ फिर रक्तमें जा मिलता है।

† हमारे रक्तमें मुख्यतः दो प्रकारकी सेलें पायी जाती हैं—लाल और श्वेत या वर्णहीन erythrocytes and leucocytes। रक्तकी सेलोंको भी कण या corpuscles कहते हैं। लाल कण गोल होते हैं परन्तु दोनों ओरसे कुछ इस तरह पिचके रहते हैं जैसे रबड़की गेन्दको दोनों तरफ़-से अँगुलियोंसे दबाकर पिचकादें, उनमें मींगी Nucleus नहीं होती। प्रत्येक कणकी मोटाई $\frac{१}{१२०००}$ इंच और चौड़ाई अथवा लम्बाई $\frac{१}{३२००}$ इंच होती है। पुरुषके एक बूंदके साठवें भागमें पचास लाख और स्त्रियोंमें पैंतालीस लाखके लगभग होते हैं। अनुमान किया जाता कि १३ अरब लाल कणोंका भार एक माशेके लगभग होगा।

श्वेतकण वा रंगहीन कण जलकी नाईं विना रंगका होता है। इनमें मींगी होती हैं जो विविध रूपोंमें दिखाई

जगह भी पाये जाते हैं। यह न समझना चाहिये कि शरीरकी और सेल अपनी रक्षा अपने आप नहीं कर सकतीं। नहीं, नहीं, वह थोड़ी बहुत आत्मरक्षा उसी तरह कर सकती हैं जैसे किसी राज्यके पुरवासी समय पड़नेपर अपनी रक्षा कुछ कर ही सकते हैं। अच्छी तरह इसलिए नहीं कर सकतीं कि उन्होंने युद्ध शिक्षा नहीं पायी है।

इन शत्रुओंके पहुँचनेपर शरीरकी सेना उनके मुक़ाबलेमें आती है। बड़ा भारी संग्राम होता है, शरीरकी सेलें इनपर विजय पानेके-लिए अनेक प्रकारके यत्न करती हैं। प्रत्येक संग्राममें विजय छः बातोंपर अवलम्बित होती है।

१. सेनाकी संख्या

२. सैनिकोंको आवश्यकताके अनुसार पौष्टिक भोजन और दूसरी ज़रूरी चीज़ोंका मिलना।

३.योधाओंकी शारीरिक अवस्था (स्वास्थ्य) और उनकी और उनके माता पिताओंकी देश-भक्ति और स्वार्थत्याग।

४.सेनापतिकी चतुराई और वीरता

५.योधाओंकी शिक्षा और युद्धाभ्यास

६.योधाओंके अस्त्र शस्त्र।

शरीरमें जो युद्ध होता है उसमें विजय किसकी होगी शरीरकी सेलोंकी या रोगोत्पादक जन्तुओं की, यह भी इन्हीं छः बातोंपर निर्भर है—

(१) बहुतसे जन्तुओंकी अपेक्षा थोड़े जन्तुओंपर विजय पाना सहज है। जब जन्तु बहुत होते हैं और उनसे युद्ध करनेवाले श्वेत कण कम, तो श्वेत कणोंके हारनेकी सम्भावना रहती है। जिन मनुष्योंके शरीरमें किसी कारणसे रक्त कम हो जाता है वह रोगोंका मुक़ाबला भली प्रकार नहीं कर सकते।

(२) जो मनुष्य पुष्टिदायक भोजन खाता है और उसको अच्छी तरह पचा लेता है, उसके श्वेत कण और सेलें इन जन्तुओंका मुक़ाबला अच्छी तरह कर सकती हैं। यही कारण है कि निर्बल और क्षुधापीडित मनुष्योंको अधिक रोग सताते हैं और वह इन रोगोंका मुक़ाबला नहीं कर सकते और जलदी मर जाते हैं। भारतवासियोंके मुक़ाबले अंग्रेज़ोंका स्वास्थ्य अच्छे रहनेका यह एक मुख्य कारण है।

(३) कुछ जन्तु बड़े बलवान होते हैं। कमज़ोर जन्तुओंको श्वेत कण शीघ्र ही मार खाते हैं, यदि श्वेत कण कमज़ोर हों या किसी रोगके कारण कमज़ोर हो गये हों, तो वह शक्तिमान जन्तुओंका मुक़ाबला अच्छी तरह न कर सकेंगे। जिस मनुष्यको भोजन कम मिलता-है या जो मंद जठराग्निके कारण उसको भली प्रकार नहीं पचा सकता या जो शुद्ध बायुका सेवन नहीं करता या जिसको चिन्ता घुलाती रहती है; उसके श्वेत कण निर्बल होते हैं। निर्बल माता पिताओंकी संतानके सब अंग निर्बल होते हैं। ऐसे बालकोंको सदा रोग सताया करते हैं। जिन लोगोंका स्वास्थ्य पहलेसे अच्छा होता है, रोगोंसे शीघ्र छूट जाते हैं। यही कारण है कि मधुमेह (diabetes mellitus) रोगवालोंमें छोटीसी फुन्सी या घावके अच्छे होनेमें भी बड़ी देर लगती है।

(४) हमारे आत्मिक बलका हमारे स्वास्थ्यपर बड़ा भारी प्रभाव पड़ता है। जिस प्रकार डरपोक सेनापतिके सिपाही कोई

---

देती हैं। एक बूंदके साठवें भागमें यह सात हज़ारसे दस हज़ारतक होते हैं। पांच छः सौ लालकणों पीछे एक श्वेताणु होता है। श्वेताणुकी लम्बाई $\frac{१}{२५००}$ इंचतक होती है। स्थिर अवस्थामें श्वेतकण गोलाकार होते हैं परन्तु उनकी आकृति सदा एक सी नहीं रहती, अभी गोलाकार हैं तो क्षण भर पीछे वह तिकोने हो जाते हैं, पल भर पीछे उनमें अंगुलियां निकलने लगती हैं, ज़रा देरमें वह फिर ज्यों के त्यों हो जाते हैं।

बहादुरीका काम नहीं कर सकते और रणभूमिसे मुंह फेर कर भागा करते हैं, उसी प्रकार तुच्छ आत्मिक बल और अदृढ़ संकल्पवाले मनुष्यके श्वेताणु और सेल भी रोगके जन्तुओंका अच्छी तरह मुक़ाबला करनेमें असमर्थ रहती हैं। आत्मिक बलका असर हमारे श्वेत कणों और स्वास्थ्यपर कई तरहसे पड़ सकता है।

(५) युद्धका परिणाम योधाओंके अभ्यासपर भी निर्भर होता है। कई रोग ऐसे हैं कि यदि एक बार शरीर उनपर विजय पा ले तो वह रोग उस मनुष्यको फिर नहीं हो सकते, चाहे उस रोगके जन्तु उसके शरीरमें कितने ही क्यों न प्रवेश कर जायँ। चेचक, खसरा, टायफ़ोयड ( Typhoid ) आम तौरसे एक बार होकर दूसरी बार नहीं हुआ करते। और कारणोंके सिवा इसका एक छोटासा कारण यह भी है कि जब रोग पहली बार हुआ था शरीरकी सेलें इन विशेष जन्तुओंका मुक़ाबला करना जान गयी थीं। उनको पता लग गया था कि इनमें क्या त्रुटियां हैं, इसीलिए जब वह जन्तु फिर शरीरमें पहुँचते हैं, झट मार डाले जाते हैं। जिस सिपाहीने पहले कभी रणभूमि नहीं देखी, वैसी चतुराईसे नहीं लड़ सकता, जैसी कुशलतासे वह सिपाही लड़ेगा जिसने अनेक युद्ध देखे हैं और जय पायी है।

(६) जन्तु शरीरके भीतर विष बनाते हैं, यह विष रक्तमें मिल कर शरीरके सब भागोंमें पहुँचते हैं और सेलोंको हानि पहुँचाते हैं। इन विषोंको जन्तुओंके अस्त्र, शस्त्र, ढाल तलवार, गोला, बारूद, तोप समझना चाहिये। शरीरमें इन विषोंका नाश करनेवाली और जन्तुओंको मारनेवाली वस्तुएँ बनती हैं। यह वस्तुएँ शरीरकी सेलोंके ( कोषों ) अस्त्र शस्त्र हैं। यदि यह वस्तुएँ विषोंको हरनेमें समर्थ है और बकटीरियाको शीघ्र मार सकती हैं तो शरीरकी जय होगी, नहीं तो जन्तुओंकी जीतकी अधिक सम्भावना है।

जब हमारे शरीरमें कहीं फुन्सी फोड़ा या पाका बनता है तो वही स्थान रणभूमि बन जाता है। उस जगह सहस्रों बकटीरिया इकट्ठे रहते हैं। यह जन्तु उस स्थानकी सेलोंको मार कर और उनके भोजनको खा कर अपनी संख्याको अति शीघ्रतासे बढ़ाते हैं। यह देखते ही सेलोंकी रक्षाकेलिए रक्तके श्वेताणु उनपर चढ़ाई करते हैं। उस स्थानमें रक्त पहिलेकी अपेक्षा अधिक आता है और अधिक शीघ्रतासे चक्कर खाता है। इस अधिक रक्तके कारण वह भाग कुछ फूल जाता है और उसका रंग लाल सा हो जाता है और छूनेसे वह आस पासके स्थानोंसे अधिक गरम मालूम होने लगता है। इस युद्धमें सहस्रों बकटीरिया, शरीरकी सेलें और श्वेत कण मारे जाते हैं। राद या पीपका गाढ़ा भाग इन्हीं चीज़ोंसे बनता है। राद शरीरके किसी कामकी नहीं है और ज़हरीली होनेके कारण शरीरकेलिए बहुत हानिकारक है। अब शरीर इसको बाहर निकालना चाहता है। खालमें एक पीला सा स्थान दिखाई देने लगता है, यहाँकी त्वचा मुरदा हो गयी है। पीप इसे फोड़कर बाहर आ जाती है। पीपमें बहुतसे जीवित जन्तु या बकटीरिया भी होते हैं। पीपके दबावके कारण फोड़ेमें जो दर्द था वह अब नहीं रहता या कम हो जाता है। जब पीप गहरी होती है और डाक्टर समझता है कि खालतक ऊपर पहुँचनेमें अधिक समय लगेगा और शरीरको हानि पहुंचेगी, तो खालमें चीरा या नश्तर देकर उस पीपको बाहर निकालनेका यत्न करता है। पीप निकलनेपर सूजन कम होने लगती है। धीरे धीरे श्वेत कण सब जन्तुओंको मार डालते हैं और खा जाते हैं। रक्तमें घुली हुइ विषनाशक वस्तुएँ उनके ज़हरोंको हर लेती हैं। पीप

सहज सहज कम होती जाती है और फिर बन्द हो जाती है। घाव भरने लगता है, उस स्थानकी सेलें रक्तसे सामान लेकर नयी सेलें बनाती हैं। नयी सौत्रिक तंतु (Fibrous tissue) भी बनती हैं। शरीरका जो भाग मुरदा होकर निकल गया है वह अब फिर बन जाता है। त्वचाका छिद्र बंद हो जाता है और मनुष्य अपने पूर्व स्वास्थ्यको प्राप्त करता है। यह शरीरकी सेलोंकी बकटीरियापर विजय पानेकी कथा हुई।

यदि मनुष्यका स्वास्थ्य खराब है, अच्छा भोजन नहीं मिलता, तरह तरहकी चिन्ताएँ सताती हैं, आत्मिक बल कम है और यह समझता है कि मैं कभी अच्छा नहीं हो सकता तो फोड़ा अच्छे होनेके बदले बढ़ता जाता है। जन्तु आस पास फैलते हैं और यह कोशिश करते हैं कि सारे शरीरपर अधिकार जमालें। एक फोड़ेसे कई बनजाते हैं। बहुतेरे जन्तु रक्तकी नलियोंमें घुस जाते हैं और रक्तमें भ्रमण करते हुए शरीरके विविध भागोंमें पहुँचते हैं और जहां कहीं ठहर जाते हैं वहीं फोड़ा बनाते हैं। मनुष्य बहुत कमज़ोर होता जाता है और अन्तमें उसकी मृत्यु हो जाती है। यहां जन्तुओंने शरीरकी सेलोंपर विजय पायी है।

(Pneumonia) फुप्फुस-प्रदाह रोगमें रणभूमि फुप्फुस हैं। इन जन्तुओंके ज़हर शरीरके सब अंगोंमें पहुँचते हैं और उनको हानि पहुँचाते हैं। कुल शरीरकी सेलें इन जन्तुओंको मारनेका यत्न करती हैं। जब सेलें विजय पाती हैं, मनुष्य अच्छा होजाता है। जन्तुओंके विजयी होनेपर रोग बढ़ता है और मृत्यु हो जाती है।

आमातिसारमें रणभूमि वृहदंत्र अर्थात् बड़ी आंतकी दीवारें हैं, टैफ़ोयड और हैज़ेमें क्षुद्रांत्र वा छोटी आंतकी दीवारें। जब आँखें दुखती हैं तो रणभूमि आंखकी झिल्ली है जो लाल हो जाती है।

(६) युद्धका परिणाम

सब रोगोंका परिणाम एक सा नहीं होता। कभी शरीरकी सेलें जीतती हैं और कभी रोगके जन्तु। जब शरीर विजयी होता है, मनुष्य धीरे धीरे अपने पहले स्वास्थ्यको पहुँचता है। पर जब यह जन्तु जीतते हैं तो शरीर निर्बल होता जाता है, रोग दिनपर दिन बढ़ता है और अन्तमें मृत्यु होजाती है।

इसमें सन्देह नहीं कि रक्त हमारे शरीरमें एक अमूल्य वस्तु है। इसके श्वेत कण विषनाशक वस्तुओंकी सहायतासे हमारे शरीरकी भली भांति रक्षा करते हैं।

ऊपरके वर्णनसे पाठक रोगकी उत्पत्तिकी क्रिया समझ गये होंगे। अब आगे हम उन रोगोंका वर्णन करेंगे जो बकटीरियासे उत्पन्न होते हैं।

---

## फूल❀

[ ले० नन्दकुमार तिवारी, बी. एस्-सी. ]

पहले जो फूलोंका उल्लेख किया गया है, उसमें यह बतलाया गया है कि एक आदर्श फूल चार भागोंमें विभाजित किया जा सकता है ( १ ) कंड ( २ ) किरीट ( ३ ) पुमङ्ग और ( ४ ) स्त्री अङ्ग। अब यहांपर पाठकोंको यह बतला देना परमावश्यक है कि इनमेंसे पहले दो भागोंको अनावश्यक अङ्ग कहते हैं। इससे केवल यही तात्पर्य है कि फूलका जो मुख्य काम बीज पैदा करना है उसकेलिए इनका होना अत्यावश्यक नहीं है। जैसा पहले लिखा जा चुका है इनका काम केवल फूलकी स्थितिका ज्ञान करा देना और उसके अन्य

❀विज्ञान भाग३ संख्या२ पृ०६८ लेखसे सम्मिलित (सं०)

Botany वनस्पति शास्त्र ]

कोमल अङ्गोंको कलीकी दशामें बचानेका है। इनके न होनेसे यह सम्भव है कि बीज बननेमें कुछ देरी लग जाय, पर ऐसा नहीं हो सकता कि केवल इन्हींके न होनेसे बीज न बने। इसका प्रमाण यह है कि किसी किसी प्रकारके फूलमें इन दो अङ्गोंमेंसे एक या कभी कभी दोनों ही नहीं पाये जाते, पर उनमें बीज बराबर पैदा होते हैं। ऐसे फूल काली मिर्च और पानके पेड़ोंमें होते हैं। स्वयं इस बातका अनुभव यदि करना हो तो किसी फूलके इन अङ्गोंको इस होशियारी-से तोड़ लीजिये कि अन्य अङ्गोंको किसी भांति-की हानि न पहुँचे। कुछ दिन बाद इन्हीं फूलों-से बीज बनते हुए दिखाई देंगे। ऐसे फूलोंको जिनके दोनों अंग लुप्त होगये हों नग्न या लुप्तोभय वर्त्तुल कहते हैं, जैसे पान, कालीमिर्च आदि। जिन फूलोंमें इन अङ्गोंमेंसे केवल एक ही वर्त्तमान हो उनको एकांशुक या एकवर्तल कहते हैं, जैसे एरन्ड, प्याज़, सतमूली। जिन फूलोंमें यह दोनों वर्त्तमान रहते हैं उनको द्विवर्तुल कहते हैं।

शेष जो दो अङ्ग हैं उनको फूलोंके आवश्यक अङ्ग कहते हैं, क्योंकि बिना उनके फूलसे बीज बनना असम्भव है। यदि यह दोनों अङ्ग एक ही फूलमें साथ साथ पाये जाते हों तो ऐसे फूलको उभय लिङ्गिक कहते हैं, पर बहुधा ऐसा देखा गया है कि इनमेंसे एक ही (या कभी उसका भी अभाव) वर्तमान रहता है। यदि इनमेंसे एक अङ्ग फूलमें पाया जाय तो ऐसे फूलको एक-लिङ्गिक कहेंगे और यदि एक भी वर्तमान न हो तो उन फूलोंको नपुंसक के नामसे पुकारते हैं।

### नर और मादा फूल

एकलिङ्गिक फूल दो भांतिके होते हैं। यदि ऐसे फूलोंमें आवश्यकीय अङ्गोंमेंसे केवल पुमङ्ग ही वर्तमान हो, तो उसको नर फूल कहेंगे, और यदि केवल स्त्री अङ्ग ही पाया जाय तो उसको मादा फूल कहकर पुकारेंगे। इस श्रेणी-के फूलोंके उदाहरण बहुतसे पेड़ों, पौधोंमें पाये जाते हैं, जिनके नाम आगे चलकर बतलाये जायँगे। नपुंसक फूल अकेले बहुत ही कम पाये जाते हैं। ऐसा कहना चाहिये कि वह कभी नहीं मिलते, क्योंकि यह बात सहज ही समझमें आजायगी कि इन फूलोंसे बीज बननेकी कुछ भी आशा नहीं हो सकती। यह केवल दिखाने-केलिए होते हैं और दूसरे फूलोंके साथ पाये जाते हैं। ऐसे फूलोंके उदाहरण और उनसे जो लाभ हो सकता है आगे चलकर लिखा जायगा।

### सम्पूर्ण, असम्पूर्ण, पूर्ण और अपूर्ण फूल

किसी आदर्श फूलको जिसमें चारों अङ्ग उपस्थित हों सम्पूर्ण फूल कहते हैं। उदाहरण—गुलाबास, कपास, गुलाब, मटर आदि। परन्तु, जैसा पहले ही बतला दिया गया है कई कारणों-से इनमें अन्तर आजाता है और उन चारों अङ्गोंमेंसे एक, दो, या तीन तक भी लुप्त हो जाते हैं। ऐसे फूलोंको असम्पूर्ण फूल कहते हैं। उदाहरण—पपीता, कालीमिर्च, पान, एरएड आदि। असम्पूर्ण फूलोंमें यदि केवल अनावश्यक अङ्गोंकी ही हानि हुई हो और आवश्यक अङ्ग दोनों वर्तमान हों तो ऐसे फूलोंको पूर्ण फूल कहते हैं। पर यदि अनावश्यक अङ्गोंके रहते हुए भी आवश्यक अङ्गोंमेंसे एक या दोनों वर्तमान न हों तो ऐसे फूल अपूर्ण फूलोंके नाम-से पुकारे जाते हैं। भिंडी, मटर, पूर्ण फूलवाले पेड़ोंके उदाहरण हैं, और लाल कद्दू, एरएड, पपीता आदि अपूर्ण फूल पैदा करनेवाले पेड़ों-के उदाहरण हैं। पहले पहल सम्पूर्ण और पूर्ण फूलोंके भेद समझनेमें कुछ गड़बड़ होनेकी सम्भावना हो सकती है, पर थोड़ा सा ध्यान देनेसे यह कठिनाई दूर हो जायगी। सम्पूर्ण फूल केवल वही कहा जा सकता है, जिसमें चारों अङ्ग अवश्य वर्तमान हों। पर पूर्ण फूल वह है जिसमें कमसे कम आवश्यक अङ्ग दोनों

वर्तमान हों, अनावश्यक अङ्गोंमेंसे चाहे एक या दोनों लुप्त हो गये हों। विचार करनेसे जान पड़ेगा कि असम्पूर्ण फूल पूर्ण भी हो सकता है और अपूर्ण भी।

ऊपर जो कुछ कहा गया है उससे मालूम हो गया होगा कि एक आदर्श फूलमें चार अङ्ग हुआ करते हैं, दो आवश्यक और दो अनावश्यक। यह भी बतलाया गया है कि ऐसा फूल उभय लिङ्गिक होता है अर्थात् नर भी और मादा भी, मुझको डर मालूम होता है कि बहुत से पाठकोंके हृदयमें यह बात सन्देह पैदा कर देगी। बड़ा भारी हंगामा मचा देगी, "वही व्यक्ति नर और मादा दोनों। यह तो विश्वास योग्य बात नहीं है। हमारे अनुभवमें तो कभी ऐसा उदाहरण नहीं आया, क्या लेखक महाशयने कुछ भूल तो नहीं की या वह एक बड़ा भंगका गोला जमाकर तो कहीं लिखने नहीं बैठे थे?" ऐसी अनेक तर्कनाएं अनेक सज्जनोंके चित्तमें उठेंगीं, पर मैं ऐसे सज्जनोंको यह लिखकर विश्वास दिलाना चाहता हूं कि लेखकने भूल नहीं की और न वह भंग खाकर इस निबन्धको लिखने बैठा है। यह एक वास्तविक बात है, जिसको न केवल उसने अपनी आंखों देखा है, वरन् बड़े बड़े वैज्ञानिकोंने प्रत्यक्ष परीक्षासे इसका समर्थन किया है। रही आश्चर्य की बात, इसको तो प्रकृति जाने। तो भी थोड़ा विचार करनेके बाद यह सन्देह दूर हो जायगा, तनिक सोचिये तो सही कि क्या हम लोगोंमें स्त्री पुरुष एक साथ ही नहीं रहा करते? बस यही हाल फूलोंका भी है। फूलोंको भी एक प्रकारका मकान समझ लेना चाहिये। जिसमें स्त्रियां अन्दर और पुरुष उनके चारों ओर, मानों उनकी रखवाली करनेकेलिए रक्खे गये हैं*। अब आप बतलाइये कि इसमें आश्चर्यकी कौन सी बात है? यह तो एक साधारण नियम है। इसके सम्बन्धमें यहाँ एक और बात लिख देना अनावश्यक न होगा, कि जानवरोंमें भी ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं है जिनमें रजकण और वीर्यकण एक ही व्यक्तिमें संचित रहते हों। ऐसे तो कई एक जीव हैं पर उनमें एक ऐसा है, जिसको एक छोटा सा बच्चा भी पहचानता है, इसको हम लोग केंचुवा कहकर पुकारते हैं और हर एक केंचुवेके अन्दर रजकण और वीर्यकण पृथक पृथक थैलियोंमें एकत्रित रहते हैं।

ऊपर जो अपूर्ण फूलोंका वर्णन किया गया है उसमें केवल इतनाही कहा गया है कि पुरुष-अङ्ग और स्त्री-अङ्ग पृथक पृथक फूलोंमें होते हैं। इससे यह न समझ लेना चाहिये कि ऐसे फूल भिन्न भिन्न पेड़ोंपर भी होते हैं। वास्तवमें भिन्न लिङ्गवाले फूल एक ही पेड़पर और पृथक पृथक पेड़ोंपर भी पाये जाते हैं। जैसा पहले लिख दिया गया है, फूलोंको एक प्रकारका मकान समझना चाहिये, जिसमें स्त्री और पुरुष एक साथ रह सकते हैं। या ऐसा भी हो सकता है कि स्त्री और पुरुष एक ही मकानमें रहना न पसन्द करके अलग मकानोंमें रहें, पर वह मकान एक ही मुहल्लेमें हों। यही हाल उन फूलोंका है जिनके लिङ्ग तो भिन्न भिन्न हों, पर वह एकही वृक्षपर पैदा हों। ऐसे वृक्षोंको गार्हिक वृक्ष कहते हैं जैसे, बर्गद*, नारियल,

* इस बातको समझनेकेलिए फूलकी रचनापर ध्यान रखना चाहिये। इनमें पुरुष अङ्गसे घिरा हुआ स्त्री अङ्ग बीचमें होता है।

*बहुत लोग समझते हैं कि बर्गद, पीपल, गूलर आदि वृक्षोंमें साधारणतः फूल ही नहीं लगते। कहते हैं कि इन वृक्षोंमें किसी विशेष अमावस्याकी रात्रिको ठीक १२ बजे एक फूल लगता है, जिसे देवता तोड़ ले जाते हैं। मनुष्य उसको पा जाय तो बड़ा धनी हो जाय। इसी भ्रमके अनुसार लोग कहते हैं "आप तो गूलरके फूल हो गये"। ऐसी कल्पना अविज्ञताके कारण हैं। वास्तवमें जिनको लोग इन वृक्षोंका फल कहकर पुकारते हैं वही फूल हैं, जो पकनेपर फल हो जाते हैं। समयानुसार इनका पूरा हाल लिखा जायगा।

आदि। दूसरी भांतिके पेड़ोंको द्विगार्हिक कहते हैं। इनमें एक वृक्ष एक ही लिङ्गवाले फूलोंको पैदा करता है—नर या मादा। ऐसा समझ लेना चाहिये कि स्त्री और पुरुष एक ही मुहल्लेमें रहना न पसन्द कर अलग गाँवोंमें रहने लगे हैं। इस दशामें एक वृक्षको मादा और दूसरेको नर कह-कर पुकारना अनुचित न होगा जैसे पपीता, खजूर, कालीमिर्च, तरबूज़, जायफल आदि। इनके अतिरिक्त एक और भांतिके अपूर्ण फूलोंके सम्बन्धमें पहले कुछ कहा जा चुका है, अर्थात् नपुंसक फूल। इन फूलोंमें कोई भी आवश्यकीय अङ्ग नहीं रहता। यह लिङ्ग रहित होते हैं जैसा प्रत्यक्ष है। इस श्रेणीके फूलोंसे बीज प्राप्त होना असम्भव है। वास्तवमें इनका धर्म बीज पैदा करनेका है ही नहीं। इनका मुख्य धर्म उन दूसरे फूलोंकी स्थितिका ज्ञान करा देना है, जिनके साथ वे पाये जाते हैं। दूसरी भांतिके फूल और फूलोंको अपेक्षा बहुत छोटे होते हैं और उनमें अनावश्यक अङ्ग यदि होते भी हैं तो इस हीन दशामें कि उनसे फूलकी स्थितिका ज्ञान नहीं हो सकता। इसी कारण यह नपुंसक फूल, जो काफ़ी बड़े होते हैं, ऐसे फूलोंके साथ लगा दिये

चि॰१

गये हैं। अपने चमकीले रंग और कभी कभी सुगंधिसे यह उन फूलोंका ज्ञान करा देते हैं और साधारण फूलोंके किरीटका पूरा पूरा काम देते हैं। यह फूल गेंदा, सूर्यमुखी आदि फूलोंको चारों ओर घेरे रहते हैं।

फूलोंकी इतनी कथा सुनाकर अब हम पाठकोंका ध्यान फिर बीज बननेकी रीतिपर आकर्षित करेंगे। इससे यह न समझना चाहिये कि फूलोंके बारेमें जो कुछ कहना था वह कह डाला गया, अभी बहुत कुछ कहना बाक़ी है, जो फिर कभी निवेदन किया जायगा। अभी इतना ही पर्य्याप्त होगा। अभी प्रजननपर विचार करना है। इस सम्बन्धमें पहले कह दिया गया है कि प्राणी हो या वनस्पति, सन्तानोत्पत्तिकेलिए रजकण और वीर्यकणका समागम अत्यावश्यक है। बहुधा, बल्कि सर्वदा, यही अनुभवमें आया है कि वीर्यकण ही जाकर रजकणोंसे मिलते हैं, और रजकण बहुधा वहीं इकट्ठे रहते हैं जहां उत्पन्न हुए थे। वनस्पतियोंमें वीर्यकणोंके रजकणोंके पास जानेको सेचन कहते हैं। इसके सम्बन्धमें बहुत सी रोचक और आश्चर्यजनक बातें आगे चलकर कही जायँगी।
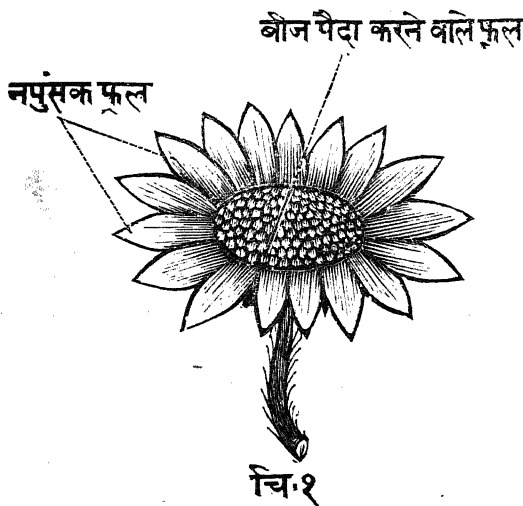
उभयलिङ्गिक फूलोंके सम्बन्धमें सेचन सहज ही समझमें आजायगा, क्योंकि इनमें रजकण और वीर्यकण पास ही पास रहते हैं और समागममें अधिक कठिनाई नहीं पड़ती। पर इससे यह न समझ लेना चाहिये कि ऐसे फूलोंमें हमेशा उसी फूलके वीर्यकणोंसे उसी फूलके रजकणोंका समागम होता है। सच पूछिये तो प्रकृति इस बातको रोकनेकेलिए बड़े यत्न करती है, जिनको देखकर हमको केवल चकित रह जाना पड़ता है और हमारे अद्वितीय इञ्जीनियरोंको भी सर झुकाना पड़ता है। यह सेचन क्रिया वृक्ष संसारमें एक बड़ी ही अद्भुत और अनुपम लीला है। जिन शक्तियोंद्वारा वीर्यकण रजकणोंके पास पहुंचाये जाते हैं और

जिस भांति पहुंचाये जाते हैं—जानने योग्य है।

गार्हिक वृक्षोंमें उभयलिङ्गिककी अपेक्षा कुछ कठिनाई ते। अवश्य समझ पड़ेगी, पर यद्यपि लिङ्ग अलग अलग फूलोंमें होते हैं, नर और मादा फूल एक ही वृक्षपर लगते हैं। इस कारण सेचन न होनेकी सम्भावना बहुत ही कम है, पर द्विगार्हिक वृक्षोंका कुछ और ही हाल है। इनमें न केवल फूल एक लिङ्गिक होते हैं, पर वह अलग वृक्षोंपर लगते हैं। उनमें कठिनाई साधारण वृक्षोंसे अधिक हो सकती है। परन्तु इस कठिनाईका सामना उसी दशामें करना पड़ता है, जब स्त्री और पुरुष वृक्ष पास पास न हों, यदि ऐसे पेड़ एक दूसरेसे अधिक दूरीपर हुए ते। सेचनमें बड़ी कठिनाई होती है और किसी किसी दशामें सेचन होता ही नहीं। परिणाम यह होता है कि फल नहीं लगते। द्विगार्हिक पेड़ोंमें एक बुराईकी बात और है कि उनमें केवल मादा ही वृक्ष फल पैदा कर सकते हैं। नर वृक्षोंसे यह आशा करना व्यर्थ है। मुझे इसका एक उदाहरण स्मरण आता है। एक महाशयके यहां एक पपीतेका वृक्ष बहुत दिनोंसे लगा हुआ था पर उसने फल न पैदा करके सर्वदा निराश किया। जाँच करनेसे इसका कारण यह मिला कि वह नर वृक्ष था। क्योंकि पपीतेके वृक्ष द्विगार्हिक हुआ करते हैं। इस कारण नर पेड़ शोभाकेलिए चाहे भले ही लगा लिये जायँ, पर उनसे फल प्राप्तिकी इच्छा करना अंधेके आगे रोना है। बहुतसे गार्हिक वृक्षोंमें भी जिनमें फल न लगते हों खोज करनेसे कदाचित यही पता लगेगा कि किसी न किसी कारणसे उनके फूलोंका सेचन नहीं होता।

# गणितका प्राचीन इतिहास

[ले० जी० के० गर्दे, एम० ए०]

किसी विषयके अध्ययन करनेमें उस विषयके इतिहासका ज्ञान अत्यन्त आवश्यक होता है। कभी कभी लोगोंने यह इच्छा प्रगट की है कि विद्यार्थिगण प्रत्येक विषयके साथ साथ ही उस विषयका इतिहास भी सीखें। यद्यपि विश्वविद्यालयोंने इस इच्छाके अनुसार कार्य करना उचित नहीं समझा, तथापि इतिहासका महत्व कोई भी अस्वीकार नहीं कर सकता। विद्यार्थियोंको स्वयं इतिहास सबन्धिनी पुस्तकें पढ़नेकेलिए सर्वत्र ही उत्तेजित किया जाता है, और विचारशील अध्यापक अपना विषय पढ़ाते समय यथावकाश ऐतिहासिक घटनाएं वर्णन किया करते हैं, जिससे विद्यार्थियोंकी रुचि बढ़ती और उनकी ज्ञान पिपासा प्रबल होती है।

प्राचीन कालमें यूनानियों और हिन्दुओंने गणितमें जो उन्नति की थी केवल उसीका वर्णन अतिसंक्षेपमें नीचे किया जायगा। सबसे पहले इतिहास लिख रखनेकी रीति यूनानियोंमें ही थी। अन्य देशोंके प्राचीन इतिहासके मिलानेमें कल्पना शक्तिका सहारा लेना चाहे अनिवार्य हो, परन्तु यूनानके प्राचीन इतिहासकारोंकी कृपासे उस देशके संबंधमें वह बात नहीं कही जा सकती। ऐसी अवस्थामें यह जानकर कोई अचंभा न होगा कि यूनानमें विक्रमसे ६४ वर्ष पूर्व गणितका एक इतिहास लिखा गया था। उस ग्रन्थके रचयिताका नाम यूडिमस (Eudemus) था। यह समूचा ग्रन्थ ते। अब उपलब्ध नहीं किन्तु यूक्लिडके ग्रन्थोंके टीकाकारोंने उस ग्रन्थसे जो अवतरण दिए हैं उनसे प्राचीन यूनानी गणितकी अवस्थाका बहुत कुछ परिचय मिल जाता है।

Mathematics गणित ]

यूनानी ग्रन्थकार स्वीकार करते हैं कि ज्यामितिका ( Geometry ) ज्ञान आरंभमें उन्हें मिश्र देशसे प्राप्त हुआ और संख्या विषयक ( पाटी गणित ) ज्ञान एशिया माइनरसे विशेषकर बाबिलन वालोंसे। परन्तु उनका यह ऋण बहुत ही थोड़ा था, क्योंकि मिश्र वालोंकी ज्यामिति उस समय यदि थी तो नाम मात्रकी। उसमें प्रायः ऐसी बातें एकत्रित थीं जो खेतोंके नापनेमें उपयोगी हों।

ज्यामितिकी उत्पत्ति विषयक एक यूनानी जनश्रुति प्रसिद्ध है, जिसका उल्लेख हेरोडोटसने यों किया है। मिश्र देशके राजा सिसास्ट्रिसने अपने राजकी भूमि सारी प्रजामें इस तरह बांट दी थी कि सब मनुष्योंको बराबर बराबर चौकोने हिस्से मिले थे। हरएकपर ठीक उतना ही कर निर्दिष्ट था। यह प्रतिवर्ष वसूल किया जाता था। परन्तु जिन जिनके हिस्सोंमेंसे नील नदी कुछ अंश काट ले जाती थी, उन्हें तुरन्त इस बातकी सूचना दे देनी पड़ती थी। तब वहां राजकार्यकारी लोग जाकर शेष अंश नाप लाते थे, जिससे पूर्व निर्दिष्ट करमें कितनी छूट देना आवश्यक है निकाल सकते थे। ज्यामितिकी उत्पत्ति इसी भांति हुई और यही कुछ काल पश्चात् यूनान पहुंची।

विद्वानोंका प्रायः यह मत है कि मिश्रवालोंका पाटी गणित तथा ज्यामिति विषयक ज्ञान प्रायः उतना ही था जितना उस प्राचीन ग्रन्थमें पाया जाता है, जो आजकल ब्रिटिश म्यूज़ियममें है और जो पहिली बार सम्वत् १९३३ में पढ़ा गया था।

यह ग्रन्थ आमीज़ (Ahmes) नामक किसी मिश्र देशी पुरोहितने विक्रमसे कमसे कम १६५० वर्ष पूर्व लिखा था—सो भी कदाचित् किसी और भी प्राचीन ग्रन्थकी प्रतिलिपि हो। उस ग्रन्थके नामका अर्थ है "गूढ़ बातोंका ज्ञान प्राप्त करनेकी नियमावली" उस। ग्रन्थसे जाना जाता है कि मिश्र निवासी उस समय त्रैराशिक जानते थे और कुछ आकृतियोंका क्षेत्रफल भी निकाल सकते थे। केवल पाटी गणितको भिन्न संख्याएं उन्हें चक्करमें डाल देती थीं। अनेक भिन्नोंको वे साधारण हर न दे सकते थे। त्रिभुजका फल भी शुद्धता पूर्वक नहीं निकाल सकते थे। समद्विबाहु त्रिभुजका फल, 'बाहु'-को आधारसे गुणकर आधेके बराबर मानते थे। वस्तुतः लंबको आधारसे गुणकर आधा करना चाहिये। वृत्तका फल निकालनेका नियम था कि "व्यासमेंसे उसका नवम अंश घटाकर जो शेष रहे उसका वर्ग करना"। इसके अनुसार π (पाइ) का मूल्य ३·१६०४ होता है परन्तु वास्तवमें वह ३·१४१६ होना चाहिये। यहूदियोंने जो बाइबलमें वृत्त परिधिको व्यासका तिगुना माना है उससे तो यह अधिक शुद्ध है।

उपर्युक्त ग्रन्थमें बीजगणितका अंकुर भी दृष्टि पड़ता है। उसमें एक प्रश्न यह है— "वह राशि निकालो जिसमें उसका सातवां भाग जोड़नेसे योगफल १९ हो। इसकी रीति यों दी हैः—

$$\text{राशि} + \frac{१}{७}\,\text{राशि} = १९$$

$$\therefore \frac{८}{७}\,\text{राशि} = १९$$

$$\therefore \frac{१}{७}\,\text{राशि} = २\frac{१}{४} + \frac{१}{८}$$

$$\therefore \text{राशि} = १६\frac{१}{२} + \frac{१}{८}$$

अतएव यह स्पष्ट है कि सुप्रसिद्ध पर्वताकार सूचियोंके निर्माता मिस्र निवासियोंने ज्यामिति, पाटी, तथा बीज-गणितकी नींव पहिले ही डाल रक्खी थी। किन्तु आश्चर्य यह है कि इन विषयोंकी दशा सैकड़ों वर्षतक अत्यन्त हीन बनी रही यद्यपि विक्रमसे लगभग ४००० वर्ष पूर्वसे अर्थात् सूचियोंके निर्माण

कालसे मिश्र देशी पुरोहित उनका अध्ययन करते आए थे। विक्रमसे लगभग ६०० वर्ष पूर्व यूनानियोंने उन विषयोंको अपनाया, तबतक ये विषय अत्यन्त प्रारम्भिक ( primary ) अवस्थामें थे।

अब मुझे यह बतलाना है, कि यूनानियोंने इस नाम मात्रकी ज्यामितिको पाकर उसे किस तरह समुन्नत किया और उसे वह शास्त्रीय रूप दिया जो आज सारे संसारको चकित कर देता है। यूनानियोंका विद्याभंडार संपूर्णतः उनका निजी न सही, कुछ मौलिक विचारोंकेलिए वे औरोंके ऋणी भले ही हों, किन्तु इतनेसे ही यूनानियोंके गौरवमें तनिक भी कमी नहीं आ सकती। प्लेटोने सच ही कहा था कि "हम यूनानी जो कुछ अपने हाथ लेते हैं उसे समुन्नत और परिपक्व कर छोड़ते हैं।"

गणितके विषयमें प्लेटोकी यह उक्ति अक्षरशः सत्य है, जैसा कि आगे चलकर स्पष्ट हो जायगा। मुझे यहां सब यूनानी गणितज्ञोंका चरित लिखनेकेलिए स्थान नहीं। अतः ऐतिहासिक क्रमानुसार केवल बड़ों बड़ोंका उल्लेख मात्र करके संतोष करूंगा।

१. थेलीज़ (Thales) विक्रमसे पूर्व ५८४ से ४६० तक

यूनानके एक धनाढ्य व्यापारीका नाम थेलीज़ था। उसे अपने व्यवसायके कारण अनेक देशोंमें भ्रमण करना पड़ता था। जब वह मिश्र देशको गया, तभी उसने ज्यामिति सीखी। और संभव है कि खालडिया अथवा एशिआ मायनरमें उसने ज्योतिष भी सीखी। इसमें संदेह नहीं कि वह खालडिआवालोंके "ग्रहण क्रम" से परिचित था, क्योंकि केवल उसीकी सहायतासे वह उस सूर्य ग्रहणका होना पहिलेसे ही बता सका होगा जो विक्रमसे पूर्व ५२६में पड़ा था। इस भविष्यद्वाणीके कारण वह बहुत प्रसिद्ध हो गया। अपनी वृद्धावस्थामें उसने एथेन्समें एक पाठशाला स्थापितकी और वहां ज्यामिति पढ़ाने लगा। कहते हैं कि उसीने रेखाओं और त्रिभुजोंकी ज्यामितिकी नींव डाली। त्रिभुजोंके विषयमें अनेक नए सिद्धान्त उसने स्थापित किये। उनमेंसे नीचे लिखे हुए विशेष उपयुक्त सिद्धान्तोंका आविष्कर्ता वही समझा जाता है।

(१) "समद्विबाहु त्रिभुजके आधारपरके कोण बराबर होते हैं" इसे उसने त्रिभुजको मध्यगत रेखापर मोड़कर सिद्ध किया।

(२) अनुरूप ( congruent ) त्रिभुजोंके सिद्धान्त जो युक्लिडने पहले अध्यायके ४,८ और २६ में ग्रथित किये हैं।

(३) अर्धवृत्तके भीतरका कोण समकोण होता है (यूक्लिड ३-३१)। यह आविष्कार उसका सर्व श्रेष्ठ था। कहते हैं कि इस सिद्धान्तके आविष्कारकी खुशीमें उसने देवताको बलीवर्द बली अर्पण किया। इस सिद्धान्तकी जो उसने उपपत्ति दी है उससे स्पष्ट है कि त्रिभुजके तीनों कोणोंका योग फल दो समकोणोंके बराबर होता है। इस सिद्धान्तसे भी वह परिचित था।

२ पैथागोरस ( विं० पू० ५२४-४४४ )

थेलीज़ ६० वर्षसे भी अधिक जिया और उसकी शिक्षाका प्रचार एथेन्सके विद्यार्थियोंमें खूब हुआ। उसने जो पाठशाला स्थापित की थी उसमें सुविख्यात यूनानी दार्शनिक (philosopher पैथागोरसने विद्याभ्यास किया था। जब थेलीज़ने शरीर त्यागा उस समय पैथागोरस युवा ही था। थेलीज़की प्रेरणासे वह मिस्र देशको गया। देशाटनके अनन्तर उसने भी एथेन्समें एक पाठशाला खोली। परन्तु जब यहां उसे बहुत सफलता न हुई, तब वह यूनान छोड़ टेरेंटममें जा बसा। टेरेंटम इटालीके दक्षिण भागमें यूनानियोंका बसाया उपनिवेश ( colony ) था। वहांपर उसके शिष्योंकी

संख्या कई हज़ार हो गई। उसकी शिक्षा प्रणाली ऐसी चित्ताकर्षक थी कि स्त्रियां भी वहां विद्यालाभ उठाने आती थीं, यद्यपि ऐसा करना उस समयकी प्रथाके प्रतिकूल था। कहते हैं कि पैथागोरसकी पत्नी भी शिष्यवर्गमें गिनी जाती थी और उसने अपने पतिका एक जीवन चरित्र भी रचा था जो अब उपलब्ध नहीं होता। पैथागोरसने एक नया पंथ निकाला। उसके अनुयायियोंका कर्तव्य था कि अपनी सारी गवेषणाएं और आविष्कार छिपाए रक्खें। ये लोग विद्याव्यसनी हुआ करते थे। अपने पांडित्यके कारण राजकीय प्रकरणोंमें भी इन लोगोंका प्रभाव दृढ़ हुआ करता था। प्रजातन्त्र-प्रणालीके प्रेमी यह कैसे सहन कर सकते थे। फल यह हुआ कि बिचारा पैथागोरस टैरेटम नगरके समीप मारा गया। परन्तु उसके अनुयायियोंकी संख्या बढ़ती ही गई। उन लोगोंने गणित तथा दर्शन संबन्धी अनेक सिद्धांत ढूंढे। कौन आविष्कार किसने किया इसका पता अब नहीं लग सकता। स्वयं पैथागोरसद्वारा आविष्कृत साध्योंमें दो बहुत प्रसिद्ध हैं।

( १ ) समकोण त्रिभुजमें कर्णपरका वर्गक्षेत्र दूसरी भुजाओंपरके वर्गक्षेत्रोंके योगके बराबर होता है।

( २ ) दिए हुए आयत क्षेत्रके बराबर वर्ग क्षेत्रके बनानेकी रीति। ( यूक्लिड अध्याय २ साध्य १४ )

इनमेंसे पहले साध्यकी कई दशाएं पैथागोरसके बहुत पूर्व मिस्र, भारतवर्ष तथा चीनवालोंको ज्ञात थीं, परन्तु पहले पहल पैथागोरसने ही व्यापकरूपमें इस सिद्धांतकी उपपत्ति दी। इसीसे गणितज्ञ इसको पैथागोरसका सिद्धांत आज भी कहते हैं। यूक्लिडके पहले अध्यायके ४७ आकृतिमें जो इसकी उपपत्ति दी है, वह युक्लिडकी निकाली हुई है। पैथागोरसके दूसरे सिद्धांतसे किसी संख्याका वर्गमूल निकालनेकी कला यूनानियोंके हस्तगत हुई और संभव है कि उन्हें केवल यही एक रीति वर्गमूल निकालनेकी मालूम थी। इसके पश्चात् घनमूल निकालनेकी रीति ढूंढी जाने लगी।

दोका घनमूल निकालना एक कठिन समस्या थी। इसीका दूसरा रूप यह है "दिए हुए घनसे जो घन दुगुना हो उसकी भुजा निकालो"। इस प्रश्नकी उत्पत्तिका संबन्ध एक जनश्रुतिसे है। किसी समय एथेंसमें एक संक्रामक रोग फैला हुआ था। पुरोहितोंने रोग निवारणार्थ डेलफीके ओरेकिलको शरण ली। ओरेकिलने उपाय बतलाया कि हमारे मन्दिरकी घनाकार वेदी दुगुनी बड़ी बनादी जाय। पुरोहितोंने उतना ही बड़ा एक गुम्बज़ जोड़कर परिमाण दुगुना कर दिया। परन्तु ओरेकिल इससे सन्तुष्ट न हुआ और रोग बढ़ता ही गया। पुरोहितोंने फिरसे सहायता मांगी। उत्तर मिला कि वेदीके रूपमें अन्तर न पड़े परन्तु उसका परिमाण दुगना हो जाना चाहिये। पुरोहितोंने जब देखा कि इसमें कोई रहस्य छिपा हुआ है। जब वे पैथागोरसके पास गए और सारी कथा कह सुनाई, पैथागोरसने उस समस्याको यह नया रूप दिया। वे दो संख्याएं य और र निकालो जिनका अ और इ इन ज्ञात संख्याओंसे ऐसा संबन्ध हो कि

अ : य = य : र = र : इ

यदि किसी ज्यामितीय बिधिसे दो संख्याएं ( य,र ) निकाली जा सकें तो "२" ही का क्यों, किसी भी संख्याका घनमूल निकाला जा सकता है। क्योंकि उपर्युक्त तीनों निष्पत्तियोंका (ratios) गुणनफल अ/इ उनमेंसे एक र/इ का घन हुआ। अथवा इ को १ मान लेनेपर र का घन अ हुआ और अ का घनमूल र हुआ। य और र का मान निकालनेकी कोई युक्ति पैथागोरस न बता सका। उस कालसे यह समस्या बहुत प्रसिद्ध हो गई

है और अनेक गणितज्ञोंने उसे हल करनेका प्रयत्न किया है, उनका परिश्रम कभी तो अंशतः सफल हुआ और कभी निष्फल।

पैथागोरस चार समाकार (regular) घन आकृतियोंसे परिचित था, चतुष्फलक, घन, अष्टफलक और विंशतिफलक। पांचवीं समाकार आकृति द्वादशफलक उसके अनुयायी हिपाससने जोड़ी। उसने यह आविष्कार छुपाया नहीं। "मैंने ही गोलके भीतर १२ समपंचकोण जड़नेकी विधि ढूंढ निकाली-ऐसा वह गर्वसे कहा करता था। पैथागोरसने संख्याओंके विशेष गुण ढूंढनेमें बहुत परिश्रम किया। वह संख्याओंकी अनेक श्रेणिओंसे (series) परिचित था जैसे कि गच्छवृद्ध श्रेणी, (arithmetical progression) गुणोत्तर श्रेणी (geometrical progression) हरवृद्ध श्रेणी (harmonic progression) इत्यादि। ऊने अंक, पूरे अंक, वर्णात्मक श्रेणी (squares of natural numbers), घनात्मक श्रेणी, त्रिकोणात्मक अंक, पंचकोणात्मक अंक ये गणितकी संज्ञाएँ पैथागोरसकी निकाली हुई हैं। संख्याके उसने तीन विभाग किये १ पूर्ण संख्या २ अपूर्ण संख्या और ३ पूर्णातीत संख्या। युक्लिड तथा उसके बादके अनेक लेखकोंने पूर्ण संख्या सँबन्धी एक सुन्दर सिद्धान्त वर्णन किया है। अतएव मैं यहां पूर्ण संख्याकी परिभाषा दिए देता हूं। जिस संख्याके, उसी संख्याको छोड़, अन्य भाजकोंका योगफल यदि उस संख्याके बराबर होवे तो उसे पूर्ण संख्या कहते हैं। जैसे ६, २७ इत्यादि। ६ के भाजक, १, २, ३, ६ हैं। ६ को छोड़ अन्य भाजकोंका योग फल ६ ही होता है। अतः ६ पूर्ण संख्या कहाई। इसी तरह २७ के १, २, ४, ७, १४ भाजकोंका योग २७ होता है। इस प्रकारकी गवेषणाओंसे गणित संबन्धी कोई महत्वपूर्ण फल नहीं निकला। पैथागोरसका संप्रदाय ई० पू० ५५० से ४२० तक चला। परन्तु ज्यों ज्यों ये लोग सारे यूनानी राज्योंमें फैलते गए त्यों ये अपने आविष्कारोंको छिपाए रखना भूलते गए। उन्होंने ग्रन्थ रचना आरंभ कर दिया, और जो शिष्य राज्यके भिन्न भिन्न भागोंसे आते वे उनकी प्रतिलिपि लिख लिया करते थे। इस प्रकार पैथागोरसके अनुयायियोंका ज्ञान भांडार शीघ्र ही सारे यूनानमें फैल गया। इस संप्रदायका अन्तिम अनुयायी आर्कैटस माना जाता है।

३. आर्कैटस (वि० पू० ३६४)

आर्कैटस राजनीतिमें निपुण और टैरैंटमनगरका शासक था। दिए हुए घनका द्विगुणित घन बनानेकी युक्ति उसने ढूंढ निकाली उसने जो विधि बताई उससे जान पड़ता है कि वह शंकु (cone) और बेलाके (cylinder) गुणोंसे सुपरिचित था। उसे घन भूमितिका भी अच्छा ज्ञान था। यंत्र विद्या (mechanics) का अध्ययन ज्यामितीय विधिसे पहले पहल उसीने किया। कहते हैं कि साक्रेटीससे संबन्ध रखनेके कारण जब प्लेटोपर विपत्ति आ पड़ी तब उसके प्राण बचानेकेलिए आर्कैटसने यथा शक्ति प्रयत्न किया था। अन्य गणितज्ञोंकी जीवनी अगली संख्यामें निकलेगी।

---

## सूर्योपासना

[ ले० गोपाल नारायण सेन सिंह, बी. ए. ]

प्रकृतिकी यह भी एक विलक्षणता है कि हमारे प्राणरक्षाके निमित्त नितान्त आवश्यक सामग्रियाँ उसने बड़ी प्रचुरतासे हमें प्रदान की हैं। जल, वायु, सब्ज़ी फूलफल इत्यादि इस पृथिवी तलपर जैसी बहुतायतसे पाये जाते हैं वैसे ही वे सुलभ भी हैं। दीन, दरिद्र, धनी, यशस्वी एक समान उनका उपभोग कर सकते हैं। कोई उनकेलिए

लालायित नहीं हो सकता। पर इस कारण, ऐसा नहीं है कि कोई उनका महत्व न माने। हां कदाचित ऐसे अनमोल पदार्थोंमें घाम वा धूपके गुण तथा मनुष्यके जीवनकेलिए उसकी उपयोगिता अभी संपूर्ण रूपसे हम लोग न समझे हों। साधारणतः देखा जाता है कि स्वच्छ वायुसे होनेवाले लाभको मनुष्य कुछ कुछ समझने लगे हैं पर अभी हज़ारों दरवाज़े और खिड़कियां जिनके भीतर दिन रात वायुका प्रवेश होना चाहिये था जकड़कर बन्द रखे जाते हैं। सूर्य का प्रकाश और किरणोंके मोलका बहुत ही थोड़े लोगोंको पता है। बहुधा डाक्टरों वैद्योंका भी ध्यान इस ओर नहीं गया है।

परिणाम इसका यह होता है कि प्रत्येक नगर और गांवमें एकसे एक बढ़िया मकान घने वृक्षोंसे ढके हैं। यहांतक कि उनके आसपास घासतक नहीं जमती। उनमें खिड़कियां और दरवाजोंकी संख्या बहुत ही थोड़ी होती है और जो खिड़की दरवाज़े हैं भी तो उनपर परदा ऐसा लटकता रहता है कि प्रकाश घुसने नहीं पाता। ऐसे घर अंधेरे और सीलसे भरे होते हैं जिनसे रोगके कीड़ोंकी खूब ही वृद्धि होती है। भला ऐसे घरोंके रहनेवाले क्यों नहीं सदा बीमार रहें।

वनस्पतियोंके उगने और बढ़नेके निमित्त प्रकाशका होना बहुत आवश्यक है। घरके भीतर जमाये हुए पौधे नन्हे, पीले, और दुर्बल होते हैं पर वही जब खुली धूपमें आते हैं तो खूब पुष्ट और हरे दीखते हैं।

अन्धेरेमें, कन्दरे-कोठरियोंमें जहां कठिनता से एकाध किरण प्रवेश कर सकती है, पौधोंमें बिलकुल जान नहीं होती। घामसे जिस शक्तिका उनमें संचार होता है वह नहीं होने पाता। फूल पत्ती और घासपर धूपके प्रभावसे जो लहलहाती हरियाली आ जाती है उससे ज्योतिहीन गुफाओंमें कहाँ भेट ?

ठीक उसी प्रकार घरके अन्दर बन्द मनुष्य दुर्बल, रक्तहीन पाण्डुवर्ण हो जाता है। यदि रुधिर हुआ भी तो उसमें सुर्खी नाममात्रकी रही। गहरी लाली तो केवल उन्हींके मुखपर देखनेमें आती है जो खुली हवा और धूपमें विचरते हैं। इसी कारण बहुधा देखा गया है कि यदि हम लोग अपनी शारीरिक अवस्थामें ह्रास नहीं होने दियां चाहते हैं तो चार पीढ़ियोंके उपरान्त एकवार गावोंमें बसकर फिरसे शक्तिका संचय करना पड़ैगा। गावोंसे निरन्तर इस भाँति बलवान स्त्री-पुरुष आकर नगरोंमें न बसें तो कुछ ही दिनोंमें हमारे-नगर पुरुषार्थसे शुन्य हो जायँगे।

नागरिक जीवन प्रायः घरके भीतर, दूकानोंमें, कारखानोंमें, दफ्तर और कचहरियोंमें जहाँ प्रकाशका नाम नहीं, व्यतीत होता है। उस ढंगके जीवनसे रुधिर पीला पड़ जाता है उसमें रहनेवालोंकी दशा अंधरेमें उगे हुए और मुरझाये पौधोंकी होती है।

किसी समय मनुष्यकी एक जाति ऊंचे पहाड़ों और पृथिवीकी तहमें गुफायें खोदकर रहती थी, उनके निवास स्थानमें सूर्यका प्रकाश नहीं पहुंचता था। उन आदिम निवासियोंके अब कोई चिन्ह नहीं पाये जाते, केवल गुफायें उनके विषयमें हमें स्मरण दिलानेको बनी हुई हैं।

अबके नगरनिवासी किसी किसी अंशमें अंधेरी गुफावाले आदिम निवासियोंसे मिलते जुलते हैं। उनके घरमें अन्धेरा छाया रहता है उजियाला आने नहीं पाता। वृक्षोंसे घर ढके होते हैं। बहुत कुछ वहाँका जीवन कन्दरा गुफाओंका जीवन समझना चाहिये। पर स्मरण रहे प्रकाशमें अद्भुत शक्ति है। बड़े बड़े वृक्षोंको अपनी ओर यह झुका लेता है। पुष्पोंको अरुणाई और मनुष्योंको आरोग्यताकी दिव्य-कान्ति देनेवाला यही है। इसके बिना संसार निर्जीव हो जाय और आकाशका पता न रहे।

जहाँ प्रकाश नहीं वहां मनुष्यका जीना संभव नहीं, स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, बुद्धि दूषित हो जाती है तथा मृत्यु अनिवार्य हो जाती है।

डी लारकेट साहेबका कथन है कि वनस्पतियोंकी तरह मनुष्य भी सूर्यसे जीवन संचालनकेलिए शक्तिका एक बहुत बड़ा अंश लेता है, तात्पर्य यह है कि आहार और वायुसे ही हमें यथेष्ट शक्ति नहीं प्राप्त होती। सूर्यका तेज भी हमारेलिऐ अत्यावश्यक है। इसीलिए प्रतिक्षण हम शरीरद्वारा चारों ओरसे धूपकी सीधी या छिटकी किरणें सोख रहे हैं, ये किरणें हमारे शरीरको निरोग बनाये रखनेमें बड़ी सहायक होती हैं। जो किरणें हमारे शरीरपर पड़ती हैं उनमें कुछ तो लौटकर इधर उधर फैल जाती हैं और कुछ यहीं ठहर जाती हैं। त्वचाका रंग जितनाही काला होता है सूर्यकी किरणें उसमें उतनीही सोखती हैं। प्रायः अफ़रीकानिवासीके शरीरपर गिरी हुई किरणें सोलहों आने वहीं सोख जाती हैं। उससे कम सांवले शरीरपर भी उसका एक बड़ा अंश सोख जाता है। वस्त्रोंके नीचे किरणें उतना असर नहीं करतीं क्योंकि वे वस्त्रोंमेंही लिपट जाती हैं। इसलिए कपड़े पहिरकर धूपमें बैठना वा घूमना घाम-चिकित्सा या heliopathy नहीं कहा जा सकता। शरीरमें प्रवेश किया हुआ प्रकाश एक व्यक्तिके शक्तिपुजकी एक विपुल संपत्ति बन जाती है तथा उसका बहुत बड़ा भाग रुधिरके संचारके साथ साथ सभी अंगोंमें फैल जाता है। अनेक वर्षोंके अनुभव और अनुसन्धानसे सिद्ध होता है कि यह शक्ति केवल देहकी रक्षाके निमित्त ही गुणकारी नहीं वरन इससे नाना प्रकारके रोगभी निवारण किए जा सकते हैं। यही नहीं, प्राचीन समयके वैद्योंको भी अच्छी तरह मालूम था कि घामद्वारा चिकित्सा भी एक अपूर्व विधान है और इसका बहुत अवसरोंपर प्रयोग भी किया जाता था। कितने ही स्थानोंमें बड़े आदमियोंके यहां धूपगृह वा Solaria भी निर्मित थे। दक्षिण अमरीकाके कुछ जातियोंमें इस समय भी इसका ठीक वैसेही व्यवहार होता आता है जैसे और जगहोंमें कुछ शताब्दि पहले होता था। पर इधर बहुत सालसे वैद्योंने इससे काम लेना छोड़ दिया था और अब पिछले कई वर्षोंसे हम लोगोंका इस ओर ध्यान आकृष्ट हुआ है। यहांतक कि हम अब उन रोगोंकी सूची बनानेमें भी समर्थ हैं जिनमें घामके प्रयोगसे लाभ हो सकता है।

इस सम्बन्धमें सबसे प्रथम लड़कोंकी रीढकी बीमारियोँका उल्लेख किया जा सकता है, क्योंकि इसमें घाम-चिकित्सासे सबसे अधिक उपकार होता देखा गया है। स्वीज़रलैन्ड देशवासी रोलिअर ( Rollier ) साहबने घामके सहारे इस रोगके इलाजमें बड़ाही चमत्कार दिखलाया है। चिकित्साकी विधि यह है कि रोगी बालकोंको लिया और नित उन्हें कई घंटोंतक धूपमें बिठाया, बस निश्चय ही वे मोटे होने लगते हैं और उनका रोग दूर हो जाता है। क्षयरोगमें भी यह वैसाही गुण करता है। प्रायः इसके रोगी तंग मकानोंमें रहते आये हैं जहां उनके शरीरसे कभी धूपका स्पर्श नहीं हुआ है और खानेकेलिए पुष्टिकारक पदार्थ नहीं मिला है। ऐसी अवस्था में उन्हें धूपही जैसे "टौनिक"की आवश्यकता होती है। उनके रक्तमें hemoglobin नामक तन्तुका अभाव हो जाता है। उसकी पूर्ति धूप उसी ढंगसे कर देती है जैसे वह वनस्पतियोंमें हरियाली डालती है।

इसी गुणके कारण क्षीणता, शारीरिक दौर्बल्य और राजयक्ष्मा तथा रोगशान्तिके उपरान्त देहकी कृशताकेलिए इससे बढ़कर कोई उपचार नहीं है। इनके रोगीको थोड़ेही दिन तक धूप-सेवन करना हितकारी होता है

नश्तरलेनेके पश्चात, तथा उन फोड़ोंकेलिए जो शीघ्र नहीं अच्छे होते, धूप दिखलाना अत्यन्त लाभदायक ठहरता है। इस वर्तमान युरोपीय युद्धके घायलोंकेलिए कई स्थानमें धूप-गृह बने हैं और जब एक्स-रश्मिके द्वारा चिकित्सामें भी निष्फलता होती है, तो धूपसे आराम मिलता है। चर्मरोगोंमें सूर्यकी किरण जैसा गुणकारी कुछ है ही नहीं। इन रोगोंकी उत्पत्ति सूक्ष्म कृमियोंकी उपस्थितिमें होनेके कारण, धूपसे यदि रोगका नाश हो, तो कोई आश्चर्य नहीं, क्योंकि धूपके समान बैकटीरिया संहारक कोई अन्य द्रव्य नहीं है और जब कृमियोंका नाश हो जाता है तो त्वचा आप ही आप भर आती है—

तरह तरहकी खाज, दाद तथा अन्य त्वचाकी बीमारियोंमें शीघ्र गुण करता है और संतोषदायक फल दिखलाता है।

गलगण्डमें तथा गरदनकी गिलटियोंके चीरे जानेपर ( lervical odenites ) धूप दिखलानेसे सद्यः प्रत्यक्ष लाभ देखनेमें आता है, विशेषतः जब किरणोंको आतशी शीशेके द्वारा सिमेटकर गलेपर फेरा जावे और तदनन्तर सारे देहको धूपसे एक घंटा वा अधिक स्नान कराया जावे तो रोगसे बहुत कुछ छुटकारा मिल सकता है।

अस्तु "घाम चिकित्सा" वा "हेलिओपेथी" उस चिकित्साका नाम है जिसमें रोगीके खुले शरीरपर मध्योन्नत कांच वा मध्यनत कांचके (concave and convex lenses) द्वारा एकत्रित सूर्य रश्मि शरीरके किसी विशेष भागपर छोड़ी जाती हैं, आवश्यकतानुसार सारे शरीरको नंगा कर धूपमें बैठते हैं केवल शिरको ढक लेते हैं। इस तरह क्रमसे पहले एक दो दिन पैर, फिर जंघा, फिर पेड़ू वा पेट तथा फिर पूर्ण शरीरको धूप दिखलानेका अभ्यास करते हैं। यदि ऐसा नहीं किया जाय तो धूपकी जलन असह्य हो जाय और रोगी धूपमें न बैठ सके। बस इसी नियमसे प्रति दिन थोड़ा थोड़ा धूपमें बैठनेका समय बढ़ाया जाता है, यहाँतक कि रोगी पूरा एक घंटा या उससे भी अधिक धूपमें रहने लगता है। जाड़ेके दिनोंमें तो कई घंटोंतक यों पड़ा रहना सुखद हो जाता है। चाहे कैसी ही बीमारी हो, सारे शरीरमें धूप दिखलाना अच्छा होता है, क्योंकि इससे अंग प्रति अंगसे रुधिर प्रवाहमें धूप मिश्रित हो जाती है और अपना गुण दिखलाती है।

भारतमें सबसे प्रथम सूर्यको अर्घ देकर ही दिवसका कार्य करनेवाले हिन्दुओंकेलिए यह कोई नया आविष्कार नहीं है, पर आज कलके शिक्षित समुदायमें विज्ञानकी आड़में जो उच्छृंखलता मची है वह कदाचित हमें सूर्यकी ओर किसी प्रकारकी श्रद्धा न करने दे वा सूर्यकी किरणोंकी महिमा बूझनेमें कठिनाई खड़ी करे। पर सत्यका निरादर कबतक हो सकता है?

---

## बीजोंका प्रवास

[ ले० श्रीभास्कर वीरेश्वर जोशी, कृषिविशारद ]

मनुष्य अपने कुलका नाम चलानेकेलिए लड़के चाहते हैं। वनस्पतियां भी ठीक उसी तरह अपने कुल जातिकी उन्नतिकेलिए बीज पैदा करती हैं। कुलमें लड़का पैदा होनेसे ही काम नहीं चलता। उसका पालन पोषण भली भाँति होनेकी आवश्यकता होती है। उसकी शिक्षाका प्रबंध करना पड़ता है। उसको बुरी संगतसे बचाना पड़ता है और सब प्रकार उसकी सहायता करके जीवनकलहकेलिए उसे कार्यक्षम करनेकी ज़रूरत होती है। किसी कुलमें ज़्यादा लड़के हुए तो उद्योग करनेकेलिए उन्हें दूर भेजनेकी भी आ-

वश्यकता होती है। वनस्पतियां अपने बच्चों-की (बीजों) शिक्षा किस प्रकार करती हैं, उन्हें दूर देशोंमें कैसे भेजती हैं और उनके सुभीतेकेलिए कौन कौन उपाय रचती हैं-इसका विचार करनेसे वनस्पतियोंकी बुद्धिमत्ता, उनका अग्रसोच, उनके कार्य-प्रणालीकी सुंदरता, तथा उनके रचयिताके चातुर्य आदिका ज्ञान होगा।

वनस्पति चाहे आम, इमली, बिही या और कोई फलवाला पेड़ हो, या धान, गेहूं, ज्वार, कपास आदिका पौधा हो या और कोई घास पात हो, प्रायः देखा जाता है कि एक एक पेड़ बहुतसे बीज (बच्चे) पैदा करता है। यदि मनुष्यकी इतनी संतति हो तो इस धरतीपर पैर रखनेको स्थान न मिले। हैज़ा, प्लेग, वर्तमान हत्याकांडी युद्ध आदि कई आपत्तियां मनुष्यके संहार करनेको कटिबद्ध होती हैं, तो भी मर्दुमशुमारी घटनेकी कोई संभावना नहीं होती। अब प्रश्न यह है कि वनस्पति इतने बीज क्यों पैदा करती हैं? उत्तर सरल है कि वनस्पतिको अनगिन्ती आपत्तियोंसे टक्कर मारना पड़ता है और इस झगड़ेमें उसके कई एक बच्चे हताहत और घायल हो जाते हैं और संतानोत्पादनके कामके लायक़ नहीं रहते। उदाहरणार्थ ज्वार लीजिये। ज्वारको घुनसे भय है। बोनेसे कटनी होते तक देखा गया है कि २६ क़िस्मके कीड़ोंका उसे सामना करना पड़ता है। अलावा इसके गाय, भैंस, हिरन, सूअर आदि पालतू और जंगली जानवरोंसे बचाव करना पड़ता है। पकनेपर अनेक प्रकारके पक्षी चुग जाते हैं। दाँय करते वक्त पैरसे कुचल जानेका डर रहता है। इतनी आपत्तियोंसे यदि बच गया तो भी सर्वभक्षक मनुष्यके हाथसे बचना तो असंभव ही है। अग्नि, वायु, पानी आदि पंच महाभूतोंसे भी भय है। अपनी जानपर खेलकर इन सब कठिनाइयोंसे यदि बच गया तो जमनेकेलिए उसको योग्य स्थान पानेकी आवश्यकता होती है। स्थान भी मिल गया तो जल वायुकी आवश्यकता होती है। इन सब कठिनाइयोंसे बचाव होगा और परिस्थितिकी सहायता मिलेगी तब कहीं बीज संतानोत्पादन कार्यमें कृतार्थ होगा। इसलिए असंख्य बीज पैदा करना वनस्पतियोंकेलिए अनिवार्य है।

बहुतसे बीज पैदा करनेसे ही वनस्पति कुल-वृद्धिके कार्यमें सफल नहीं हो सकती। मानिये कि किसी आमके पेड़में पाँच हज़ार आम लगे हैं। यदि इन आमोंको खानेवाला कोई भी न हो और पशु, पक्षी, कीड़े आदि अनेक आपत्तियोंसे भी बच जायँ तो क्या आमके पांच हज़ार नये पौधे पैदा होंगे? आम पककर गिरेंगे परंतु उस पेड़के नीचे नहीं जम सकते और यदि जमेंगे तो फल धारण नहीं कर सकते। एक तो आमके पेड़ने अपने आसपासकी धरतीसे भोजन खींच लिया है, इसलिए नया पौधा आमके नीचे पेट भर भोजन नहीं पा सकता। दूसरे उसकी छाया नये पौधेको हितकारिणी नहीं होती। पेड़की छायामें कोई फ़सल नहीं होती, यह सब किसानोंका अनुभव है। यदि बीज जम भी गया तो फूलता फलता नहीं। तात्पर्य्य यह कि यदि आमके बीजको अपनी ज़िंदगी सफल करना है तो उसको अपने पितासे दूर जाना पड़ेगा। वह दूर कैसे जायगा? उसके क्या हाथ पांव हैं? क्या उसके पास कोई सवारी है? अथवा धन है कि सवारी किराया करले? या उसके माता पिताने कोई उसकी यात्राका प्रबंध किया है? पाठको! थोड़ेसे निरीक्षण और विचारसे यह प्रश्न हल हो जायँगे और निरीक्षण तथा विचार शक्ति बढ़ैगी और सर्वशक्तिमान परमेश्वरकी अगाध लीला, असीम चातुर्य और अपरिमित दयाका अनुभव होगा।

आइये पहले घासके बीजोंकी यात्रा कैसे

होती है—इसपर विचार करें। आपने देखा होगा कि दीवारपर, छप्परपर, खपरोंपर, चट्टानोंपर या और ऐसे बिकट स्थानोंपर जहां पशु पक्षियोंका भी पहुंचना मुश्किल है बरसातके दिनोंमें घास जमती है। आपने कभी सोचा था कि घास ऐसे बिकट स्थानोंमें कैसे पहुंची? कार्तिक, अगहनमें यदि आपने खेतोंमें सैरकी होगी तो आपको अनुभव हो गया होगा कि आपकी धोती मोज़े, कोट और जूतोंमें भी घास-के कितने लम्पे चुभगये थे और उनको निकालनेमें आपको कितनी तकलीफ़ हुई थी। ये लम्पे यथार्थमें घासके बीज हैं। चित्रमें लम्पा, गुनेर और तिनगोडाके बीज बढ़ाकर दिखलाये

चित्र २
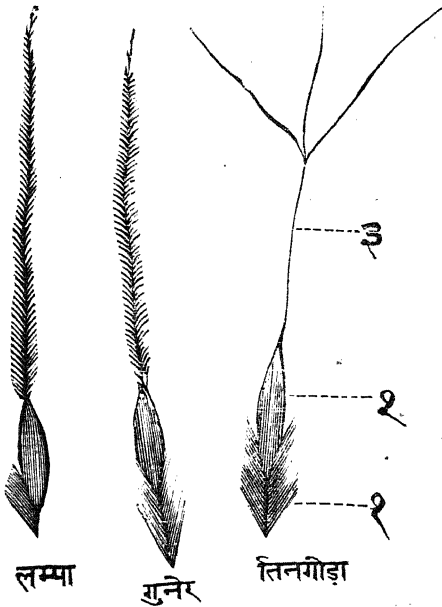
घासके बीजोंके बढ़ाये हुए चित्र

हैं। घासके बीजोंमें तीन हिस्से होते हैं। बीजके नीचे एक मुही (नोक) होती है (चित्रनं १) और इस नोकमें किसी किसी घासमें (जैसे लम्पा) एक तरफ़ रोएँ लगे रहते हैं, और किसी किसीमें (जैसे गुनेर, तिनगोडा इत्यादि) चारों तरफ रोएं रहते हैं। खाली आंखसे इन रोओंका ठीक ठीक ज्ञान नहीं होता। सूक्ष्म दर्शक कांचसे (आतशी शीशा या तालसे) देखनेसे इनकी बनावट ठीक ठीक ध्यानमें आवेगी। इस नोकके (मुँही) ऊपर घासका असली बीज है। (चित्र नं० २) तालमेंसे मालूम होगा बीजका आकार ठीक गेहूंका सा है। गेहूंमें एक तरफ़ जैसी नाली होती है वैसी हो नाली गुनेर घासके बीजमें भी होती है। कोई कोई जातिके घासके बीजोंमें बीजके चारों तरफ धनियाके समान उठी हुई धारें और नालियां क्रमानुसार होती हैं। बीजके ऊपर लंपा लगा है (चित्र नं ३)। लम्पेपर नीचेसे ऊपर, हाथ फेरो कुछ नहीं मालूम पड़ता परंतु ऊपरसे नीचे हाथ फेरो देखो कितनी रुकावट मालूम पड़ती है। खुरदरा मालूम होनेका कारण लम्पेमें भी ऊपर झुके हुए रोएं लगे हैं। रोएं इतने सूक्ष्म हैं कि आंखसे तो नहीं परंतु तालसे भी ठीक ठीक नहीं दिखाई देते, परन्तु स्पर्शसे साफ ज़ाहिर होते हैं। लम्पा प्रायः एक और सीधा होता है, परंतु कोई कोई घासोंमें इसकी चोटीपर तीन वा कम ज़्यादा फुनगियां रहती हैं, जैसे तिनगोड़ेमें तीन फुनगियां हैं और इन्हींसे इसका नाम तिनगोड़ा पड़ा है।

बीजके इन तीन अंगोंसे बीजका कौन कौन सा काम होता है—इसपर अब विचार कीजिए। खास बीजसे (नं० २) घास पैदा होती है। नोक (नं० १) और लम्पा (नं० ३) बीजके सहायक हैं। ये अपने मालिककी नौकरी कैसे बजाते है? (नं १) नोक चुभनेमें बड़ी उपयोगी है। घासमें-होकर कोई भी मनुष्य, जानवर, वा पक्षी निकले, नोकके कारण बीज उनके कपड़ोंमें, बदनमें, चमड़ेमें, बालों आदिसे जहां कहीं मौक़ा मिले चुभ जाते हैं और उन्हींके ऊपर सवार होकर अपने जन्मस्थानसे दूरतक मज़ेमें

चले जाते हैं। न उनको सवारीका किराया देना पड़ता है न किसी बातकी तकलीफ़ होती है। मनुष्य घासकी उपयोगिता और महत्त्व नहीं समझता। उसे बिलकुल तुच्छ तिनका समझता है। इसका बदला घास मानो मनुष्य-पर सवारी करके चुकाती है। खाली नोकसे बीजका कार्य अच्छी तरहसे पूरा नहीं हो सकता। नोकके कारण चुभ जानेमें आसानी होती है सही, परंतु वहां बीजका आसन पूरा जम नहीं सकता। सवारीपरसे फिसल जानेका डर रहता है। इससे बचनेकेलिए ही रोओंका बन्दोबस्त है। रोएंके सहारे सवारीपर बीजकी बैठक जमकर होती है। कपड़ोंमेंसे बीज निकालते वक्त जो कठिनाई होती है उसका कारण रोएं हैं। इनसे एक और भी बड़े महत्त्व-का काम निकलता है। गुब्बारेमें जैसा गला गुब्बारेको स्थिर करनेकेलिए लगा रहता है ठीक वैसे ही ये रोएं बीजको अपने स्थानपर स्थिर रखनेके काम आते हैं। गिरते वक्त नोक हमेशा नीचेकी तरफ रहती है। बीज चट्टान, कूडा, सूखी पत्तियों आदि पदार्थोंपर गिरे तो भी बीजकेलिए धोखा है, क्योंकि बीजका आकार छोटा होनेसे उसके पास पैतृक पूंजी बहुत कमती रहती है। बीज जमनेमें यह पूंजी ख़र्च होती है यदि जड़ ज़मीनतक जल्दी न पहुंचेगी तो पूंजी चुक जायगी और बीजकी मृत्यु होगी। इस कठिन समस्यासे रोएं बचाव करते हैं। रोएं ऊपरकी तरफ झुके रहते हैं। इस झुकावके कारण बीज सदैव कूड़ा, पत्तियों आदिमेंसे ज़मीनकी ही तरफ़ नीचे चला जाता है, जैसे चूहा मूसदानमें जा सकता है परन्तु बाहर नहीं निकल सकता।

नोक और रोओंका उपयोग तो मालूम हुआ परंतु लम्पेका क्या काम है?

लड़कोंको तूमीके नाचका खेल खेलते आपने कभी देखा है? तूमीमें लम्पे ठूंस ठूंसकर भर देते हैं और उसमें थोड़ा पानी डालते हैं। थोड़ी देरमे तूमी यहां वहां लुढ़कने लगती है। लड़के इसको जादूका खेल कहते हैं। यथार्थमें यह न जादू है न कोई चमत्कार है। यह प्रकृति-से बीजोंको उनके प्रवासकेलिए दी हुई सवारी है। परीक्षक एक लम्पा ले उसे काग़ज़, स्लेट या मेज़पर रख, हाथमें थोड़ा पानी लेकर लम्पेको नीचेसे ऊपरतक भिगो डालो। भीगते ही देखो लम्पा चक्राकार घूमने लगता है। नीचेका छोर एक दिशामें और ऊपरका विरुद्ध दिशामें घूमता है। नीचेका छोर कम और ऊपरका ज़्यादा घूमता है। विरुद्ध दिशामें घूम-नेसे ऐंठन पैदा होती है और बीज अपने पूर्व-स्थानसे कुछ दूर हट जाता है। लम्पा सूख जानेसे बीजकी गति बंद हो जाती है। भिगोने-से फिर पैदा होती है। कई बार सूखनेसे और भीग जानेसे लम्पा और बीज अपने पूर्व-स्थानसे बहुत कुछ दूर हटते हैं। घासका बीज कार्तिकमें तैयार होता है। अगहन, पौष और माघ जाड़ेके मास हैं इन महीनोंमें हवामें जलीय परिवर्तन ( hygroscopic changes ) रोज़ाना हुआ करते हैं। हवाकी नमी या आर्द्रता घटती बढ़ती रहती है। रातको हवा पानीसे तर होती है। सूखी पत्ती, घास आदि भीग जाते हैं। और दिनमें सूख जाते हैं। परि-णाम यह होता है कि घासके बीज अपने मा बापसे बहुत दूर चले जाते हैं। प्रकृति देवी-का यह प्रबंध घासकेलिए कितना लाभकारी है! क्या घास प्रकृतिका प्यारा प्राणी नहीं है?

घासके बीजोंका प्रवास दो रीतियोंसे होता है, (१) मनुष्य पशु, पक्षी, कीट, या वनस्प-तियोंपर सवारी करके चले जाते हैं, (२) हवा-में नमीके हेरफेरसे भी बीजोंकी यात्रा होती है।

# रसायन विद्या—२

[ ले० डाक्टर बी. के. मित्र, एल. एम्. एस. ]

तेज अर्थात् अग्नि

पहले कहा गया है कि तेज आधुनिक मतमें कोई पदार्थ नहीं है किन्तु पदार्थकी एक अवस्था मात्र है। एक सोनेकी डलीको ( जो हवामें-से आक्सिजन नहीं लेती ) उत्तप्त करनेसे उसका भार नहीं बढ़ता है। केवल उसकी अवस्था अल्प कालकेलिए परिवर्त्तित हो जाती है। तेजका एक प्राकृतिक गुण यह है कि वह पदार्थोंकी बन्धन शक्तिको शिथिल कर देता है, जिससे उनके अन्तराणु स्थान वृद्धि पाकर प्रसरण करते हैं और शीतल ( ताप ह्रास ) होनेपर फिर वह संकुचित होते हैं।

परीक्षा :—

( १ ) एक रुपयेके किनारोंपर मोटा तार मोड़कर रक्खो और फिर संडसीसे तारोंके प्रान्तमें ऐसा बल देलो कि वह सुगमतासे तारके छल्लेमेंसे निकल जाय। अब यदि रुपयेको खूब तपाकर लाल कर लिया जाय तो वह अपने छल्लेमेंसे नहीं निकलेगा। यदि रुपयेके स्थानमें कोई गौदुम लोहेका सलाख लिया जाय तो यह परीक्षा और भी सुगमतासे दिखलाई जा सकती है।

( २ ) किसी लम्बे गलेकी बोतलमें जल भरकर उसके गलेपर काग़ज़का एक चिन्ह दो और बोतलको गर्म जलके अन्दर डुबो दो, देखोगे कि गर्म होनेपर जलकी पीठ पूर्वसे अधिक ऊँची हो गई है। यदि इसी परीक्षामें बोतलके मुखमें एक छिद्र किया हुआ काक लगाकर छिद्रमें एक काँचकी नली लगादी जाय और नलीतक जल भरदिया जाय तो जलका फैलाव सुगमतासे दिखलाई देगा।

चित्र नं० १

Chemistry रसायन ]

( ३ ) यदि पूर्वोक्त परीक्षामें बोतलमें जलके स्थानमें हवा रहे और नलीके अन्दर १ बून्द जल डाल दिया जाय तो हवाके फैलने वा सुकड़नेसे जलकी बून्द ऊँची नीची होती रहेगी।

अतएव सभी पदार्थ कठिन, तरल वा वायवीय उत्तापसे फैलते हैं, अर्थात् उनके अन्तराणु स्थानमें वृद्धि होनेसे उनका आयतन बढ़ जाता है।
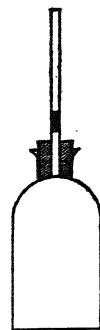
चित्र नं० २

पदार्थोंके इसी धर्म्मपर तापमापक यंत्र बनाये गये हैं। साधारणतः यह एक कांचकी नलिका होती है, जिसके एक प्रान्तपर घुण्डी ( कन्द ) होती है। घुण्डीके ( कन्द ) मध्यमें पारा भरकर नलीमेंसे साधारण वायु निकाल दी जाती है। फिर यंत्रका दूसरा प्रान्त अग्निद्वारा पिघलाकर बन्द-कर देते हैं। कन्दस्थ पारदमें ताप लगानेसे नलिकाके अन्दर पारद चढ़ जाता है, जिसपर भिन्न प्रकारके ताप क्रम बने रहते हैं। वैज्ञानिक क्रियाओंकेलिए सेन्टीग्रेड क्रमका व्यवहार होता है परन्तु देह ताप परिचायक यन्त्र (क्लीनिकल थर्मामैटर ) केलिए फ़ारनहैट क्रमका व्यवहार किया जाता है। इनके अतिरिक्त एक और ताप क्रमका रोमरका भी व्यवहार होता है। इन तीनोंकी भिन्नता चित्र-

चित्र नं० ३
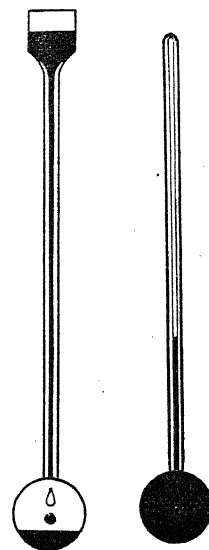
द्वारा दिखाई जाती है। नीचेकी संख्यामें ३२° और०° बरफ़के पिघलनेका वा पानीके जमनेका तापक्रम है और हिमांक कहलाता है। ऊपरकी संख्यामें यथाक्रम १००, २१२, और ८० पानीके उबलनेका तापांक प्रकट करते हैं जिसको क्वथनाँक कहते हैं। ( चित्र नं० ४ )
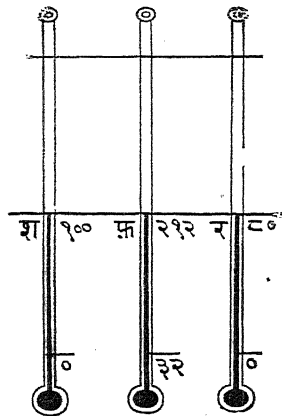
चित्र नं० ४

तेज अर्थात् अग्निसे पदार्थोंमें रसायनिक परिवर्त्तन भी होते हैं। सब जलनेवाले पदार्थ भस्ममें परिणत हो जाते हैं। कई प्रकारके धात भी साधारण वायुमें जलकर भस्म बन सकते हैं। परन्तु उपर्युक्त दोनों भस्मोंमें भेद है जिसका वर्णन आगे किया जायगा।

द्रव्योंमें रासायनिक परिवर्त्तन होनेसे भी तेज उत्पन्न होता है, जैसे फुके चूनेपर पानी डालनेसे देखा जाता है। परन्तु अन्य उपायोंसे भी ताप उत्पन्न हो सकता है। लोहेको बारम्बार आघात करनेसे वा किसी धातके तारको तोड़नेकेलिए चारों ओर मोड़नेमें देखा गया है, कि वह उत्तप्त हो जाता है। इन क्रियाओंमें कोई रासायनिक परिवर्त्तन नहीं होता,केवल क्रियाओं की शक्ति उत्तापमें परिणत हो जाती है। अग्नि उत्तापका ही एक रूपान्तर है। अग्निसे इञ्जन आदि यन्त्रद्वारा गति वा वैद्युतिक शक्ति उत्पन्न हो सकती है। अतएव एक शक्ति दूसरी शक्तिमें परिणत हो सकती है।

उपर्युक्त उदाहरणसे प्रतीत होगा कि तेज एक शक्ति है जो पदार्थोंकी अवस्थामें परिवर्त्तन कर सकती है। हम पहिले ही कह चुके हैं कि पदार्थ वह हैं कि जिनमें भार होता है। पदार्थ और शक्ति परस्पर संबद्ध रहते हैं परन्तु आधुनिक गवेषणासे ऐसा भी प्रतीत होता है कि शक्ति मुक्तावस्थामें भी रह सकती है। और यही शक्ति पदार्थका आदि कारण है। यह दोनों अविनश्वर हैं।

मरुत अर्थात् हवा

यह एक वायवीय पदार्थ है जो कि पृथ्वीके चारों ओर वेष्टित है। इसकी ऊंचाई ४॥ मील अनुमानकी जाती है। इतर पदार्थोंके समान हवामें भी भार है। अतएव निम्न स्तरोंमें हवाका भार ऊपरके स्तरोंसे अधिक होता है। व्योमयान द्वारा अनुभव हुआ है कि २ मील ऊंचाईपर हवा इतनी सूक्ष्म हो जाती है कि उसमें मनुष्य जीवन धारण नहीं कर सकता। समुद्र पीठपर हवा सबसे गुरु भार विशिष्ट होती है। जैसे जैसे पहाड़ोंपर चढ़ते हैं तैसे तैसे हवाका भार कम होता जाता है। यह एक यन्त्र वैरोमीटर ( वायुमान ) द्वारा देखा जा सकता है। एक साधारण वैरोमीटर इस प्रकार बनाया जा सकता है कि प्रायः गज़ भर लंबी दृढ़ काँचकी नलिकामें जिसका एक प्रान्त बन्द हो पारद भरकर निम्न प्रान्त किसी पारदके पात्रमें डुबोकर खोल दिया जाय तो उसमेंसे थोड़ासा पारद निकलकर ऊपरसे कई इन्च स्थान शून्य हो जायगा। इससे यह प्रमाणित होता है कि पारद पात्रपर वायवीय भार नलिकाके अन्दर ऋजु भावसे प्रायः ३० इन्च पारदको उत्तोलन कर सकता है। ऐसे यन्त्रोंको उच्च पर्वतोंपर ले जानेसे वायवीय भार कम होनेके कारण पारद स्तम्भ, नीचा हो जाता है।

हवाके अन्दर और कारणसे भी स्थानीय भारमें व्यतिक्रम होता रहता है यथा उत्तापद्वारा सूर्यके तापसे पृथ्वी उत्तप्त हो जाती है, हवा पृथ्वी स्पर्शसे गरम हो, हलकी होकर ऊपर चढ़ती है। अतएव चारों ओरसे भारी हवाका प्रवाह आकर स्थान अधिकार कर लेता है। इसी कारणसे सदा हवाका प्रवाह होता रहता है क्योंकि गुरुभार विशिष्ट हवा स्थानीय लघुभार हवाको हटाकर सामंजस्य करती रहती है।

गर्म हवा ठण्डी हवासे हलकी होती है। जिसका एक साधारण प्रमाण गुव्वारा है। कोठियोंकी अँगीठियोंका धुवाँ न केवल चिमनीद्वारा ऊपर निकल जाता है, प्रत्युत वह घरके अन्दर बाहरकी हवाको भी शोषण करता है।

रासायनिक दृष्टिसे हवा एक पदार्थ है जिसमें प्रधानतया दो वायु रहते हैं। एक औक्सिजन, दूसरा नैट्रोजन, यह कई परीक्षाओंद्वारा दिखाया जा सकता है।

परीक्षा (क) किसी बोतलमें एक वक्र तार द्वारा एक छोटी मोमबत्ती इसके तल देशमें स्थापन करनेसे वत्ती थोड़ीदेर जलकर बुझ जाती है और फिर उसमें जल नहीं सकती। इससे सिद्ध हुआ कि बत्तीके जलनेसे उसका अग्न्युत्पादक उपादान हवामेंसे लुप्त होगया। (ख) इस बोतलमें यदि चूनेका स्वच्छ जल डाला जाय तो वह दूधिया होजाता है, अतएव बोतलकी हवामें कोई रासायनिक परिवर्तन होजाता है अर्थात् कार्वोनिक ऐसिड-गैस उत्पन्न हो जाती है। साधारणतः १०० भाग वायुमें।

औक्सिजन भाग............२१............

नाइट्रोजन भाग...........७८

कार्वोनिक ऐसिड गैस......००·०४ है। और जलीय वाष्प (अमोनियां आदि) अल्प परिमाणसे रहता है। परन्तु फुस्फुस से निकले हुए वायुमें यह परिवर्तन हो जाता है। जैसे—

औक्सिजन भाग......१६

नैट्रोजन भाग.........७६

कार्वोनिक ऐसिड गैस......४·००

जलीय वाष्प...प्रचुर परिमाण।

हवाका औक्सिजन शरीरके भीतर भिन्न भिन्न धातुओंसे संयुक्त होकर कार्वोनिक ऐसिड गैस उत्पन्न करता है जिससे शरीरका उत्ताप स्थिर रहता है। इसको सामान्य परीक्षासे (यथा चूनेके पानीके अन्दर फूंकनेसे) दिखा सकते हैं। शरीरसे निकला हुआ कार्वोनिक ऐसिड-गैस यदि हवामें दशमांश एकत्र होता जाय तो वह जन्तुओंकेलिए हानिकर होता है। प्रकृतिमें-उद्भिज द्वारा कार्वोनिक ऐसिडगैसका क्षय होता रहता है और औक्सिजन बनता रहता है। यह समान्य परीक्षाद्वारा दिखाया जा सकता है कि उद्भिज सूर्यकी किरणोंके प्रभावसे कार्वोनिक ऐसिडगैसमेंसे औक्सिजन निकाल लेते हैं, और कार्वनसे अपना शरीर गठन करते हैं। वायुका औक्सिजन पानीमें भी थोड़ा सा घुल जाता है जो कि मत्स्यादि जलचरोंके जीवन क्रियाकेलिए उपयोगी होता है। वायुके इस औक्सिजनसे पृथिवीके सड़ने गलनेवाले (पचन शील) पदार्थ मिलकर निर्दोष हो जाते हैं, यद्यपि इस क्रियामें सूर्यकी किरणें तथा भिन्न भिन्न जीवाणु भी सहायक होते हैं।

### व्योम (आकाश)

प्राचीनोंके मतमें आकाशका अर्थ शून्य-स्थान है जो कि न केवल सारे ब्रह्माण्डको घेरे हुए है प्रत्युत प्रत्येक वस्तुके अन्तराणु स्थानमें भी उपस्थित है।

आकाशका एक धर्म उन्होंने शब्द माना है अर्थात् शब्दको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें लेजानेकेलिए किसी भौतिक आधारकी आवश्यकता देखकर वह धर्म आकाशमें

आरोप किया। आधुनिक गवेषणासे प्रमाणित हुआ है कि शब्द अधिकतर वायुकणोंमें कम्पन तथा सङ्घातके कारण होता है। हमारे बोलनेमें हमारे स्वर यन्त्रके अन्दर दो तन्तु बड़ी शीघ्रतासे कम्पन करते हैं। उनके-द्वारा परवर्ती वायु कण सङ्घनत विशिष्ट होकर एकत्रित हो जाते हैं और फिर उनके-द्वारा परवर्ती वायु स्तरमें भी वही क्रिया होती है। इसी रीतिसे वायुकणोंमें कम्पनकी एक तरङ्ग उत्पन्न होती है जिसके द्वारा वायु कणोंकी चेष्टा परवर्ती कणोंमें पहुंचकर हमारे कानोंपर आघात करती है। इससे हमें शब्द अनुभव होता है।

प्राचीनोंका कहा हुआ आकाशका धर्म कञ्चित भ्रमात्मक होनेपर भी हमारे आधुनिक मतसे बहुत सदृश है इसलिए हम आकाश वादका अनादर नहीं कर सकते, अपरञ्च यद्यपि आकाशमें शब्द-वह गुण नहीं है तथापि आकाशको आधुनिक सिद्धान्तोंके "ईथर" से एक बड़ा घनिष्ट सादृश्य है।

ईथर एक भार हीन पदार्थ विशेष है जो सारे आकाशमें विस्तृत है और आकाशके सदृश अन्य पदार्थोंके अन्तराणु स्थानमें भी उपस्थित है। इसके द्वारा तेज अर्थात् उत्ताप अग्नि, वैद्युतिक शक्ति, आदि एक पदार्थसे अन्य पदार्थमें गमनागमन कर सकता है। यद्यपि ईथर प्रत्यक्ष नहीं देखा जा सकता है तथापि इसके अस्तित्वमें हमें इसलिए विश्वास करना पड़ता है कि विना ऐसे पदार्थके माने हम बहुधा भौतिक क्रियाओंको नहीं समझ सकते। अतएव विज्ञानजगतमें साक्षात प्रमाणके अतिरिक्त अनुमानका भी स्थान है। परन्तु हमारे पूर्व पुरुषोंने जो उस समयमें विज्ञानमें अद्वितीय थे उन्होंने विज्ञानराज्यमें प्रत्यक्ष और अनुमान प्रमाणके अतिरिक्त उपमान और आप्त वचनका अवतरण करके उसके अन्दर बहुधा शंका उपस्थित की है। हमें उचित है कि अपने पूर्व पुरुषोंके सिद्धान्तोंको यथाविधि आदर करते हुए युक्ति मार्गसे स्खलित न हों और सत्यके अनुरोधसे यदि आवश्यकता हो तो अप्रिय वाक्य कहते हुए भी कुण्ठित न हों।

## परिशिष्ट

### परमाणु-वाद

आधुनिक परमाणु वाद जो कि कुछ ऊपर ७०० वर्ष हुए इंगलैंड निवासी डालटन द्वारा प्रवर्तित हुआ था प्राचीन ग्रीक देशीय दार्शनिक मतोंका एक परिवर्द्धित पुनर्विकास है सम्भवतः यह मत भारतसे यूनान देशमें पहुंचा था। हम संक्षेपसे इस मतके विषयमें आलोचना करेंगे।

यदि हम पदार्थोंको (यथा किसी पत्थरको) चूर्णित करें तो उसके अति सूक्ष्म खण्ड कर डालेंगे जिनको कण कहते हैं परन्तु हम यह अनुमान कर सकते हैं कि उन क्षुद्र कणोंके अन्दर भी ऐसे छोटे छोटे भाग हों जो कि किसी भौतिकरीतिसे विभक्त न हो सकें तो ऐसे अन्तिम कण जिनसे कि सारे भौतिक पदार्थ निर्मित हैं वे अणु कहलायेंगे। परन्तु बहुतसे यौगिक पदार्थोंके अणुओंके अन्दर भी उनके भिन्न भिन्न उपादान अवस्थित रहते हैं जो कि रासायनिक रीतिसे विश्लिष्ट हो सकते हैं। इन पदार्थोंके इन क्षुद्रतम भागोंको नाम परमाणु दिया गया है जो कि रासायनिक रीतिसे भी विश्लिष्ट नहीं किये जा सकते हैं। अतएव सभी पदार्थ चाहे मौलिक हों वा यौगिक सब अणुओंकी समष्टी मात्र हैं और ये अणु परमाणुओंसे बने हुए हैं।

आधुनिक गवेषणासे ऐसा प्रतीत होता है कि ये परमाणु और भी क्षुद्रतम भौतिक कणोंसे बने हुए हैं जिनको इलेक्ट्रोन वा वैद्युतिक अणु नाम दिया गया है। इन अणु और

परमाणुओंके आयतनके विषयमें एक स्थूल ज्ञान इस तरह हो सकता है कि यदि एक जल विन्दुको आधिदैविक शक्ति द्वारा इस भूमण्डल समान बृहदाकार कर सकें तो अणुओंका आयतन छोटी २ गोलियोंके सदृश होगा और परमाणु उससे भी छोटे होंगे मानो कि छर्रेके बराबर, और यदि उनमेंसे किसी परमाणुको एक बड़े कमरेके बराबर बड़ा कर लिया जाय जिसमें १००० आदमी बैठ सकें तो वैद्युतिक कणोंका आयतन उसमें बैठनेवाले मनुष्योंके बराबर न होगा परन्तु छोटे २ अनुस्वार चिह्नके सदृश होगा जोकि इस पत्रपर दिखाई देते हैं। वैद्युतिक कण अति वेगसे परमाणुओंके अन्दर घूर्णायमान अवस्थामें रहते हैं और पदार्थोंके आदि कारण हैं। यद्यपि यह सब अत्याश्चर्यजनक प्रतीत होते हैं तथापि कूट मीसांसासे यह यथार्थ सिद्ध हुए हैं।

---

## दीर्घ जीवन

[ ले० गोपालनारायण सेन सिंह, बी. ए. ]

मनुष्यके जीवनकी अवधि बढ़ सकती है, इस विषयमें सबकी एक राय है। केवल उसके साधनके सम्बन्धमें ही मत भेद है। कुछ सालसे इधर कतिपय जिज्ञासुओंको संदेह भी होने लगा है कि मानव जीवनको दीर्घ बनानेका कार्य उचित रूपसे नहीं चल रहा है और कमसे कम उस उद्देश्यकी पूर्तिके साधनोंमेंसे एक शारीरिक विज्ञानकी ओर हम उपेक्षाका भाव दिखला रहे हैं।

हमारे वर्त्तमान कार्यकी उत्पत्ति डाक्टर पास्चरकी खोजके साथ ही साथ आरंभ होती है। जिस दिनसे पास्चरने अपने नव-युग-संस्थापक आविष्कार किये तथा अपने विचारकी घोषणा की कि मनुष्यकेलिए अपनेको सब प्रकारके कीटाणुओंसे मुक्त करना सम्भव है, तबसे प्रायः स्वास्थ्य विभागमें सभी कार्यकर्ता केवल इसी धुनमें लगे हैं कि किसी तरह सूक्ष्म रोग उत्पादक कीटाणुओंसे त्राण मिले।

रुज़वेल्ट कौन्ज़रवेशन कमिशनद्वारा प्रस्तुत अमेरिकाके जातीय शारीरिक अवस्थाके ब्योरेसे तथा युरोपके अंतर्गत जीवन-लेखाके संक्षेप वर्णनसे पता लगता है कि वहाँ १७वीं और १८वीं शताब्दिमें १०० वर्ष पीछे मनुष्यजीवनमें ४ सालकी वृद्धि हुई और १९वीं शताब्दिके पहले ७५ वर्षमें पहलेसे दुगुनी वृद्धि हुई और तबसे बराबर चौगुनी वृद्धि हो रही है। अर्थात् १०० वर्षमें १७ सालकी वृद्धि हुई।

इस गणनाको देखकर हममेंसे बड़ेसे बड़े आकांक्षावालोंको भी संतोष होना चाहिये, क्योंकि यदि १०० वर्ष पीछे १७ सालसे भी हमारा जीवन बढ़ता गया तो कुछ ही शताब्दियोंमें संसार अजर अमर स्त्री पुरुषोंसे बस जायगा।

पर भविष्यतके विषयमें इतनी आशा रखना भी ठीक नहीं है क्योंकि इधर जो कुछ उन्नति हुई है उसके कारणोंपर ध्यान देते हुए हम देखते हैं कि मनुष्यकी आयु, ४० वर्षके नीचे संक्रामक रोगोंसे कम मृत्यु होनेके कारण ही बढ़ती हुई दिखलाई पड़ती है, यद्यपि साथ ही साथ ४० वर्षसे ऊपर निर्बलता और क्षयसे मृत्यु संख्यामें अधिकता पायी जाती है। अतः एक ओर जो थोड़ा बहुत लाभ दिखलाई देता है उसकी अपेक्षा यदि दूसरी ओर विशेष हानि हुई तो यह बड़े भय और खेदकी बात होगी।

बात यह है कि आज सारे सभ्य संसारमें दो प्रकारके लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं, एक तो भयानक रोगोंके आक्रमण और उनसे मृत्यु कम होती जाती हैं और दूसरे क्षय तथा जीर्ण-रोगोंकी वृद्धि होती जाती है। इसका कारण स्पष्ट है। हम प्राण संहारक कीटोंसे तो बच

Miscella eous स्फुट ]

जाते हैं, पर हमारी कर्मेन्द्रियां बहुत शीघ्र निकम्मी हो जाती हैं। हमारी इन्द्रियोंकी इस शिथिलताके पूर्व प्रायः हमारी आदतें बिगड़ जाया करती हैं और इन्हीं विकारोंके कारण हमारी दुर्गति हो जाती है। कई एक देशोंमें ऊपरसे देखनेमें स्वास्थ्यके सब नियमोंका पालन होता आता है, अर्थात् उसके निवासी घरमें कसरत भी करते हैं, मैदानमें खेल भी खेलते हैं और रहने सहनेकी परिपाटीपर ख़ूब ध्यान भी देते हैं, पर तब भी उनकी शारीरिक अवस्था संतोषदायिनी नहीं है। हां, इसमें स्वीडन ही संसारके सब देशोंसे बढ़ा चढ़ा है, क्योंकि वहां शासकोंकी ओरसे स्वास्थ्य संबन्धी मामलोंमें प्रत्येक व्यक्तिकी रुचि और अभ्यासमें हस्तक्षेप किया जाता है तथा सार्वजनिक विद्यालयोंके द्वारा उनके जीवनपर पूरा प्रभाव डाला जाता है।

उपरोक्त आशङ्कायें निर्मूल नहीं हैं, क्योंकि दीर्घायु प्रसारिणी नामक संस्थाने अभीतक न्यूयार्क शहरके कारख़ाने और कोठियोंमें अनुमान २००० मनुष्योंकी जो जांच की है उससे जान पड़ता है कि ३० वर्षसे नीचेके स्त्री पुरुषोंमें भी हृदय, मूत्राशय, यकृत और रुधिरकी अनेक ख़राबियां पायी जाती हैं और उनमें फ़ी सैकड़ा ५६ की अवस्था तो इतनी शोचनीय होती है कि उनके घरवालों और संबन्धियोंको उनके रोगका हाल लिखना पड़ता है।

इससे स्पष्ट है कि आज स्त्री पुरुष जवान होते ही मरने लगते हैं, पर वह इतना धीरे धीरे मरते हैं कि जबतक मृत्यु बिलकुल निकट नहीं आ जाती उनको या उनके डाक्टरोंको इसकी ख़बरतक नहीं होती। यह कितनी भयानक बात है! किसी पशुशाला या भेड़ोंके झुण्डमें भी १०० पीछे यदि ५०। ६० की यह दशा हो जाय तो हमारे चित्तमें कैसे भाव उत्पन्न होंगे?

कहना नहीं होगा कि इसमें अब अधिक असावधानी नहीं होने देना चाहिये। घरमें आग लगनेपर कुआ खोदनेसे अच्छा है कि पहलेसे ही उसकेलिए यत्न किया जाय। अपने देशवासियोंके स्वास्थ्यके एक दम नष्ट हो जानेके पूर्व ही उसे उचित परीक्षा और चिकित्साद्वारा सँभालना हमारा परम धर्म है।

रोगग्रस्त होकर खाटपर गिरनेके उपरान्त ही डाक्टरसे परामर्श करना ठीक नहीं है। चलते फिरते आदमियोंको भी बीच बीचमें अपने शरीरको जांच कराना चाहिये और संयम नियमसे जो रोग निवारण हो सकते हैं उनका निवारण करना तथा खाने पीने पहरनेमें सचेष्ट होकर अपना बल और कार्यक्षमता बनाये रहना चाहिये। अपने देशी रहन सहन और आहार विहारमें समयानुसार क्या क्या परिवर्तन आने चाहिएँ उनमें कौन कौनसे दूषण हैं, उसमें कहांतक सुधार करनेका संयोग है इनका ध्यान रखना हमारा कर्तव्य है।

---

## धूपघड़ी

[ ले० हरिश्चन्द्र, एम्. एस-सी. ]

म इस बातको मानकर लेख आरम्भ करेंगे कि सूर्य्य पृथ्वीके चारों ओर चलता दीखता है और २४ घन्टेमें एक बार पूरा चक्कर लगा लेता है। यथार्थतः सूर्य्य पृथ्वीके एक धुरेके चारों ओर चलता ज्ञात होता है, जिसके सिरे सदैव उत्तर दक्षिणकी ओर रहते हैं और जो स्वयं स्थिर जान पड़ता है। सूर्य्य सदा समान ही चालसे चलता है और जो कुछ थोड़ा बहुत कभी भेद होता रहता है उससे हमें प्रयोजन नहीं।

इससे यह स्पष्ट है कि यदि हम एक दण्ड क ख को ऐसा खड़ा करें कि वह पृथ्वीके धुरेसे सम्मिलित हो जावे तो सूर्य्य इस दण्डके चारों ओर घूमता जान पड़ेगा। यदि अब हम

Astronomy ज्योतिष ]

इस दण्डपर एक चक्र उसके समकोण ( at right angles ) लगा दें और उसको क्रमशः अंशादिकसे ( degrees etc. ) चिह्नित करदें, तो सूर्य्यके होते दण्डकी परछाईं चक्रपर चलती हुई समयको जनावेगी। सूर्य्य पूरा चक्र अर्थात् ३६०° अंश २४ घन्टेमें घूमता है। इस कारण एक घन्टे-में दण्डकी परछाईं १५ अंश चक्रपर चलेगी। इसी प्रकार यदि हम चक्रको और बड़ा बनावें, तो मिनिट और सेकन्ड भी विदित हो सकते हैं। जयपुरमें इस प्रकारका एक महान् यन्त्र है भी, जिसमें एक सेकन्ड और आधे सेकन्डतक समय विदित हो सकता है।

जब सूर्य्य सबसे ऊँचे स्थानपर होता है तब १२ बजते हैं और दण्डकी परछाईं चक्रके सबसे नीचे स्थानपर होती है। इस स्थानके दोनों ओर चक्रपर १५,१५ अंशकी दूरीपर १,२, ३, आदि और ११,१०,६ आदिका समय परछाईं-द्वारा विदित होता है। यदि हम चक्रके केन्द्र-छ से घन्टोंके चिह्नोंतक सीधी रेखाएँ खींच-कर उन्हें बढ़ावें तो वे उतरकर भूमिके समा-नान्तर एक सीधी रेखा ग घ को काटेंगी। अब हम उन बिन्दुओंको जहाँ यह रेखाएं ग घ को काटती हैं क से मिलाते हैं। तो यह स्पष्ट है कि दण्डकी परछाईं XII, I,II, III, .. XI, X,IX-बजे भूमिपर क XII, क I, क II, आदिपर पड़ेगी। अब हमारी धूपघड़ी बनगयी। विचार करनेसे यह बात भी ज्ञात हो जावेगी कि क XII और ग घ समकोण बनाती हैं। [ शकल २ ]
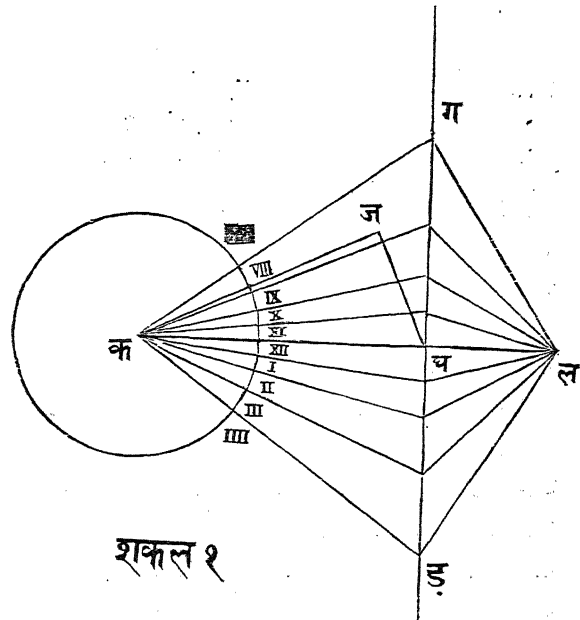
शकल १
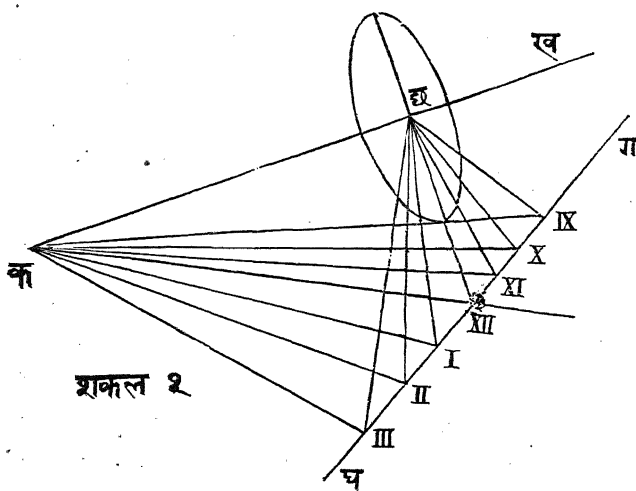
शकल २

यदि हम क XII को च तक बढ़ावें और XII च को छ XII के बराबर बनावें और XII च से १५, १५ अंशकी दूरीपर, च से रेखाएं खीचें तो यह रेखाएं ग घ को उन्हीं बिन्दुओंमें काटेंगी और इस प्रकार एक सुगम रीतिसे हम धूपघड़ी तय्यार कर सकते हैं।

बस तो धूपघड़ी बनानेकी यह सरल रीति है कि एक उचित प्रमाणका वृत्त काग़ज़पर खींचो। उसके केन्द्र क से एक सीधी रेखा क XII खींचो और उसको उचित दूरीतक बढ़ाओ। [शकल १] एक सीधी रेखा ग घ ङ से समकोण बनात

खींचो। अब एक समकोण त्रिभुज ( right-angled triangle ) ज क घ बनाओ जिसका कर्ण (hypotenuse) क घ हो और एक कोण ज क घ जिस स्थानमें घड़ी बनायी जाती है, उस स्थानके अक्षांशके (latitude) बराबर हो अब ल घ को ज घ के बराबर बना लो और घ ल से १५,१५ अंशकी दूरीपर ल से सीधी रेखाएं खींचो। जिन बिंदुओंमें यह गघ को काटें उनको क से मिलाओ। जहाँ यह रेखाएं वृत्तको काटें उनके नाम I, II, III, .. XI, X, IX .. रक्खो। अब एक त्रिभुजाकार फलक ज क घ के बराबर बनाओ और उसका कर्ण कघ पर रखकर उसको बिलकुल सीधा खड़ा कर दो। हमारी धूपघड़ी अब बन गई। इस यन्त्रको धूपमें इस प्रकारसे रक्खो कि क XII उत्तरकी ओर रहे। त्रिभुजके एक किनारे क ज की परछाईं समय बतावेगी।

यदि ल से १५, १५ अंशवाली रेखाओंके अतिरिक्त और बीचवाली रेखाएं भी खींची जावें तो घड़ीमें आधे घन्टे भी विदित होंगे। और उसी प्रकार और अधिक रेखाएं खींचनेसे पाव घन्टे और मिनिट भी विदित हो सकते हैं।

धूपघड़ीका नमूना तख़तीपर काग़ज़ जमाकर उसपर बड़ी सुगमतासे खींचा जा सकता है और काग़ज़के एक डब्बेसे त्रिभुज काटकर आलपीनोंद्वारा अथवा किसी और रीतिसे खड़ा करके बहुत सुन्दर धूपघड़ीका खिलौना तय्यार हो सकता है।

यह याद रखना चाहिये कि यह घड़ी केवल स्थानीय समय जनाती है और इसको रेलके समयसे मिलाना व्यर्थ है।

जो लोग धूपघड़ी बनाना चाहें उनको यह बात जानकर सुगमता होगी कि यदि वे वृत्तका व्यास ( diameter ) ६ इन्चका रक्खें और क घ को सात इन्चका लें तो वे घड़ीसे पाव घन्टे भली भांति देख सकते हैं।

यह कहनेकी आवश्यकता नहीं कि यह घड़ी सब ऋतुओंमें जब धूप हो ठीक काम देती है किन्तु अनेक मनुष्य इस बातको नहीं जानते।

---

## निद्रा

[ले० अभयचन्द, काव्यतीर्थ]

यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्लमान्विताः
विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपति मानवः॥
[ चरकसंहिता सूत्रस्थान अ. २१ ]

दुनियाँ उद्यमशील है। बालकसे लेकर वृद्धतक सब आदमी कुछ न कुछ काम करते हैं। हर एक काममें मन और इन्द्रियोंकी सहायता ज़रूर लेनी पड़ती है। अतः शरीर इंजन है, मन और इन्द्रियां कार्यकी पूर्तिरूप स्टेशनपर पहुँचानेमें शरीरकी सहायक कलें हैं। कलें काम करते समय घिसकर टूट न जायँ इसकेलिए उनपर ( कलोंपर ) तैलादि चिकने पदार्थ लगा दिये जाते हैं। इसी तरह इस शरीररूपी इंजनमें लगी हुई मन तथा इन्द्रियां रूपी कलें अपने कार्योंको सुचारु रीतिसे संपादन करें और बिगड़ न जायँ—इसकेलिए हमको उचित समयपर निद्रा लेना परम आवश्यक है। क्योंकि शारीरिक शास्त्रका यह नियम है कि शारीरिक वा मानसिक परिश्रम करनेके बाद शरीर तथा मनको विश्राम न दिया जाय तो पित्त और वायु बढ़कर कमज़ोरी, शरीरमें कालापन, गर्म चीज़ खानेकी इच्छा, पेटका फूलना, दस्तका न आना, पेशाब शरीर और आंखोंका पीलापन, प्यास लगना, शरीरमें जलन, धातुविकार आदि रोगोंको पैदा कर देते हैं, जिससे कि मन और इन्द्रियाँ शिथिल होकर छोटेसे भी कार्य करनेमें समर्थ नहीं होतीं। इसलिए फिर उनमें नवीन शक्ति लानेकेलिए अर्थात् बात पित्तको समान अवस्थामें लानेकेलिए कफ़को बढ़ानेवाली

निद्राका उचित कालमें सेवन करना चाहिये।

निद्रातु सेविता काले धातुसाम्यं मतन्द्रिताम्।
पुष्टि वर्णं बलोत्साह व वन्हिदीप्तिं करोति हि॥

—भावप्रकाश ऋतुचर्या

समयमें पूरी निद्रा लेनेसे धातुओंके विकार, औंघाईका आना, दुर्बलता, आदि रोग दूर होते हैं, शरीरकी कांति बढ़ती है, अग्नि दीप्त होती है और हर एक काम करनेकेलिए मनमें उमंग बढ़ती है।

निद्रा सात प्रकार की होती हैः—

तमोभवा; श्लेष्मसमुद्भवा च
मनः शरीर श्रमसंभवा च।
आगन्तुकी व्याध्यनुवर्तिनी च
रात्रिस्वभावप्रभवा च निद्रा॥

—चरकसंहिता सूत्रस्थान अध्याय २१

१ तमसे २ कफ़की अधिकतासे ३ मानसिक शारीरिक परिश्रमसे ५ विष आदिके खानेसे ६ रोगोंसे या ७ रात्रिमें स्वभावसे पैदा होनेवाली। सातवीं निद्राको छोड़कर बाक़ी निद्राओंकी गिनती रोगोंमें है।

ब्राह्मे मुहूर्ते उत्तिष्ठेत् स्वस्थो रक्षार्थमायुषः।

वाग्भट सूत्रस्थान अ० २

हर एक तन्दुरुस्त आदमीको आयुकी रक्षाकेलिए ६ घंटे सोकर सूर्योदयसे१॥ घंटे पहले ब्राह्म मुहूर्तमें उठना चाहिये।

परन्तु इस बातका ख़्याल अवश्य रखना चाहिये कि भोजन करनेके बाद ही सोना बहुत हानिकारक है। इसलिए भोजन करनेके कमसे कम दो घंटे बाद सोना चाहिये। किन्तु यह नियम जब पल सकता है कि हम लोग दिनमें दो वार १०बजे सुबह और ४ बजे शामको भोजन करें, क्योंकि आयुर्वेद संबन्धी ग्रन्थोंमें यह भी लिखा हुआ है–"याममध्ये न भोक्तव्यं यामयुग्मं न लंघयेत्", अर्थात् एक बार भोजन करके फिर तीन घंटेके भीतर भोजन नहीं करना चाहिये और ६ घंटेके बाद भी भोजन नहीं करना चाहिये।

इस निमयके अनुसार ऊपर कहे हुए समयपर भोजन करनेसे ही पूरी निद्रा आ सकती है। और पूरी निद्रा आनेसे हमारा स्वास्थ्य भी ठीक रह सकता है।

आहारशयनाब्रह्मचर्यैर्युक्तया प्रयोजितैः।
शरीरं धार्यते नित्यमागारमिव धारणैः॥

वाग्भट सूत्रस्थान, अ. ७

उचित रीतिसे किये गये आहार, निद्रा और स्त्री सेवासे शरीरकी पूर्ण रूपसे रक्षा होती है। तथा कुसमयमें ज़्यादा वा कम रूपसे सेवन किये आहार, निद्रा, और स्त्री सेवासे शरीर दिनपर दिन क्षीण होता है, और अन्तमें वह दिन आता है जब यह हमारा धर्म, अर्थ, काम, और मोक्षका एक प्रधान साधन, गहरे संसार समुद्रमें बड़े परिश्रमसे मिला हुआ, शरीररूपी अमूल्यरत्न, हाथसे निकल जाता है। इसलिए आहार आदिमें नियमोंका पालन करना चाहिये।

ग्रीष्म ऋतुमें, गर्मीकी अधिकतासे, शरीरमें वायुके बढ़ने तथा रुक्षताके होनेसे दिनमें दो घड़ी निद्रा लेना लाभदायक है, क्योंकि गर्मीकी वजहसे जो कफ़ कम हो जाता है उसकी कमी निद्रा पूरी करती है।

गर्मीको छोड़कर अन्य ऋतुओंमें दिनमें सोना हानिकर है। किन्तु गर्मी तथा अन्य ऋतुओंमें जिनके शरीर पढ़ने लिखनेसे, घोड़े वग़ैरहकी सवारी, सफ़र, मद्यपान, मैथुन, और कठिन परिश्रम, बोझा ढोनेसे सुस्त हैं, जो काम, क्रोध, शोक, भयसे दुखित हैं, जिनको दमा, हिचकी, दस्त, शूल, अजीर्ण आदि रोग हैं, जो तलवार वग़ैरहसे घायल हैं, प्यासे, बालक, बुड्ढे, कमज़ोर, चोट जिनको लगी हो, पागल, इत्यादिको सोना चाहिये। इन रोगियोंका दिनमें सोनेसे यद्यपि कफ़ बढ़ता है तो भी वह हानिकर नहीं होता क्योंकि वह बढ़कर धातुओंको समान और अंगोंको पुष्ट करता है।

धातु साम्यं तथा ह्येषां श्लेष्मा चांगानि पुष्यति।

वाग्भट सूत्रस्थान अध्याय ७

बहुतायतसे जो चिकने पदार्थ खाते हों, तथा जिनकी चर्बी तथा कफ़ बढ़ा हो उनको किसी भी ऋतुमें दिनमें सोना लाभदायक नहीं है।

जिन्हें गलेकी बीमारी है, या जिन्होंने विष खा लिया है, उन्हें न रातमें, न दिनमें सोना उचित है।

कुसमयमें शयनकरनेसे मूर्च्छा, ज्वर, ज़ुकाम, सुस्ती, शिरदर्द, सूजन, जिन रोम-छिद्रोंके द्वारा शरीरसे हानिकर पदार्थ निकला करते हैं उनका रुक जाना, अग्निमंदना आदि रोग पैदा होते हैं।

इनका इलाज यह है - उपवास करना, अथवा शरीर हलका होनेपर एक बार भोजन करना, वमन करना, पसीना लेना, सूंघनी सूंघना (तंबाकू नहीं किन्तु जो शिरदर्द आदि रोगोंमें रेचन आदि नस्य कहे गये हैं)।

जिस मनुष्यको ज़्यादा नींद आती है वह भी एक तरहका रोगी है, उसकी भी सूंघनी सूंघना, लंघन करना, चिन्ता करना, शोक, भय, क्रोध करना (ये तीनों काम दूसरेकी अपेक्ष रखते हैं) इत्यादिके द्वारा चिकित्सा करनी चाहिये।

भोजनके अपरिपाकसे, भूखसे, प्याससे, वा अन्य कारणोंसे जब मनुष्य रात्रिमें पूरी नींद नहीं ले पाता, तब शरीरमें दर्द, शिरका भारी होना, जंभाइयोंका आना, सुस्ती, ग्लानि, चक्कर आना, भोजनका न पचना औंघाई आदि रोग पैदा होते हैं।

यदि आवश्यक कार्यकी वजहसे रात्रिको जागरण करना ही पड़े तो दिनमें भोजन करनेके पहले जागरण कालसे आधा—जैसे यदि चार घंटे जागे हों तो दो घंटे—सोना चाहिये।

जिन मनुष्योंको निद्रा थोड़ी आती हो वा बिलकुल नहीं आती हो, उनकेलिए शरीरमें तैलकी मालिश करना, शरीरमें तैल मलना, उबटन करना, शरीरका दबवाना, कर्ण और आँखोंमें वातहर द्रव्य छोड़ना, स्नान करना, दुग्ध दहीका सेवन करना, संतोषसे वा बेफ़िकरीसे रहना, मुलायम और सुन्दर बिछौनेपर सोना, और ब्रह्मचर्यका पालना हितकर है।

तस्मान्न जागृयाद्रात्रौ दिवा स्वप्नंच वर्जयेत्।
ज्ञात्वा दोषकरावेतौ बुधः स्वप्नं मितञ्चरेत्॥

—सुश्रुत शरीरस्थान चतुर्थाध्यायः

जब कि स्वास्थ्य जीवन रत्न है और वह बहुत अंशोमें निद्रापर अवलंबित है, तो यह सब लोगोंका कर्तव्य होना चाहिये कि रात्रिमें पूर्ण रूपसे निद्रा लेवें और दिनमें सोना छोड़ देवें। क्योंकि यह बात हर तरहसे सिद्ध होती है कि दिनमें सोना और रात्रिमें जगना बहुत हानिकारक हैं।

---

## पौदोंके रोग

[ले० राधानाथ टन्डन, बी. एस-सी.]

### (१) विचारकी आवश्यकता

हमारे खेतोंकी आज जो दशा हो रही है वह और देशोंकी अपेक्षा अत्यन्त शोचनीय और हृदय विदारक है। ऐसी दुर्दशा सम्भवतः हमारे पूर्वजोंने न देखी होगी। इस दशाके प्रधानतया तीन ही कारण हो सकते हैं। पहला जलका अभाव, दूसरा देशकी निर्धनता और तीसरा अज्ञानता, पर ध्यानपूर्वक देखनेसे तो ज्ञात होता है कि अज्ञानता ही इन सबमें मुख्य कारण है। धनवानसे धनवान ज़मींदार भी पैदावारमें सफलता न प्राप्त कर अपने भाग्यको धिक्कारते हैं और कहते हैं कि ईश्वरने हमारे ऊपर कोप किया जिससे हमारी तिहाई पैदावार घुनों और कीड़ों आदिसे पीली काली होकर नष्ट हो गयी।

पौदोंके रोग नये नहीं हैं। यह कमसे कम उस कालसे चले आए हैं जब यूरपके बड़े बड़े वनस्पतिशास्त्र और रोगों और उनके इलाजोंके ज्ञानकी उत्पत्ति नहीं हुई थी। १६वीं या १७ वीं शताब्दीमें इटलीकी हालत भी वैसी ही थी जैसी आज इस देशकी है। वहाँके लोग भी वैसे ही अज्ञानी थे जैसे यहाँके। जब कभी पौदे पीले काले या लाल होकर नष्ट हो जाते तो उनको बीमारियोंका कोप न समझकर ईश्वरका कोप समझते थे। क्या कारण है कि आज अमेरीका और अन्य बड़े देश अधिक ठंडे होते हुए भी वह पैदावार दिखा रहे हैं, जो कदाचित हमारे देशमें भी, जहाँकी ज़मीन स्वभावसे ही उसकेलिए उपयुक्त है, नहीं देखने में आती? कारण स्पष्ट है। उन लोगोंमें विज्ञान-की वह भारी लहर बह रही है जिसका नाम भी हमारे अधिकांश लोग नहीं जानते। उन लोगोंने न केवल खेतोंकेलिए बड़े बड़े यन्त्र ही तय्यार किये, वरन् विज्ञानके द्वारा ही रोगों-के उन उन प्रचंड आक्रमणोंको रोका है, जिनका अब वहां नाम निशानतक देखनेमें नहीं आता। यदि हमारे पाठक और सर्वसाधारण लोग पौदोंमें अनेक रोगोंके हो जानेके कारणों और लक्षणोंको भली भांति समझ लें तो सम्भव है कि थोड़ेही कालमें अपनी बुद्धिका प्रयोगकर रोगोंको सहज ही निर्मूल कर दें और अपने देशके खेतोंकी गिरती हुई दशाको तुरन्त सम्हालें और उस उच्च श्रेणीकी दशामें पहुंचा दें, जिसका प्राचीन गौरव हमसे छिपा नहीं है।

(२) पौदोंके स्वास्थ्यकेलिए अच्छे भोजनकी आवश्यकता

सारे रोगोंके दो ही कारण हैं:— (१) निर्जीव और (२) सजीव, निर्जीवसे यहाँ अधिकतर तात्पर्य्य खनिज पदार्थ जैसे लोहा, पोटास, गन्धक, स्फुर आदिसे है। पौदोंका खाना पीना अधिकतर पृथ्वीसे ही मिलता है। केवल कर्बन या कोयला ही वायु-से लिया जाता है और सब पदार्थ पृथ्वी द्वारा ही मिलते हैं। "पौदोंके जीवन और स्वास्थ्यके मूल आधार" वाले लेखमें हम पहले दिखा चुके हैं कि पौदोंका रासायनिक विश्लेषण करनेसे उनमें निम्नलिखित मूलतत्व न्यूना-धिक पाए जाते हैं:—कर्बन, ओषजन, उज्जन, नत्रजन, गन्धक, स्फुर, केलसियम, पोटाश, माङ्गल, लोह, सोडियम, शिलाकण, हरिण और अयोडीन ( iodine )। इनमेंसे पहले दस मूलतत्व ही पौदोंकेलिए आवश्यकीय हैं, जिनके न होनेसे पौदोंमें अनेक रोग पैदा हो जानेका डर रहता है। यही कारण है कि पौदोंको सदा खाद देनेकी आवश्यकता होती है। पृथ्वीके प्रत्येक भागमें इन सब मूलतत्वोंका होना असम्भव है। किसी भागमें कुछ होते हैं, किसीमें कुछ और यदि इन भागोंमें पौदे उगाए-जाएं तो पाठक देखेंगे कि वे आवश्यकीय भोजन न पाकर रोगग्रस्त होकर मुर्झा जाते हैं। जैसे लोहेके न होनेसे पौदे पीले हो जाते हैं। उनमें क्लोरोफ़िल वा हरित-राग जो कि वनस्पतिका वह मुख्य हरा रस है जिसके द्वारा पौदोंको सूर्य्यसे अपना भोजन वायुसे खींच लेनेकी शक्ति मिलती है, लोहे बिना नहीं बनता। उसी तरह यदि पोटाश न हो तो मांड शर्करादि कार्बो-हैड्रेट कर्बोज्जोषित कदापि न बनें। इन बातोंसे अब मालूम हुआ कि पौदोंको नीरोग रखनेके-लिए उपयुक्त ज़मीनकी आवश्यकता है, जहाँ उन्हें भोजन और उनके स्वास्थ्यकेलिए सब पदार्थ अच्छी तरह मिल सकें।

(३) सरदी गरमीका प्रभाव

एक दूसरी बात जो इस विषयमें ध्यान देने-की है वह यह है कि पौदोंको खाना मिलते हुए भी सम्भव है कि किसी तरहके रोगसे स्वास्थ्य बिगड़ जाए, क्योंकि पौदोंकेलिए गर्मी सर्दी-का भी बिचार करना परम आवश्यक है। कुछ पौदे ऐसे हैं जो गरम देशमें ही हो सकते

हैं, ठंडेमें नहीं। चाहे जितना खाद पानी मिले जबतक उनका तापक्रम उतना ही न हो जितना कि उनकी निजकी भूमिमें रहता है, उनका होना असम्भव है। भिन्न भिन्न जलवायुमें कदापि नहीं हो सकते। यही बात है कि ठंडे देशोंके वैज्ञानिक अपने यहाँ गर्म देशोंके पौदोंको उगानेकेलिए गरम घर तय्यार कराते हैं। इसी कोशिशमें रहते हैं कि गर्म देशोंके पौदोंकेलिए अपने यहाँ भी वही गरमी दे सकें जो उन्हें स्वदेशमें मिलती है।

### (४) वनस्पतियोंके अचर शत्रु

पौदोंके रोगोंका दूसरा मुख्य कारण सजीव पदार्थ हैं। अधिकतर पौदोंके रोग सजीवों द्वारा ही उत्पन्न हुआ करते हैं। अतः इस महत्वपूर्ण कारणको यहाँ पूरी तरह दिखलाना आवश्यक है। सजीवोंमें भी दो भेद हैं (१) अचर और (२) चर। अचर सजीवोंसे तात्पर्य्य वानस्पतिक पदार्थोंसे है। वास्तवमें अधिकांश पौदोंके रोगोंके कारण नन्हें या बड़े वानस्पतिक पदार्थ ही हैं। इनके भी दो बड़े भेद हैं। (१) बेफूल और बेबीज पौदे जिनको अँग्रेज़ीमें क्रिपटोगम्स (cryptogams) कहते हैं और (२) फूल और बीजवाले पौदे जिनको फेनेरोगम्स (phanerogams) कहते हैं। १०० में ९९ रोग क्रिपटोगम्सके फँगाई अर्थात् घुआ नामक पौदोंसे होते हैं। भयंकरसे भयंकर रोग जो आज हमारे सामने दृष्टि गोचर हो रहे हैं और अपनी चढ़ाईसे सारे संसारमें हलचल मचा देते हैं इन्हीं बेफूल घुओंसे पैदा हुए हैं। घुओंके प्रकार क्रिप्टोगम्सके और प्रकारोंसे कहीं अधिक हैं। घुआ नामक पौदोंकी जातिमें एकसे एक विचित्र पौदे पाये जाते हैं जिनको भली भांति अध्ययन करनेसे प्रतीत होगा कि यह पौदे और पौदोंकी तरह नहीं हैं। फेनेरोगम्सके (phanerogams) पौदे और क्रिपटोगम्सके (cryptogams) और पौदे घुओंसे कहीं विशेष अन्तर रखते हैं।

घुओंमें सबसे महत्वकी बात तो यह है कि उनमें क्लोरोफ़िल वा हरित-राग नहीं होता जिससे अपना भोजन आप बना सकें। सो, यह अपने भोजनकेलिए स्वभावसे ही औरोंपर निर्भर रहते हैं। यह खाना प्रायः दो तरहसे पाते हैं। बहुतेरे सड़ते गलते आङ्गारिक (कर्बनजन्य) पदार्थोंसे सत खींचकर अपना निर्वाह करते हैं और अधिकांश मनुष्य, पशु, पौदों आदि जीवोंपर आक्रमण कर उनके सतपर गुज़ारा करते हैं। भोजन पाकर ऐसे वेगसे बढ़ते हैं, कि शीघ्रही अपने पोषकके अङ्ग अङ्गको छेंक लेते हैं रोगी कर देते हैं, अन्तको उसके प्राण ही लेकर पिंड छोड़ते हैं। अनेक प्रकारके रोग जो आज प्रचलित हैं जैसे प्लेग, हैज़ा आदि पौदोंके रोगोंकी तरह इन्हीं घुओंके आक्रमणसे होते हैं। घुए प्रायः एक कोषके बने होते हैं। बहुतसे तो हम प्रत्यक्ष भी देख सकते हैं पर अधिकांश इतने छोटे होते हैं कि बिना प्रबल अणुवीक्षणके दिखाई ही नहीं देते।

### (५) भोज्य वनस्पतियोंको लगनेवाले घुए

यों तो फ़ंगाई वा घुआ जातिमें कई बड़े विभाग हैं, पर इनमें दो ही महत्वके हैं। इन्हींमें प्रायः हमारे नित्य काम आनेवाले पौदोंके रोग वर्त्तमान हैं। बहुतसे रोग जो फूलदार वृक्षों और सबज़ियोंमें मिलते हैं उन घुओंसे होते हैं जो 'प्रोनोस्पोरी' (pronosporae) जातिके कहलाते हैं। पाठकोंने बहुधा देखा होगा कि जब आलुओंको किसी ऐसी कोठरीमें बन्द कर दिया जाता है जहां हवा रोशनी आदि बिलकुल नहीं पहुँचने पाती तो उनमें तुरन्त ही रोग हो जाता है जिससे थोड़े ही दिनोंमें गन्धाने लगते हैं, अन्ततः सड़कर नष्ट हो जाते हैं और उन्हें कहीं दूरपर म्युनिसिपल्टीके हदके बाहर ही फेंकना पड़ता है। इनका यह रोग 'फैटापथोरा'

(phytapthora) नामके घुएसे हो जाता है जो इसी 'प्रोनोस्पोरी' के घरानेमेंसे है। इसी तरह पैथिअम (pythium) सिसटोपस (cystopus) आदि घुए भी इसी घरानेके होकर अच्छे बीजों और पौदोंपर चढ़कर उनको नष्ट कर देते हैं।

घुओंका रूप और वृद्धि

घुए बहुधा एक कोषके होते हैं। इस वाक्य-से यह न समझना चाहिये कि एक कोषके होनेसे वे गोलाकार, अन्डाकार आदि सूरतके ही हो सकते हैं और धागेकी तरह लम्बे नहीं। यदि अणुवीक्षणद्वारा देखा जाय तो मालूम होगा कि अधिकतर घुए बहुत महीन धागोंकी तरह एक दूसरेके ऊपर लिपटे होते हैं। यदि एक रोटी कुछ गीली करके बन्द स्थानमें रख दी जाए तो कुछ दिनोंमें पाठक देखेंगे कि मकड़ोके जालेकी तरह महीन महीन तार रङ्ग बिरङ्गके जगह जगह देख पड़ते हैं। यही बारीक तार घुए हैं। 'फैटाप-थोरा' (phytopthoya) और पैथिअम (pythi-um) आदि भी इसी तरह सूक्ष्म धागोंके समूह हैं। 'फैटापथोरा' के धागे आलूके कोषोंकी एक एक दीवारपर चिपटे हुए देख पड़ते हैं। अणु-वीक्षणद्वारा यह भी दीखेगा कि कहीं कहीं धागों-की बहुत सी शाखाएं होकर कोषोंके भीतर प्रवेश करती हैं जैसा नीचेके चित्रसे ज्ञात होता है।

आलूका कोष
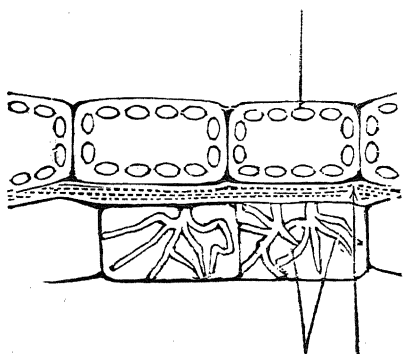
धागेकी शाखाएं फटापथोराका|एक धागा

चित्र १

इन्हीं शाखाओंद्वारा घुए कोषोंसे अपना भोजन खींचते हैं। इसके धागे कहीं कहीं फूल-कर गोल गेंदोंकी तरह हो जाते हैं इनमें बहुत दानेसे होते हैं, जो अणुवीक्षणद्वारा ही दीखते हैं। यह दाने घुएकी होनहार सन्तानके बीज समझे जाने चाहिएँ जिन्हें अंग्रेज़ीमें स्पोर्स कहते हैं। जब गेंदे पककर फूट जाते हैं तो दाने बहुत हलके होनेके कारण बाहर निकलकर इधर उधर हवा-में उड़ते रहते हैं और आलूपर पड़कर नये धागों द्वारा औरोंको भी रोगग्रस्त कर देते हैं। इनमें भी फिर दाने बनते हैं। इसी तरह इनकी आबादी बडे बेगसे बढ़ती जाती है।

अनाज या बीजोंका भी यही हाल होता है। अंधेरी और तर जगहमें जहां रोशनी हवा आदि नहीं पहुंचने पाती बीज रख दिये गये तो थोड़े ही दिनोंमें पीले होकर मुरझा जाते हैं और धीरे धीरे बिलकुल काले पड़कर नष्ट हो जाते हैं। इन बीजोंका यह रोग उक्त "पिथियम" द्वारा होता है। सेमके बीजोंमें यही रोग अधिक देखा जाता है। इसके घुए भी औरोंकी तरह महीन धागेदार होते हैं। इसे अणुवीक्षणसे देखनेसे मालूम होता है कि इसमें बहुत बारीक दानेसे होते हैं और साथ ही साथ तेलके अणु भी अगणित दीखते हैं। जब भोजन कम हो जाता है तो यह तेलके अणु घुलकर इसके भोजन बन जाते हैं। इसकी रचनापर विशेष ध्यान न देकर पाठकोंको बस यही दिखलाना है कि यह घुआ भी औरोंकी तरह अपना भोजन बीजोंसे लेकर बढ़ता बढ़ाता है। इसमें भी उसी तरह बारीक दानेदार बीज बनते हैं जैसे कि 'फैटापथोरा' में। जब गेंद फूट जाता है दाने निकलकर वायुमें उड़ते रहते हैं और पौदोंपर पड़कर उनमें रोग पैदा कर देते हैं, जिससे वह रोग इन बीजोंसे निकले हुए पौदोंतकमें फैल जाता है और पौदे नष्ट हो जाते हैं। इन बातोंसे अब पाठकोंको याद रखना चाहिए कि आलू आदि भाजियोंके पदार्थ ऐसे

स्थानपर रक्खे जायँ जहां उन्हें रोग न होने पावे। अर्थात उनकेलिए एक ऐसा स्थान हो जहां उन्हें हवा और रोशनी मिलती रहे। और उस स्थानमें सील, तरी या अंधेरा न हो क्योंकि घुए रूपी शैतानको अँधेरा और सील ही प्रिय है, वहीं रहता और बढ़ता है, और सूखे तथा रोशनीसे भागता है—उसका नाश हो जाता है।

---

## मदिरा

[ लेखक—रामस्वरूप भार्गव बी. ए. ]

रसायनके संसारमें मदिरा नामकी एक जाति है जिसकी जन संख्या नित्यप्रति बढ़ती ही जाती है, इन सबमें सजातीय होनेके लक्षण पाये जाते हैं, परन्तु परीक्षा करनेसे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि यह भिन्न भिन्न वस्तुएँ हैं, और इनके बहुतसे गुण अपने हैं। इन सबका सरनाम सजातीय होनेके कारण मदिरा रक्खा गया है। इस जातिमें कई गोत्र हैं, जिनमें सर्वोत्तम वह है जिसके व्यक्तियोंके नाम ईलपर ख़तम होते हैं। इनके नाम मिथाईल मदिरा, ईथाईल मदिरा, प्रोपाईल मदिरा इत्यादि हैं।

इस गोत्रकी मदिराओंमेंसे इथाईलका यश संसारमें छा रहा है। कोई भी मनुष्य इस संसारमें न होगा जिसने इसकी चरचा न सुनी हो, इसका परिचय आज हम आपको भली भांति कराना चाहते हैं। इसके साधारण नाम शराब, मदिरा, वारुणी, इत्यादि हैं। यही रूप रूपान्तर में ह्विसकी, बीअर, ब्रांडी, पोर्ट होकर दृष्टिगोचर होती है। फ़ारसी कवियोंने तो इसकी तारीफ़में ग्रन्थके ग्रन्थ लिख डाले हैं। उनकी कविता इसके स्मरण किये बिना एक क़दम भी नहीं बढ़ती। हिन्दुओंमें भी यद्यपि इसके सेवक थोड़े थे तदापि जिस पद्वीपर उन्होंने [ शाक्तिकोंने ] इसे पहुंचाया, वह पद्वी कभी किसी वस्तुको प्राप्त न होगी।

देखनेमें यह स्वच्छ निर्मल द्रव है, जो पानीसे अधिक तेज़ीके साथ भाप बनकर उड़ जाती है। इसमें सुहावनी भीनी भीनी सुगंधि भी होती है परन्तु यह वस्तु विलक्षण है। इसे कवियोंसे अपने गुणोंके वर्णन करानेका ही सौभाग्य नहीं प्राप्त हुवा, परन्तु मनुष्योंका बहुत कुछ बुरा भला सुनना पड़ा है।

यदि मनुष्य अपनी आत्म निर्बलताके कारण अपने दुःखोंके भूलनेकेलिए मदिराका आश्रय लेता है तो इसमें मदिराका क्या अपराध है? यदि हीरेका कण खाकर कोई मनुष्य आत्मघात कर ले तो इससे हीरेका आदर संसारमें कम न हो जायगा। जो स्वातिकी बून्द सीपीमें मोतीको पैदा करती है, वही सर्पके मुखमें हलाहल विष बना देती है। जिस मदिराका पान करके इतिहासके बड़े बड़े वीरताके काम हुए हैं उसी मदिरासे शक्ति पाकर मनुष्य बड़े बड़े घृणित कार्य्य भी कर डालते हैं।

परन्तु इसमें दोष मनुष्यकी प्रकृतिका है, मदिराका नहीं। यदि संसारकी नदी और नालोंमें मदिरा बहने लगती तो थोड़ेही कालमें इन अयोग्य पुरुषोंकी छांट हो जाती और फिर हमें मदिरासे किसी प्रकारकी हानि पहुचनेकी आशंका न रहती। परन्तु यह याद रखना चाहिये कि जो मनुष्य एक प्रकारसे अयोग्य हैं वह किसी और तरहसे संसारका बड़ा उपकार कर सकते हैं। इसीलिए सदासे मदिराको बुरा समझते आये हैं और इसके बनानेमें यथाशक्य रुकावटें पैदा करना ही उचित समझा गया है।

संसारकी सब सरकारें इसे नशीली वस्तु समझकर इसके बनानेवालोंपर महसूल लगाती हैं। पहले तो यह अभिप्राय था कि यह मंहगी हो जायगी और लोग कम पियेंगे। अब यह सिद्ध

Chemistry रसायन ]

हो चुका है कि चाहे जितना कर बढ़ाया जाय इसकी खपत कम नहीं होती।

ह्विसकी आदि शराबोंमें इथाईल मदिराका बहुत कम अंश रहता है। इन वस्तुओंको भपके-पर चढ़ानेसे जो अर्क़ उतरे, उसमें इथाईलकी मात्रा अधिक बढ़ जायगी। इस प्रकार कई बार निश्कर्ष करनेसे जो मदिरा प्राप्त हो, उसमें चूना बुझायें तो जितना पानी कि मदिरामें होगा उसे चूना सोख लेगा। फिर यदि इस मदिराका निष्कर्ष करें तो शुद्ध मदिरा मिल जायगी। इसके गुण बड़े अद्भुत हैं। उपयोगितामें पानीके बाद इसको ही समझना चाहिये। प्रायः जितनी वस्तुएं सभ्य देशोंमें काममें लाई जाती हैं उन सबके बनानेमें इस मदिराका प्रयोग होता है। शिल्पमें मदिराकी घोलक शक्तिसे लाभ उठाया जाता है, घोलकोंमें पानीके बाद इसकी ही गणना है। साधारण रोग़नों और वारनिशोंमें लाखके गलानेकेलिए यही मदिरा काममें लाई जाती है। मेज़, कुर्सी छाते जूते इत्यादि सभी वस्तुओंके बनानेमें, जिनपर रोग़न किया जाता है, इसकी आवश्यकता होती है। कुछ वस्तुओंके बनानेमें इस बातकी आवश्यकता पड़ती है कि उनके हिस्से चिपककर जुड़ जायँ और अपने स्थानों पर क़ायम रहें। यह काम भी मदिरामें घुली हुई लाख देती है। सांचेमें ढाली हुई ग्रेफ़ाइट-को (कोयले) यह लाखका घोल जकड़े रहता है। विद्युत् यंत्रोंमें प्रायः रेशमसे ढके हुए तारकी पिंडियां भी इससे ही जकड़ी रहती हैं और यह घोल उनकी तहोंमें प्रवेशकर तारोंको एक दूसरेसे अलग रखता है।

इसी प्रकार हैट, रेशमी टोपियां इत्यादिके बनानेमें यह घोल काममें आता है। लेकर जिससे धातुकी बनी हुई वस्तुओंका रंग, रूप, सभी ठीक रहता है, इसी मदिरासे बनता है। पियानों, और हार्मोनियमके परदे बिलियर्डकी गेदें, कंघे, गुड़ियाओंके सर, नक़ली हाथीदान्त-की ( celluloid ) बनी हुई चीज़ें, अनेक प्रकार-के विस्फोटक, ईथर क्लोरोफ़ोर्मादि औषधियां, नक़ली रंग, नक़ली रेशम, इत्यदि उपयोगी वस्तुओंके बनानेमें यही मदिरा या उससे प्राप्त ईथर काममें लाया जाता है।

---

## लल्लू तिवारी और बिजलीसे बातचीत

### गताङ्कसे आगे

[ ले० गंगाप्रसाद बाजपेयी, बी. एस-सी ]

चुम्बक और बिजली सम्बन्धी प्रयोग दिखलाकर पंडितजीने कहा "इससे स्पष्ट रहे कि बिजली और चुंबकमें अवश्य कुछ न कुछ संबंध है। यदि हम तारोंको चरख़ी-पर चढ़े हुए सूतकी तरह लपेटकर एक कुंडलि-का बना लें और इस कुंडलिकाके दोनों सिरे बाटरीसे जोड़ दें तो कुंडलिकामें होकर बिजली-की धारा बहने लगेगी। यदि बिजलीकी धारा बहानेके पहले कुंडलिकाके बीचमें एक लोहेकी छड़ लटका दी जाय तो कुछ समयतक बिजली-की धारा चलनेके बाद छड़में चुम्बकके गुण आ जायँगे।

इसके अनंतर पं० जीने दो एक बड़े महत्व-के प्रयोग दिखलाये। एक लकड़ीके खोखले चरख़ेपर उन्होंने रेशमसे लपेटे हुए कुछ पतले-पीतलके तारकी कुंडलिका बनायी। इन तारोंके ऊपर मोटे तारोंकी एक कुंडलिका फिर बनायी गयी। यह कुंडलिका भी पहलेके भांति रेशम-से लपटी हुई थी। इस कुंडलिकाके सिरे दो पेचोंसे कसे हुए थे और इन पेचोंसे लगे हुए तार एक विद्युन्मापकसे ( गैलवेनोमीटर ) जुड़े थे। दूसरी कुंडलिकाके तारोंके सिरे दूसरे और दो पेचोंसे कसे थे जिनके तार एक बाटरीके सिरों-से जुड़े थे। बाटरीसे मिले हुए इन तारोंमेंका वह तार जो बाटरीके तांबेके पत्रसे जुड़ा था

Electricity विद्युत् शास्त्र ]

सीधा पेंचसे नहीं जुड़ा था। किंतु पेंचसे आने-वाला तार तो एक तख़्तेपर पीतलके पत्तरमें लगी दूसरी घुंडीमें लगा था। यह घंडी उठी हुई थी। घुंडीके नीचेही एक और पीतलका टुकड़ा था जो नीचेसे तार द्वारा बाटरीके तांबे-के पत्तरसे मिलाया गया था। इस प्रकार जब घुंडी दबाकर पत्तरसे मिला दी जाती थी तो बिजलीकी धारा बाहरी कुंडलिकामें बहने लगती थी और जब घुंडी छोड़ दी जाती थी धारा रुक जाती थी।
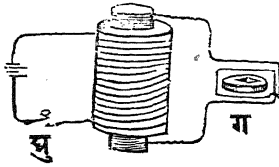
घु–घुंडी: ग-विद्युन्मापक
चित्र नं० १

पं० जीने घुंडी दबायी घुंडी दबाते ही विद्युन्मा-पककी सूई एक तरफ़ हटी, घुंडी छोड़ते ही वह दूसरी ओर हट गयी। पं० जीने कहा देखो पहली ( भीतरी ) कुंडलिकामेंसे कोई बिजली-की धारा बाटरीसे नहीं आती, पर विद्युन्मा-पकसे मालूम होता है कि बाहरी कुंडलिकामें धारा बहनेके कारण इसमें भी एक धारा बहने लगी है। इससे पता लगता है कि बाहरी कुंडलिकामें धारा बहते समय भीतरी कुंडलिका-में एक धारा उलटी ओरसे बहने लगती है और बाहरी कुंडलिकामें धारा रुकते समय भीतरी कुंडलिकामें धारा उसी दिशामें बहने लगती है, जिसमें रुकनेके पूर्व बाहरी कुंडलिकामें धारा बह रही थी। जो कुंडलिका बाटरीसे जुड़ी रहती है उसको मुख्य कंडलिका और जो विद्युन्मापकसे जुड़ी रहती है उसको गौण कुंडलिका कहते हैं। दोनोंको मिलानेसे कुलका नाम उत्पादक कुंडली induction coil हो जाता है। इसके बाद पंडितजीने एक दूसरी चरख़ी उठायी जिसमें कोई २०० या ३०० गज़ तार एक ही कंडलिकामें लपेटा था। यह कुंडलिका पूर्ववत विद्युन्मापकसे लगायी गयी और एक बड़ा भारी चुम्बक इस चरख़ीके भीतर लाया गया*। चुम्बकके लातेही विद्युन्मापककी सूई एक ओर हटी चुम्बक उठानेपर वह दूसरी ओर हट गयी। परंतु चुंबक यदि देरतक एकही स्थानमें रक्खा रहा तो सूई अपने पूर्व स्थान पर आ गयी और वहीं बनी रही पर जब चुंबक ऊपर नीचे हटाया जाने लगा तो विद्युन्मापककी सूई भी कभी एक ओर और कभी दूसरी ओर हटने लगी। फिर चुंबक तो एक ही स्थानपर रक्खा गया पर कुंडलिका ऊपर नीचे उठायी जाने लगी अबकी बार भी विद्युन्मापककी सूई कुंडलिकाके ऊपर जाते समय यदि एक तरफ़ हटती थी तो उतरते समय दूसरी तरफ़।

( ७ )

इसके बाद पं० जीने कहा "इन प्रयोगोंसे यह स्पष्ट है कि यदि हम तारोंके एक ऐसे बंद मार्गको जिसमेंसे बिजलीकी धारा बह सके किसी ऐसे स्थानमें जहांपर चुम्बकका प्रभाव पड़ सके घुमायें तो तारमें बिजलीकी धारा बह चलेगी। यदि एक बंद गोल तारको हम बड़े बेगसे पृथ्वीमें ही घुमाते रहें तो पृथ्वीकी चुंबक शक्तिके कारण तारमें बिजलीकी धारा कुछ परिश्रमके बाद बहने लगेगी। इन्हीं प्रयोगोंके आधारपर वैज्ञानिकोंने बड़े बड़े चमत्कार किये हैं। जल-शक्तिसे ऐसे ही विद्युतमार्ग (circuit) घुमा घुमाकर और उचित प्रबंध-कर बिजलीकी धारा निकाली है। यदि हम एक सर्पिलकुंडली रक्खें और उसके आगे एक

*कुंडलिका और चुम्बकके चित्र विज्ञान भाग ३संख्या १,पृष्ठ ३१, चित्र नं०४ में दिये हुए हैं इसलिए यहां फिर चित्र देना व्यर्थ है। पाठक महोदय उसको एक बार फिर पढ़ लें।

ऐसे ही मार्गको घुमावें तो इस पृथ्वीके चुम्बक क्षेत्रमें घुमानेके कारण मार्गमें बिजलीकी धारा बहेगी, इस बिजलीकी धाराके कारण सर्पिलमें भी न्यूनाधिक विद्युत्धारा बहेगी। इस धाराके बलपर छड़में चुम्बक शक्ति अधिक हो जायगी, चुंबक शक्तिके कारण सर्पिलकुंडलीमें धारा बढ़ जायगी, सर्पिलकुंडलीमें धारा बढ़नेसे विद्युन्मार्गमें भी एक बड़ी धाराका प्रवाह होगा और इस प्रकार एक दूसरेकी सहायता करते हुए बहुत काल तक विद्युत्धारा पैदा करते रहेंगे। विद्वानोंने इसी धाराका सदुपयोग करके अनेक चमत्कार किये हैं। यदि एक स्थानका विद्युन्मार्ग दूसरे स्थानके सर्पिलकुंडलीसे लगा हो तो उस कुंडलीमें विद्युत-शक्ति आ जायगी और वह विद्युन्मार्गमें रक्खे हुए लोहेको अपनी ओर खींचने लगेगा उसके इस खिंचावसे लोहा ( armature ) ऊपर नीचे उसी प्रकार चलेगा जिस प्रकार पहले स्थानका विद्युन्मार्ग चलता है क्योंकि बिजलीकी धारा पहले स्थानके विद्युन्मार्गकी गतिपर निर्भर है। और दूसरे स्थानके लोहेकी गति इस विद्युन्मार्गपर। इसीका उपयोग कर लोगोंने मोटर,ट्राम इत्यादि बना डाले हैं। यहांकी उत्पन्न की हुई विद्युत्शक्तिसे हम हज़ारों मीलकी दूरीपर काम ले सकते हैं।

जिस समय पं० जी यह व्याख्यान दे रहे थे उस समय लल्लू ऊंघ रहा था। इसी कारण विज्ञानके पाठकोंके सामने बहुत सी बड़ी बड़ी बातें दो ही चार शब्दोंमें कह डाली गयी हैं। यदि उन्हें इन बातोंको अच्छी तरह समझनेकी रुचि होगी तो फिर किसी जागते हुए मनुष्यकी कहानीमें सुनाया जायगा। पर हां इसके बाद जो कुछ घटना हुई उसमें लल्लू बड़े बड़े कान खोले और आंखें फाड़े जग रहा था अतः अब उसका ही कुछ वर्णन किया जायगा।

( ८ )

व्याख्यान समाप्त हो गया। श्रोतागण उठकर चले गये पर लल्लू वहीं बैठा ऊंघता रहा। जो लोग बाहर निकलते एक बार लल्लूपर अवश्य हंस लेते। यह दशा देखकर इंस्पेक्टर दयारामने लल्लूको एक धक्का दिया। लल्लू भौचक्का होकर इधर उधर देखने लगा। पं० शालग्रामजीने मुसकराकर पूंछा "कहो लल्लू ! क्या व्याख्यान तुम्हारे पसंद नहीं आया ?" लल्लू ने उत्तर दिया "नहीं ! व्याख्यान तो अच्छा था पर इतनी देरतक ध्यान लगाकर सुननेसे सर घूम गया था और नींद आ गयी थी"। पंडितजीने पूंछा कि तुम कहाँतक समझ गये हो। लल्लू ने कहा कि हम आपके चुंबक और सर्पिलकुंडलिकाके प्रयोगतक सब समझते रहे हैं बादको हमें नहीं मालूम आपने क्या कहा"।

पं०—देखो यह एक विद्युन्मार्ग है जिसमें 'ब' बाटरी,'घ' घुन्डी, वि. चु. विद्युत-चुम्बक और 'ल' लोहा ( armature ) है जैसा दिये हुए चित्रसे प्रकट होता है। जब जब घुन्डीके दबानेसे विद्युन्मार्ग बंद कर दिया जाता है वा मिला दिया जाता है तब तब लोहा विद्युत-चुम्बककी ओर खिंच आता है। जिस बलसे लोहा खिंचता है वह भी निश्चित रहता है। यदि एक पतले तारकी कुंडली 'प्र' विद्युन्मार्गमें लगा दी जाय तो प्रतिरोधके बढ़ जानेसे बिजलीका बल कम हो जायगा और लोहा कम खिंचेगा। इस प्रकार प्रतिरोधको घटा बढ़ा देनेसे विद्युद्धाराका बल बढ़ या घट सकता है जिसके बढ़ने वा घटनेसे विद्युत् चुम्बककी ओर लोहेका खिंचाव
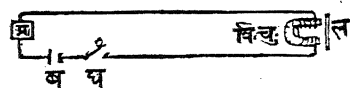
ब-बाटरी घ-घुंडी वि-चु-विद्युत चुम्बक ल-लोहा
चित्र नं० २

अधिक वा कम हो जायगा। ठीक यही बात टेलीफ़ोनके विद्युन्मार्गमें पायी जाती है अर्थात् एक स्थानके टेलीफोन-यंत्रके संचारक में (trans miter) बोलनेसे जो कम्पन वायुमें उत्पन्न होते हैं उनसे विद्युन्मार्गमें बहनेवाली धाराके बलमें वैषम्य होता है जिससे दूसरे स्थानवाले टेलीफोनके प्रतीच्छक वाले (receiver) लौह पटमें (diaphragm) भी वैसे हो कम्पन होनेसे, बोली यथावत सुनायी पड़ने लगती है।

सिद्धान्त समझ लेनेपर अब उस यंत्रकी बनावटका समझना बहुत कठिन नहीं है जिसका चित्र यों है: इस विद्युन्मार्गमें 'स' सूक्ष्म-

चित्र नं० ३
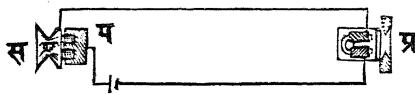
स्वरसंचारक (microphone transmitter) 'छ' लौह छिद्रपट, 'प' कर्बन पिंड और 'प्र' प्रतीच्छक है। कर्बन पिंडमें बाटरीका एक तार लगा हुआ है। इस पिंडमें छोटे छोटे खोखले स्थान हैं जिनमें कर्बनके कण भरे रहते हैं। इसी कर्बन पिंडके सामने पास ही कर्बन वा लोहेकी एक पतली चकत्ती 'छ' जड़ी है जिसको छिद्रपट कहते हैं। छिद्रपट और कर्बन पिंडके बीचमें फ़ेल्टकी गद्दी लगी रहती है, यह गद्दी केवल उन खोखले स्थानोंको नहीं ढकती जिनमें कर्बनकण भरे रहते हैं। प्रतीच्छकको जानेवाला तार इसी छिद्रपटमें जुड़ा रहता है इसीसे बाटरीकी विद्युद्धाराको कर्बनपिंडसे छिद्रपटतक पहुंचनेमें कर्बनकणसे ही जाना पड़ता है। ऐसी धाराएं प्रतीच्छकके स्थायी नाल-चुंबकपर लपेटी हुई कुंडलोके चारों ओर बहती हैं। इस नाल-चुम्बकके ध्रुवोंके सामने पास ही एक लोह छिद्रपट जड़ा रहता है परन्तु इतना पास नहीं रहता कि चुम्बकसे खिंचकर छू जाय।

जिस समय संचारकके मुंहके सामने कोई बोलता है वायुमें कम्पन होने लगता है जिससे छिद्रपटमें भी असमान कम्पन होने लगता है क्योंकि भिन्न भिन्न स्वरोंके कारण वायुकम्पन भी भिन्न भिन्न परिमाणका होता है। छिद्रपटके असमान कम्पनसे यह असमान भावसे कर्बन कणोंको छूता है अर्थात् जब कम्पन बड़ा होता है छिद्रपट कर्बनकणोंसे अच्छी तरह छू जाता है और जब छोटा होता है कम छू जाता है। पहली अवस्थामें विद्युन्मार्गका प्रतिरोध बहुत कम हो जाता है और धारा अधिक बलसे प्रतीच्छकके चुम्बकके चारों ओर बहकर वहांके छिद्रपटमें इसी प्रकारका कम्पन उत्पन्नकर देता है जैसा संचारकके छिद्रपटमें वायुके कम्पनसे हुआ था। दूसरी अवस्थामें अथवा जब छोटा कम्पन होनेसे छिद्रपट और कर्बनकण तनिक स्पर्श करते हैं प्रतिरोध बढ़ जाता है और धाराका बल कम होनेसे प्रतीच्छकके छिद्रपटमें छोटा कम्पन होता है जिससे छोटे कम्पनवाला स्वर पैदा होता है। यह बेगवती और असमान बलवाली धाराएं उस बलको भी असमान कर देती हैं जिससे प्रतीच्छकवाला चुम्बक उस पतले छिद्रपटको खींचकर कंपित कर देता है और अंतमें प्रतीच्छकके सामनेकी वायु भी कंपित होकर कर्णछिद्रपटमें धक्का पहुंचाकर शब्दका बोध कराती है अर्थात बोलनेसे वायुमें जो कम्पन उठता है वही विद्युतद्वारा दूरके छिद्रपटतक पहुंचा दिया जाता है जो वायुमें वैसा ही कम्पन छोड़कर कानतक पहुंचा देता है।

यही टेलीफ़ोनका मूल सिद्धान्त है। परन्तु व्यवहारमें उपरोक्त सामग्रीसे काम नहीं चलता, क्योंकि दूरतक जानेमें कम्पन इतना सूक्ष्म हो जाता है कि उसके सुननेसे कुछ बोध नहीं होता,

जैसे बहुत दूरका बोला हुआ शब्द नहीं सुनायी पड़ता। इनको इतना बढ़ानेकेलिए कि सुनकर बोध हो सके एक उत्पादक कुंडली (induction coil) और लगायी जाती है। ऐसा करनेसे पूर्ण यंत्रकी आकृति चित्र ४ की नाईं हो जाती है।

चित्र ४ से प्रकट होता है कि प्रत्येक स्थानके यंत्रके पास उत्पादक कुंडलीकी मुख्यकुंडली, है जो संचारक और बाटरीके साथ एक विद्युन्मार्गमें जुड़ी हैं और उत्पादक कुंडलीकी गौण कुंडली, प्रतीच्छक और मार्गतार (line wire) एक साथ लगे हुए हैं। यह भी याद रहे कि मुख्यकंडली मोटे तारकी थोड़ी सी लपेटोंकी बनी हुई है, जिससे प्रतिरोध बहुत कम हो परन्तु गौण कुंडलीका तार बहुत बारीक है और इसमें बहुत सी लपेटें हैं।
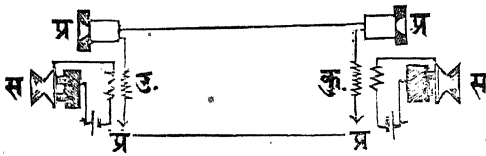
चित्र नं० ४

जब कोई मनुष्य संचारकमें स बोलता है कर्बनकणोंमें भिन्न भिन्न परिमाणका प्रतिरोध होनेके कारण विद्युन्मार्गमें असमान बलकी धाराएं उत्पन्न होती हैं जिनसे उत्पादक-कुंडलीकी मुख्य कंडलीमें विषम तरङ्गें उठती हैं। ठीक ऐसी ही तरंगें गौण कुंडलीमें भी उठने लगती हैं जो बारीक तारके बहुत सी लपेटोंमें पड़कर दबावसे बहुत गम्भीर हो जाती हैं। इस भांति मार्ग-तारके द्वारा दूसरे स्थानके प्रतीच्छकमें इनका बहुत भारी प्रभाव पड़ता है और बोलनेसे जो पहले शब्द-कम्पन हुआ था वह साफ़ साफ़ सुन पड़ता है।

इस चित्रमें यंत्रका वह अंग जिसमें दूसरे स्थानवालोंको कहनेकेलिए पुकारते हैं नहीं दिखलाया गया है। यह विद्युत घंटी है जिसका वर्णन विज्ञान भाग २ संख्या ४ पृष्ठ १६७, १६८ चित्र ४,५ में पूरी तरह किया गया है इसलिए यहां दुहराना व्यर्थ है। जब टेलीफ़ोन कुछ काम नहीं करता रहता, प्रतीच्छक एक खूंटीमें लटका रहता है जिससे बोलनेवाला विद्युन्मार्ग टूट जाता है और घंटीवाला विद्युन्मार्ग बन जाता है जिससे जब दूरवाले स्थानपर बटन दबाया जाता है पुकारनेवाला मार्ग पूर्ण हो जाता है और पासकी घंटी बजने लगती है। इसपर जब सुननेकेलिए खूंटीसे प्रतीच्छक उठाते हैं खूंटी एक कमानीसे खिंच जाती है और घंटीवाला विद्युन्मार्ग टूट जाता है और बोलनेवाला मार्ग बन जाता है। मार्ग अपने आप टूटता और बनता है और एक ही मार्गतार घंटीबजाने और बोलनेकेलिए पर्य्याप्त है। टेलीफ़ोनोंकी बनावटमें भिन्नता होती है परन्तु सबका साधारण सिद्धान्त यही है।

पंडितजी जब इतना कह चुके तब लल्लूने कहा अब मुझे टेलीफ़ोनमें बोलकर सुनाइए आवाज़ कैसी निकलती है और घंटी कैसे बजती है। पंडितजीने एक चुंगला अपने हाथमें ले ली और एक लल्लूको दिया और उससे कहा कि तुम बड़ी दूर जाकर इस डब्बेके खुले मुंहको अपने कानमें लगा लेना। दोनों डब्बोंके निकले हुए तारोंको पंडितजीने मिला दिया। लल्लू बड़ी दूर चला गया। पं० जी इस डब्बेके खुले मुंहमें अपना मुंह लगाकर बातचीत करने लगे।

पं० जी—"लल्लू जब तुम्हें बातें करनी हों तो तुम अपना मुंह इस डब्बेके मुंहके सामने करके खूब ज़ोरसे चिल्ला देना और जब बातें सुननी हों तब अपना कान इसके सामने लगाना"।

थोड़ी देर बाद पं० जीको आवाज़ सुनायी दी "महाशयजी आप तो बड़े मज़ेकी बात करते हैं यदि आप मेरी बातको सुनलें तो हां कह दीजियेगा" थोड़ी ही देरमें लल्लूको "हां"की आवाज़ सुनायी दी।

पंडितजीने लल्लूको ओर दूर बरामदेमें खड़ाकर दिया और दोनोंमें बातचीत होने लगी। थोड़ी ही देरमें पीछेसे बड़ी ज़ोरसे हंसीकी आवाज़ आयी। लल्लूने घूमकर देखा तो इंस्पेक्टर दयाराम चिल्ला रहे थे। "लल्लू इस अंधेरी रातमें तुम अकेले क्या चिल्ला रहे हो क्या पागल तो नहीं हो गये हो। तुम्हें देखकर कोई अनाड़ी आदमी तो भूत जानकर डर जाय"। इन वाक्योंने लल्लूकी स्मृतिको जाग्रत कर दिया। एक ही क्षणमें उसके आंखोंके सामनेसे उस रातकी भयानक घटना गुज़र गयी। दृढ़तापूर्वक लल्लूने कहा "दरोग़ा साहेब हम तो आपको उस रात ऐसे ही पागलोंकी तरह चिल्लाते देखकर भूत समझ बैठे थे। क्या आप भी ऐसाही खेल खेल रहे थे ?" दरोग़ा साहबने कहा "चलो लल्लू घर चलें रास्तेमें बातें करेंगे"।

(६)

दरोग़ाजीने कहा "लल्लू मैं खेल नहीं खेलता था। उस रातको एक बड़ी भयानक घटना हो गयी थी। एक बड़े भारी डाकूने आकर एक महाजनके ५० हज़ार रूपये लूट लिये थे। मैंने उसका पीछा करनेकेलिए थानेदारोंको ताकीद की थी, पर उनसे कहा था कि जहांतक हो सके उसे जीता ही पकड़ लायँ, मार न डालें। मैं स्वयं पीछा करनेको जानेवाला था पर इतनेमें तुम भूत ! भूत ! कह कर गिर पड़े। तुम्हारे कारण मुझे रुक जाना पड़ा"।

## मोमके सफ़ेद करनेकी रीतियां

[ले० मुख़्त्यारसिंह वकील,मेरठ]

(१) सेर भर मोम लेकर आगपर एक बरतनमें पिघलाओ। जब मोम पिघल जाय तो उसमें १ छटाँक बारीक पिसा हुवा शोरा भली भांति मिला दो। अब आध पाव गंधकका तेज़ाब लेकर उसमें $1\frac{1}{4}$ पानी मिलाकर यह तेज़ाब मिला पानी धीरे धीरे मोमवाले पात्रमें डालते जाओ। जब यह अच्छी प्रकार मिल जाय तो थोड़ी देरके पश्चात गरम खौलते हुये पानीसे पात्रको भर दो और ठंडा होने दो। ठंडा होनेपर मोम सफ़ेद रंगका होकर ऊपर तैर आवेगा। अब इस मोमको ऊपरसे उतारकर पानीसे खूब धोओ ताकि तेज़ाबका प्रभाव बिलकुल जाता रहे। यदि मोमको भली भांति न धोया गया और तेज़ाबका कुछ अंश बाक़ी रह गया तो मोम फिर पीला हो जायगा।

(२) मोमको पिघलाकर फिटकरीके गरम पानीसे यदि धोया जाय तो भी मोम साफ़ हो जाता है।

(३) मोमको पिघलाकर किसी उथले पात्रमें बहुत पतली तह करके धूपमें कई दिनतक रक्खें तो मोम सफ़ेद होजाता है।

(४) हड्डीके मोटे कोयलेको एक पात्रमें भरो जिसके नीचेकी ओर बहुत छोटे छोटे छिद्र हों और इसको कुछ गरम करो। जब यह गरम हो जाय तो मोमको पिघलाकर इसमें डाल दो, मोमका रंग कोयलेमें होकर निकलनेसे सफ़ेद हो जायगा।

(५) यदि मोमको पानीमें पिघलाकर छोड़ दिया जाय तो मोमका सब मैल पानीमें आ जायगा। अब इस मोमको एक शीशेके पात्रमें खुला हुवा धूपमें कई दिनतक रख छोड़ें तो मोम स्वयं धूप लगनेसे ही सफ़ेद हो जायगा।

Industrial Chemistry औद्योगिक रसायन ]

## ओस

[ले० महावीरप्रसाद बी. एस-सी. एल., टी.]

बहुत प्राचीन कालसे लोगोंका यह अनुभव है कि जिस रातमें आकाश मेघरहित होता है उसी रात ओस

Physics भौतिक शास्त्र ]

गिरती है। इससे लोगोंको ( पाश्चात्य देश-वासियों ) यह विश्वास था कि ओस तारोंसे आकर पृथ्वीपर गिरती है क्योंकि मेघरहित आकाशमें बहुतसे चमकते हुए तारे दीख पड़ते हैं।

इसके पश्चात् एक दूसरी कल्पनाकी स्थापना हुई जो प्रथम कल्पनासे किसी प्रकार कम विचित्र नहीं है। यह देखा गया कि ओस तभी गिरती है जब वायुमण्डलका तापक्रम बहुत नीचा होता है अर्थात जब दिनकी अपेक्षा रातमें ठंडक अधिक पड़ती है। पहली और दूसरी कल्पनाओंको मिलाकर पुराने दार्शनिकोंने ओसके गिरनेका कारण यों ढूंढ़ निकाला, ठंडकसे ओस उत्पन्न होती है और ओस उसी समय गिरती है जब आकाश स्वच्छ रहता है अर्थात जब तारे चमकते रहते हैं इसलिए तारोंसे ठंडक मिलती है और तारे ही अप्रत्यक्ष रूपसे ओसके गिरनेके कारण हैं। इन सबसे यह विचित्र सिद्धान्त ठहराया गया कि पृथ्वीको दिनमें सूर्य्यसे गरमी मिलती है और रातमें चन्द्रमा ग्रह और तारोंसे ठंडक।

यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो इस प्रकारके मन-गढ़न्त सब देशोंमें पाये जायंगे। इस उदाहरणसे यह बात भी समझमें आती है कि मनुष्य झूंठे तर्कोंके द्वारा किस प्रकारकी भूलमें पड़ सकते हैं। जहां इन तर्कोंसे यह सिद्ध हुआ था कि तारोंसे ठंडक मिलती है अब उसका नितान्त प्रतिकूल सिद्धान्त ठहरा, क्योंकि आजकलके ज्योतिषियों और भौतिक शास्त्रज्ञोंने यह सिद्ध कर दिया है कि पृथ्वीको जो गरमी बाहरसे मिलती है उसमेंसे कुछ आवश्यक अंश तारोंसे भी प्राप्त होता है

इन विचित्र कल्पनाओंके पश्चात अरस्तूका ओस सम्बन्धी सिद्धान्त चला जो इस बातकेलिए प्रसिद्ध है कि अपूर्ण साधनों और निरूपणों द्वारा भी सुतर्कसे मनुष्य कैसे सत्यके पास पहुंच सकते हैं। बहुतसे लोगोंका विचार है कि अरस्तूने अपने सब सिद्धान्त बिना किसी निरूपणके स्थिर किये हैं परन्तु यह बात नहीं है। यथार्थ तो यह है कि अरस्तूने जितने निरूपण किये हैं उतने निरूपण शायद और किसी दार्शनिकने नहीं किये हैं। उनकी भूल केवल यह थी कि उन्होंने अपने निरूपणोंको आवश्यकसे अधिक खींच डाला उन्होंने यह समझ रक्खा था कि तर्कसे बहुत निरूपणोंका काम थोड़े निरूपणोंसे निकल सकता है।

अरस्तूके* ओस सम्बन्धी सिद्धान्तसे दो बातें और मालूम हुई (१) निवात ऋतुमें ओस बनती है और (२) पर्वत शृङ्गोंपर ओस नहीं बनती। अर्वाचीन निरूपणोंसे यह सिद्ध हुआ है कि चलती हुई वायुमें वा पर्वत शृङ्गोंपर ओस नहीं बनती। अरस्तूने इन्हीं दो निरूपणोंपर अपना सिद्धान्त बड़ी चतुराईके साथ स्थिर किया। उसने देखा कि ओसका बनना उन प्राकृतिक क्रियाओंपर निर्भर है जो हवाके बहनेसे रुक जाती हैं और यह क्रियाएं धरातलसे बहुत ऊपर भी नहीं होतीं। इसलिए उसने समझा कि ओस उस भाफसे बनती है जो वायुसे अलग हो जाती है। उसने कहा कि भाफ पानी और तापका मेल है, जबतक पानीमें ताप पहुंचता रहता है भाप बनती रहती है, परन्तु भाफ बहुत ऊपर नहीं चढ़ सकती क्योंकि ताप अलग हो जायगा और बहती हुई हवामें भाफ स्थिर नहीं रहती वरन् इधर उधर फैल जाती है। इसी कारण ऊंचे स्थानोंपर और बहती हुई हवामें ओस नहीं बनती। वह तारे वा चन्द्रमाके कारण

*अरस्तू यूनानका प्रसिद्ध दार्शनिक और तत्ववेत्ता विक्रमके पूर्व चौथी शताब्दीमें हो गया है। यह प्रसिद्ध दार्शनिक अफ़लातूनका शिष्य और सिकन्दर महान्का शिक्षा-गुरु था।

ओसका बनना नहीं मानता था। इसके प्रतिकूल वह कहता था कि सूर्य्य ही ओसका भी कारण है क्योंकि सूर्य्यके तापसे पानी भापमें बदल जाता है। और उसकी अनुपस्थितिमें जब ताप इतना नहीं होता कि भाफ थंभ सके तब वह ओस हो जाती है।

इन असत्य कल्पनाओंमें सत्य भी बहुत कुछ उपस्थित है। यह विचार कि ताप ऐसा पदार्थ है जो भाफको ऊपर उठाता है और ऊंचे स्थान वा बहती वायुमें अलग हो जाता है भ्रम है। उसी प्रकार यह भी भ्रम है कि तापके निकल जानेसे भाफ जमकर गिर पड़ती है। यह भी कहना ठीक नहीं है कि सूर्य्यकी अनुपस्थितिमें भाफ जमकर ओस हो जाती है क्योंकि अभी सिद्ध किया जायगा कि ओसके बननेके कारण और भी बहुत हैं। परन्तु यह कहनेमें अरस्तू ठीक थे कि जब भापमेंसे ताप निकल जाता है तब वह जमकर ओस बन जाती है। इनके तर्कोंसे यह नहीं सिद्ध होता कि ओस मेघ रहित ऋतुमें कैसे बनती है।

यूनानी और रोमन लोगोंने अरस्तूके इन विचारोंको नहीं माना। उनको यही मानना अच्छा लगता था कि चन्द्रमा, तारे और ग्रहोंके कारण ओस बनती है। माध्यमिक कालमें अरस्तूके महत्वको मानते हुए भी भौतिक शास्त्रके जिज्ञासुओं ने उसके विचारोंको नहीं माना और यही समझते रहे कि खगोलीय पदार्थों के प्रभावसे ओस गिरती है।

अन्तमें बपतिस्ता पोर्टाने प्रमाणोंद्वारा सिद्ध किया कि ओसके बननेका कारण खगोलीय पदार्थ नहीं हैं। उसको यह मालूम हो गया कि ओस कभी कभी खिड़कीके शीशोंके भीतर जम जाती है। उसने यह भी देखा कि सर्दीके दिनोंमें यदि कोई छोटा पौधा शीशेके बर्तनसे ढका हो तो बर्तनके भीतर जितनी ओस जमती है उतनी बाहर नहीं। शीशेके ही बर्तनमें यह बात नहीं पायी जाती वरन् और तरहके बर्तनोंमें भी देखा जाता है कि भीतरी तलपर ओस जमती है और बाहरी तलपर नहीं। परन्तु इन सब निरूपणोंसे उसने यह कल्पना की कि भाफसे ओस नहीं बनती वरन् हवासे बनती है। इस प्रकार अरस्तूके उस मतका खंडन हो गया जो वास्तवमें सत्य था।

अबतक तो यह माना जाता था कि ओस ऊपरसे गिरती है। परन्तु पोर्टाके निरूपणोंसे एक अनोखे मतका प्रचार होने लगा कि ओस ऊपरसे नहीं गिरती है वरन् पृथ्वीसे उठती है और निचले तलपर जम जाती है। इस मतका समर्थन भी हो गया क्योंकि लोगोंका अनुभव था कि पृथ्वीके पास जितनी ओस गिरती है उतनी ऊंचे स्थानोंपर नहीं गिरती और ज्यों ज्यों ऊंचाई बढ़ती जाती है त्यों त्यों ओसका जमना कम होता जाता है।

इस मतका प्रचार बहुत नहीं होने पाया था कि मुशन ब्रुकके निरूपणोंसे यह जान पड़ा कि कुछ चीज़ोंके निचले तलोंपर ओस जमती है और कुछ चीज़ोंके निचले तलपर नहीं जमती इसलिए यदि पृथ्वीसे ओस ऊपर उसी तरह उठती जैसे वर्षाका पानी नाचे गिरता है तो यह वैषम्य न होता। इस प्रकार पोर्टाके मतका भी खंडन हो गया और समझा जाने लगा कि ओस न तो ऊपरसे गिरती है और न नीचेसे वरन् ओसके जमनेका प्रधान कारण वह चीज़ें हैं जिनपर ओस जमती है।

अन्तमें यह समझा गया कि थोड़ा सा परिवर्तन करनेपर अरस्तूके मतसे इन निरूपणोंका अर्थ निकाला जा सकता है। अब लोग यह समझने लगे कि हवासे भाफके अलग हो जानेसे ओस बनती है परन्तु जमकर ऊपर वा नीचे नहीं जाती वरन् भाफ हवासे अलग होकर पास वाली वस्तुपर जम जाती है। इसकी जांच भी सुगम थी। यह भी मालूम हो गया

कि जिन वस्तुओंपर ओस जमती है वह हवासे ठंडी होती हैं इसलिए ओसके जमनेकेलिए वस्तुओंका ठंड़ा होना आवश्यक है। इससे यह अनुमान हुआ कि यदि एक ठंडी वस्तु गरम कोठरीमें लायी जाय तो उसपर भाफ अवश्य जम जायगी। यह अनुमान ठीक निकला। इसकी जांच भी सब कर सकते हैं। यदि किसी बर्तनमें बरफ़ रखकर एक गरम कोठरीमें वा ऐसी कोठरीमें जिसमें भीड़ हो लाया जाय तो बर्तनपर पानी जम जाता है। इससे भी सुलभ प्रयोग यह है कि आरसीपर यदि फूंका जाय तो मुंहकी भाफ जम जाती है और आरसी धुंधली हो जाती है क्योंकि आरसी हवाकी अपेक्षा ठंडी होती है।

इन निरूपणोंसे यह नहीं सिद्ध हो सका कि जिन वस्तुओंपर ओस जमती है वह औरोंकी अपेक्षा क्यों ठंडी हो जाती हैं और यह भी नहीं सिद्ध हो सका कि बहती हुई हवा और मेघोंकी उपस्थितिमें ओस क्यों नहीं बनती। लोगोंको इन सब बातोंके जाननेको उत्कट इच्छा थी। अन्तमें डाक्टर वेल्सने ईसाकी १६ वीं शताब्दीके आरम्भमें इन सब उलझनोंको सुलझाया।

वेल्सने ऊनके छोटे छोटे फाहोंको जो सूखनेपर १० ग्रेनसे* अधिक तोलमें नहीं थे बाहर रक्खा और प्रत्येकमें जितनी ओस जमती थी उसको तोलकर ओसका परिमाण निश्चय किया। पहले उसने यह निश्चय किया कि किस रातको कितनी ओस जमती है। उसको यह जान पड़ा कि जिस रातको आकाशमें मेघ रहते हैं उस रातको तो ओस बहुत कम बनती ही है परन्तु कभी कभी स्वच्छ आकाशके होते हुए भी उतनी ओस नहीं बनती जितनी और समय बनती है। इससे यह प्रत्यक्ष हो गया कि आकाशके स्वच्छ रहनेसे ही ओस नहीं बनती। उसको यह भी मालूम हुआ कि जो चीज़ खुली रक्खी जाती है उसमें ओस अधिक जमती है और यदि ऊपर कुछ भी पर्दा हो तो ओस कम जमती है। इसकी जांचकेलिए उसने एक लकड़ीके तख़्तेको चार लकड़ियोंपर ठहराया और ऊनका एक फाहा उस तख़्तेपर रक्खा और एक फाहा तख़्तेके नीचे। रातको आकाश बिलकुल स्वच्छ था। दूसरे दिन तोलनेपर जान पड़ा कि तख़्तेके ऊपरके फाहेमें १४ ग्रेन ओस जमी थी और नीचेवाले फाहेपर केवल ४ ग्रेन।

इन भिन्नताओंका अर्थ समझनेके पहले उसने यह निश्चय किया कि फाहोंके तापक्रम क्या हैं। ज्ञात हुआ कि जिसपर ओस जमी है उसका तापक्रम बहुत कम था। यह प्रत्यक्ष था कि ओसके जमनेसे ठंडक नहीं हुई क्योंकि इससे गरमी उत्पन्न* होती है इसलिए यही समझा गया कि वस्तुकी गरमी जैसे जैसे कम होती जाती है तैसे तैसे उसपर ओस जमती जाती है।

वेल्सने यह अनुमान किया कि तख़्तेके पर्देसे वा बादलोंके पर्देसे ओस नहीं जमने पाती और न वस्तुओंकी गरमी ही निकलती है। इस कारण ओस जमनेकेलिए जो गरमी निकलती है वह कैसे निकलती है? यह बात सबको विदित है कि गरमी तीन प्रकारसे निकलती है। जब कोई ठंडी वस्तु गरम वस्तुको स्पर्श करते हुए रक्खी जाती है तब ठंडी वस्तु गरम हो जाती है और गरम वस्तु ठंडी। इस रीतिको चालन कहते हैं। दूसरे गरम वस्तु स्वयम् एक स्थानसे दूसरे स्थानमें जाकर गरमी निकाल

* ग्रेन तोलनेकी इकाई है जिससे हल्की वस्तुएं तोली जाती हैं। प्रचलित रुपये भरकी तोल १८० ग्रेन होती है।

* इसका कारण विज्ञान भाग ३, संख्या ३ के 'पानी छिड़कने से ठंडक क्यों होती है' वाले लेखमें बतलाया गया है। पाठक यदि जानना चाहें तो उसको फिरसे पढ़लें। अवकाश कम हो तो वह १११ पृष्ठके दूसरे कालमके उस पाराको ही पढ़लें जो २६ वीं पंक्तिसे आरम्भ होता है।

देती है जैसे गरम पानी वा हवा। इस रीतिको वाहन कहते हैं। तीसरे यह कि गरम चाज़ स्वयम् गरमी चारों ओर फैलाती है चाहे कोई उसको स्पर्शन किये रहे वा कोई बहनेवाली वस्तु भी उसके पास न हो इस रीतिको विकीरण कहते हैं। इन सबपर विचार करके वेल्सने निश्चित किया कि ओसके बननेमें गरमी तीसरी रीतिसे निकल जाती है। इसलिए उसने यह नियम स्थिर किया—वस्तुओंमें विकीरण करनेका गुण जितना ही अधिक होगा उतनी ही अधिक ओस उनपर जमेगी यदि विकीरण-क्रिया किसी प्रकार रोकदी जाय तो ओसका बनना रुक जायगा।

इस बातको सभी जानते हैं कि जब प्रकाश-के साथ ताप होता है तो उस तापसे बचनेके-लिए छतरी, परदा इत्यादिका प्रयोग किया जाता है। इसी प्रकार उस तापकी भी दशा होती है जो देख नहीं पड़ता। वेल्स कहते हैं—मैं हंसा करता था कि माली नरम पौधोंको सर्दीसे बचानेकेलिए जो चटाईके पर्दे वा फूस-की पतली टट्टियां खड़ीकर देते हैं उनसे भला क्या बचाव हो सकता है क्योंकि इनके रखनेसे पौधोंकी गरमी किसी प्रकार रुक तो जायगी नहीं। लेकिन मैंने देखा कि जब हवा नहीं चलती और आकाश स्वच्छ रहता है तब विकीरणसे वस्तुओंकी गरमी अकाशमें बहुत फैल जाती है इसलिए वस्तुएं बहुत ठंडी हो जाती हैं, अब मुझे मालियोंके उपायोंका महत्व समझ पड़ा जिनको मैं निरा गंवारोंका टोटका समझता था।

वेल्सके इन निरूपणोंसे यह समझ पड़ा कि धातके बर्तनोंपर ओस क्यों नहीं जमती और घास वा लड़कीपर अधिक क्यों जमता है। बात यह है कि धातमेंसे गरमी विकीरणके द्वारा कम अलग होती है इसमें धातकी वस्तुएं उतनी ठंडी नहीं हो जातीं जितनी लकड़ी, घास इत्यादि की हो जाती हैं। कांचमें भी विकीरण अधिक होता है इसलिए कांचका तापक्रम औरकी अपेक्षा कम होता है।

जब आकाशमें मेघ रहता है पृथ्वीसे गरमी विकीरण द्वारा नहीं निकलने पाती क्योंकि मेघ परदेका काम करते हैं। यही कारण है कि मेघों-के रहते हुए ओस नहीं पड़ती। यहांतक देखा गया है कि स्वच्छ आकाशमें यदि तापमापकका पारा बहुत गिर गया हो और एक बादलका टुकड़ा आ जाय तो पारा तुरन्त कई अंश बढ़ जाता है और ज्यों ही आकाश स्वच्छ हुआ त्योंही वह फिर उतर आता है।

यह कहा जा सकता है कि ऊंचे स्थानोंपर अधिक ओस पड़नी चाहिए क्योंकि वहां विकीरणसे गरमी जल्द निकल जाती है परन्तु बात बिल्कुल उलटी होती है अर्थात ऊंचे स्थानोंपर ओस कम बनती है। इसका कारण क्या है? ऊंचे स्थानोंकी वस्तुएं उतनी ठंडी नहीं होने पातीं जितनी पृथ्वीतलके पासकी क्योंकि ऊपरवाली वस्तुओंके आसपास ठंडक होती है तो ठंडी हवा भारी होकर नीचे चली आती है और उसके पास गरम हवा आ जाती है। इस प्रकार ऊंचे स्थानोंमें चीज़ोंका तापक्रम इतना कम नहीं हो पाता कि ओस जमे। नीचेकी चीज़ें जल्दी ठंडी हो जाती हैं क्योंकि पासकी ठंडी हवा भारी होकर और नीचे नहीं उतर सकती वरन् उसीको स्पर्श किये रहती है और ऊपर-की गरम हवा भी ठंडी होकर उसके पास उतरती रहती है जिससे तापक्रम बहुत कम हो जाता है।

अरस्तूने जो यह देखा था कि बहती हवामें ओस नहीं बनती उसका भी कारण यही है कि बहती रहनेसे किसी वस्तुके पास ठंडी हवा देरतक नहीं ठहर सकती जिससे उस वस्तुका तापक्रम कम नहीं होता।

अन्तमें ओसके बननेसे जो लाभ होता है

उसका कुछ वर्णन कर देना बड़ा अवश्यक है। जो गरमी विकीरणकी क्रियासे पृथ्वी वा उसपरकी वस्तुओंसे निकल जाती है उसके लौटानेका यदि कुछ प्रबन्ध न होता तो वनस्पति वर्गका बड़ी हानि होती और प्रचंड शीतसे वनस्पतियां ठिठुर जातीं। अर्थात यदि सूर्य्यकी गरमीके द्वारा जल भाफके रूपमें ऊपर न उठता और वायु-मण्डलमें भाफ न रहती तो रातको विकीरण-से गरमी बहुत निकल जाती और उसके रोकने-केलिए कुछ उपाय न होता। परन्तु होता क्या है? सूर्यकी जो गरमी भाफके बननेमें लग गयी है वही भाफके जम जानेसे अर्थात ओस-के बननेसे फिर अलग होकर पृथ्वीकी ओर उसपरकी वस्तुओंको गरमकर देती है जिससे बनस्पतिकां इतनी ठंडी नहीं हो जातीं कि ठिठुर कर सूख जायं।

---

## वैज्ञानिकीय

### १-कृत्रिम कपूर

सभी देशोंमें कपूरका उपयोग होता है। अभीतक कपूर एक प्रकारके वृक्षसे बनाया जाता था जो जापानमें बहुतायतसे मिलता था। कृत्रिम कपूर तारपीनके तैलसे, कई वर्ष हुवे बनाया गया था। पर अभीतक इस रीतिसे इतना सस्ता न बनाया जा सकता था, जैसा कि पुराने ढंगसे बनाया गया। हालमें अमेरिका देशमें कृत्रिम कपूर तारपीनसे बनाया जाने लगा है। प्रतिवर्ष १०,०००, पीपे तारपीनके तैलके खर्च हुआ करेंगे। अमेरिकामें जून सं. १६१४ से जून १६१५ तक ६१२५० मन कपूर ख़र्च हुआ था। इससे अनुमान किया जा सकता है कि कितनी बचत होगी। भारतवर्षमें भी तारपीन बहुत पैदा होता है। (देखो 'तारपीन और विरोजा' विज्ञान भाग ३ संख्या १ पृष्ठ २)। यदि यहां भी कृत्रिम कपूर बनानेका यत्न किया जाय तो कितना लाभ होनेकी सम्भावना हो। यह भी कह देना उचित है कि इस कृत्रिम कपूरके गुण प्राकृतिक कपूरसे भिन्न नहीं हैं।

गो० भा०

* * * *

### २—अद्भुत हाथी

युद्धके सम्बन्धमें नाली खोदे जानेका हाल सबने ही सुना होगा। जब युद्ध नहीं होता, तब भी अभ्यासकेलिए सैनिक इञ्जिनियरोंसे यह काम कराया जाता है। तीन चार वर्ष हुए कि मेडवेके (Medway) तटपर अपनोरके (Upnor) पास नालियां खोदी जा रहीं थीं नालियोंके खोदनेपर बहुत सी हड्डियां और एक हाथीदान्तका टुकडा मिला। सैाभाग्य वश यह काम बन्दकर दिया गया अन्यथा सब ही हड्डियोंका चूर हो जाता। कुछ दिन पीछे टर्नर पथरीके हथियार खोजता हुवा इस स्थानपर पहुंचा। उसने यह हड्डियां देखीं और अकस्मात उसे एक ऐसी अस्थि मिली, जो किसी खेलनेके पांसेकी सी दिखाई देती थी। उसने यह सोचकर कि सम्भवतः यह किसी इतिहास कालसे पूर्वके पासों का नमूना होगा, उसे British Museum of Natural History अद्भुतालयको भेज दिया। वहांपर जांच करने-से ज्ञात हुआ कि यह किसी बड़े महत्काय हाथीकी कलाईकी (अगले पैर) हड्डी है। उस स्थानकी जांच भी अद्भुतालयके कार्य्य कर्तृगणों द्वारा की गई। उन्होंने अनुमान किया कि यहां किसी बड़े हाथीका अस्थि-पिंजर दबा हुवा पड़ा है। सन् १६१५ की ग्रीष्म ऋतुमें खुदाईका काम आरम्भ किया गया। डा० चार्ल्स एन्ड्रूज़ इसके निरीक्षक नियत किये गये। प्रारम्भिक जाचंसे मालूम हुआ कि हड्डियां पृथ्वी तलके इतने निकट थीं कि वृक्षों-की जड़ या कीडोंके आक्रमणसे जरजरीभूत हो रही थीं। इस कारण उनका निकालना

बड़ा कठिन काम था। प्रत्येक हड्डी जैसे ही दिखाई देती थी, उसपर किर्मिच और प्लास्टर औफ पेरिसकी एक तह लगाकर सुखा दी जाती थी। फिर उसके नीचेसे मट्टी निकाल हड्डीकी दूसरी ओर भी यही क्रिया की जाती थी। इस प्रकार प्रत्येक अस्थिपर किर्मिच और प्लास्टरका जाकेट बन जाता था, जिससे वह भली भांति सुरक्षित रहे, और जो हड्डीका प्रदर्शन करनेके पहले हुशयारीसे हटानी पड़ती थी। अनुमान किया जाता है कि यह हाथी १५ फुट उंचा होगा। इसके दान्त १६ फुट लम्बे थे, इनके इतने लम्बे और वज़नी होनेसे हाथ, सर, कन्धे, और अगली टांगे बड़ी मज़बूत और मोटी होंगी। अमेरिका देशीय मेम्मथ अभीतक सबसे ऊंचा हाथी समझा जाता था, पर उसकी ऊंचाई केवल १३ फुट ६ इंच होती थी। असली मेम्मथ ९ फुट, ६ इचं ऊंचा होता था। भारतवर्षीय हाथी १० फुट, ६ इंच होते हैं, अफ़रीकाके आदर्श हाथी ११ फुट, ६ इंच ऊंचे और वहांके कौंगो (Congo) प्रदेशस्थ हाथी केवल सात फुट ऊंचे होते हैं। क्रीट (Crete) और मालता (Malta) द्वीपके नष्ट हुए पुरातन कालके हाथी केवल ५ फुट ऊंचे हुआ करते थे। नए निकले हुए हाथीके माथेपर एक आगेको निकली हुई हड्डी भी होती थी। जिस प्रकार दान्तोंके लम्बे और वज़नी होनेसे उसके अगले पांव, सर और कन्धेके मोटे और मज़बूत होनेका अनुमान किया गया है, इसी प्रकार और और हड्डियोंके आकार, स्थिति, और भारसे अन्यान्य अङ्गोंके आकारका अनुमान करके, हाथीका चित्र भी बना लिया गया है।

गो० भा०

* * * *

३—निकिल और जंग

इस देशमें प्रायः लोग निकिलके नामसे परिचित न थे। जबसे इकन्नियां चली हैं, तबसे बहुत लोग निकिल धातको जाननेलगे, पर यह कम मनुष्योंको मालूम होगा कि इकन्नीमें ६३ प्रतिशतके लगभग ताम्बा है और शेष निकिल। प्रायः निकल लोहेके, तालों, तश्तरियों, इत्यादि पर चढ़ाया जाता है। बाज़ारमें जो तश्तरियां चमकती हुई बड़ी सस्ती मिलती हैं, वह 'कली' की समझी जाती हैं। पर थोड़े ही दिनोंमें जब वह काममें आने लगती हैं, तो उनपर ज़ंग दिखाई देने लगता है। लोग देखकर दंग हो जाते हैं कि यह ज़ंग कहांसे आया। अब समझमें आ गया होगा कि जहां कहींसे पानी निकिल-तक पहुंच जाता हैं, वहीं ज़ंग नज़र आने लगता है। इस ज़ंगके छुड़ानेकी रीति यह है:—

जहां पर ज़ंग हो, वहां चर्बी लगानी चाहिये और अच्छी तरह रगड़ना चाहिये। अधिकांश जंग इसी क्रियासे छुट जायगा। कई घंटेतक चर्बी लगी रहने दो, तदनन्तर किसी कपड़ेको अमोनियामें भिगोकर चर्बी छुड़ा डालनी चाहिये। यदि कोई धब्बा अबभी रह जाय तो नमकके तेज़ाबसे शीघ्रतासे साफ़ कर देना चाहिये, यदि तेज़ाब कुछ देर लगा रहेगा, तो ज़ँग और निकिलकी तह दोनोंको ही खा जायगा।

गो० भा०

* * * *

४—लोहा और ज़ंग

Central blatt में नीचे दिये हुए प्रयोग दिये हैः—

चार लोहेकी तख़तियां ली गई उनमेंसे एक पर रोग़न एक बार, दूसरी पर दो बार, तीसरी पर तीन बार और चौथीपर चार बार किया गया था। तदनन्तर यह तख़तियां भापमें दिन भर लटका दी गयीं। पहली तख़ती बिलकुल चमकती हुई निकली, दूसरीमें कुछ ज़ंग लगा तीसरीमें कुछ अधिक और चौथी सबसे अधिक ख़राब होगई थी। इसका कारण यह बतलाया गया है कि प्रत्येक रोग़नकी तह, उससे नीचे-

वाली तहको न्यूनाधिक घुलानेकी चेष्टा करती है। इसका प्रभाव यह होता है कि नीचेकी तहके दाने और कण ढीले होजाते हैं और वह मसामदार हो जाती है। जितनी अधिक तहें चढ़ायी जायंगी उतनी अधिक मसामदार नीचेकी तह हो जायँगी। इनके छिद्रोंमेंसे हवा और भाप धसने लगेगी, और लोहेके सम्पर्क-से ज़ंग लगना शुरू हो जायगा।

जहां जंग लगनेका डर रहता है, या तो बड़ी मोटी वार्निशकी तह या कई तहें चढ़ा दी जाती हैं। ऐसा करना भूल है। उचित कर्तव्य यह है कि पुराने रोग़नको छुटाकर लोहेकी सतहको साफ़ करके, पतली तह वार्निशकी चढ़ा देनी चाहिये। गो. भा.

* * * *

५—नीमकी पत्तियोंकेद्वारा प्लेगसे रक्षा

मेजर टी. एच, डेलानी, आई. एम. एस. की परीक्षाओंसे प्रतीत होता है कि नीमकी पत्तियोंके जलानेसे प्लेगका भय बहुत कम हो सकता है। डेलानी साहबने चूहेदानीके अन्दर, कई चूहोंको छतसे लटकाकर और कुछ ज़मीन-पर कपड़ेकी गठिरियोंसे ढककर गुदाममें छोड़ दिया था। झोपड़ीके भीतर साफ़ गचपर अनुमान ३०, ४० गोइठेका एक घेरा बनाकर जला दिया गया। जांचके वास्ते उस आगमें अनेक पदार्थ की धुनी करायी गयी, दरवाजे खिड़कियां चारों ओरसे बंद कर दिये गये। जब तक गोइठे जलकर भसम नहीं हुए चूहोंको बारी बरीसे कई चाज़ोंको जला जलाकर धुआ पिलाया गया। चूहे मरे नहीं। हां कभो कभी वे व्याकुल हो जाते थे। इस तरह परीक्षा लेकर देखनेसे मालूम हुआ कि नीमकी पत्तियोंके धुंएमें रहनेके पश्चात चूहोंके अंगपर कितने ही प्लेगके कीड़े मरे हुए थे। इसी तरह और परीक्षा करनेसे स्पष्ट हुआ कि नीमके धुएमें चूहे जितना ही अधिक रक्खे जाते थे उनके शरीरपर प्लेगके उतने ही अधिक कीड़े मरे पाये जाते थे। पत्तियोंको सुखानेकी आवश्यकता नहीं है। वे ऐसे ही व्यवहारमें लाई जा सकती हैं। वास्तवमें ताज़ी पत्तियोंको वैसे ही जलानेसे विशेष लाभ होता है, उनसे ख़ूब तीखा और गाढ़ा धुआं उठता है। प्लेगके कीड़ोंसे वायुको शुद्ध करनेकी जितनी सामग्रियां हमें प्राप्त हुई हैं उनमें यह सरल, सस्ती और सुलभ होते हुए आगेकेलिए उपयोगी ठहरनेकी संभावना रखती है। गो. न.

* * * *

पुष्पोंकी सुगंधि निकालनेका नया विधान।

साधारण रीतिसे जो सुगंधि उतारी जाती है उसमें विशेषकर चमेली, गुलाब और नर्गिसे इत्यादि फूलोंके परिमलका एक बहुत बड़ा अंश-व्यर्थ जाता है। इसका कारण यह है कि प्रथम तो इन फूलोंको गन्ध ही अति चंचल और कोमल होती है, और इसलिए इकट्ठा होते ही वायुके साथ उड़ जाती है, दूसरे गंध चुलानेकी वैज्ञानिक विधि न होनेके कारण उसका अच्छा भाग फूलमें ही रह जाता है। पर इधर इस क्रियामें चर्बीके उपयोगसे अधिक सफलता दिखलाई पड़ती है, क्योंकि इस द्रव्यमें पुष्पसे स्पर्श होते ही गन्धको खेच लेनेका गुण है। जबसे चर्बीकी क़ीमत बढ़ गयी है उसके स्थानमें घी, नारियलके तेल इत्यादिसे काम लिया जाता है, गंध निष्कर्षनके बिलकुल नये बिधानके अनुसार शीशेकी टट्टियोंपर चर्बी अथवा घी-का एक पतला लेप चढ़ा दिया जाता है, पीछेसे उसीपर फूल बिखरा दिये जाते हैं। ऐसे हा टट्टियाँ एक पर दूसरी लगा कर कमसे कम १५ घंटेकेलिए छोड़ दी जाती हैं। अन्त में अलकोहलमें घुलाकर सुगंधि इकट्टी कर लो जाती है। गो. न.

## कार्य्य-विवरण

परिषत्का अधिवेशन ताः ५ अगस्त १६१६ को डा० झाके सभापतित्वमें हुआ। श्रीमान् जमशेदजी नवरोजी ऊनवालाकी मृत्युपर शोक प्रकट किया गया। आप इस परिषत्के सभ्य थे। आपने हिन्दू जातिकी जो सेवा की, वह सब ही भली भांति जानते हैं। तदनन्तर निम्न-लिखित सज्जन परिषत्के सभ्य और परिसभ्य चुने गएः—

सभ्यः

१. बावू वृन्दावनप्रसाद वर्म्मा, डिस्ट्रिक्ट एक्साईज़ आफ़ीसर मंडला

२. श्रीयुत रगनप्रसाद गोइल, असिस्टंट एलिक्ट्रिकल फ़ोरमैन, केसरगंज, अजमेर

३. लाला कन्नोमल, एम्. ए. जज, धौलपुर

४. श्रीयुत बावूराम गुप्त, बी. ए., एल्-एल्-बी, इटावा

५. श्रीयुत निहालचन्द वैश्य, बारिस्टर एट-ला, प्रयाग

६. अध्यापक हरनारायण बोथम, एम्. ए. कृषि विद्यालय, कानपुर

७. श्रीयुत लक्ष्मण विष्णु जोषी, एम्. ए. c/o चीफ़ इचलकरनजी, कोल्हापुर

८. श्री भटेले पृथीनाथजी, रईस बिरावी डाकघर इकदिल, इटावा

परिसभ्य

१. श्रीयुत तेजकरन, मकराना मुहल्ला पीपलीवाली गली, जोधपुर.

२. श्री जानकीप्रसाद, बी. ए., एल्-एल्. बी जानसेन गंज, प्रयाग.

माननीय सर श्री राजा रामपाल सिंह, के.सी आई. ई. और राय साहिब प० रघुबरप्रसाद द्विवेदी, बी. ए को नवीन उपाधियोंके मिलनेके अवसरपर बधाई दी गई। मंत्रीको आज्ञा दी गई कि इस सम्बन्धके प्रस्तावोंकी नक़ल इन महानुभावोंके पास भेजदें।

१ सितम्बर सन् १६१६ को म्योर कालेजमें अध्यापक डी एन. पाल, एम्. ए. का व्याख्यान 'लहरें और तरङ्गे' पर हुआ। आपने बहुत अच्छे प्रयोग दिखलाये। परिषत्की ओरसे आपको और उस दिनके सभापति मौलवी मेहदी हुसैन नासरी एम्. को धन्यवाद दिया गया। तदनन्तर सभा विसर्जन हुई।

---

## प्राप्ति स्वीकार

श्रीयुत माननीय डा० सुन्दरलाल, एल-एल् डी, और श्रीमती रानी फूलकुमारी देवी, धामपुर १५०) रुपया चन्दा देकर परिषत्के आजन्म सदस्य (life member) हो गये हैं। आशा है कि और सज्जन भी आजन्म सदस्य होकर, परिषत्के स्थायी द्रव्यको बढ़ावेंगे

श्रीयुत निहालचन्द वैश्य, बार. एटला, प्रयागने परिषत्को दस रुपया दान दिया। आपको कोटिशः धन्यवाद

श्रीयुत गोपालनरायण सेन सिंह, बी. ए. कायस्थपाठशाला प्रयागने परिषत्को एक बी टाइमपीस घड़ी दी है। आपको अनेकानेक धन्यवाद।

## सूचना

जिन ग्राहकोंका चन्दा इस अङ्कसे समाप्त होता है वह आगेकेलिए चन्दा मनीआर्डरसे भेज दें, नहीं तो तुलाका (अगले मासका) अङ्क वी. पी. से उनकी सेवा में भेजा जायगा।

मैनेजर विज्ञान

लेखकों और ग्राहकोंसे निवेदन

प्रेसकी भूल और प्रूफ़ संशोधकोंकी असावधानीसे गत अङ्कमें बहुत त्रुटियां रह गईं। इसके लिए हम ग्राहकों और लेखकोंसे क्षमा प्रार्थी हैं, और हम उन्हें विश्वास दिलाते है कि भविष्यमें असावधाना न होगी।

निवेदक-प्रूफ़रीडर

# विज्ञान

प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.


भाग ३

मेष–कन्या १९७३

April–September 1916.

प्रकाशक

विज्ञान–परिषत् प्रयाग

वार्षिक मूल्य तीन रुपये

# विषय-सूची

## पवित्र शक्कर खाइये और बेचिये।

अपने धर्मकी रक्षा कीजिये और पुण्य लीजिये

हिन्दुस्तानी मिलोंकी बनी, पवित्र, बड़ी साफ़ और सफ़ेद शक्कर (चीनी) आप हमसे मंगाएं। हम पवित्रताका ज़िम्मा लेते हैं। जो हमारी शक्करको अपवित्र ठहरा दे उसे

## ५०,००० रुपया इनाममिलेगा।

मालकी कम, ज़्यादा तायदादपर १) से ॥) सैकड़ेतक कमीशन लेकर अच्छा माल भेजते हैं हमसे मंगवानेमें व्यापारीको हर तरहका फ़ायदा है। क्योंकि हम व्यापारीका काम बड़ी कोशिश और सावधानीसे करते हैं।

व्यापारी हमसे नमूने, दर, तथा कमीशन आदिके नियम मंगवा देखें। हम पत्रका उत्तर तुरन्त देते हैं। हमको प्रत्येक स्थानमें एजेंट चाहिएं।

हमारा पता—मैनेजर

पवित्र वस्तु प्रचारक कम्पनी

जेनरल गंज (कानपुर)

---

## विज्ञान-परिषद-द्वारा प्रकाशित

## हिन्दीमें अपने ढंगकी अनूठी पुस्तकें

१—विज्ञान-प्रवेशिका (प्रथम भाग) ... ... ।)

२—ताप ... ... ... ... ... ।)

३—विज्ञान प्रवेशिका (द्वितीय भाग) **छप रही है**

४—मिफ़ताहुल-फुनून

(विज्ञान-प्रवेशिका प्रथम भागका उर्दू अनुवाद) ।)

**विज्ञान**—सरल सुबोध सचित्र वैज्ञानिक मासिकपत्र जो प्रति सङ्क्रान्तिको प्रकाशित होता है। वार्षिक मूल्य ३); प्रति अंक ।); नमूनेका अंक ≈)॥ और वी० पी०से ।-)

पता—**मंत्री,**

**विज्ञान-परिषत्,**

कटरा, प्रयाग।

## बाल सुधा

यह दवा बालकोंको सब प्रकारके रोगोंसे बचाकर उनको मोटा ताज़ा बनाती है क़ीमत फ़ी शीशी ॥।)

## दद्रुगज केसरी

दादको जड़से उखाड़नेवाली दवा क़ीमत फ़ी शीशी ।)       मंगानेका पता—

सुख संचारक कंपनी मथुरा

---

## जयाजी प्रताप

साप्ताहिक पत्र

यह पत्र गवालियर राजकी राजधानी लश्करसे हर बुधवारको प्रकाशित होता है। इस पत्रमें खासकर कृषि, विज्ञान और व्यापार सम्बंधी उपयोगी और उत्तम लेख प्रकाशित होते हैं। अलावा इसके जीवन चरित, कविता, कहानियां और स्त्री-शिक्षा तथा सप्ताह भरकी ताज़ी ताज़ी हर प्रकारकी खबरें भी छापी जाती है। पत्रका आकार डबल अठ पेजी २० पृष्ठका है परंतु तिस पर सर्वसाधारणके सुभीतेके लिए मूल्य डाक महसूल सहित केवल ३) मात्र रखा गया है। नमूनेका अंक पत्र आनेपर मुफ्त फेजा जाता है।

पता—मैनेजर जयाजी प्रताप

मोती—महल गवालियर।

Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P. Sudarshanacharya, B. A., for the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

भाग ४ Vol. IV. | तुला, १९७३ । October 1916. | संख्या १ No. I

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची



प्रकाशक
विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

वार्षिक मूल्य ३) ] | १ प्रतिका मूल्य ।)

## विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३। ५।

भाग ४ } तुला, संवत् १९७३। अक्तूबर, सन् १९१६। { संख्या १

## मंगलाचरण

को गुन अगम थाह तव पावै,
विश्वरूप अद्भुत अगाध अति,
अनुपम किमि कहि जावै।

रोम रोम ब्रहमंड ग्रथित रवि
अनगिन ग्रह ससि तारे,
भ्रमत धुरी अपनी अपनी पै
निसि दिन न्यारे न्यारे।

घूमत सकल चक्र-मंडलमें
करत निरन्तर ज्योती,
इक आकरसन-सक्ति डोरिमें
मनहुँ पिरोये मोती।

फूल भरी मनहरी हरी सिर
सारी रसा विराजै,
उड़गन रुचिर नभस्थल प्रतिकृति
प्रिय तिह मधि जनु भ्राजै।

कबहुँ सघन घन नित नूतन तन
धावत द्रुत दरसावत,
विद्युत् दमकत तिन ललाट सों
श्रम सीकर बरसावत।

मदमाती रसवती सरित कहुँ
रसनिधि अंक मिलाई,
प्रकृति-रम्य-पुनि ऋतु परिवर्तन
चहुँदिसि छवि छिटकाई।

होत बिज्ञ बाचाल मूक लखि
गति रहस्य-रस-रांची,
भगवन्! 'नेति नेति' तव कीरति
लसै अखिल जग सांची।

—सत्यनारायण

## रक्तके काम

### वकटीरियासे उत्पन्न होनेवाले रोग

[ले० डा० त्रिलोकीनाथ वर्म्मा, बी. एस-सी., एम. बी. बी एस.]

तजुर्बेसे मालूम होता है कि इस प्रकारके बहुतसे रोगोंमें वकटीरिया तथा उनके विषोंको नाश करनेवाली वस्तुओंके बननेमें बहुधा एक नियत समय लगा करता है और जबतक ये वस्तुएं जितनी चाहिए उतनी न बन जायँ उस समयतक रोगीकी दशामें कुछ अन्तर नहीं दीखता अर्थात रोगका कम होना आरंभ नहीं होता। टायफ़ौयड् ज्वर आम तौरसे २१, २२ दिनसे पहले नहीं उतरता, कभी कभी इससे भी अधिक समय लगता है जैसे २८ से ४२ दिनतक। रक्तकी परीक्षासे पता लगता है कि इस रोगमें विषनाशक वस्तुओंका नौ दिनसे पहले अच्छी तरह बनना आरंभ नहीं होता। फुप्फुसप्रदाहका (pneumonia) ज्वर भी बहुधा आठ नौ दिनसे पहले नहीं उतरता; यही हाल चेचक, खसरा आदि रोगोंका है। यह विषनाशक वस्तुएं यथोचित परिमाणमें न बनें तो रोग बढ़ता ही जाता है और अंतिम परिणाम मृत्यु होता है।

वकटीरियासे उत्पन्न होनेवाले रोगोंकेलिए अबतक कोई औषधि ऐसी नहीं मालूम हुई है कि जो रक्तमें पहुंचकर उनका नाश कर सके। शरीरसे बाहर उनको तुरंत मार डालनेवाली औषधियां तो बहुत हैं। जिन औषधियोंका ऐसे रोगोंमें प्रयोग होता है वे और विधियोंसे फ़ायदा करती हैं। जिस प्रकार वाह वाह! शाबाश शाबाश! पुकारनेसे योधाओंका उत्साह बढ़ जाता है और वे पहलेकी अपेक्षा अच्छी तरह लड़ते हैं, उसी प्रकार कुछ औषधियां ऐसी हैं जिनके सेवनसे शरीरकी सेलोंका उत्साह बढ़ता है और वे शत्रुओं अर्थात् वकटीरियाका सामना अच्छी तरह कर सकती हैं। कुछ औषधियां पाचक शक्तिको बढ़ाती हैं, जिससे भोजन भली प्रकार पचता है और सेलोंको वकटीरिया और उनके विषोंका नाश करनेवाली चीज़ोंके बनानेकेलिए सामान अच्छी तरहसे मिलता है। कुछ औषधियां दर्द कम करती हैं और नींद लाती हैं; कुछके सेवनसे मूत्र अधिक आता है, और कब्ज़ दूर हो जाता है और शरीरमें किसी प्रकारका मैल इकठ्ठा नहीं होने पाता।

### आदिप्राणियोंसे उत्पन्न होनेवाले रोग

इन रोगोंमेंसे कुछकेलिए ऐसी औषधियां मालूम हैं कि जो रक्तमें पहुंचकर वकटीरियाको मार डालती हैं, यदि औषधिका यथाविधि प्रयोग किया जाय तो जन्तु मर जाते हैं और रोग घट जाता है या जाता रहता है और फिर रोगी धीरे धीरे अपने पहले स्वास्थ्यको प्राप्त करता है। मलेरिया ज्वरके (मौसमी बुखार) जन्तु रक्ताणुओं और रक्तके तरल भागमें रहते हैं। इस रोगकेलिए कुइनीन (quinine) अमृत समान है। यदि निदान ठीक है तो इस औषधिके प्रयोगसे यह ज्वर अवश्य दूर हो जायगा। कुइनीनके सेवनसे जंतु मर जाते हैं और फिर रक्तमें दिखाई नहीं देते। आत्शक या फ़िरंग रोगका भी यही हाल है, पारेके यौगिक वा सालवर्सान (Salvarsan) नामक औषधि, जो संखियाका यौगिक है इस रोगमें अत्यन्त उपयोगी हैं।

इस प्रकारके सब रोगोंकेलिए अभीतक औषधियां मालूम नहीं हुई हैं, परन्तु आशा है कि धीरे धीरे उपयोगी औषधियां मिलेंगी।

### रोगनाशक शक्ति वा रोगसे मुक्ति (रोगाक्षमता)

रोग उत्पादक जंतुओं और उनके विषोंको नष्ट कर रोगसे छूट जानेकी शक्तिको रोग नाशक शक्ति कहते हैं। यह शक्ति सब मनुष्योंमें एक जैसी नहीं होती। किसी मनुष्यमें अधिक होती है किसीमें बहुत कम। इस बातके प्रमाण प्रति दिन मिलते हैं। कुछ मनुष्योंको ज़ुकाम होता है और वे शीघ्र अच्छे हो जाते हैं, ज्यादा दुःख नहीं मानते। दूसरी ओर

ऐसे भी बहुतसे मनुष्य होते हैं जिनका जुकाम बहुत दिनोंमें अच्छा होता है, जुकामसे खांसी हो जाती है और कभी कभी फुप्फुसप्रदाह या क्षयरोग भी हो जाते हैं। टायफ़ौयड् रोगसे बहुतसे लोग अच्छे हो जाते हैं, कुछ लोग जंतुओंका सामना भली प्रकार नहीं कर सकते और अनेक प्रकारके प्रयत्न करनेपर भी मर जाते हैं, ऐसा हो और रोगोंका भी हाल है।

जब रोगी अपनी रोगनाशक शक्तिके प्रभावसे रोगसे छूट जाता है तो कहा जाता है कि वह उस रोगसे मुक्त (रोगाक्षम) हो गया या उसको उस रोगसे मुक्ति (immunity रोगाक्षमता) मिल गई।

बहुधा यह देखा जाता है कि यदि रोगी किसी रोगसे एक बार मुक्त हो जाय तो वह रोग बहुत दिनोंतक उस मनुष्यको फिर नहीं होता। टायफ़ौयड् ज्वर आम तौरसे दूसरी बार नहीं आता। चेचक एक बार निकलकर दूसरी बार बहुत ही कम निकलती है। इस बातका एक कारण यह मालूम होता है कि रोगनाशक वस्तुएँ अधिक परिमाणमें बन जाती हैं, जिनकी वजहसे रोग उत्पादक जन्तु शरीरमें घुसकर पनपने नहीं पाते और शीघ्र ही मर जाते हैं।

किसी रोगसे मुक्ति बहुत दिनोंतक (कभी कभी उमर भरकेलिए जैसे चेचकसे) रहती है, किसी-से थोड़े दिनोंतक। ऐसे मनुष्य भी होते हैं जिनको कोई कोई रोग होते ही नहीं, चाहें इन रोगोंके जंतु उनके शरीरमें हर रोज़ प्रवेश करते हों; कई जातियां ऐसी हैं जिनको कोई कोई रोग होते ही नहीं, चाहे इस रोगके जंतु कितने ही ज़हरीले क्यों न हों। इससे स्पष्ट है कि इन मनुष्यों या जातियोंको विशेष रोगाक्षमता स्वाभाविक तौरसे मिली हुई है।

कई साधनोंसे रोगनाशक वस्तुएँ शरीर-में पैदा की जा सकती हैं, यदि ये वस्तुएँ उचित परिमाणमें बन जावें तो उस मनुष्यको थोड़े बहुत दिनोंकेलिए विशेष रोगाक्षमता मिल जाती है। चेचकके टीकेसे आम तौर-से १० या ११ वर्षकेलिए चेचक संबन्धी मुक्ति immunity from smallpox मिल जाती है। यदि एक बार बचपनमें टीका लगवाकर दूसरी बार ११ या १२ वर्षकी आयुमें टीका लगवा लिया जावे तो चेचकसे उमर भरके-लिए छुट्टी मिल जाती है। आजकल भारतवर्ष-में आम तौरसे चेचक बड़ी उमरमें निकलती है, बचपनमें नहीं निकलती। कारण यही है कि बचपनका टीका उस व्यक्तिको दस बारह वर्षतक तो अच्छी तरहसे बचा सकता है। इसके पश्चात् उसका असर कम होने लगता है। भारतवर्षमें टीके-से पहले चेचक बहुधा बचपनमें ही निकल आया करती थी; अब भी, जिन लोगोंमें किसी कारण बचपनमें टीका नहीं लगता उनके बच्चोंको अकसर चेचक निकल आती है।

जिस प्रकार चेचकका टीका चेचकसे बचाता है, उसी प्रकार टायफ़ौयड् और प्लेगके [ताऊन] टीके भी इन रोगोंसे हमारी रक्षा करते हैं। केवल भेद इतना है कि इनका असर बहुत दिनोंतक नहीं रहता, ताऊनके टीकेका असर पूरे तौरसे तो तीन या चार महीनेतक ही रहता है, फिर बहुत कम हो जाता है।

इन टीकोंसे इतना अवश्य होता है कि यदि रोग होता भी है तो वह बहुत ज़ोर नहीं पक-ड़ता। चेचकके टीकेके लगनेके बाद यदि चेचक निकले तो वह हलकी निकलती है और अन्धे काने होनेका डर कम रहता है। बकटीरिया वा बकटीरिया-विषनाशक वस्तुएं शरीरमें उस समय अधिक बनती हैं जब रोग होता है, परन्तु कुछ रोगोंकेलिए थोड़ेसे परिमाण-में ये वस्तुएं बहुतसे लोगोंके शरीरोंमें रहा करती हैं। मनुष्यका स्वास्थ्य वास्तवमें रोग नाशक शक्तिपर ही निर्भर है। जिसके शरीरमें यह शक्ति

अधिक है उसका स्वास्थ्य अच्छा होता है. ऐसे मनुष्यको अव्वल तो रोग होते नहीं और जब होते हैं तो वह उनसे शीघ्र छूट जाता है। जिन मनुष्यों-में यह शक्ति कम है वे अक्सर रोगोंमें फंसे रहते हैं और ये रोग शीघ्र अच्छे नहीं होते।

रंज और फ़िक्र अधिक शारीरिक वा मानसिक परिश्रम, भोजनका ठीक समयपर न मिलना या कम मिलना, अधिक भोजन खाना जो भली प्रकार पच न सके और आंतोंमें सड़कर भांति भांतिके विषैले पदार्थ उत्पन्न करे, जिनसे शारीरिक सेलोंको अत्यंत हानि पहुंचे, बाल विवाह जिससे निर्बल सन्तान उत्पन्न होती है और पुरुष वा स्त्री दोनों कमज़ोर हो जाते हैं; अधिक मैथुन और भांति भांतिकी बुरी क्रियाओं-से वीर्यका नष्ट करना, शुद्ध और पवित्र वायुका सेवन न करना, बंद कमरेमें मुंह ढाँककर सोना, गन्दे मकानोंमें रहना जहां वायु और सूर्यका प्रकाश भली प्रकार न पहुंचे, भंग, शराब तम्बाकू अफ़ीम इत्यादि नशोंका करना, अधिक मानसिक परिश्रमके पश्चात् अधिक शारीरिक परिश्रम करना,—ये और अन्य ऐसी ऐसी बातें हमारी रोग नाशक शक्तिको घटाकर हमारे स्वास्थ्यको बिगाड़ती हैं।

सीरम चिकित्सा ( serum therapy )

हम पीछे लिख आये हैं कि बकटीरियासे उत्पन्न होनेवाले रोगोंकेलिए ऐसी औषधियां नहीं हैं कि जो शरीरमें पहुंचकर शारीरिक सेलोंको किसी प्रकारकी हानि पहुंचाए बिना बकटीरिया-को मारडालें और रोगको हटा दें या कम कर दें। हालमें ही ऐसे रोगोंकी चिकित्सा करनेकी एक नई विधि मालूम हुई है। इस चिकित्साका वर्णन करनेसे पहले हम ये दो बातें बतलाना आवश्यक समझते हैं:—

१. बकटीरिया रोग तब ही उत्पन्न कर सकते हैं कि जब वे बड़ी तादादमें शरीरमें पहुंचें, यदि वे निर्बल हैं और उनकी संख्या भी अधिक नहीं है तो शरीरकी सेलें उनको बढ़नेका अवसर ही नहीं देतीं और शीघ्र उनका और उनके विषों-का नाश कर देती हैं।

२. कोई वस्तु विषका काम उसी समय कर सकती है,कि जब उसका बड़ी मात्रामें सेवन किया जावे। संखिया विष है, परन्तु उसकी बहुत छोटी छोटी मात्राएं विषैला असर नहीं रखतीं अर्थात् शरीरको न किसी प्रकारकी हानि पहुंचाती हैं और न मृत्युका कारण होती हैं, प्रत्युत नन्हीं नन्हीं मात्राएँ शरीरको पुष्ट बनाती हैं। यदि विषकी मात्रा धीरे धीरे बढ़ाई जावे तो शरीरकी सेलें बड़ी मात्राको भी सहने लगती हैं। यहांतक कि कुछ समय पीछे वह मनुष्य संखियाकी इतनी बड़ी मात्राका भी सेवन कर सकता है, जो और मनुष्योंको अवश्य हानि पहुंचाए। जो बात संखिया विषके सम्बन्धमें कही है वह बकटीरियाके विषोंके सम्बन्धमें भी घटती है। यदि किसी व्यक्तिके शरीर-में बकटीरियाके विष बहुत थोड़ी मात्रामें पहुंचाए जावें तो इस विषका उस व्यक्तिपर ज़हरीला असर न होगा। यदि थोड़े थोड़े दिनोंके अंतरसे यह मात्रा बढ़ाई जावे तो वह व्यक्ति इतनी बड़ी मात्राको भी सह सकेगा कि जो यदि एक बारगी दी जाती तो उस-को तुरंत मार डालती। यह बात परीक्षाओंसे सिद्ध हो गई है।

अब हम बतलाते हैं कि बकटीरियानाशक या बकटीरिया-विषनाशक वस्तुएं किस प्रकार बनाई जाती हैं:—

बकटीरियाको शरीरसे बाहर उपजानेकेलिए अनेक प्रकारके भोजन बनाये गये हैं जिनको खाकर वे न केवल जीवित रहते हैं प्रत्युत खूब बढ़ते भी हैं। ज्यों ज्यों उनकी संख्या अधिक होती है वे विष बनाते हैं, जो उस भोजनमें घुल जाता है। यंत्रोंद्वारा विष और बकटीरिया एक दूसरेसे अलग किये जा सकते हैं। कई बार परीक्षा करके यह मालूम कर लिया जाता है कि इस विषकी

कितनी मात्रा किसी विशेष व्यक्तिकी मृत्युका कारण हो सकती है। जो मात्रा मनुष्यको मार सकती है वह एक बड़े घोड़ेको न मार सकेगी, क्योंकि घोड़का शरीर मनुष्यके शरीरसे बड़ा होता है। इसी प्रकार जिस मात्रासे एक मनुष्य मरता है उससे कई कुत्ते या ख़रगोश मर सकेंगे। जो मात्रा एक व्यक्तिको मार सकती है वह उस विशेष व्यक्तिकेलिए विनाशशील मात्रा (lethal dose) कहलाती है; इस मात्रासे कमको अविनाशशील मात्रा (sublethal dose) कहते हैं। यदि हम किसी विषकी एक छोटी अविनाशशील मात्रा किसी जानवरके (जैसे घोड़ा) शरीरमें पहुंचा दें तो उस व्यक्तिको अधिक हानि न पहुंचेगी। शरीरमें पहुंचनेपर इस विषको नाश करनेवाली वस्तुएं बनने लगेंगी। धीरे धीरे यह मात्रा बढ़ाई जाती है, कुछ समय पश्चात् यह मालूम होगा कि घोड़ा न केवल एक विनाशशील मात्राको सह सकता है प्रत्युत उससे भी अधिक मात्रा उसको कोई हानि नहीं पहुंचा सकती। जब देखते हैं कि घोड़ा अब विनाशशील मात्रासे सैकड़ों गुनी बड़ी मात्राको भी सह सकता है तो विष देना बंद कर देते हैं। अब घोड़ेके रक्तमें उस विशेष विषको नाशकरनेवाली वस्तुएं अधिक परिमाणमें हैं और ये वस्तुएं उसके शरीरसे इस प्रकार निकाली जा सकती हैं:—घोड़ेकी कोई बड़ी शिरा (एक प्रकारकी रक्तकी नली) काटी जाती है और जितने रक्तकी आवश्यकता होती है उतना एक शुद्ध बरतनमें इकट्ठा करलेते हैं और फिर कटी हुई शिराके सिरेंको बांध देते हैं जिससे और रक्त न बहे। थोड़ी देरमें रक्त जम जाता है। जमनेपर एक छिछड़ा पीलेसे तरलपर तैरता दिखाई देता है। इस छिछड़ेको तरलसे अलग कर लेते हैं। रक्तका यह तरल भाग सीरम (serum) कहलाता है। इस सीरममें उस विशेष विषको नाश करनेवाली वस्तुएं हैं। इस बातके दो बड़े प्रमाण हैं:—

(१) यदि हम किसी व्यक्तिके शरीरमें विष और इस सीरमका मिश्रण पहुंचा दें तो वह व्यक्ति न मरेगा।

(२) यदि किसी व्यक्तिको वह रोग हो और इस सीरमकी कुछ मात्रा उसके शरीरमें पहुंचा दें तो वह व्यक्ति अच्छा होने लगता है। अब इस सीरमको विषनाशक सीरम कहते हैं।

अभीतक तीन चार रोगोंकेलिए ही उपयोगी सीरम बने हैं, आशा है कि कुछ और रोगोंकेलिए विषनाशक सीरम बनेंगे।

(Diphtheria)—यह शीत प्रधान देशोंका एक भयानक रोग है। इसमें नासिका, कंठ और स्वर-यंत्रका प्रदाह (वरम) हो जाता है, यदि रोग ज़ोर पकड़े तो स्वांस लेनेका रास्ता बंद हो जाता है और रोगीकी मृत्यु हो जाती है। कोई औषधि ऐसी नहीं जो इस रोगको कम कर सके, परन्तु हालमें डिफथीरिया-विषनाशक सीरम बनाया गया है। रोगीके शरीरमें सुईदार पिचकारीद्वारा इस सीरमको पहुंचानेसे रोग तुरंत कम होने लगता है।

सर्प-विषनाशक-सीरम भी बनाया गया है। यह सीरम सरकारी शफ़ाखानोंमें रक्खा जाता है।

सीरमसे रोगोंका इलाज करनेको सीरम चिकित्सा (serum therapy) कहते हैं।

---

## गणितका इतिहास *

[ ले० जी. के. गर्दे, एम्. ए. ]

### ४. सोफिस्टवर्ग और हेपियस ( वि. पृ० ३६४. )

प्रजातन्त्र प्रणालीके कारण यूनानका प्रत्येक निवासी अपनेको राजनीतिज्ञ समझ सकता था। किन्तु अपने देशवासियोंपर अपना प्रभाव डाल सकनेकेलिए सुशिक्षित होना अत्यंत आवश्यक था। अतः सब ही जगह योग्य शिक्षकोंकी चाह

* गताङ्कसे सम्मिलित

थी। बहुतसे लोग सिसिलीमें पैथागोरसके अनुयायियोंसे विद्यालाभकर शिक्षण कार्य स्वीकार कर लेते थे। वे लोग सोफ़िस्ट कहलाते थे। उनका प्रधान केन्द्र एथेंस नगर था। वे अलंकार दर्शन ज्यामिति और ज्योतिष इत्यादि पढ़ाते थे। वैज्ञानिक विषयोंके अध्ययन करनेमें जो समय आवश्यक है वह और लोगोंकी अपेक्षा एथेन्स निवासियोंको यथेष्ट रूपसे मिल सकता था, क्योंकि एथेन्समें नीच कार्य उन दासोंके सिपुर्द था जो संग्राममें विजय प्राप्तिके अनन्तर जीते हुए देशोंसे पकड़ लाये जाते थे। धीरे धीरे गणितविद्याका केन्द्र टेरेन्टमसे उठकर एथेन्स चला आया। सोफ़िस्ट लोगोंके ज्यामितीय आविष्कार विशेषकर वृत्तके ही सम्बन्धमें थे। नीचे लिखी हुई तीन प्रसिद्ध समस्याओंने ही प्रायः उन्हें अपने आविष्कारोंका मार्ग सुझाया—

१ दिए हुये कोणके सम विभाग करना

२ दिए हुये घनको द्विगुणित करना

३ वृत्तका वर्गमें रूपान्तर करना-अर्थात् उस वर्गका भुज निकालना जो क्षेत्रफलमें दिये हुए वृत्तके बराबर हो।

दिये हुए कोणके दो सम विभाग करनेकी रीति सहज ही जान ली गयी। इसके अनन्तर कोणके तीन सम विभाग करनेकी इच्छा हुई। बहुत समयतक सब प्रयत्न निष्फल हुए। अन्तमें प्रायः उसी समय जब कि आर्कैटसने घनको द्विगुणित बनाया, हेपियस नामक एक सोफ़िस्टने (३६४ वि. पू.) एक ऐसे वक्रका आविष्कार किया जिसके द्वारा किसी कोणके, तीन ही नहीं, किन्तु मनमाने अनेक विभाग बनाये जासकते थे। उसे (quadratrix) कोणविभाजक वक्र कहते हैं। वृत्तके बाद यही पहिला वक्र है जिसका गणितज्ञोंने सम्यक् अध्ययन किया। हैपियसने एक ऐसा यन्त्र भी बनाया था जिसकी सहायतासे यह सरलतासे खींचा जा सकता था।

हेपियसके कोणविभाजक वक्रका संक्षिप्त वर्णन

जितने कालमें कख रेखा समगतिसे क से ग तक जाय उतने ही कालमें यदि कोई रेखा समभ्रमणसे कख स्थितिसे कग स्थिति प्राप्त करे तो इन दोनोंके समान कालीन स्थिति जझ और कच के सम्पात बिन्दुओंसे जो वक्र बनेगा उसे कोणविभाजक वक्र कहना चाहिये, क्योंकि कज, कग का जो भाग होगा वही भाग खकच कोण समकोणका होगा। ख़ाली
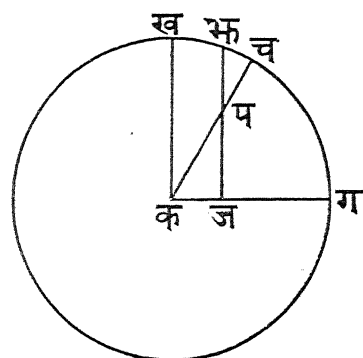
चित्र नं० १

कम्पास और पट्टीसे इसे नहीं खींच सकते। इसीलिए यन्त्र विशेषकी आवश्यकता पड़ी। परन्तु कम्पास और पट्टीके सिवाय और यन्त्रोंका ज्यामितिमें उपयोग करना प्लेटोने अशास्त्रीय ठहराया है।

५. प्लेटो (३७३—२९२ वि० पू०)

पाठक प्लेटोके नामसे परिचित होंगे। यह सुप्रख्यात दार्शनिक साक्रेटीज़का शिष्य था, उसने थियोडोरससे गणितविद्या सीखी थी और इटाली सिसली तथा मिस्रदेशमें भ्रमण किया था। उसके अनेक मित्र हो गये थे। वि० पू० ३५३ में उसने एकेडेमियामें एक विद्यालय स्थापित किया और अपना शेष जीवन शिक्षाप्रचार और ग्रन्थरचनामें बिताया। विद्यालयकी स्थापना मुख्यतः दर्शनशास्त्रके प्रचारके उद्देशसे हुई थी। किन्तु वहां आरंभमें ज्यामिति पढ़ना अनिवार्य था। विद्यालयके द्वारपर एक वाक्य खुदा था जिसका अर्थ था। "ज्यामितिसे अनभिज्ञ कोई व्यक्ति यहां प्रवेश न करे"। इस प्रकार उसने ज्यामितिका प्रचार ख़ूब बढ़ाया। ज्यामितिमें परकार और

पटरीको छोड़ दूसरा यन्त्र उपयोगमें न लाया जाय यह प्रतिबन्ध उसीने किया था। इसीलिए वह अनेक आधुनिक लेखकोंके निन्दाका पात्र हुआ है। सुप्रसिद्ध डेल्फी समस्याओंको हलकरनेकी जो युक्तियां आर्कैटस प्रभृति लेखकोंने बताई थीं उनमें अन्य यन्त्रोंका उपयोग आवश्यक था। अतएव प्लेटोके मतानुसार इन प्रश्नोंके उत्तर ज्यामितीय अर्थात् शास्त्रीय न समझे जाते थे। इनको वह यांत्रिक उत्तर कहा करता था। स्वयं उसने जो एक युक्ति ढूंढ़ी उसमें भी ठीक वही दोष है। परन्तु, "यदि आशास्त्रीय विधिकी अपेक्षा हो तो और गौरव युक्त विधियोंसे मेरी निकाली विधि सरल और स्वल्प है" यही बतानेकेलिए उसने अपनी युक्ति प्रकाशित की। क ख ग और क ख घ दो समकोण त्रिभुज एक ही आधारपर इस रीतिसे बनाये गये हैं कि उनके कर्ण परस्परमें समकोण बनाते हुए काटते हैं।
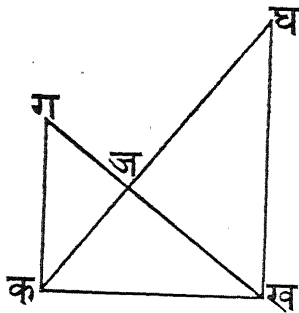
चित्र नं० २

स्वष्ट है कि $\frac{\text{ग ज}}{\text{क ज}} = \frac{\text{क ज}}{\text{ख ज}} = \frac{\text{ख ज}}{\text{ज घ}}$

इन तीनों निष्पत्तियोंको गुणा करके जो फल आयगा, वह प्रत्येक निष्पत्तिक। घन फल होगाः—

$$\frac{\text{ग ज}}{\text{क ज}} \times \frac{\text{क ज}}{\text{ख ज}} \times \frac{\text{ख ज}}{\text{ज घ}} = \left(\frac{\text{ख ज}}{\text{ज घ}}\right)^{३}$$

$$\therefore \frac{\text{ग ज}}{\text{ज घ}} = \left(\frac{\text{ख ज}}{\text{ज घ}}\right)^{३} = \frac{(\text{ख ज})^{३}}{(\text{ज घ})^{३}}$$

$$\therefore \frac{\text{ग ज}}{\text{ज घ}} \times \text{ज घ}^{३} = \text{ख ज}^{३}$$

$$\text{ग ज} \times \text{ज घ}^{२} = \text{ज ख}^{३}$$

$$\text{अब मानलो कि ग ज} = \text{२ ज घ};$$

$$\text{तो २ जघ} \times \text{जघ}^{२} = \text{ख ज}^{३}$$

$$\therefore \text{२ ज घ}^{३} = \text{ख ज}^{३}$$

अर्थात् ख ज पर बनाया हुआ घन जघ पर बनाये हुए घनका दुगना होगा।

६. युडोक्सस ( Eudoxus ) ( जन्म त्रि० पू० ३५३ )

युडोक्सस प्लेटोका समकालीन था। वह अच्छा गणितज्ञ था। प्रमाणोंका गणित जो युक्लिडके पाँचवे अध्यायमें संकलित है प्रायः उसीके ग्रन्थोंका सार है। ज्यामितीय तत्व ढूंढनेकी दोनों रीतियां—संश्लेषण और विश्लेषण ( synthesis and analysis ) उसीने पक्की कीं। उसके अनुसार विश्लेषण वह रीति है जिसमें वांछित तत्वकी प्राप्तिकेलिए उसकी सत्यता पहले स्वीकार कर लेते हैं और परिणामका तर्क करते करते ऐसे तत्वतक पहुंच जाते हैं जिसकी सत्यतामें किसीको संशय न हो। और जिस रीतिमें वांछित तत्वको ज्ञात तत्वोंकी सहायतासे अनुमानकर सिद्ध करते हैं उसे संश्लेषण कहते हैं। विश्लेषणकी रीतिमें यह आवश्यक है कि सारी क्रियाओंका क्रम उलट देनेपर भी सब कहीं सत्यता बनी रहे, अन्यथा उस रीतिसे प्राप्त तत्वकी सत्यताका निश्चय नहीं होता। इसलिए जब जब विश्लेषणद्वारा कोई तत्व निकाला जाता था तब तब संश्लेषणकी रीतिसे भी उसकी उपपत्ति दे दी जाती थी। युक्लिडके ज्यामितिमें संश्लेषण मात्र दिया गया है। जिस विश्लेषणद्वारा वह तत्व पहिले ढूंढे गये वह नहीं दिया है

प्लेटोका सम्प्रदाय प्रायः १०० वर्ष जीवित रहा। यद्यपि उसमें अनेक अच्छे अच्छे गणितज्ञ हो गये तथापि विशेष उल्लेख योग्य केवल दो ही

हैं—पहला युडोक्सस जिसका वर्णन ऊपर हो-चुका है और दूसरा मिनेकमस जो युडोक्ससका शिष्य था।

७. मिनेकमस ( Menaechmus )

मिनेकमसने शंकु संबंधी गणितकी नींव डाली। उसीने शङ्कुके समधरातलद्वारा काटे जानेपर कई वक्रों-शङ्कुच्छिन्नों-का उत्पन्न होना बताया। आधुनिक गणितकी प्रायः सभी शाखाओंमें इन शङ्कुच्छिन्नोंके गुणोंका उपयोग पाया जाता है। एलेक्ज़ैण्ड्रियानिवासी एपोलोनियस नामक गणितज्ञ विक्रमसे पूर्व दूसरी शताब्दीमें विद्यमान था। उसने शङ्कु च्छिन्नोंकी ज्यामितिमें बहुत उन्नति की। इन वक्रोंकी सहायतासे १२ वीं शताब्दीमें अरबवालोंने घन तथा चतुर्घात (biquadratic) समीकरणोंका चित्रीय विधिसे समाधान किया था। परन्तु मिनेकमसने ही इन वक्रोंको सबसे पहले गणितमें स्थान दिया। जबसे सिकंदरने यूनानपर विजय पाई तबसे एथेन्सका महत्व घट गया। वहांके विद्यालय तो बने रहे परन्तु धीरे धीरे ऐलेकज़ैण्ड्रिया नगर विद्याका केन्द्र बन गया। यह प्रख्यात नगर सिकंदरने मिश्रदेश जीतनेपर बसाया था। सिकंदरका विचार सारी दुनियां जीतनेका था। उसने ११ वर्षमें उस दुनियांका बहुत सा भाग जीत भी लिया जो उस समय मालूम थी। परंतु सिकंदर ही क्या, बड़ेसे बड़े राजाकेलिए सारी दुनियांका जीत लेना वैसा ही असंभव था जैसा आज है और आगे बना रहैगा। उसकी जो गति फ़ारिसमें बड़ी तेज़ थी वह भारतमें आकर रुक गयी। उस समय उसकी सारी सेना हतोत्साह हो चुकी थी और उसे यहांसे लौटते ही बना। वह अपने देशमें पहुँच भी न पाया। जो साम्राज्य ११ वर्षोंके कठिन परिश्रमसे प्राप्त हुआ था वह उसके प्राणान्त होते ही टुकड़े टुकड़े हो गया। इसी समय यूनानी सभ्यताका भारतीय सभ्यतासे सम्पर्क हुआ और संभव है कि तबसे प्रायः ५०० वर्षोंतक दोनों देशोंके बीच समागम होता भी रहा। इसका फल विचारोंका विनिमय हुआ। यूनानी दर्शनमें अनेक भारतीय विचारोंने स्थान पाया। फ़ारिस तथा भारतकी सभ्यताका जो प्रभाव यूनानी सभ्यतापर पड़ा उसकी चर्चा इस लेखके विषयके अंतर्गत नहीं। यह भी संभव है कि ज्योतिष संबंधी कुछ यूनानी विचार भारतीयोंने ग्रहण किये परन्तु भारतीय गणित भारतकी ही निजी संपत्ति है यह मैं आगे चलकर दिखानेका प्रयत्न करूंगा। यूनानियोंके विदेशोंमें भ्रमण करने और उन देशोंकी सभ्यताओंके सम्पर्कसे उनके विचारोंमें जो विकास हुआ उससे यूनानमें विद्योपार्जनकी लालसा और भी बलवती होगई। टालमीने ऐलेक्ज़ैंड्रियामें विश्वविद्यालय स्थापित किया। वहां सब देशोंसे लाकर सब प्रकारके ग्रंथ एकत्रित किये गये थे। कहते हैं कि १० वर्षोंके भीतर वहांके पुस्तकालयमें छः लाख पुस्तकोंका संग्रह हो चुका था। भिन्न भिन्न विषयोंके पढ़ानेकेलिए ऐथेन्ससे सुयोग्य अध्यापक बुलवाये गये। गणितका अध्यापन कार्य्य सुविख्यात गणितज्ञ यूक्लिडको सौंपा गया था।

## पशु पक्षियोंका शृंगार-रहस्य

[ ले० सालिग्राम वर्म्मा ]

Nature is ever making signs to us, she is ever whispering to us the beginnings of her secrets: the scientific man must be ever on the watch, ready at once to lay hold of nature's hint, however small, to listen to her whisper, however low.--*Foster.*

प्रकृति हमें सदैव अपनी ओर आकर्षित करनेकी चेष्टा करती रहती है, वह अपने वीणाकी मधुर ध्वनि सदैव हमारे कानोंतक पहुंचाती रहती है, अतः वैज्ञानिकको सचेत रहकर प्रकृति देवीकी

इस अपूर्व कृपासे भरसक लाभ उठाना चाहिये, और उसके प्रत्येक रहस्यपूर्ण कृत्यका मर्म जानने-का उद्योग करना चाहिये।

प्रकृति-भाण्डार रहस्य-पूर्ण और अनन्त है। मनुष्य अपनी नियमित बुद्धिसे जहांतक हो सकता है प्रकृति देवीकी आश्चर्यपूर्ण लीलाओंका रहस्योद्घाटन करनेमें लगा रहता है, और यह देवी उसे अपना परम भक्त और अनन्य उपासक जान उसकी सेवाके उपलक्ष्यमें उपहार स्वरूप अपने चिर-संचित भंडारसे प्रायः बहुमूल्य रत्न दे दिया करती है। यही उपहार वैज्ञानिक संसारकी अमूल्य पूंजी है, इन्हींकी आभा और प्रभा सारे संसारको आश्चर्यान्वित कर रही है, और इन्हींकी महिमासे सारे संसारका हृदय उस अनन्त, परब्रह्म, परमात्माके प्रकाशको साक्षात झलकता हुआ देख रहा है।

विज्ञानकी इस अद्भुत शक्तिको देखकर, इसके अलौकिक वैभवको जानकर तथा इसकी सर्व्वोच्च शिक्षाको ग्रहण करके भला कौन ऐसा मनुष्य हो सकता है जो संसारको स्वप्नवत समझ, अपने कर्तव्यसे विमुख हो, आप ही अपना अधःपतन देखना चाहेगा। वैज्ञानिक-केलिए सारा संसार प्रयोगशालाका काम देता है और सांसारिक कार्य्योंके आन्तरिक रहस्य जाननेकी चेष्टा ही उसके वैज्ञानिक प्रयोग हैं, तथा इस संसारकी प्रत्येक शक्ति, और उसके फल स्वरूप कार्य्य, उसके प्रयोगास्त्रोंका काम देते हैं। इस विवेचनाके अनुसार विज्ञानका क्षेत्र बहुत विस्तृत और व्यापक है,तथा हम इसकी सहायतासे संसारके सर्व्वोत्तम सुखोंको भोग करते हुए अपने जीवनके आदर्शको प्राप्त कर सकते हैं।

आधुनिक सभ्यताकी प्रबल तरंगोंके प्रवाहमें पड़कर, प्रत्येक मनुष्यको अपनी इस शारीरिक, मानसिक और आर्थिक उन्नतिका अभिमान होना स्वाभाविक मालूम होता है; परन्तु इस अभिमानके साथ ही साथ अपनी सर्व्वोत्तमता और सर्वश्रेष्ठताका अहंकार होना अनुचित और सर्वथा निषिद्ध है। क्योंकि भाषा और विवेचना शक्तिके अतिरिक्त अन्य जितनी भी शक्तियां तथा गुण मनुष्योंमें पाये जाते हैं, अन्य जीवधारियोंमें भी वे सब उतनी ही नहीं परन्तु उससे भी अधिक मात्रामें मौजूद हैं। इतना ही नहीं वरन् बहुत सी क्रियायें, जिन्हें मनुष्य अपनी सभ्यताका स्मारक समझते हैं और जिनके अभावमें वे अपने स्वजातियोंको असभ्य और जंगली आदिक सम्मानित नामोंसे पुकारा करते हैं, उन्होंने स्वयम् उन जीव जन्तुओंसे सीखी हैं जिन्हें वे कभी भी, इस विचारसे, सम्मानित दृष्टिसे नहीं देख सकते हैं। लघु जीवधारियोंमें अपत्यस्नेह कितना अधिक है इसका वर्णन पाठक विज्ञानकी पिछली किसी संख्यामें पढ़ चुके हैं, आज अन्य जीवधारियोंकी पवित्रता और शृंगाराभिरुचिका वर्णन करनेका विचार है।

सील

चित्र नं० १

यदि आधुनिक यूरोपियन समाजकी सभ्यताके आदर्शानुसार इन जीवोंके शृंगार आदिकी विवेचना की जाय तो पहरावेकी चटक भड़क और बालोंको विचित्र विचित्र प्रकारसे

काढ़ने और संवारनेके फ़ैशनको सभ्यताका चिन्ह समझनेवालोंको बड़ा कौतूहल होगा। क्योंकि मुंह धोना, स्नान करना, दांत साफ़ करना, बालोंमें कंघी करना इत्यादि जितने भी फ़ैशनयुक्त कार्य्य सभ्य मनुष्य करते हैं, वे ही सब कार्य्य अन्य जीवधारी भी बड़ी उत्तमता और योग्यतासे करते हैं। यहांतक कि यदि वास्तविक दृष्टिसे देखा जाय तो बहुतसे पक्षी केवल पवित्रताके ही विचारसे जलविहार किया करते हैं। पर अन्य जीवधारी जीभसे चाटकर तथा मट्टीमें लोटकर अपने शरीरको स्वच्छ करते हैं, तथा मट्टी और पानीमें विहार करना केवल सुखदायक और श्रमहारी जानते हैं! पक्षियों तथा अन्य जीवधारियोंकी यह क्रियायें कभी कभी बड़ी बुद्धिमत्ता और उपयोगिताकी द्योतक होती हैं। स्तनपायी जीवोंमें हाथीका जलविहार और मट्टी लपेटकर स्नान करना उपरोक्त कथनका बड़ा अच्छा उदाहरण है। हाथीकेलिए मट्टी लपेटना और कीचड़में लोटना बड़ा लाभदायक है और इस विचारसे हाथियोंके स्नानकेलिए यह परमावश्यक क्रिया है। इस भूधराकार जीवकी चमड़ी प्रायः सब जीवोंसे मोटी और कड़ी होनेपर भी इसे जंगलोंमें खटमलकी तरहके एक प्रकारके कीड़ोंसे बड़ा कष्ट पहुंचता है और वे इसे ऐसी निर्दयतासे काटते हैं कि इतना बड़ा डील डौल होनेपर भी यह इन तुच्छ जीवोंके आक्रमणसे व्याकुल हो जाता है, और इन्हें नष्ट करनेकेलिए ही सदैव चेष्टा किया करता है। पाठकोंने प्रायः कुत्तोंको, जिन्हें कलीलों पड़ जानेसे बड़ा कष्ट होता है, कीचड़में लोटते हुए देखा होगा। ठीक इसी प्रकार और इसी आशयसे गजराजको भी इन कष्टदायक जन्तुओंका विनाश करना पड़ता है।

प्रायः दुपहरके समय हाथी किसी अधसूखे तालाबमें जाकर कीचड़में लोटने लगता है और जब उसके सारे शरीरसे कीचड़ लिपट जाती है तो वह धूपमें आकर घंटोंतक चुपचाप बिना हिले डुले खड़ा रहता है। और जब यह मट्टीकी तह सूख जाती है तो वह अपने शरीरको सिकोड़कर और इधर उधर हिलाकर इसे छुड़ा डालता है और इस प्रकार मट्टीके साथ साथ इन कीटोंको अपने शरीरपरसे अलग कर देता है। कुत्ते सुअर और भैंसे इत्यादि जानवर भी इसी प्रकार इन कीटोंसे अपनी रक्षा करते हैं। जलविहार तो हाथी प्रायः रातके समय किया करते हैं, और इस अवसरपर या तो पूर्णतया जलमग्न होकर अथवा जलमें खड़े होकर अपनी सूंड़से पानीके फुहारे छोड़ते हैं। और स्नानकरनेके पश्चात किसी पासके वृक्षसे डाली तोड़कर, सूंडसे पकड़कर पंखेकी भाँति हिलाने लगते हैं। पाठकोंमेंसे बहुतोंने हाथीको इस प्रकार डालीके पंखेसे हवा करते हुए तथा मक्खियाँ उड़ाते हुए देखा होगा और इसलिए वे अवश्य ही कह सकते हैं कि पंखा हिलानेमें हाथी जो दक्षता और निपुणता दिखलाता है वह कहांतक सराहनीय है।

आधुनिक फ़ैशन (फ्रांसीसी इत्यादि) की यदि एक प्रदर्शनी इस प्रकार की जाय कि उसमें मनुष्योंके साथ साथ अन्य जीवोंको भी समान स्थान मिले तो पाठकोंको आश्चर्य होगा कि इस विषयके सारे पदक और उपहार इन्हीं जीवधारियोंके हिस्सेमें आ जायंगे। उत्तरीय ध्रुवके हिमपूर्ण समुद्रोंमें एक प्रकारकी रुएंदार सील (furbearing seal) रहती है। यह अलास्का, बेहरंग स्ट्रेट और लैब्रेडौरके पास पाई जाती है और न्यूफाउंडलेण्ड तथा ग्रीनलेण्डमें इनका शिकार भी किया जाता है। यह भी स्तनपायी जीवोंमेंसे है और मांसाहारी amphibious कहलाता है। यह ३ से लेकर ५ फुटतक लंबी होती हैं, इनके अगले पैर पिछलोंसे अधिक बड़े होते हैं और हर पैरमें पांच पांच उँगलियां होती हैं। इन उंगलियोंके बीचमें जालीदार झिल्ली होती है और पिछले पैर पीछेकी ओर मुड़े होते हैं। यह जीव कई प्रकारके होते हैं, मुख्य इनमेंसे (Walrus)

कहलाती हैं। कई प्रकारकी सील ८० फुटतक लंबी होती हैं। रुएंदार सील भी दो प्रकारकी होती हैं। एकके रुएं लंबे, मोटे और घने होते हैं और दूसरीके इनसे छोटे और मुलायम होते हैं। देखो चित्र नं (१)
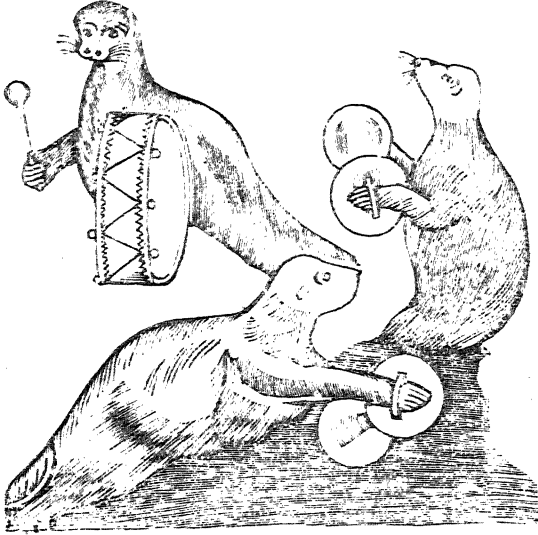
चित्र नं० २

इन जीवोंकी कानोंकी जगह बहुतसे छोटे छोटे छिद्र होते हैं और जब इन्हें पानीमेंसे निकालकर थल भागमें लाते हैं तो टांगें बहुत छोटी होनेके कारण उसके भारको नहीं संभाल सकती हैं और वह पेटके बल घिसटकर चलने लगते हैं। इनके अगले पैरों तथा हाथोंमें एक प्रकारका छोटा सा कंघा बना होता है जिससे वे अपने चहरेके बालोंको जो मूंछोंकी भांति ऊपरके ओठोंपर होते हैं, साफ किया करते हैं। परन्तु जब गरमी पड़ती है तो यही कंघा इनके पंखेका काम देता है और बहुतसे यात्रियोंने अकसर इनको झुंडोंमें खड़े हुए पंखा झलते हुए देखा है। इन लोगोंका कहना है कि यह जीव बड़ी निपुणता और स्वभाविकतासे पंखे हिलाते हुए देखे गये हैं और बड़े सुन्दर मालूम होते हैं। इन जीवोंकी इस आदतसे यूरोपियन यात्रियोंने बड़ा लाभ उठाया है और इन्हें पकड़ पकड़ कर एक प्रकारकी वाद्य मंडली बनाई है जो छोटी छोटी झाझें और डफ़ बजाया करती हैं। देखो चित्र नं (२)

---

## गुरुदेवके साथ संसार-यात्रा ❀

[ अनुवादक महावीरप्रसाद बी. एस-सी., एल्. टी. ]

यह मेरा परम सौभाग्य था कि १९११ ई० में गुरुजीने मुझे शिष्य बनानेकी कृपा की। तबसे एक दिन भी ऐसा नहीं बीता जिसमें उनके शिष्योंके सन्मुख ऐसी अपूर्व घटनाएं न उपस्थित हुई हों जो दिन दिन महत्वमें बढ़ती जाती थीं। गुरुदेवजी प्रातःकाल आये, हम लोगोंसे बातें कीं और प्रतिदिनका कार्य्य-विवरण उपस्थित किया। वह बहुधा हम लोगोंको एक बंद लिफ़ाफ़ा देते थे जिसमें अपने नये प्रयोगोंके परिणाम उनके समाप्त होनेके पहले ही लिख देते थे। अन्तमें हम लोगोंको यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता था कि जो कुछ वह पहलेसे ही लिख रखते थे वही अक्षरशः सत्य निकलता था। इस प्रकार हम लोगोंको यह जान पड़ा कि उद्देश्य रहित लस्टम फस्टम काम करनेमें और वास्तविक परखमें जो वर्षोंके कठिन परिश्रमसे प्राप्त होती है बहुत अन्तर है। उनके कुछ सिद्धान्त ऐसे अद्भुत और उस समयतकके माने हुए सिद्धान्तोंके इतना प्रतिकूल थे कि अग्रगण्य वैज्ञानिक पत्र 'नेचरने' गुरुदेवजीके परिज्ञान, सिद्धान्तों और आविष्कार करनेकी अपूर्व शक्तिकेलिए सबसे बढ़कर प्रशंसा करते हुए भी

❀ जनवरी १९१६ के माडर्न-रिव्यू और उसके बादवाले अंकोंमें अध्यापक जगदीशचन्द्र बसुके एक शिष्यने उपर्य्युक्त नामके लेखमें उस यात्राका वर्णन किया है जो अध्यापक महोदयने अपने आविष्कारोंको सिद्ध करनेकेलिए की थी। विज्ञानके पाठकोंके विनोदार्थ उसीका अनुवाद अबसे दिया जायगा।

सावधान करनेको यों लिखा था "डाक्टर बोसके आविष्कारोंका परिणाम सर्वोच्च कोटिका होता यदि इससे हम लोगोंका विश्वास लगातार घटता न जाता"। यह स्वतन्त्र कथन बड़े कामका सिद्ध हुआ क्योंकि इससे उस समयके ज्ञानकी स्थितिका और गुरुजीकी कल्पनाओंकी नितान्त नवीनताका पूर्ण परिचय हो गया। और बातोंमें उनके सिद्धान्त चुपचाप मान लिये गये और भिन्न भिन्न संग्रहकर्त्ताओंने उनको अपना मानकर प्रसिद्ध किया। इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिकाके एक लेखमें मिलता है। जो पीछे आना चाहिए उसको यहीं लिखनेके लिए क्षमा मांगता हूं कि 'नेचर' को पूरे ६ वर्षके पश्चात विश्वास हुआ और तबसे उसने १० कालमका एक लम्बा लेख गुरुदेवजीके आविष्कारोंके महत्वपर लिख डाला।

अभी मैं उस समयके सम्बन्धमें कुछ कह रहा था जब उनके सिद्धान्तोंपर तीव्र आक्रमण हो रहे थे, क्योंकि वह लोगोंके विश्वासके बिलकुल प्रतिकूल थे। उस समय यही धुन थी कि सारे संसारको कैसे विश्वास दिलाया जाय। उनको यह ज्ञात हो गया कि वादाविवादका परिणाम कुछ भी नहीं होगा। सत्यकी जांच पौदोंकेद्वारा ही होनी चाहिये। क्या कभी यह सम्भव होगा कि पौदोंका अज्ञात अभ्यन्तरिक इतिहास उन लेखोंकेद्वारा प्रकट किया जाय जो पौदे स्वयम् लिखें? उनके चित्तमें यह प्रश्न कई वर्षतक लगातार उपस्थित रहा। मित्रों और शिष्योंसे मामूली बातचीतमें भी यह पता चलता था कि उनका चित्त भीतर ही भीतर चुपचाप कोई काम कर रहा है और कभी कभी उनका चेहरा थोड़ी देरकेलिए यकबारगी प्रकाशित दिखने लगता था। उनके विचार subconscious अनाविर्भूत हो गये थे। हम लोगोंको जो कठिन समझ पड़ता था वह और अन्य मिथ्या कल्पनाएं गुरुजीके सामने नहीं टिक पाती थीं। उनकेलिए आविष्कार स्वतः दीख पड़ने लगे और नव कल्पनाएं खेलकी तरह हो गयीं।

गुरुदेवके कामका महत्व संसार बहुत धीरे धीरे समझता था इसलिए हम लोगोंका धैर्य्य छूट गया। हम लोगोंकी इच्छा थी कि जैसा हम लोग करते थे लोग कमसे कम देख ही लें। परन्तु गुरुजी हमारी ऐसी दशापर हंसते थे। उनको इस बातकी परवाह नहीं थी कि लोग कामका महत्व समझते हैं या नहीं। यदि किसी बातकी परवाह थी तो इसकी कि क्या वे सत्यके पीछे पूरी तरहसे पड़े हुए हैं। परन्तु हम लोगोंके अधीर होनेका प्रभाव उनपर भी धीरे धीरे पड़ा होगा क्योंकि एक दिन उन्होंने कहा "मुझे यह करना ही होगा परन्तु यह एक बड़ी भारी उलझन है जिसमें एक मनुष्यको सारे संसारके विरुद्ध सामना करना पड़ेगा।" परन्तु यदि कोई कम होते हुए भी सत्यपर दृढ़ रहे तो कठिनाइयां भी हल्की हो जाती हैं।

गुरुजीने स्वयम्-सूचक-यंत्र (self-recording apparatus) तैयार कर लिया और पौदे स्वयम् लिखने लग गये। पाश्चात्य वैज्ञानिक संसारके सामने पौदोंके वास्तविक अंकनका प्रत्यक्ष प्रमाण अवश्य विश्वास लावेगा। परन्तु यह काम सुगम नहीं था क्योंकि पौदे ग्रीष्म ऋतुके मध्यमें ही युरोपमें हरे भरे रह सकते हैं, जिस समय सारे विद्यापीठ बन्द रहते हैं। और ऋतुओंमें नङ्गे तनोंके अतिरिक्त पेड़ोंमें कुछ नहीं होता क्योंकि पौदे शीतस्वापमें अचेत रहते हैं। इस कठिनाईका सामना कैसे किया जाय? इसको छोड़कर और कोई उपाय नहीं था कि अपने ही पौदोंको वहां ले चलें और उनके कोमल शरीरको यात्राकी कठिनाइयोंसे बचानेका यत्न करें।

गुरुजीका चित्त इन सब कठिनाइयोंसे बहुत उद्विग्न हो गया। इसी सम्बन्धमें उन्होंने मेरेलिए अवश्य सोचा होगा परन्तु डरते इसलिए थे कि थोड़े ही समयकेलिए पाश्चात्य

बाहरी तडक भडक देखकर मेरा मन विचलित न हो जाय। मुझे साफ़ साफ़ याद है, जब एक दिन प्रातःकाल उन्होंने प्रेम और दयाके साथ मुझसे अपनी आशाओं और शंकाओंका वर्णन किया। भला इसका मैं क्या उत्तर दे सकता था, पर क्या कर सकता था? न तो मैं अपने बलको जानता था और न अपनी दुबर्लताको। हां यदि लाभ हो तो मैं प्रचण्ड समुद्रमें भी कूदनेको तैयार था। क्योंकि शिष्य इतना ही कर सकता है। परन्तु जब कभी हमने अपने शरीरको भी न्योछावर करनेका विचार प्रकट करना चाहा तब तब उन्होंने अपनी अप्रसन्नता प्रकट की। वह दुर्बलोंको नहीं चाहते थे वरन् वह मनुष्योंको ऐसा बनाना चाहते थे जो अपनी महत्तम बाढ़तक पहुंच सकें और काम कर सकें। हम लोगोंके चित्तमें यह प्रभाव डालनेमें उनको कभी थकावट नहीं जान पड़ती थी कि शक्तिका पूर्ण योग स्थिर है। इसीलिए यदि वह शक्ति वाणीद्वारा निकल गयी तो यह अनिवार्य्यहै कि चरित्रका गुप्त बल कम हो जाय। मेरे चलनेके सम्बन्धमें उन्होंने कहा कि वह जोखिममें पड़ेंगे और इसलिए मुझे तैयार होनेकी आज्ञा देते हैं।

जब कार्य्यप्रणालीपर विचार हो गया तब गुरुजीने तुरन्तही तैयारियां कर लीं। वह इस समय शक्तिके साक्षात अवतार समझ पड़ते थे और उनकी भावना सूक्ष्मसे सूक्ष्म बातोंमें भी निश्चित हो गयी थी। साधारण आलपीनसे लेकर बड़े पेंचदार यन्त्रतक सब उठाने योग्य वस्तुएँ सन्दूकोंमें बांधी गईं। हमारे सब गुरुभाई तैयारी करनेके आनन्दमें मग्न थे। मेरा काम केवल यह था कि उनसे प्रत्येक यन्त्रकी विशेष कठिनाइयोंको जानूं और उनको दूर करनेके उपाय सीखूं।

पौदोंको हाथमें ही ले जाना था। चार नमूनोंसे अधिक नहीं लिये जा सकते थे। इनमेंसे दो लाजवन्तीके (छुई मुई) पौदे थे और दो बनचाँड़ाल—डेस्मोडियम जैरन या टेलीग्राफ प्लान्ट—के। लाजवन्तीके पौदे तो अच्छी दशामें थे परन्तु ऋतु बनचांडालके विपरीत थी क्योंकि इनकेलिए सबसे अच्छा समय जुलाईसे नवम्बरतक रहता है। मार्च मास होनेके कारण बीज लग चुके थे और पौदे सूख गये थे। बड़ी कठिनाईसे मुझे एक पौदा कुछ मुरझाया हुआ मिला। पासवाले मकानके एक ड्योढ़ीवानसे मैंने अकस्मात सुना कि उसके पास एक ऐसा अपूर्व पौदा है जो प्रेतोंको भगा देता है। जब मैं उसकी जांचकेलिए बाहर निकला तब जान पड़ा कि भूत भगानेवाला पौदा वही बनचाँड़ाल है जिसकी मुझे इतनी आवश्यकता थी। इस पौदेका आकार अच्छा था और हृष्ट पुष्ट भी था। मैंने अपने मूढ़ विश्वासी मित्रको विश्वास दिलाया कि हमारा जातीय भविष्य किस प्रकार उस पौदेपर निर्भर था। यद्यपि उसकेलिए काला अक्षर भैंस बराबर था तथापि वह इस जातीय पुकारको समझ गया। यह डरते हुए कि कदाचित उसका उदारभाव बहुत देरतक न ठहरे मैंने इधर उधर देखा और एक पकानेका बर्तन पाया। मैं इसी बर्तनका गमला बना और अपने अमूल्य पौदेको इसमें रख घरकी ओर चला। मैंने अपने छोटे मकानके आंगनमें इसको रख दिया और बड़ी सावधानीसे इसको सींचा। मैं प्रातःकाल यह देखनेको बड़ा उत्सुक था कि पौदा कैसा रहता है। परन्तु शोक! कि एक अवैज्ञानिक बछड़ा रातको घरमें घुस आया, पौदेके सिरेको कुतरकर खा गया और मुख्य तनेको बीचसे तोड़ डाला। पौधा बहुत लंगड़ा दीखता था परन्तु पंगु भी विश्वाससे पहाड़ चढ़ सकता है और मैंने समझा कि दो ही बहुत हैं।

गुरुजी स्थलमार्गसे गये जिससे पहुंचनेमें कुछ जल्दी होती है। मैं कलकत्तेसे एस. एस. ईजिप्ट जहाज़पर जलमार्गसे गया। इस यात्रामें मेरे साथी दो लाजवन्तीके पौदे थे जो हृष्ट पुष्ट थे और दो बन चांड़ालके थे जिनमें

एक दुर्बल था और दूसरा पंगु। संसार भरके धक्केका सामना करनेकेलिए यही बल था जिससे चढ़ाई की गयी। अन्तमें विजयी होनेमें मुझे कुछ भी संदेह नहीं था। मैं अपने गुरुको और जिस कार्यका वह झंडा उठाये हुए थे उसको भलीभांति जानता था।

छुई मुई ऐसे पौदे बड़े लड़कोंके चित्तको भी अपनी ओर खींच लेते हैं। हमारी प्रयोग शालाके पाससे जो विद्यार्थी जाता था यह देखनेकेलिए अवश्य रुक जाता था कि ज़रासी सुई चुभो देनेसे वा चुटकीमें दवा देनेसे पौदे कैसे सो जाते हैं। इन सब बातोंसे भारतवर्षमें कोई हानि नहीं होती थी क्योंकि यहां बहुतसे पौदे मिल सकते थे परन्तु समुद्र यात्रामें लड़कों-को उत्सुकतासे बचानेकेलिए पौदोंकेलिए तारके छन्नेका एक छोटा पींजड़ा बना लिया था। कप्तानने उद्देश्यकी उपयोगिता समझकर विशेष सहायताकी थी। प्रतिदिन प्रातःकाल यह पूछकर हंसी की जाती थी कि मेरे पींजड़ेके पखेरूकी क्या दशा है।

यदि समुद्र रोगसे मुक्त रहे तो जहाज़परका जीवन निस्सन्देह बड़ा आनन्ददायक होता है। इस बातमें मैं बड़ा भाग्यवान था और अपना समय पढ़नेमें और पौदोंकी देख रेखमें बिताता था। जो बन्दरगाह मार्गमें पड़ता था उसीसे पौदोंकी पूर्ण व्यवस्था गुरुजीके पास भेज दी जाती थी। पूरे चार सप्ताहमें शिष्यको नाना प्रकारके अनुभव हुए जिसमें जैसे जैसे पौदे विकसित और मुर्छित होते थे तैसे तैसे वह अपनेको कभी तो अभिलाषाके उच्च शिखरपर पाता था और कभी निराशाके गहरे समुद्रमें। मुझे यह देख कर बड़ा आनन्द हुआ कि पङ्कके भी दो हरे अंकुर निकले जो मुझे शुभ लक्षण समझ पड़े।

जबतक जहाज़ हिन्द-महासागरमें था, पौदे उसी प्रकार हरे भरे थे जैसे वह अपनी जन्मभूमि-में थे। लालसागरमें यात्रा करते हुए उनको धूप मिलती थी और गरमीसे प्रफुल्लित थे। जब हमने भूमध्यसागरमें प्रवेश किया एकाएक बहुत तीव्र ठंडकका सामना करना पड़ा जिससे पौदे मुरझा गये और पत्तियां लटक पड़ीं। जैसे जैसे पच्छिम-की ओर बढ़ते गये ठंडक बढ़ती ही गयी और जब लायनकी खाडीमें पहुंचे तब इस शंकासे उत्साह बहुत कम हो गया था कि क्या मैं इस थातीको उचित स्थानपर पहुंचा सकूंगा। मुझे यह बतलाया गया कि विस्केकी खाढ़ी पौदोंकेलिए काल ही होगी। मेरे वशमें केवल यही था कि मैं पींजड़ेको कम्बलोंसे खूब लपेट दूं और पौदों-को केवल उस समय खोलूं जब थोड़ी देरकी धूप हो।

एक लम्बी यात्रा करनेके पश्चात हम लंडन पहुंच गये। गुरुजी कुछ दिन पहले ही पहुंच गये थे और साउथ केन्सिंगटनमें एक सुन्दर घर ले रक्खा था। वह अपने साथ सूक्ष्म यंत्रोंको दो सन्दूकोंमें भरकर ले गये थे। जिस सन्दूकको वह अपने साथमें ले गये थे, वह सुरक्षित था परन्तु दूसरा सन्दूक रेलके कर्म्मचारीको सौंपना पड़ा था जिसका परिणाम यह हुआ कि जो समुद्रकी कठिनाइयोंको कुशल पूर्वक सह सके थे वह ब्रिटिश कर्म्मचारीके हाथोंमें तितिर बितिर हो गये। अब केवल दो यन्त्र resonant अनुनादी और oscillating recorders दोलन-अंकी बचे थे और वह विचित्र crescograph जो पौदोंकी सूक्ष्मसे सूक्ष्म बाढ़को तुरंत अंकित कर देता था इतना बिगड़ गया कि उसकी मरम्मत असम्भव हो गयी। पहले दो यन्त्र उद्देश्यकी सिद्धिकेलिए अलम् ठहरे। इन अत्यन्त सूक्ष्म यन्त्रोंको लम्बी यात्रामें हिलनेसे बचाना असम्भव था। इसलिए कहीं कहीं मरम्मत करने और फिरसे बैठानेकी आवश्यकता पड़ी थी। सौभाग्यसे लन्डनमें गुरुजी-के एक शिष्य डाक्टर ज्योतिप्रकाश सरकार भी रहते थे जो भारतवर्षसे जानेसे पहले गुरुजीसे कई वर्षतक शिक्षा पा चुके थे। उनकी सहायता इस

समय हमारेलिए बड़ी ही अमूल्य ठहरी। उनके कौशलसे यह यंत्र फिर सूक्ष्म काम करने लग गये।

पौदोंके साथ मेरी परीक्षा वास्तवमें उस समयसे आरम्भ हुई जब हम लन्दनमें पहुंचे। अप्रैल मासका अन्त था। दिन अन्धकारमय था और कड़ाकेकी सर्दी पड़ रही थी, यद्यपि यह वहांका ग्रीष्मकाल कहा जाता था। मैंने पौदोंको एक बन्द गाड़ीमें लेकर उसकमरेमें सावधानीसे रख दिया जो गैसकी गरमीसे गरम रक्खा जाता था और मुझे आशा थी कि अब हम सुरक्षित स्थानमें पहुंच गये। परन्तु दूसरे दिन प्रातः काल जब मैं पौदोंको देखने गया, मेरी सारी आशाओं-पर पानी फिर गया, यद्यपि गुरुजीके प्रयोगोंसे मुझे इस बातकेलिए प्रस्तुत रहना चाहिए था कि वनस्पति-जीवनकेलिए गैस बहुत ही हानि-कारक है तथापि मुझे यह कभी नहीं सूझ पड़ा था। जो चार पौदे अबतक अज्ञात कठिनाइयोंको झेलते हुए भी बच गये थे वह नितान्त मृत समझ पड़े और यह सब मेरी अदूरदर्शिताके कारण। पत्तियां ढीली होकर लटक गयी थीं। और छोटी छोटी पत्तियां पीली पड़ गयी थीं नाना प्रकारके उपाय करनेपर दो तो खिल उठीं परन्तु दो बिल-कुल मर गयां।

अब हमलोगोंके सामने यह कठिनाई उपस्थित हुई कि इन दो पौदोंको कैसे जीवित रक्खें, विशेषकर रातके समय। यदि अन्दर रखते तो विषैली गैससे बचना कठिन था और बाहर सर्दीसे ऐंठ जाते। इस कठिनाईमें गुरुजीने जो उपाय सोचा उससे मेरी घबड़ाहट दूर हो गयी। गुरुजी राजकीय वनस्पति-बाग़ोंके डाइरेक्टरके पास रीजेन्टस पार्कमें गये, जो पहले ही नये आविष्कारोंकी विचित्रताको सुन चुके थे। हर एक प्रकारकी सहायताकेलिए उन्होंने बात दी और हम लोगोंको ताप-भवनमें ले गये जो गरम देशके पौदोंकेलिए विशेष प्रकार-से तैयार किया गया था। लन्डनके कुहरे और हिम उत्पन्न करदेनेवाले तापक्रमने मुझे उत्साह शून्य कर दिया था। परन्तु ज्योंही मैंने ताप भवनमें प्रवेश किया मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो मैं अपनी प्यारी जन्मभूमिमें पहुंच गया। जो आनन्द मुझे उस समय वाष्पोष्ण गरमीसे मिला उसको मैंने भारतवर्षमें कभी नहीं अनुभव किया था। वहां और भी अनोखी बातें थीं। पूर्ण विकसित कमल सरोवरको शोभायमान कर रहे थे और धानके पौदेका तना बालीके बोझसे झुका हुआ था। इनसे भी अधिक अपूर्व हृष्ट पुष्ट केलेका वृक्ष था जिसमें पके फल लगे हुए थे। दोनों कृश पौदोंको झट मालूम हो गया कि अच्छा समय आ रहा है। बाग़ोंके रक्षक मिस्टर केल्पने वादा किया कि इन परदेशियोंकी देखभाल स्वयम् करेंगे। कहनेमें यह आश्चर्य समझ पड़ता है कि उस दिनसे वह बढ़ने लगे मानो उनको भी इसका ज्ञान हो गया कि उनके द्वारा बहुत बड़े बड़े काम करने हैं और हम लोगोंको निराश कदापि न करेंगे। यह जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि हम लोगोंके साथ दया करनेसे वन-स्पति-वाटिकाओंको भी बड़ा लाभ हुआ। तुरन्त ही गुरुजीके महान् कार्य्यकी चर्चा लोगोंमें होने लगी और रीजेन्ट पार्कमें झुन्ड-के झुन्ड मनुष्य इन विचित्र नमूनोंको जो भारतवर्षसे लाये गये थे देखनेकेलिए आने लगे। लोगोंमें इतना बड़ा उत्साह उमड़ रहा था कि 'टाइम्स' ने "वनस्पति-वाटिकाके दुर्लभ पौदे" नामका शीर्षक देकर एक लम्बा लेख लिख मारा—"विक्टोरिया रीजिया हौसके आकर्षक पौदोंमें एक फलदार केला, प्राचियों-का पवित्र कमल, Nelumbium speciosum, ऊख और धानके पौदे हैं। डेसमोडियम जाइर-नस्, टेलीग्राफ़ प्लान्ट (वन चांडाल) जो इस देशमें दुर्लभ है इस समय उसी वनस्पति-शाला-में (ग्रीन हौस) बढ़ रहा है। इस पौदेका महत्व

इस समय बहुत बढ़ गया है क्योंकि अध्यापक बोसने यह अनुभव किया है कि स्पन्दन स्वशक्ति-प्रेरित होते हैं और पत्तियां ठीक उसी प्रकार स्फुरण करती हैं जैसे जीवधारियोंके हृदय, जब उनपर किसी उत्तेजक, विष और विद्युत् धक्कोंका प्रभाव डाला जाता है।"

दूसरी बात एक ऐसे घरके ढूढ़नेकी थी जो प्रयोगशालाका काम दे सके। हम लोगोंको अपनी सुविधाओंका उतना विचार नहीं था जितना इन पौदोंके स्वास्थ्यका जिनको प्रति दिन रीजेन्ट पार्कसे प्रयोग दिखानेकेलिए लाना पड़ेगा और सावधानीसे लौटाना पड़ेगा। जिस घरमें गैस जलनेका प्रबन्ध था वह इस योग्य नहीं था क्योंकि गैस पौदोंका जन्म बैरी है। इसी कारण ऐसे घर भी ठीक नहीं थे जो ऐसी सड़कोंके किनारे थे जिनपर मोटर गाड़ियां अधिकतर चलती थीं क्योंकि पेट्रोलके जलनेसे जो गैस उत्पन्न होती थी वह भी पौदोंकेलिए घातक थी। अन्तमें गुरुजीको मैदा घाटीमें एक मनोहर घर मिल गया जिससे लगी हुई एक बृहत वाटिका भी थी। घर का सामनेवाला सर्वोत्तम कमरा प्रयोगशालाकेलिए अलगकर दिया गया। कमरेमें एक ओर बड़ी शीशेदार खिड़की थी जिससे धूप खूब आती थी। इसी जगह एक स्थायी मेज़पर Resonant Recorder अनुनादी-अंकी रक्खा गया जिससे पौदोंके स्नायविक धड़कन-की गति अपने आप अंकित होती थी। इसीके पास एक श्वेत पर्दा था जिसपर विद्युत् प्रकाश-के द्वारा वनचांडाल की नाड़ी-गति प्रदर्शित की जाती थी जो दोलन-अंकीकेद्वारा अंकित होती थी। मध्यमें पौदोंके विद्युत स्पन्दन और प्रतिस्पन्दनको सूचित करनेकेलिए विद्यु-च्छक्तिमापक रक्खा गया था। इसीके पास मृत्यु सूचक रक्खा गया था जिसके द्वारा पौदे अपने मृत्युकी सूचना ठीक उसी समय देते थे जिस समय यह घटना होती थी। इन सब उपकरणोंको लेकर हम लोग अपने आलोचकोंका सामना करने-केलिए तैयार हो गये। इसके पश्चातके कुछ सप्ताहोंमें हम लोगोंका काम सबसे उच्च श्रेणीपर पहुंच गया क्योंकि इंगलैन्डके प्रमुख झुन्डके झुन्ड मैदाघाटीकी प्रयोगशालामें एकत्र होते थे जो जल्दी ही ऐतिहासिक महत्वको प्राप्त होनेवाली थी।

क्रमशः

---

## ओषजन

[ ले० नारायणदास, बी. एस-सी. ]

मनुष्यने अपनी सभ्यताके आदिसे ही लकड़ी जलाकर आग पैदा करना सीख लिया था। उसका नित्यका अनुभव था कि कुछ पदार्थ ऐसे हैं जो जल सकते हैं, और कुछ ऐसे जो नहीं जल सकते। पदार्थों-के गुणोंमें यह अन्तर क्यों है? यह प्रश्न मनुष्यके हृदयमें उठने लगा। पहले पहल स्टालने (Stahl) इसका उत्तर समुचित रूपसे दिया। उसके मतके अनुसार जितनी जलनेवाली वस्तुएँ हैं, उन सबमें एक व्यापक अवयव है। इस अवयवका नाम उसने फ़्लोजिस्टन रक्खा। वस्तुओंके जलने-पर यही व्यापक अवयव उनमेंसे धुआं इत्यादिके रूपमें निकल जाता है, और उनका भार कम हो जाता है। इस प्रकार कोयला जलनेपर फ्लो-जिस्टन और राखमें परिणत हो जाता है:—

कोयला = फ़्लोजिस्टन + राख।

कुछ दिन पीछे जब यह ज्ञात हुआ कि धातु भी गरम करनेसे जल सकती हैं, और जलनेसे उनका भार अधिक हो जाता है, तब फ़्लोजिस्टनके सिद्धा-न्तके अनुसार धातुओंके जलनेका कोई कारण न पाया गया। यदि सिद्धान्त ठीक है तो जलनेपर धातोंका भार कम होना चाहिये, पर वास्तवमें भार बढ़ क्यों जाता है? फ़्लोजिस्टन सिद्धान्तके अनुयायिओंने इसका कारण यह बतलाया कि धातुओंमें जो फ़्लोजिस्टन है, उसका भार शून्यसे

भी कम है, अर्थात् उसके निकलजानेसे धातुओंका भार बढ़ जाता है। इस प्रकार फ़्लोजिस्टन दो प्रकारकी माननी पड़ी। धातुओंकी भस्मको कोयलेके साथ गरम करनेसे धातु निकल आती है। इसका कारण नीचे दिये हुए समीकरणसे प्रतीत होगा :—

धातु = भस्म + फ़्लोजिस्टन;

कोयला = फ्लोजिस्टन + राख,

∴ कोयला + भस्म = राख + फ्लोजिस्टन + भस्म = राख + धातु।

पर यहांपर यह बतलाना कठिन है कि कोयलेकी भारविशिष्ट फ़्लोजिस्टनका भार धातुसे मिलनेपर न कुछसे भी कम कैसे हो जाता है।

ऊपर दिये कारणोंसे जलनेपर धातुओंके भारके बढ़जानेका कारण फ़्लोजिस्टन नहीं हो सकता। अतः इसके कारणकी खोज कहीं और करनी चाहिये। जीन रे (Gean Ray सं० १५७३) ने यह अनुमान किया कि सम्भवतः वायुका कुछ अंश धातुओंके साथ मिलकर यौगिक बनाता है, और इसी कारण भार बढ़ जाता है। इसके मतका समर्थन और वैज्ञानिकोंने भी किया। पर लैवोइसरने पहले पहल यह परीक्षाओंद्वारा सिद्ध किया, जैसा आगे चलकर दिखाया जायगा।

चित्र १

उसी समय प्रीस्टले (Priestley) उन गैसोंकी परीक्षा कर रहा था जो वस्तुओंको गरम करनेसे निकलती हैं। जब उसने पारेके लाल रसको गरम किया तो देखा कि उसमेंसे बहुत सी गैस निकलती है। उसने कांचके बरतन प में (चित्र १) पारा भरा और उसको दूसरे तसलेमें जिसमें भी पारा भरा था, उलट दिया। उसने पारद रस इस तरहसे बरतन प में रक्खा कि वह पारेपर तैरता रहै। फिर एक आतिशी शीशे या तालसे (burning glass) रस गरम किया, और देखा कि लम्बे बरतनमें पारा नीचे उतर रहा है। इसका कारण एक नई गैसका पैदा होना था। जब उस गैसकी परीक्षा की गई तो मालूम हुआ कि चीज़ें इस गैसमें बहुत तेज़ीसे जलती हैं और छोटे छोटे जानवर जैसे चूहे इत्यादि इसमें सांस लेकर जीते रह सकते हैं। परन्तु प्रीस्टलेने इस बातको नहीं माना कि हवामें भी यही गैस मिली हुई है, और जब किसी धातुमें मोरचा लगता है तो वह उस धातुमें मिल जाती है।

उसी समय स्वीडेनमें शीलने (Sheele) भी इसी गैसको सिंदूर, सोरा इत्यादि गरम करके तैयार किया था, पर उसकी परीक्षाका फलतक लोगोंको न मालूम हुआ।
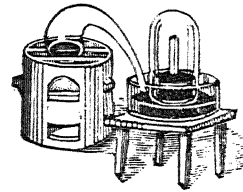
चित्र २

जब लेवाइसरने प्रीस्टलेकी परीक्षाका हाल सुना तो उसने यह कहा कि जो गैस पारद-रसको गरम करनेसे निकलती है वह हवाका भी एक भाग है। और उसने इस बातको सिद्ध कर दिया कि जब पारा हवामें गरम किया जाता है तो

उसका पांचवां भाग पारेमें मिल जाता है और उसका लाल रस बन जाता है। उसने पारेको एक बरतन अ में ( चित्र २ ) रक्खा और उस बरतनकी नली दूसरे बरतन व के अन्दर है, जिसमें हवा भरी थी। उसने पारेको गरम किया और उसका रस बनने और हवाका घनफल कम होने लगा। इस तरह बारह दिन गरम करके उसने यह बात देखी कि लाल रसका बनना और हवाका कम होना बन्द हो गया है। बाक़ी हवाका घनफल पहिलेसे $\frac{१}{५}$ कम था और इसमें कोई वस्तु जल नहीं सकती थी। अगर लाल रस फिर गरम किया जाय तो उसमेंसे उतनी ही गैस निकलती है जितनी हवामें कमी हुई थी।

इसका नाम करण

लेवाइसरने इसका नाम अक्सिजन (Oxygen) अर्थात अम्लजन या अम्ल पैदा करनेवाला रक्खा; क्योंकि बहुतसे तत्त्वोंको अक्सिजनमें जलानेसे जो पदार्थ बनते हैं, उनका घोल खट्टा (acid) होता है यद्यपि पीछेसे यह मालूम हुआ कि अम्ल बननेकेलिए अक्सिजनका होना ज़रूरी नहीं है। हम लोग उसको ओषजन कहते हैं।

ओषजन बनानेकी क्रिया

१-पारदरसको कांचकी एक नलीमें भरके गरम करनेसे ओषजन अलग हो करके बरतनमें जमा हो जाता है और नलीमें पारा रह जाता है।

२-अगर हम कांचकी नलीमें पारदरसकी जगह पोटेसियम क्लोरेट (potassium chlorate) लेलें तो उसमेंसे भी ओषजन निकलकर बरतनमें इकट्ठा हो जाता है। यदि पोटेसियम क्लोरेटमें थोड़ा मेंगनीज़-डाइ-आक्साइड (manganese dioxide) मिला लिया जाय तो बहुत कम आंचकी आवश्यकता होती है, और इसी विधिसे आजकल प्रयोगशालाओंमें ओषजन तैयार किया जाता है।
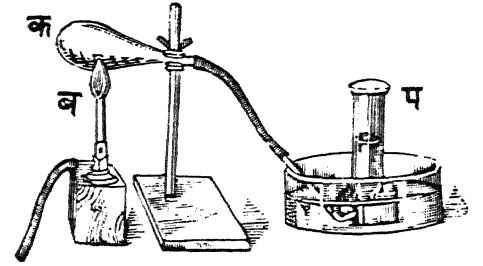
चित्र ३

क-पक कांचकी कुप्पी है, जो रबड़की नलीद्वारा कांचकी नलिकासे मिली हुई है। कांचकी नलिकाका दूसरा छोर एक मिट्टीकी प्यालीके अन्दर है। इस मिट्टीकी प्यालीमें दो छिद्र हैं, एक इसके पार्श्वमें, जिसमें होकर कांचकी नलिका प्रवेश करती है, दूसरा इसके पेंदेमें जिसके ऊपर वायुघट (gas jar) पानी भर कर औंधा दिया जाता है: [वायु घटके औंधानेके पूर्व ही, तसलेमें पानी भर देते हैं] वायुघटको पहले लबालब पानीसे भरते हैं, तदनन्तर उसका मुंह एक कांचके ढक्कनसे, जिसपर चर्बी लगी रहती है इस तरह बन्द कर दिया जाता है कि हवाके बुलबुले उसके नीचे न रह जायँ। चर्बी इसलिए लगाते हैं कि ढक्कन जमकर बैठ जाय और न हवा भीतर जा सके और न पानी बाहर आ सके। अब इसको बाहर तसलेमें औंधाकर, ढक्कन तब हटाते हैं, जब घटका मुंह पानीमें डूबा हो; पानी नहीं उतरता।

अब कुप्पीमें सुखाया हुवा पुटास और मग्नद्विओषित (पटासियम क्लोरेट और मेग्नगेनोज़डाइ ओक्साईड) रखकर मुंह बन्द करके गरम करते हैं। जब वायु कुप्पीमेंसे जल्दी जल्दी निकलने लगती है, तो वायुघटको भी सरकाकर और तनिक सा उठाकर, प्यालीके छिद्रपर रख देते हैं। अब वायु घटमें प्रवेश करने लगेगी और पानी उतरने लगेगा।

गुण

भौतिक—वायुकी तरह न तो इसमें रङ्ग है, न स्वाद और न गन्ध। यह हवासे कुछ ही भारी है। यदि हवाका घनत्व १ मानलें तो इसका घनत्व १.१०५ होगा। यह -११८° श० तक ठंडा होनेपर ५० वायुमंडलके भारसे तरल हो जाता है। पहिले पहल रोबलेस्कीने (Wrobleski) इसको तरल बनाया था। देवरने ( Dewar ) इसको

ठण्डा करके ठोस भी बनाया है। यह पानीमें थोड़ा थोड़ा ( १०० में ३ या ४ भाग ) घुल भी जाता है, और इसी कारण मछलियां पानीमें ओषजन पाकर जी सकती हैं। अगर पानीको खूब खौलाकर उसमेंका ओषजन निकाल करके मछलियां उसमें रक्खी जायं तो वे मर जायंगी।

रासायनिक – जब गन्धक हवामें जलता है तब उसमेंसे धुंधले नीले रङ्गकी लौ निकलती है पर जब उसको जला कर ओषजनके बरतनमें डालते हैं तो वह बड़ी तेज़ीसे जलता है और उसमेंसे चमकीले नीले रङ्गकी लौ निकलती है। गन्धकके जलनेसे जो धुआं बरतनमें जमा होती है उसको गन्धक द्विओषित कहते हैं। यदि उसमें थोड़ा पानी डालके उसके घोलमें नीला कागज़ जिसको लिटमस कागज़ या लिटमस पेपर (litmus paper) कहते हैं डाला जाय तो वह लाल हो जायगा। इससे यह मालूम हुआ कि सलफ़र डाइ ओक्साइडका (गंधकद्विओषित) घोल अम्ल है। यदि सुलगती हुइ लकड़ी या कोयला ओषजनमें डाला जाय तो वह भकसे बल उठता है।

चित्र ४

उसी तरह यदि फासफोरस और मेगनेसियमको भी ओषजनमें जलावें तो उनमेंसे इतनी तेज़ रोशनी निकलती है कि आंख चौंधिया जाती है। और उनमेंसे सफ़ेद रङ्गका धूआं निकलती है जो बरतनके चारों ओर जम जाती है या बरतन में उसकी भस्म गिर पड़ती है। इनमेंसे फास्फोरसके भस्मका घोल अम्ल (acid) होता है और मेगनेसियम भस्मका घोल क्षार (alkali) होता हैं, क्योंकि वह लिटमस कागज़ लाल नहीं करता बल्कि लाल कागज़का रङ्ग फिर नीला कर देता है।

यदि लोहेके तारको लाल गरम करके या उसके सिरेपर जलता हुआ कोयलेका टुकड़ा या गन्धक लगाके उसको ओषजनमें डालें तो वह तार बड़ी तेज़ीसे जलने लगता है और लोहा गल गलकर बरतनमें गिरता है। लोहेकी भस्म पानीमें नहीं घुलती, इससे पानी न तो अम्ल ही होता है और न क्षार।

जब आग बुझ जाती है तो लोगोंका उसको फूंकनेसे यही मतलब है कि उसमें आक्सिजनका ज़्यादा प्रवेश हो और लकड़ी बलने लगे। जब कोई वस्तु जलती है तब इसका और ओषजनका सम्मेलन होता है और एक नया पदार्थ बनता है। संसारके थोड़ेसे तत्वोंको छोड़ करके कुल तत्व ओषजनके साथ मिलकर यौगिक पदार्थ बनाते हैं।

उपयोग

ओषजन मनुष्य और जानवरोंकेलिए बहुत आवश्यक है, क्योंकि जब मनुष्य श्वास लेता है तब हवाके साथ वह ओषजनको अन्दर खींचता है और फिर जब वह हवाको बाहर निकालता है तब उसमें ओषजन बहुत ही कम रह जाता है और उसकी जगह कर्बन-द्वि-ओषित (Carbon-di-oxide) मिल जाता है। ओषजन इस मनुष्यको सांस लेनेको दिया जाता है जिसकी स्वांस किसी कारणसे बन्द हो गई हो या वह मुशकिलसे स्वांस लेता हो। इसी कारण जब कोई डूबा हुआ बेहोश मनुष्य निकाला जाता है, तब उसके नाक या मुँहमें फूंकते हैं जिसमें स्वांस चलने लगे। हवाके बदले यदि ओषजन फूंका जाय तो और भी शीघ्र लाभ हो। डुबकी मारनेवाले मनुष्यों या नौकाओंमें ओषजन बाहरसे पहुँचाया जाता है जिसमें मनुष्य श्वास ले सकें।

---

## अङ्कगणितकी शिक्षा

[ ले० सतीशचन्द्र घोशाल बी. एस-सी ]

### १—गणित सिखानेका उद्देश

श्रंकगणित व्यवहारोपयोगी है और विचार शक्तिको बढ़ाती है

वहारिक लेनदेनमें, मज़दूरीसे लेकर राजकार्य पर्यंत जीवनके सब व्यापारोंमें, अङ्कगणितका ज्ञान आवश्यक है—इस बातको हर एक मनुष्य मानता है। मनको एकाग्र करनेकी, विचार शक्तिको गहरा दौड़ानेकी और नियमबद्ध सोचनेकी जैसी आदत गणितके प्रश्न हल करते रहनेसे पड़ती है वैसी दूसरे विषयोंको अध्ययन करनेसे आसानीसे नहीं होती-यह सब शिक्षकोंको मालूम ही है। यथार्थमें व्यवहारिक उपयोग और विचार शक्तिकी प्रौढ़ता-एकाग्र सोचनेकी आदत—इन्हीं दो उद्देश्योंको लेकर स्कूलोंमें गणित पढ़ाई जाती है।

विचार शक्तिको बढ़ाना शिक्षकका अंतिम उद्देश्य

उपर्युक्त दोनों उद्देश्योंमेंसे पहिला तो सर्व साधारणको भली भांति विदित ही है परन्तु दूसरे उद्देश्यसे अधिकांश जनसमूह अपरिचित हैं। वास्तवमें अधिकांश अध्यापक भी विचार शक्तिके बढ़ानेकी ओर बहुत कम ध्यान देते हैं। दिये हुए प्रश्नका येनकेन प्रकारेण उत्तर निकाल लेना ही वे गणितका उच्चतम अभिप्राय समझते हैं, परन्तु ऐसा न होना चाहिये। शिक्षकोंका कार्य बालकोंकी विचारशक्ति बढ़ाना है। इसी हेतु सवाल लगानेकी प्रक्रिया, शृंखलाबद्ध क्रिया, सुगम रीति और स्वच्छ साधन निरे उत्तरसे बढ़कर ध्यान देने योग्य तथा विचारणीय हैं।

केवल नियम ही न बताने चाहिएं

बालकोंकी विचार शक्ति बढ़ानेके अभिप्रायसे गणितके केवल नियमोंके बता देनेसे ही काम न चलेगा। ये शुष्क नियम यथार्थमें बालकोंकी शक्तिके एक प्रकारसे घातक हैं। ये नियम किस प्रकार निकाले गये उनके तत्व क्या हैं ये बातें साक्षात पदार्थोंका उपयोग करके उदाहरण द्वारा यदि समझाई जावें तो विद्यार्थी दिये हुए प्रश्नके विषयमें सोचेंगे, विचारेंगे, और अपनी बुद्धिसे काम लेंगे।

अङ्कगणितकी उपयोगिता

परिमाणबद्ध ज्ञान साधारण ज्ञानसे ऊंचा है, क्योंकि 'कितना है?' यह भी उसके अन्तरगत है। एक मनुष्यने किसी समुदायको देखकर सिर्फ़ इतना ही जाना कि 'बड़ा भारी समुदाय है'। दूसरेने मनुष्योंको गिनकर कहा 'बढ़ा समूह है; ५७ मनुष्य हैं'। निस्संदेह दूसरे मनुष्यका समुदाय सम्बंधी ज्ञान पहिले मनुष्यकी अपेक्षा विशेष है, और उच्च कोटिका है, क्योंकि उसमें वस्तु कितनी है यह परिमाण मौजूद है। यथार्थमें गणितकी शिक्षा प्राप्त कर बालक अपने वस्तु सम्बंधी ज्ञानमें संख्या और परिमाणका बोध जोड़कर उसे अधिक उपयोगी बनाते हैं।

बालकोंमें ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छा प्रकृतिसे ही है

बालकोंमें एक प्राकृतिक इच्छा यह होती है कि जिस वस्तुको वे देखते हैं उसके विषयमें वे पूरा अन्वेषण करते हैं। उसका स्वाद, रंग, रूप इत्यादि जान लेनेके सिवाय वे यह भी जानना चाहते हैं कि वस्तुकी संख्या क्या है, और उसका परिमाण कितना है। यह मानसिक इच्छा शिक्षकोंके बड़े उपयोगकी है, क्योंकि गणितकी श्रीगणेश इसी प्राकृतिक इच्छाके आधारपर है। यथार्थमें बालकोंके व्यवहारकी वस्तुओंसे शुरू करके यदि इन्हीं वस्तुओंकी संख्या और परिमाणका ज्ञान उन्हें कराया जावे तो वे बड़े प्रसन्न होकर उसे सीखेंगे।

गणित शिक्षाका प्रारम्भ

इसीलिए चतुर शिक्षकोंका कर्तव्य है कि

बालकोंके व्यवहारमें आनेवाले पदार्थोंद्वारा ही उन्हें गिन्ती वगेरह सिखानेका प्रयत्न करें। पाठशालाकी बेंचें, कसरतके मैदानमें लगे हुए वृक्ष, झूठ मूठकी दुकानदारी, कौड़ियों और बीजोंके खेल और इनमें बालकका नफ़ा और नुक़सान, गांवके मनुष्योंकी संख्या, पिताके खेतकी सालाना उपज—यही सब बातें ऐसी हैं जिनके विषयमें कुछ जाननेकेलिए प्रत्येक बालक उत्सुक रहता है। इन्हीं सब बातोंकी संख्याका विचार करनेकी उत्सुकताका बीज बालकोंके हृदयमें बो कर गणित सिखानेका प्रारम्भ करनेसे यह विषय उन्हें रुचिकर प्रतीत होगा। जीवनमें मिलनेवाले पदार्थोंका विशेष ज्ञान प्राप्त करनेकेलिए गणितकी आवश्यकता है—यह जानकर वे उसे बड़ी खुशीसे सीखेंगे।

## २—संख्या सम्बन्धी ज्ञानका विकास संख्याएं और गिन्ती

गणितकी उन्नति सभ्यताकी उन्नतिके साथ साथ हुई है

जिस प्रकार मनुष्य जातिने अपनी प्राचीन जङ्गली अवस्थासे वर्तमान सभ्यताकी ओर धीरे धीरे उन्नति की है उसी प्रकार उसके गणित सम्बन्धी ज्ञानका भी धीरे धीरे विकास होता गया है। पदार्थ विद्या और यंत्रकलाकी जो असाधारण उन्नति हम वर्तमान युगमें देखते हैं उसका गणित विद्यासे घनिष्ट सम्बंध है। यथार्थमें सभ्यताकी उन्नतिका विचार करते ही हमें गणित-ज्ञानकी उन्नतिका विचार भी करना पड़ता है।

असभ्य जातियोंमें गणित

उस प्राचीन असभ्य अवस्थामें मनुष्यका संख्या सम्बन्धी ज्ञान बहुत ही कम रहा होगा। इस बातका अंदाज़ा हम वर्तमानकी गोंड़, भील, कोल आदि जंगली जातियोंको देखकर भली भांति लगा सकते हैं। इनमेंसे तो बहुतसे अब भी पांचसे अधिक गिन्ती नहीं कर सकते। पांचसे अधिक संख्याओंके विषयमें वे सिर्फ़ 'बहुत हैं' इतनाही जानते हैं। निस्संदेह इस प्रकारके किञ्चित ज्ञानसे वर्तमानकी जटिल गणित विद्यातक मनुष्य जातिने किस प्रकार उन्नति की यह आश्चर्यजनक प्रतीत होता है।

गिन्तीकी आवश्यकता और उसकी विधि; निश्चित समूहसे तुलना

इतिहाससे पता लगता है कि प्राचीन कालमें मनुष्य बहुत समयतक चरवाहेकी अवस्थामें रहा है। इस अवस्थामें कुटुम्बके कुटुम्ब पास पास रहकर ढोर चराया करते थे और कुटुम्बके वृद्ध पुरुष लड़ाईके समय अपनी सब सन्तानको इकट्ठा कर युद्ध किया करते थे। इस अवस्थामें इन्हें इतना जानना तो आवश्यक ही था कि उनके ढोरोंकी संख्या कितनी है, उनके कुटुम्बमें मनुष्योंकी संख्या क्या है। ऐसी अवस्थामें यदि यह मान लिया जाय कि उन लोगोंको संख्याका ज्ञान नहीं था तो इतना तो अवश्य मानना ही पड़ेगा कि वे लोग अपने ढोरों और मनुष्योंकी संख्याका दिग्दर्शन किसी ख़ास समूहसे तुलना करके—उससे कम है या अधिक—कर लेते होंगे। आजकल भी ऐसे मनुष्य पाये जाते हैं जो लेनदेनमें बहुधा लकीरोंकेद्वारा अपने हिसाब किया करते हैं। ग्वालेकी टिपकियां और कुम्हारोंकी लकीरें इस बातका ख़ासा सबूत हैं।

उंगलियोंद्वारा गिन्ती

इस भद्दी अवस्थासे क्रमशः उन्नति करते करते मनुष्य जातिने बहुत समयमें उंगलियोंद्वारा गिन्ती करना सीखा। इस उन्नतिको पाठक असाधारण उन्नति समझें। उँगलियोंसे गिनना सरल और स्वाभाविक था क्योंकि उँगलियां आसानीसे काममें आनेवाली और अव्यय हैं। संख्याओंको गिननेकी दशमल परिपाटीका आधार यही दसों उंगलियोंसे गिनना है। उस समयके मनुष्योंको, यदि वस्तुएं दससे कम हुईं तो गिननेमें कोई अड़चन नहीं पड़ती थी। यदि संख्या दससे अधिक हुई तो दोनों पंजे एक बार उठाकर दुबारा ऊपरकी संख्या अंगुलियोंद्वारा बतला दी जाती थी।

परन्तु बड़ी बड़ी संख्याओंके गिननेमें हमेशा अड़चन हुआ करती थी। धीरे धीरे बहुत समयमें दो दस, (बीस) तीन दस (तीस) इत्यादि दसकी गुण्य संख्याएं निकलती आई। इन सब संख्याओं-के नाम इनका बहुत कालतक उपयोग होतेर हनेके पश्चात निकले होंगे, ऐसा प्रतीत होता है।

संख्याओंके लिखनेकी विधि इस ज़मानेके बहुत समय बाद निकली इसमें कोई शक नहीं। यथार्थमें पहिले अङ्कोंके बदले लकीरोंद्वारा संख्याओंके लिखनेकी परिपाटी बहुत समयतक प्रचलित रही। किसी दी हुई बड़ी संख्याको आसानीसे किस प्रकार लिखना—यह उस समय-की सुसभ्य जातियोंको भी मालूम नहीं था। जब-तक कि वर्तमानमें प्रचलित संख्यालेख-प्रणाली-का आविष्कार न हुआ गणितशास्त्रमें कुछ भी उन्नति न हो सकी।

वर्तमान समयमें जिस प्रणालीसे हम संख्याएं लिखते हैं वह कितनी सुन्दर और चातुर्यपूर्ण है! शून्य तथा अङ्कोंका मान उनके स्थानोंपर अवलम्बित है ये दो बातें इसमें बड़े ही मार्केकी हैं। इस परियाटीकेद्वारा हम बड़ीसे बड़ी संख्या-को आसानीसे लिख सकते हैं। इसी लेख प्रणालीके अनुकूल संख्याओंकी नामप्रणाली 'दस' पर निर्धारित की गई है, इसीलिए इस सारी परिपाटीको 'दशमल' परिपाटी कहते हैं। इस 'दशमल' परिपाटीका जन्मस्थान भारतवर्ष है और यहींसे यह प्रणाली दुनियाभरमें फैली है। इस परिपाटीके निकलनेके बादसे ही गणित शास्त्रकी ख़ूब उन्नति हुई और इस उन्नतिका अधिकांश यश युरोपवालोंके हिस्से है।

## ३—अङ्कगणितकी वृद्धि।

### 'दशमल' प्रणालीका आविष्कार

संख्या लेखनकी दशमल-प्रणाली युरोपखंडमें तेरहवीं शताब्दीमें पहुंची, परन्तु जबतक छापनेकी कलाका आविष्कार न हुआ जन-साधारण इससे अपरिचित ही रहे। सोलहवीं शताब्दीके पश्चात अङ्कगणितका प्रचार सहसा हो गया। अद्यावधि अङ्कगणितकी प्रक्रियाओंके करनेमें योग्य लेख-प्रणालीके विना जो जो असुविधाएं होती थीं वे सब दूर हो गईं।

### 'दशमल' प्रणालीका महत्व

दशमल-प्रणालीकेद्वारा अङ्कगणितमें जो उन्नति हुई उसका अंदाज़ा निम्नलिखित बातोंसे लगाया जा सकता है। गुणा और भागकी वे सरल प्रक्रियाएं जो आजकल प्रचलित हैं इसी परिपाटीके आधारपर निकलीं। दशमलव भिन्न, मूल (वर्ग और घन) और घातोंका निकलना इनकी सुगम प्रक्रियाएं ये सब इस प्रणालीपरसे ही निकाली गईं।

### गणित पढ़ानेकी पद्धतिमें हेर फेर

अङ्कगणितकी उन्नतिके साथ साथ ही उसके पढ़ानेकी विधिमें भी नूतन सञ्चार हो गया। उस समय केवल यांत्रिक-परिपाटीका अवलम्बन किया जाता था। शिक्षक काले तख़्तेपर संख्याएं लिखते जाते थे और विद्यार्थी इन्हीं संख्याओंको कंठाग्र रट लेते थे। इस प्रकार संख्या ज्ञानका तत्व विद्यार्थियोंको कभी बतलाया ही नहीं जाता था।

### वस्तुओंद्वारा गिनती सिखाना

सोलहवीं शताब्दीके अख़ीरमें शिक्षकोंका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ कि विद्यार्थियोंको संख्याओंका ज्ञान सिर्फ़ नामोंको रटानेसे ही नहीं वरन साक्षात वस्तुओंका उपयोग करके भी कराना चाहिये। इस प्रकार शिक्षाद्वारा विद्यार्थियोंमें विचार शक्ति बढ़ती है और वे सिर्फ़ निर्जीव नियमोंपर ही अवलम्बित नहीं रहते।

### लेखा लगानेकी रीतिमें फेरफार

दशमलवके प्रचारके साथ ही लेखा लगानेकी रीतियोंमें भी बहुत परिवर्तन हो गया है। इस बातको सब लोग जानते हैं कि किसी वस्तुकी लम्बाई, इत्यादि नापनेमें हम पूर्णरूपसे कृतकार्य

नहीं हो सकते। सूक्ष्म औज़ारोंकी सहायतासे भी हम इंचके सहस्रांशसे आगे नहीं जा सकते। ऐसी हालतमें हमें सिर्फ़ 'तखमीनन' फलके ऊपर संतुष्ट होना पड़ता है और यथार्थमें ऐसा होना ही चाहिये। परन्तु भिन्नोंकेद्वारा ऐसा करना असंभव है। गणितके व्यवहारिक उपयोग-में सरलता हो जानेका एक मात्र उपाय दशमलव ही है, और इसका उपयोग भी बहुतायतसे किया जाता है।

### अदृष्ट राशिकेलिए अक्षरोंका अङ्कगणितमें उपयोग

इन दिनों बीजगणितकी नांई अङ्कगणितमें भी अदृष्ट राशिकेलिए अक्षरोंका उपयोग करने लगे हैं। इस प्रकारकी रीति बहुत ही अच्छी सरल और सुबोध होती है, परंतु कई लोगोंका मत है कि बीजगणितकी रीतियोंका अङ्कगणितमें उपयोग करना योग्य नहीं। परंतु इनके प्रमाण प्रबल नहीं, केवल पोच हैं। अङ्कगणितका अस्तित्व बीजगणितमें उसके मिल जानेसे मिट जायगा, गणितकी प्रक्रियाएं बहुत सरल हो जायंगी इत्यादि युक्तियां पुष्ट नहीं हो सकतीं। यह बात सब लोगोंको विदित है कि अङ्कगणित, बीज-गणित, और रेखागणित एक गणित शास्त्रकी शाखाएं हैं, इनमें एक दूसरेसे भिन्नता तथा उनके विषय मण्डलकी सीमा स्पष्ट रीतिसे अंकित नहीं की जा सकती। इनके विषय इस प्रकारसे आपसमें मिले हुए हैं कि उनका अलग अलग निर्देशित करना असम्भव है।

### नई परिस्थितिका अङ्कगणितपर प्रभाव

नवीन परिस्थिति हो जानेके कारण अङ्क-गणितके कई विषय जो आजतक मुख्य समझे जाते थे गौण समझे जाने लगे हैं। इन विषयोंमें-से 'हिस्सा और पत्ती' 'किस्तबंदी' 'मिती काटा बट्टा' इत्यादि मुख्य हैं। ऐसे विषय जिनका व्यवहारिक उपयोग विशेष नहीं यथा महत्तम समापवर्तक और लघुतम समापवर्त्य बड़े बड़े हरों वाले भिन्न, आवर्तक दशमलव, ऐसे माप जो उपयोगमें नहीं आते, इत्यादि सम्बंधी प्रश्नों-को पहिलेके समान महत्व नहीं दिया जाता है।

### विषयका नवीन रीतिसे विभाग

यह बात भी अब सर्वमान्य हो गई है कि अङ्क-गणितकी प्रक्रियाएं बहुत थोड़ी होनेके कारण और इन्हींका सर्व प्रकारके प्रश्नोंमें उपयोग होनेके कारण इस बातकी कोई आवश्यकता नहीं कि ये सब विषय अलग अलग रक्खे जायं और इनको अलग अलग पढ़ाया जाय। इस प्रकार विषय-विभागोंको नाहक बढ़ानेसे ही अङ्कगणितका डील डौल बहुत बढ़ गया है, और इसी कारण विद्यार्थी इस विषयको अच्छी तरह नहीं समझ सकते। अङ्कगणितकी मूल प्रक्रियाएं निम्नलिखित हैं—संख्या ज्ञान, गिन्ती और लिखने-की विधि, जोड़, बाक़ी, गुणा, भाग, भिन्न और दशमलव तथा त्रैराशिक। इन्हींकी सहायता-से गणितके सब प्रकारके प्रश्न लगाये जा सकते हैं।

## ४—बालककी मानसिक शक्तियां और गणित

### बालक स्वतः पदार्थोंका उपयोग करके उनका अन्वेषण करें

सब शिक्षकोंको मालूम है कि बालक ज्ञान प्राप्त करनेकेलिए बहुत ही उत्सुक रहता है। चीज़ोंके विषयमें जाननेकी उसे तीव्र इच्छा रहती है। परंतु इस प्राकृतिक इच्छासे हम लोग पूरा लाभ तभी उठा सकते हैं जब उसकी पूर्ति योग्य साधनोंद्वारा की जाय। यदि हम बालकको स्वतः चीज़ोंको देख भालकर उनका अन्वेषण न करने दें अथवा उनको ऐसे पदार्थोंके विषयमें बतावें जिनको वे पसंद नहीं करते अथवा जिनका ज्ञान उनकी बुद्धिमें समा नहीं सकता तो उनकी ज्ञान प्राप्त करनेकी इच्छाकी किसी हालतमें पूर्ति नहीं कही जा सकती। यदि हम बालकोंको एक समयमें दो अथवा और भी अधिक कठिना-इयां उपस्थित करदें तो उनकी बुद्धि थक जाती है। किसी विषयकी सूक्ष्म सूक्ष्म बातोंका विस्तार-

पूर्वक विवरण करना भी उन्हें नहीं भाता क्योंकि उनका मन अभी संकुचित है।

दूसरी स्मरण रखने योग्य बात यह है कि जिस विषयकी शिक्षा हम बालकोंको देना चाहतें हैं उसको हम बालकोंकी दृष्टिसे देखें। विद्यार्थियोंको इस विषयके सम्बन्धमें कौन कौनसी बातें रुचिकर होंगी और किस प्रकार होंगी, कौन कौन सी कठिनाइयां उपस्थित होंगी, तथा इनको किस प्रकार समझाना होगा–ये सब बातें पाठकको विषय शुरू करनेके पहिले देख लेना चाहियें।

ये पदार्थ बालकोंको रुचिकर और उनके दैनिक व्यवहारमें आनेवालोंमेंसे हों

इस बातको सब लोग जानते ही हैं कि विद्यार्थियोंको उनके दैनिक व्यवहारमें आनेवाली चीजोंके विषयमें जाननेकी बडी उत्सुकता रहती है। इसीलिए गणितके सवाल उनके दैनिक व्यवहारमें आनेवाले पदार्थोंके विषयमें हों। इसमें शक नहीं कि गणितकी तर्कको समझ लेना और समझा देना आसान काम नहीं। परंतु इसीलिए गणितके मास्टरोंको बड़ी सावधानीसे काम करना होगा। दी हुई शर्तोंको साफ़ साफ़ समझाकर इनसे क्या परिणाम होगा यह अच्छी तरह बताया जाय। उस विषय–विभागका जीवनक्षेत्रमें क्या उपयोग है इसको समझाकर विद्यार्थियोंका उत्साह बढ़ाते जाना चाहिये। सम्भवतः सवालको किस तरह हल करना होगा इस विषयमें विद्यार्थियोंकी अनुमति स्वतंत्रतापूर्वक लेकर सवाल करना अच्छा होगा।

यह बात निर्विवाद है कि बालकोंको प्रत्यक्ष पदार्थोंका उपयोग करानेसे विषयकी और उनकी अभिरुचि बढ़ती है, परंतु इस बातको ध्यानमें रखना चाहिये कि ये पदार्थ बालकोंकी रुचिके उपयुक्त हों और उनके साधारण खेल कूदमें होनेवाले पदार्थोंमेंसे हों।

गणितकी शिक्षा जहांतक बन सके व्यवहारिक हो

बालक कार्य करनेकेलिए हमेशा तय्यार रहते हैं। शारीरिक वृद्धिके श्रमको आवश्यकता है इसीलिए बालक खूब खाता है और दिन भर चलता फिरता रहता है। सुस्त बैठना बालकको मृत्युके समान दुखदाई प्रतीत होता है। इसीलिए जो शिक्षा विद्यार्थियोंसे काम नहीं लेती, जो उन्हें चुपचाप बैठनेकेलिए बाध्य करती है निस्संदेह निकम्मी है। इसलिए गणित शिक्षामें शारीरिक श्रम पूर्ण व्यवहारिक परीक्षाओंको योग्य स्थान देना चाहिये।

बालकोंकी तर्क शक्ति

अक्सर इस बातकी शिकायत सुनी गई है कि बालकोंकी तर्क शक्ति बहुत ही कमज़ोर होती है, परंतु अनुभवसे सिद्ध हुआ है कि यह बात सत्य नहीं। बहुतसे बालक बहुत ही युक्तिपूर्ण सवाल जवाब दिया करते हैं। बस बात इतनी ही है कि उनका भाषापर अधिकार तथा अनुभव बहुत ही कम है इसीलिए कभी तो वे अपनी तर्कको योग्य शब्दोंद्वारा प्रकाशित नहीं कर सकते और कभी कभी सोच भी नहीं सकते। परंतु हमारा काम है कि हम उनकी तर्कशक्तिको हर तरहसे बढ़ावें और किसी ग़लत युक्तकेलिए उनका उपहास न करें, बालकको उसकी ग़लतियां समझा देनेसे उसमें आत्म विश्वासकी कमी न होगी, उनके श्रमकेलिए उन्हें हमेशा उत्तेजना दी जाय तथा मास्टर उनके साथ पूर्ण सहानुभूति रक्खें।

बालकोंकी कल्पना शक्ति और उसका उपयोग

यद्यपि बालकोंमें गूढ़ विचार कर सकनेकी शक्ति बहुत थोड़ी है तदपि उनको कल्पना शक्ति बहुत ही मज़बूत है। प्रत्येक व्यक्तिने बालकोंको 'लाठियोंके' घोड़े बनाते हुए देखा होगा। पत्थरके टुकड़ोंके पैसे और धूलके लड्डू यह सब बालकोंकी अपूर्व कल्पनाशक्तिके कार्य हैं। इसीलिए इस कल्पना शक्तिका उपयोग करना हमारा हर तरहसे कर्तव्य है अंकगणितकी प्रक्रियाओंमें 'मानलो'-का बहुत काम पड़ता है और इसी जगह हमें बालकोंकी कल्पनाशक्तिसे काम लेना चाहिये।

## तार कैसे भेजते हैं ?

[ ले० वी. एस. तम्मा, एम्. एस-सी. ]

भूपाल—तार भेजनेकी व्यवस्था बहुत ही सरल होती है उसकी आकृति चित्र नं० १ में दी है। विद्युत्प्रवाहोत्पादक पात्रके दोनों छोर ज व त रूपी पट्टियोंमें लगे होते हैं। यह पट्टियां लकड़ीपर ऊपर नीचे लगी होती हैं। ल व ध दो पीतलकी लचकदार पट्टियां हैं। इन पट्टियोंके सिरेपर १ व २ दो विद्युदवरोधक एबोनाइटके बटन लगे होते हैं। ल दोनों स्थानोंको जोड़नेवाले तारसे जुड़ी है और ध धरतीसे। जिस समय यह बटन दबाये नहीं जाते उस समय दोनो पट्टियां ऊपरकी पट्टी ज से लगी हुई होती हैं।
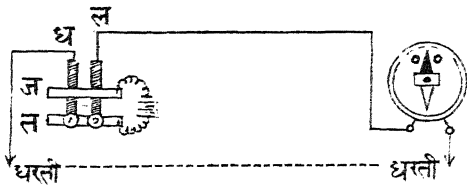
चित्र नं० १

ऊपर कही हुई बातोंसे तार पढ़नेवाले व तार भेजनेवाले यंत्रोंकी बनावट तुम भलीभांति समझ चुके होगे। *

भूपाल—आपने जो कुछ इन यंत्रोंके विषयमें कहा वह सब तो मैं समझ चुका, परन्तु मुझे कुछ संदेह भी हैं। पहिला यह कि सामान्य विद्युत्प्रवाहमापकके सदृश लिपटे हुवे तारके एक ही रीलका उपयोग न करते हुए दो रीलोंके उपयोगसे क्या लाभ? दूसरे दिशासूचो सुईपर एक कांटा लगानेकी क्या आवश्यकता है? उस सुईके ही घुमावसे वही काम लिया जा सकता है जो कि कांटेसे लिया जाता है, तीसरे इन यंत्रोंको उपयोगमें लाकर किस प्रकार तार एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजा जाता है?

गोपाल—तारसे लिपटे हुए दो रीलोंका उपयोग करनेसे लाभ तो अवश्य होता है। परन्तु वह लाभ क्या है यह तुम अभी नहीं समझ सकते। दूसरी शंकाका उत्तर यह है कि सुईके घुमावका ही उपयोग किया जा सकता है परन्तु सुईका आकार छोटा होनेके कारण उसकी गति देखनेमें नेत्रोंको कष्ट होता है। यदि बड़ा सुई उपयोगमें लाई जाय तो लोहेकी होनेके कारण वहुत भारी हो जावेगी। इसलिए छोटी ही सुईका उपयोग कर उसमें किसी हलके धातुका बना हुवा कांटा लगाया जाता है। तुम्हारी तीसरी जो शंका है उसीका उत्तर मैं देनेवाला ही था। ऊपर दिये हुए चित्रसे यह तुम्हें मालूम हो सकता है कि तारके भेजनेमें इन यंत्रोंकी सहायता किस प्रकार ली जा सकती है। यह तो तुम्हें याद ही होगा कि तार भेजनेवाले यंत्रके दोनों स्प्रिंग ऊपरकी पट्टीसे लगे रहते हैं।

जब २ को दबाकर ल पट्टीको त से छुवा देते हैं तो विजलीकी धारा बाटरीसे त में, त से ल में, ल से दूरके स्थानके गैलवेनोमीटरमें होती हुई, धरतीमें प्रवेश करती है। पृथिवीमें होकर ध में, ध से ज में (क्योंकि ध पट्टी ज से सदैव चिपटी रहती है,) ज से फिर बाटरीके दूसरे छोरमें पहुंच जाती है। इस प्रकार इसका चक्र पूरा हो जाता और धारा बहती रहती है, जबतक कि बटन दबा रहे। दूरके स्थानपर विद्युद्धारा एक गैलवेनोमीटरमें (विद्युद् प्रवाहमापक यंत्र) होकर बहती है, और उसकी सुई अपनी असली जगहसे दाएंको हट जाती है। अब १ को दबाइये (२ को छोड़दीजिये)। विद्युन्मार्ग अब इस प्रकार है :—

* देखो विज्ञान भाग ३ संख्या ४ पृष्ठ २०८.

विद्युत्प्रवाहमापक और सूचकमें भेद इतना ही है कि पहिला प्रवाहको नापता है व दूसरा केवल प्रवाहके अस्तित्वको बतलाता है।

बाटरीसे तमें तसे धमें धसे धरतीमें, धरतीसे दूरके स्थानके विद्युद्प्रवाहमापक यंत्रमें पहुंचती है। वहांसे लमें लसे जमें जसे बाटरीमें। यह स्पष्टहै कि चक्र पूरा हो गया। विद्युद्धारा अबकी बार दूसरे स्थानके गैलवेनोमीटरमें, पहलेसे विपरीत दिशामें बह रही है। अतः पहले दाएंको यंत्रकी सुई हटी थी, तो अबकी बार बाएंको हटैगी। इस प्रकार १, २ को क्रमशः दबानेसे विद्युद्प्रवाहमापक यंत्रकी सुई, दाएं बाएं घुमा सकते हैं। यंत्रकी सुईकी इन्हीं हरकतोंसे हम दूसरे स्थानको जो संदेश चाहें भेज सकते हैं, केवल यही निर्णय कर लेना पड़ेगा कि अमुक अक्षरकी सूचक कौन कौनसी हरकतें हैं। मान लो कि पहले दाएंको और तब बाएँ-को हटनेपर 'अ' सूचित होता है; एक बार दाएंको और फिर दो बार बाएंको हटनेसे 'इ' का अभिप्राय है। इसी प्रकार और भी अक्षरोंके-लिए चिन्ह बनाये जा सकते हैं। अंग्रेज़ी भाषाके अक्षरोंके स्मारक चिन्ह पहले दिए जा चुके हैं।

अबतक बतलाई हुई व्यवस्थामें तार नेत्रोंकी सहायतासे पढ़े जाते हैं, परन्तु आजकल साधारणतः इस व्यवस्थाको उपयोगमें नहीं लाते। जहां कई संदेश भेजनेकी आवश्यकता होती है वहां आजकल ऐसे यंत्रोंका उपयोग होता है जिससे उनमें पैदा होनेवाले शब्दोंको सुनकर ही संदेश पढ़े जाते हैं।

इस प्रकारकी व्यवस्थामें जिस यंत्रकी आवाज़से तार पढ़ा जाता है उसका मुख्य भाग एक विद्युत्चुम्बक है। चित्र नं० २ में ब विद्युत्-चुम्बक है प एक लोहेकी पट्टी है जो कि ल में होनेवाले उस अक्षपर घूम सकती है जो कि इस पृष्ठसे समकोण बनाता हो, पर इसी अक्षपर पट्टी प अव्याहत नहीं घूम सकती किन्तु दो पेंच क और ख के अन्त्य भागोंसे रुककर ठहर जाती है।
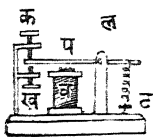
चित्र नं० २

इस पट्टीका दूसरा सिरा स्प्रिङ्गसे इस तरह खिंचा रहता है कि जिससे पट्टी प पेंच क के छोर से लगी रहे। स्प्रिङ्ग स की तरफ़ पेंच ट के द्वारा थोड़ी व अधिककी जा सकती है। विद्युत्चुम्बक व के दो छोर दो पेचोंसे बंधे हैं। इन दो पेंचोंमें-से एक दोनों स्थानोंको जोड़नेवाले तारसे बंधा होता है व दूसरा ज़मीनसे जुड़ा होता है। जब जब दूसरे स्थानसे भेजे हुवे तारके कारण इस विद्युत-चुम्बकमें विद्युत्का प्रवाह होता है तो लोहेकी पट्टी प खिच पेंच ख पर पड़ कर शब्द करती है। यदि प्रवाह थोड़ी देर हो तो केवल कट ऐसा शब्द सुनाई देता है किन्तु यदि प्रवाह कुछ अधिक देर-तक होता रहे तो कडड ऐसी आवाज़ आती है। इन आङ्गल भाषाके अक्षरोंकेलिए ऐसे ही भिन्न भिन्न आवाज़ रूपी चिन्ह निश्चित कर लिये गये हैं और अलग अलग आवाज़ोंके ही रूपमें आङ्गल भाषा-के अक्षर पढ़ लिये जाते हैं। इन्हीं शब्दोंको सुन-कर उनका आङ्गल भाषामें परिवर्तन करनेकेलिए बहुत अभ्यासकी आवश्यकता है परन्तु यदि तीन चार महीने अभ्यास किया जावे तो प्रायः ३० शब्दोंको एक मिनटकी अवधिमें मनुष्य पढ़ अथवा समझ लेता है।

जिस यंत्रसे तार (विद्युत्प्रवाह) भेजा जाता है वह इस व्यवस्थामें बहुत ही सरल है। उसकी आकृति चित्र नं० ३ में दी है। एक लकड़ीके तख्तेमें दो धातुके टुकड़े क और ख लगे होते हैं एक पीतलकी डण्डी ड, जो कि ल में होनेवाले उस अक्षपर घूमती है जो कि इस पृष्ठसे समकोण बनाता हो सदैव धातुके टुकड़े ख से लगी होती है। इस डण्डीके दूसरे छोरपर एक एबोनाईटकी घुण्डी ब होती है जिसके दबानेसे डण्डी ड धातुके टुकड़े क से स्पर्श करती है परन्तु ख से अलग हो जती है,
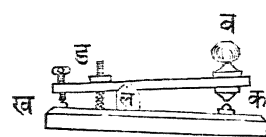
चित्र नं० ३

इन यंत्रोंका उपयोग एक स्थानसे दूसरे स्थान तक भेजनेमें नीचे दिये हुए चित्रके अनुसार किया जाता है
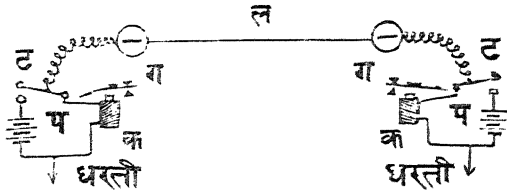
चित्र नं० ४

ल—दोनों स्थानोंको जोड़नेवाला तार; ट—तार भेजनेका यंत्र; प विद्युत्प्रवाहोत्पादक पात्र; क-तारको पढ़नेवाला विद्युत चुम्बक, ग विद्युत्प्रवाहसूचक

यदि पहिले स्थानपर बटन ब दबाया जावे तो वहांके उत्पादक पात्रसे विद्युत्का प्रवाह विद्युत्प्रवाहसूचकमें होता हुवा दोनों स्थानोंको जोड़नेवाले तारमें जाता है। वहांसे दूसरे स्थानके विद्युत्प्रवाह सूचकमें होकर वहींके तार पढ़नेवाले विद्युत्चुम्बकमें होता हुवा धरतीमें प्रविष्ट होता है और धरतीमेंसे बहता हुवा विद्युत्प्रवाहोत्पादक पात्रके दूसरे छोरको आता है। विद्युत्प्रवाह सूचकोंका उपयोग इस प्रकारकी व्यवस्थामें यह देखने में किया जाता है कि भेजा हुवा संदेश दूसरे स्थानपर पहुंचता है अथवा नहीं।

उपर लिखी हुई व्यवस्थामें तार पढ़नेवाले यंत्रका जो चित्र दिया गया है, उसका और एक रूप उपयोगमें लाया जाता है। विद्युत्चुम्बक जिस पट्टीको खींचता है उस पट्टीके एक छोरपर एक छोटासा गोल चाक लगा रहता है जो कि एक स्याहीसे भरे हुवे बर्तनमें डूबा रहता है। इस चाकके थोड़े ऊपरसे एक चक्रपर काग़ज़ समान वेगसे घुमाया जाता है, समवेगसे घुमानेमें घटका यंत्रकी सहायता ली जाती है। जब जब तार भेजनेवाले स्थानसे विद्युत्प्रवाह रूपी तार भेजा जाता है प्रवाह दूसरे स्थानके विद्युत् चुम्बकमें बहनेके कारण चुम्बक लोहेकी पट्टीको खींचता है व पट्टीसे लगा हुवा चाक उठकर घूमते हुवे काग़ज़पर एक चिन्ह लिख देता है। यदि प्रवाह थोड़ी ही देर बहे तो केवल एक बिन्दु मात्र ही लिखा जाता है परन्तु यदि प्रवाह थोड़ी देरतक होता रहे तो उस काग़ज़पर एक छोटीसी लकीर खिंच जाती है। बिन्दु चिन्ह कट इस आवाज़के समान व लकीर कड्ड इस आवाजके समान गिनी जाती हैं। और इन्हीं बिन्दु व लकीर रूपी चिन्होंके द्वारा तार सुगमतासे पढ़े जा सकते हैं। इस प्रकारकी व्यवस्थासे विशेष लाभ यह है कि यंत्रके द्वारा ही तारके चिन्ह काग़ज़पर लिखे जाते हैं, इस यंत्रको तार लिखनेवाला यंत्र कहते हैं।

इसके अतिरिक्त इस वैज्ञानिक प्रगतिके कालमें ऐसे भी यंत्र उपलब्ध हैं जिनकी सहायतासे कोई साधारण मनुष्य भी संदेश एक स्थानसे दूसरे स्थानको भेज सकता है। इन यंत्रोंकी रचना सुगम नहीं है; उनमें विशेषता यह है कि तार भेजनेवाले यंत्रपर उसी प्रकारका कीबोर्ड (keyboard) होता है जिस प्रकारका कि टाइपरायटरमें typewriter होता है। तार भेजनेमें केवल इतनाही करना पड़ता है कि जो अक्षर भेजना चाहें उस अक्षरकी कमानी (key) दबादी जावे और साथही साथ दूसरे स्थानके काग़ज़पर वही अक्षर छप जाता है। इसके अतिरिक्त जहांसे तार भेजा जाता है वहांपर भी वही संदेश काग़ज़पर छपता जाता है, जिसे पढ़कर तार भेजनेवालेको यह मालूम हो सकता है कि तार ठीक ठीक भेजा जाता है अथवा नहीं।

भूपाल—भाई साहब ! आपकी बतलाई हुई व्यवस्थाएं तो मैं समझ चुका, पर यह बतलाइये क्या ये व्यवस्थाएं हमारे भारतवर्षमें उपयोगमें लाई जाती हैं ?

गोपाल—भारतवर्ष अपने दुर्भाग्यसे सदैव केवल पिछड़ा ही रहता है, जो यंत्र आज अन्य देशोंमें बीसों वर्षसे प्रचलित हैं उनकी हम भारतवर्षीयोंको वार्ता भी नहीं मिलती। भारत-

वर्षमें अबतक प्रायः उन्हीं यंत्रोंको उपयोग किया जाता है जिन यंत्रोंमें शब्दोंको सुनकर ही संदेश पढ़े जाते हैं।

---

## भूतोंका नगर

(एक वैज्ञानिक कहानी)

[ ले० प्रेमबल्लभ जोषी, बी. एस-सी. ]

१

"कई महीनोंसे आलमनगरमें एक विचित्र घटना हुआ करती है। संध्या समय एकाएक स्वर्गमें वहुतसे टूटे फूटे उलटे सीधे महल व बुर्ज इत्यादि दिखाई देते हैं। कहा जाता है कि कई वर्ष पूर्व एक बार पहले भी यही हाल हुआ था, जब आलमनगर पहाड़के पश्चिम ओर वसा हुआ था। उस समय लोग इस रहस्य से इतने भयभीत होगये थे कि आलमनगरको छोड़, भाग निकले। आलमनगर तब उजड़ गया। इस समय लोग पुराने आलमनगरके खंडहरोंको देखने जाते हैं, वहांपर पुरानी टूटी फूटी इमारतें देखनेयोग्य हैं। कई वर्षों तक इस ओर मनुष्य जानेसे भी डरते थे, पर महाराज जोहरसिंहजीके समयमें नया आलमनगर पर्वतके इस ओर बसाया गया। तबसे सब प्रकारका अमन चैन इस नगरमें रहा। सुना है कि कई एक वैज्ञानिक और पुलिसके हाकिम इस घटनाको देखने और इसपर विचार करनेकेलिए आलमनगर पहुंचे हैं – देखिये ये क्या करते हैं"।

कलकत्ते जानेवाली डाकगाड़ी अभी हवड़ासे २० कोसपर थी, सफ़रकी थकावटके कारण गाड़ीमें भीड़ होनेपर भी मैं सो गया। चार वजे प्रातः काल ऊपर कहे हुए शब्द मेरे कानमें पड़े। मैं एकाएक चौकन्ना होकर सुनने लगा। दो यात्री गाड़ीके दूसरे कोनेपर बैठे किसी समाचारपत्रको उच्च स्वरसे पढ़ रहे थे। पूछनेपर पता चला कि यह समाचार कलकत्तके "सुजाति" नामक पत्रमें छपा है।

हवड़ा पहुंचकर मैंने "सुजाति" के मैनेजर और सम्पादकका पता चलाया और सीधा सम्पादकके मकानपर पहुंचकर ड्योढीवानको अपना टिकट दिया। थोड़ी देरमें नौकर वापिस आया और मुझे एक सुन्दर सजे दफ़्तरमें बिठाकर, बाहर चला गया।

२

बाबू बिनोदकुमार बड़े प्रतिष्ठित और गुणी पुरुष हैं। कहते हैं कि "सुजाति" पहले बड़ी गिरी दशामें था, पर जबसे इसके सम्पादनका भार विनोद बाबूके हाथ आया तबसे इसकी दिन दूनी और रात चौगुनी प्रतिष्ठा बढ़ रही है। कलकत्तेमें इसकी ७००० प्रति एक दिनमें बिकती हैं और इतनी ही बाहर जाती हैं। ऐसे प्रतिष्ठित पत्रके सम्पादकसे यह पूछना कि आपके पत्रका समाचार सच्चा है या झूठा मानहानि होगी, यह सोचकर मैंने कुछ और तरहसे इनसे यह प्रश्न पूछा—

"आलमनगरका तार आपके पास कब आया था, आप कृपाकरके बता सकते हैं"?

सम्पादक— यहां १ मईको पहुंचा था।

मैं—मैं कुछ कामसे कलकत्ते आया था और मेरा विचार यहां दो एक महीने ठहरनेका था, पर आपके पत्रमें समाचार देख मुझे चिन्ता लगी हुई है, क्योंकि आलमनगरमें मेरे भी कई आत्मज रहते हैं। यदि आप कृपाकर मुझे निश्चित करदें कि यह बात सत्य है तो आज ही लौट जाऊं।

सम्पादक—ऐसी घबरानेवाली बात कोई नहीं है। पर बात सब सत्य है। हमारा छोटा भाई स्वयम् जाकर देख आया है। हम ऐसी वैसी ख़बर अख़बारमें नहीं छापते।

मैं—तो क्या मैं आपके भाई साहबसे मिल सकता हूं।

"अवश्य मिलेगा क्यों नहीं मिल सकताहै।"–

कहकर सम्पादक महाशय भीतर गये और थोड़ी देरमें उनके भाई बाबू कुमुदकान्त बाहर आये। बाबू कुमुदकान्त कलकत्ता प्रेसीडेन्सी कालेजके ग्रेजुएट हैं। आपने एम. ए. विज्ञानमें पास किया है ।

'चलो एक तो वैज्ञानिक मिला' यह सोचकर मैंने बड़ी उत्कंठासे बाबू साहेबसे आलमनगरका हाल पूछा। आपका वर्णन "सुजाति" से ठीक मिलता था।

बाबूजी—वहांपर खलबली बहुत मची हुई है। आश्चर्य नहीं कि कुछ दिनोंमें नगर उजड़ जाय। लोग संध्या समय ५ बजे दुकान बन्द कर लेते हैं और फिर चाहें कोई मरे वा बचे, कोई मकानके किवाड़तक नहीं खोलता। गर्मीके दिनोंमें आप जानते हैं ५ बजे दोपहर रहती है, पर वहां ५ बजे मालूम होता है कि तमाम उजाड़ पड़ा हुआ है।

मैं—क्या आप पुराने आलमनगरतक पधारे थे?

कुमुद बाबू—गया तो था लेकिन मेरा विचार वहां ठीक ५ बजे पहुंचनेका था। इसमें मैं फलीभूत न हुआ कारण कि वहां कोई आदमी मेरे साथ जानेको तैयार नहीं हुआ। मैं अकेला भी चला जाता, पर असबाब कौन ले जाता। ख़ैर ११ बजे मैं आलमनगर पहुंचा वहांपर कुछ पुराने खंडहर हैं। कई बड़ी बड़ी इमारतें भी हैं। पहाड़की ढालसे और ज़मीनसे पानी निकलता है, और इस पानीके साथ वायुके बबूलेसे उठते हैं। कहीं कहीं तो ये बबूले इतने जल्दी जल्दी और बहुतायतसे निकलते हैं कि कुछ समझमें नहीं आता। मेरी समझमें कोई गंदी वायु निकलती होगी। क्योंकि वहांकी वायुमें भी कुछ कुछ दुर्गन्ध मालूम हुई। वास्तवमें जबतक मैं पहाड़की चोटीसे इस ओर न उतरा यह दुर्गन्धि मेरा पीछा करती गई, यहांतक कि एक दिनभर तो सर दर्द करता रहा और कई बार वमन भी हुआ। शामको "भूतोंके महल" मैंने भी देखे थे। मुझे तो ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो किसी प्रकार पुराने आलमनगरके खंडहर सब उड़कर हवामें आ गये हैं।

अस्तु यह हाल सुन मैंने बाबूजीसे बिदा ली और लौटकर होटलमें आया। ज़रूरी कामसे निबटनेके उपरान्त मैंने यह निश्चय किया कि उसी रात कलकत्तेसे लौट चलूं और आलमनगरका तमाशा देखूं।

३

अभी गाड़ीके आनेमें २५ मिनट बाक़ी थे। मैं यों ही हवड़ाके स्टेशनपर घूमता घूमता सोच रहा था कि कहीं बरकिट साहबका परिचय मिले, तो उनको इस मामलेका हाल लिखूं। इतने में ही मेरी नज़र दीवारपर लटके हुए एक बड़े चोखटेपर पड़ी। इस चोखटेके भीतर कई तारके लिफ़ाफ़े पड़े हुए थे और चोखटेके ऊपर "तार मार्फ़त स्टेशन मास्टरके" लिखा था। लिफ़ाफ़ोंपर दृष्टि डाली तो क्या देखता हूं कि एक तार मेरे नामका भी पड़ा हुआ है। तुरंत चोखटा खुलवा मैंने तार फाड़ा।

"अच्छा! बरकिट साहब पहुंच गये हैं। वाह वाह" क्योंकि तार इन्हीं हमारे पुराने मित्र बरकिट साहबका था। ये महाशय शिमलेमें सैर करने गये हुए थे। वहां इनको आलमनगरका समाचार मिला और खुफ़िया पुलिसके जनरल साहेबका तार भी इनके पास आया। ये तुरंत शिमलेसे रवाना हुए। मेरे एक मित्र इस समय शिमलेके बड़े दफ़्तरमें बाबू थे। इनको मेरे कलकत्ते जानेका हाल मालूम था। बरकिट साहबने इन्हींसे मेरे बारेमें पूंछ तांछ की और मेरा पता चला मुझे तार दिया।

इतने में ही गाड़ी आगई और अपने कुलीको साथ ले मैं गाड़ीकी ओर लपका।

४

आलमनगर जंकशन—सिगरैट, दियासलाई, विगुलबाजा, खेल खिलौना, पूरी कचौरी, गरमा गरम, मिठाई दालसेव नमकीन--

हल्लेके कारण आंखें खुलीं—आलमनगरका नाम सुन मैं झटपट उतर पड़ा और अपना असबाब बांध बाहर निकला।

अभी सुबहके ६ बजे होंगे। सूर्य भगवान अपनी सजधजके साथ अभी उदयाचलसे ऊपर हुए थे। चारों ओर आनंदमें सृष्टि मुस्करा रही थी। स्टेशनसे बाहर आ मैंने पहिले किसी सराय या होटलमें जानेका विचार किया, पर यह सोचकर कि कहीं बरकिट अपना कार्य्य पूराकर आज ही न चले जायँ मैं उनके बारेमें पूंछ तांछ करने लगा। कुछ पता न चल सका, अंतमें मैंने गाड़ीवालेसे कलकृर साहेबके बंगलेपर जानेको कहा। बंगलेपर पहुंच मैंने गाड़ीवालेको बिदा किया और अपना सामान ड्योढ़ीवानके पास सौंप सीधा भीतरको बढ़ा।

कलकृर साहबका बंगला और तिसपर भी मिस्टर प्यू जैसे हाकिम, इनके यहां मेरी कब दाल गलती--ख़ानसामा तो बोलातक नहीं, बैरा लापता था। इसी फ़िक्रमें १ घंटा निकल गया, लौटकर ड्योढ़ीपर आया तो ड्योढ़ीवानसे पूंछनेपर मालूम हुआ कि पीछेकी तरफ़ एक कमरेमें कलकृर साहब और एक नये साहब कुछ काम कर रहे हैं।

यह नये साहब हों न हों बरकिट साहब ही होंगे यह सोच मैं बंगलेके पिछवाड़े पहुंचा। खुली खिड़कीसे अंदरको देखा ही था कि बरकिट साहबकी दृष्टि मेरे ऊपर पड़ी।

Hullo !Here is my friend, the professor Come in, will you ?

बरकिट साहिब हंसते हंसते बाहर आये और मुझे हाथ पकड़ कमरेमें ले गये। कमरेमें चलकर पहिले आपने मुझे कलकृर साहबसे मिलाया और फिर मुझसे "भूतोंके महलकी" बातें कहने लगे।

मैं—यह हाल सब कुछ पढ़ चुकाहूं। कलकत्तेके हिन्दी दैनिक "सुजाति" में कुल छप चुका है। कहिये कुछ आपकी समझमें आया?

साहब—आपका क्या ख़्याल है।

मैं—मेरी समझमें तो कुछ ज्योतिकी किरणोंपर यह सब दृश्य निर्भर है और जो मकानात इत्यादि स्वर्गमें दीखते हैं वे केवल पुराने आलमनगरकी इमारतोंके प्रतिबिम्ब हैं।

साहब—There you are ! आपका कहना ठीक है यही बातमें मि०प्यू को भी समझा रहा था।

बरकिट साहबने भीतरके कमरेके किवाड़ खोले। वहां मेज़पर एक लोहेका बड़ा ( बक्स ) संदूक़ पड़ा हुआ था। बक्सके भीतर ठसाठस कोयले भरे हुए जल रहे थे। बक्सके ऊपर अग्निकी लौं उठती हुई दीख रही थीं।

बरकिट साहबने मुझे अलग लेजा दो एक बातें समझाईं और फिर आकर प्यू साहबको प्रयोग दिखाने लगे।

बरकिट साहब—मिस्टर प्यू देखो यह अंगीठी जल रही है। यह तो मामूली बात है कि इसके ऊपर हवा गरम हो रही है और गरम होकर हवा हमेशा फैल जाती है, इस कारण हलकी हो जाती है। अब मेज़की सतहसे नीचेकी हवा तो साधारण अवस्थामें है। अच्छा प्रोफ़ेसर चलो।

मैंने एक गुड़िया उसी जगह लेजाकर मेज़के पीछे रखदी कि जिस जगह साहबने मुझे बतलाया था। सामनेसे प्यू साहब देख रहे थे।

बरकिट साहब—देखिये सामने हवामें कुछ दीखता है?

प्यूसाहब—हां हां एक उल्टी गुड़िया दीखती है।

"अच्छा वहां जाकर देखिये कि उस जगह कुछ है वा नहीं"

प्यूसाहबने लाठी बढ़ाकर उस जगह खूब हिलाई; वहां क्या था, हवामें कोई तसवीर लटकती थोड़े ही थी।

मिस्टरप्यू—वाह वाह, यह नीचे पड़ी गुड़िया-का प्रतिबिम्ब हवामें दीख रहा है

वरकिट—बिलकुल ठीक

मिस्टरप्यू—इसका कारण ?

मिस्टर बरकिट—कारण बहुत ही सीधा है। बतलाइये आपको कोई भी चीज़ क्यों कर दीखती है ?

मि०प्यू—उसमें टकराकर ज्योतिकी किरणें हमारी आंखोंपर पड़ती हैं।

मि० व०—ठीक, सामने लालटेन पड़ी हुई है, आपको दीखती है; अब आंखके सामने पेंसिल ले आइये; क्या हुआ ?

मि०प्यू—लालटेन नहीं दीखती, इसका कारण यही हो सकता है कि लालटेनसे किरणें सीधी हमारी आंखोंपर पड़ती होंगी--और ये किरणें पेंसिलसे रुक जाती हैं।

मि०ब०--There you are ठीक है ज्योति हमेशा सीधी रेखाओंमें चलती हैं

अब बरकिट साहब एक कांचके ग्लासमें पानी भर लाये और उसमें एक पेंसिल खड़ी डुबोई। पानीकी सतहपर पेंसिल टूटी मालूम हुई।

बरकिट साहब—देखा पेंसिल टूटी मालूम होती है इसका कारण क्या है ? पानीके भीतर पेंसिल सीधी है। केवल पानी और हवाके मेलपर मुड़ी हुई मालूम होती है।

मि०प्यू—इससे तो यही मालूम होता है कि पानीसे आती हुई किरणें पानीकी सतहपर मुड़ जाती हैं।

मि०व०—ठीक ठीक ऐसा ही होता है। अब देखिये पानी और हवा दो भिन्न वस्तु हैं। इनमें कई भेद हैं, पर सबसे बड़ा भेद यह है कि पानी वायुकी अपेक्षा अधिक घना होता है।

मि०प्यू—वाह वाह ऐसा तो और भी कई तरह होता है। झाड़के तिकोने कांचके द्वारा देखने-पर सामनेकी धरती ऊंची उठी मालूम देती है ना? इसका कारण यही हो सकता है कि कांच और वायुके संधिस्थानपर ज्योतिकी किरण मुड़ जाती हैं।

मि०वरकिट--हां आपका अनुसंधान ठीक है; परंतु इसको कुछ नियमित प्रकारसे सुनिये। अब मिस्टर वर्किट "चाक" खड़िया ले कुछ चित्र खींचने लगे और इस दृश्यको समझाने लगे। चित्रमें हवा और पानीके संयोगपर क अ किरण अ स्थानपर पड़ती है। यहांपर यह किरण मुड़ जाती है और अ ख दिशाको जाती है। अ स्थानपर ल व लंब ( Perpendicular ) खींचने-से ल अ ख और क अ व दो कोण बन गये हैं।
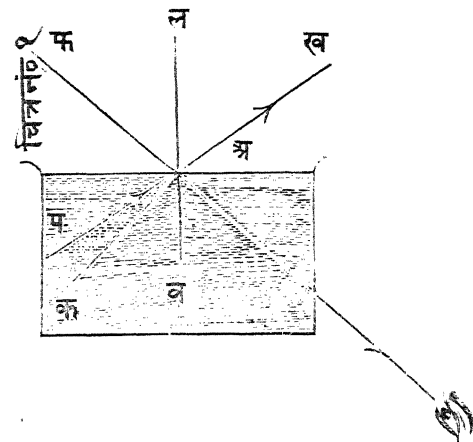
चित्र नं० १

मि० प्यू०—क्यों साहब अक किरण अख ही दिशाको क्यों आई अ ल दिशाको क्यों नहीं गई, क्या किरणोंके मुड़नेकी भी कोई हद होती है ?

मि० व०—जी हां यही मैं कहनेको था, इसका नियम ऐसा है कि ज्यों ज्यों क अ व कोण बड़ा

होता जाता है त्यों त्यों ख अ ल कोण भी बड़ा होता जाता है। तात्पर्य, इनका परस्पर निश्चित सम्बन्ध रहता है।

मि० प्यू--वाह वाह अब यदि क अ व कोण बड़ा हो जावे अथवा क अ किरण और बाएंसे चले तो अ ख किरण कभी पानीकी सतहसे मिलती हुई चलेगी—क्यों ?

मि० व० जी हां ठीक है यह मैं कहने को ही था। व अ क कोण जब बड़ा हो जावेगा तो ल अ ख भी अवश्य बड़ा बनेगा। बढ़ते बढ़ते क अ व कोण इतना बड़ा हो सकता है कि ल अ ख समकोण हो जावे।

मि० प्यू०--अगर क अ व कोण इससे भी और बढ़े तो मुड़ी हुई किरण हवामें न जाकर पानीमें लौट जावेगी।

मि० ब०—वाह वाह, आपने खूब अनुसंधान किया। ठीक ऐसाही होता है। चित्रकी भांति यदि किरण प अ दिशासे आवे तो वह पानीमें ही मुड़कर अ र दिशाको चलेगी। और "र" स्थान पर खड़ा मनुष्य "प" वस्तु को "फ" दिशा में देखेगा।

मि० प्यू०—यह तो बिलकुल साधारण दर्पण-का सा प्रतिबिम्ब हो गया।

मि० व० - जी हां ऐसा ही होता है। अब मान लीजिये अ व एक पर्वत है, पर्वतकी उस ओर प एक स्थान है इस स्थानसे ज्योतिकी किरणें पर्वतकी चोटीके पास अ स्थानपर जहां दो भिन्न घनत्ववाली वायुका संसर्ग होता है, प अ दिशासे आई—ऊपरके अनुसार किरण मुड़कर अ र दिशाको आवेगी और र स्थानपर खड़ा मनुष्य "प" के मकानको वायुमें फ स्थानपर देखेगा।

मि० प्यू०—तो क्या यह इमारतें पहाड़के पल्ली ओर स्थित पुराने आलमनगरकी इमारतों-के प्रतिबिम्ब दीखते हैं।

मि० ब०—जी हां।

मि० प्यू०—अब हम समझ गये पहाड़की चोटी तक पल्ली ओर एक गंदी वायु धरती-से निकलती है यह वायु साधारण वायुसे भारी अवश्य होती होगी। इस कारण पहाड़की चोटी-की सतहपर दो भिन्न घनत्वकी वस्तुओंका सम्मिलन होता है और हम अभी देख आये हैं कि जब जब दो भिन्न वस्तुओंके सम्मिलनपर होती हुई ज्योतिकी किरण निकले तो वह किरण सम्मिलनपर मुड़ जाती है। और कहीं अकस्मात किरण नियमित कोण बनाकर पड़ी तो वक्रत किरण उसी वस्तुमें ही लौट जाती है। क्यों साहब ?

मि० बर०—"जी हां ! पुराने आलमनगरके मकानोंमें संध्या समय सूर्य्यकी किरणें तिर्छी पड़ती हैं। ये किरणें पहाड़की चोटीतक सीधी आती हैं, पर वहांपर मुड़कर फिर धरतीकी ही ओर आती हैं और हमारे आंखोंपर पड़ती हैं, जिससे पहाड़के पल्ली ओरवाले मकान हमें हवामें दीखते हैं। ठीक ऐसा ही गुड़ियाके प्रयोगमें भी आपने देखा था।

पहिले भी एक बार ऐसा दृश्य पुराने आलम-नगरमें दीखा था। इसका कारण हमको यही मालुम होता है कि यहां धरतीके भीतर सड़ा पानी चला आता है। यह धरतीको काट काट पुराने नगरमें धरतीके नीचे अथवा पहाड़-की ढालमें घुसा हुआ है और उससे गंदी वायु निकलती है, जो पहाड़के पल्ले ओर पुराने नगर-में फैली हुई रहती है।

भूत भात कुछ नहीं है पर कुछ दिनोंमें इस पहाड़की तहको काटकर यह गंदा पानी इस नगरमें न आजाय इसका उपाय सोचना चाहिये मेरी समझमें पहाड़में जगह जगह छेद कर नाले लगा दिये जाँय, और धरतीमें छेद कर दिये जायँ ताकि सब सड़ा पानी सुभीतेसे पहाड़की पल्ली ओर ही निकल सके और वहीं रह जाय।

दूसरे दिन आलमनगरमें बड़ी भारी सभा

हुई कलक्टर साहब, जंट साहब इत्यादि सबही धनी मानी सज्जन इकट्ठे हुए। बरकिट साहिबने फिर प्रयोगों सहित ऊपरकी घटनाका रहस्य समझाया। अंतमें बरकिट साहबकी रायपर पहाड़के पल्ली ओर पानीका प्रबन्ध करनेके-लिए चन्देकी फहरिस्त खोली गयी। सेठ बेनी-माधोजीने ३०००) रु० दिये—अंतीलाल जी २५००) ........मेरे भी २) रुपये जमा किये गये।

---

## पौदोंके रोग

[ गतांकसे सम्मिलित ]

[ ले० राधानाथ टन्डन, बी. एस-सी, ]

### (७) अनाजोंके घुए

घुएका दूसरा महत्वपूर्ण भाग वह है जिसमें हमारे अनाजोंके रोगोंके कारण पाये जाते हैं। फागुनमें किसी खेतमें निकल जाइये और गेहूं, जौ आदि पौदोंकी पत्तियोंको ध्यानसे देखिये तो पत्तियोंमें कहीं कहीं काली और लाल चित्तियां देख पड़ेंगी। यह चित्तियां 'पकसीनियां' नामके घुएके आक्रमणसे हो गयी हैं। यह हज़ारों तरहके होते हैं और जिन पौदोंपर आक्रमण करते हैं उन्हींके नामसे इनके भी नाम रक्खे जाते हैं। गेहूं जौ, आदि पौदोंके घुएका नाम 'पकसीनियां ग्रैमि-निस' (puccinia graminis) है। अनाजोंका यह रोग एक पौदेसे दूसरे पौदोंमें शीघ्र पहुंच जाता है और अधिकांश पौदोंकी पत्तियों और पेड़ोंको ग्रस लेता है। इस रोगके फैलनेका सिद्धान्त बिलकुल वैसा ही है जैसा और घुओंके वर्णनमें पिछली संख्यामें दिखलाया गया है। यह भी औरोंकी तरह बारीक धागों सा दीख पड़ता है। यदि किसी अनाजकी पत्तीके लाल चित्तियोंको अणुवीक्षणद्वारा देखा जाय तो इस फंगसमें भी बहुत छोटे छोटे बीजकोष (दाने वा स्पोर्स) ऊपरकी तरफ देख पड़ेंगे। 'पकसिनियांके (puccinia) बीजकोष अन्तिम लेखके घुओंके बीजकोषोंकी तरह नहीं बनते। यह प्रायः धागोंके सिरोंसे कट कट कर वायुमें उड़ने लगते हैं। बहुतसे तो अलग हो जाते हैं और बहुतेरे लगे ही रहते हैं जिससे धीरे धीरे यह बीजकोष कड़ियोंकी सूरतमें बन जाते हैं जैसा कि नीचेके चित्रसे ज्ञात होगा।
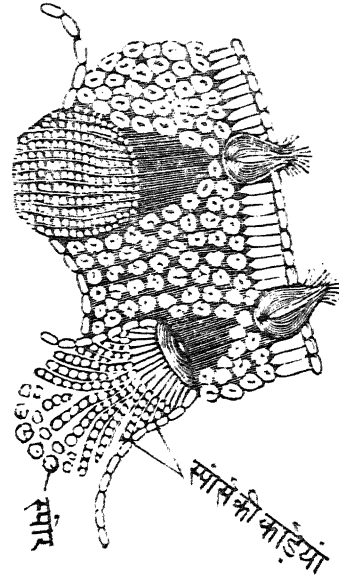
अणुवीक्षणद्वारा बीजकोष पाले देख पड़ते हैं। आकार गोल होता है और सतह भरमें कांटे कांटे से होते हैं। परिपक्व हो जानेपर पत्तियोंकी ऊपरी छालको फाड़कर बीजकोष बाहर निकल आते हैं और पवनद्वारा और और पौदोंपर जा गिरते हैं और अपने धागोंसे उन्हें रोगग्रस्त करते हैं। इसी तरह बीज कोषोंद्वारा सब अनाजोंको यह घुआ रोगग्रस्त कर लेता है। कुछ समय पीछे जब गरमी बीतनेपर आती है तो इस घुएमें एक प्रकार-के काले बीजकोष बनते हैं जो शरद ऋतुमें इधर उधर सोते रहते हैं पर नष्ट नहीं होते। एक वर्ष बाद ग्रीष्म ऋतुके आरम्भ होते ही यह उभड़ उठते हैं और उनसे उसी पुराने घुए अर्थात् 'पक-सीनियां' की (puccinia) उतपत्ति होती है जिस-

का कुछ वर्णन ऊपर कर आये हैं। यह घुए अपने वीजकोषसे फिर उसी तरह पौदोंपर आक्रमण कर उनमें रोग पैदा करते हैं।

पाठकोंने बहुधा देखा होगा कि वर्षा ऋतुमें घास आदि पौदोंके पुष्प विलकुल काले हो जाते हैं, यहाँतक कि धीरे धीरे कुल पुष्प इस अवस्थामें परिवर्तित हो जाता है कि उसको छूते ही हाथमें कालख सी लग जाती है। पुष्पोंकी यह अवस्था एक प्रकारके घुएसे हो जाती है। यह घुए 'स्मट' कहे जाते हैं। पुष्पोंका बुकनी होकर नष्ट हो जाना इसी घुएके आक्रमणका फल है। जब पुष्प ही नष्ट हो जाएँ फल कहांसे हों? यही कारण है कि बहुधा किसानोंको खेतीमें हानि होती है। यदि वर्षा ऋतुमें किसी घासके फूलोंको जो काले हो गये हों अणुवीक्षणद्वारा देखें तो ज्ञात होगा कि इस घुए-में भी बहुत छोटे छोटे दाने (spores) बनते हैं जो वायुद्वारा आस पासके सब पौदोंपर आक्रमण कर रोगी बना देते हैं।

इन रोगोंकी चिकित्सा आजकल वैज्ञानिकोंने मालूम कर ली है, पर यह चिकित्सा हमारे निर्धन किसानोंकेलिए बहुत महँगी है। उनको बहुधा हिंन्दुस्तानी चिकित्सा जिसमें कुछ भी व्यय न हो मालूम रहती है और उसीसे अपना काम चला लेते हैं और रोगोंको जहांतक होता है हटा देते हैं। किसान लोग बहुधा अपने खेतके पौदोंपर राख डाल देते हैं। यह चिकित्सा उनकेलिए विशेष सरल है, पर इससे रोगके रुकनेकी अधिक सम्भावना नहीं होती।

पौदोंके रोगकी चिकित्सापर पूरा पूरा ध्यान थोड़े ही दिनोंसे दिया जाने लगा है। जबसे बोर्डो मिश्रणका (Bordeux mixture) आविष्कार हुआ तभीसे लोगोंका ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ है। यह घुआनाशक औषधे (fungicide) वा घुआरि तीन प्रधान वस्तुओंसे बना है तूतिया, बेबुझा हुआ चूना और पानी। और भी बहुतसे घुआरि अवतक ज्ञात हुए हैं। उनमेंसे मुख्यके नाम यह हैं: (१) पोटाश कर्बनेतका घोल*, (२) पोटाश गंधितका घोल (potassium sulphate solution) (३) हीराकसीसका घोल (iron sulphate solution)—पत्तियों और फलोंपर इस तीसरे घोलका छिड़कना हानिकारक है—(४) पोटाश परिमङ्गनेतका घोल (५) पैराफ़िन मोम (६) फ़ारमलीन (formalin) (७) लैसोल (lysole) (८) गन्धक (९) और चूना।

सबसे उत्तम चिकित्सा पोटाश परिमंगनेतके घोलसे हो सकती है। वास्तवमें इन fungicides घुआरियोंका प्रभाव पौदोंपर उनके थोड़ा बहुत विषैले होनेपर निर्भर है। पर यह अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि पौदोंकेलिए वही चिकित्सा सबसे उत्कृष्ट है जिससे केवल घुएकी ही हानि हो, पर पौदोंको लेश मात्र हानि न पहुंचे।

अचर जीवधारियोंके अतिरिक्त चर जीवधारी भी जैसा कि पिछली संख्याके लेखमें दिखाया गया है पौदोंके रोगोंके कारण होते हैं। चर जीव-धारियोंसे आशय मनुष्य और जानवरोंसे है। विचारसे मालूम होगा कि मनुष्य आप बहुधा इन रोगोंके फैलानेका कारण हो जाता है, पर इस बातको समझता नहीं, नहीं तो वह कोई दूसरा उपाय सोचकर अपना काम चलाता। बेधड़क जामा, टोपी लुंगी, अङ्गरखा आदि पहने हुए खेतों-के भीतर घुसते चले जाना खेतोंकेलिए बड़ा ही हानिकारक है, क्योंकि मनुष्य बेजाने ही जहां जाता है रोगोंके कारणोंको साथ ले जाता है। हम ऊपर कह आए हैं कि रोग अधिकतर बीज कोषों-द्वारा फैलते हैं। यही मनुष्यसे खेतोंमें धँसते समय उसके कपड़ोंमें इधर उधर लग जाते हैं और जहां जहां वह जाता है उसके कपड़ोंसे उड़-कर पवनद्वारा और और पौदोंपर आक्रमण करते हैं। इसी तरह जानवरोंसे भी रोग फैल

* यही मामूली राखमें पाया जाता है। वि. सं.

सकता है। इसके अतिरिक्त जानवर जैसे भेड़ें बैल बकरी आदि पौदोंकी अवस्था ऐसी बुरी बना देते हैं कि उनमें रोग शीघ्र ही फैल जाता है। पौदोंमें कहीं भी घाव हो जाए तो रोगके फैलनेमें देर नहीं। हवामें उड़ते हुए बीजकोष या दाने तुरन्त घावमें पैठकर पौदोंको रोगी बना देते हैं। अतः खेतोंको जानवरों आदिसे बचाना भी बहुत ही आवश्यक है।

अब विशेष न लिखकर इस विषयको यहीं समाप्त करता हूं। विश्वास है कोई कृषिप्रेमी इस क्षुद्र लेखसे लाभ उठाएंगे और मेरे परिश्रमको सफल करेंगे।

---

## सुवर्णकारी

[ ले० गङ्गाशंकर पचौली ]

### १—सोनेके गुण

सब धातुओंमें सोना बढ़िया माना जाता है। शुद्ध सोना रंगमें, साफ़ होता है। वायु तथा जलमें रहनेसे भी मैला नहीं होता। यह धातु व्यापारमें काम आती है। इसके सिक्के और अनेक प्रकारके आभूषण तथा और और अनेक वस्तुएँ बनाई जाती हैं। सोनेके कण बहुत सघन होते हैं और इस कारण इसका गुरुत्व या घनत्व भी विशेष होता है। और धातुओंकी अपेक्षा सोना अधिक तेज़ आंचमें गलता है और बढ़ानेसे अधिक बढ़ाया जा सकता है। जो इसको तारकी सूरतमें खेंचा जाय तो इसका बहुत पतला तार खिंच सकता है। यह नरम भी होता है और चिमड़ा भी, अर्थात् तोड़नेसे न टूटता है और न फटता है। इसके अधिक नरम होनेके कारण शुद्ध अवस्थामें इसका उपयोग विशेष नहीं होता।

सोने आदि धातुओंकी गुरुता अर्थात भारीपनेकी जांच करनेसे जाना गया है कि मामूली धातुओंमें सोना सबसे भारी है। कौन धातु कितनी भारी है यह जाननेकी स्थूल रीति नीचे दी जाती है। वस्तु वा धातुके हलके भारी होनेकी जांचकेलिए पानीको मुख्य प्रमाण मानते हैं। जल सुगमतासे साफ़ किया जा सकता है और बिना कष्ट सब जगह मिल सकता है। वर्षाके जलको धरतीपर गिरनेके पूर्व ही स्वच्छ पात्रमें इकट्ठा किया जाय तो वह शुद्ध और स्वच्छ होता है। भपकेमें जलको भर उसकी वाष्पको इकट्ठा किया जाय तो भी स्वच्छ निर्मल जल मिलता है। इस रीतिसे शुद्ध किया हुआ जल ही धातु आदिकी गुरुताकी नापका प्रमाण है। मान लो कि एक प्यालेमें शुद्ध स्वच्छ जल भरकर तोलें, जो तोल आवे उसमेंसे प्यालेकी तोलको घटादें तो शुद्ध जलकी तोल ज्ञात हो जायगी। अब इसी प्यालेको साफ़ करके सोना आदि धातुको इस प्रकार भरें कि वह ठसकर भर जाय और कहीं वायुके संचारको भी स्थान न रहे और फिर तोलें। जो तोल आवे उसमें से प्यालेकी तोलको घटादें तो सोने आदि धातुकी खालिस तोल रहेगी। इस धातुकी तोलमें शुद्ध जलकी तोलसे भाग देवें तो जो मिलेगा वह जलकी अपेक्षा धातुका भारीपना होगा। इस रीतिसे परीक्षा करनेसे ज्ञात हुआ है कि सुनार सराफ़ोंके उपयोगी धातुओंका गुरुत्व जलकी अपेक्षा इस भांति है—

| धातुका पानीसे आपेक्षिकघनत्व | | | |
|---|---|---|---|
| शुद्ध जल | १ | शुद्ध चांदी | १०·५ |
| ” जस्ता | ७·२ | ” सोना | १९·२ |
| ” तांबा | ८·९६ | ” रांगा | ७.३ |

यदि धातुको पीट दिया जाता है तो उसके कण और भी सघन हो जाते हैं और उसका गुरुत्व भी बढ़ जाता है। इस भांति सोना गढ़े जानेपर १९·५-के गुरुत्वका हो जाता है। गुरुत्वके जाननेकी रीति जो ऊपर दी गई है वह केवल कल्पित है। इसकी अभ्यासिक सुगम रीति दूसरे अध्यायमें दी गयी है।

यह रात दिन प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि सब धातु अग्निपर पिघल जाती हैं, पर प्रत्येक धातुको पिघलनेके लिए जुदी जुदी दर्जेकी गरमी चाहिये।

धातु कितने दर्जेकी उष्णतासे पिघलती है—

| | | | |
|---|---|---|---|
| शुद्ध सोना | २०१६ | दर्जे | फ़हरनहैट |
| ,, तांबा | १९९४ | ,, | ,, |
| ,, चांदी | १८७३ | ,, | ,, |
| ,, जस्ता | ७७३ | ,, | ,, |
| ,, सीसा | ६१२ | ,, | ,, |
| ,, रांग | ४४२ | ,, | ,, |

इस फ़हरिस्तसे स्पष्ट है कि सोना बहुत ऊंचे दर्जेकी गर्मीसे (तापक्रम) पिघलता है। सोनेमें यही दो विशेष गुण-भारीपन और सबसे अधिक गरमी पर गलना—ही नहीं हैं वरन सोनेमें यह भी गुण है कि वह पीटनेसे सब धातुओंकी अपेक्षा अधिक फैल सकता है और इसका महीनसे महीन तार खिंच सकता है। एक वैज्ञानिकका कथन है कि एक तोला सोना पाटकर चार एकड़ भूमिकी बराबर बढ़ाया जा सकता है और जो उसका महीनसे महीन तार खेंचा जाय तो एक इंचके दो लाखवें भागकी बराबर पतला खींचा जा सकता है। बाज़ारमें सोनेके वरक़ बिकते हैं और औषधिमें काम आते हैं। वे सोनेकी सुखसे बढ़नेके सुगम प्रमाण है। शुद्ध सोनेके तार खींचनेमें जो अनुमान किया गया है उसका फल यह ज्ञात हुआ है कि एक तोला सोनेका ९२,३२० फुट लम्बा तार खिंच सकता है।

बढ़ाव और खिचावमें जैसे सोना सब धातुओंमें श्रेष्ठ माना जाता है वैसा चिमड़ापनेमें नहीं है। जो एक विशेष मुटाईका सोनेका तार ७५ सेर बोझ सहार सकता है तो उतनीही मोटाईके चांदी और लोहेके तार क्रमसे ९४ और २७४ सेर बोझको सहार सकते हैं, जिससे स्पष्ट है कि सोना बोझ सहारनेमें और धातुओंकी अपेक्षा गिरा हुआ है।

२—सोनेके भेद वा वर्ग

शुद्ध सोना अधिक नरम होनेके कारण अधिक घिसता है और इसीलिए युरोप देशमें शुद्ध सोनेको रात दिनके बरतावमें नहीं लाते। जब सोनेमें और धातुका मेल दिया जाता है तो वह कुछ कठोर हो जाता है और फिर यदि रोज़के बरतावमें आवे तो कम घिसता है। यह दूसरी धातुके मेलका सोना कहा जाता है।

शुद्ध सोनेको २४ नम्बर अर्थात् केरटका माना है और ज्यों ज्यों ज्यों उसमें दूसरी धातु वा बट्टा अधिकाधिक मिलाते जाते हैं त्यों त्यों सोनेका नम्बर वा केरट गिरता जाता है। जैसे—

| सोनेका नम्बर | सोना वा बट्टा | |
|---|---|---|
| २४ | शुद्ध सोना | |
| २३ | १ भाग बट्टा | |
| २२ | २ ,, ,, | |
| २१ | ३ ,, ,, | |
| २० | ४ ,, ,, | |
| १९ | ५ ,, ,, | |
| १८ | ६ ,, ,, | |
| १७ | ७ ,, ,, | |
| १६ | ८ ,, ,, | |
| १५ | ९ ,, ,, | : इत्यादि |

इस रीतिसे शुद्ध (२४ नम्बरके) सोनेमें १ भाग कम करते जानेसे सोनेका नम्बर भी गिरता जाता है। २४ नम्बरसे ७ नम्बरतकका सोना पाश्चात्य देशोंमें व्यवहारमें आता है। हमारे देशमें प्रायः शुद्ध सोनेका ही उपयोग होता है। आगे एक सारणीसे यह दिखाया जाता है कि शुद्ध २४ केरट वा नम्बरके सोनेमें कितने भाग बट्टा मिलानेसे सोना किस केरटका हो जाता है।

यहां दी हुई सारिणीसे स्पष्ट है कि ख़ालिस सोना २४ केरटका होता है और उसका गुरुत्व १९·५ है अर्थात् एकही बराबर आयतन जल और

| केरट | शुद्ध सोना | एक तोलेमें | | गुरुत्व | गुरुत्वमें कमी | समान घनोंका भार |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | चांदी | तांबा | | | |
| २४ | १ तोला | — | -- | १९·५ | ·०० | ९६ रत्ती |
| २३ | ११॥ माशा | २ रत्ती | २ रत्ती | १९·०८ | ·४२ | ९३·६ ” |
| २२ | ११ ” | ४ ” | ४ ” | १८·६८ | · २ | ९१·२ ” |
| २० | १० ” | १ माशा | १ माशा | १७·८७ | १·६३ | ८६·४ ” |
| १९ | ९ ” | १॥ ” | १॥ ” | १७·०५ | २·४५ | ८०·० ” |
| १५ | ७॥ ” | १॥ ” | ३ ” | १५·७४ | ३·५५ | ७६·८ ” |
| १३ | ६॥ ” | १॥ ” | ४ ” | १४·८६ | ४·२९ | ७२·० ” |
| १२ | ६ ” | १॥। ” | ४। ” | १४·४५ | ४·७० | ६९·६ ” |
| १० | ५ ” | २ ” | ५ ” | १३·६ | ५·४८ | ६७·२ ” |
| ९ | ४॥ ” | २। ” | ५। ” | १३·२ | ५·८८ | ६४·८ ” |
| ८ | ४ ” | २॥। ” | ५। ” | १२·८२ | ६·३२ | ६३·४ ” |
| ७ | ३॥ ” | ३ ” | ५॥ ” | १२·५ | ६·८६ | ६०·० ” |
| | | | | | | ५०·४ ” चांदी |
| | | | | | | ४३·२ ” तांबा |
| | | | | | | ४०·८ ” तांबा जस्ते-का भरत |
| | | | | | | ३६·० ” जस्त |

सोना लें तो सोना जलसे १९·५ गुना भारी होगा। इससे उतरता सोना २३ केरटका है जिसमें २४ भागमें २३ भाग ख़ालिस सोना और एक भाग बट्टा है और इस नम्बरका सोना जलसे १९·०८ गुना भारी है अर्थात् २३ नम्बर वा करेटके सोनेका गुरुत्व शुद्ध सोनेसे ·४२ हलका है। इसी प्रकार और नम्बरके सोनेको मिलान करके देखनेसे यह जाना जाता है कि प्रायः एक केरट सोनेके गिरनेमें ·४१ के अनुमान गुरुत्व गिरता जाता है। परन्तु जब बट्टा सोनेकी तोलसे अधिक दिया गया है अर्थात् बट्टा आधेसे अधिक है वहांपर यह गुरुत्वका गिरना भी अनियमित् सा दीखता है। यदि एक ऐसा घन शुद्ध सुवर्णका बनाया जाय कि उसका भार एक तोला हो, और इतने बड़े घन और किसी नम्बरके सोनेके बनाए जायं तो उनका भार एक तोलेसे कम होगा। यह भार अन्तिम कोष्ठकमें दिखलाए गए हैं।

सोना हलका करनेकेलिए चांदी और तांबा दोनोंका बट्टा मिलाया जाता है और १८ केरटके नम्बरके सोनेमें चांदी और तांबा समान भागमें नहीं मिलाये जाते। उतरते केरटका सोना केवल चांदी वा तांबेके ही बट्टेसे बन सकता है।

जब निरा चांदीका बट्टा दिया जाता है तो वह नरम तो रहता है पर रङ्गमें फीका पीला होजाता है, और जब निरा तांबेका बट्टा दिया जाता है तो रंगत तो सुर्ख होती है पर कड़ापन बढ़ जाता है। सोनेका रंग भी फीका न पड़े और नरम भी बना रहे इसलिए चांदी और तांबा दोनोंका मेल किया जाता है। अठारह केरटसे नीचेके सोनेमें रंगत ठीक रखनेकेलिए तांबेके भाग बढ़ते जाते हैं। १५ केरटके सोनेमें चांदीसे दुगना तांबा दिया जाता है।

शुद्ध वा बट्टेके सोनेका नम्बर अर्थात् केरट जाननेकेलिए इस प्रकार जांच की जाती है। इस कामकेलिए बहुत शुद्ध और रत्तीके सौवें भाग-तक ठीक तोल बतानेवाला कांटा और बांट तथा शुद्ध जल चाहिएँ। जिस सोनेके टुकड़ेका गुरुत्व निकालना चाहो उसे तोल लो, फिर उसे एक डोरेसे बांध, कांटेके पलड़ेसे नीचे इस प्रकार लटका दो कि यह टुकड़ा किसी पानीसे भरे हुए गिलासमें डूब जाय। यह ध्यान रखना

चाहिये कि टुकड़ा गिलासको न छुए, पानीमें गिलासके बीचमें डूबा रहे। अब तोलनेसे मालूम होगा कि भार कम है। इस दूसरी तोलको पहिली तोलसे घटा दो, जो अन्तर आवे, उससे पहली तोलको भाग दे दो। जो भाग फल आयगा, वही सोनेका गुरुत्व है। यह क्रिया नीचेके दिये हुए चित्रसे स्पष्ट होगी। [ यदि सविस्तार हाल जानना हो, तो विज्ञानप्रवेशिका भाग १ पृष्ठ १५ देखिये] एक परीक्षाका फल नीचे दिया जाता है।

| | मासे | रत्ती |
|---|---|---|
| ( १ ) गिन्नीकी तौल हवा में ... | ७ | ५·६३ |
| ( २ ) " " पानी में | ७ | २·३४ |
| अन्तर | ० | ३·२६ |

इसलिए गिन्नीके सोनेका गुरुत्व हुआ

$$\frac{७ \text{ मासे} — ५·६३ \text{ रत्ती}}{३·२६} = १८.७७$$

शुद्ध सोनेका गुरुत्व १९·५ है इसलिए दोनों-के गुरुत्वका अन्तर १९·५—१८·७७ = ·७३ आया जिसमें ·४१ का भाग दिया तो अनुमान १·७७ आया अर्थात् शुद्ध सोनेसे १·७७ केरट कम नम्बर-का सोना है यह सिद्ध हुआ। वास्तवमें 'सावरेन' को २२ केरट मानते हैं और इस रीति २२·२३ केरट है। यह रीति कुछ स्थूल है ऊपर को-ष्ठकमें २२ केरटका गुरुत्व १८·६८ दिया हुआ है। यह उसके आसन्न है। गिन्नी सिक्का भी २२ केरटका होता है पर इस देशमें प्रचलित मोहर ख़ासकर जयपुरकी इनसे बढ़के सोनेकी होती हैं। विलायतमें व्यापार कारीगरी आदिके उपयोगमें २२ केरटके सोनेको सबसे बढ़िया गिनते हैं। इसके ख़िलाफ़ हिन्दुस्तानमें 'गिनी' या सावरेनके सोनेको बट्टेका मानते हैं और जो मनुष्य सोना आभूषण आदिके उपयोगमें लाते हैं वे सब शुद्ध ख़ालिस सोना ही पसन्द करते हैं। आजकल जो सोना परदेशसे आता है उसमें 'नेशनल बंक' तथा 'चारटर्ड बंक' के पासोंका
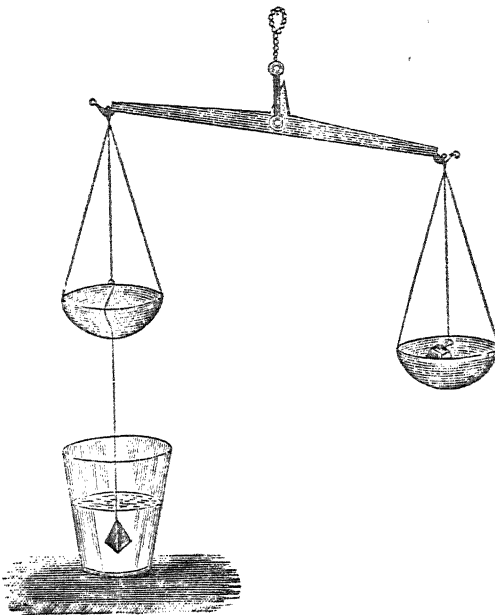
सोना शुद्ध माना जाता है। पहले चीनके पन्नोंका सोना प्रसिद्ध था परन्तु आजकल उनका व्यवहार और चलन बहुत गिर गया है।

रङ्ग

शुद्ध सोने और बट्टेके सोनेकी रंगतमें कुछ भेद रहता है। शुद्ध सोना ललाई लिये गहरा पीले रंगका होता है और बट्टेका सोना बट्टेके भेदसे फीके पीले रंगसे लगा तांबेके रंग तकका होता है। 'गिन्नी' में चांदीका मेल होता है जिससे वह फीके पीले रंगकी होती है और 'सावरेन' में तांबेके अंश अधिक होनेसे उसमें तांबेके रंगकी झलक रहती है।

जिस प्रकार हिन्दुस्तानमें मोहरोंको गलाकर सोनेके आभूषण बनाते हैं वैसे ही इंगलिस्तानमें विवाह आदि अवसरोंपर उपयोगी आभूषणोंको बनानेमें 'गिन्नी' 'सावरेन' को गलाकर काम लिया जाता है।

२२ केरटसे उतर कर २० केरटका सोना है। यह सुनारोंके बहुत उपयोगका नहीं पर जहां सोनेके आभूषण आदिमें रंग दिखाना अभीष्ट होता है वहां स्याही लिये लाल रंग दिखानेमें २० भाग शुद्ध सोनेके संग ४ भाग तांबा मिलाते हैं और प्यूस (ललाई लिये गहरा भूरा) रंगको प्रगट करनेकेलिए २० भाग शुद्ध सोनेमें ४ भाग चांदी देते हैं। आयरलैंडके टापूमें २० केरटका सोना बढ़िया माना जाता है और उसीके ज़ेवर और घड़ियोंके केस बनाये जाते हैं।

इंगलिस्तानमें १८ केरटका सोना बहुत उपयोगमें आता है और उसके ज़ेवर भी अधिक बनते हैं क्योंकि उसका रंग वहांवालोंको अच्छा मालूम होता है और उस नम्बरका सोना रात दिनके बरतावमें न बिगड़ता न घिसता है। बढ़ाव खिचाव तथा तनावमें भी ठीक रहता है। और इसके साथ साथ उसमें कुछ कड़ापन होता है जिसके कारण वह आभूषणोंके विशेष उपयोगका माना जाता है।

१८ केरटका सोना बनानेमें जो बट्टेके छ हों भग तांबेके और विशेषकर अशुद्ध तांबेके दिये जाते हैं तो सोनेमें फुटक पड़ जाती है और उसको बढ़ाने पीटनेमें पत्तर उतरने लगते हैं। जो सोने और तांबेको मिलानेसे ख़ालिस तांबा रांग वा जस्ता सीसा आदिके मेलसे शुद्ध लिया जाय और उसके साथ शुद्ध चांदी भी कुछ मिलाई जाय और गलाकर तीनों शुद्ध धातुओंको एक जीव कर दिया जाय तो फिर सोना फटता नहीं। इस नम्बरका अर्थात् १८ केरटका सोना कई रंगकी झांई लिये हुए बनाया जा सकता है। जो शुद्ध सोनेमें छः भाग निरा तांबा मिलाया जाय तो लाल रंगकी झलक रहती है, शुद्ध चांदी मिलानेसे हरी झांई रहती है और छः भाग शुद्ध लोहा मिलानेसे नीली झांई रहती है। इन योगोंके सिवाय नीचे लिखे प्रमाणमें दूसरी धातु आदिका मेल करनेसे जुदे जुदे रंग उत्पन्न हो जाते हैं।

शुद्ध सोना १२ भागमें १२ भाग चांदीसे सफ़ेद सोना होता है
" २० " ४ " लोहेसे कोइला सा भूरा "
" २२ " २ " " फीका पीला "
" १७ " ७ " चांदीसे मुरझाये पत्तेके रंग "
" १० " ५ " " पानीकासा हरा रंग "

शुद्ध सोना २४ भाग से पीला रंग
" १८ " तांबा ६ भागसे लाल
" १८ " चांदी ६ " हरा
" १८ " लोह ६ " नीला

इस प्रकार जुदे जुदे रंगोंकी झांई उत्पन्नकर उनमेंसे लाल और सफ़ेद सोनेसे फूल बनाते हैं। और हरे रंगको पत्ती और पीलेको डाली बनानेमें काममें लाते हैं। नीले रंगका सोना भी बहुत काममें आता है परन्तु इसका बनाना सुगम नहीं है। नीला सोना बनानेमें पहिले सोना गलाते हैं और लोहेके तारके छोटे छोटे टूकोंको धीरे धीरे मिलाते जाते हैं और चक्कर देकर दोनोंको एक जीव कर लेते हैं। गल चुकने पर बिना बुझाये ठंडा होने देते हैं और फिर हथोड़ेसे पीटकर तपाकर एकसा कर लेते हैं और फिर काममें लाते हैं।

१८ केरटसे उतरता सोना १५ केरटका है। इस नम्बरके सोनेके ज़ेवर बहुत बनते हैं। निखार और सफ़ाईकेलिए सोना १८ केरटके बराबर ही माना जाता है और इस नम्बरके सोनेके कड़ा होनेसे जो वस्तु बनाई जाती है वह टिकाऊ भी होती है। १८ और १५ केरटके सोनेकी ज़ंजीर बूताम, जंत्र, धुकधुकी, होल दिली, अंगूठी आदि आभूषण बनाये जाते हैं।

ऊपर वर्णित सोनेसे उतरता १३ केरटका सोना है। इस नम्बरके सोनेके ज़ेवर बहुत बनते हैं और १५ केरटके सोनेके कहकर बेचे जाते हैं। इस नम्बरके सोनेसे घड़ीकी जंज़ीर, लाकट, पिन, सोनेसे उतरते बटन, कमीज़केसेट, लटकन, चूड़ी, बाजू, बालियां आदि बनाये जाते हैं।

१३ केरटसे नीचेका सोना १२,१०,६,८,७-नम्बर तकका होता है जिनमें १२ केरटका चमकमें अच्छा होता है पर निखारमें उतना अच्छा रंग नहीं देता। बाकी नीचे केरटके सोने एकसे ही होते हैं। जितने कम केरटका सोना होता जाता है उतनी ही वह कम गर्मीसे गलता है। इसी हेतु ८ वा ७ केरटके सोनेके जोड़नेमें बहुत दिक़त पड़ती है। सात नम्बरसे नीचेका सोना सुनारोंके उपयोगमें बहुत कम आता है।

---

## उद्यान-पुरी।

[ ले० गोपालनारायण सेन सिंह बी. ए. ]

नागरिक जीवनके कट्टर विरोधी भी इस बातको माननेकेलिए तैयार होंगे कि नगर छोड़कर कुछ व्यक्तियोंका छोटी छोटी बस्तियोंमें किञ्चित् अवधि तक कालयापन करना संभव है पर समस्त मनुष्यजातिकेलिए ऐसा करना मानो सांसारिक व्यवहार और परस्परके उत्तरदायित्वको तिलाञ्जलि देना है। मानवसमाज अपनी जिस दुर्बलताको अतिक्रम करनेके निमित्त परस्पराश्रित-नीतिका अनुसरण करता है उसका शहरके सिवा-चाहे वह छोटा हो वा बड़ा-कहीं निर्वाह नहीं हो सकता। नगर ही में मनुष्यको अपने भाईयोंसे उस घनिष्टता, विश्वास और सहकारिताका अवसर प्राप्त होता है जिसके आधारपर वह अपने देश और समाजके भावी उत्कर्षकेलिए यत्न कर सकता है। यदि क्षण भरके वास्ते हम यह मानलें कि आजसे हमें नगरोंसे अलग ही काम चलाना होगा तो फिर हमारे आचार विचार रीति नीति और रहन सहनमें ऐसे ऐसे परिवर्तनोंकी आवश्यकता सूझने लगे जिनका पूरा पूरा ध्यानमें आना सर्वथा बाहर हो जाय। फिर ऐसी अवस्थामें हम नगरोंको पाप, रोग और दुःखका घर कहकर सदाके लिए कैसे त्यागकर सकते हैं। नगरोंके दोषकी भीषणता कुछ नगरोंपर निर्भर नहीं है। जहां भी मनुष्यका एक बहुत बड़ा समुदाय एकत्रित होगा वह देखनेमें आयेगी, इसलिए हमारा वैर और हमारी घृणा उस समुदायके व्यसन और दुराचार ही तक रहना चाहिए। नगरोंका नाश करके हम क्या पायँगे? भला कौन ऐसा हिन्दू होगा जो काशी, मथुरा, कांची वा प्रयागकी एक ईंट भी इधरसे उधर करनेको राज़ी होगा या उनकी निन्दाका एक शब्द अपने मुहपर लायगा! वह हमारे देशकी सभ्यताके केन्द्र रहे हैं और भविष्यतमें हमारी जातिके गौरवस्तम्भ रहेंगे। हमारा कल्याण इसीमें है कि हम उन्हें सब अनिष्ट और विकारोंसे शुद्ध और पवित्र करके अपने रहने योग्य बनावें। जंगलोंके रीछ, चीते और सर्प तकका भय मिटाकर जब मनुष्य अपनी कुटि बनाने लगा, दावानलसे उसने अपनी रक्षाकी और वायुके प्रचण्ड झोकों तथा विद्युतपातके त्राससे भी बचनेके उपाय ढूंढ़ निकाले तब अपने ही समाजकी बुराईयोंसे वह क्यों घबड़ाने लगा?

नगरोंके सम्बन्धमें सबसे बड़ा प्रश्न यह है कि वह किस ढांचेसे बसाये जायँ कि उनके निवासियोंको प्राणका भय न हो। पृथिवीपर आज जितने नगर देखनेमें आते हैं उनके विषयमें यह न पूछ कर कि उनसे मनुष्योंको कहांतक भोग

विश्राम और ऐश्वर्य लाभ हुआ है यदि हम यही देखें कि उनकी गलियोंमें रहकर मनुष्य कहांतक सुखी निरोग और दीर्घजीवी हुआ है तो उनमें हमें एक भी न जचे, इसका कारण यही है कि आजतक क्या राजा और क्या प्रजा किसीने नगरोंको बसाने और मकान उठानेमें न विचार-से काम लिया है और न वे अपने सामने किसी उद्देश्यको ही रखकर आगे बढ़े हैं। तो क्या भविष्यतमें भी सुधारकी कोई आशा नहीं है? इसके उत्तरमें यही कहना पड़ता है कि आजकल दो मुख्य प्रवृत्तियां देखनेमें आती हैं। एक तो कुछ लोग अपनी ओरसे नगर निर्माणमें उन्नति कर रहे हैं, दूसरे यह कि जो काम इस तरह नहीं हो सकता वह सरकारी क़ानूनके आश्रयमें सरकारको करनेकेलिए बाध्य करना चाहिये। पहली श्रेणीके लोग जो हमारे वास्ते मार्ग-प्रदर्शकका काम कर रहे हैं बहुधा पश्चिमी देशोंके व्यवसायी और व्यापारी हैं जो अपने मज़दूरों-के सुख और स्वास्थ्यके विचारसे बिलकुल नये ढंगके शहर बसा रहे हैं। उनका प्रबन्ध इतना उत्तम होता है कि कितने ही अंशमें संसार भरके-लिए उन्हें आदर्श-नगर कहना चाहिये। वहांके निवासियोंके साथ किसी अन्य नगरवालोंकी तुल-ना करनेपर बहुत बड़ा अंतर दिखलाई पड़ता है। उदाहरणकेलिए "वर्नविली" नामक एक नये शहरको लीजिये और उसकी मृत्यु-संख्या और जन्म-संख्याका इङ्गलैंडकी मृत्यु-संख्या और जन्म-संख्यासे मुक़ाबला कीजिये। पिछले पांच सालोंमें वर्नविलीमें हज़ार पीछे औसत ५.७ आदमी मरते रहे पर इङ्गलैंड-वेल्समें १४.७ मरते रहे। शिशुओंकी मृत्यु-संख्या वर्नविलीमें हज़ार पीछे ६२.४ रही और इङ्गलैंड वेलसमें ११७.४। इससे यह नहीं समझना चाहिये यह अन्तर केवल इङ्गलैंड और वर्नविलीके मकानोंके कारण ही है। भिन्न २ क़िंतेके मकान और भिन्न २ भाड़ेके अनु-सार एक विशेष श्रेणीके लोग, एक मुहल्लेमें इकट्ठे हो जाते हैं और इस प्रकार जितने दरिद्र मनुष्य होते हैं वह जान बूझकर अपनेलिए ख़राबसे ख़राब मकान चुन लेते हैं और इसका उनपर और भी बुरा प्रभाव पड़ता है। अपने ही शहरके नीच अछूत जातियोंका हाल देखिये, क्या इनके बसने-केलिए जगह ही नहीं मिलती जो एकाएक यह शहरके गड्ढों, खंडहरों और ग़लीज भरे मोहल्लोंमें भर जाते हैं। इसमें संदेह नहीं कि अच्छी जगहोंमें यह सहज ही मकान नहीं बना सकते। पर यह भी एक बात है कि ये स्वयं ऐसी जगह जानेसे भागते हैं जहां पर जाते ही उन्हें वहांके नियम और आचारके अनुसार चलना पड़े। वहा-पर उनके झगड़े और लड़ाईमें बन्धेज होगी। इससे बचनेको ये बाहर आ छिपते हैं और जैसी तैसी बुरी जगहोंमें जा टिकते हैं ऐसी अछूत जातियां अपनी दस बीस झोपड़ियां सटी सटी एक साथ एक ऐसे स्थानपर छा लेती हैं जहां अबतक एक गड़ही वा तालाब रहा है और जो नगरके कूड़े कतवारसे क्रमशः भरा जा रहा है। वहींपर एक ओर उनके पालतू सूअर और मुर्ग़ियां कूड़ोंके ढेरको उलटते रहते हैं और दूसरी ओर उनके बालबच्चे गड़हीके बीचमें खेलते या गदले मोरीके पानीमें लोटते और छपकते हैं। जहां एक धार वृष्टि हुई कि कूड़े-कर्कटके सड़नेकी दुर्गन्धि-से दूरतक मुहल्लेमें नाक नहीं दी जाती और उस ओरसे होकर जाना दुश्वार हो जाता है। ऐसी जगहोंमें रहकर मनुष्य केवल अपना शरीर-ही नहीं ख़राब करता वरन मनुष्यत्व भी खो बैठता है। इस प्रकार एक ही शहरमें साफ़ और खुले मुहल्लोंमें रहनेवालोंके घरके बच्चों और तंग अंधेरी मैली गलियोंकी छोटी जातियोंके लड़कोंकी दशा देखी जाय तो हमें बड़ा अचम्भा हो।

लड़के——तौल

| वयस | ६ | ८ | १० | १२—साल |
|---|---|---|---|---|
| चौहट्टा | २२.५ | २६.४ | ३१ | ३५.५ सेर |
| मीरकी गली | १९.० | २३.५ | २८ | ३१.५ " |

लड़कियां—तौल

| वयस- | ६- | ८ | १०- | १२- | साल |
|---|---|---|---|---|---|
| चौहट्टा | २१·६ | २५·२ | ३१·० | ३७·३ | सेर |
| मीरकी गली | १६·६ | २२·८ | २६·८ | ३२·६ | ” |

लड़के—ऊंचाई

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चौहट्टा | ४४·१—— | ४८·३ | ५१·८ | ५४·८ | इंच |
| मीरकी गली | ४१·६ | ४६·२ | ४८·६ | ५२·३ | ” |

लड़कियां ऊंचाई

| | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|
| चौहट्टा | ४४·२ | ४८·६ | ५२·१ | ५६·० | इंच |
| मीरकी गली | ४१·७ | ४४·८ | ४८·१ | ५३·१ | ” |

अच्छे और बुरे मकानोंमें रहनेके कारण जो अंतर शारीरिक दुर्बलता और हीनताके रूपमें देखनेमें आता है वह ऊपरकी तालिकामें कोई असाधारण परिमाणसे नहीं दिखलाया गया है। स्वास्थ्य-पालनके निमयोंका विचार रखकर जहां कहीं बस्ती बसायी जावेगी वहां इससे भी अच्छा फल देखनेमें आएगा। पर अब छोटी मोटी बस्तियोंसे क्या काम चल सकता है। स्वास्थ्यकर गृहोंका प्रश्न एक देशव्यापी प्रश्न हो रहा है। (१) जैसे भी हो हमे पुराने गंदे पंचमहले मकानोंकी जगह खुले मैदानोंमें या बाग़ बगीचोंसे घिरे हज़ारों लाखों गृह बनवानेकेलिए लोगोंको उत्साहित करना पड़ेगा (२) वर्तमान नगरोंके आसपास, शहरोंमें मकानोंके अभाव होनेपर और आबादीके बढ़नेपर उद्यानोंके बीच नई बस्ती लगानी होगी (३) गाओंमें वैसेही छोटे छोटे उद्यानोंमें रहने लायक मकान बनवाने पड़ेंगे। इस विषयमें इलैंड्गडके गार्डन सिटी और टाउनप्लैनिंग सभासे (Garden city and Town Planning Association) हमें बहुत कुछ शिक्षा मिल सकती है। यह सभा गत १४ वर्षसे काम कर रही है। इसने अपनी ओरसे लिचवर्थ ( Letchworth ) नामी उद्यानपुरी भी बसा ली है। अनुमान छः सहस्र उसकी जन-संख्या है। उसमें २८ अलग अलग कारख़ाने (factories) हैं लिचवर्थका स्वास्थ्य इस समय इङ्गलैंडके और सब नगरोंके स्वास्थ्यसे बढ़कर है यहां तक कि उसकी बराबरी इङ्गलैंडके वे स्थान भी जो जल-वायुके लिए प्रसिद्ध हैं नहीं कर सकते इसके अतिरिक्त इङ्गलैंडमें नगरोंके समीप ही ३७ उपनगर (suburbs) हैं। उन लतावेष्ठित शान्त, निर्मल सुहावने भवनोंकी संख्या-वृद्धि सन्तोषका विषय है पर इङ्गलैंडवालोंका कथन है कि नगरके विस्तार होनेपर उपनगरोंका नये ढंगसे बसाना तो ठीक है पर जहांतक हो जीर्ण नगरोंके स्थानपर उद्यान-पुरी ही बसाना श्रेय है। इस विषयपर मिस्टर एबीनेजर हाउअर्ड (Ebenezer Howard) नामी विद्वानने "टुमौरो" वा "कलका दिन" नामक एक सुन्दर किताब लिखी है। समाजके जिस हित-साधनके उद्देश्यसे उन्होंने सर्वसाधारणके सन्मुख अपने विचार प्रकट किये, हैं उसके सम्मानमें अर्लग्रेके ( Earl Grey ) सभापतित्वमें उन्हें लन्डन निवासियोंने एक भोज दिया था। उस पुस्तकका मर्म किसी अगले अंकमें हम विज्ञानके पाठकोंको भेट करेंगे।

## वैज्ञानिकीय

### १. वृक्ष और बिजली

जब कभी रास्तेमें मेह और आंधी मनुष्यको आ घेरते हैं, तो प्रायः मनुष्य वृक्षोंके नीचे आश्रम लेते हैं, परन्तु ऐसा करना सदैव उचित नहीं है, विशेषतः जब कि मेह और आंधीके साथ बिजली-का भी उपद्रव हो। ऐसे अवसरपर बिजली तीव्र प्रकाश और घोर गर्जना करती है। बादलोंकी बिजलीके प्रभावसे पृथ्वीमें भी बिजली पैदा हो जाती है और यह दोनों बिजलियां आपसमें मिलनेका प्रयत्न करती हैं। जब बहुत बिजली एकत्रित हो जाती है, तो वायुकी चादरको काट-कर दोनों बिजलियां मिल जाती हैं, परन्तु ऐसा करनेमें भी वे किसी विद्युत्वाहक पदार्थमें होकर ही, जहांतक हो सकता है मिलती हैं। हवा विद्युद वरोधक है, पर वृक्ष, मनुष्य पशु, पक्षी, इत्यादि चर और जीवधारी, तथा धातुकी वस्तुएं विद्युद्वाहक हैं। अतएव जब कभी बिजली

गिरती है (अर्थात् आकाशिक बिजली पार्थिव बिजलीसे मिलती है) तो पार्थिव बिजली, आकाशिक बिजलीका स्वागत करनेकेलिए किसी वाहनपर चढ़कर आकाशकी ओर जाती है। पर दोनों इस वेगसे मिलती हैं कि यदि वाहन (मनुष्य, या पशु) कोई जीवित व्यक्ति हुआ तो, वह बेचारा अपनी जान खो बैठता है। बिजली वह वाहन चुनती है जो सबसे ऊंचा हो, यदि कई लोहेके खम्भे खड़े हों तो बिजली सबसे ऊंचेपर गिरेगी। इसलिए मकानोंके पास लोहेकी छड़ खड़ी कर देते हैं, जिसका ऊपरी सिरा मकानसे दस बारह फुट ऊंचा होता है और नीचेका सिरा पृथ्वीमें पानीकी तहतक पहुंचना चाहिये।

यदि तूफ़ान जंगलमें या ऐसी जगह आ जाय जहां ऊंचे ऊंचे मकान न हों, तो बिजली किसी भी मनुष्य, पशु या वृक्षपर गिरेगी। मनुष्यको तूफ़ानमें वृक्षके नीचे ठहरना उचित नहीं है। यदि एक ही वृक्ष मैदानमें खड़ा हो, तो कदापि उसके नीचे न ठहरे। सबसे अच्छा उपाय तो यह है कि वह जमीनपर लेट जाय। बिजलीके तूफ़ान प्रायः बहुत देर नहीं ठहरते।

यह स्मरण रखना चाहिये कि बिजली गिरनेसे मनुष्य मरता नहीं है, केवल उसके दिलकी धड़कन बन्द हो जाती है। ऐसे मनुष्यकी वही चिकित्सा है, जो जलमें डूबे हुए मनुष्यके सांस चलानेकेलिए की जाती है। यदि शीघ्र उपाय किया जाय तो मनुष्यकी जान बच सकती है।

हालमें ही जर्मनीके कई प्रान्तोंमें नक़शे तैयार किये गये हैं जिनसे यह ज्ञान होता है कि सैकड़ा पीछे नीचे दिये हुए पेड़ोंपर कै वार बिजली गिरती है:—

ओक (बान, सुपारी, इत्यादि) ३२·१, लार्च ६·५, फ़र ३·८, पाईन (चीड इत्यादि) १·८, स्काच फ़र ०.६, बिर्च (भोजपत्र इत्यादि) १·४, बीक ०·३ और एलडर ट्री ०·१।

यह भी जाना गया है जिस धरतीमें पेड़ उग रहा हो, उसका भी प्रभाव पड़ता है। जो वृक्ष सीली धरतीमें या नदी, नाले या तालाबोंके तटपर लगे हों, उनपर बिजली गिरनेका अधिक भय रहता है। जिन वृक्षोंकी जड़, पृथ्वीमें गहरी जाती है, उनपर और पेड़ोंकी अपेक्षा बिजली अधिक गिरती है।

अतः ओक्स, पोपलर्स, पाईन्स, बिलोज़ एल्म्स तथा पीअरस (नासपाती) जातिके वृक्षोंके नीचे, ठहरना उचित नहीं है। चेस्टनट, मेपल, एलडर जातिके वृक्षोंके नीचे ठहरनेमें कुछ खटका नहीं है।

### २ एक नई अद्भुत ढाल

युरोपीय महायुद्धमें गोली वा बम्के टुकड़ोंसे बहुत मनुष्य घायल हो होकर मृत्युके ग्रास बन चुके हैं। यह देख, इङ्गलैण्डके एक कारख़ानेने, एक नई ढालका आविष्कार किया है। यह बहुत ही हलके पदार्थोंकी बनी हुई है, पर गोलीको रोक लेती है। जहांपर गोली पड़ती है उस तरफ़ ऊपरी तहको काट गोली ठहर जाती है। कारबाईडके एक पीपेपर ऐसी ढाल मढ़ दी गई और उसपर गोलियां चलाई गई कोई गोली पीपेतक न पहुंची। वायु यानोंमें बम् या तैलके पीपे रखनेके सन्दूकोंमें प्रायः गोली लगकर आग लगने, या विस्फोटन होनेका भय रहता है। यदि ये सन्दूकें ऐसी ढालोंसे मढ़दी जायं, तो वायुयान निर्भय हो यात्रा कर सकेंगे।

इस ढालका विस्तृत वर्णन अभी मालूम नहीं हुआ, पर इतना जाना गया है कि विशेष पदार्थकी बहुतसी तहें पुस्तकोंके पृष्ठोंकी तरह चुनकर एक ख़ाकी थैलीके अन्दर सी दी जाती हैं। गोली ख़ाकी कपड़ेको छेदकर उस विशेष पदार्थ की तहपर रुक जाती है।

### ३ पृथ्वी किस अक्षपर घूमती है

बहुतसी वस्तुओंमें होकर प्रायः एक ऐसी रेखा खींची जा सकती है, जिसकी दोनों ओर उन वस्तुओंके अवयव बराबर तुले हों। जैसे कि-

ले गेंदके केन्द्रमें होकर एक सीधी रेखा खींची जाय, तो जितना हिस्सा गेंदका इस रेखाके एक तरफ़ होगा उतना ही दूसरी तरफ़ भी होगा। ऐसी रेखा (axis of symmetry ) एक्सिस श्राफ़ सिमेटरी अर्थात् संगतावयव-अक्ष कहलाती है।

अबतक यह माना जाता था कि पृथ्वी अपनी संगतावयव अक्ष पर घूमती है, पर हालमें ही यह सिद्ध किया गया है कि पृथ्वीके घूमनेकी अक्ष उसकी संगतावयव अक्षसे भिन्न है। जिस अक्ष पर वह घूमती है. वह बदलती रहती है।

इस बदलनेके कारणब हुतसे हैं। उनमेंसे एक यह भी है कि पृथ्वीके ध्रुवोंपर, जो बरफका असीम भण्डार रहता है, वह साल भर अपनी स्थिति बदलता रहता है।

पहले पहल गणितज्ञ श्रायलरने ( Euler ) यह सिद्ध किया कि भ्रमण अक्ष लगभग ३६५ दिनमें अपना चक्कर पूरा करलेती है। इसने पृथ्वीकी elasticity शून्य मानी थी, पर यदि आधुनिक गवेषणाओंद्वारा जो पृथ्वीकी Elasticity निकली है, उसको ठीक मानकर हिसाब लगाया जाय तो भ्रमणकाल ४२४ दिनके लगभग निकलता है।

पृथ्वीके चुम्बक-ध्रुवोंकी स्थिति भी बदलती रहती है हमारे ख्याल में इसका भी यही कारण पाया जायगा।

### ४ संसारका आदर्श नगर

सं० वि० १९७४ में अमेरिका बसे हुए पूरे ३०० वर्ष हो जायंगे। उस समय अमेरिकावासी अपने उन पूर्वजोंके स्मरणमें, जो धार्मिक मतभेदके कारण इंगलैन्डसे उदास होकर और उसे सदाकेलिए त्यागकर पहले पहल नयी दुनियाके मसाचुसेट प्रान्तमें समुद्रतीरपर उतरे थे, एक त्सउव करेंगे। और उसीके सम्बन्धमें उस अवसरपर वे एक अनुपम और सर्वोत्कृष्ट नगरकी स्थापना करनेवाले हैं जिससे बढ़कर भविष्यतमें दूसरा नगर बनाना असंभव हो जायगा। उसके निमित्त स्थान भी चुन लिया गया है। वह वर्तमान बोस्टन नगरके दक्षिण अनुमान ५०००० एकरके आयतका होगा। आरम्भमें उसकी आबादी ७५००० मनुष्योंकी होगी। उसके विषयमें उसके संस्थापकोंका कहना है कि :—

( १ ) वह नगर संसारकी समस्त जातियोंकेलिए एक ऐसा सम्मेलन-स्थान होगा जहाँ सर्वदा शान्तिका राज्य रहेगा।

( २ ) उसमें एक ऐसी स्थायी प्रदर्शनी होगी जिसमें देश देशान्तरके वाणिज्य कला, साहित्य और कलासे बारहोमास लोगोंको शिक्षा दी जायगी।

( ३ ) अनेक सुविधाओंके कारण वह सब बड़े बड़े व्यवसाय और व्यापारका केन्द्र हो जायगा।

( ४ ) वह अति उत्तम वैज्ञानिक विधिसे बने भवनोंका समूह होगा।

( ५ ) वह एक ऐसा विचित्र और पुनीत धाम बन जायगा जहाँ दसों दिशाओंसे यात्री एकत्रित हुआ करेंगे।

### ५ पत्तियोंपर फोटो

यह सबही जानते होंगे कि प्लेटपर प्रकाशसे रसायन परिवर्तन होता है। और इसीके कारण छाया पड़नेसे प्लेटपर छाया चित्र खिंच सकता है। पेड़ोंकी पत्तियोंमें भी ठीक ऐसा ही हाल है। उनमें भी रसायन परिवर्त्तन हुआ करते हैं, पर छाया डालनेसे जहां जहां छाया पड़ती है तहां तहां रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। यदि किसी रीतिसे उन स्थानोंमें, जहां रासायनिक क्रिया हुई हो और उनमें जहां क्रिया न हुई हो, अन्तर प्रगट किया जा सकै तो तसवीर स्पष्ट हो सकती है। इसके लिए यह आवश्यक है कि हम उन रासायनिक परिवर्तनोंको जानें जो पत्तियोंमें हुआ करते हैं। पत्तियां वायुसे कर्बन द्विओषित ग्रहण करती हैं। उसमेंका कर्बन ( कोयला ) तो रख छोड़ती हैं और ओषजन वायुको समर्पण कर देती है। कर्बनका मांड बनता है। अब पत्तियोंके जिस भागपर छाया डाली जाय, व हां सूर्य्य भगवानकी वह

किरणें न पहुंचेंगी जिनकी सहायतासे पत्तीका हरा रंग कर्बन द्विओषितका विश्लेषण कर सकता है। अतः उन उन भागों में माण्ड नहीं बनेगा। माण्डका बना अयोडीन के ( iodine ) घोल से प्रत्यक्ष किया जा सकता है।

पत्तीपर छाया चित्र उतारनेकी विधि यह है—

एक नैगेटिव तय्यार करनेके पीछे कई घण्टोंतक पत्तीके ऊपर बांध दिया जाता है। नैगेटिवके भिन्न भिन्न भागोंमेंसे, भिन्न भिन्न मात्राएं प्रकाशकी पत्तीपर गिरेंगी। अतः पत्तीके विविध भागोंमें माण्डकी भी भिन्न भिन्न मात्राएं बनेंगी। इसके बाद पत्तीको आध मिनट तक उबलते हुए पानीमें डुबोकर अलकहलमें डुबो दिया जाता है। पत्तीका हरा रंग उतर जाता है और माण्डकी तह दिखाई देने लगती है। अब पत्तीको टिंकचर अयोडीनके ( tincture iodine ) घोलमें डाल-देनेसे अयोडीन और माण्डका यौगिक बन जायगा। जितना माण्ड किसी भाग विशेषमें होगा, उतना ही यह यौगिक बनैगा, तदनुसार गहरा या हलका रंग पत्तीपर दिखाई देगा। अर्थात् चित्र दिखलाई देने लगैगा, ( क्योंकि रंग-का गहरापन और हलकापन चित्रके अनुसार ही होगा ।

अभी तक पत्तियोंपर चित्र उतारनेका प्रयोग नहीं किया गया है पर आशा है कि यह भी सफल होगा। इस कामकेलिए ( trapoleam majus ) ट्रेपोलियम मेजुस, जो उर्द, मूंग इत्यादिकी जातिका एक पौदा है, बहुत ही उपयुक्त हैं।

### ६ फ़ोटोग्राफ़ीके काग़ज़ोंकी जांच

यदि यह देखना हो कि काग़ज़ स्थायी है या नहीं, तो प्रिंटके दो टुकड़े करके, उनमेंसे एक ऐसे घड़े या वर्तनमें लटका दिया जाय कि जिसमें कर्बन-द्विगंधित ( carbon disulphide ) रक्खा हो। इसकी वाष्प कागज पर कई घण्टेतक क्रिया करती रहै। तदनन्तर इसको निकाल कर दूसरे टुकड़े से मिलाकर यह मालूम हो जायगा कि प्रिंट स्थायी है या नहीं।

### ७ निकिल और टैंटेलम

निकिल अम्लोंमें घुलन शील है, पर यदि -स-में टैंटेलम धातु भी मिलादी जाय तो उस पर अम्लोंका प्रभाव नहीं पड़ता। ५—१० प्रति शत टैंटेलम काफी होता है पर ३० प्रतिशत टैंटेलम मिला हुआ निकिल नमक और शोरेके तेज़ाबोंके मिश्रणमें ( aqua regia ) उबालनेसे भी नहीं गलता !

इन दो धातुओंका यह धातुमेल ( alloy ) कड़ा होता है। इसका तार खींचा जा सकता है, यह हथोड़ेसे पीटा भी जा सकता है। बहुत ऊंचे तापक्रमतक इसे खुली हुई हवामें गरम भी करनेसे इसका ओषित नहीं बनता। धातुमें ल बनानेकेलिए दोनों धातुओंका बुरादा मिलाकर बड़े भारी दबावसे दबाया जाता है और फिर शून्य स्थानमें किसी कार्टूज़की खरियामें ऊंचे तापक्रम तक गरम किया जाता है, पर इस धातु-मेलका मूल्य बहुत अधिक होनेके कारण वह साधारण कामोंमें नहीं लाया जा सकता।

### ८ अलुमिनियमपर निकल चढ़ाना

प्रायः ताम्बा, पीतल, लोहेकी वस्तुओंपर निकिल इसलिए चढ़ा दिया जाया करता था कि वायुके प्रभावसे वस्तुओंका रंग न बिगड़े। पर अलुमिनियमपर निकिल चढ़ानेकी सुगमरीति नहीं निकली थी। पहले यदि निकिल चढ़ा दिया भी जाता था, तो शीघ्र ही अलग हो जाता था। अब जिस रीति निकिल चढ़ाया जाता है वह नीचे दी जाती हैः—

उबलते हुए (caustic potash) कास्टिक पो-टासके घोलमें डुबोकर अलुमिनियम साफ़ किया जाता है, तदन्तर चूनेका पानी उसपर ब्रुशसे फेरते हैं और उसे पुटासियम साइनाईडके घोलमें डुबोते हैं। अन्तमें उसे लोहहरित ( ferrous chloride ) के घोलमें, जिसमें ५०० ग्राम नकमका तेज़ाब, ५००

ग्राम पानी और एक ग्राम लोहा रहता है, डुबोते हैं। प्रत्येक क्रियाके उपरान्त उस वस्तुको शुद्ध पानीमें धोना चाहिये।

अब वस्तु निकिल चढ़ानेकेलिए तय्यार हो जाती है। यह स्मरण रहना चाहिये कि निकिल का चढ़ना, अलुमिनियमपर लोहेकी एक हलकी तह चढ़ जानेपर और वस्तुके साफ़ होनेपर निर्भर है। अतएव ऊपरकी क्रियाएँ-जिनमें वस्तु साफ़ होती है और उसपर लोहेकी तह चढ़ाई जाती है-बड़ी सावधानीसे करनी चाहिएँ।

निकिल चढ़ानेकेलिए निम्नलिखित घोलका उपयोग किया जाता हैः—

१००० घन सेन्टीमीटर शुद्ध जल
५० ग्रेन निकिल हरित
२० ग्रेन बोरिक एसिड

वस्तुके प्रति १०० वर्ग सेन्टीमीटर पीछे, २·५ वोल्टके दबावकी १ अमपीयरकी विद्युद्धारा का उपयोग करनेसे अच्छा काम तय्यार होता है।

इस रीतिसे निकिलकी तह अलुमिनियमपर ऐसी पक्की चढ़ती है कि अलुमिनियमके कुछ कण लिये बिना निकिलकी तह नहीं उचटती।

९. अलुमिनियमके तारका नया उपयोग

जब कभी किसी कुण्डलीमेंसे विद्युत्धाराका प्रवाह करना पड़ता है, तो यह आवश्यक है कि कुण्डलीके दो चक्कर आपसमें मिल न जायँ। यदि मिल जायँगे तो सब कुण्डलीमेंसे धारा न बहकर केवल उसके थोड़ेसे भागमें होकर ही निकल जायगी, जैसा कि विज्ञान भाग ? संख्या ? पृष्ठ ? पर चित्रद्वारा समझाया गया है। साधारण उपयोगमें भी तारोंको रेशम या गटापरचासे मढ़देते हैं। पर इन रीतियोंमें बड़ा व्यय और परिश्रम करना पड़ता है। रेशम चढ़ानेका अभिप्राय केवल यही है कि तारके ऊपर कोई विद्युदवरोधक पदार्थ हो, जो तारके पार्श्वमेंसे बिजलीकी धाराको, किसी दूसरे तारके स्पर्शसे न निकलने दे। अब नई रीतिसे अलुमिनियम-के तारपर, उसके ओषितकी एक तह चढ़ा दी जाती है जो विद्युदवरोधक है। एक बरतनमें सुहागेका घोल भर दिया जाता है। इसमेंसे विद्युत्-प्रवाह करानेकेलिए दो तख़तियोंकी जरूरत है। एक तख़ती तो ग्रेफ़ाईट की रखते हैं, दूसरी तख़ती-की जगह यह तार रख दिया जाता है। ग्रेफ़ाईट-को एक विद्युद् घटमालाके (battery) ताम्बेके (धन) छोरसे जोड़देते हैं और तारको जस्तेके (ऋण) छोरसे, बड़े भारी दबाव की धारा (high voltage current) सुहागेमें होकर प्रवाहित करते हैं। थोड़ी देरके बाद ग्रेफाईट और तार की स्थिति बदल देते हैं।। इस रीतिसे तारपर ओषित बन जाता है। यह ओषितकी तह ५०० वोल्टतक-की विद्युद्धाराका दबाव सहन कर सकती है।

इस रीतिका उपयोग एक ढंगसे पहले भी किया जाता था। रेलगाड़ियोंमें बिजलीकी रोशनी होती है। इसकेलिए विद्युत् संचायकोंका प्रयोग किया जाता है, पर विद्युत् संचायकोंकी संचित विद्युत्धारा थोड़े ही समयमें खर्च होजाती है। इस-लिए यह आवश्यक है कि उनकी संचित विद्युत् जहांतक होसके ज्यों की त्यों बनी रहै। इसलिए गाड़ियोंके नीचे डैनेमो लगादेते हैं। जबतक गाड़ी चलती रहती है तबतक डैनमो चलता रहता है और बिजली पैदा करता रहता है जो सञ्चायकोंमें होती हुई लम्पोंमें पहुंच उनमें प्रकाश उत्पन्न करती रहती है। गाड़ी ठहरनेपर डैनेमो ठहर जाता है और विद्युत सञ्चायकसे लेम्पमें धारा पहुंचती है। इस समय सञ्चायकसे बिजली डैनेमोमें पहुंचना हानिकारक होगा, इसलिए डायनेमो और सञ्चायकोंके बीचमें एक यंत्र रखदेते हैं जिसको सुधारक (rectifier) कहते हैं। इस यंत्रमें एक लोहेकी और दूसरी अलुमुनियमकी तख़ती एक बर्तनमें रहती हैं, जिसमें अमोनियम बोरेट रहता है। इस बोरेटके कारण अलुमिनियमपर ओषितकी तह चढ़ जाती है, जो विद्युद्धारा डैनमोंमेंसे

सञ्चाकमें तो पहुंचने देती है परसश्चायकसे धारा डैयमोमें नहीं आने देती।

---

## समालोचना

### १. श्री रामनामामृत

बाबू द्वारकादास केदारबक्स द्वारा प्रकाशित और विना-मूल्य वितरित।

इस पुस्तकके तीन विभाग किये जासकते हैं। पहिले भागमें (१-१८ पेजतक) श्रीराम नाम महात्म्य दिया है। दूसरे भागमें (१—२०३) श्रीरामनामामृत, और अन्तके ७ पृष्ठोंमें 'श्रीराम महिमास्तव' दिये हैं। पहिले भागमें श्रीरामनाममहात्म्य, संस्कृत और भाषाके पद्योंके प्रमाणों-द्वारा, सिद्ध किया है। प्रत्येक वैष्णवके पढ़ने योग्य विषय है और उसका प्रतिपादन भी भली भान्ति किया गया है। अन्तिम भागमें संस्कृत श्लोकोंका अच्छा संग्रह है पर हमें खेद है कि बीचके २०३ पृष्ठोंका कुछ भी उपयोग हमें नहीं मालूम होता। इन पृष्ठोंमें केवल 'श्रीराम' छपा हुआ है। भूमिकामें हरमुखराय छाव छरियाजीने (जिनके सदुपदेशसे इतना काग़ज़ और छपाई व्यर्थ गई) स्वयम इन पृष्ठोंसे यथेच्छ लाभ पहुंचनेमें आशंका दिखलाई है, पर तो भी इन पृष्ठोंके छपवानेका समुचित कारण नहीं बतलाया इसमें सन्देह नहीं कि विधिपूर्वक जप करनेसे अधिक लाभ होगा। पर विधि थोड़ेसे शब्दोंमें ही बतलाई जासकती थी। बीचके २०३ पृष्ठोंका छापना आवश्यक न था। यदि यह भी कहा जाय कि इन पृष्ठोंके पाठ करनेसे ही लाभ होगा, तो यह स्मरण रखना चाहिए कि जो राम नामका जप करता होगा, उसे पुस्तकसे पाठ करनेमें चौगुना समय लगाना पड़ेगा। आशा है कि सेठजी अबकी वार अधिक उपयोगी पुस्तकें जैसे गीता पुराण इत्यादि छपवाकर सर्वसाधारणको लाभ पहुंचाएंगे। गो. भा.

### २. हर्वर्ट स्पेनसरकी ज्ञेय मीमांसा। लेखक लाला कन्नोमल एम. ए.। प्रकाशक इण्डियन प्रस, प्रयाग मूल्य ।)

'हर्वर्ट स्पेन्सरकी अज्ञेय मीमांसा' पहले निकल चुकी है। उसी ढंगकी लिखी हुई यह पुस्तक भी है। लालासाहबने यह पुस्तक लिख हिन्दी सहित्यकी वास्तविक सेवा की है। यद्यपि यह पुस्तक बड़े भारी ग्रन्थके आधारपर लिखी गई है, तदपि विषय अतिरोचक और सुबोध रीतिसे प्रतिपादित हैं। मीमांसाके प्रत्येक प्रेमीको। अवश्य पढ़नी चाहिये।

### ३. सत्य निबन्धावली। लेखक श्रीयत सत्यदेव, मूल्य ॥)

आप हिन्दीके उन थोड़ेसे लेखकोंमेंसे हैं जो स्वतन्त्र दृष्टिसे देश और कालको देखकर अपने विचार प्रकट करते हैं। यह आपका गुण इस पुस्तकके कई निबन्धोंसे (जैसे हरिसिंहको मेरा सन्देशा,) स्पष्ट है। यह पुस्तक नवयुवकोंकेलिए बड़ी उपयोगी है। हमारा स्वामीजीसे अनुरोध है कि सामाजिक सुधारपर भी आप अपने निर्पक्ष और स्वतंत्र विचार किसी पुस्तक रूपमें प्रकट कर देशकी सेवा करें।

---

## प्राप्ति स्वीकार

१. पं० दुर्गाचन्द्र जोषी कंखल, हरिद्वार (१९१५-१६) ,३)
२. प० रामचन्द्र शर्म्मा वैद्य,ज्वालापुर (१९१५-१६) १०॥)
३. प्रोफ़ेसर विश्वम्भर प्रसाद एम्. ए. गवर्न्मैंएट कालेज, अजमेर, ४) (१९१५-१६)
४. श्रीयुत राधामोहन गोकुलजी, १६१ हरीसनरोड कलकत्ता (१९१५१६) १२)-
५. श्रीयुत उग्रसेन, बार-एट-ला सहारनपुर (१९१५-१६) १२)
६. केशवचन्द्र सिंहचौधरी, एम्--एस्सी एल्--एल्-बी प्रयाग (१९१५-१६) १२)
७. प्रोफ़ेसर मेहदी हुसैन नासिरी, एम्.ए म्योरकालेज, प्रयाग (१९१५१६) १२)

८. श्रीयुत सी. सी. देसाई कंसलटिंग केमिस्ट स्टार टेकनोलोजीकल वर्क्स, मतार ( कैरा ) १२)

९. श्रीयुत रगनप्रसाद गोयल केसरगंज, अजमेर (१९ १६- १७) ५)

१०. प्रोफेसर मोहम्मद--अली नामी म्योरकालेज, प्रयाग ( १९१५--१६ ) १२)

११. पं० मनोहरलाल जुत्सी एम्-ए लखनऊ, ( १९१५-१६ ) १२)

१२ प्रोफ़ेसर लालजी श्री वास्तव एम्. एस-सी अजमेर ( १९१५-१६ ) ५)

योग १११॥)

## कार्य्य विवरण

परिषद्का साधारण अधिवेशन २१ सितम्बर सं१९१६ को प्रोफ़ेसर सतीशचन्द्रदेवके सभापतित्वमें हुआ। निम्नलिखित सज्जन सभ्य और परिसभ्य चुने गयेः—

### सभ्य

१. श्रीयुत बेनीप्रसादसिंह सम्पादक 'दारुल-उलूम' रिकाबगंज फ़ैज़ाबाद

२. श्रीयुत बाबू शिवप्रसाद गुप्त, रईस कोठी अज़मतगढ़ नन्दन साहूकी गली, काशी

३. प्रोफ़ेसर करम नारायण, एम् एस्-सी म्योर कालेज, प्रयाग

४. श्रीयुत गोपालनारायण सेन सिंह, बी. ए. अध्यापक कायस्थ पाठशाला, प्रयाग

५. श्रीयुत सय्यद इकबालअली, बी-ए. कटरा, प्रयाग

६. श्रीयुत ठाकुर राजबहादुर सिंह, ग्राम देवरिया, पोस्ट गोपीगंज, ( मिर्ज़ापुर )

७. श्रीयुत, जे, मोर्फिन होल्ट, वार्डन, कृषि विद्यालय, कानपुर

### परिसभ्य

१. श्रीयुत मुहम्मद मेहदी रिज़वी, बी. ए. कटरा प्रयाग,

२. श्रीयुत सैय्यद अली वाजिद, बी. ए. कटरा, प्रयाग

इस कार्य्यकी समाप्तिपर श्रीयुत दुर्गादत्त जोषी बी. ए., एम् एस्-सी ने एक रहस्य पूर्ण, ललित व्याख्यान छायाचित्रण ( Photography ) पर दिया। प्रोफ़ेसर देव इस व्याख्यानको देनेवाले थे, पर अस्वस्थ होनेके कारण आप व्याख्यान न दे सके। अतः आपके अनुरोध और सहायतासे प्रोफ़ेसर जोषीने इस विषयपर निबन्ध लिखा और परिषद्में पढ़ा। व्याख्याता महाशयको धन्यवाद देनेके उपरान्त सभाका विसर्जन हुआ।

### सूचना

बड़े हर्षके साथ यह सूचना दी जाती है कि परिषद्का तृतीय वार्षिक अधिवेशन १८ नवम्बर सं १९१६ को होगा। इस अवसरपर इस प्रान्तके छोटे लाट माननीय सर स्कार्जी मेस्टन एल-एल-डी ने सभापतिका आसन ग्रहण करना स्वीकारकर लिया है। लोकप्रसिद्ध गणिताचार्य्य डाकृर गणेशप्रसाद, 'गणितके आविष्कार' पर व्याख्यान देंगे।

सेनेट हालमें, कन्वोकेशनके उपरान्त अधिवेशन होगा। परिषद्के सभ्यों, परिसभ्यों तथा अन्य हितैषियों से प्रार्थना है कि इस अवसरपर अवश्य पधारें।

गोपालस्वरूप भार्गव
मंत्री

### ANNOUNCEMENT.

It is hereby announced that the third anniversary of the Vernacular Scientific Society will be celebrated on the 18th November 1916 in the Senate Hall, after convocation. His Honour the Lieutenant-Governor has very kindly, consented to preside over the function. Profesor Ganesh Prasad, M A. D. Sc. will deliver a lecture on ' Mathematical Research.'

The business meeting will be held on Sunday the 19th November 1916 in the Muir College.

GOPALSWARUP BHARGAVA,
*Secretary.*

## साहित्य समाचार !

### मनोरमा

हिन्दीकी यह एक सचित्र मासिक पत्रिका है। पण्डित प्यारेलाल जी दीक्षित और उनके शिष्य पण्डित रामकिशोर शास्त्री इसके सम्पादक हैं। इसकी आख्यायिकायें, विशेष प्रकारसे बड़ी चटकीली और लच्छेदार होती हैं। सब पत्र पत्रिकाओं ने इसकी बड़ी प्रशंसा की है: सरस्वती-की समालोचना देखिये—

आकार सरस्वतीके सदृश है। चित्र भी रहते हैं। वार्षिक मूल्य तीन रुपया है इसके सम्पादक संस्कृतज्ञ हैं। काव्योंके गद्य पद्यमय अनुवाद आप इसमें विशेष करके छापते हैं। अन्यान्य कवितायें और लेख भी इसमें रहते हैं, पत्रिका साहित्य सम्बन्धिनी है, अच्छी निकलती है इत्यादि। ऐसी अच्छी पत्रिका यदि आप देखना चाहते हैं तो आज ही मैनेजर "मनोरमा" मंडी धनौरा यू. पी. को लिख दीजिये।

## विज्ञापन छपाईके नियम।

१—कवरपर प्रति पृष्ठ प्रति मास... ... ५)
प्रति पृष्ठ २ कालम ... ... ४)
१ „ ... ... २॥)
आधा „ ... ... १॥)
आधे कालमसे कमका ... ... १)

२—अस्वीकृत विज्ञापन लौटाया न जायगा। जो लोग लौटाना चाहें वह साथमें )॥ का टिकट भी भेज दें।

३—विज्ञापनकी छपाई सर्वथा पेशगी ली जायगी।

४—७) रुपयेसे कम दामका विज्ञापन छपानेवालोंको १) प्रति कापी पत्रका मूल्य अधिक देना पड़ेगा।

५-विज्ञापन बँटाईकी दर क्रोड़पत्र देखकर बतायी जायगी।

६—अधिक कालकेलिए तथा अन्य बातें पत्र व्यवहार द्वारा तय करनी चाहिएं।

निवेदक, मंत्री विज्ञान परिषत्, प्रयाग।

---

## विज्ञानसे

### विद्यार्थियोंको सुभीता

जो विद्यार्थी विज्ञानके छः ग्राहक बनाकर उनके चन्देके १८) भिजवा देंगे उनके नाम साल भर विज्ञान विना मूल्य जायगा और उस वर्ष छपनेवाली किसी पुस्तकको विना मूल्य पानेका उसे अधिकार होगा।

विज्ञानकी ग्राहक संख्या बढ़ाना वास्तवमें विद्याका प्रचार करना और हिन्दी भाषियोंका आनन्द बढ़ाना है। इसमें विद्यार्थियोंको यत्नवान होना दूने लाभका कारण है।

---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—गोपालस्वरूप भार्गव एम्. एस-सी.,**
**मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग।**

Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P. Sudarshanacharya, B. A, for the Vernacular Scientific Society, Allahabad

भाग ४
Vol. IV.

वृश्चिक, १९७३ । Novemder 1916.

संख्या २
No. II

## प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

### विषय-सूची



**प्रकाशक**

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

[ १ प्रतिका मूल्य ।)

वार्षिक मल्य ३) ]

## विज्ञानके नियम

( १ ) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

( २ ) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

( ३ ) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे

( ४ ) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

( ५ ) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

( ६ ) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

## विज्ञान-परिषत्‌के कार्य्यकर्त्तृगण—१९१५-१९१६।

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३। ५।

भाग ४ } वृश्चिक, संवत् १९७३। नवम्बर, सन् १९१६। { संख्या २

## मंगलाचरण

हमसे क्यों रूठी तू मैया,*
केहि अपराध औरन अपनाये हमैं बिसारे दैया;
तिनके श्रवन नयनकर पदकी सब विधि करत सहैया,
हमैं छोड़ि मझधार जननि तू खेवत उनकी नैया।
जुपै अजोग, सुअन पै तेरे और न कोउ अपनैया,
भारत बेड़ा पार लगा दे मिलत न कोइ खेवैया॥

दिल्ली
२५-४-१६

—रामदास गौड़

*परमात्माकी उपासना भारतीय शक्ति रूपमें भी करते हैं। विद्युत आदि शक्तिके ही सहारे पाश्चात्योंको सारी उन्नति हुई है। यह प्रार्थना भी उसी जगज्जननीसे की गयी है।

## अङ्कगणितकी शिक्षा

[ ले० सतीशचन्द्र घोषाल बी. एस-सी. ]

### ५—संख्याका ज्ञान ; गिन्ती और संख्या लिखना

#### प्रारम्भीय

प्राचीन कालमें मनुष्य सिर्फ़ वस्तुओंके सहारे ही गिन्ती करना जानते थे। पांचका मतलब वे पांच गायें, पांच भेड़ें इत्यादि समझते थे। परन्तु हम लोग संख्याको वस्तुओंसे भिन्न विचार सकते हैं, पर इस प्रकार संख्याके स्वतंत्र विचार करनेकी शक्ति पदार्थोंको गिननेसे ही बढ़ती है।

#### बालकका गिन्तीसे स्वाभाविक प्रेम

हर एक व्यक्तिको मालूम होगा कि बालकोंको गीत बहुत पसंद आते हैं। यहांतक कि यद्यपि वह गीतका मतलब भी नहीं समझता तो भी उसे रटता है। जब उसे मधुर ध्वनि सुननेका मौक़ा नहीं मिलता तो वह लकड़ी पटक पटककर उसकी कर्कश आवाज़से अपनेको संतुष्ट कर लेता है।

Teaching शिक्षा ]

गिननेमें आवाज़का चढ़ाव उतार होता है। यह मनोहर लय बालकोंको बहुत पसंद आती है। वार वार ऊंचे स्वरसे गिन्ती दुहराना बालकोंको इसीलिए बहुत रुचिकर है। छोटे छोटे पदार्थोंको बार बार रखना और उठाना बालकोंका स्वभाव है।

बालक संख्याका थोड़ासा ज्ञान स्वतः प्राप्त कर लेते हैं

अधिकांश बालक स्कूलमें आनेके पेश्तर ही पांचतक गिनना स्वतः सीख लेते हैं। सिर्फ़ गिन्ती कहना ही नहीं, बहुतसे तो ३, ४, ५, इत्यादि संख्याओंका मतलब भी समझते हैं। एक और दोका ज्ञान तो प्रायः इस उमरतक सभी बालकोंको हो जाता है। इस प्रकार गिन्तीका 'श्रीगणेश' तो बालक स्वतः कर लेते हैं।

पाठकका काम

पाठकका काम यहांसे आगे उन्नति करनेका है। प्रथम तो बालकोंको साक्षात पदार्थोंकी गिन्ताद्वारा आगेकी संख्याएं सिखाना और इसके साथ ही साथ संख्याओंका वास्तविक ज्ञान प्राप्त कराना उचित है।

संख्याका ज्ञान करानेकेलिए साक्षात पदार्थोंका उपयोग आवश्यक है।

यद्यपि संख्याओंका विचार यथार्थमें हम वस्तुओंसे भिन्न कर सकते हैं परन्तु तो भी प्रारम्भमें पदार्थोंके साक्षात गिननेसे ही संख्याका यथार्थ ज्ञान हो सकता है। इसलिए मास्टरको चाहिये कि गिन्ती सिखानेके समय पदार्थोंका उपयोग करे। इमलीके बीज, कङ्कड़, कौड़ियां और गोलियोंके तख्ते प्रत्येक स्कूलमें पाये जाते हैं। इनके सिवाय और भी चीज़ें जैसे पुट्ठेके टुकड़े, लकड़ीकी सींकें आदि पदार्थ मास्टर स्वतः तय्यार कर लेवें।

सारांश—इस प्रकारके पदार्थ ऐसे हों जिनको बालक हाथमें लेकर गिन सके। इनका रंग चमकीला और नेत्रोंको सुखदाई हो। याद रहे कि बालककी जितनी अधिक इन्द्रियां काममें आवेंगी उसके मनपर उतनाही विशेष असर होगा और उतने ही अधिक दिनोंतक वह असर क़ायम रहेगा।

पदार्थोका विशेष विवरण

इमलीके बीज, कौड़ियां, लकड़ीके घन और सिक्के गिन्ती सिखानेमें बहुत उपयोगी होते हैं और ये पदार्थ कक्षाके प्रत्येक बालकको दिये जाने चाहिएं। मास्टर अपने उपयोगकेलिए गोलियोंका तख़्ता पास रक्खे। इसके सिवाय एक तख़्ता, जिसमें बीज व गोलियां इत्यादि पदार्थ रखनेकेलिए ख़ाने हों झुकाकर यदि मास्टर अपने पास रक्खे तो और भी अच्छा है। यहांपर हम एक ख़ास यंत्र, जो कि कई तरहसे बहुत उपयोगी है, बनानेकी विधि लिखते हैं। पुट्ठेके आध इंच व्यासवाले और एक इंच ऊंचे कई डब्बे बनालो और उतने ही छोटे डब्बे पाव इंच व्यास और एक इंच ऊंचाईवाले लो। अब एक इंच लम्बी लोहेकी छड़पर एक डब्बा लगा दो। दो इंच लम्बे तारपर एक बड़ा डब्बा और एक छोटा डब्बा दोनों लगादो। इसी प्रकार एक तीन इंच लम्बे तारपर २ बड़े डब्बे और उनके बीच १ छोटा डब्बा इस प्रकार ३ डब्बे लगाओ। इसी प्रकार क्रमशः ४,५,६ इत्यादि डब्बे ४ ५,६ इंच लम्बे तारोंपर लगाते जाओ। ६ इंचवाले तारपर ६ डब्बे लगाओ। तख़्तेपर क्रमशः पहिले १ इंचवाला तार फिर दो इंचवाला इस प्रकार सभी तार लगा दो। संख्याओंका ज्ञान करानेकेलिए इन डब्बोंकी लम्बाई व संख्याओंसे ख़ूब सहायता होती है।

गिन्तीका आरंभ; मास्टर और बालक साथ २ गिन्ती करें

हाथमें एक गोली अथवा घन लो। बालकोंको बताकर ज़ोरसे कहो एक। विद्यार्थी भी एक एक गोली हाथमें लें और ज़ोरसे कहें एक। इस प्रकार बारबार दुहराओ। फिर एक और गोली हाथमें लेकर पहली गोलीमें मिलाकर ज़ोरसे कहो दो। लड़के भी ठीक इसी प्रकार एक एक गोली मिलाकर कहें दो। बारबार इसी भांति

मास्टर और बालक दुहराते जावें, जबतक कि खूब मश्क़ न हो जाय। तीन सिखानेकेलिए एक गोली और हाथमें ली जाय और दो गोलियोंमें मिलाकर कहा जाय तीन। ठीक इसी प्रकार लड़के भी करें और कहें तीन। इस प्रकार गोलियोंद्वारा पांचतक गिन्ती इसी प्रकार सिखाना चाहिये।

संख्याओंका प्रथक्करण

संख्याओंका यथार्थ ज्ञान करानेकेलिए और उनका परस्पर संबंध बतानेकेलिए संख्यायोंका पृथक्करण किया जाना चाहिये। इसके करनेकी रीति इस प्रकार है:—

प्रश्न—एक गोली और एक गोली? उत्तर—दो गोलियां।

प्रश्न—एक बीज और एक बीज? उत्तर—दो बीज

प्रश्न—एक और एक? उत्तर—दो।

अभ्यासकेलिए इसी प्रकारके प्रश्न बालकोंसे पूछे जावें। पेंसिलोंकी लम्बाई और घनोंकी ऊंचाईद्वारा एक और दो का सम्बंध बालकोंको भली भांति कराया जाय। बालकोंका ध्यान ऐसे पदार्थोंकी ओर आकर्षित करो जो सदैव दो पाये जाते हों जैसे आंखें, कान, हाथ, पांव, गायके सींग, गाड़ीके पहिये इत्यादि। ठीक इसी प्रकार तीनका पृथक्करण करो। बताओ कि तीनका मतलब 'एक और एक और एक' तथा 'दो और एक' भी है। पदार्थोंकी लम्बाई, चौड़ाई इत्यादिद्वारा इस प्रकारके ज्ञानको खूब पक्का करना चाहिये।

एक साधारण ग़ल्ती जो बालक प्रायः करते हैं।

बालकोंको गिन्ती सिखाते समय पाठकोंने देखा होगा कि वे जिस समय दूसरी गोली उठाते हैं तुरंत दो कहने लगते हैं। यथार्थमें दूसरी गोली सिर्फ़ एक ही है। इस प्रकारकी ग़ल्तीके ऊपर मास्टरको ख़ूब ध्यान रखना चाहिये। जो बालक इस प्रकार ग़ल्ती कर रहा है उसे वास्तवमें दोका यथार्थ ज्ञान नहीं। ऊपर जिस यंत्रका वर्णन हमने किया है, उसका उपयोग इस समय किया जाना चाहिये। पहिले तारपर टंगा हुआ डब्बा बताओ और कहो कि यह एक है। अब दूसरे तारके दोनों डब्बोंको दिखाकर बताओ कि ये दो हैं। इसी प्रकार तीन वग़ैरहकेलिए भी करो।

अङ्कोंका लिखना

अङ्क लिखना सिखाते समय तख़्तेपर अलग अलग पंक्तियोंमें विन्दु, लकीरें, अथवा वर्ग (क्रमसे एक, दो तीन) बाईं ओर बनाओ दहिनी तरफ़ बराबरीपर क्रमशः १, २, ३, इत्यादि बनाओ। बालक भी ठीक इसी प्रकार विन्दु और अङ्क अपनी स्लेटोंपर बार बार बनावें। विद्यार्थियोंको यह बात अच्छी तरह समझाई जाय कि २, दो लकीरोंके लिखनेका सरल उपाय है। इस मौक़ेपर बालकोंको गिननेमें ख़ूब अभ्यास कराया जाय और ऐसे उदाहरण दिये जायं जिससे उनका संख्याका ज्ञान खूब पक्का हो जाय।

उंगलियोंपर गिनना कहांतक ठीक है?

शुरु शुरुमें गिन्ती सिखानेकेलिए यदि उंगलियोंका उपयोग कराया जाय तो अनुचित नहीं, परंतु धीरे धीरे यह अभ्यास कम कराना होगा, यहांतक जब बालक जोड़ सीखने लगें तो यह देख लेना चाहिये कि लड़के उंगलियोंका उपयोग तो नहीं करते। इस आदतसे नुक़सान यह है कि बालक अक़्ल ख़र्च करनेके बदले इन्हींपर अवलम्बित हो जाते हैं। बार बार उंगलियोंपर सवाल लगानेकी भद्दी आदत अच्छी नहीं।

छः से नौतक गिन्ती

जिस प्रकार एकसे पांचतक संख्या सिखलाई गई है उसी प्रकार छः से नौतक सिखाई जावे। हर एक संख्याका पृथक्करण करके उस संख्याका दूसरी संख्याओंके साथ सम्बंध ठीक ठीक समझाया जाय। जो बात सिखाई जाती है उसे लड़के ठीक ठीक याद रखते हैं या नहीं इसपर ख़ूब ध्यान रक्खा जाय।

पृथक्करणकी विधि

छः इत्यादि संख्याओंका पृथक्करण करनेमें यह सिलसिला काममें लाया जाय :

( १ ) साक्षात वस्तुओंद्वारा प्रथम तो बालक स्वतः गिन्ती करें

( २ ) स्लेटके ऊपर वस्तुओंके चित्र बनवाकर गिन्ती मश्क़ कराई जाय

( ३ ) ऐसे सरल सवाल जिनमें पदार्थोंके नाम ही हों जोड़केलिए दिये जायं यथा ४ विही और ३ विही

( ४ ) सिर्फ़ ऐसे प्रश्न जिनमें संख्या ही हों यथा ४ और ३।

उदाहरण

मानलो कि हम बालकोंको ६ गिनना सिखाना चाहते हैं

(अ) लड़कोंसे छः बीज गिनवाओ और इकट्ठे उनके सामने रखो। इनमें दो बीज अलग निकालो। लड़के गिनें कि बाक़ी कितने बचे। अब कहें कि दो बीज और चार बीज हुए छः बीज। काले तख़्तेपर पाठक यही बात लिख दें।

(ब) बालकोंको अपनी स्लेटोंपर इस प्रकार खड़ी लकीरें खींचने दोः—

॥ और ॥॥ हुईं ॥॥॥

(स) लड़कोंसे निकलवाओ कि दो गायें और चार गायें हुई छः गायें इत्यादि

(५) आख़िरमें लड़के कहें कि २ और ४ हुए ६

ठीक इसी प्रकार ६का ३ इत्यादिसे सम्बंध बताओ और जो जो संख्याएं लड़के सीखते जायं उनपर सरल प्रश्न करो। ये प्रश्न सरल भाषामें हों और ऐसे पदार्थोंके सम्बंधमें हों जो बालकोंके अनुभवमें आ चुके हैं।

ग्यारह बारह इत्यादिका सिखाना

ग्यारहसे लेकर अठारहतक संख्यावाची शब्दोंके विषयमें सब लोग जानते हैं कि ये नाम संस्कृत एकादश, द्वादश इत्यादि नामोंके अपभ्रंश हैं। इन संस्कृत शब्दोंका मतलब क्रमशः एक और दश, दो और दश, इत्यादि हैं। इस तरह इन शब्दोंका मतलब समझनेपर मालूम होता है कि एकसे लगाकर दशतक नामोंके संयोगसे ये नाम बने हैं। विद्यार्थियोंको इन शब्दोंका मतलब समझा देनेसे उन्हें इनके नाम याद रखनेमें बड़ा सुभीता होगा और वे इन संख्याओंका ज्ञान भी आसानीसे प्राप्त कर लेगें। उन्नीस, संस्कृत एकोनविंशतिकी बात अलग है। इसका मतलब 'एककम बीस' है, इसी प्रकार २१ इकीस, इकतीस आदिके विषयमें ग्यारह बारहके समान ही विचार कर सकते हैं उन्नीस, उन्तीस, उनतालीस इत्यादि नामोंको ख़ास तौरसे विद्यार्थियोंको समझा देना होगा।

प्रोफ़ेसर रे साहबकी युक्ति

प्रो० रेने अनुमान किया है कि संस्कृत एकदश शब्दके 'दश' का स्वरूप शायद पाली भाषामें 'रह' हो गया हो जिसका रूपान्तर बोलचालकी भाषामें 'रा' हो गया, जैसा कि ग्यारा, बारा, इत्यादि शब्दोंसे मालूम होता है।

विद्यार्थियोंको दस तथा आगेकी संख्याएं पढ़ाते समय यह बात दर्शा देनी चाहिये कि जैसे चार टुकड़ोंमें एक और मिला देनेसे एक नवीन ही संख्या बन जाती है इसी प्रकार ज्यों ही हम ९ में एक और मिला दें, एक नई संख्या बन जायगी। इस नवीन संख्यामें एक और मिलानेसे एक और नवीन संख्या, निदान इस प्रकार असंख्य नई संख्याएं बनतीं चली जायंगी। यदि हर एक आदमी इन सब संख्याओंके अपनी अपनी इच्छानुसार नामसे पुकारे तो कितनी गडबड़ होगी। हम सब इन नामोंको कैसे याद रख सकेंगे। इसलिए यह बात आवश्यक है कि हम ऐसी रीति ढूंढ़ निकालें जिसमें कि ये संख्याएं आसानीसे लिखी और याद रक्खी जा सकें।

दस

पाठक अब ९ सींकें लेवें और उनमें एक और मिलाकर कहें दस। इसी प्रकार विद्यार्थी भी कहें। इन दस सींकोंको तागेसे बांधकर पूछा जाय कि

कुल सीकें कितनी हैं? उत्तर—दस सीकें। यदि बीजों का उपयोग किया गया हो तो दस बीजोंको एक बटुएमें बंद कराकर बालकोंसे इस प्रकार दसके बटुए तैय्यार करनेको कहा जाय और समझाया जाय कि आगेकी संख्याओंकी गिन्तीमें दस बीजोंके बदले १ बटुएका उपयोग करना अच्छा होगा। इस प्रकार दसका ज्ञान खूब पक्का कराया जाय।

आगेकी संख्याओंका ज्ञान और उनके नाम बताना

दससे आगेकी संख्याओंको सिखानेकेलिए बीज लो और विद्यार्थियोंको इस भांति बांटो; :—

रामको ३ बीज; श्यामको ५, बिहारीके दहिने हाथमें १ बीज और बाएंमें दसका १ बटुआ, गयाप्रसादको १ हाथमें १ बटुआ और दूसरेमें ३ बीज इत्यादि।

लड़कोंसे सवालोंद्वारा निकलवाकर तख़्तेपर इस भाँति लिखो:—

अ.—रामके पास सिर्फ़ ३ बीज याने ३ इकाई

ब—श्यामके पास सिर्फ़ ५ बीज याने ५ इकाई

स—बिहारीके पास १० का एक बटुआ और एक बीज अर्थात् १ दहाई और १ इकाई याने ग्यारह—

उ—गयाप्रसादके पास १ बटुआ और ३ बीज अर्थात् एक दहाई और तीन इकाई याने तेरह।

लिखना सिखाना

इन संख्याओंको अब हम किस तरह लिखें? क्या इसी तरह

१ दस और १
१ दस और २
१ दस और ३

देखो, इस तरह लिखनेमें बहुत जगह लगती है और भद्दा मालूम होता है। कोई और उम्दा रीति निकालें। अच्छा एक खड़ी लकीर खींचो जिसके बाईं तरफ़ दहाई और दहिनी तरफ़ इकाई लिखें, इस प्रकार

| दहाई | इकाई |
|---|---|
| १ | १ |
| १ | २ |
| १ | ३ |

इस प्रकार समझानेके बाद विद्यार्थियोंको लिखनेका अभ्यास करानेकेलिए उदाहरण दो। वे अपनी स्लेटोंपर ठीक जिस प्रकार बताया गया है खड़ी लकीर खींचकर उन संख्याओंको लिखें। इसके बाद समझाओ कि खड़ी लकीर सिर्फ़ सुभीतेकेलिए खींची जाती है। पश्चात् अभ्यासार्थ उदाहरणोंमें इकाई दहाईका लिखना और खड़ी लकीर खींचनेकी आदत छुड़ा दो।

झुके हुए ख़ानेदार तख़्तेका उपयोग

ख़ानेदार तख़्तेसे इन संख्याओंका मतलब भली भांति समझाया जा सकता है। सबसे दाहनी तरफ़के ख़ानेमें इकाई, आगेके दहाई वग़ैरह रक्खा जाय। तब इकाइयोंके ख़ानेमें एक विद्यार्थी ३ बीज रक्खे और दहाईके ख़ानेमें एक थैली। अब मास्टर पूछे कि इकाइयोंके ख़ानेमें कै बीज हैं? उत्तर तीन। तीनको उस ख़ानेमेंके ऊपर लिख दो। दहाई के ख़ानेमें के थैली हैं? उत्तर एक। दहाईके ऊपर लिखदो १। इस प्रकार कुल बीज हुए।

| द | इ |
|---|---|
| १ | ३ |

शून्यका ज्ञान

कक्षाके दो बालकोंको क्रमशः १० और २० बीज दे दो। जब बालक इन्हें गिन लें, तो दस दसके बटुए तय्यार करनेको कहो। अब राम! तुम्हारे पास कितनी दहाई और कै इकाई हैं? उत्तर एक दहाई, इकाई कुछ नहीं। गोविंद, तुम्हारे पास? उत्तर दो दहाई और इकाई कुछ नहीं इस प्रकार ये संख्याएं लिखी जायँ:

रामके पास—१ दहाई। इकाई कुछ नहीं।

गोविंदके पास—२ दहाई। इकाई कुछ नहीं।

अब यह समझाया जावे कि इकाई कुछ नहीं, इसकेलिए शून्य ० बनादो। शून्यका मतलब कुछ

नहीं, है। यदि इकाईके स्थानमें शून्य न रक्खा जाय तो हम १ और २ का दहाईके स्थानमें होना कैसे जानेंगे।

### संख्या गिनने और लिखनेका अभ्यास

इस प्रकार बालकोंको ९९ तक ख़ूब गिन्ती करनेका अभ्यास कराया जाय। हर एक संख्याका नाम स्वतः ढढ़ निकालनेकेलिए उन्हें उत्तेजना दी जाय। सीधी और उल्टी गिन्ती, दो दो को छोड़-कर गिन्ती इत्यादि प्रकारसे उन्हें गिन्तीका अभ्यास कराया जाय। सवालोंके साथ साथ बालक बीजों या गोलियोंद्वारा अपनी गिन्तीकी स्वतः परीक्षा करते जायं।

उदाहरण—२५ बीज गिननेके बाद दस दस-के दो बटुए तैय्यार किये जायं ; ऊपर बचे पांच; अब इस भांति लिखो २ । ५

फिर लिखो २५—नाम पच्चीस। इसी प्रकार ३६ इत्यादि संख्याओंके साथ किया जाय।

### अंकोंकी क़ीमत उनके स्थानके आधीन है।

जब विद्यार्थियोंको संख्याओंका ज्ञान हो जाय तब उनका ध्यान इस बातकी तरफ़ खींचा जाय कि अंकोंकी क़ीमत उनके स्थानके आधीन है। यह इस प्रकार समझाया जाय—तख़्तेपर खड़ी लकीर खींचकर नीचे दी हुई रीतिसे लिखो और बीजोंकी थैलियां और छुटे बीज लेकर विद्यार्थियों द्वारा ये संख्याएं तैय्यार कराओ।

| | |
|---|---|
| | १ |
| १ | ० |
| १ | १ |
| | २ |
| २ | ० |
| २ | २ |
| | ३ |
| ३ | ० |
| ३ | ३ |

विद्यार्थियोंको यह बात अच्छी तरह समझा दो कि इकाईके स्थानमें जो एक लिखा है उसका मतलब सिर्फ़ एक बीज है लेकिन दहाई के स्थानके १ का मतलब १ बीज नहीं किन्तु दस बीज या एक बटुआ है—इसी प्रकार ११ में बाईं तरफ़वाले १ की क़ीमत दहिना तरफ़वाले एकसे दसगुनी है।

### १०० और आगेकी संख्याएं सिखाना

जिस प्रकार ९ के द्वारा १० सिखाये गए उसी प्रकार ९९ द्वारा सौको सिखाना चाहिये। खुलासा यह है कि विद्यार्थी १० वाले ९ बटुए और अलग ९ बीज लेवें और पाठक तख़्तेपर ९९ लिखदें। अब बालक १ बीज और ले ९ बीजोंमें मिलाकर १० गिनलो। इन दस बीजोंको एक बटुएमें बंद करदो। छुटे बीज कितने बचे? कुछ नहीं। इसलिए इकाईके स्थानमें शून्य लिखदो। दहाईके बटुए कुल कितने हैं? उत्तर दस उन दसोंको १ बड़ी थैलीमें बंद कर दो। अब मास्टर बतलावे कि इस बड़ी थैलीमें एक सौ बीज हैं। अब जिस प्रकार हम दहाईके एक बटुएको लिखनेमें इकाईके स्थानमें शून्य और दहाईके स्थानमें १ रखते हैं उसी प्रकार सैकड़ेकी थैलीकेलिए दहाईके स्थानमें शून्य रखदो और बाईं तरफ़ एकका अङ्क बना दो। इस प्रकार १०० यह बात साफ़ साफ़ बताई जावे कि सौ ९९ से एक अधिक हैं और उसमें दस दस बार हैं। अब इस प्रकारकी संख्याएं जिनमें इकाई दहाई सैकड़ा तीनों हों लिखनेकेलिए दी जानी चाहिएँ। विद्यार्थी अपनी अपनी स्लेटोंपर इस भांति लिखें।

| स० | द० | इ० |
|---|---|---|

इस प्रकारकी संख्याओंको लिखनेमें विद्या-र्थियोंको जबतक अभ्यास न हो जाय उदाहरण बराबर जारी रहें।

### १०० से बड़ी संख्याओंको सिखानेकी अभी ज़रूरत नहीं

१०० से लेकर १००० तककी संख्याओंका ज्ञान ठीक इसी तरह कराया जाय इस तरीक़ेसे सिखाये जानेपर बालक हज़ारसे भी अधिककी संख्याओं-का मतलब समझ लेंगे ; परन्तु बड़ी संख्याओंको अभी काममें न लाना चाहिए क्योंकि ये संख्याएं विद्यार्थियोंके अनुभवमें नहीं आती हैं। बड़ी २ संख्याओंका लिखना उन्हें बे मतलब मालूम होगा और उनके लिखनेमें उन्हें आनंद मालूम न होगा।

# बीजोंका प्रवास

[ ले० भास्कर वीरेश्वर जोषी, कृषिविशारद ]

घासोंके बीजोंके सिवाय प्राणियोंपर सवारी करके प्रवास करनेवाले और कई प्रकारके भी बीज होते हैं। चित्र नं० १ (क) में अद्धाझोरका तुर्रा बतलाया है। उसमें बीज अधोमुख लटकते हैं। उसीका एक बीज (ख) में अलग बतलाया है। नीचे

चित्र नं० १ (क) अद्धा झोरका तुर्रा (ख) एक बीज।

जो पांच नोकें दिखलाई देती हैं, वे बहिर्वास (calyx) पत्र हैं। ऊपर जो दो नोकें दीखती हैं वे दो पतले रुएं हैं। ये ही रुएं कपड़े, बाल, चमड़े आदिमें छिद जाते हैं और इनकी पकड़ ऐसी मज़बूत होती है कि मामूली तौरसे झड़ानेसे झड़ते नहीं, किन्तु इनका आसन और भी पक्का होता जाता है। जबतक हाथसे एक एक न बीने जायँ, तबतक इनके छुड़ानेका अन्य उपाय नहीं। तुर्रेमें बीजोंको अधोमुख लटकते हुए देखकर मालूम होता है, कि जैसे बालखिल्य ऋषि अधोमुख तपस्या कर रहे हैं; परन्तु मछलीकी ताकमें जैसे बगुला ध्यान लगाए एक पैरपर खड़ा रहता है और मछलीके पहुंचमें आते ही उसपर झपटता है, वैसे ही जबतक कोई जीव अद्धाझोरके पास फटकता नहीं तबतक बीजोंकी समाधि लगी रहती है। पर किसी जीवके पास आते ही, ये उसपर कूद पड़ते हैं और सरलतासे दूर चले जाते हैं।

Botany वनस्पति शास्त्र ]
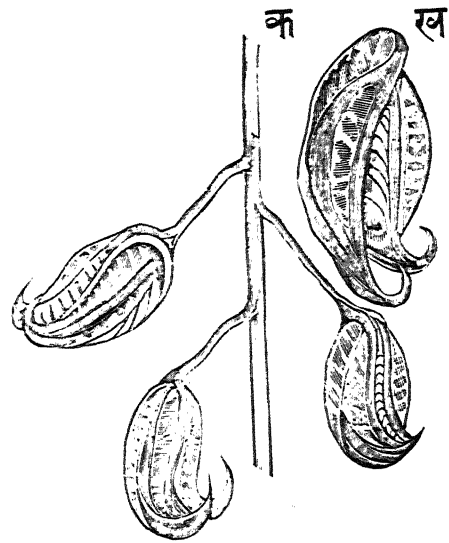
चित्र नं० २ बघनखा के फल

चित्र नं० २ (क) में बघनखाके फल हैं, (ख) में एक फल अलग दर्शाया है। इसमें दो नोकें हुकके समान टेढ़ी और मज़बूत होती हैं। डंठलपर ये फल लटकते हुए जीवधारियोंकी ताकमें रहते हैं। जैसे जंगलमें जानवरोंके सिरपर कौए चोंच मारनेकी ताकमें रहते हैं, और मौक़ा पाकर चोंच मारते हैं, वैसे ही ये बीज सवारी पाकर उसपर टूट पड़ते हैं और अपनी यात्रा आरम्भ करते हैं।

चित्र नं० ३ में एक और बीज बतलाया है। इसका नाम है पहाड़ी गेंदा (jack boots)। यह पहाड़पर तथा मुरमी, पथरीले स्थानोंमें पाया जाता है। इसका बीज गेंदेके बीजके समान लम्बा, पतला और काला होता है। गेंदेके बीजोंकी नोकपर सफ़ेद झिल्ली लगी रहती है और पहाड़ी गेंदेकी नोकपर सुईके समान तीन रोएँ लगे रहते हैं। एक
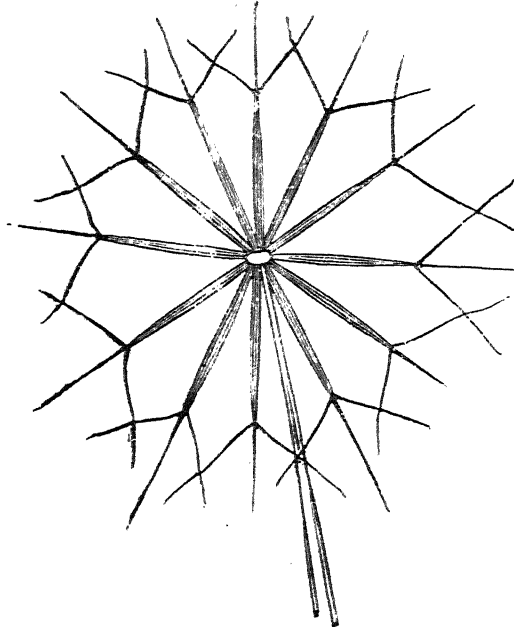
चित्र नं० ३—पहाड़ी गेंदा (jack boots)

डंठलपर अनेक बीज लटकते रहते हैं। सूखनेपर डंठलका जोड़ इतना ढीला हो जाता है, कि ज़रासा धक्का लगते ही ये अलग हो जाते हैं। जैसे मच्छड़ घावकी ताकमें रहते हैं और घाव पातेही उसमें निःशंक प्रवेश करते हैं, वैसे ये बीज इनके पाससे किसी जीवके निकलते ही उसपर सवारी करते हैं, और अपना जीवन उद्देश्य सफल करते हैं।

चित्र नं० ४ में खिरेंटीके बीज बतलाये हैं। खिरेंटीका बीज राईके दाने सरीखा छोटा और चिकना रहता है, परन्तु रोएं उसको चारों तरफ़से घेरे रहते हैं। इन्हींकी बदौलत इसकी सूरत छोटी परन्तु कीर्ति बड़ी हो जाती है और ये जीवधारियोंपर सवारी करनेमें समर्थ हो जाते हैं। सिहार, पथरीली, मुरमी आदि निकम्मी भूमिमें इसके बीजोंके गुच्छेके गुच्छे पाये जाते हैं।

इनके सिवाय गुरखुरू, रगत बिड़ार, झुनझुरु आदि अनेक चुभनेवाले बीज होते हैं। इनका अलग अलग वर्णन करनेको आवश्यकता नहीं है। इन सबको एक वर्गमें शामिल कर सकते हैं, और इनका नाम चुभनेवाले या सवारी करनेवाले बीज रख सकते हैं।

वनस्पतियां केवल सवारी ही करके प्राणियोंका पिण्ड नहीं छोड़तीं। कई एक बीजोंने प्राणियोंद्वारा अपने बीजोंका फैलाव करनेका और ढंग सोचा है, जैसे बांदा (loranthus) जो आम महुआ आदि पेड़ोंपर पैदा होता है।
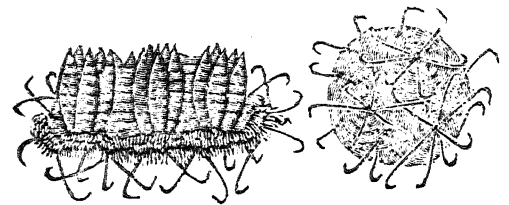
चित्र नं० ४—खिरेंटीके बीज

[चित्र नं० ४ (क)में खिरेंटीका बीज बतलाया है, परंतु यह एक बीज नहीं है, इसमें तीन बीज हैं, उनको खोलकर ख में अलग अलग बतलाया है, जो ५ नोकें तीन जगह अलग २ दर्शाया

हैं वे बहिर्त्रास-पत्र हैं उनमें छोटे २ रोएँ मकड़ीके जाल सरीखे लगे हैं, कोई २ रोएँ बढ़कर बड़े हो गये हैं और उनमें छः शाखाएँ फूटी हैं और हर एक शाखा के अन्त में हुक लगा है जैसा क आकृति में बतलाया है। ऐसे रोओं को तारोपम ( stellar ) रोएँ कहते हैं। ]

जिस डालपर यह पैदा होता है, वह फलती फूलती नहीं, क्योंकि उसका रस बांदा चूस लेता है। यह एक परोपजीवी (parasite) बनस्पति है, परन्तु यह पूर्णतया परोपजीवी नहीं, क्योंकि अपने भोजनका कुछ हिस्सा खुद भी पैदा कर सकती है। इसे अर्ध परोपजीवी ( hemi-parasite) कह सकते हैं। धूप-कालमें फलती फूलती है। इसका फल पक्षी खूब चाहते हैं, परन्तु बीजमें इतना चेंप या लस रहता है, कि छुड़ानेसे छूटता ही नहीं। पक्षी फल खाकर दूसरे पेड़पर उड़ जाते हैं और बीज छुड़ानेके वास्ते उसकी छालपर चोंच रगड़ते हैं, तब कहीं यह छूटता है, परन्तु इस कार्यमें बीजका जीवन उद्देश्य सफल हो जाता है। वह अपने मा, बापसे अलग हो चुका, और जमनेकेलिए उसको नई भूमि भी मिल गई।

दूसरा उदाहरण बेलका लीजिये, बेलको आड़ा काटिये, तो उसमें कई घर दिखाई पड़ते हैं। हर एक घरमें बीज रहता है। उसके चारों तरफ़ शहद्के समान गाढ़ा, सफ़ेद और गोंद्के समान वा गोंद्की भी अपेक्षा अधिक लिरबिरा लसदार पदार्थ रहता है। स्वादमें यह चिरपिरा होता है। मालूम पड़ता है कि प्रकृति देवीने बीजके बचाव तथा प्रवासकेलिए, गोंद रूपी कलेवेकी योजना की है। चिरपिराहट होनेसे बीजोंको कोई खाता नहीं और लिरबिराहट होनेसे चिपककर चला जाता है। उक्त बीजोंके समान "रुसल्ले" (लभेरा)-का बीज भी चिपककर अपना स्थानान्तर करता है।

अन्य बीजोंने उपरिनिर्दिष्ट दो रीतियोंसे प्राणियोंके सहारे स्थानान्तर करनेका एक और भी उपाय सोचा है। बचपनमें देखता था, कि ढोर जंगलसे चरकर आते थे और गोसारमें बाँधे जाते थे। सवेरे देखता था, कि उनकी गोहानमें आमकी गोहियां मिलती थीं। उन्हें देखकर विचार करता था कि ये कहाँसे आती होंगी ? एक दिन गायको जुगाली करते देख रहा था कि उसके मुँहसे आम-की गोही निकल पड़ी। ज्ञात हुआ कि गायने आम खाये थे और जुगाली करते समय गोही कड़ी होनेके कारण बाहर निकल आई। इसी प्रकार बेरके दिनोंमें बकरियाँ रात्रिको जिस स्थानपर बसेरा करती हैं, वहाँ प्रातः काल बेरकी गुठलियाँ पाई जाती हैं। बकरियां बेर खाती हैं और जुगाली करते समय गुठलियाँ उगल देती हैं। कई एक बीज गोबर या बीटमें भी निकल आते हैं। जिन जानवरोंको बिनौले खिलाये जाते हैं, उनका गोबर जहाँ पड़ा रहता है, वहाँ बरसातके दिनोंमें कपासके पौधे उग आते हैं। बकरियोंकी लेंड़ियोंमें-से सदैव बबूलके पौधे निकलते हैं। पीपल बड़, पाँकर, छींद इत्यादिके पौधे अन्य पेड़ोंपर जमे हुए देखनेमें आते हैं। लोग यही समझते हैं कि ये पेड़ पूर्वजन्मके ऋणी हैं, और उक्त पौधे इस जन्म-में उनकी छातीपर बैठकर अपना ऋण वसूल कर रहे हैं; परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है, क्योंकि उक्त पौधे परोपजीवी ( parasitic ) नहीं हैं; तो वे वहाँ पहुंच ही कैसे सकते हैं। पक्षी उनके फल खाया करते हैं और उनके बीज निगल जाते हैं। वे जहाँ बीट करते हैं, वहाँ बरसातके दिनोंमें बीजे उग आते हैं। पेटमेंसे जानेमें इनकी हानि तो कुछ भी नहीं, किन्तु भलाई ही होती है और जमते ही बीटका उत्तम खाद्य इन्हें भोजनार्थ मिलता है।

बचपनमें जब कभी सीता-फल, राम-फल, बिही आदि खाता था और धोखेसे इनका बीज निगल जाता था तो लोग डरपाते थे कि इसका पेड़ तुम्हारे पेटमें जमेगा। पेटमें तो पेड़ जमता नहीं, पर जहाँ पुरीषोत्सर्ग होता है वहाँ पेड़ अवश्य ही जमते हैं और खूब हरेभरे रहते हैं। जिस खेतमें मैलेका खात देते हैं उसमें पानी

बरसते ही खीरा, तरबूज़, टिपारी, मारू-भटा, बेंगन, इत्यादि अनेक पेड़ उग आते हैं. अर्थात् इनके बीज मैलेके द्वारा उस खेतमें पहुंचकर अपना प्रसार करते हैं। पेटमेंसे होकर जिन फलों वा बीजोंका प्रवास होता है, उनमें निम्न लिखित गुण होने चाहियें।

१-बकली कड़ी हो, जिससे वह दाँतके तले कुचलने न पावें, और पेटमें जठर-रस, ( gastric-juice ) पित्त, और आन्त्र-रस ( intestinal juice ) इत्यादि पाचक रसोंकी उनपर क्रिया न होने पावे।

२-बीज चिकने होनें चाहियें जिससे कि धोखेसे भी यदि दाँतके तले दब जावें तो सहज में ही फिसल पड़ें।

३-बीज छोटे हों जिससे वे दाँतके तले दब ही न सकें।

कई एक फल व बीज अपनी चटक-मटकके कारण प्राणियोंद्वारा अपना प्रवास-कार्य सिद्ध करा लेते हैं-जैसे इन्दोरन,घुंघची,पका कुंदरू,करेला चचेंड़ा इत्यादि। यद्यपि ये खाने योग्य नहीं हैं; तौ भी इनकी सुन्दरतासे लोभ वश होकर प्राणी इन्हें दूर ले जाते हैं पर अन्तमें निराश होकर फेंक देते हैं। चाहे प्राणी प्रसन्न हों अथवा न हों पर इनका उद्देश्य सिद्ध हो चुका।

कई एक जीवधारी अपने भोजनार्थ फल, बीज, अनाज आदि एकत्रित करते हैं। फिर या तो वे अपने संचयको भूल जाते हैं या धोखेसे उनमें पानीका प्रवेश होकर वे जम उठते हैं। शीत देशोंमें ठंडके दिनोंकेलिए गिलहरियाँ अपने भोजनार्थ पेड़ोंके खोखलोंमें फल एवं बीजोंका संग्रह कर रखती हैं। जलका प्रवेश होनेसे वे वहाँ जम उठते हैं। मुसहार लोग मूसोंके बिलोंमेंसे सेरों अनाज निकालते हैं। यदि अनाज न निकाला जाय तो बिलोंमें कुछ अनाज अवश्य छुपा रहकर बरसातके दिनोंमें जम जाता है। गिर सप्पाके जल प्रपातके समीप जलकी धाराके पीछे चिड़ियाँ चट्टानोंमें घोंसले बनाती हैं, उनमें मनों अनाज इकट्ठा करती हैं। धूप-कालमें जब धारा संकीर्ण होती है तब साहसी लोग जानपर खेल खेलकर उन घोंसलोंका अनाज लूट लेते हैं। यदि अनाज वहीं पड़ा रहता तो बरसातके दिनोंमें जम जाता। कौए कोई फल घरोंके छप्पर, घास-फूस इत्यादिमें छुपा लेते हैं। उसकी याद उन्हें नहीं रहती जिससे वह फल या बीज वहीं पड़ा रहता और बरसातका पानी पाकर जम जाता है।

उपरोक्त बातोंका आशय यह है कि वनस्पतियां जीवधारियोंद्वारा पाँच रीतियोंसे अपने बीजोंको दूर भेजनेका कार्य निकाल लेती हैं।

( १ ) कपड़ों एवं शरीरमें छिदकर, ( २ ) चिपककर ( ३ ) पेटमेंसे होकर ( ४ ) अपनी चटक मटकसे लोभ उत्पन्नकर और ( ५ ) प्राणियोंद्वारा संग्रहीत होकर वे अपना स्थानान्तर करती हैं।

---

## गणितका इतिहास

[ ले० जी. के. गर्दे, एम. ए. ]

८ यूक्लिड (Euclid)

क्लिडका जीवनवृत्तान्त बहुत थोड़ा मालूम है, परंतु इसमें संदेह नहीं कि वह अपने शिष्योंपर बड़ी कृपा रखता था। उसकी अटल कीर्तिके आधार वे ग्रंथ हैं जो उसने विद्यार्थियों-केलिए रचे थे। उसने कुल आठ ग्रंथ लिखे।

( १ ) "एलिमेंट्स"-ज्यामितिके मूलतत्व-यह ग्रंथ पाठशालाओंमें २२०० वर्षोंतक पढ़ाया जाता रहा। अभी हालमें ही उसका स्थान नई ज्यामितिने पाया है। इस प्राचीन ग्रंथका अनुवाद पहले अरबी, संस्कृत और लैटिनमें, फिर अंग्रेज़ी तथा अन्यान्य यूरोपीय भाषाओंमें हुआ। यही उसकी उत्कृष्टता तथा लोकप्रियताका प्रमाण है।

( २ ) "डेटा" (निर्दिष्ट)

( ३ ) "फ़िनोमेना" (घटना)

Mathematics गणित ]

(४) "ओपटिक्स" (प्रकाश)

(५) "कैटोपट्रिका" (दर्पण और प्रतिबिम्ब)

इनके अतिरिक्त तीन और भी।

यूक्लिडके ग्रंथोंमें मूलतत्वोंका ही समावेश है। वे प्रायः औरोंके ग्रंथोंके आधारपर रचे गए हैं। तो भी उनमें स्वयम् यूक्लिडके मस्तिष्कका फल-स्वरूप भी बहुत कुछ है। उसकी ज्यामितिके पहले ६ खंडों तथा ११वें और १२वें खंडोंमें जो विषय है सो सभी विद्यार्थियोंको मालूम है। ७वें, ८वें और ९वें खंडोंमें पाटीगणित तथा संख्याओंकी मीमांसा समाविष्ट है। १०वें खंडमें अपरिमाणशील (incommensurable) राशियोंका वर्णन है। 'दृढ़ (prime number) संख्याएं अनन्त हैं'—इसकी उपपत्ति ९वें खंडके एक साध्यमें दी हुई है। उसी खंडमें पूर्ण संख्या (perfect number) संबंधी एक सुंदर साध्य यह है :—

"यदि $२^{स}-१$ दृढ़ संख्या हो तो" $\left\{२^{स-१}(२^{स}-१)\right\}$ पूर्णसंख्या होगी"। उदाहरणकेलिए, मान लीजिए,

स=२, जहां $२^{स}-१=३$ दृढ़ है,

तो $\left\{२^{स-१}(२^{स}-१)\right\}=६$ पूर्ण हुआ।

स=३, जहां $२^{स}-१=७$ दृढ़ है,

तो $\left\{२^{स-१}(२^{स}-१)\right\}=२८$ पूर्ण हुआ।

इत्यादि।

इसकी उपपत्ति देनेमें एक गुणोत्तर श्रेणीका योगफल निकालनेकी आवश्यकता होती है। यूक्लिडके समयमें शक्तिसूचक संख्याओंका (indices) संकेत (notation) आविष्कृत नहीं हुआ था, तो भी वह गुणोत्तर श्रेणीका योगफल निकाल सकता था। उपपत्ति बड़ी सरल है।

दी हुई संख्या $\left\{२^{स-१}(२^{स}-१)\right\}$ को छोड़कर उसके शेष भाजक हैं :—

$१, २, २^{२} \ldots\ldots २^{स-१}$ और $(२^{स}-१)\times$ $(१, २, २^{२} \ldots\ldots २^{स-२})$। इन सबका योग फल हुआ $\left\{२^{स-१}(२^{स}-१)\right\}$ —अर्थात् वही दी हुई संख्या। अतः वह पूर्ण संख्या है। इस सूत्रसे सभी पूर्ण संख्याओंका बोध हो जाता है अथवा नहीं, इसपर अनेक गणितज्ञोंने विचार किया है। परन्तु जान पड़ता है कि आजतक किसी ने ऐसी कोई पूर्ण संख्या नहीं बताई जो इस सूत्रके अंतर्गत न हो। ऐसे अनेक तत्वोंका उल्लेख किया जा सकता है, जिनसे इस गणितज्ञके मस्तिष्ककी महान् शक्तिका परिचय मिलता है, परन्तु इस छोटेसे लेखमें उन सबकेलिए स्थान नहीं हैं।

९ आर्किमीडिज़ (Archimedes) विक्रमसे पूर्व (२३१ - १५६)

यूनानी गणितज्ञोंमें आर्किमीदिस सर्व श्रेष्ठ था। जब हम यूक्लिडकी ज्यामितिको उसकी कीर्तिका आधार मानते हैं, तब यह बताना कठिन हो जाता है कि आर्किमीदिसकी कीर्तिका आधार उसके किस ग्रंथको मानें। इसने भी कुल आठ ग्रंथ रचे जिनमेंसे प्रत्येक उच्च कोटिका है। वह स्वयम् अपने उस ग्रन्थको सर्वोत्तम समझता था जिसमें बेलन और गोलेका वर्णन है। गति विद्या (dynamics) तथा जलस्थिति विज्ञान (hydrosatics) संबंधी महत्वपूर्ण आविष्कारोंके कारण आधुनिक गणितज्ञ उसकी प्रशंसा करते हैं। कोई कोई उसे परवलयका (parabola) क्षेत्रफल निकालने तथा वृत्तकी परिधि और व्यासके बीच जो निष्पत्ति है उसे स्थिर करनेकेलिए प्रशंसनीय समझते हैं। परन्तु यह सब कार्य्य न किया जाता तो भी उसका यश कम न होता क्योंकि उसका सर्पिल तथा स्क्रू संबंधी अकेला ग्रन्थ ही उसकी कीर्त्ति अटल करनेकेलिए पर्य्याप्त है।

१० एपोलोनियस (Appolonius) वि० पू० १९१

योग्यतामें आर्किमीदिसके बाद एपोलोनियसका

नंबर है। उसने शङ्कच्छिन्नोंका वर्णन आठ खंडोंमें किया। इनमेंके सात विद्यमान हैं, आठवाँ अप्राप्य है। पहले चार खंड़ोंमें उन सब बातोंका समावेश है जो उसके पहले भी ज्ञात थीं। अन्तिम चार खंडोंमें अपने निजी आविष्कारोंका वर्णन है। भुजयुग्मोंको छोड़ (शर द्वंद) अपने विषयकी आलोचना करनेकी सब रीतियोंका उपयोग उसने किया। विक्षेपविधि ( projection ) भी नहीं छूटी। इससे स्पष्ट है कि उसने ज्यामितिकी उतनी उन्नति कर दिखाई थी जितनी बिना बीज गणितके शक्य थी।

११ हिपार्कस ( Hipparchus )

यूनानका सर्वश्रेष्ठ ज्योतिषी, हिपार्कस, वि० पू० दूसरी शताब्दीमें हुआ। ग्रहोंके नीचोच्चवृत्ताकार ( epicyclic orbits ) कक्षाओंकी कल्पना उसीने की थी। कहा जाता है कि धीरे धीरे यही कल्पना भारत पहुँची। तारागणोंका वेध वह बड़ी शुद्धतापूर्वक करता था। उसने जो सामग्री इस प्रकार संचितकी थी उससे बादवाले लेखकोंने बहुत लाभ उठाया।

१२ टालमी ( Ptolemy ) सं० वि० १६५

यूनानी ज्योतिषपर सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ टालमीने रचा था। यूरोपके विद्यालयोंमें गैलिलियो और कोपर्निकसके समयतक उसी ग्रन्थका प्रचार रहा। सरल और गोलीय त्रिकोणमितिका (Plane and Spherical Trigonometry) वर्णन भी उस ग्रंथमें है। स्कूलके छात्रोंको टामलीके नामसे परिचय ज्यामितिके उस प्रसिद्ध साध्यसे होजाता है जिसकी प्रतिज्ञा हैः वृत्तान्तर्गत चतुष्कोणके दोनों कर्णोंसे घिरा हुआ आयत, क्षेत्रफलमें उन दो आयतोंके योगफलके बराबर होता है जो आमने सामनेकी भुजाओंसे घिरे हों।

१३ पैपस ( Pappus ) सं० वि० ३६६

एलेकज़ैन्ड्रियाका अन्तिम भारी गणितज्ञ पैपस था। उसका सर्वश्रेष्ठ आविष्कार चलराशिकलनके ( Integral calculus ) अन्तर्गत है जिसे पैपस या गुल्डिनका साध्य कहते हैं। नहीं कहा जा सकता कि गुल्डिनने स्वयम् उसका आविष्कार किया अथवा उसे वह साध्य किसी प्राचीन यूनानी ग्रंथसे प्राप्त हुआ। पैपसके लिखे हुए ग्रन्थका नाम है "गणित संग्रह"। उसमें बहुत सी ऐतिहासिक सामग्री है और इस दृष्टिसे वह बड़े महत्वका है।

इस प्रकार वि०पू० ५४४ से सं.वि०४५६ तक अथवा १००० वर्षोंमें, युनानियोंने उस ज्यामितिको अत्यन्त परिपक्व बना दिया, जिसके कुछ मूलतत्व उन्होंने मिश्रदेशसे लिए थे। अतएव, प्लेटोकी वह उक्ति कितनी यथार्थ है, जिसका उल्लेख आरंभमें हुआ था, कि "हम यूनानी जो कुछ लेते हैं उसे समुन्नत और परिपक्व करके छोड़ते हैं"।

१४ डायोफैंटस Diophantus मृत्यु सं० वि० ३८६

यूनानियोंने ज्यामितिमें बहुत उन्नति की। परन्तु उनका बीज गणितका ज्ञान प्रायः मिश्रवालोंके बराबर ही बना रहा। यूक्लिडकी ज्यामितिके दसवें खंडमें अपरिमाण शील रेखाओंका वर्णन है और उसीको हम यूनानियोंकी करणियोंकी मीमांसा, (Theory of Surds) मान सकते हैं। पाटी तथा बीज गणित संबंधी प्रश्नोंका समाधान साधारणतः ज्यामितीय विधिसे किया जाता था। सं० वि० १५६ में निकोमेकसने आरंभिक पाटीगणित लिखी। चौथी शताब्दीके मध्यमें डायोफैंटसने 'पाटीगणित' नामक ग्रंथ रचा। उसीमें यूनानियोंका सर्व श्रेष्ठ बीज गणित समाविष्ट है। डायोफैंटस उन समीकरणोंका समाधान कर सकता था जिनमें केवल एकही अज्ञात राशि हो और उसकी शक्ति १ या २ हो। वह वर्ग समीकरणका एकही मूल बताया करता था क्योंकि ऋण चिन्हवाले वर्ग मूलको वह अग्राह्य समझता था। जिस प्रश्नमें दो या तीन अज्ञात राशियां होतीं और उसे उस रूपमें जिसमें केवल एक ही अज्ञात हो लाना अशक्य होता तो उसके हल करनेमें एकको छोड़ शेष अज्ञात

राशियोंकेलिए वह आरंभमें काल्पनिक मान दे देता और अन्तमें आवश्यक परिवर्त्तन कर दिया करता था जैसा कि पाटी गणितमें किया करते हैं। अज्ञात राशिकेलिए वह सदा एकही सङ्केतका प्रयोग करता था। किसी प्रश्नको हल करनेकेलिए अज्ञात राशिको चुननेमें उसने बड़ी तीक्ष्ण बुद्धिका परिचय दिया है।

पहली तथा कुछ थोड़े दूसरी शक्ति वाले अनिर्णीत (indeterminate) समीकरणोंके समाधान करनेके कारण उसने बड़ी प्रसिद्धि पाई। जिन प्रश्नोंका हल करना ऐसे समीकरणोंके समाधान करनेपर अवलंबित रहता है वे 'डायोफंटीन' कहलाते हैं।

---

## फोटोका केमरा जो सबके पास है

[ले० चिरंजीलाल माथुर, बी. ए. एल. टी.]

जिसने पहिले पहल फ़ोटो देखी होगी, उसे कितना अचम्भा हुआ होगा कि कैसे बिलकुल ज्यों की त्यों सूरत उतर आती है। पर सच तो यह है कि फ़ोटोकी ईजादसे पहले ही शरीरके अन्दर फ़ोटोके केमरासे जन्मसे ही काम लिया जाता है।

जैसी वस्तु केमराके सामने होती है वैसा ही चित्र क्यों बन जाता है? केमरेके मुँहपर एक कांच रहता है जो मसूरकी तरह दोनों ओरसे उभरा रहता है। इसे उन्नतोदर ताल कहते हैं। इस तालसे प्रकाशकी किरणें पार होकर एक केंद्रपर सब रेखाओंको काटती हुईं अपनी अपनी दिशामें सीधी चलती हुईं एक परदेपर पड़ती हैं। चित्रसे स्पष्ट होगा कि अ क का रूप उलटकर क अ होकर परदेपर पड़ता है। इस प्रकार केमराके पीछे वाले प्लेटपर तालके सामनेवाले वस्तुका उलटा चित्र बन जाता है। यदि कभी मित्रों सहित फ़ोटो खिचवाते हुए आपने केमरेके कपड़ेके भीतर सिर डालकर देखा होगा तो अपने मित्रोंके सर नीचे और पैर ऊपरको देखे
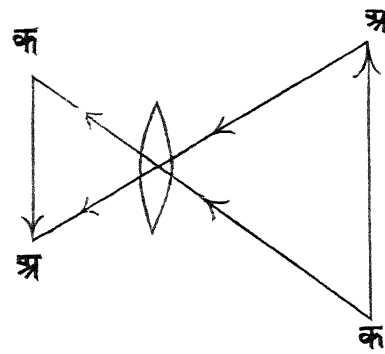
चित्र नं० १

होंगे। बस, केवल चित्र का इस प्रकार बन जाना ज़रूरी बात है। फिर तो मसाले इत्यादिसे इसे स्थायी कर लेना और छापकर सीधी तसवीर बना लेना होता है।

सायंसका यह अदभुत खेल कलकी ईजाद है और यह ईजाद भी उस केमरेकी नक़ल है जो सबसे बड़े कारीगरके पवित्र हाथोंसे बना हुआ, छोटे बड़े सभी रूप देखनेवालेके पास मौजूद है। आप खुश होंगे कि यदि हमें अभीतक नहीं मालूम था तो अब तो मालूम होनेपर बिना मूल्य एक बढ़िया केमरा हाथ लग गया। हम निश्चय कराते हैं कि अवश्य आपके पास केमरा है और केमरा भी बड़ा अमूल्य है। क्या कभी आपने विचार किया है कि हमें संसारकी वस्तुएं किस प्रकार दृष्टिगोचर होती हैं—यदि नहीं तो अब सुनिये।

हमारे जो फ़ोटोका केमरा है वह हमारी आंख ही है। जो बीचमें काला गोल उभरा हुवा भाग दीखता है जिसे तिल कहते हैं यही इस केमरेका उन्नतोदर ताल है। आंखकी बनावट नीचेके चित्रसे भली भांति समझिये। यदि आंखको बीचमेंसे सीधे आड़े अर्थात समद्वि-

Physiology शरीर शास्त्र ]

तिज तलमें काटा जाय तो ऐसा चित्र बनेगा—
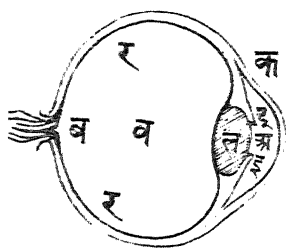
चित्रनं० २

सबसे ऊपर तो कौड़ी जैसी बनावटका सफ़ेद भाग होता है बीचमें जहां उभरा हुआ है क वहां सींग कैसे द्रव्यका पारदर्शक भाग होता है जिसके आरपार दिखाई देता है। इसके सामने अन्दरकी ओर ताल होता है ल जो नसोंसे जकड़ा रहता है। दूसरी तह आंखकी काली रंगतकी होती है। तीसरी तह बडी अजीब बनावटकी होती है उसमें नाड़ी जाल भी होता है और बड़ा तार जो भेजेतक समाचार पहुंचाता है इसीमें होता है। व बीचकी ख़ाली जगह घ में एक द्रव भरा होता है। समाचार पहुंचानेवाले तारकी चर्चा 'विज्ञान' में हो चुकी है। पाठकोंने "अनोखा तारघर" पढ़ा होगा तो मालूम होगा कि भेजेको समाचार इंद्रियोंद्वारा पहुंचते हैं। बल्कि रहस्य यह है कि आंख अपने आप बिना भेजेके सहारे किसी वस्तुका ज्ञान नहीं दे सकती। यदि भेजा हटा दिया जावे या उसतक पहुंचानेवाला तार तोड़ दिया जावे तो आंख सही सलामत रहते हुए भी नहीं देख सकतीं। जैसे कि यदि तार बाबू खटकेपर मौजूद न हो तो लाख तार जावे कोई समाचार न पहुंचेगा।

ईश्वरने आंखको बनाते हुए बड़ी होशियारीसे काम किया है और ऐसा इंतज़ाम रक्खा है कि उसको यथा संभव नुक़सान न पहुंचे परंतु फिर भी मनुष्य प्रकृतिके नियमोंका उल्लंघन करके अंधा बन बैठता है। प्रथम तो आँखकी गोली हड्डियोंके बकसमें रक्खी हैं। खुले फाटकपर पलकोंका झालरदार परदा पड़ा रहता है और झालरके बालोंसे निरन्तर झाड़ू लगती रहती है कि गर्द इत्यादि भीतर न चली जावे। फिर पानी सरीखे एक द्रव्यका पुचारा सदा फिरता रहता है कि तरी रहे, और कहीं कोई चीज़ आंखमें गिर जावे तो पानीके साथ निकल जाय। यह तो बाहर का इन्तज़ाम हुआ। आंखकी गोली ऊपरसे मज़बूत है। ताल ऐसा है कि आवश्यकताके अनुसार छोटा बड़ा होता रहता है।

तालके सम्बन्धमें यह बतलाना आवश्यक है कि जितना वह उभरा अधिक होता है उतना ही चित्र उसके नज़दीक बनता है। चित्र बनने की जगह आँखमें अचल है। यदि वहां चित्र बना तो ही वस्तु देख पड़ेगी, अन्यथा नहीं। चित्र बननेकी जगह अचल होनेके कारण तालमें परिवर्तन होना आवश्यक हुआ क्योंकि हम सदा एक ही दूरीकी वस्तु नहीं देखते। कभी कोई वस्तु बहुत पासकी देखनी पड़ती है कभी दूरकी। इसी कारण ईश्वरने आंखका ताल लचलचा बनाया है। और उसको नसोंके सहारे ऐसा बांध रक्खा है कि उनके खिचने या ढीले होनेसे ताल उभरा या चपटा, जैसी आवश्यकता हो, हो जाता है। बचपनमें ताल बहुत लचलचा होता है और फिर ज्यों ज्यों शरीर पौढ़ होता जाता है सचीलापन कम होता जाता है। जब दूरकी चीज़ देखनी होती है तो आँखका ताल चपटा हो जाता है और पासकी चीज़ देखनेमें बीचमेंसे ऊभर आता है।

ऊपरकी कौड़ी जैसी बनावटके अन्दर कुछ काला सा दीखता है। जो आंखमें गोल काला चक्र दिखाई देता है, वास्तवमें वही स्याही पारदर्शी ढकने या तालमेंसे होकर देख पड़ती है। यह काली चीज़ व्यर्थ नहीं है। काली रंगत तेज-

की किरणोंको सोखती है। इस प्रकार जो अनावश्यक किरणें आती हैं, रुक जाती हैं। चित्र बननेकी जगहतक नहीं पहुंचती। यह काली रंगत अति आवश्यक है। जब यह कम या नहीं होती तो आँखे अपना काम ठीक नहीं करतीं। क्या आपने किसी सूरजमुखी मनुष्यको नहीं देखा? वह वेचारा अधिक रोशनीमें नहीं देख सकता क्योंकि उसकी आंखमें प्रकृतिकी भूलसे यह काला पदार्थ नहीं बनता।

तीसरी तह आँखकी सर्वोत्तम है। वह हमारे केमरेका परदा या प्लेट है। उसपर ही चित्र वनता है और उसीसे तार भेजेतक पहुंचा हुआ है। इस बनावटका चमत्कार कम हो जावे तो मनुष्य अंधा ही हो जाता है। आंखके गोलेके अन्दरकी खाली जगहमें जो पानी जैसा कुछ गाढ़ा द्रव भरा होता है वह भी व्यर्थ नहीं है। उसमें होकर जानेसे रोशनीकी किरणें मुड़ जाती हैं जिससे कि चित्र बननेकी जगह ठीक ठीक चित्र बने।

एक प्रश्न आंखके विषयमें बड़ा भारी है। वह यह कि केमरेमें तो चित्र उल्टा दीख पड़ा यदि हमारी आंखें भी केमरा जैसी ही हैं तो थाहमें वस्तुएँ उल्टी दिखलाई देनी चाहिएँ। इस प्रश्नका उत्तर देनेके वास्ते विज्ञान अभी तय्यार नहीं है या कमसे कम लेखक को ज्ञान नहीं है।* संभव है कि कभी किसी समय कोई बात ऐसी मालूम हो जावे कि जिससे इस सीधे चित्र बनने या सीधी चीजें दीखनेका कारण जान पड़े। अभी तो केवल ऐसा ही कहते हैं कि प्रकृतिके अनुसार मनुष्य ऐसा ही देखता चला आया है।

आंखपर आहतका प्रभावअवश्य पड़ता है। प्रायः विद्यार्थी किताबको आंखोंके बहुत नज़दीक रखकर रात दिन पढ़ा करते हैं। उसका प्रभाव यह पड़ता है कि कुछ दिनोंमें उनको नज़दीककी वस्तु तो ठीक ठीक दिखलाई देती है और दूरकी साफ़ नहीं दिखलाई देती। यह कहना चाहिये कि नित्यप्रति बहुत देरतक पासकी चीज़ें देखते रहनेसे आंखका ताल बीचमेंसे अधिक उभर आता है और कुछ दिनोंके बादसे उसे चपटा होनेकी आदत जाती रहती है। चूंकि दूरकी चीज़ देखनेके वास्ते उसको चपटा होना पड़ता है, इसलिए आंखोंके सामने चपटा ताल लगाकर उस कमीको पूरा करते हैं। आजकल अधिकतर विद्यार्थीयोंकी आंखोंमें यह दोश पड़ जाता है। हमारे युवकोंको चाहिये कि रात दिन किताब या कापीपर ही आंखोंको न लगाये रहें जितनी देर आंखोको इस काममें लगावें उतनी देर दूरकी चीज़ देखनेमें भी लगाएँ। वह इस प्रकार हो सकता है कि सांझ सवेरेघरसे बाहिर घूमें। पढ़ने लिखनेके वास्ते यह आवश्यक नहीं है कि पुस्तकसे आंखे लगाये ही रक्खें। अधिकतर एक फुटकी दूरीपर पुस्तकको रखना चाहिये।

दूसरा दोष आंखोंमें यह हो जाता है कि दूरकी चीज़ें तो दीखती हैं परन्तु नज़दीककी चीज़ ठीक नहीं दीखती। यह पहले दोषसे बिलकुल उलटा है। अर्थात आंखके तालमें उभार होनेकी शक्ति कम हो जाती है। यह बुढ़ापेमें स्वाभाविक हो जाता है। इसी कारण बूढ़ोंको उभरे हुए तालकी ऐनक लगानी पड़ती है। कभी कभी युवकोंको भी यह हो जाता है।

यह सब ही जानते हैं कि आंख मनुष्यको बड़ी ही उपयोगी है। यदि आंखें किसीके दुर्भाग्यसे जाती रहें तो उसका जीवन सत्यानाश हो जाता है। परंतु ऐसी उपयोगी वस्तुको ठीक ठीक हालतमें रखनेकेलिए क्या उपाय किया जाता है। प्रायः जब ठीक ठीक दीखना बंद हो जाता है तो लोग ऐनक ख़रीद लेते हैं। ऐनक सहायता देकर कमी पूरी कर देती है

*संभवतः समाचार पहुंचानेवाली नाड़ियोंके क्रम और रेखास्थितिसे उलटे चित्रका उलटा अर्थात् सीधा रूप भेजेतक पहुंचता है। सं.

परन्तु वास्तवमें वह बाहरकी वस्तु है और उसपर इतना निर्भर रहना उचित नहीं। किसी समय ऐनक जाती रहे या न मिले तो बड़ी हानि होती है। लेखककी रायमें माता पिताको अपने बालकोंकी आंखोंपर सदा निगाह रखनी चाहिये जिससे ऐनककी आवश्यकता जहांतक हो सके न पड़े। भारतवर्षमें हिं माताएं अपने बालकोंकी आंखोंमें रातको सोते समय काजल डाला करती थीं। उससे आंखोंका मैल साफ़ होता रहता था। परंतु आजकलकी फ़ेशनेबल लेडियां ( माताएं ! ) बालकोंके काजल डालना शायद फ़ेशनके ख़िलाफ़ समझने लगी हैं। जब बालक विद्या पढ़ना आरंभ कर दे तो मातापिताको उनकी आंखोंकी रक्षा अधिक करनी चाहिये। बालकोंको समझदार होनेपर उचित है कि बारीक अक्षरोंकी पुस्तकें अधिक समयतक लगातार न पढ़ें और पढ़ने लिखनेमें एक फुटकी दूरीसे काम करें।

प्राचीन समयके मुक़ाबलेमें आजकल आंखोंपर अधिक बुरा प्रभाव पड़ता है। उसका कारण यह है कि पहले अधिकतर ज़बानी बातें बतलाते थे। आजकल विद्यार्थियोंको रातदिन किताबें पढ़नी पड़ती हैं। इसके अतिरिक्त पहले स्वास्थ्य रक्षाकी ओर अधिक ध्यान था और स्वास्थ्यका प्रभाव समस्त शरीरपर पड़ता है। आजकल इम्तहान पास करनेकी चक्कीसे कम लोग बचकर निकलते हैं। आशा है कि अब भी भारतनिवासी भी भीमार्जुनादिको याद करके शरीरका ओर ध्यान देंगें।

---

## पशु पक्षियोंका श्रृङ्गार रहस्य

( ले० सालिगराम वर्म्मा ]

( गताङ्कसे सम्मिलित )

सोलोंके बाद marsupial मारसुपिअल नामक स्तनपायी जीवोंमेंसे opossums ओपोसम इस विषयमें बड़े सिद्धहस्त होते हैं। यह जीव जंगलोंमें पेड़ोंपर रहते हैं। इनकी पूंछ लंगूरकी भांति मुड़ी रहती है। इससे इन्हें पेड़ोंसे लटकनेमें बड़ा सुभीता होता है। इनकी नाक लंबी होती है और यहांकी चमड़ीपर बाल नहीं होते। इनके पंजे नहीं होते, पर तो भी इनकी उंगलियोंकी बनावट ऐसी होती है कि यह अच्छी तरहपर मुट्ठीमें चीज़ोंको पकड़ सकते हैं। इनके सीधे पेडूके पास एक प्रकारकी थैली होती है जिसमें अपने बच्चोंको रखकर यह पालते हैं और जब उनकी आंखें खुल जाती हैं तो उन्हें बाहर निकाल देते हैं। इनकी उंगलियोंके बीचमें झिल्लीदार खाल होती है और यह जीव प्रत्येक ४ या ५ मिनटके पश्चात् अपने हाथ और पैर साफ़ किया करते हैं। हमारे विचारमें संसारके बहुत कम जीवोंको इनसे अधिक पवित्रताका विचार होता है, क्योंकि जितनी देर यह जीव जागते रहते हैं, इनका सारा समय हाथ और पैरोंको सफ़ाईमें ख़र्च हो जाता है।
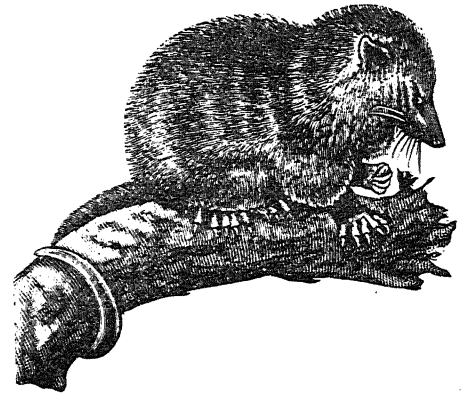
चित्र १ ओपोसम

शेर, चीते इत्यादि मांसाहारी जीव भी बिल्लीकी भांति अपनी सफ़ाई कर लिया करते हैं। यह अपने अगले पंजेकी गद्दीदार हथेलीको जीभसे चाटकर भिगो लेते हैं और इसके पश्चात् इसे मुंहपर फेरकर चहरेकी सफ़ाई कर लेते हैं। इसी

Natural History प्राकृतिक शास्त्र ]

प्रकार जीभसे चाटकर वे सारे शरीरपर ब्रुश कर लेते हैं और पैरसे स्पंज और ब्रुश दोनोंका काम निकालते हैं। इसी प्रकार चूहे और खरहे भी अपने पैरोंसे यह काम लेते हैं। खरहेके पैरसे अच्छा ब्रुश संसार भरमें मिलना कठिन है, इसी-लिए नाटकके पात्र अपना शृंगार करनेमें इन्हें बड़े चावसे काममें लाते हैं। कुत्ते भी जीभसे चाटकर अपना शरीर साफ़ कर लेते हैं। पर शिकारी कुत्तोंमें यह आदत बहुत अधिक देखी गई है। दिन भरकी शिकारकी मार धाड़से लौटने-पर यह कुत्ते ज्यों ही घरपर पहुंचते हैं, वैसे ही इन्हें पहिले अपनी स्वच्छताका विचार होता है। प्रायः देखा गया है कि कीचड़ आदिमें लिथड़ जानेसे यह कुत्ते झाड़ियों या किसी सूखे पेड़के तनेसे रगड़कर अपने शरीरको पोंछ डालते हैं।

पालतू जानवरोंमें घोड़े, गाय, भैंस इत्यादि, जीभसे चाटकर अपने शरीर साफ़ कर लेते हैं और प्रायः अपने बच्चों तथा अन्य साथियोंको भी सहायता देते हैं। बिल्ली अपनी जीभसे अपनी पीठ, पेट और हाथ पैर इत्यादि चाटकर साफ़ कर लेती है और गर्दन तथा कानोंके पासके भागों-को पंजेकी गद्दी भिगोकर पोंछ डालती हैं। घोड़े इत्यादि जीवोंकी जीभ इतनी दूरतक नहीं पहुंच सकती है, इसलिए वे एक दूसरेको चाटकर शरीर-की सफ़ाई किया करते हैं।

इसके पश्चात पक्षियोंका नंबर आता है। यह जीव अपने शृंगारके विषयमें समस्त जीवधारियों-से बढ़े हुए हैं और सबसे बड़ी आश्चर्यकी बात यह है कि इनका शृंगार-दान प्रकृतिने इनके शरीर-में ही बना रक्खा है। उबटन, मंजन, तेल, फुलेल, कंघी इत्यादि सभी चीज़ें इन्हें प्रकृतिकी ओरसे प्रदान की गई हैं और यह पक्षी इनका प्रति दिन प्रयोग किया करते हैं। उबटनका कार्य यह चिकनी मिट्टीसे लेते हैं, बालू और रेह इत्यादि मंजन और पाऊडरका काम देते हैं, तथा तेल और फुलेलकी शीशी इनकी पूंछके पास छिपी हुई मौजूद रहती है, जिसे oil gland कहते हैं। इसमें एक प्रकारका द्रव भरा रहता है जिससे यह पक्षी अपने पंखोंको
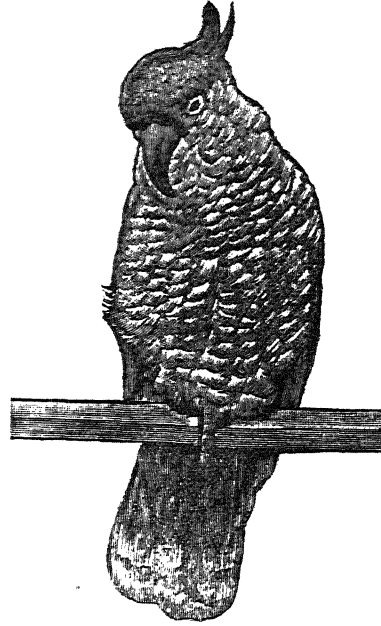
चित्र २—ककातू ( cockatoo )

चिकना और चमकीला कर लेते हैं। यह gland पूंछके ऊपरके हिस्सेमें पानके आकारकी होती है और इसके ऊपर छोटे छोटे मुलायम परोंकी गद्दी सी बनी होती है। जल मुर्गाबीमें ( water fowls ) यह gland बड़ी अच्छी तरह बनी होती है और यह पक्षी अपना शृंगार करते समय इस दैवी दैनका भली प्रकारसे उपयोग करते हैं। बतख़ें, कबूतर और सारस इत्यादि जब अपनी पूंछके परोंमें चोंचको छिपा लेते हैं तो वे इसी शीशीमेंसे तेल निकालते हैं और अपने शरीरपर मल लिया करते हैं। इन पक्षियोंके अतिरिक्त हूपो hoopoe और होर्नबिल hornbill नामके पक्षियोंमें भी यह थैलियां मौजूद हैं। इस दूसरे पक्षीके (secretion) उद्‌गारमें एक और भी आश्च-र्य्यजनक गुण यह है कि रंगीन होता है और इस-के मलनेसे ही इस पक्षीकी गर्दन और पंखोंका रंग

पीला पड़ गया है। इन पक्षियोंकी चोंचकी बनावट बड़ी विचित्र होती है और प्रायः इनकी चोंचका आकार इनके भोज्य पदार्थोंकी भिन्नतापर निर्भर होता है। उदाहरणार्थ मक्खी आदि उड़ने-

चित्र नं० ३—हार्नबिल
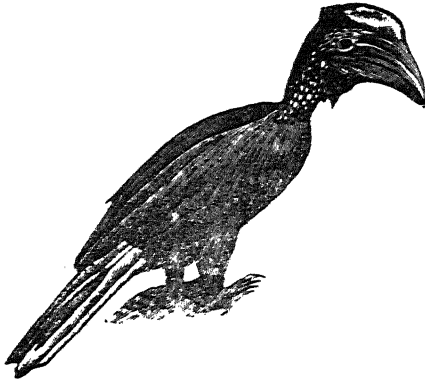
वाले जीवोंको पकड़कर खानेवाले पक्षियोंकी चोंच छोटी और चौड़ी होती है। फल तथा गुबरीले खानेवाले पक्षियोंकी चोंच नोंकीली और मुड़ी हुई होती है, तथा कीचड़से कीड़े इत्यादि जीवोंको
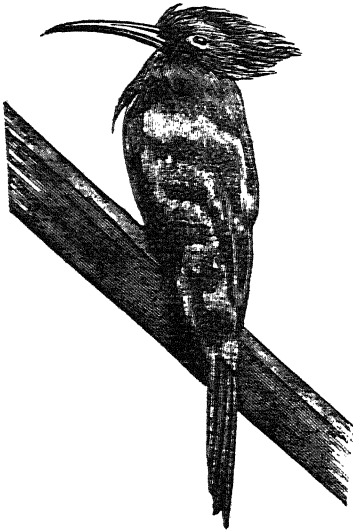
चित्र नं० ४—हूपो

खानेवाले पक्षियोंकी चोंच चौड़ी और चपटी होती है। जहांतक वैज्ञानिकोंको इस समयतक ज्ञात हुआ है संसारमें और कोईभी पक्षी या जीव ऐसा नहीं है जो इस प्रकार अपने बालोंमें ख़िज़ाब लगाता हो।

इसी तरह कुछ चिड़ियां ऐसी भी हैं जो अपने शृंगारमें powder puff पौडरका भी प्रयोग करती हैं। इनके परोंपर बड़े विचित्र और सुन्दर हलके हलके रंगीन दाग़ और धारियां इसी पौडरके कारण बन जाती हैं। यह बड़ी चित्ताकर्षक मालूम होती हैं और इन पक्षियोंकी शोभाको बहुत कुछ बढ़ा देती हैं। भूरे तोते ( grey parrots ) शिकरे और ( cockatoo ) काकातूआ नामक पक्षियोंमें यह गुणविशेष रूपमें पाया जाता है। इन पक्षियोंके एक प्रकारके छोटे छोटे और मुलायम पंख होते हैं जिन्हें ( powder downs ) पौडरवाले पंख कहते हैं। इनके पुराने हो जानेसे तथा झड़ जानेपर यह पौडर उत्पन्न हो जाता है और इन पंखोंकी जड़ोंमें जमा रहता है। कबूतरोंके पंखोंमें भी यह पौडर पाया जाता है। विज्ञानवेत्ताओंने बड़ी खोजसे इस बातका पता लगाया है कि पक्षियोंमें पौडर तथा तेल लगाना केवल पानीकी सरदी दूर करनेकेलिए है। क्योंकि वर्षा ऋतुमें इन पौडरवाले पक्षियोंके पंख अन्य सजातियोंकी अपेक्षा बहुत कम भीगते हैं। इसीलिए यह जीव वर्षा ऋतुमें जलविहार करके बड़े मग्न होते हैं और जलके फुहारेमें बड़े आनंदसे किलोल करते हैं। शिकरे, उड़नी मछली ( carmorant ), grebes, उल्लू ( barn owls ), nightjars, और bitterns इत्यादि पक्षियोंको प्रकृतिने कंघी प्रदानकी है और यह जीव इसी कंघीसे उन छोटे छोटे पतंगोंको झाड़ देते हैं जो हवामें उड़ते समय उनके मुखके पास बालोंमें उलझ जाते हैं। यह कंघी इन पक्षियोंकी बीचकी उंगलीमें बनी होती हैं और बहुतसे वैज्ञानिकोंने इन कंघियोंकी बनावटके विषयमें बड़ी भारी खोज और बड़ी युक्तिपूर्ण कल्पनाएं की हैं।

पर एक बात इन कंघियोंके विषयमें बड़ी विचित्र यह है कि प्रकृतिने बहुतसे ऐसे जीवोंको यह अवयव प्रदान किया है जिन्हें इसकी कोई आवश्यकता नहीं मालूम होती है और जिन पक्षियोंको इसकी आवश्यकता है उन्हींमें इसका अभाव है। प्रकृतिके इस आश्चर्य्यपूर्ण कृत्यका कोई रहस्य अभीतक मालूम नहीं हुआ है। कई वैज्ञानिकोंका कहना है कि यदि nightjar इस कंघीद्वारा अपनी डाढ़ीमेंसे कीड़ोंको झाड़ देता है तो अन्य डाढ़ी विहीन पक्षियोंको जैसे अमेरिकाके night hawk को यह कंघी प्रदान करनेकी क्या आवश्यकता थी। शिकरेके भी डाढ़ी नहीं होती है, पर तो भी उसे कंघी प्रदानकी गई है। इसी प्रकार barn owl इत्यादि कई पक्षियोंमें यह विचित्रता देखी गई है। इन सब बातोंका विचार करके हमें कहना पड़ेगा कि इन पक्षियोंको यह कंघी शरीर खुजलानेकेलिए दी गई है।

पशुओंमें श्रृंगार-प्रियता और बनाव चुनावकी आदत बहुत कम पाई जाती है। परन्तु पक्षियोंमें यह गुण भी पाया जाता है और यह जीव इस विषयमें भी बड़े सिद्धहस्त मालूम होते हैं। माट-माट (mot mot) नामक पक्षी जो मेक्सिको और मध्यअमेरिकामें पाया जाता है बड़ा फैशन-प्रिय होता है। इसकी चोंच आरेकी सी दांतदार होती है। इसी चोंचसे यह अपनी पूंछके बालोंको कतर कतरकर टेनिसके बल्लेके आकारका बना लेता है। इस पक्षीको अपनी पूंछका बड़ा घमंड है क्योंकि यह बार बार इसकी सुंदरता बढ़ानेकी चेष्टाएं किया करता है। ऐसी दांतदार चोंच पाई तो कई पक्षियोंमें जाती है, पर पूंछ कतरनेका काम माटमाटके सिवाय इससे कोई भी नहीं लेता।

श्रृङ्गार विषयक उपरोक्त सामग्रीके अतिरिक्त यह पक्षी जल और मट्टीका भी प्रयोग करते हैं। गौरैया (sparrow) जल और मट्टी दोनों ही काममें लाती हैं पर यह मट्टी बड़ी चिकनी बारीक और सूखी होती है। लवा और तीतर आदिक पक्षी भी इसी प्रकारके जीव हैं और रेतसे स्नान करते हैं। लवा तो गौरैयाकी भांति सड़कोंकी बारीक मट्टीका प्रयोग करता है, पर तीतर सूखी घासकी जड़ोंमें परोंको फड़फड़ाता फिरता है और इस प्रकार उन्हें रेह आदिकसे साफ़ करलेता है। इसी प्रकार जलसे स्नान करनेवाले पक्षी भी बड़े शौक़ीन होते हैं और मेहमें स्नान करके बड़ी प्रसन्नता प्राप्त करते हैं। हमारे पाठक बहुतसे जलविहारी पक्षियोंसे परिचित होंगे। जंगली कबूतर और जंगली बतखें प्रातःकाल ही स्नान कर लेते हैं और जंगली बतखें खारी पानी पीने तथा खारी पानीके जीवोंको खानेपर भी ताज़ा पानीमें स्नान करना पसंद करती हैं और कभी कभी मीलोंतक ऐसे तालाबोंमें जल विहार करनेकेलिए पहुंचती हैं।

उपरोक्त वर्णनको पढ़कर पाठकोंको भली भांति विदित हो गया होगा कि मनुष्योंकी तरह पशु पक्षी भी श्रृङ्गार-प्रिय ही नहीं होते वरन इसे अपना नित्य कर्म्म समझते हैं, तथा बहुत से जीवोंकेलिए तो यह इतने परमावश्यक कार्य्य हैं कि इनके बिना उन्हें अपने जीवनमें आनन्द और सुखका अनुभव ही नहीं होता है।

इन जीवधारियोंका यह स्वाभाविक गुण, अपने आपको सर्वश्रेष्ठ माननेवाला मनुष्य जातिकेलिए सर्वशक्तिमान परमात्माकी परम उदार और बुद्धि-मत्तापूर्ण शक्तिकी विचित्रता और महानताका द्योतक है। इन जीवोंमें यह सब गुण विद्यमान देखकर मनुष्य जातिको क्या शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये यह बात हम पाठकोंके निर्णयकेलिए छोड़ते हैं, पर अन्तमें इतना लिखना अवश्य चाहते हैं, कि प्रकृतिके इन कौतुहलपूर्ण विचित्र रहस्योंको उद्घाटन करनेवाली विद्या केवल विज्ञान ही है? अतः धर्माभिरुचि बढ़ानेकेलिए भी 'विज्ञान' का मनन श्रेयस्कर और परमावश्यक है।

---

## रबड़

[ ले० महावीर प्रसाद बी. एस-सी., एल. टी. ]

पाठशालाके छोटे छोटे लड़कोंसे लेकर बूढ़ेतक रबड़के नामसे अवश्य परिचित होंगे। पेंसिल वा स्याहीसे लिखे हुएको मिटाने, बाइसिकिल, मोटरकार, घोड़ागाड़ीके पहियोंमें लगाने, गेंदको उछलनेके योग्य बनाने, बरसाती पानीसे बचने, मोज़ोंको कसा रखनेकेलिए रबड़का प्रयोग किसी न किसी रूपमें बहुतसे लोग करने लग गये हैं। वैज्ञानिक प्रयोगशालाओंमें भी रबड़का महत्व बढ़ा हुआ है। इसलिए रबड़का जीवन चरित प्रत्येक व्यक्तिको जानना उचित और आवश्यक समझना चाहिये।

### रबड़ कहां मिलता है

रबड़ कई प्रकारके वृक्षोंके दूधसे बनाया जाता है। यह दूध वायुमें रहनेसे जमकर लचीला हो जाता है। इसके वृक्ष भारतवर्ष, अफ्रीका और दक्षिणी अमेरिकामें पाये जाते हैं। कोई कोई वृक्ष ३० से ५० फुटतक ऊंचे होते हैं और कोई लताकी जातिके होते हैं। लताकी जातिके अफ्रीकाके कुछ भागोंमें पाये जाते हैं। आसाम, जावा, पैनांग और रंगूनमें जो रबड़ बनता है वह भारतीय रबड़-वृक्षसे निकलता है। दक्षिणी अमेरीकामें रबड़ ऐसे पौधोंसे निकलता है जो रेंड़की जातिके होते हैं।

### कैसे निकाला जाता है

सूखी ऋतुके आरम्भमें मनुष्य उन जंगलोंमें जाते हैं जिनमें रबड़के पेड़ खड़े होते हैं और जिन वृक्षोंका दूध रबड़ देनेके योग्य समझा जाता है उनके चारों ओर मिट्टीके पक्के प्याले रख देते हैं। यह प्याले एक ओर चपटे होते हैं। ऐसे १५ प्यालोंका रस मिलाकर एक बोतलके बराबर होता है। मनुष्य दाहिने हाथमें कुल्हाड़ी लेकर जितनी ऊँचाईतक पहुंच सकता है गहरा और ऊपरकी ओर ढालू होता हुआ एक खत तनेमें लगाता है। इससे छाल कट जाती है और लकड़ीमें भी एक इंचके लगभग गहरा क्षत हो जाता है। इसकी चौड़ाई भी एक इंच होती है।

खत लगा चुकनेपर वह एक प्याला लेता है और गीली मिट्टी लगाकर उसको तनेमें खतके नीचे चिपका देता है। इसी प्यालेमें स्वच्छ दूधकी नाईं रस भरने लगता है।

चार पांच इंचकी दूरीपर और उसी ऊँचाईपर दूसरा खत लगाया जाता है और उसके नीचे प्याला चिपका दिया जाता है। इस प्रकार उसी ऊंचाईपर प्यालोंकी एक पंक्ति लगा दी जाती है। यह ऊंचाई पृथ्वीसे ६ फुटके लगभग होती है। एक पेड़से दूसरे पेड़ और दूसरेसे तीसरे पेडमें इसी प्रकार खत लगाकर प्याले चिपका दिये जाते हैं। इन खतोंसे तीन चार घंटेतक दूध बहा करता है। यह निश्चित नहीं रहता कि किस खतसे कितना दूध निकलेगा। हां यदि पेड़ बड़ा हो और पहले बहुत खत न लगाये गये हों तो बहुतसे प्याले आधे भर जाते हैं और कुछ पूरे भर जाते हैं।

दूसरे दिन फिर खत किये जाते हैं। पहली खतोंकी पांतिसे दूसरे दिन खतोंकी पांति सात आठ इंच नीचे होती है। इस प्रकार प्रतिदिन नये खतों की पांति ७, ८ इंच नीचे होते होते पृथ्वीतक पहुंच जाती है तब खतका लगाना बंद कर देते हैं। जो रस इन प्यालोंमें इकट्ठा होता है वह एक बड़े बर्तनमें उड़ेल लिया जाता है जिसको बटोरनेवाला अपने हाथमें लिये रहता है।

### दूधको बाहर कैसे भेजते हैं

दूधको एकत्र करके ढाल देते हैं। सांचा लकड़ीकी बड़ी करछीकी तरह होता है। यह चपटा होता है जिसमें रबड़ तहकी तह इस प्रकार जमाया जाता है :—एक तंग मुंहवाले बर्तनमें जिसका पेंदा खुला रहता है लकड़ीकी आग बनाते हैं और सांचेपर चिकनी मिट्टी रगड़ देते हैं जिससे दूध चिपकने नहीं पाता। तब उसको धूएंमें गरम करते हैं। कर्म्मचारी एक हाथमें सांचेको थामता है

और दूसरे हाथसे दो वा तीन प्यालोंका दूध उसपर उंडेल देता है। तुरन्त ही वह सांचेको आगके बर्तनके मुंहपर रखकर शीघ्रताके साथ घुमाता है जिसमें धुआं चारों ओर बराबर लगे। सांचेके दूसरी ओर भी ऐसा ही किया जाता है धुआं लगनेपर दूध कुछ कुछ पीला और ठोस हो जाता है। जब एक तहपर दूसरी तह और इसी तरह कई तह जमा चुकते हैं तब एक तख़्तेपर ठोस होनेकेलिए रख देते हैं। ठोस होनेपर सांचेके किनारोंपर तराश देते हैं और सांचेको निकाल लेते हैं। इस प्रकार चार पांच इंच मोटी तह हो जाती है। अच्छी तरह सूखनेपर यह बाज़ार भेज दिया जाता है। ऐसी दशामें सब तह साफ़ साफ़ दिखायी पड़ती हैं।

साँचेको खुरचनेसे जो कुछ मिलता है और प्यालोंमें जो कुछ जम जाता है वह भी इकट्ठा करके बाज़ार भेज दिया जाता है। इसको नीची श्रेणीका र ड़ कहते हैं।

### शुद्ध कैसे किया जाता है

जंगलोंमें जमाकर जो रबड़ बाज़ार भेजा जाता है उसमें मिट्टी, बालू, पत्तियां इत्यादि मिली रहती हैं, इसलिए बिन शुद्ध किये यह कामका नहीं होता। इसलिए कई घंटेतक इसको पानीमें उबालते हैं। आगमें इसको नहीं गलाते क्योंकि यह आग पकड़ लेता है। पानीमें उबालनेसे रबड़ नरम पड़ जाता है। जो भाग नीचे बैठ जाता है उसको अलग कर देते हैं क्योंकि इसमें बालू मिट्टी इत्यादि मिली होती हैं और जो उतराया रहता है उसमें पत्ती और खर मिले रहते हैं। तब इसको मशीनके-द्वारा धोते हैं। इसके पश्चात् रबड़को ऐसे कमरों-में सुखाते हैं जिनका तापक्रम ६०° फ़० मापके-नलों द्वारा रक्खा जाता है। सूर्य्यकी किरणें नहीं पड़ने पातीं। इन किरणोंसे बचानेकेलिए खिड़-कियां पीली वा सफ़ेद रंग दी जाती हैं। सूखनेपर रबड़को बटोरकर रख देते हैं। धुले हुए रबड़-को मसलनेवाली मशीनमें रक्खा जाता है। बेलनों-को घुमानेसे रबड़ उनके बीचमें दबकर छोटे छोटे छिद्रोंमेंसे होकर निकलता है। मसल चुकनेपर रबड़ उस मशीनमें रक्खा जाता है जहां सांचेमें थक्का बांधा जाता है। इन थक्कोंको खूब दबाकर ठंडी जगहमें रखते हैं जिसका तापक्रम बर्फ़से बहुत नीचा रक्खा जाता है। इससे थक्के कड़े पड़ जाते हैं और तब सांचे निकाल दिये जाते हैं। यह थक्के बर्फ़मेंसे तभी निकाले जाते हैं जब इनका काम पड़ता है। कुछ थक्के वर्गाकार और कुछ बेलनाकार होते हैं।

जब रबड़के चद्दरोंकी आवश्यकता होती है तब यह थक्के भिन्न भिन्न मोटाईके काटे जाते हैं। काटते समय रबड़को ठंडे पानीसे लगातार भिगोते रहते हैं। काट चुकनेपर चद्दरोंको सूखनेकेलिए लटका देते हैं।

इन्हीं चद्दरोंसे रबड़के फ़ीते काटे जाते हैं। यह फ़ीते कुछ देरतक तानकर फैलाये जाते हैं और इस समय इनको ठंडा भी रखते हैं। गरम पानीमें रखनेसे यह अपने आकारके और दृढ़ हो जाते हैं। यह रीति कई बार करनेसे फ़ीतेकी दृढ़ता ५ वा ६ गुना बढ़ायी जा सकती है। यदि फ़ीते बहुत पतले हों तो उनको रबड़का सूत कहते हैं जो लचीले कपड़ोंमें प्रयोग किया जाता है।

### रबड़से कौन कौन काम निकलते हैं

पेन्सिलके लिखे हुए अक्षर रबड़से मिट जाते हैं। इसीसे इसका नाम अंग्रेज़ीमें रबर पड़ा जिसका अर्थ है घिसनेवाला। यह कहा जा चुका है कि रुई, ऊनी, और रेशमी मोज़ों और दस्तानोंको लचीला करनेकेलिए इसके डोरे प्रयोग किये जाते हैं। रबड़में गंधक मिला दिया जाय तो नाम vulcanized rubber पड़ जाता है जिससे स्याहीके अक्षरोंको मिटाने वाले, लचीली पट्टियां, किवाड़ोंकी कमानी, गैसले-जाने वाली नलियां, गेंद इत्यादि बनते हैं। अलक-तरासे मिलाकर कंघे, घड़ीके ज़ंजीर, कलम और बहुतसी और चीज़ें बनती हैं। जिससे यह सब बनती हैं उसको वल्कनाइट कहते हैं जो आबनूस-

की लकड़ीके रंगका होता है परन्तु वास्तवमें वह रबड़ और अलकतराके योगसे बनता है।

रबड़को घोलकर लाख मिला देनेसे गोंदकी नाईं जोड़नेका भी काम लिया जाता है जिसको नाव बनानेवाले बहुधा प्रयोग करते हैं। नफ़्थामें घोलकर ऊनी कपड़ोंपर फैला देनेसे ऊना कपड़ोंमें पानी नहीं सोखता। ऐसे ही कपड़े बरसाती कपड़े कहे जाते हैं क्योंकि बरसातका पानी ऊपर ही ऊपर बह जाता है। विद्युत समाचार पहुंचानेवाले तार भी इसमें लपेटे जाते हैं जिससे बिजली इधर उधर नहीं बहने पाती।

रबड़के रासायनिक गुण—यह गरम वा ठंडे पानीमें नहीं घुलता परन्तु ताड़पीन और नफ़्थामें घुल जाता है। यह आग पकड़ लेता है जिसकी लौ श्वेत होती है। धूआं बहुत देता है और गंध बड़ी तीव्र होती है।

भौतिक गुण—इसका लचीलापन हल्की गरमी पहुंचानेसे बढ़ जाता है। गरम गरम यदि यह ताना जाय और तनावके रहते हुए ठंडा किया जाय ता लचीलापन चला जाता है और रबड़ तना ही रह जाता है। गरम करनेपर फिर लचने लगता है। इसी गुणके कारण यह लचीले कपड़ों, गेंद और गैसकी नलियोंके बनानेमें प्रयोग किया जाता है।

गरम पानीमें वा आगके सामने रखनेसे यह मुलायम पड़ जाता है। २५०° फ० पर पिघलने लगता है। ताज़े कटे हुए किनारे तनिक सी गरमी और दबावसे जुड़ जाते हैं।

# परमाणुक जीव अर्थात जीवाणु

( Micro-Organisms )

[ ले० तेजशंकर कोचक बी. ए., एस-सी., ]

भूमिका

मेरे प्यारे पाठकगण! आपके मनमें यह प्रश्न अवश्य उत्पन्न हुआ होगा कि परमाणुक जीव क्या हैं। परमाणुक जीव किस वस्तुका नाम है, यह किस भाषाका शब्द है, या केवल यह हमारी मन गढ़त ही है? अंगरेज़ी भाषामें जिन्हें बकटीरिया, फ़रमेंट्स अर्थात माईक्रोआरगेनिज़्म्स कहते हैं उन्हें ही हम परमाणुक जीवके नामसे पुकारेंगे। यह एक भांतिके अपूर्व जीवधारी होते हैं। इनका रूप कैसा होता है, यह अपना जीवन कैसे निर्वाह करते हैं, हानिकारक हैं या लाभदायक हैं यह सब बातें हम इस पुस्तकमें बतलायँगे। इनके जीवन-चरित्रके ज्ञानका एक अपूर्व शास्त्र हालमें ही पश्चिमी देशोंमें पैदा हो गया है। यूरोपके विद्वानोंने सौ वर्षके अन्दर बल्कि कहिये पचास ही वर्षके अन्दर इस शास्त्रको रच डाला, जिसको पढ़कर हम लोग चकित हो जाते हैं।

परन्तु यह बड़े शोककी बात है कि अब हम ऐसे अन्धकारमें लिप्त हैं कि वैदिक समयमें जिस शास्त्रकी बड़ी उन्नति हो गई थी, जिसके अनुसार गली गली कर्मकाण्ड हुआ करता था, जिसकी छाया अब भी नित्यनेममें पायी जाती है, उसको हम नया समझते हैं और उसके अत्यन्त आरम्भिक पाश्चात्य रूपको देखकर चकित हो जाते हैं। इस लेखकका विश्वास है कि आर्य्यावर्तके ऋषि मुनि इस शास्त्रको भली भांति जानते थे और हमारे कर्मकाण्डमें सैकड़ों ऐसी बातें हैं कि जिनका समझना जीवाणुशास्त्रके ज्ञान हुए बिना अत्यन्त कठिन है। मालूम होता है कि जहां मुसलमानोंने और बहुतसी पुस्तकें नाश कर दीं वहां इस शास्त्रका भी स्वाहा हो गया और इसके पश्चात्

Bacteriology जीवाणु शास्त्र ]

जो भारतवर्षमें घोर अज्ञान फैला उसमें इस शास्त्रके पंडितोंका भी लोप हो गया। उदाहरणार्थ कर्मकाण्डसे निम्नलिखित क्रियाओंपर पाठकोंका ध्यान दिलाया जाता है। यह नहीं कहा जा सकता कि यह सब रस्म रिवाज केवल दैवयोगसे ही ऐसे हो गये क्योंकि इस शास्त्रके पढ़नेसे पाठक गणोंको उनका महत्व मालूम होगा, तो यह भ्रम भी दूर हो जायगा।

(१) हवन—इससे वायु ऐसी स्वच्छ हो सकती है और नगरनिवासी निरोग रह सकते हैं कि जैसा और किसी रीतिसे कठिन है।

(२) चर्णामृत-इससे बढ़कर मनुष्यको निरोग रखनेकी कोई और वस्तु नहीं है।

(३) खालकी बीमारियोंमें दहीका प्रयोग।

(४) मातामें छूतछात।

(५) झूंठे बरतनोंको आग डालकर शुद्ध करना।

(६) पानीके रखनेकेलिए तांबेके बरतनोंका प्रयोग करना।

(७) ब्रह्मचर्य्यका धारण करना।

(८) नाऊ, धोबी और चमार आदिको छूत मानना।

(९) चौर कर्मके बाद स्नान करना।

(१०) मृतकका दाह करना।

(११) क्रिया, कर्म करनेवालेको अलग रखना इत्यादि।

कोई वस्तु नहीं और कोई स्थान नहीं है कि जहां जीवाणु न हों। यह वायुमें, जलमें, हमारे भोजनमें, उदर और मुंहमें, हमारे रक्तमें, हमारी सांसमें, हर जगह पाये जाते हैं। संसारकी बहुत कुछ रचना इन्हींके हाथोंसे होती है। मनुष्यपर बहुतसे रोग इन्हींकेद्वारा आक्रमण करते हैं। हमारी खाने पीनेकी वस्तुएँ बहुत कुछ इन्हींकी सहायतासे पैदा होती हैं।

वास्तवमें संसारके बहुत कुछ काम इन्हींकी बदौलत चलते हैं और विदेशोंमें आज कल इनसे ऐसेही काम लिया जाता है जैसे आप लोहार या बढ़ईसे काम लेते हैं। इस शास्त्रका पढ़ना और पढ़ाना विद्याका मुख्य मार्ग है। अपने को निरोग रखनेकेलिए इस शास्त्रका पठन पाठन आवश्यक है। तरह तरहके नए व्यवसाय (industries) इस शास्त्रके जाननेसे चलाये जा सकते हैं। आये दिन इस शास्त्रके ज्ञानसे हमें बहुत कुछ मदद मिल सकती है और कोई काम ऐसा नहीं है कि जिसमें इसका ज्ञान कुछ न कुछ लाभ न दे। हमारे देशका उद्धार बहुत कुछ इस शास्त्रका ज्ञान मनुष्योंमें फैलानेसे हो सकता है। भारतवर्षका कष्ट बहुत कुछ इससे दूर हो सकता है। पाठकोंसे प्रार्थना है कि इसको बहुत ध्यानसे पढ़ें, और जो कुछ क्रियाएँ उनके करने योग्य हैं उनको अवश्य करें। हम इस लेखमें केवल उन बातोंका ज़िक्र करेंगे, जो सर्वसाधारणके उपयोगकी हैं। यथा शक्य ऐसे प्रयोगोंका वर्णन किया जायगा जो बाज़ारसे साधारण चीज़ें मोल लेकर किये जा सकते हैं।

### १—सामग्री

इस शास्त्रके विषयमें कुछ बतलानेके पहले हम पाठकोंको कुछ थोड़ी सी सामग्री बतलाते हैं जो एकत्रित करना चाहिये और जिसके बिना इस शास्त्रका पूरा ज्ञान नहीं हो सकता। परन्तु जिन पाठकगणोंके पास यह सामग्री न हो वह चिंता न करें। पहिले अध्यायको छोड़कर और बाकी सब अध्याय वह सरलताके साथ समझ सकेंगे।

१—अणुवीक्षण यंत्र अर्थात् माईक्रोसकोप (देखिये चित्र नं १)—एक छोटा सा माईक्रोसकोप सौ रुपयेमें मिल जायगा और विद्यार्थियोंकेलिए यह काफ़ी है और चार सौ रुपयेके लगभग अति उत्तम माईक्रोसकोप मिलैगा जिससे हर तरहका काम हो सकता है। जैसे जैसे माईक्रोसकोपकी बनावटमें उन्नति हुई है वैसे ही इस शास्त्रमें भी उन्नति हुई है।

फ—नेत्रताल (eyepiece आईपीस) है। यहांपर आंख रखकर देखते हैं।

ज—मंच (stage = स्टेज) है। जिस वस्तुको देखना हो उसको एक कांचके टुकड़ेपर जिसको दल ( slide स्लाइड ) कहते हैं रखकर मंचपर रखते हैं।

ल—कमानी ( स्प्रिङ्ग ) हैं जिसके तले दलको दबा देते हैं। मंचके बीचमें देखिये एक छेद है।

श—मंचके तले दरपन है। इसको घुमाकर ऐसी स्थितिमें रखते हैं कि प्रकाश इसपरसे उचट ( reflect ) कर छेदमें होकर दलपर गिरे और उस वस्तुको प्रकाशित करे, जिसकी परीक्षा हम करनेवाले हैं। वस्तुको प्रकाशितकर, प्रकाश नलिकामें (ट) प्रवेश करता है और हमें उस वस्तुके देखनेमें सहायता करता है।

न—नोज़पीस अर्थात् धारक कहलाता है।

उ—दो वस्तु ताल या आवजेक्टिव objective हैं।

ट—अणुवीक्षणकी नली है। इसकी सीधमें जो वस्तु ताल होता है उसीसे देखते हैं।

स—पेच (स्कुरु) है। इसके घुमानेसे वस्तुताल ऊपर नीचे उतरता चढ़ता है।

स्पष्टीकरण (फ़ोकसिंग Focussing)—अणुवीक्षण-यंत्रको इस प्रकार ठीक करके रखना कि उसमेंसे वस्तुका स्वच्छ, निर्मल और स्पष्ट चित्र दिखलाई दे स्पष्टीकरण कहलाता है। उसकी रीति यह है कि वस्तुतालको दलके बहुत नज़दीक पेच घुमाकर ंकर दीजिये, नेत्रतालपर आंख लगाइये और पेच घुमाकर वस्तुतालको धीरे धीरे ऊपरकी ओर सरकाइये। जहांपर वस्तु स्वच्छ, निर्मल और स्पष्ट रूपसे दीखने लगे वहींपर रुक जाइये।

क—भी एक पेच है। जब वस्तुतालको बहुत ही थोड़ा ऊंचा या नीचा करना मंज़ूर हो तो उस समय स पेंचके बजाय क पेंचको घुमाते हैं।

प—एक आडी अक्ष है। यदि आवश्यकता हो तो यहांसे पकड़कर कुल यंत्रको पीछे झुका सकते हैं।

वस्तुताल भिन्न भिन्न शक्तियोंके होते हैं। वस्तुतालकी शक्ति (power पोवर) उसके ऊपरही लिखी होती है। २, १, $\frac{१}{२}$, $\frac{१}{४}$, $\frac{१}{६}$, $\frac{१}{१२}$, $\frac{१}{१६}$, इंचके वस्तुताल साधारण तौरसे विकते हैं। जिस वस्तु तालकी जितनी छोटी संख्या है उतनी ही उसकी बड़ी शक्ति होती है। साधारण रीतिसे इस शास्त्रके पठनमें बड़ीसी बड़ी $\frac{१}{१२}$, $\frac{१}{१६}$, इंचकी शक्ति काम आती है। यह आयलइमर्शन ( तैलनिमग्न ) ताल भी कहलाते हैं अर्थात इन तालोंसे देखनेकी यह रीति है कि दलके ऊपर ज़ैतूनके तेलकी एक बूंद रख देते हैं और तालका मुंह इसी तेलमें डूबा रहता है। साधारण दशामें तीन वस्तु तालोंसे काम भली भांति चल सकता है अर्थात $\frac{१}{४}$, $\frac{१}{८}$, $\frac{१}{१२}$, इंच वालोंसे।

२. एकीकरण—जब बड़ी शक्तिके वस्तुतालसे काम लेते हैं तो उस समय दर्पनके और मंचके छेदके बीचमें (कन्डेन्सर) एकीकरण यंत्रका प्रयोग किया जाता है जिससे दलपर बहुत अच्छी रोशनी पड़ती है।

३. देखिये चित्र नम्बर २। स स ग ग दल हैं। ग ग दलोंके बीचमें एक गड्ढा है यह पानीकी बूंद रखनेके काममें आता है।

४. चित्र नम्बर ३ में गोल कवर-गिलासज़ अर्थात् काचके ढकने दिखलाए गए हैं।

५. स्टेन्स अर्थात रंग। परमाणुक जीवको प्रायः रंगकर भी देखते हैं। इस कारण निम्न लिखित रंग भी सामग्रीमें होने चाहिएं-जेन्शियन वायोलेट, ( Gentian-voilet ) मिथाइलान ब्लू, फिऊशिन, ।

६. क्षुद्रमापक (माइक्रोमीटर) इसकी सहायतासे परमाणुक जीवकी लम्बाई नापी जाती है।

८. केमरालूसीडा—इसकी सहायतासे अणु-

चित्र १

चित्र २

चित्र ३

८. केमरालूसीडा इसकी सहायतासे अणु-वीक्षणके दृश्यका चित्र बड़ी सुगमतासे खींचा जा सकता है।

९. चिमृटियां भांति भांतिकी चिमृटियां सामग्रीमें रखनेकी आवश्यकता होती है। प्लेटिनम धातकी छोटी पतली छड़की भी आवश्यकता होती है। शुद्ध करनी यंत्र और पालन यंत्रकी भी आवश्यकता होती है। यह बहुत महँगे होते हैं परन्तु देसी सस्ते बननेकी रीत हम आगे बतलाएँगे।

१० शीशेकी (flask फ़्लास्क) कुप्पी, टैस्ट्यूब (परख नली) कीप (फलन) छन्ना कागज़, शीशेकी चपटे पैंदेकी रकाबियां, स्पिरिट लैम्प ;

११. रसायनिक यौगिक-अलकोहल, आयोडीन, पुटासियम आयोडाइड, कारबोलिक अम्ल टैनिकअम्ल, गालिक एसिड, सिर्काम्लि स्त्रवित जल, पुटाशियम वाइ क्रोमेट, फिटकरी, फारमालिन, इत्वादि चीजोंकी आवश्यकता होती है।

---

## चतुर बेरिस्टर

### एक वैज्ञानिक कहानी

[ ले० प्रेमवल्लभ जोषी, बी. एस्-सी. ]

१

कोलम्बोके बन्दरगाहमें आज बड़ी भीड़ है। "मैकाडो" नामक जहाज़ अभी जापानसे आनेवाला है; स्त्री पुरुष बूढ़े बच्चे सब ही अपने अपने मित्रोंसे मिलनेको बहुत उत्सुक हो रहे हैं। कई तो दूरबीन लिये उस दिशामें देख रहे हैं, जिधरसे कि जहाज़ आनेवाला है।

बन्दरगाहके एक कोनेमें पांच युवक बेञ्चपर बैठे बातें कर रहे थे। इनके पहनावके ढंगसे प्रतीत होता था कि ये सब शिक्षित पुरुष हैं। बोल चाल सब अंग्रेज़ीमें थी। पाठक चलिये जहाज़के आनेतक इन्हींकी बातें सुनें।

पहला युवक—बरमिंघाममें पांच बरसतक रहा लेकिन 'रेडियम' मुझे देखनेको नहीं मिला।

दूसरा यु०—भाई! हम तो पेरिस गए थे वहांपर विश्वविद्यालयमें रसायनके प्रोफ़ेसरका स्थान मैडम क्यूरीको दिया गया है। मैडम क्यूरी इस पदको भूषित करनेवाली पहिली महिला हैं। इनसे हमारे कालेजके प्रोफ़ेसर जेम्सने मुझे मिलाया था। इनके हाथमें रेडियमका एक कंकण बंधा हुआ मैंने देखा था।

तीसरा यु०—क्यों मिस्टर शम्भो! अगर इन लोगोंकेलाये हुए कीटमें एक छटांक भी रेडियम निकल पड़ा तो फिर दोनों माला माल हो जायँगे।

पहिला यु०—एक छटांक! ज़रा सुनियेगा, आपको मालूम है तमाम दुनियांमें पांच सात ग्रेनसे अधिक रेडियमका पता नहीं। कहो एक दो ग्रेन भी मिल गया तो अहोभाग्य! दोचार लाख तो दाम मिल ही जायँगे।

चौथा यु०—भाई तुम लोग तो तमाम दुनियां भरकी कह डालोगे। यह 'रेडियम' होती क्या बला है? तुम तो विलायत हो आए, मैडम फैडम सबके पास हो आए और इसे देख आए लेकिन यह अद्भुत चीज़ क्या है। इसके एक ग्रेनका मूल्य एक लाख रुपया है।

पहला यु०—अरे भाई लाखसे क्या समझे। लाख रुपया! बड़ी भूल की चिपड़ीका लाख। ऐसी वैसी चीज़ें तो मिट्टीके भाव बिकती हैं।

चौथा यु०—देखो भाई हंसी क्यों उड़ाते हो, हमने विज्ञान पढ़ा नहीं; हमें समझाओ तो सही यह सब क्या बातें हो रही हैं?

दूसरा यु०—देखो दीनानाथ! रेडियम एक प्रकारकी धातु है। सहस्रों मन "पिचब्लैन्डी" नामक कीटसे एक दो ग्रेन रेडियम निकलता है। इस धातुसे एक प्रकारकी ज्योतिकी किरणें निक-

लती हैं। छोटेसे छोटा रेडियमका टुकड़ा अच्छी भांति अंधेरेमें चमकता है। इसकी किरणें केवल धातुको छोड़ और वस्तुओंको पार कर जाती हैं। अगर तुम्हारी आँख बन्दकर रेडियमका एक टुकड़ा तुम्हारे मस्तकपर रक्खा जाय तो तुम बन्द आँखें होनेपर भी देख सकोगे, क्योंकि इसकी किरणें आँखोंके मांसको पारकर सकती हैं-अब समझे?"

दीनानाथ—वाह वाह यह तो एक प्रकारकी मणि हो गई। हम पुरानी कहानियोंमें मणिका हाल सुनते थे। अब यह प्रत्यक्ष हो गया है क्यों?

चलो चलो जहाज़ आ गया।

ये पाँच युवक भीड़में घुसकर समुद्रके तटपर पहुंच गए। थोड़ी देरमें छोटी छोटी नावें यात्रियोंको ले कर धड़ाधड़ पहुंचने लगीं, एक नावमें इनके मित्र भी थे। उस नावको देख ये अपना रूमाल हिलाने लगे थे और नावपरसे भी एक युवक इनकी ओर इशारा कर रहा था।

नाव किनारे लगी और इसमेंसे हमारे युवकोंके मित्र मि. मानकर उतरे। आपसमें मिलकर मि० मानकर ने अपना असबाब संभाला और ये लोग हंसते बोलते घर पहुंचे।

२. परिच्छेद

मि. मानकरके घरमें आज बड़ा उत्सव है। मि. मानकर कोलम्बोके एक धनी महाजनके इकलौते बेटे हैं। आपकी अवस्था इस समय ३० वर्षकी होगी। बालकपनसे आपकी रुचि पठन पाठनकी ओर बहुत थी। आपने बी. ए परीक्षा कलकत्ते प्रसेडेन्सी कालेजसे प्रथम श्रेणीमें पास की, और सरकारी छात्रवत्तिसे आप विलायत पढ़ने गए, वहाँपर भी आपने खूब यश पाया। दो वर्षतक रसायन शास्त्रकी उच्च शिक्षा पाकर आप अपने पुराने मित्र तथा सहपाठी मि० भट्टाचार्य्यके साथ साइबेरिया गए थे, वहांपर इन लोगोंके हाथ कुछ रेडियम धातुकी कोट लग गयी। रूसी वैज्ञानिकोंने इनको अच्छे दाम देकर इस कोटको मोल लेनेकी अभिलाषा प्रकट की थी। इसपर मि. मानकरने भट्टाचार्य्य बाबूसे कोटका अपना हिस्सा ले बेचडाला। ४५ हज़ार रुपया आपको इसका मूल्य मिला।

रुपया बड़ी बुरी चीज़ है। जबतक मनुष्य इसे अपने वशमें रख सके यह मनुष्यकी अच्छी सेवा करता है, परन्तु जहाँ मनुष्यने अपनेको रोकनेमें ज़रा भी कसरकी कि यह मनुष्यके सरपर सवार हो जाता है और मनुष्य करनी न करनी कर बैठता है।

अस्तु, मानकर ४५ हज़ार रुपयेका सद्प्रयोग न कर सके। कुछ दिनों घुड़ दौड़में जुआ खेला आज दो हज़ार कम हुए कल ४ चार बस एक मासमें इनका सब धन चुक गया। जबसे होटलवालेका बिल सरपर चढ़ा इधर मोटर गाड़ीका किराया उधर दर्ज़ीका पुर्ज़ा। फिर क्या था धड़ाधड़ नालिशें होने लगीं।

* * * *

रातके १२ बजे होंगे, पूर्ण चन्द्र अपनी शीतल ज्योतिसे संसारको उज्जवल किये हुए हैं। संसार, प्रकृति और मनुष्य सभी सुख निन्द्रामें सो रहे हैं। 'लाग्नवारी' होटलके तिमंज़लेके केवल एकही कमरेमें रोशनी है।

पाठक चलके देखें इस आधी रातको कौन बैठा बैठा कमरेमें पढ़ रहा है।

तीसरा खन! खूब; कैसे वहांतक चढ़ें! बिजलीके लिफ्ट देखें हैं? यह एक प्रकारका खटोला होता है। बड़े ऊंचे मकानोंमें सीढ़ीसे चढ़नेके कष्टको बचानेकेलिए लोग इस खटोलेकी शरण लेते हैं। यह बिजलीसे चलता है। इसपर चढ़कर बिजलीकी चाबी दबाई कि खटोला जितने ऊंचेपर चाहो उठकर चला जावेगा, और वहां चलकर चाबी छोड़नेसे रुक जावेगा—इस प्रकार नीचे भी उतर सकते हैं। कलकत्ता बम्बई इत्यादि बड़े बड़े शहरोंमें अब बिजलीके खटोले लग गये हैं। दिल्लीके स्टेशनपर भी असबाब चढ़ाने उतारनेकेलिए एक खटोला लगा हुआ है।

थोड़ी देरमें बटन दबा और खटोला ऊपर चढ़ा। इस परसे एक युवक उतर जल्दीजल्दी उसी कमरेमें घुसा जहां कि दिया जल रहा था। कमरेमें एक युवक इस समय बैठा बैठा पुस्तक पढ़ रहा था। इसका ध्यान पढ़नेमें इतना लगा हुआ था कि इसने इस नए आगन्तुकके पैर-की आहटतक न सुनी।

आगन्तुक युवककी अवस्था ३० वर्षसे कम न होगी। रंग सांवला हँस मुख, पर असीम चिन्ता-के चिन्ह इसके मुखपर दीख पड़ते थे। मालूम होता था कि यह बहुतही घबराया हुआ है।

चुपचाप इस युवकने कुर्सी खसकाई और उस-पर बैठा बैठा सोचमें मग्न हो गया।

कुछ समय उपरोक्त कमरेवाला युवक अपने स्थानसे कोई पुस्तक उठानेके निमित्त उठा। सामने कुर्सीपर दूसरे युवकको देख यह चौंक पड़ा और बोला :—

" Hullo ! मानकर ! क्या हाल है तुम कब आये ! कैसे आये। आधी रातमें कहांसे आये।

क्यों पाठक समझे ना ? यह वही मि० मानकर हैं जिनके ऊपर नालिशें हो रही हैं। अगर कल दस बजे-तक सबके बिल न चुकावेंगे तो इनको कुछ दिनके-लिए बड़ेघरकी हवा खानी पड़ेगी। 'विसमार्क' होटलके इर्द गिर्द सबही सौदागरोंके यह क़र्ज़दार हैं। इनको दिनमें और रातके १० बजे तक तो मुंह दिखलाना सम्भव नहीं, इस कारण आधी रातकी शरण ली।

पर यह दूसरा युवक—कौन है ? यह वही मि० मानकरके मित्र भट्टाचार्य्य बाबू हैं। मि० मानकरके साथ बटवारा हो जानेके बाद ये 'लाग्न-वारी' होटलमें रहने लगे थे और रसायन शास्त्रको और भली भांति पढ़नेमें दत्त चित्त हुए थे। मिस्टर मानकरको आज तीन माससे इनसे भेट करनेका अवसर ही न मिला। मिलता क्यों कर ? घुड़दौड़में इनके बदले बाज़ी कौन लगाता ? अस्तु आज विपत्तिके समय मि० मानकरने अपने पुराने मित्रकी शरण ली।

मानकर " मुझे बचाओ, इस परदेशमें तुम्हारे सिवाय मेरा साथी और सहायक कोई नहीं है। मुझे बचाना अब तुम्हारे हाथ है "। यह कह कर रोने लगे।

भट्टाचार्य्य—क्यों भाई मामला क्या है ? तुम्हारे अच्छे कपड़ोंका क्या हुआ ? घड़ी कहां गई ? बूटपर स्याही कै दिनसे नहीं लगी ! कालर, ओफ ! कितना मैला, पढ़ते पढ़ते पागल तो नहीं हो गए ?

मानकर—भाई पागल नहीं पर भिखारी हो गया। पैसा पास नहीं, क़र्ज़दारोंने नालिशें की हैं। अगर कल दस बजे रुपया अदा न किया जावेगा तो जेल भुगतना पड़ेगा। अब क्या करूं मुझे ३ हज़ार रुपया देकर बचाओ।

भट्टाचार्य्य—क्यों तुम्हारा रेडियम सब क्या हो गया। उसमेंसे कुछ हिस्सा बेच डालो। ३ हज़ार क्या दस हज़ार मिल जावेंगे। मैंने अभी एक रत्ती भी नहीं बेचा है। प्रोफ़ेसर सियनकियेमिच मुझे ६० हज़ार रुपये दे रहे हैं, पर मैं अभी नहीं बेचूंगा। कुछ दिनोंमें चौगुने दाम वसूल करूंगा। तुमको रुपयेकी आवश्यकता है। तुम बेच डालो, पर सब मत बेचना।

मानकर—भाई इसी 'रेडियम' ने तो बलामें डाला। हाय ! न रेडियम मिलता न यह हालत होती। रेडियम मैंने ४५ हज़ार रुपयेको बेच डाला था। इस रुपयेको मैं अच्छी तरह काममें न ला सका। घुड़दौड़में जुआ खेल अपना सर्वस्व दे चुका हूं। अब घोर विपत्ति आनकर पड़ी है कुछ उपाय मुझे बचानेका सोचो।

भट्टाचार्य्य बड़े दयालु होनेपर भी रुपये पैसेके मामलेमें बड़े तगड़े थे। धनके व्यवहारमें बालकी खाल खींच लेते थे। क़रज़ चाहे न लें पर पंज़ी देना वह नहीं जानते थे और अगर किसीको रुपये दे

भी दिये तो उससे घंटा मिनटका इक़रार करा लेते थे। नियत मिनटके अन्दर इनका रुपया नहीं मिला तो चाहे कोई भी हो नालिश कर दिया करते थे।

अस्तु, भट्टाचार्य्यजी कुछ देर सर खुजलाते रहे, अन्तमें आपने मानकर को ३ हज़ार देनेका वचन दिया और यह कहा कि मानकर तार द्वारा कौलम्बोसे रुपया मंगा उनको देवें।

मानकर खुशी खुशी घरपर लौटे पर भट्ट बाबूको नींद न आई। कहीं मानकर रुपया देनेसे इनकार न करदें, कहीं उनके पिता उन्हें रुपया न दे सकें। क्यों फिर क्या होगा ? तीन हज़ार! हाय हाय क्या कर बैठे!

मानकर महाशय होटल पहुंच सुखी हो सो गए और दूसरे दिन सबका ऋण चुकाकर निश्चिन्त हुए। अब आपने अपने पिताको एक तार यों भेजा—

"मैं बड़ी कठिनाईमें हूं। अगर मुझे फिर देखनेकी इच्छा है तो तार द्वारा ४ हज़ार रुपया भेजिये"।

इधर भट्ट बाबूको यह शंका लगी कि कहीं मानकर अपने पिताको तार न भेजें। इस कारण इन्होंने एक तार महाजन साहेबके नाम उड़ा हो तो दिया। उसमें यह लिखा था—

"तुम्हारा लड़का मुसीबतमें है। फ़ौरन तीन हज़ार रुपया मेरे नाम भेज दो। तबही वह बच सकता है।"

---

## भारतीय बंकोंका भविष्य।

[ ले० गोपालनारायन सेन सिंह बी. ए. ]

विचारशील विद्वानोंका कथन है कि अलग अलग छोटी मोटी पूंजीसे कारवार करनेकी अपेक्षा सम्मिलित धनसे कारवार करनेसे देश तथा समाजका अधिक उपकार होता है। इसीसे भारतमें बंकोंकी वृद्धि होते देखकर लोगोंको आशा हुई थी कि अब हमारे दिन फिरेंगे। परन्तु एकाएक न जाने कैसी हवा चली कि सितम्बर १९१३से आजतक ५७, ५८ बंक देखते देखते बैठ गये जिससे ८ करोड़ ९२ लाखका व्यवहार हमारे देशमें बन्द हो गया और उसीके साथ साथ एक प्रकारसे डेढ़ करोड़से ऊपर निर्धन भारतवासियोंकी दूधकी धोयी पूंजीपर पानी फिर गया। जमा किये हुए मालका लेखा जब सरकारी चुकौती होगी (liquidation) तो उसके ऊपरसे बैठेगा। इसीलिए बंकोंके बाज़ारमें आज ऐसा कुहराम पड़ा है। पूंजी देनेवालोंमें भी जहां तहां हाहाकार मचा है। बंकके कारिन्दोंपर गालिओंकी बौछार हो रही है। अवसर पाकर अपनी ग़रजके अन्धे महापुरुष भारतवासियोंके चरित्रपर लाञ्छना लगा रहे हैं। बनिये महाजन जो पुरानी लकीर पीटनेवाले हैं, वे भी बंकोंको मनमाना कोस रहे हैं। बंकके इस आपत्तिकालमें यदि मैं कुछ क्षणकेलिए उसकी जन्मकुण्डलीका पुलिन्दा खोलकर उसके ग्रहोंका विचार करूं तो आशा है कि पाठकवर्ग कुछ दूरतक मेरा साथ देंगे।

परन्तु कार्य ज़रा टेढ़ा है। बंकोंकी राहमें कितनेही खटके थे। अनेक कठिनाईयां थीं। इसलिए किसी एक घटना या कारणको उनके विनाशका हेतु मान लेना भूल होगी। विज्ञ पाठक! पहले उन सब उलझनोंपर एक दृष्टि डालिये और तब अपनी राय दीजिये।

बात यह है कि हमारे देशमें नयी चाल और नयी पद्धतिपर चलनेवालोंके मार्गमें बड़े बड़े संकट आते हैं। पर जिस पथपर चलनेसे विद्वान लोग अन्तमें लाभकी पूरी आशा दिलाते हैं और जिसका अनुसरण करनेसे हमारे देशवासियोंके अनेक प्रकारके कल्याणकी संभावना है उससे हम भला क्योंकर विमुख हो सकते हैं? हां, हम मानते हैं कि महाजनी कोठीका लेनदेन हमारे यहां सब दिनसे होता आया है और होता रहेगा, पर

Economics अर्थशास्त्र ]

विचारिये तो उसमें कितने आदमियोंका रुपया लगता है और सूदका रुपया किसके घर लौटता है? कहनेका तात्पर्य है कि यदि महाजन अपने पुरखोंका इकट्ठा किया हुआ धन सूदपर लगाते हैं तो उससे केवल उन्हींकी आयमें थोड़ीसी वृद्धि होती है, पर नये ढंगके बंक जो सहस्र और दशसहस्र परिवारकी पूंजीसे बने होते हैं, सर्वसाधारणको यह सिखलाते हैं कि अपने घरके खर्चसे उबरी हुई सम्पत्तिको हमें कौड़ी कौड़ी सहेजकर रखना चाहिए और अपने भाई बन्धुओंका कार्य निकालनेके निमित्त उसे घरकी भीत या कोनेमें गाड़कर रखनेके बदले उसे दो चार ऐसे मुखियोंके हाथ सौंप देना चाहिये जो उससे व्यवहार करके देशके व्यापार-वाणिज्यकी उन्नतिमें सहायता दें।

विचार करके देखा जाय तो इस रीतिसे कार्य करनेसे समाजका बहुत उपकार होता है। इससे असंख्य मनुष्योंको, जो पूंजीके अभावके कारण वे धन्धे और बे रोज़गार बैठे थे, धनका सहारा मिल जाता है जिससे नाना प्रकारके शिल्प-व्यवसायका काम चलने लगता है। धनसे धनकी उत्तरोत्तर वृद्धि होती है और यही देशकी सुख-समृद्धिका कारण होता है।

बंकसे केवल उधार लेनेवालोंको ही लाभ नहीं होता, उधार देनेवालोंको भी काफ़ी ब्याज मिल जाता है—वह हिसाबसे और समयपर मिल जाता है। दस आदमियोंकी देख-रेखके कारण उसके डूबनेका कम भय रहता है। इससे एक और लाभ यह होता है कि इस रीतिसे कार्य करनेवालोंको अपना व्यय कम कर कुछ बचानेका अभ्यास पड़ जाता है। एक पीढ़ी पहले जो बिलकुल टुटपुंजिये थे आज इसीके बलपर घरके भरे पूरे दिखलायी पड़ते हैं; जिनकी दुकानें बैठ गयी थीं, उनके यहां तोड़ोंकी झनकार सुन पड़ती है; जिनके कारख़ानोंमें मकड़ी जाला बुनती थी, उनके आंगनमें आज फिर चहल पहल दीखने लगी है। यह सब देख सुनकर भी, बंकोंको छोड़कर हम पुराने ढर्रेकी महाजनी कोठियोंपर, सर्व प्रकारसे कैसे संतोष कर सकते हैं।

हमारी इस सम्मतिके विरुद्ध, कदाचित कितने लोग ऐसा कहनेवाले भी मिलेंगे कि पिछले दो वर्षोंमें बंकोंके मारे हमारे ऊपर जो कुछ बीता है उसके होते हुए हमे इतना कहनेका क्योंकर साहस होता है और बंकोंके गुण गानेमें हमे क्यों लज्जा नहीं आती।

ठीक है! हम जानते हैं कि कालके कुचक्रसे हमारे यहां ऐसा समय उपस्थित हो गया है कि अब लोग बंकोंके नामपर दांत पीसने और त्योरियां बदलने लगे हैं। बंकोंके खोलनेवाले लुटेरे और डकैत कहलाने लगे हैं। उनकी नीचता और नृशंसतामें-जिसका उन्होंने लाखों विधवाओं और अनाथोंके रहे सहे कौड़ी पैसेपर हाथ फेरकर परिचय दिया है—कोई संशय न रहा है। परन्तु मेरा अभिप्राय उनके दोषोंपर परदा डालने या उनके अपराध छिपानेका नहीं है। उनके कर्मोंकेलिए उन्हें उचित पुरस्कार अभी मिलना बाक़ी है। वे कहीं भाग नहीं सकते पर सिलसे ठोकर खाकर पहाड़ सर करनेको उद्यत हो जाना बुद्धिमानी नहीं है। बंकोका उद्देश्य सब प्रकारसे लाभदायक और सराहनीय ठहरते हुए भी यदि हमें उससे घाटा पड़ता है, हानिपर हानि ही देखनेमें आती है, तो कसर उसके परिचालकोंमें है। निन्दा हमारी अज्ञानता, दुराग्रह, फूट और आपसके अविश्वासकी हो सकती है, बंकोंके सिद्धान्तकी कदापि नहीं। और सिद्धान्त यदि हमें उत्तम जचते हैं तो उनकी जड़ न खोदकर हमें अपनी अकर्मण्यता, परस्परके विरोध तथा घूस रिश्वत चोरी चंडाली आदि करनेकी आदतपर आठ आठ आंसू रोना और सिर धुनना चाहिए। यह हमारे भाग्यका खोटेपन और देशके कंगालीके लक्षण हैं कि हम बंकोंके गुरुत्वको नहीं समझ रहे हैं। नहीं तो बंक देशकी आर्थिक और औद्योगिक उन्नतिके आधार हैं। जर्मनी और जापानवाले जिन्होंने

हालमें इन अंगोंमें सबसे अधिक उन्नतिकी है, सबसे पहले बंकोंके द्वारा ही अर्थ कष्टको दूर करनेमें तत्पर हुए थे। फ्रान्स और जर्मनीके बीच १८७०-७१ में जो युद्ध हुआ था उसमें विस्मार्कको (Bismark) फ्रान्ससे हरजानेके रूपमें (war indemnity) बहुत धन प्राप्त हुआ था। यदि हमारे देशके किसी बादशाह सलामतको वह दौलत नसीब होती तो एक और चहार मीनारी इमारत खड़ी करके किसी शहरकी रौनक़ बढ़ायी जाती, पर विस्मार्कको अपनी विलक्षण राजनैतिक दूरदर्षिताकी प्रेरणासे उस अमूह धनको संचितकर "जर्मन इम्पिरीफल बंक" संस्थापन करनेकी सूझी, जिससे ५० वर्षके भीतर ही भीतर वहां सब प्रकारके शिल्प व्यवसाय पुष्ट हो गये और वह राष्ट्र ऐसा समृद्धिशाली और बलवान हो गया कि संसार उसे देखकर चकित होने लगा। यह सब सही है। पर लोग कहेंगे कि भारतवर्षमें तो बंकोंका टाट उलट गया, उनके संरक्षकोंके मुंहपर कालिख पुत गयी। अब वे पनपनेके नहीं। कुछ हो, कमसे कम हमारे यहां तो बंक ठगोंके अड्डे ही थे। अच्छा हुआ जो उनका सत्यानाश हो गया, आरम्भमें कुछ तड़क भड़क दिखलाकर वे हम लोगोंको मूंड़ लेते थे। अब न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी।

सन १८७० के पूर्ववाले बंकोंमें अब केवल एक अलाहाबाद बंक जीता है। १८७० के पीछे सात और और बंक खुले जिनमें अब चार चल रहे हैं—अलाएन्स बंक (शिमला)। अवध कमर्शल बंक, पंजाब बैंकिंग कम्पनी, पंजाब नैशनल बंक। सन १८९४ और १९०४ के बीच ५ लाखसे ऊपरकी पूंजीका कोई बंक न खुला। पर १९०४ के बाद न पूछिये। बंकोंकी ऐसी भरमार हुई कि अखबारोंके पन्ने पन्ने उनके विज्ञापनोंसे गजगजाने लगे। इनमें नाशको प्राप्त होनेमें बंक औफ वर्मा अगुआ बना। १९११ साल लगते लगते उसकी अन्त्येष्ठी क्रिया हो गयी, और जाल करनेके अभियोगमें उसके दो डाइरेक्टरों और जनरल मैनेजरको कारागार वास भुगतना पड़ा। अनन्तर बंक औफ़ इन्डियो, बंक औफ़ रंगून, और इन्डियन स्पीसी बंकका जन्म हुआ, जिसमें पिछलेका दिवाला १९१४ में निकल गया। १९०१ के बाद खुलनेवाले पुराने बंकोंमें निम्नलिखित बंक अब भी बचे हुए हैं।

१ अलाहाबाद बंक
२ अलाएन्स बंक
३ बरोदा बंक
४ रंगून बंक
५ बंगाल नैशनल बंक
६ बम्बई मर्चैन्ट्स बंक
७ सेन्ट्रल बंक
८ इन्डियन बंक
९ कराची बंक
१० नैशनल फाइनैन्सिग और कमीशन बंक
११ अवध कमर्शियल बंक
१२ पूना बंक
१३ पंजाब बैंकिंग कम्पनी—
१४ " नैशनल बंक—
१५ स्टैन्डर्ड बंक

हम कहते हैं जगतके सारे कलपुरज़ेकी चाभी तो रुपयेमें है। दुनियांकी पुकार है "भज कलदारम" और उसपर भी प्रभुकी माया ऐसी है कि किसीके पास लक्ष्मी है तो कार्यकुशलता नहीं और यदि कुछ योग्यता हुई तो धन नहीं। इस दशामें, यदि धन ऐश्वर्यवाला पुरुष अपनी सम्पत्ति, व्यवहारमें चतुर और दक्ष पुरुषोंके धन्धे रोज़गारमें उलट पुलट करनेको न दे तो उसमें सिवा तिहाईकी बढ़ती क्या होगी कि उसका ज्योंका त्यों रहना भी मुहाल हो जाय। अतः यह नियम है कि आदमी अपने समय, स्वास्थ्य और अनुभवके अनुसार चाहे स्वयं अपना रुपया व्यवहारमें

लगाये, चाहे उसका भार दूसरों पर झक मार-कर छोड़े, अपने आप काम करनेसे जहां १०) सैकड़े मिलता है वहां अपने पड़ोसी वा गांव-वालोंको सीधे २ या बंकके दलालके मार्फ़त देनेमें ६) या ४) पड़ता पड़नेपर कभी २ दे देना स्वीकार हो जाता है। और यह तो कहने सुननेकी बात है कि संसारमें लोग बहुत दिनोंतक अपने रुपये दीवारमें चुनेट दें या उन्हें रेतमें मिलाकर कुएमें भर दें और आवश्यकता पड़नेपर उसे फिर चलनी-में चाल २ निकाले और परखे तथा फिर पाताल-में उन्हें वैसे ही रख दें।

पंजाबके "बंकदा दीवाला" निकलनेके दिनसे जो गप्पे उड़ रही हैं, सब लोगोंके प्राण भय और त्रासमें औंट रहे हैं, बहुधा काम काज मन्दे पड़ गये हैं, उसमें कुछ आश्चर्य नहीं है। आश्चर्यका विषय यह है कि लोग बंकके काममें चढ़ाव उतरावको प्राकृतिक नियमके अनुकूल ज्वार भाठेकी नाईं एक सामान्य बात नहीं मान रहे हैं। आज नहीं कल, समय पाकर, लोगोंकी आंखे अवश्य खुलेंगी और तब यह बात उनके हृदयपर दृढ़ रूप जमेगी कि सब देशोंमें किसी नई संस्थाके चलानेके आरंभमें बड़ी कठिनाई पड़ती है और उसे किसी तरह पार करना ही पड़ता है। ये हमारे देशकेलिए मनगढ़न्त बात हो सकती है, क्योंकि जैसा कहनेमें आता है यह एक अन्य देश-की प्रथा कदाचित बलात यहां चलाई गई है। पर विदेशोंमें तो यह एक पुरानी बात हो रही है और उससे हमे यथोचित शिक्षा और ढाढ़स भी मिल सकती है। इस प्रकार पश्चिमी आर्थिक इतिहासका दिग्दर्शण करते हुए जान पड़ता है कि जैसे अर्थ कष्टको भूचालसे १६१४ सितम्बर माससे लेकर आजतक हमारे देशमें सब सुख सम्पत्तिके साज छिन्न भिन्न हो गये हैं वैसी भूचालें वहां कितनी ही आईं और ठंडी पड़ गईं तिसपर भी वहां बंकोंकी नोव दिन प्रति दिन सुदृढ़ होती जाती है। उदाहरणकेलिए नीचे दी हुई सूची देखिये। पश्चिमी देशोंमें आर्थिक और व्यापारिक टोटे कितने वार आये हैं।

| | | |
|---|---|---|
| (१) | सन् | १८२५ |
| (२) | " | १८३६ |
| (३) | " | १८४७ |
| (४) | " | १८५७ |
| (५) | " | १८६६ |
| (६) | " | १८७४ |
| (७) | " | १८८५ |
| (८) | " | १८९३ |
| (९) | " | १९०७ |
| (१०) | " | १९१३ |

अर्थात औसत ६ सालमें एक बार। ऐसे अर्थ-कष्टके पहले ही टोटेसे हम लोगोंको इतना हलचल कभी नहीं मचाना चाहिये था, और न हमें इतना हताश होना ही था कि हम चिल्ला चिल्ला सैकड़ों वर्ष आगेकेलिए भविष्यतकी घोषणा करने लगें कि भारतमें बंकका सिक्का नहीं जमनेका। पर इसमें हमारा इतना दोष नहीं, हम अपने चित्तके भयसे ही नहीं घबराये हुए हैं। समय समयपर बाहरसे हमारे मित्रों और शुभचिंतकोंकी मंडली जिसमें रूसी चीनी, जर्मन, अंग्रेज़, देश देशान्तरके कोठीवाले और दलाल सभी सम्मिलित हैं 'निष्पक्ष भावसे" परामर्शके बहाने हमारे ऊपर मंत्र पढ़ रहे हैं और हम निश्चेष्ट रूपसे उन्हें सुन सुनकर एक गाढ़ मोह जालमें ग्रस्त हो गये हैं। यह केवल विदेशियोंकी अवहेलना और तिरस्कारका ही फल है कि हम सब देशी उद्यमोंकी आस्थामें संदेह करने लगे हैं और मन ही मन कहने लगे हैं कि स्वदेशी कारख़ाने, स्वदेशी स्टीम कम्पनी स्वदेशी बंक निरे हिन्दुस्तानी घिसघिस है। ये चलनेके नहीं। हममें संघ नहीं है। हममें नैतिक बल नहीं है। हममें औद्योगिक कुशलता (technical skill) नहीं है ? भला काग़ज़की नाव कबतक चल सकती है।" भ्रम ! भ्रम ! महाभ्रम है अपने देशके भावी गौरवमें भरोसा रखनेवाले, जातीयतामें अचल भक्ति

रखकर अपनी जन्मभूमिके उत्थानके निमित्त बल करनेवाले, हठी, कर्मवीर यह झाड़ फूक सुननेवाले नहीं। हमारे गोरे शुभचिन्तकोंकी बातोंकी सत्यता हम तब मानते जब गोरोंकी अध्यक्षतामें चलायी हुई संस्थायें कभी न टूटतीं या निर्बल पड़ती, पर यह तो एक निरी झूटी बात है। हमारे देशी बंकोंका जब घुटना भी नहीं लगा था उस समय कितनेही विलायती बंकोंके अंजर पंजर ढीले हो गये थे।

(असमाप्त)

---

## गुरुदेवकी यात्रा

[ अनु० महावीरप्रसाद, बी. एस-सी. एल-टी. ]

गतांङ्कसे सम्मिलित

अब हम लोग लंडनमें रहने लगे, प्रयोगशाला मैदाघ्राटोमें स्थापित-की गयी और बचावकेलिए पौदे रीजेंट पार्कके विक्टोरिया रीजिया हौसमें रखे गये। अब केवल इस कठिनाईका सामना करना था कि वैज्ञानिक संसारको भारत-वर्षमें की गयी परीक्षाओंके बिलकुल नये परिणामोंका विश्वास कैसे कराया जाय, क्योंकि ऐसे परिणामों-से, जो अबतक किसीकी कल्पनामें भी नहीं आये थे, जीवनके रहस्य और कार्य्य प्रणाली सम्बन्धी विचारोंमें भी बहुत कुछ उलट फेर हो जाता। बाहरी संसारको इस रहस्यका बहुत कम ज्ञान है कि गुरुजी निरैन्द्रिक पदार्थोंका भौतिक अनुशीलन करते करते निरैन्द्रिक और जीवित पदार्थोंके resp-onse प्रतिस्पन्दनके विस्तृत क्षेत्रमें कैसे पहुंच गये। इसका इतिहास भी वर्तमान कालकी वैज्ञानिक उन्नतिमें बड़ा भारी सहायक होगा।

### बाल्यावस्थामें कैसा प्रभाव पड़ा ?

जिन प्रभावोंमें गुरूजीकी बाल्यावस्था ढली और जिनके कारण उनकी वैज्ञानिक प्रवृत्ति पीछे स्थिर हुई उनका पता लगाना भी कम रोचक नहीं है। इस सम्बन्धमें जो कुछ सामग्री इकट्ठी की गयी है उसका अधिकांश गुरूजीके कुटुम्बके पुराने लोगोंसे प्राप्त हुआ है। गुरूजीके जीवनपर सबसे अधिक प्रभाव उनके पिता श्रीयुत भगवानचंद्र बसुका पड़ा जो नाना प्रकारके कर्तव्य कर्म्ममें लगे रहते थे और जिनके सदाचारमें बहुतही बड़ा बल था। यह फ़रीदपुरमें सब डिवीज़नल अफ़सर थे। यह स्थान उस समय साहसी डाकुओंकेलिए विख्यात था। इन्होंने अकेले ही मुखियाको पकड़वाकर जेल भेज दिया। जब वह जेलसे छूटकर लौटा इन्हींके पास आया और कहने लगा "अब मैं पुराना व्यवसाय करनेमें असमर्थ हूं और एक बार जेल हो आनेके कारण मुझे कोई नौकर भी नहीं रखता जिससे धर्म्मपूर्वक जीवन निर्वाह हो सके"। यह सुनकर इनको करुणा आ गयी और नियमके प्रतिकूल उसको अपनेही यहां नौकर रख लिया। यही डाकुओंका पूर्व मुखिया गुरूजीको पाठशाला ले जाया करता था। मार्गमें वह अपने साहसके कामोंका, जोखिमका, बहुत सी लड़ाइयों-का, धरपकड़का, अपने साथियोंकी मृत्युका और अपने बाल बाल बच जानेका वर्णन करता था। वह उन चोटोंके चिन्होंको भी दिखलाता था जिनसे उसका सारा शरीर ढका हुआ था और जिस प्रकार उसकी जांघमें बरछीके घावका एक चिन्ह हो गया था और छातीमें तीर घुस जानेसे जो भद्दा चिन्ह हो गया था उनका पूरा पूरा वृत्तान्त वह गुरूजीको सुनाया करता था।

गुरूजी पहले पहल देहाती पाठशालामें पढ़नेको भेजे गये थे, यद्यपि इनके पिताजीके अधीन काम करनेवालोंके लड़के अधिक भड़कीले अंग्रेज़ी स्कूलोंमें भेजे जाते थे। गुरूजीके पिता हर प्रकार-के दम्भसे घृणा करते थे परन्तु सबसे घृणित वह ऐसे विचारोंको समझते थे जिनके कारण थोड़ेसे भाग्यशाली लोग सर्वसाधारणसे अलग रहना पसन्द करते हैं। देहाती पाठशालामें गुरूजीके साथी ऐसे लड़के थे जिनके माता पिता

General साधारण ]

मेहनत मदूज़री करके अपने कुटुम्बका पालन करते थे। मछुवाहोंके लड़कोंसे गुरूजी उन अपूर्व जीवधारियोंकी अद्भुत कहानियां सुनते थे जो नदी, तालाबों और गड्ढोंमें पाये जाते हैं। नदीमें बहुधा बाढ़ आया करती थी और बहुतसे अद्भुत प्राणियोंको गुरूजीके घरके सामनेही छोड़ जाती थी। बाल-गुरूके चित्तमें नाना प्रकारके प्रश्न उठा करते थे और जब उनके पिता थके मांदे दफ़्तरसे घर आते थे उनको अपने पुत्रके उन प्रश्नोंका उत्तर देना पड़ता था जो प्राकृतिक दृश्योंके-कारण जाननेकेलिए उत्पन्न होते थे। पिता भी बड़ा धैर्य दिखलाते थे क्योंकि पुत्रके प्रश्न बहुत रात बीत जानेपर भी नहीं ख़तम हो पाते थे। तब गुरुजीकी दादी (पितामही) एक छड़ी लिये हुए आती थीं और गुरुजीको डांटतीं कि अपने प्रश्न ख़तम करें और उनके पुत्रको कुछ विश्राम करने दें।

यह तो प्रकृतिकेलिए उत्कट प्रेमका आरम्भ ही था जिसमें बालगुरु मग्न हो गये थे। बहुत पीछे उनका यह स्वभाव पड़ गया कि कभी तो वह मध्य भारतके मैदानमें यह जाननेको जा रहे हैं कि भेड़िया हिरनोंका शिकार कैसे करते हैं और कभी हिमालयकी तराईमें उस रास्तेको ढूंढ़ते ढूंढ़ते जा रहे हैं जो बड़े बड़े अजगरोंके चलनेसे दबी हुई घाससे मालूम होता था और कभी कभी आसामके बिकट जंगलोंमें पेड़ोंकी चोटियोंपरसे अरने भैंसों, गैंडों और चीतोंको देख देखकर आनन्द उठा रहे हैं।

बाल्यावस्थामें अपने गांवका पूरा पूरा हाल जाननेका प्रेम बढ़नेपर कुल भारतवर्षके जाननेकी इच्छामें बदल गया, जिसका यह परिणाम हुआ कि उत्तरकी हिमाच्छादित चोटियोंसे लेकर दक्षिणमें रामेश्वरतकके बीच कोई ऐतिहासिक स्थान ऐसा नहीं बचा जिसको उन्होंने न देखा हो। प्राचीन बौद्ध कालीन चट्टानमें खुदे हुए मन्दिरों, अशोकके शिलालेखों, प्राचीन विश्वविद्यालयोंके ढूहों, हिमालयकी बर्फ़की नदियों, सांचीके स्तूपों, तक्षशिलाके खुदानों, राजगिरके ढूहों और ऐसे ही और बहुतसे स्थानोंमें गुरुजी बार बार गये, यहांतक कि उनको यह अनुभव हो गया कि सभ्यताके उदयकालसे वर्तमान समयतकका भारतवर्ष श्रेणीबद्ध इतिहासके द्वारा एक है।

मातृभाषाके साहित्यके द्वारा उनको बचपनमें ही रामायण और महाभारतके इतिहासका ज्ञान हो गया था और उनका आदर्श वीर वह नहीं था जिसने युद्धमें सफलता प्राप्त की थी वरन् तिरस्कृत कर्ण था जिसने अन्तिम युद्धमें भी जिसमें उसके हार जीतकी, जीवन मरणकी, परीक्षा होती उन दिव्य अस्त्रोंको दानमें दे दिया जो उसको अवश्य विजयी करते, क्योंकि वह ऐसे किसी बलसे लाभ नहीं उठाना चाहता था जो उसका ख़ास न हो और ऐसे किसी मार्गको वह नहीं ग्रहण करना चाहता था जो सीधा न हो। जितने तिरस्कृत हैं उन सबकेलिए यही नियम लागू है कि जो कुछ बुरे दिन आनेके कारण हाथसे निकल गया है वह अपने ही बल और अपनी ही सत्यनिष्ठासे फिर प्राप्त किया जा सकता है।

गुरुजीका जीवन जिन प्रभावोंमें विशेष ढला है वह यह हैं :-अज्ञातके जाननेका साहस, असीम सफल वा असफल होनेमें उदासीनता, प्रकृतिके रहस्योंके जाननेका उत्कट प्रेम, हर एक बातका कारण ढूंढ़ निकालनेकी तृप्त न होनेवाली इच्छा, जातीय ग्रन्थोंके उच्च आदर्शोंमें प्रगाढ़ भक्ति और अपने देशके ज्ञान सम्बन्धी पुनरुत्थानका दृढ़ और जीवित विश्वास।

### प्रेसीडेन्सी कालेजके आविष्कार

अब मैं गुरुजीके प्रारम्भिक जीवनकी दूसरी अवस्थाका वर्णन करना चाहता हूं जब वह इंगलैंड-से लौट आये थे और १८८५ ई० में प्रेसीडेन्सी कालेजमें प्रायोगिक भौतिक विज्ञानके अध्यापक नियत किये गये। उस समय यहां कोई प्रयोग-शाला नहीं थी। काले तख़्तेपर चित्र खींचकर

प्रयोग अधिकतर समझाये जाते थे। भिन्न भिन्न अविष्कारोंके इतिहासपर व्याख्यान देनेकी तैयारी करते समय उनके चित्तमें यह विचार उत्पन्न हुआ कि अर्वाचीन विज्ञानके अभ्युत्थानमें इंगलैंड, फ्रान्स, जर्मनी, इटली, हालैंड, अमेरिका और रूसतकने कुछ काम किया है परन्तु मेरे देशका नाम मानवजातिके इन प्रयत्नोंमें कहीं नहीं आता। यह विचार कि भारतवर्ष भी वैज्ञानिक उन्नतिमें कभी कुछ योग देगा शेख़चिल्लीकी भी कल्पनाके बाहर समझा जाता था। जहां कोई प्रयोगशाला नहीं, जहां मौक़ेपर नये और विशेष प्रकारके यंत्र बनानेवाले नहीं जिनकेद्वारा प्रकृतिकी अज्ञात घटनाओंका ज्ञान हो सके वहां यह कैसे सम्भव हो सकता था। गुरुजीने इन सब बाधाओंको समझते हुए हिन्दुस्तानी मिस्त्रियोंको यन्त्र बनाना सिखलाया और इन्हींकी सहायतासे वैज्ञानिक खोजोंकेलिए कुछ बहुत ही आवश्यक यन्त्र बनवा सके। इस प्रकार दस वर्षके निरन्तर परिश्रम और उद्योगसे १८९४ ई० में वह अपने विचारोंको केवल खोजमें लगाये रखनेके योग्य हो गये। इसके तीन मासके पश्चात उन्होंने एक ऐसे यन्त्रका आविष्कार करलिया जिससे विद्युत-चुम्बकीय-विकिरण संबंधी खोज कर सकते थे और जिससे द्विवर्तक स्फटिकके द्वारा विद्युत-रश्मिका ध्रुवीभवन भी देखा जा सकता था। यह परिणाम ऐसे महत्वके थे कि लार्ड केल्विन अक्षरशः आश्चर्य और प्रशंसा किये बिना न रह सके। गुरुजीका दूसरा काम कई प्रकारके अपारदर्शक पदार्थोंमें अदृश्य विकिरणको वक्रांश संख्याओंकी खोजका था। यह रायल सोसाइटीको भी मान्य हुआ जिसने इसे प्रकाशित कर दिया और उसके अधिकारमें पार्लियामेंटसे दिया गया जो धन था उससे गुरुजीको सहायता पहुंचाकर अपनी गुण-ग्राहकता प्रकट की। यह १८९५की बात है। दूसरे हो वर्षमें गवर्मेंटने गुरुजीको अपनी वैज्ञानिक खोजोंका प्रचार करनेकेलिए युरोप भेजा जिसकी सफलता लंडनकी रायल सोसाइटी, पेरिसकी एकेडमी ओफ़ सायन्स, और बर्लिनके विश्वविद्यालयमें भली भांति प्रसिद्ध है।

सूक्ष्मसे सूक्ष्म विद्युत्-तरंगोंको मालूम करनेकेलिए यन्त्र बनानेके प्रयत्नमें उनको यह पता लगा कि प्रारम्भिक ग्राहकोंके ( receiver ) द्वारा यदि कुछ निश्चित नहीं हो सकता तो इसका कारण यन्त्रकी श्रान्ति है और यह श्रान्ति उसी प्रकारकी है जैसी जीवधारियोंकी स्नायुमें होती है। वह बहुत जल्द अपने यन्त्रकी श्रान्तिके दूर करनेमें समर्थ हुए। कुछ औषधियोंके प्रयोगसे उनका यन्त्र सूक्ष्मातिसूक्ष्म तरंगोंको ग्रहण करनेके योग्य हो गया। कुछ ओषधियां ऐसी भी पायी गयीं जिनके प्रयोगसे यन्त्रकी ग्रहण-शक्ति मन्द पड़ जाती थी अथवा बिल्कुल दब जाती थी। इन्हीं प्रसिद्ध गवेषणाओंकी जानकारी करानेके हेतु वह दूसरी बार पेरिसके कांग्रेसमें भेजे गये थे। इससे लोगोंमें बड़ी भारी उत्सुकता उत्पन्न हो गयी थी। खोजोंकी कल्पना बड़ी हो प्रबल समझ पड़ी परन्तु परिणामोंपर पूरा पूरा विश्वास नहीं किया गया क्योंकि सिद्ध करनेकी रीतियां बिल्कुल नयी थीं। शरीर-धर्म्म-वेत्ता जीवधारियोंकी नाड़ी और स्नायुकी धड़कन दूसरी ही रीतिसे जांचते थे। उनके मतसे जीवित तन्तु किसी उत्तेजकके प्रभावसे विद्युद्धारा उत्पन्न कर देते थे और यही धारा जीवनका चिन्ह समझी जाती थी क्योंकि तंतुओंकी मृत्युके पश्चात विद्युद्धारा भी रुक जाती थी। गुरुजीने इसी रीतिसे अपनी खोजोंको सिद्ध करनेकी ठानी जो शरीर धर्म्म-वेत्ताओंको भी मान्य थीं और सिद्ध करके दिखा दिया कि धातुओंसे भी विद्युद्धारा पैदा होता है जो उत्तेजकोंके प्रभावसे बढ़ता और विषोंके प्रभावसे रुक जाता है। १० वीं मई १९०१के प्रसिद्ध व्याख्यानमें जो रायल इन्स्टीट्यूशनमें दिया गया था उन्होंने जीवित और अजीवितके धक्कोंके स्वतः अंकित लेखनोंको साथ हो साथ दिखलाया और कहा :—

"यह लेखन एक दूसरेसे कितना मिलते

जुलते हैं! यह एक दूसरेके इतना सदृश हैं कि कोई इन दोनोंमें भेद नहीं बतला सकता। एकमें धक्कोंकी मन्दी और तेज़ी उसी प्रकार होती है जैसी दूसरेमें। यह हम लोगोंने देख लिया कि जीवित और अजीवित दोनोंमें उत्तेजकोंके प्रयोगसे धक्के बढ़ जाते हैं, श्रान्तिसे डूब जाते हैं और विषोंसे बिलकुल रुक जाते हैं। ऐसी घटनाओंको देखते हुए हम यह कैसे कह सकते हैं कि भौतिक क्रियाएं इस सीमातक रहती हैं और इसके बाद शरीर धर्म्म सम्बन्धी क्रियाएं आरम्भ हो जाती हैं। ऐसी कोई सीमा नहीं निर्धारितकी जा सकती।

क्या यह दोनों प्रकारके लेख यह नहीं बतलाते कि पदार्थोंके कुछ गुण नित्य हैं और सबमें वर्तमान हैं! क्या इनसे यह नहीं प्रकट होता कि जीवितमें जो स्पन्दन क्रियाएं देखी जाती हैं वह अजीवितमें भी सिद्ध हो रही हैं अर्थात शरीर-धर्म्म सम्बन्धी क्रियाएं भौतिक क्रियाओंके ही भेद हैं और इन दोनों क्रियाओंमें एकसा और अटूट नियम काम कर रहा है? यदि ऐसा ही है तो हम लोगोंको उन सब रहस्योंकी खोजमें नये उत्साहसे लग जाना चाहिए जो अबतक हमको धोखेमें डाले हुए थे क्योंकि विज्ञानकी प्रत्येक सीढ़ी उन बातोंको लेकर बनायी गयी है जो पहले पहल विरुद्ध और असम्बद्ध प्रतीत होती थीं। विज्ञानका प्रवाह प्रत्यक्ष बहुत्वमें अप्रत्यक्ष एकत्वका स्पष्टतापूर्वक अनुभव करनेकी ओर सदैव रहा है।"

निरैन्द्रिक पदार्थों और जीवधारियोंके बीच वनस्पतिवर्ग है। गुरूजी अपने आविष्कारके द्वारा यह अटूट क्रमबद्धता सिद्ध कर देनेके योग्य हो गये कि साधारण पौदे जिनको लोग अचेतन समझते हैं सचेतन हैं और इनमें विद्युत-प्रतिस्पन्दन वैसा ही होता है जैसा जीवधारियोंमें! इसी रहस्यका प्रायोगिक प्रमाण गुरूजी ने रायल सोसाइटीके सामने १९०१ की ६ जूनको दिया। इससे सर जान बरडेन सैन्डरसनके प्रतिवादोंका पूर्णतया खंडन हो गया। यह महाशय प्रमुख शरीर-धर्म-वेत्ता थे और इनका मत यह था कि साधारण पौदे अचेतन होते हैं क्योंकि विद्युत् प्रति-स्पन्दन इनमें कुछ भी नहीं होता। और यदि कुछ सचेतन पौदे जैसे dionaea में प्रतिस्पन्दन होता भी है तो जीवधारियोंके प्रति-स्पन्दनके बिलकुल प्रतिकूल जिससे वनस्पति वर्ग और जीवधारियोंकी क्रियाओंमें कोई क्रमगत सम्बन्ध नहीं है। जब गुरूजीके परिणामोंसे बरडेन सैन्डरसनके सिद्धांत खंड खंड हो गये तब वह और उनके अनुयायी इन सिद्धान्तोंको कुछ द्वेष भावसे देखने लगे। शरीर-धर्म-वेत्ताओंने यह प्रतिवाद किया कि भौतिक विज्ञान वेत्ताको उन बातोंमें कुछ भी अधिकार नहीं है जो केवल शरीर धर्मवेत्ताओंके विचारकी हैं। इन सब प्रतिवादोंके कारण गुरूजीका छपा हुआ व्याख्यान भी प्रकाशित नहीं होने पाया। परन्तु ८ मास पश्चात एक और सोसाइटीके मुखपत्रमें एक निबंध निकला जिसका तात्पर्य्य ठीक वही था जो गुरूजीके व्याख्यानका परन्तु आश्चर्य यह कि गुरूजीका नामतक नहीं लिखा गया था। यह साहित्य चोरी खुल गयी जिससे बहुत कुछ नीरसता फैली।

गुरूजीका विचार पहले यह था कि शरीर-धर्म वेत्ताओंको यह नये सिद्धान्त सौंपकर विद्युत् सम्बन्धी उन बहुत सी नयी खोजोंकी ओर फिरें जो अभीतक पूर्ण नहीं हो पायी थीं। इनमेंसे कुछ वास्तवमें बड़ी कामकी और महत्वकी थीं जैसे बेतारका समाचार ग्रहण करनेकेलिए स्फटिकका सूक्ष्मातिसूक्ष्म सुग्राहक। इसके अतिरिक्त कई उत्तेजकोंके प्रयोगसे वह इसकी सचेतनता (sensitiveness) असाधारण दर्जेतक बढ़ा सकते थे। इसकेद्वारा (space) देशमें समाचार भेजनेका साधारण ढंग बहुत विस्तृत हो गया। एक बहुत ही प्रभावशाली समिति गुरूजीसे पेटेन्ट प्राप्त करनेकीबड़ी फ़िक्रमें थी। इस प्रकार एक और भौतिक

विज्ञानमें सफलता और उच्च अभिज्ञा प्राप्त करनेमें कोई सन्देह नहीं था, और दूसरी ओर शरीरधर्म विज्ञानके क्षेत्रमें अकेले ही उस समयके प्रमुखोंके विरुद्ध डटे रहनेमें दृढ़ निश्चय था। इस क्षेत्रमें आनेकेलिए सफलताकी दृढ़ आशाने उनके चित्तको इस ओर नहीं खींच लिया था वरन् अकेले ही कठिनाइयोंका सामना करनेके साहसने उनको भिड़ा दिया था। इसी साहससे उन्होंने ऐसे कार्यको हाथमें लिया था जो कई वर्षतक उनके बलकी परीक्षा लेता रहा।

शरीरधर्मवेत्ता साधारणतः गुरूजीके विरुद्ध डटे हुए थे जैसा पहले वर्णन किया गया है। इसके अतिरिक्त लोगोंमें यह ख्याल घुस गया था कि विचार क्षेत्रमें अपनी कल्पनाकी प्रौढ़ताके कारण पूरबी मनुष्य सम्भवतः बहुत कुछ धोखेमें पड़ सकता है चाहे प्रत्यक्ष प्रमाण प्रतिकूल ही क्यों न हों। इसलिए इंगलैंड पहुंचनेपर गुरूजीको सबसे बड़ी कठिनाई यही पड़ी कि वह किसी तरह वहांके लोगोंका यह अंध विश्वास किसी प्रकार दूर करें और एक ऐसा स्थान ढूढ़ें जहाँ जीव-विज्ञान वेत्ताओंके सन्मुख व्याख्यान दिये जा सकें। भौतिक विज्ञान-वेत्ताओंमें उनकी प्रशंसा करनेवाले बहुत से थे। परन्तु जीव-विज्ञानमें विशेषज्ञ न होनेके कारण इस सम्बन्धमें उनकी बातका सुननेवाला कोई नहीं था।

अब वर्त्तमान यात्राका वर्णन लिखता हूँ।

### आक्स फ़ोर्ड

परलोकगत सर जान बर्डन सैन्डरसन् और उनके अनुयायी आक्सफ़ोर्डमें जीव-विज्ञान-वेत्ताओंमें मुखिया थे। गुरूजीकी अभिलाषा यह थी कि अपने प्रतिवादियोंका सामना उन्हींके केन्द्र आक्सफ़ोर्डमें करें। सौभाग्यसे विश्वविद्यालयका शेरार्डीय अध्यापक ऐसा मिला जो न्याय पूर्वक निपटारा करना चाहता था। इसलिए उसने गुरूजीको वानस्पतीय प्रयोगशालामें व्याख्यान देनेकेलिए निमन्त्रित किया, जहाँ उस नगरके प्रमुख शारीरधर्मविज्ञान वेत्ता भी व्याख्यान सुनने और पीछेसे वादाविवादमें पूरी तरह सम्मिलित होनेकेलिए बुलाये गये।

व्याख्यानकी तिथि २० मई १६१४ नियत हुई। हमारे दुर्भाग्यसे उस दिन ऐसी सर्दी पड़ने लगी मानों जाड़ेका दिन था। हम लोगोंकी चिन्ता पौदोंकेलिए थी क्योंकि रीजेन्ट पार्कके तापभवनसे निकालकर आक्सफ़ोर्ड ले आनेमें रेलमें दो घंटेकी यात्रा करनी पढ़ती थी। जब हम आक्सफ़ोर्डके पास पहुंचे तापक्रम और भी गिर गया और यह भय होने लगा कि पौदे असाधारण सर्दीसे शायद इतना ठिठुर जाँय कि सचेत न हो सकें। जैसे ही हम बानस्पतीय प्रयोगशालामें पहुंचे पौदोंको तापभवनमें इस आशासे रख दिया कि व्याख्यानका समय आनेपर यह सचेत हो जायंगे।

व्याख्यानशाला तुरन्त बड़े बड़े विद्वान और अध्यापकोंसे खचाखच भर गया। उनमें बहुतसे ऐसे विशेषज्ञ भी थे जो आक्सफ़ोर्डके प्रसिद्ध शारीरधर्म वैज्ञानिक प्रयोगशालामें बड़े महत्वकी गवेषणाओंमें लगे हुए थे।

गुरूजी ने व्याख्यान आरम्भ करते समय कहा कि जीवनकी मुख्य प्रतिक्रियाओंके सम्बन्धमें बहुतसे सिद्धान्त हैं और उसमेंसे कितने ही एक दूसरेके प्रतिकूल हैं। बनस्पति लोकमें और कोई साक्ष्य इतना निश्चयात्मक न होगी जितना स्वयम पौदोंकी। अब हम कौन सी तरकीब करें कि पौदे अपने आन्तरिक जीवनका अनुभव स्वयम् लिख दें जिस यन्त्रसे यह सम्भव है वह resonan recorder अनुकम्पन लेखक है जिसके अंग प्रत्यंग मेजिक लालटेन द्वारा आश्चर्यान्वित दर्शकोंको दिखलाये गये। यंत्र अब समय सूचित करने लगा जिससे पौदेका perception time प्रत्यक्षीकरण समय एक सेकंडके सहस्रवें अंशतक नापा जा सकता था और उसके स्नायविक धक्केका वेग भी नापा जा सकता था। दूसरा यन्त्र oscillating

recorder कम्पन लेखक बन चांडालकी एक पत्ती-से जोड़कर चलाया गया जो सौभाग्यसे इतनी देरमें अपनी अचेत दशासे सचेत हो गया था। जब हमारा भारतीय पौदा अपने स्वतः प्रवृत-स्पन्दन सारे दर्शकोंके सामने अंकित करने लगा (यह स्पन्दनठीक वैसे ही थे जैसे प्राणधारियोंके हृदय-स्पन्दन) तब दर्शकोंके उत्साहकी सीमा न रही। जब यह दिखलाया गया कि उन ओषधियोंका जो मनुष्यके हृदय-स्पन्दनको रोक देती हैं वा रुके हुए स्पन्दनको चला देती हैं बनचांडालकी स्पन्दित पत्तियोंपर भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है तब चारों ओरसे कमरा करतलध्वनिसे गूंजने लगा और बड़े-से बड़े संशयवादियोंके मुखसे भी यही शब्द निकलने लगे कि "सारा जीव एक है"।

इस प्रकार विजय प्राप्त हुई और अबतक जो हमारे कट्टर विरोधी थे इस समयसे सच्चे मित्र हो गये।

---

## हिन्दू ज्योतिष

[ ले० पीतमलाल गुप्त, एम. एस-सी. ]

हिन्दू समाजमें प्रत्येक बच्चेका नाम-करण संस्कार होता है और नाम-के साथ ही यह भी बताया जाता है कि इस बच्चेका जन्म अमुक नक्षत्रके अमुक चरणमें हुआ और उसकी नामराशि अमुक है।

प्रिय पाठक! यहांपर प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह राशि, नक्षत्र, और चरण क्या वस्तु हैं और इनके क्या अर्थ हैं?

आजकलके ज्योतिषी प्रायः इस प्रश्नका उत्तर अंडबंड देते हैं और शीघ्रबोधसे (क्योंकि शीघ्र-बोधको पढ़ना ही आजकल ज्योतिषी बन जाना है) अनेक श्लोक सुनाकर कह देते हैं कि राशि इत्यादि ऐसी वस्तुएं हैं जिनके बिना ज्योतिषमें तनिक भी नहीं चल सकते और प्रत्येक मनुष्यके जीवनपर उसके जन्मदिनकी राशि नक्षत्र इत्यादि-का बहुत प्रभाव पड़ता है। मामूली मनुष्यकेलिए, जिसने कुछ विद्या प्राप्त नहीं की, जिसके हृदय और मनमें सहस्त्रों वर्षोंके अंधकारके संस्कार पड़े हुए हैं, यह तथा ऐसा उत्तर संतोषजनक हो जाते हैं और वह सत्य मनसे अपने पंडितों और पूजनीय पूर्वजोंकी प्रशंसा कर अपने मनमें आनन्द मनाता है। परन्तु क्या यह उत्तर एक ऐसे पुरुषकेलिए पर्याप्त है जिसके मनमें विद्याका सूर्य्य प्रकाशित है और जो अपने प्रश्नके समाधान-केलिए प्रत्येक विद्वान् और प्रत्येक आर्ष ग्रन्थकी सम्मतिकी खोजमें लगा रहता है और जबतक संतोषजनक उत्तर नहीं मिल जाता वह शान्त नहीं होता है।

Astronomy ज्योतिष ]

पाठकगण! मेरी सम्मतिमें हमारे पूर्वज इतने विद्वान्, पवित्र हृदय, पवित्रात्मा, और पुरुषार्थी थे कि उन्होंने प्रत्येक वैज्ञानिक सिद्धान्तके मर्मको जाना, और जानकर उनका प्रत्येक दिनके जीवन-में उपयोग किया, जिससे वे सिद्धान्त अत्यन्त सरलतासे सर्वसाधारणतक पहुंचें और उनको लाभ पहुंचावें।

### राशि, नक्षत्र, और चरण

हम प्रत्येक दिन देखते हैं कि सूर्य्य पूर्व दिशा-में प्रातःकाल उदय होता है और संध्याकालमें पश्चिममें अस्त हो जाता है। इससे हम कहते हैं कि सूर्य्य रात दिनके ८ पहरमें पृथ्वीकी एक परि-क्रमा करता है। परन्तु यदि हम विचार करें तो ज्ञात होगा कि सूर्य्यकी यह गति अवास्तविक (apparent) है और वास्तवमें पृथ्वी अपनी कीलीपर ८ पहर अर्थात् दिन रातमें एक बार घूमती है और इसी कारण दिन रात होते हैं। उदाहरणार्थ एक दीपक ले लीजिये और उससे थोड़ी दूरीपर एक गेंद रखिये तो आप देखेंगे कि आधी गेंद प्रकाशित है और आधी अप्रका-शित। जो भाग दीपककी ओर है उसीपर दीपकका प्रकाश पड़ता है। ठीक इसी प्रकार

recorder कम्पन लेखक बन चांडालकी एक पत्ती-से जोड़कर चलाया गया जो सौभाग्यसे इतनी देरमें अपनी अचेत दशासे सचेत हो गया था। जब हमारा भारतीय पौदा अपने स्वतः प्रवृत-स्पन्दन सारे दर्शकोंके सामने अंकित करने लगा (यह स्पन्दनठीक वैसे ही थे जैसे प्राणधारियोंके हृदय-स्पन्दन) तब दर्शकोंके उत्साहकी सीमा न रही। जब यह दिखलाया गया कि उन ओषधियोंका जो मनुष्यके हृदय-स्पन्दनको रोक देती हैं वा रुके हुए स्पन्दनको चला देती हैं बनचांडालकी स्पन्दित पत्तियोंपर भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है तब चारों ओरसे कमरा करतलध्वनिसे गूंजने लगा और बड़े-से बड़े संशयवादियोंके मुखसे भी यही शब्द निकलने लगे कि "सारा जीव एक है"।

इस प्रकार विजय प्राप्त हुई और अबतक जो हमारे कट्टर विरोधी थे इस समयसे सच्चे मित्र हो गये।

---

## हिन्दू ज्योतिष

[ ले० पीतमलाल गुप्त, एम. एस-सी. ]

हिन्दू समाजमें प्रत्येक बच्चेका नामकरण संस्कार होता है और नामके साथ ही यह भी बताया जाता है कि इस बच्चेका जन्म अमुक नक्षत्रके अमुक चरणमें हुआ और उसकी नामराशि अमुक है।

प्रिय पाठक ! यहांपर प्रश्न उत्पन्न होता है कि यह राशि, नक्षत्र, और चरण क्या वस्तु हैं और इनके क्या अर्थ हैं ?

आजकलके ज्योतिषी प्रायः इस प्रश्नका उत्तर अंडबंड देते हैं और शीघ्रबोधसे ( क्योंकि शीघ्रबोधको पढ़ना ही आजकल ज्योतिषी बन जाना है ) अनेक श्लोक सुनाकर कह देते हैं कि राशि इत्यादि ऐसी वस्तुएं हैं जिनके विना ज्योतिषमें तनिक भी नहीं चल सकते और प्रत्येक मनुष्यके जीवनपर उसके जन्मदिनकी राशि नक्षत्र इत्यादिका बहुत प्रभाव पड़ता है। मामूली मनुष्यकेलिए, जिसने कुछ विद्या प्राप्त नहीं की, जिसके हृदय और मनमें सहस्रों वर्षोंके अंधकारके संस्कार पड़े हुए हैं, यह तथा ऐसा उत्तर संतोषजनक हो जाते हैं और वह सत्य मनसे अपने पंडितों और पूजनीय पूर्वजोंकी प्रशंसा कर अपने मनमें आनन्द मनाता है। परन्तु क्या यह उत्तर एक ऐसे पुरुषकेलिए पर्याप्त है जिसके मनमें विद्याका सूर्य्य प्रकाशित है और जो अपने प्रश्नके समाधानकेलिए प्रत्येक विद्वान् और प्रत्येक आर्ष ग्रन्थकी सम्मतिकी खोजमें लगा रहता है और जबतक संतोषजनक उत्तर नहीं मिल जाता वह शान्त नहीं होता है।

Astronomy ज्योतिष ]

पाठकगण ! मेरी सम्मतिमें हमारे पूर्वज इतने विद्वान्, पवित्र हृदय, पवित्रात्मा, और पुरुषार्थी थे कि उन्होंने प्रत्येक वैज्ञानिक सिद्धान्तके मर्मको जाना, और जानकर उनका प्रत्येक दिनके जीवनमें उपयोग किया, जिससे वे सिद्धान्त अत्यन्त सरलतासे सर्वसाधारणतक पहुंचें और उनको लाभ पहुंचावें।

### राशि, नक्षत्र, और चरण

हम प्रत्येक दिन देखते हैं कि सूर्य्य पूर्व दिशामें प्रातःकाल उदय होता है और संध्याकालमें पश्चिममें अस्त हो जाता है। इससे हम कहते हैं कि सूर्य्य रात दिनके ८ पहरमें पृथ्वीकी एक परिक्रमा करता है। परन्तु यदि हम विचार करें तो ज्ञात होगा कि सूर्य्यकी यह गति अवास्तविक ( apparent ) है और वास्तवमें पृथ्वी अपनी कीलीपर ८ पहर अर्थात् दिन रातमें एक बार घूमती है और इसी कारण दिन रात होते हैं। उदाहरणार्थ एक दीपक ले लीजिये और उससे थोड़ी दूरीपर एक गेंद रखिये तो आप देखेंगे कि आधी गेंद प्रकाशित है और आधी अप्रकाशित। जो भाग दीपककी ओर है उसीपर दीपकका प्रकाश पड़ता है। ठीक इसी प्रकार

पृथ्वीका जो भाग सूर्य्यकी ओर रहता है वह प्रकाशित रहता है अर्थात् वहां दिन होता है और जो दूसरी ओर रहता है वहां रात। धीरे धीरे पृथ्वी अपनी कीलीपर घूमती है और इस प्रकार रात दिन सम्पूर्ण पृथ्वीपर होते हैं।

पृथ्वी अपनी कीलीपर पश्चिमसे पूर्वको घूमती है। इसी कारण सूर्य्य पूर्वसे पश्चिमको ( विपरीत दिशामें ) चलता प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ मान लीजिये कि किसी स्टेशनपर दो रेलगाड़ी बराबर बराबर पटरियोंपर खड़ी हैं और अंजन विपरीत दिशाओंमें हैं। यदि एक रेलगाड़ी पूर्व दिशामें चले तो चलती हुई गाड़ीवाले मनुष्योंको दूसरी गाड़ी जो वास्तवमें स्थिर है, पश्चिम दिशामें चलती प्रतीत होगी। ठीक इसी प्रकार सूर्य्य जो स्थिर है वह चलता प्रतीत पड़ता है, और चूंकि पृथ्वी पश्चिमसे पूर्वको चलती है सूर्य्य पूर्वसे पश्चिमको चलता प्रतीत होता है।

ऊपरके उदाहरणोंसे एक बात और निकलती है। मान लो कि अ नामक रेलगाड़ी खड़ी है और ब नामक पश्चिमको जा रही है, तो किसी विशेष समयके पश्चात् अ और ब के बीचमें वही अन्तर होगा जो अन्तर उस दशामें होगा जब ब नामक रेलगाड़ीको स्थिर और अ नामक रेलगाड़ीको चलता माना जावे। दिशा अवश्य एक दूसरेके प्रतिकूल होगी। ठीक इसी तरह यदि हम सूर्य्यके स्थानमें पृथ्वीको स्थिर मान लें और सूर्य्यको पृथ्वीके स्थानमें उसी वेगसे चलता हुआ मानलें तो भी उनके बीचका अन्तर इत्यादि सब दृश्य ठीक ठीक वैसे ही होंगे जैसे सूर्य्यको स्थिर और पृथ्वीको गतिवान् मानकर होते हैं क्योंकि जहां कहीं सापेक्ष गतिपर (relative motion) विचार करना है वहांपर ऐसा माननेमें कोई हानि नहीं होती है।

इसी सिद्धान्तको मानकर सम्पूर्ण ज्योतिषकारोंने सूर्य्य और पृथ्वीके सापेक्ष गतिके सब दृश्योंकी व्याख्या सूर्य्यको गतिवान और पृथ्वीको स्थिर मानकर की है, क्योंकि इस तरह सुभीता होता है। परन्तु उसका यह भयानक परिणाम हुआ है कि आज हम देखते हैं कि मनुष्यके मनमें सूर्य्यकी स्थिरता और पृथ्वीकी गतिपर विश्वास ही नहीं आता है। कारण इसका बहुत दिनोंका अंधकार और कुसंस्कारोंका प्रभाव है।

पृथ्वी अपनी कीलीपर २४ घंटेमें एक बार घूम जाती है, परन्तु साथही साथ वह सूर्य्यके चारों ओर एक अण्डाकार वृत्तमें ३६५·२४ दिनमें एक परिक्रमा अथवा भगण ( revolution ) करती है। पृथ्वीकी इस गतिके कारण वर्षमें कई ऋतु होती हैं। इस अण्डाकार मार्गको १२ भागोंमें विभाजित किया है और प्रत्येक भागका नाम राशि है। उनकेनाम ये हैं:—( १ ) मेष ( २ ) वृष ( ३ ) मिथुन ( ४ ) कर्क (५) सिंह ( ६ ) कन्या ( ७ ) तुला ( ८ ) वृश्चिक ( ९ ) धन ( १० ) मकर ( ११ ) कुम्भ और (१२) मीन।

पृथ्वीके मार्गके १२ भागोंमेंसे प्रत्येकको राशि क्यों कहा और उनके ये नाम क्यों रखे गये। इस प्रश्नपर अब ध्यान दिलाना चाहता हूं। थोड़ी देरकेलिए मान लीजिये कि कोई मनुष्य सूर्य्यपर खड़ा हुआ पृथ्वीकी ओर देख रहा है। वह पृथ्वीको और उसके आस पासके तारागणोंको तो देख सकैगा, पर उन तारागणोंको नहीं देख सकैगा जो पृथ्वीकी आड़में होंगे। यह नीचेके चित्रसे स्पष्ट होगा। मान लो कि मनुष्य प पर खड़ा है, और ग पृथ्वी है, तो उसे पछछा शंकुमें स्थित तारे दिखाई न देंगे।

यदि ऐसे तारागण किसी समय एक विशेष आकार जैसे मेढ़ेको प्रकट करते हों तो हम कहेंगे कि पृथ्वी आजकल तारोंकी एक (राशि) समुदाय को जो मेषकी सी सूरत दिखाती है ढके हुये है। अर्थात् संक्षेपसे हम कह देते हैं कि पृथ्वी मेष राशिमें है।

इसी प्रकार ज्यों ज्यों पृथ्वी आगे बढ़ती है कुछ तारे जो पहिले पृथ्वीकी ओटमें थे दिखाई देने लगते हैं और जो दिखाई देते थे उनमेंसे कुछ

पृथ्वीसे ढकजाते हैं। कुछ दिनोंमें तारोंकी एक ऐसी राशि आजाती है जो बैलकी (वृष) सूरत प्रकट करती है। इस प्रकार पृथ्वीके भ्रमण पथमें वर्ष भरमें तारागणोंकी बारह आकृतियां अकाशमें बनती हैं जिन्हें हम बारह राशि कहते है। राशि शब्दका अर्थ समझमें आ गया।

जब पृथ्वी एक राशिसे दूसरी राशिमें प्रवेश करती है उसको 'संक्रांति' कहते हैं। एक संक्रान्तिसे दूसरी संक्रान्तितकका समय एक मास कहलाता है ।

इस अवसरपर यह कह देना अनावश्यक न होगा कि प्रत्येक जातिके ( nation ) ज्योतिष-कारोंने पृथ्वीके मार्गके ये ही नाम रखे हैं और उनके ये ही अर्थ हैं। इससे प्रतीत होता है कि इन राशियोंका ज्ञान सबको एक दूसरेके पश्चात् एक ही स्रोतसे हुआ है। वह स्रोत अथवा ज्ञानका भण्डार हमारा भारत देश ही है।

अब हम बारह राशियोंके नाम जो कई जातियोंने रखे हैं और उनके अर्थ दिखाते हैं:—

| | हिन्दू | युवनानी | अंग्रेज़ी | अर्थ |
|---|---|---|---|---|
| १ | मेष | Aries | Ram | मेढ़ा |
| २ | वृष | Taurus | Bull | बैल |
| ३ | मिथुन | Gemini | Twines | स्त्री पुरुष |
| ४ | कर्क | Cancer | Crab | केकड़ा |
| ५ | सिंह | Lio | Lion | सिंह |
| ६ | कन्या | Virgo | Virgin | कन्या |
| ७ | तुला | Libra | Balance | तराज़ू |
| ८ | बृश्चिक | Scorpio | Scorpion | बीछू |
| ९ | धन | Sagittarius | Archer | धनुष |
| १० | मकर | Capricornus | Capricorn | मगर |
| ११ | कुम्भ | Aquarius | Water-bearer | घड़ा |
| १२ | मीन | Pisces | Fish | मछली |

### नक्षत्र

जिस प्रकार पृथ्वी सूर्य्यके चारों ओर एक अण्डाकार वृत्तमें ३६५·२४ दिनमें घूमती है उसी प्रकार चन्द्रमा पृथ्वीके चारों ओर एक अण्डाकार वृत्तमें २७·३२१६ दिन वा २७ दिन ८ घंटेमें घूम आता है। परन्तु जबतक चन्द्रमा एक परिक्रमा पूरी करता है पृथ्वी अपने मार्गमें अपने स्थानसे कुछ आगे बढ़जाती है परन्तु चन्द्रमा उसके चारों ओर घूमता ही रहता है अतएव चन्द्रमा पृथ्वीके चारों ओर अपनी परिक्रमा २९ दिन १२$\frac{3}{4}$ घंटेमें पूरी करता है। और इसलिए चन्द्रमास २९ दिन १२$\frac{3}{4}$ घंटेका होता है।

जब चन्द्रमा पृथ्वीके चारों ओर घूमता है तब बहुतसे तारे चन्द्रमाके कारण दृष्टिगोचर नहीं होते। इन सब तारोंका समुदाय भी एक विशेष आकारका होता है और उसी आकारानुसार उस समुदायका नाम रखा गया है। ज्यों ज्यों चन्द्रमा आगे बढ़ता है त्यों त्यों कुछ तारे, जो दिखाई नहीं देते थे दिखाई देने लगते हैं और कुछ जो दिखाई देते थे वे छिप जाते हैं। कुछ समयके पश्चात् तारोंका एक दूसरा समुदाय दूसरे आकारका ढक जाता है। इसी प्रकार चन्द्रमाकी एक संपूर्ण परिक्रमामें २७ तारोंके समुदाय बारी बारीसे ढक जाते हैं। इन २७ समुदायोंमेंसे प्रत्येकको नक्षत्र कहा है और प्रत्येक नक्षत्रका नाम उस समुदायके आकारानुसार रखा है।

प्रत्येक समुदायमें एक तारा बहुत बड़ा और चन्द्रमार्गके अति निकट पाया जाता है उस तारेको नक्षत्रका 'योगतारा' कहते हैं और जबतक चन्द्रमा एक नक्षत्रके मार्गको चलता है उस समयको उस नक्षत्रका 'भोग' कहते हैं।

अब हम २७ नक्षत्रोंके नाम और उनके आकार दिखाते हैं:—

| | नक्षत्र | आकार |
|---|---|---|
| १ | अश्विनी | अश्वका शीर्ष |
| २ | भरणी | योनि अथवा भगा |
| ३ | कृत्तिका | तलवार |

| | | |
|---|---|---|
| ४ | रोहिणी | एक पहियेकी गाड़ी |
| ५ | मृगशिरा | मृगका शिर |
| ६ | आर्द्रा | लाल ( Gem ) |
| ७ | पुनर्वसु | गृह |
| ८ | पुष्य | तीर |
| ९ | आश्लेषा | पहिया |
| १० | मघा | दूसरा घर |
| ११ | पूर्वा फाल्गुनी | चारपाई |
| १२ | उत्तरा फाल्गुनी | दूसरी चारपाई |
| १३ | हस्त | हाथ |
| १४ | चित्रा | मोती |
| १५ | स्वांति | सीपी |
| १६ | विशाखा | पत्तोंकी वन्दनवार |
| १७ | अनुराधा | देवपूजा |
| १८ | ज्येष्ठा | कानकी बाली |
| १९ | मूल | सिंहकी पूंछ |
| २० | पूर्वाषाढ़ | हाथीदांत |
| २१ | उत्तराषाढ़ | चौकी |
| २२ | श्रवण | विष्णुके ३ पैर |
| २३ | धनिष्ठा | एक प्रकारका डेरा |
| २४ | शतभिषा | मोतियोंका वृत्त |
| २५ | पूर्वा भाद्रपद | दूसरी चौकी |
| २६ | उत्तरा भाद्रपद | दोनों ओर मुंहवाली मूर्त्ति |
| | | भोग और चरण |
| २७ | रेवती | एक छोटा सा डेरा |

प्रत्येक नक्षत्रके भोगको, अर्थात् उस समयको जिसमें चन्द्रमा एक नक्षत्रको पार करता है, ४ समभागोंमें विभाजित किया है और प्रत्येक भाग-का नाम चरण रखा है। इस प्रकार हर एक नक्षत्र-के ४ चरण होते हैं।

## वैज्ञानिक अनुसन्धान का महत्व।

[ ले० डाक्टर हरिश्चन्द्र पी एच. डी. ]

सुप्रेरित उद्यमके सामने कुछ असम्भव नहीं हैं।

"कोई वैज्ञानिक निरूपण किसी न्याय की दृष्टिसे दैवयोगिक नहीं समझा जा सकता—"गोरे"

वर्तमान युद्धने भारतवर्ष-को अपनी आवश्यकता स्वयं ही पूर्ण करनेकेलिए जागृत कर दिया है। भारतने भली भांति अनुभव कर लिया है कि युरोपमें **विज्ञान** और उसके नित्यप्रति सुप्रेरित प्रयोगने नाना प्रकारके कला कौशलोंकी उन्नतिमें कहांतक सहायता दी है। उन्होंने आजकलकी उन्नत दशाको (१) प्राकृत्त-पदार्थ सूचित शिल्प कार्योंमें और (२) ऐसे शिल्प कार्यों-में जिनकी देशमें अधिक मांग थी और स्वाभाविक अभाव था, बहुत धैर्यपूर्वक अन्वेषणकर प्राप्त किया है। पहिलेका "सोडा" और दूसरेका शिल्प निर्मित नील उदाहरण है।

किसी शिल्पकी सहायताकेलिए किस प्रका-रसे एकके अनन्तर दूसरे उपयोगी अनुसन्धान किये गये हैं, यह नीचेके दृष्टान्तसे पूर्ण तथा ज्ञात होगा। यह बात प्रसिद्ध है कि युरोप और विशेषतः वहांके शीत प्रधान प्रदेशोंकी भूमिमें उत्पादनि-शक्ति अति न्यून थी, "लीबिग" महाशय और उन-के सहचारियोंने इस ऊसर पनका कारण भूमिके पृथक्करण-संस्कारसे जाननेका बीड़ा उठाया और उसमेंसे दोषजनक अंशोंको दूरकर लाभदायक पदार्थोंके सम्मेलन द्वारा सफलता प्राप्त की। खाँड प्रतिदिन काममें आनेवाली वस्तु है, परंन्तु गन्ने-के अभावसे यह यूरोपमें नहीं बन सकती थी। गन्ना उगानेके निमित्त, जिसकेलिए वहांकी जल वायु प्रतिकूल थी बहुत निष्फल प्रयत्न करनेके पश्चात् महानुभाव "माग्रोफ़" ने संवत १७४७ में चुकंदरसे खाँड़ बनानेकी संभावना प्रगट की, पर तु उसमें खाँड़का अंश अति न्यून होनेके कारण

उनके अनुगामियोंने चुकन्दरकी खेतीकी खूब उन्नति की और वैज्ञानिक बलसे उसमें खाँडका अंश बढ़ाकर गन्नेके अंशके अत्यन्त समीप पहुंचा दिया। तदनन्तर सहोत्पन्ननिरस पदार्थोंमेंसे "एल्कोहल," "आल्डी हाइड," "ईथर," पत्रकेलिए लुगदी, लाल रंग और खाद इत्यादि बनाये, जिनका परिणाम यह हुआ कि इस देशके चीनीके कारखानोंको इतना धक्का पहुंचा।

भारतमें शिल्पोन्नति

"जो कोई नाजके एक दाने वा घासकी एक पत्तिके स्थानमें दो दाने वा दो पत्तियां उगा सका है, वही अपने देशके सम्पूर्ण राजनीतिज्ञोंसे अधिक और सच्ची सेवा कर सकता है"—

"स्विफ्ट"

भारतवर्षमें रासायनिक शिल्पोन्नति एक आवश्यक और बड़े महत्वका प्रश्न मानकर बहुत दिनोंसे विचारपूर्वक देखी जा रही है। परन्तु आधुनिक यूरोपीय-महायुद्धरूपी विपत्तिके कारण जिससे बहुतसे आवश्यकीय व्यापार सम्बन्ध टूट गये और अत्यन्त आवश्यक रासायन निर्मित-पदार्थोंका आना सर्वथा रुक गया, हमारे भाई अपनी स्थितिको अनुभव कर समझ गये कि वह इस विषयमें कहांतक असमर्थ हैं। गवर्नमेंट और प्रजा दोनों विचार कर रही हैं कि ऐसी अभागी और शोचनीय दुर्दशाको दूर करनेकेलिए किस प्रकारसे शीघ्र प्रयत्न करने चाहियें। भारतीय गवर्नमेंन्टोंके शिल्प और वाणिज्य-विभागमें कभीसे इसकी चर्चा हो रही है। "बुराईसे भी कुछ न कुछ भलाई निकल जाती है" की कहावतके अनुसार हमें आशा करनी चाहिये कि इस घोर महायुद्धके द्वारा हमारे देशमें शिल्पका पुनर्जन्म होगा।

नाना प्रकारकी वस्तुओंके वार्षिक आवागमनकी सूची देखनेसे यह भली भाँति ज्ञात होगा कि अपनी दैनिक आवश्यकताओंकेलिए हमें युरोपीय व्यवसायियोंके मुंहकी ओर ताकना पड़ता है, और वे यहाँकी उपजपर कहाँतक निर्भर हैं। इसपर विचारवान पुरुष तुरन्त सोचने लगेगा कि ऐसी अवस्थामें यदि बुद्धिपूर्वक अपने धनका उपयोग किया जाय तो विज्ञान और शिल्पकी सहायतासे क्या क्या प्राप्त हो सकता है।

२ सितम्बर १९१४ से "कामर्स" नामक पत्रके अनुसार विदेशसे आनेवाली लगभग सब प्रकारकी वस्तुओंमेंसे "जर्मनी" ने इस देशमें "ब्रिटन" की अपेक्षा सतगुनी चीजें पहुंचाई हैं।

केवल रासायनिक प्रदार्थ ही हम विदेशसे प्रति वर्ष ४२२७३७५ मन या ४४०९८८३६ रुपयेके मंगाते हैं, जो कि इस देशकी १४९७९०८ मन ४५-१५९४४ रुपयेकी बाहर जानेवाली और उनकी अपनी आवश्यकताओंको पूर्ण करके बची हुई उपजसे निर्मित हैं। युद्धके कारण इस आवागमनके रुक जानेसे इस समय हमें आधुनिक और नूतन शिल्पकी उन्नति करने और उससे महान लाभ उठानेका अद्वितीय सुअवसर प्राप्त है, यदि हम इसे हाथसे न जाने दें।

भारतीय वर्त्तमान रसायनिक शिल्पकी अवस्था केवल थोड़ी सी सरल रासायनिक क्रियाओं, जैसे वाष्पी करण, स्त्रव करण, कशाय करण वा स्फटिक करण इत्यादितक ही सीमावद्ध है। इस देशमें कुछ शिल्पालय हैं जिनमें सुगंधी और कुछ साधारण औषधियाँ बनाई जाती हैं परन्तु उनमेंकी कई चीज़ें यूरपसे आनेके कारण वह बाहिरसे आनेवाली प्रस्तुतगंध तथा औषधियोंकी अपेक्षा अल्पमूल्यमें नहीं बन सकतीं। इसका परिणाम यह होता है कि उन वस्तुओंको यूरपसे बनी बनाई मंगवाने और उनको शीशियोंमें उलट पुलटकर स्वदेशी झंडेकी ओटमें द्विगुण मूल्यपर बेचनेकी एक अजेय इच्छा घेर लेती है, जिससे बड़े बड़े जाति सुधारक धर्मज्ञ घृणितरूपसे धर्मसे च्युत हो हो जाते हैं और उनकी सारी साहसिक शक्ति द्रव पदार्थ-

की नाई बहकर निकल जाती हैं। निर्दोष पदार्थों में मिलावट करनेका छल और निर्माण कर्त्ताओं तथा प्रबन्धकर्त्ताओंके कपटी मार्गपर चलनेका फल केवल यही नहीं हुआ कि उनके कार्यालयोंका सत्यानाश हो गया किन्तु इससे यह और घोर अत्याचार मचा कि साहूकारोंको शिल्प सम्बन्धी कार्योंमें उत्साह दिलाना भी कठिन हो गया। कुछ कार्यालय अवश्य निर्माण कर्त्ताओंके यथार्थ ज्ञान न होनेके कारण बैठ गये, परन्तु ऐसे उदाहरणोंकी भी न्यूनता नहीं है जहाँसे विचारसंख्यायुक्त अनुमान और तुरन्त निर्माण विधियां ही दर्शा देतीं कि कार्य्य हानिकारक होगा।

स्वदेशी वस्तुओंके मंहगे होनेका एक और कारण यह है कि यंत्र और बहुधा निर्माण कर्त्ता भी युरोपसे लाने पड़ते हैं। युरोपीय निर्माण विधियां और यंत्र यहांकी आकांक्षाओं और देश प्रकृतिके अनुकूल बहुत विचार और अनुभवसे ही निकाले गये हैं और वे जब इस देशमें प्रयोगार्थ लाये जाते हैं तब अवश्य कुछ न कुछ परिवर्तनकी आवश्यकता होती है—कुछ भाग यंत्रके सर्वथा अनावश्यक पाये जाते हैं और वह भाग जो भारतीय उपज तथा प्रकृतिकेलिए अत्यन्त आवश्यक हैं प्रथम तो होते ही नहीं और यदि हों तो बहुत परिवर्तनकी आवश्यकता होती है। इस प्रकारकी बातें भारतीय शिल्पोन्नतिके मार्गमें प्रायः रुकावटें डालनेवाली सिद्ध हुई है।

अतः यह प्रत्यक्ष है कि हमें प्रधान शिल्पजनक पदार्थोंको जहांतक संभव हो भारतमें बने हुए यंत्रोंसे ही बनाना चाहिये। बहुतसे रसायनिक शिल्पोंकी अवस्थामें यह कठिन भी न होगा। यंत्रोंके वे भाग, जो अभी भारत वर्षमें नहीं बन सकते यूरोपसे मंगवाये जा सकते हैं। यदि आवश्यकता हो तो इच्छित यंत्रोंका प्रथम छोटासा प्रतिरूप बनाया जा सकता है और परीक्षार्थ स्वदेशी उपजका प्रयोगकर, जबतक पूर्णतया सिद्धि प्राप्त न हो उनमें निरंतर परिवर्तन किया जाना चाहिये। स्वल्प व्ययके अतिरिक्त इस कर्त्तव्यका विद्यापर भी बहुत अच्छा प्रभाव पड़ेगा। और यह उन लोगोंके लिए जो ऐसे बड़े कार्य्यों को सिद्ध करनेकी योग्यता रखते हों दृढ़ विश्वासजनक होगा।

वैज्ञानिक और शिल्पीय अन्वेषणका गौरव।

"मायालिप्त रसायनज्ञ तो सुवर्णपर मरता है, परन्तु सच्चा ज्ञानी विज्ञानपर जो सुवर्णसे भी सहस्रगुण अधिक मूल्यवान है"। रसायन अवश्य एक अनुभवलब्ध ज्ञान है और इसका अस्तित्व पूर्ववत सर्वदा सर्वसाधारणके उपयोगके आधारपर होना चाहिये न केवल मन्तब्योंके ही वादविवादपर। शिल्पकी आकांक्षाने ही अन्वेषणकर्त्ताओंको विज्ञानकी ओर खींच लिया है; तथापि शिल्प अपने जीवनकेलिए विज्ञानका बड़ा अनुगृहीत है। केवल विज्ञानविहित अनुभवोंको भी कदापि न्यून आदरकी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिये, क्योंकि इनके प्रताप ही से वैज्ञानिकोंको कई नवीन तत्त्वों और सारे गुणोंतकका पूरा पूरा ज्ञान हो गया है जिसकी पुष्टी अनुभवसे हुई है, जैसे 'जर्म नियम" की दशामें "मैंडेलिफ़" महाशयने दर्शाया है। बहुधा विज्ञानविहित सिद्धान्त व्यवहारिक साधनोंमें भी अमूल्य सहायक सिद्ध हुए हैं। "मोंड" महाशयकी "निकल" बनानेकी विधिकी "कार्बोनिलस" की प्राथमिक अन्वेषणाओंसे, विकासका उदाहरण प्रगट होता है कि केवल विज्ञानार्थ सिद्धान्तोंका अंतिम परिणाम क्या होता है? मिश्रामिश्र धातुओंके अनुसंधानने धातुसृष्टीका पुनर्जन्म कर दिया है। विज्ञानवेत्ता "आंयर फ़ोन्वेल्शबाख़" के दुर्लभ धातुओंपर परिश्रम करनेसे प्रचंड प्रकाशके शिल्पका उद्धार हुआ, जिसपर रात्रिके सब आनन्दोत्सव निर्भर हैं और गुणानुवाद गाये जाते हैं। "ट्रान्स वाल" का आधुनिक सुवर्ण निष्कासन शिल्प "साइनाइड"के' सुवर्णपर प्रभावके अन्वेषण करनेसेही संभव हुआ है और गुरुतामें इसीके

सदृश उन्नति तान्तविक शिल्पमें "कास्टिक सोडा" के प्रभावको "सेल्यूलोस" पर नाना विध तनाव-की अवस्थाओंमें अभ्यास न करनेसे हुई है।

"जो नूतन उपायोंका प्रयोग नहीं करता वह निश्चय नूतन उपाधियां मोल लेता है; जो प्राचीन वस्तुओंका अधिक सत्कार करते हैं वे नवीनोंके-लिए तिरस्कार तुल्य हैं—"फ्रांसिस बेकन"

शिल्पीय अनुसंधानके महत्वसे उद्योगी धनाढ्य जो अपने समयके शिल्पोंके नेता रहे हैं भली भांतिपरिचित हैं। शिल्प संबंधी अन्वेषणाओं-के गुरुत्वको सिद्ध करनेकेलिए दृष्टान्तोंकी न्यूनता नहीं है-वायुस्थ "नाइट्रोजन" के स्थिर करनेके निमित्त प्रारम्भिक प्रयोगोंके परिणामसे संसारको अल्पमूल्यपर "नाइट्रिक ऐसिड" "अमोनिआ" "नाइट्राइट्स" "साइनाइड्स" और "यूरिआ" इत्यादि मिला है। शिल्पनिर्मित पट्ट कभीका वास्तविक पट्टकी अपेक्षा अल्पमूल्य और कार्य-साधक प्रतिनिधि बन विक्रय स्थानोंमें घर कर बैठा है। विज्ञानसंघटित नील और आलिज़ेरीन शिल्प आदिने तो वाणिज्य संसारमें स्पर्धाकी सीमाको उल्लंघनकर निर्भय पदवीको प्राप्त करही लिया है।

ज्ञात विषयोंमें भी अनुसंधान करना लाभ-दायक होता है। इस सम्बन्धमें "हाइड्रोजन गैस" का वाणिज्यार्थ निर्माण करनेका विषय एक दर्श-नीय उदाहरण है। जस्तेपर अम्लके आघातसे बनानेकी विधि तो अब किसी गणनामें ही नहीं रही। कहते हैं कि इसी युद्धके सययमें इसका विमानार्थ निर्माण "अलूमीनियम्" की कतरन-पर तीव्र "कास्टिक सोडा" के आघातसे किया गया था। एक और रीति जिसकी सफलताकी बड़ी सम्भावना है और जिसका प्रयोग किया भी गया है वह "कैल्सियम् कार्बाइड" का विश्लेशन है—"फ्रांक" ने "कैल्सियम् कार्बाइड" पर जल वाष्प दौड़ाने और तदनंतर "ओक्साइडस् आफ़ कार्बन" के दूरीकरणसे बनानेकी विधि सूचितकी। विद्युतशक्तिसे बनानेकी रीति आजकल बहुत प्रचलित है परन्तु लोहेकी कतरनपर जलवाष्पसे निकालनेकी विधिके भाग्य उदय होनेवाले हैं। विशेषतः जबकि अन्तिम भावी "ओक्साइड" जलवाष्प आदिके द्वारा फिर पूर्वस्थितिको प्राप्त हो जाता है और कार्य्य अविच्छिन्नतया चलता रहता है। इस महत् साफल्यके प्राप्त करनेमें आ-धुनिक रसायनिक यंत्रशास्त्र ही सुयशका अधि-कारी है। ताम्रकी धातु शुद्ध करनेके सम्बन्धमें जो कार्य्य "मोंसफ़ील्ड" में किया गया है वह भी अपने ढंगका एक ही है। लगभग साठ वर्ष हुए तब "आउगुस्टिन्" ने दर्शाया था कि यदि सूक्ष्मतया चूर्ण की हुई ताम्रखनिज लवणमें भिगोई जाय तो तदन्तर गत चांदीका "सिल्वर क्लोराइट" में परिवर्तन हो जाता है और वह उष्ण समुद्र-जलमें घुलकर निकल सकता है। इसके पश्चात् 'ज़ीयर फ़ोगेल्" ने अन्वेषण करके सिद्ध किया कि सावधानतापूर्वक उष्णता संयुक्त धोनेसे चांदी का "सिल्वर सल्फ़ेट" में परिवर्तन हो जाता है, जो "आउगुस्टिन" की विधिसे धोनेके पश्चात् ताम्रपर जमाया जा सकता है। इस विधिका "कोलोराडो" में जहां उस समयतक चांदी अदृश्य रूपमें निरर्थक व्यय करदी जाती थी बड़ा सम्मना हुआ और इसीके सौभाग्यसे आजकल "आरगो" में ७६८६८ मन "सिल्वर सल्फेट" निकाला जाता है। मान्सफील्ड" में एक और नूतन अन्वे-षण जो अन्य प्रतिवर्ष अपनी सफलताकेलिये शिल्प रसायनज्ञका ऋणी है वह ताम्रखनिजके गलानेमें उत्पन्न हुई है, वाष्पका "सल्फ्यूरिक ऐसिड" में परिवर्तन करना है। अमेरिकाकी "टेनेस्से कापर कंपनी" इसी विधिके अनुसार प्रतिवर्ष ५५५०००० मन "सल्फ्यूरिक ऐसिड" पहिले व्यर्थ जानेवाली गंधकसे निकालती है और इसके अतिरिक्त 'अनाकोंडा कंपनी" के वाश्योबक्स २८१०१०००० मन "सल्फ्यूरिक एसिड" बनाने योग्य गंधक अब भी वायुमें छोड़ते हैं। "साइ

नाइड" द्वारा सुवर्णनिश्कास विधिमें जो कि नवीनसे नवीन है "साइ नाइड" के बनानेमें दो आने सेर को बचत होनेका परिणाम केवल योहान्नसवर्ग" प्रान्तमें हो १०५०००० रुपये प्रति वर्षकी बचत है। "कैल्सियम् कार्बाइड" का आदिम निर्माण "साइनाइडस" की उत्पत्तिका कारण हुआ है जो बहु फलप्रदक होनेके निरन्तर क्रमशः स्थूल परिणाममें "अमोनिआ" "नाइट्रिक ऐसिड" इत्यादि निर्माणालयोंके जन्मदाता हुए। नैथलीन "काप्थैलिक ऐसिड" में परिवर्तन भी जो शिल्पनिर्मित नीलके बनानेमें इतना बड़ा भाग लेता है कदापि विस्मरणीय नहीं है।

इस प्रकारकी सब शिल्पीय अन्वेषण बहुत समय लेते हैं और बड़ा उद्यम चाहते हैं। कहते हैं कि शिल्पनिर्मित नील संबंधी प्राथमिक अनुसंधानमें १५००००००) रुपयेसे अधिक व्यय हुए।

अनुसंधानके महत्वका और इसपर यूरोपमें कितना धन व्यय किया जाता है इसका अनुमान इस बातसे हो सक्ता है कि जर्मनीमें बड़े कार्य्यालयमें ७००से अधिक रासायनिकज्ञ काम करते हैं।

महोदय टाटाका उद्योग और उनका लोहेकी खानकेलिये प्राथमिक अनुसंधानपर इतना द्रव्य व्यय करनेके लक्ष्यको सामने रखकर इसदेशके और धनाढ्योंको भी अपनी मातृभूमिके उद्धारार्थ वैज्ञानिक तथा शिल्पीय अनुसंधानोंको सिद्धि तक पहुंचानेके लिये उद्यत होना चाहिये।

---

## वैज्ञानिकीय

### ( १ ) पवन पोत और कबूतर

हालमें ही इङ्गलेण्डमें एक पवन पोतको कबूतरोंने खराब कर दिया। ऐसा मालूम हुआ कि एक जङ्गी हवाई जहाज़ उड़ता हुआ कबूतरोंके झुण्डमें पहुंच गया। प्रेरक ( propellors ) से कई कबूतरोंने टक्कर खाई और उसे खराब कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि वायुयान नीचे उतारना पड़ा।

* * * *

### ( २ ) रोटी न बूसने देनेका उपाय

प्रायः रोटियां थोड़ी या बहुत देरमें बूस जाती हैं। इसके रोकनेका उपाय अमेरिकाकी रसायनिक सभामें ( chemical society ) श्रीयुत आर्नोल्ड वाहलने बतलाया है। इनके मतानुसार रोटीके बुसनेका कारण यह है कि वायु रोटीके छिद्रोंमें भर जाती है; और इस वायुकी ओषजन रोटीमें धनद प्रक्रियां आरम्भ कर देती है, अर्थात् रोटीके अवयवोंके ओषित बनने लगते हैं। रोटीका प्रोटीन ( protein ) बिगड़ने लगता है। यदि रोटी, कर्बन-द्विओषितमें, भट्टीमेंसे निकालनेके बाद, ठंडीकी जाय, तो रोटीके छिद्रोंमें कर्बनद्विओषित भर जायगी। अतएव न ओषजन उसके छिद्रोंमें प्रवेश कर सकेगी और न रोटी बिगड़ैगी। इस रीतिसे ठंडी की हुई रोटी कई सप्ताहतक नहीं बिगड़ती।

* * * *

### ( ३ ) समुद्री महाकाय सर्प

'नेचर' मासिकपत्रमें प्रकाशित हुआ है कि १४ जून सं० १६१६ को एक स्वेडिननिवासी मि० स्मिथने बालटिक सागरमें महाकाय सर्प देखा। वह ८० फुट लाम्बा था। पर और लोगोंने इसपर सन्देह प्रकट किया है।

### ( ४ ) अमेरिकामें एक अद्भुत अपील

यद्यपि इसका हाल लिखते हुए हाथ थर्राता है, लेखनी कांपती है, और हृदयमें कठिन वेदना पैदा होती है, तदपि अपना कर्तव्य समझ यह विषय उद्धृत किया जाता है। अमेरिकामें फिज़िकल सोसाइटी नामी एक वैज्ञानिक सभा है। वह एक वैज्ञानिक पत्र भो निकालती है। इस सभाकी आर्थिक दशा कुछ अच्छी नहीं है। इस कारण इस सभाकी एक उपसमितिने अपील निकाली है। उस अपीलमें केवल दो चित्र हैं। एकमें स्वर्गवासी प्रोफे-

सर रोलेण्ड अपने विभाजक इंजन समेत दिखलाए गये हैं, दूसरे चित्रके नीचे लिखा है 'हिन्दू'। उसमें हिन्दूके पास जंत्र, मंत्र, कठले और तावीज़ोंका ढेर बतलाया गया है। दोनों चित्रोंके नीचे लिखा है which? अर्थात् इन दोनोंमें से क्या बनना स्वीकार है। रोलेण्ड सरीखा वैज्ञानिक बनना स्वीकार है अथवा तावीज़ोंसे लदा हुआ हिन्दू बनना चाहते हो।

शोक है कि हिन्दू समाज जो किसी समय संसारभरमें अकंटक राज करती थी, वही आज इन नई नई जातियोंकी—जो सौ वर्ष पहले भारतवासियोंके सामने निपट गंवार थे—हास्यास्पद बन गई हैं। हा! क्या हिन्दुओंको कभी यह ख्याल आता है कि अब उनकी कितनी दुर्गति है। संसारकी सभ्यजातियां इन्हें असभ्य समझ इनका कैसा मज़ाक उड़ाती हैं। हिन्दीके सपूतो! यदि आपको अपनी, जाति और देशका अभिमान हो तो जागो, उठो, विज्ञान पढ़ो, पढ़ाओ अपने शिल्प और वाणिज्यकी वृद्धि करो और फिर संसारके नेता बनजाओ।

कबतक इस अविद्यामें पड़े रहोगे। विज्ञानका प्रचार करो और इतनी नई नई गवेष्णाओंका तार बान्धो कि संसार चकित हो जाय।

* * * *

### ( ५ ) एक्स-किरण-नलिकाका सुधार

साधारण नलिकाओंसे यदि लगातार बहुत देरतक काम लिया जावे, तो उसके दोनों धातुके छोर बहुत गरम हो जाते हैं और कभी कभी गल भी जाते हैं। इस त्रुटिको निकालदेनेका उपाय हालमें ही प्रोफ़ेसर ईटोमसनने सोचा है और उसका पेटेन्ट भी करालिया है। नलिकाका धन छोर ( the tarej of the Cathodetrays ) अर्थात् वह छोर जिसपर के थोड़ी किरण पड़ती है, पहियेकी शकलका बनाया है और उसे इस प्रकार लगाया है कि किरणें उसपर स्पर्शरेखाकी दिशामें गिरती हैं। इससे पहिया घूमने लगता है। पहियेके घूमनेके कारण हर बार उसका एक नया भाग गरम होता रहता है और इस प्रकार वह हानिकारक तापक्रम तक गरम नहीं हो सकता।

* * * *

### ( ६ ) दिनकी सी रोशनी देनेवाली लम्प।

प्रायः देखनेमें आता है कि रातको वस्तुओंका असली रङ्ग नहीं दिखाई देता। यदि एक ही वस्तु रात्रिमें कई प्रकारके दीपकोंके प्रकाशमें देखा जाय तो उसके कई रङ्ग दीखेंगे। अतएव जिन कारखानोंमें रङ्गीन कपड़े बुने जाते हैं—जिनमें भिन्न भिन्न रंगोंमें रंगे हुए सूत काममें लाए जाते हैं— वहां यह मालूम करना कठिन हो जाता है कि जो चीज़ तैय्यारकी गई है उसका रङ्ग दिनमें कैसा खिलेगा।

इन सब बातोंको सोचकर ऐसे लम्पोंके बनानेका यत्न किया गया है, जिनका प्रकाश सूर्य्यके प्रकाशसे मिलता जुलता है। यह आवश्यक नहीं कि उनका प्रकाश उतना ही तेज़ हो जितना सूर्य्यका होता है।

हालमें ही न्यूयोर्क ( अमेरिका ) के एक कारख़ानेने ऐसी लम्पें तैय्यारकी हैं। यह बिजलीकी लम्प हैं। इनकी कुप्पियोंके भीतर नत्रजन भरा है और इनका कांच, नीली झांई लिये हुए है। इनमें दोष इतना ही है कि कांचके रंगसे ८ प्रति शत प्रकाश कम हो जाता है।

* * * *

### ( ७ ) ताम्रओपितमें प्रकाशके सहारे बिजलीका पैदा होना।

न्यूयोर्ककी विद्युद् परिषद्के हालके अधिवेशनमें श्रीयुत केसने एक निबन्ध पढ़ा। उनका कथन है कि यदि दो ताम्बेके तार या तख़्तियां ली जायं, उन्हें ऊपरसे ओषितमें परवर्तित कर लिया जाय, ( oxidised ) और इन्हें किसी विद्युत्वाहक घोलमें डुबोकर, किसी विद्युन्मापक ( Galvanometer ) से मिला दिया जाय, तो

घरोंके चौकोंमें पड़े रहते हैं, वह बड़े भयानक हैं क्योंकि प्रायः इन्हींमें मच्छर अण्डे देते हैं, जिनसे मच्छरोंकी संख्या बढ़ने और उनके द्वारा मलेरिया ज्वर ( मौसमी बुख़ार ) फैलनेका डर रहता है। अतः घरमें इधर उधर पुराने टूटे पीपे न पड़े रहने देना चाहिये, ताकि इनमें बरसातका पानी न भरे और न मच्छर इनमें अण्डे रखें। यदि यह सम्भव न हो कि यह पीपे या मिट्टीके बरतन फेंके जा सकें, तो इन्हें औंधा कर रखना चाहिये या इनके पेंदोंमें छेदकर देने चाहिएं।

* * * *

(१३) शिलाजीतके गुण

आयुर्वेदोक्त रसायनकी प्रायः सभी औषधियां दुष्प्राप्य हैं। फिर भी दो औषधियां ऐसी हैं जो कि कुछ परिश्रम करनेसे मिल जाती हैं। ये शिलाजीत और भिलावा है। मैंने इन दोनोंकी खूब परीक्षाकी है और इनका इतना ज़्यादा व्यवहार किया है कि किसी दूसरेने शायद ही किया हो। इसीसे अपना अनुभव प्रकाश करना चाहता हूं। यहां शिलाजीतका विवरण लिखा जाता है। यह निःसन्देह शरीरके हर एक अंग प्रत्यंगको ठीक करता है। इसको सेवन करनेसे भूख बढ़ती है खाना पचता और बदनमें ताक़त पैदा होती है। इससे स्मृति शक्ति भी अवश्य बढ़जाती है। विशेषता शिलाजीतमें यह है कि इसके सेवनसे पेटमें कोई उत्पात पैदा नहीं होता और इसका बनाया हुआ काम फिर नहीं बिगड़ता। सुज़ाकके कुरहे, नपंसकता और प्रमेहके वास्ते इससे बढ़कर दूसरी दवा नहीं है। बादी बवासीर, तपेदिक़, कवल, सूजन और पथरोमें भी यह बड़ा गुण करता है।

शिलाजीत लोहेकी उपधातु है। गर्मीके दिनोंमें पहाड़ोंपर बहा करता है। दुःखका विषय है कि विशुद्ध शिलाजीत इस तरफ नहीं मिलता। शिलाजीत बेचनेवाले जो बाहरसे आते हैं वह न जाने किस चीज़को शिलाजीतके नामसे बेच जाते हैं। किन्तु पहाड़ोंपर जाकर प्रयत्न करनेसे उत्तम शिलाजीत प्राप्त हो सकता है।

खानेके काममें शिलाजीतका सत आता है। इसीको शुद्ध शिलाजीत कहते हैं। यह दो तरहसे बनाया जाता है। आगकी गर्मीसे यासूर्यकी धूपसे। आगकी गर्मीसे निकाला हुआ अच्छा नहीं होता। शिलाजीतका सत २) रु० से ।) आने तोलेतक मिलता है।

मैंने उन स्थानोंको देखा है जहां यह पैदा होता है। इसके निकालनेमें जानको जोख़म रहता है। इसीसे यह मँहगा बिकता है। यह बरफ़से ढके हुए पहाड़ोंके मध्य भागमें बहा करता है। जहां यह बहता है वहां पहाड़ प्रायः सीधे दीवारकी तरह खड़े और नंगे होते हैं और उनकी जड़ोंमें शोर करती हुई बरफ़की नदियां बहा करती हैं। स्याह रंगका शिलाजीत उत्तम होता है। इसके खानेका अनुपान दूध है। जो रोग किसी दवाईसे नहीं जाता वह शिलाजीतसे निस्सन्देह दूर हो जाता है। अभी थोड़े दिन हुए डायरेक्टर जनरल आफ़ हास्पिटल्स Sir C.P.LuKis सर सी. पी ल्यूकिसने कालेजमें पढ़ाते हुए अपने शिष्योंको मधुमेह शिलाजीतका प्रयोग करनेकी शिक्षा दी है।

जयनारायण शर्म्मा वैद्य।

---

## कार्य्य विवरण

( १ )

१२ कृ० कार्तिक तदनुसार २४ अक्तूबरको ६ बजे फिज़िकल सायन्स थियेटर, म्योरकालेजमें, डाक्टर हिल, डी. एस-सी, के सभापतित्वमें डाक्टर ए. पी. सर्कारका बड़ा प्रभावशाली और मनोरञ्जक व्याख्यान 'रङ्गीन छाया चित्रण' पर हुआ। सायन्स थियेटर खचाखच भरा हुआ था। लेकचरके आरम्भमें सरस्वतीजीका एक रङ्गीन चित्र, परदेपर मेजिक लालटेनद्वारा डाला गया और

व्याख्याताने स्तुतिकी। तदन्तर १०० स्लाईडसे भी अधिक दिखाकर संसारके अनेक प्राकृतिक दृश्य प्राकृतिक रङ्गोंमें दिखाये गये। म्योरकालेज-के एक भागका भी चित्र दिखाया गया, जिससे श्रोतागण यह अन्दाज़ा कर सके कि प्राकृतिक रङ्ग कितनी सफलतासे प्लेटपर उतारे जा सकते हैं। हम Dr. E. G. Hill, D. sc., डा. हिल साहबको बहुत धन्यवाद देते हैं कि जिन्होंने कृपा-पूर्वक अपने स्लाईडोंका संग्रह परिषद्को इस व्याख्यानके लिये वे मांगे दिया। इन सौ स्लाइडों-का मूल्य ५००) से भी अधिक है, अतः स्पष्ट है कि यदि ये स्लाइड तैय्यार कराये जाते, तो कितना व्यय करना पड़ता।

लेकचरके अन्तमें सभापति तथा व्याख्याता महाशयोंको धन्यवाद दिये गए और कार्य समाप्त हुआ।

गोपालस्वरूप भार्गव
मंत्री.

(२)

निम्नलिखित सज्जन मान्यसभ्य चुनेगये

१. माननीय पं. मदनमोहन मालवीय, बी. ए., एल-एल० बी. प्रयाग
२. डाक्टर गणेशप्रसाद, डी. एस-सी, प्रोफेसर, कलकत्ता विश्वविद्यालय

निम्नलिखित सज्जन परिसभ्य चुनेगयेः—

(१) श्रीयुत मथुराप्रसादः असिस्टेन्ट मास्टर ग० हाईस्कूल रायबरेली।
(२) डा० अब्दररशीद खान, फ़तेहपुर, बारा-बँकी
(३) श्रीयुत हसीनउद्दीन, सब-इन्स्पेक्टर फ़तेहपुर, बाराबंकी
(४) श्रीयुत सैय्यद मोहम्मद आबिद "
(५) मौलाना सैय्यद मोहम्मद साहिब ठि० नवाब स. उपराव मिर्ज़ा ऑनरेरी मजिस्ट्रेट कश्मीरी गेट देहली
(६) आ०मौलवी सैय्यद मोहम्मद रज़ी साहिब कज़मी, बड़ा इमामबाड़ा, फतेहपुर डि. बाराबंकी।
(७) श्रीयुत सैय्यद अशफ़ाक़ हुसैन. मुख़्तमार क़ाज़ीपाड़ा, बहरायच

गोपाल स्वरूप भार्गव

## प्राप्तिस्वीकार

१. श्री० गोपालनारायण सेन सिंह— (१९१६-१७) १२)
२. श्री० सालग्राम भार्गव, प्रयाग (१९१६-१७) १२)
३. श्री० रामभद्र ओझा, एम० ए० एल-एल० बी० अलवर (१९१५-१७) ६)
४. श्री० जी. पी. अग्निहोत्री, बी. एस-सी नागपुर (१९१६-१७) १२)
५. श्री० मुखत्यारसिंह, वकील मेरठ ५)
६. श्री० जे० मोर्फ़ेन होल्ट, कानपुर (१९१६ १७) १२)
७. बाबू श्यामसुन्दरदास बी. ए. लखनऊ (१९१५-१६) ६)
८. प्रो० इसहाक़अली, प्रयाग (१९१५-१६) २)
९. प्रो० व्रजराज प्रयाग २)
१०. बाबू शिवप्रसाद गुप्त, रईस बनारस (१९१६-१७) १२)
११. श्री० चुन्नीलाल साहनी, बी. एस.सी० (१९१५-१६) ३)
१२. श्रीयुत बी. एस-तम्मा-एम. एस-सी० (१९१६-१७) ८)
१३. जे. एन० सुतारिया-पेरिस ६)
१४. प्रो० डी० बी. देवधर, एम. एस-सी इन्दोर (१९१६-१७) १२)
१५. श्री० भैरोंप्रसाद तिवारी. प्रयाग ३)

योग ११६)

व्रजराज, बी. एस-सी एल-एल-बी.
कोषाध्यक्ष

## साहित्य समाचार !

### मनोरमा

हिन्दीकी यह एक सचित्र मासिक पत्रिका है। पण्डित प्यारेलाल जो दीक्षित और उनके शिष्य पण्डित रामकिशोर शास्त्री इसके सम्पादक हैं। इसकी आख्यायिकायें, विशेष प्रकारसे बड़ी चटकीली और लच्छेदार होती हैं। सब पत्र पत्रिकाओंने इसकी बड़ी प्रशंसा की है; सरस्वती-की समालोचना देखिये—

आकार सरस्वतीके सदृश है। चित्र भी रहते हैं। वार्षिक मूल्य तीन रुपया है इसके सम्पादक संस्कृतज्ञ हैं। काव्योंके गद्य पद्यमय अनुवाद आप इसमें विशेष करके छापते हैं। अन्यान्य कवितायें और लेख भी इसमें रहते हैं, पत्रिका साहित्य सम्बन्धिनी है, अच्छी निकलती है इत्यादि। ऐसी अच्छी पत्रिका यदि आप देखना चाहते हैं तो आज ही मैनेजर "मनोरमा" मंडी धनौरा यू. पी. को लिख दीजिये।

---

---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

पता—गोपालस्वरूप भार्गव एम्. एस्-सी.,
मंत्री विज्ञान परिषत् प्रयाग।


Printed by C. Y. Chintamani at the Leader Press and published by P. Sudarshanacharya, B. A, for the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

Reg NO. 708

भाग ४ | धन, १९७३ । December 1916. | संख्या ३
Vol. IV. | | No. III

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची



प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

## विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे।

(४) लेख काग़ज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

---

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३।५।

भाग ४ } धन, संवत् १९७३। दिसम्बर, सन् १९१६। { संख्या ३

## मंगलाचरण

निरखत जित तित ही तुम व्यापक
भुविसों नभलों प्रति पदार्थ तव, कार्य—कुशलता ज्ञापक
संध्या प्रात रैन दिन षट ऋतु, क्रमसों सब चुपचाप
आवत जात जगत-अभिनयथल अविकल अपने आप
गिरि-उत्तंग शृंग नभ चुम्बत, प्रकृति-मनोहर वेश
हिम-मंडित रवि कर-रञ्जित नित, करत उमंग, अशेष
शस्य श्याम अभिराम क्षेत्र चहुँ, सजल सरित सर पावन
मलयज सीतल हीतल सुख-प्रद, धीर समीर सुहावन
सुभग स्वच्छ स्वच्छन्द द्रुमावलि, नम्रलता—मृदुकाया
अचरज सरसावत हरसावत, दरसावत तव माया
रवि शशि अपुहिं दारु योषित सम, करत स्वकाज निरन्तर
अद्भुत अमित परत नहिं तामें, तिल भरिहूको अन्तर
अकथ-प्रदर्शन-पुण्य-पंक्तिमें, नित नव नाचन हारे
विहँसत अधर प्रमोद-चमत्कृत, चंचल चारु सितारे
जगमगात प्रति पल मुख मंडल, अनुपम परम पुनीत
गावत 'सत' अव्यक्त सुध्वनि सों, विश्वरूप! तव गीत

धांधूपुरा—आगरा
२-११-१६ —सत्य नारायण

---

## अङ्कगणितकी शिक्षा

[ ले० सतीशचन्द्र घोषाल, बी. एस-सी. ]

### अध्याय ६

#### जोड़ और बाकी

##### प्रारम्भीय

यदि सच पूछा जाय तो संख्याओंके पृथक्करणमें ही जोड़का आरम्भ हो चुका है। परन्तु वहांपर हमारा मुख्य उद्देश 'संख्याओंका सम्बंध' बताना मात्र ही था और जोड़ केवल गौण रीतिसे काममें लाया गया था। जोड़के सिखानेकी सरल रीति यही है कि साक्षात पदार्थोंद्वारा संख्याओंका ज्ञान कराया जाय ताकि बालक जानने लगे कि '५ बिही और २ बिही' ७ बिही होती हैं, तथा '५

Teaching शिक्षा ]

और २' का मतलब सिर्फ़ '५ और १ और १' ही है। इस प्रकार पदार्थोंद्वारा संख्याका ज्ञान करानेसे लाभ यह है कि धीरे धीरे विद्यार्थी इस बातको जानने लगते हैं कि '५ और २' सात होते हैं। सारांश यह है कि बालक इस बातको अच्छी तरह जानने लगें कि ५ और २ सात होते हैं। क्यों? इसका उत्तर अभी वे न दे सकेंगे। जोड़ सिखानेके आरम्भमें इतना जानने लगना ही काफ़ी होगा।

इसी हेतु बालकोंको ऐसे उदाहरण दिये जायं जिनमें क्रमशः शुरुमें वस्तुएँ होते होते अंतमें सिर्फ़ संख्याएं ही रह जायं। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि शुरु शुरुमें संख्याओंके ही निसबत सवाल पूछे जायं तो बालक उनका मतलब साफ़ साफ़ नहीं समझते, परन्तु हमारा उद्देश यथार्थमें संख्याओंका ज्ञान कराना है। इसीलिए गोलियां बीज इत्यादि साक्षात पदार्थों-द्वारा धीरे धीरे संख्याओंकी ओर झुकना चाहिये और इसीलिए अंगुलियोंका उपयोग भी धीरे धीरे कम कराते जाना चाहिये; क्योंकि वास्तवमें अंगुलियां पदार्थोंकी जगह काममें लाई जाती हैं।

दो संख्याओंका मुखाग्र जोड़

ज्यों ज्यों बालकोंका संख्या सम्बन्धी ज्ञान बढ़ता जाय, धीरे धीरे उनको दो छोटी संख्याओंका मुखाग्र जोड़ करना सिखाया जाय। इस प्रकार पहिले इकाईकी संख्याएं लो यथा ५ और ४ कितने? उत्तर ९; बालकोंको इस प्रकारके सवाल करनेमें कोई अड़चन न होगी। जब इन अंकोंके जोड़ करनेका अभ्यास हो जाय तब धीरे धीरे दहाईकी संख्याओंकी ओर झुको। उदाहरणार्थ, यदि २५ और ३४ को जोड़ना हो तो समझाओ कि २५ + ३४ = २५ + ३० + ४; पच्चीस और तीस हुए पचपन, पचपन और चार हुए उनसठ। इस भांति सरलसे कठिनकी ओर झुकते हुए इस प्रकारके सवाल भी दो जैसे ९५ + ४६ = ? इसको इस भांति समझाना चाहिये—

९ दहाई और ४ दहाई हुई १३ दहाई
५ इकाई और ६ इकाई हुई ११ इकाई अथवा
१ दहाई और १ इकाई
पर १३ दहाई और १ दहाई हुई १४ दहाई
अर्थात् कुल १४ दहाई और १ इकाई
अथवा १४१ हुए

आरम्भमें पदार्थोंका उपयोग आवश्यक है

याद रहे कि जोड़ और बाक़ीके प्रारम्भमें बालकोंको साक्षात पदार्थोंका उपयोग करानेसे सवालोंके लगानेमें उनकी रुचि बढ़ती है और उन्हें आनन्द आता है। इसलिए हमें बीज कौड़ियां अथवा चनोंका उपयोग स्वयम् करना चाहिये और बालकोंसे भी कराना चाहिये। प्रश्नोंकी भाषा भी खूब सरल हो जिसमें विद्यार्थी प्रश्नको अच्छी तरह समझ लें। हम पहिले ही कह आए हैं कि प्रश्न हमेशा ऐसे पदार्थोंके सम्बन्धमें हों जिनका कि बालकोंको अनुभव हो चुका है।

ऐसे काग़ज़ जिनमें वर्ग बने हों काममें लाए जावें

प्राइमरी स्कूलके पाठक शायद 'ग्राफ़ कापियों'-से अपरिचित होंगे। ये कापियां बाज़ारमें बहुत मिलती हैं। भीतरके पत्रोंमें बड़े बड़े वर्ग (प्रत्येक १ इंच लम्बा १ इंच चौड़ा) बने रहते हैं और इन वर्गोंके भीतर और भी छोटे छोटे वर्ग होते हैं। इस प्रकारके वर्ग-काग़ज़ोंका जोड़ और वसूलमें अच्छा उपयोग किया जा सकता है। यदि पाठक चाहें तो ऐसे काग़ज़ बालक स्वयम् बना सकते हैं, सिर्फ़ वे अधिक छोटे वर्ग न बना सकेंगे। गणितमें इन काग़ज़ोंका उपयोग बहुतायतसे होता है, क्योंकि गणितकी रीतियां चित्रोंद्वारा समझानेसे बालकोंके हृदयपर अङ्कित हो जाती हैं। इसलिए पाठकोंको इन काग़ज़ोंका उपयोग करनेसे न चूकना चाहिये। थोड़े दिनोंके बाद उन्हें यह बात स्पष्ट हो जायगी कि इन काग़ज़ोंद्वारा समझानेसे गणितके पढ़ने और पढ़ानेमें नया ही आनन्द आने लगता है। पाठकोंको अपने उपयोगकेलिए एक

वर्ग-तख़्ता ( जिसमें वर्ग खिंचे हों ) रखना होगा। अब हम यह बताते हैं कि इनका उपयोग किस भांति किया जाय।

तीन संख्याओंका जोड़ ( प्रत्येक संख्या दससे कम है ); हाथ लगी

मान लो कि प्रश्न यह है 'यदि रामके पास ४ गोलियां, श्यामके पास ३, और गोविंदके पास ५ गोलियां हों तो बताओ कुल गोलियां कितनी हुईं ?'

रीति—बालक पहिले ४ बीजलें और उनमें ३ बीज और मिलावें और गिनें, कुल हुए सात। यहां-पर फिरसे एकसे साततक गिनना ठीक नहीं क्योंकि इस प्रकार एकसे चार तक दुबारा गिनना पड़ैगा जो व्यर्थ होगा। इसी प्रकार पांच बीज और मिलाकर गिनें कुल १२ हुए। इन बारह बीजोंमेंसे दसको १ बटुएमें बंद करें, बाहर बचे २, तब बोर्डपर मास्टर यों लिखे—

$$\begin{array}{r} ४ \\ ३ \\ ५ \\ \hline १२ \end{array}$$

वर्ग काग़ज़पर समझाना

पाठक वर्ग-तख़्तेपर पहिले चौथे वर्गके पास लकीर खींचे—ये रामके ४ बीज हुए। फिर ३ वर्ग आगे अर्थात् ७के पास लकीर खींचे—ये श्यामके ३ हुए, दोनोंके मिलाकर सात हुए। फिर पांच वर्ग आगे और लें - ये गोविंदके पांच हुए, कुल गिनो हुए१२। यह बात पाठकको और भी समझाना होगी कि ७ वर्गोंके आगे ३ और लेनेपर हुए १० ; अब ऊपर बचे २, ठीक इसी प्रकार बालक भी अपने अपने वर्ग-काग़ज़ोंपर वर्ग लेकर गिनें।

वर्ग-काग़ज़ोंपर समझानेके सिवाय गोलियोंके तख़्तेद्वारा तथा काले तख़्तेपर बिन्दुओं द्वारा भी यही सवाल इस भांति समझाया जाय।

००० और ०००० और ००००० कुल कितने ?

( ३ + ४ + ५ = ? )

समझाओ कि ००० + ०००० = ००० ००० ०

( ३ + ४ = ७ )

और ००० ००० ० + ०० ०० ० = ०००००० ००००००

( ७ + ५ = १२ )

ऐसी दो संख्याओंका जोड़ जिनमेंसे प्रत्येक दससे अधिक हों और जिनका योग सौसे कम हो तथा जिनमें इकाईके स्थानसे कुछ हाथ न लगे

ऐसी संख्याओंके जोड़ सिखानेकी रीति इस भांति है —

उदा०—यदि बेनीके पास १२ और रामके पास २६ बेर हैं तो कुल बेर कितने हुए ?

रीति—विद्यार्थी १२ केलिए 'दस का एक बटुआ और २ बीज' तथा २६ केलिए 'दो बटुए और ६ बीज' लें। स्लेटपर इन संख्याओंको इस भांति लिखें।

| द. | इ. |
|---|---|
| १ | २ |
| २ | ६ |
| ३ | ८ |

२ बीज और ६ बीज कुल कितने ? उ० ८ ; १ बटुआ और २ बटुए कुल कितने ? उ० ३ ; विद्यार्थी प्रत्येक बार गिनकर उत्तर देवें।

ऐसी संख्याओंका योग जिनमें प्रत्येक दससे बड़ी हो और जिनका योग सौसे अधिक हो।

इस प्रकारके सवालोंको नीचे लिखी रीतिसे पढ़ाना लाभकारी है। मानलो कि प्रश्न यह है—यदि स्कूलकी पहिली क्लासमें ५४ लड़के, दूसरीमें ३६, तीसरीमें २१, और चौथीमें १८ लड़के हों तो कुल लड़के कितने हुए ?

रीति—बालक अपने अपने सामने हरएक संख्याके बराबर बटुए और बीज रख लें, जोड़ शुरु करनेके पेश्तर अपनी अपनी स्लेटोंपर सवालको रीत्यानुसार लिख लें अब पाठक इस भांति समझावें—४ और ६ ? उ० १३ ; दसको

$$\begin{array}{r} ५४ \\ ३६ \\ २१ \\ १८ \\ \hline १३२ \end{array}$$

एक बटुएमें बंद करदो ऊपर रहे ३,
३ और १ ? उ० ४,
४ और ८ ? उ० १२ ; एक बटुआ और बनालो। ऊपर रहे दो ; २ को इकाईके स्थानमें रख दो। कुल बटुए (दहाईके) तुमने कितने बनाये ? उ० २, इन दो बटुओंको बटुओंमें जोड़ो।
२ और ५ ? उ० ७;
७ और ३ ? उ० १० ; दस बटुओंको १ सौ वाली थैलीमें भर दो। ऊपर बचा ? कुछ नहीं। २ बटुए और १ ? उ० ३.

इस भांति विद्यार्थियोंसे थैलियां तैय्यार कराकर पूछो कि कुल तुम्हारे पास क्या है? उ० १ सौवाली थैली, ३ दसवाले बटुए और २ छुटे बीज। अब स्लेटोंपर इस संख्याको लिखो। इकाई-के स्थानमें २, दहाईके स्थानमें ३, और बाईं तरफ़ सैकड़ेके स्थानमें १ लिखो।

जब बालकोंको ४ संख्याओंके जोड़ करनेका खूब अभ्यास हो जाय तब ऐसे जोड़ दिये जायं जिनमें चारसे अधिक संख्याएं हों। इन प्रश्नोंमें एकसे अधिक हाथलगी आवेंगी। विद्यार्थियोंको हाथलगी याद रखनेमें सरलता हो इसलिए इस रीतिको काममें लाओ—

उदा०—२३, ४६, ७४, १६, ३६ और १७ को जोड़ो।

रीति–विद्यार्थी अपने अपने सामने हरएक संख्याके बराबर बटुए और बीज रखें और स्लेटपर सवाल लिख लें। मास्टर अब इस प्रकार प्रश्नोत्तर करके समझावें –

२३
४६
-७४-
१६-
-३६-
१७

३ और ६ ? उत्तर ६
६ और ४ ? उत्तर १३ ( दसको बटुएमें बंद कर दो, ऊपर रहे ३ )

एक बटुआ ४ को जोड़नेपर हाथ आया, इस-लिए चारके पास निशान लगाओ।

३ और ६ ? उत्तर १२ (दूसरा बटुआ बना लो और ६ पर निशान लगाओ, बाक़ी रहे २)
२ और ६ ? उ० ११ ( तीसरा बटुआ बना लो और दूसरे ६ पर निशान लगाओ, बाक़ी रहा १ )
१ और ७ ? उ० ८.

अब पूछा जाय कि दहाईके कै बटुए बनाये गये हैं ? उत्तर—तीन (निशानोंको देखो और गिनो)। देखो इस प्रकार निशान लगा लेनेसे कितना फ़ायदा होता है ! अब ये तीन बटुए दहाइयोंमें जुड़वाओ; नीचे लिखे प्रश्नोत्तर होंगे।

३ और २ ? उत्तर ५
५ और ४ ? उत्तर ६
६ और ७ ? उत्तर १६ (दस बटुओंको १ सौ-वाली थैलीमें बंद करके ७ के पास निशान लगा दो; ऊपर रहे ६)
६ और १ ? उत्तर ७
७ और ३ ? उत्तर १० ( दूसरी सौ वाली थैली तैय्यार करो। ३के पास निशान लगाओ। ऊपर कुछ नहीं रहे।)
कुछ नहीं और १ ? उत्तर १

पूछा जाय कि सौवाली थैली कितनी बनीं ? उत्तर दो (निशानोंको देख लो)। कुल जोड़ क्या हुआ। २ सौवाली थैली, १ दस वाला बटुआ, और ८

२०० + १० + ८
= २१८

यदि कक्षा छोटी हो तो इस प्रकारके सवाल थैलियों और बीजोंद्वारा प्रत्यक्ष जोड़कर बालकों-से कराओ।

दूसरी रीति

बड़ी संख्याओंको जोड़नेकी एक उम्दा रीति

और है। उसमें निशान वग़ैरह कुछ नहीं लगाना पड़ते और जोड़ भी सरलतासे हो जाता है। उदाहरणद्वारा इस रीतिको समझाकर फिर हम बतावेंगे कि उसका तत्व क्या है। मान लो कि सवाल यह है—

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| | ५ | ३ | ४ | ९ |
| | ६ | ७ | ९ | ३ |
| | ४ | ५ | ७ | ५ |
| | २ | १ | ० | ७ |
| | ५ | ३ | ४ | ९ |
| | २ | १ | २ | ४ |
| | ३ | ८ | ७ | ६ |
| | ४ | २ | १ | ८ |
| | १ | ० | ४ | १ |
| ३ | ३ | ३ | ५ | |
| ३ | ४ | ३ | ९ | १ |

इकाईके अंकोंका जोड़ ५१ है, १को लकीरके नीचे पहिली पंक्तिमें इकाईके स्थानमें रखो और ५ को उसीके नीचे दूसरी पंक्तिमें दहाईके स्थानमें रखो। इसी प्रकार दहाईके अङ्कोका जोड़ ३४ है। इसलिए ४ को पहिली पंक्तिमें दहाईके स्थानमें और ३ को दूसरी पंक्तिमें सैकड़ाके नीचे लिखदो। इसी प्रकार सैकड़ा और हज़ारके स्थानके अंकोंको जोड़कर पहिली पंक्तिमें ऊपरके स्थानमें, और हाथलगेको दूसरीमें एक एक स्थान बाईं तरफ़ हटाकर लिखते जाओ। दोनों पंक्तियोंका जोड़ उत्तर होगा।

उदाहरणको देखनेसे विदित होगा कि प्रत्येक स्थानके हाथलगे एकदम अगले अगले स्थानोंकी संख्याओंमें जोड़े नहीं गये परन्तु उनकेद्वारा एक नवीन ही पंक्ति तैय्यारकी गई है। हाथ लगे जोड़नेमें बालकोंको कठिनता होती है और उनमें ग़ल्ती हो जाना संभव है, इसीलिए इस रीतिसे सरलता होती है।

### बाक़ी (वसूल)

बाक़ीके वे सवाल जहां कि घटाई जानेवाली संख्याके प्रत्येक अंक ऊपरकी संख्याके अंकोंसे छोटे होते हैं बालक सरलतासे कर लेते हैं। यथार्थमें बाक़ीका आरम्भिक ज्ञान तो संख्याएं सिखानेके समयसे ही हो चलता है। जोड़ सिखानेके साथ बालकोंका यह ज्ञान बढ़ाते ही जाना चाहिये। यथार्थमें जब वे '५+४=९' इस प्रकारके जोड़ करने लगते हैं उस समय उन्हें यह बतानेमें कठिनता नहीं होती कि यदि ९ मेंसे ५ घटावें तो ४ बाक़ी बचेंगे। कठिनाई यथार्थमें वहां होती है जहां घटाया जानेवाला अंक ऊपरके अंकसे बड़ा हो। इस प्रकारके सवाल सिखानेकी तीन भिन्न भिन्न रीतियां हैं और वे अलग अलग स्थानपर एक दूसरेसे अधिक लाभदायक और सरल मालूम होती हैं। नीचे हम क्रमशः एक एक रीतिको समझाते हैं।

### पहिली रीति

एक सरल उदाहरण ले लो। मान लो १२ मेंसे ४ घटाना है। बीजोंकेद्वारा समझाओ कि दसके एक बटुए और २ बीजोंमेंसे ४ बीज घटाना है। चूंकि हमें चार बीज निकालना है और ऊपर सिर्फ़ दो ही बीज हैं, इसलिए हमें बटुएको अवश्य खोलना पड़ेगा, उसे खोलकर सब बीज निकाल लो और दोमें मिला दो। कुल बीज कितने हुए? उ० १२ बीज, ४ बीज निकाल लेनेपर बाक़ी बीज ८ बचे, तख़्तेपर इस भांति लिखो।

| | | |
|---|---|---|
| १२ = | १ दहाई+२ बीज = | शून्य दहाई+१२ बीज |
| ४ = | ४ बीज = | ४ बीज |
| ८ | | ८ बीज |

दूसरा उदाहरण—३४ मेंसे १९ घटाओ।

रीति—३४ केलिए ३ बटुए और ४ बीज तथा १९ केलिए १ बटुआ और ९ बीज ले लो। अब चूंकि ४ बीजोंमेंसे ९ बीज नहीं निकाल सकते, इसलिए १ बटुएको खोलना पड़ेगा, अब १० और ४ हुए १४ बीज, १४ मेंसे ९ निकालो बाक़ी रहे ५ बीज। बचे हुए दो बटुओंमेंसे १ बटुआ निकाल लो बाक़ी बचा १ बटुआ। इस तरह भी समझाओः—

४ इकाईमेंसे ९ इकाई नहीं निकाल सकते इसलिए ३ बटुओंमेंसे १ बटुआ ले लो और ३ के ऊपर निशान लगादो ताकि मालूम हो जाय कि एक दहाई निकाली गई है, १०+४=१४, १४ मेंसे निकाले ९ बाक़ी रहे ५; ५ को

| |
|---|
| ३४ |
| १९ |
| १५ |

इकाईके स्थानमें रखो। २ दहाईयोंमेंसे—३ दहाई नहीं; क्योंकि १ दहाई पेश्तर निकाली थी १ दहाई निकालो। बाक़ी रही १ दहाई। १ को दहाई-के स्थानमें रखो, काले तख़्तेपर यों लिखो।

३४ = ३ दहाई + ४ इकाई = २ दहाई + १४ इकाई
१६ = १ दहाई + ६ इकाई = १ दहाई + ६ इकाई
१५ = १ दहाई + ५ इकाई

दूसरी रीति

यदि दो राशियोंमें बराबर बराबर संख्याएँ जोड़ दी जायं तो उनके अंतरमें परिवर्तन नहीं होता

दूसरी रीतिका तत्त्व यह है कि यदि दो संख्याओंमें बराबर बराबर संख्याएं जोड़ दें तो उनके अंतरमें फ़रक न पड़ेगा।

पहले विद्यार्थियोंको यह नियम कई उदाहरणों-द्वारा समझाओ। ये उदाहरण इस प्रकार हों—

(१) उदा०–५ मेंसे २ घटाओ। उत्तर ३.
अब ५ में ३ जोड़ो और २ में भी ३ जोड़ो।
५ + ३ = ८, २+३ = ५.
देखो–८ मेंसे ५ घटाओ। उत्तर ३.

(२) उदा०–८ मेंसे ५ घटाओ। उत्तर ३.
अब ८ में २ जोड़ो और ५ में भी २ जोड़ो।
८ + २ = १०, ५ + २ = ७.
देखो—१० मेंसे ७ घटाओ। उत्तर ३.

इस प्रकार और भी कई उदाहरण देकर बालकोंको नियम अच्छी तरह समझा दो। फिर ऐसे प्रश्न लो—

उदाहरण पहिला ६२ मेंसे ३९ घटाओ।

उपरोक्त नियमानुसार एक एक दहाई दोनों संख्याओंमें जोड़नेपर उनके अंतरमें फ़रक़ न पड़ेगा।

सरलताकेलिए इस भांति समझाओ—

६२ = ६२ + १० = ६ द. + २ इ. + १० = ६ द. + १२ इ.
३९ = ३९ + १० = ३ द. + ९ इ. + १० = ४ द. + ९ इ.
२३ = २ द. + ३ इ.

इसी भांति तख़्तेपर लिखदो। पाठकोंने देखा होगा कि ऊपरकी संख्यामें दस इकाइयोंके रूपमें जोड़े गये हैं, क्योंकि इकाइयां थोड़ी हैं, नीचेकी संख्यामें दस १ दहाईके रूपमें जोड़े गये हैं, इस बातको विद्यार्थियोंको अच्छी तरह समझा दो।

उदाहरण दूसरा—६३ मेंसे ४५ घटाओ।

६३ – ४५ = ( ६३ + १० )–( ४५ + १० )
= ( ६ द. + ३ इ. + १०)–(४ द. + ५ इ. + १०)
= ( ६ द. + १३ इ.)–( ५ द. + ५ इ. )
= १ द. + ८ इ. = १८.

ऐसे कई उदाहरण लेकर विद्यार्थियोंको समझा दो कि इस रीतिमें हम बड़ी संख्याकी इकाईयोंमें दस इकाइयां जोड़ते हैं और घटाई जानेवाली संख्याकी दहाइयोंमें १ दहाई जोड़ते हैं। इसी प्रकार बड़ी संख्याओंकी बाक़ीमें भी इस रीतिका उपयोग भली भांति किया जा सकता है। अगर बड़ी संख्यामें दहाई छोटी संख्याकी दहाईसे कम हो तो ऊपरकी संख्यामें दस दहाई और नीचेकी संख्यामें एक सैंकड़ा जोड़ दो। पाठक उदाहरण-द्वारा इस रीतिको समझा दें।

तीसरी रीति

बाक़ीकी तीसरी रीतिमें हम उस संख्याको ढूंढ़ते हैं जिसका और दी हुई छोटी संख्याका योग बड़ी संख्याके बराबर हो। यथार्थमें यह कोई नवीन बात नहीं लेकिन इसमें मुख्य आधार जोड़ है। २३ मेंसे १७ या तो हम साधारण रीतिसे घटा लें अथवा इस प्रश्नका उत्तर ढूंढ़लें कि १७ और कै = २३; यदि विद्यार्थियोंको जोड़ करनेमें खूब अभ्यास है तो निस्संदेह इस रीतिसे बाक़ी करने-में खूब सरलता होगी।

इस रीतिमें विशेष लाभ यह है कि इससे जोड़ और बाक़ीका सम्बन्ध अच्छी तरह मालूम हो जाता है। ये सब बातें इस उदाहरणसे स्पष्ट हो जायंगी।

उदाहरण–८३२४७ मेंसे ३४८९३ घटाओ। प्रश्न इस प्रकार लिखा जाय—

८३२४७

---

३४८९३

(४८३५४)

बीचमें लकीर खींचनेका अभिप्राय यह है कि हमें वह संख्या ढूंढ़नी है जिसका और ३४८९३ का जोड़ ८३२४७ हो जाय।

रीति—पाठक इस भांति समझाएँ—

३४८९३ को देखो यहां तीन इकाई हैं। कै और ३ सात? उत्तर ४; ४ को ३ के नीचे रखो। ९ द. में कै दहाई जोड़नेसे ४ द. होंगी?

उ०–किसी प्रकार नहीं।

प्र०–परन्तु ९ द. में कै दहाई जोड़नेसे १४ द. होंगी?

उ०–५ द.। ५ द. को ९ के नीचे रक्खो, अब ९ द. और ५ द. के जोड़में एक सै. हाथ लगा। ८ सै. में १ सै. जोड़नेसे हुए ९ सै., अब ९ सै. में ३ सै. जोड़नेसे हुए १२ सै. और हाथ लगा १ हज़ार। इसलिए ३ सै. को ८के नीचे रक्खो। १ ह. और ४ हज़ार हुए कितने?

उ०–५ हज़ार।

प्र०–५ ह. + ? = १३ हज़ार।

उ०–८ हज़ार।

८ को ४ ह. के नीचे रखो। जोड़में हाथ लगे १ दसहज़ार। १ द० ह० और ३ द० ह०?

उत्तर–४ द० ह०। ४ द० ह० और कै = ८ दसहज़ार?

उत्तर–४ द० ह०।

इस प्रश्नमें दोनों संख्याएं बड़ी बड़ी हैं। पाठक इसके पेश्तर छोटे छोटे उदाहरण लेकर समझा दें।

तीनों रीतियोंका मिलान।

इन तीनों रीतियोंमें पहिली सबसे सरल है। उसके समझनेकेलिए बालकोंको कोई विशेष मानसिक प्रयास नहीं करना होगा, इसलिए पहिले वही रीति समझाई जावे। दूसरी रीतिमें तर्कका उपयोग है और उसके अनुसार सवाल करनेमें बहुत पिचपिच नहीं होती। तीसरी रीति रोज़ाना काममें बहुत उपयोगी है, ख़ासकर ऐसे प्रश्नोंमें जिनमें जोड़ बाक़ी दोनों करना पड़ें।

उदा०—तीर्थयात्राको जाते समय अ ६९४५) लेकर चला। उसने १५९३) काशीमें ख़र्च किये, ६८०) प्रयागमें, १२५२) गयामें और, ११४८) हरद्वारमें तथा ४००) सफ़र खर्चमें उठे; तो बताओ उसके पास क्या बचा?

संख्याओंको इसभांति ६९४५

---

लिखकर जैसा कि दाईं तरफ़ १५९३

दिखाया गया है पूछो कि इकाइ- ६८०

योंका जोड़ क्या हुआ? ३+२+ १२५२

८=१३; १३+?=१५; उ० २; ४००

इसलिए लकीरके नीचे इकाईके स्थानमें ११४८

---

१८७२

लिखो २; हाथ लगा १; अब १+९+८+५+४=?

उ०—२७

२७ और ?=३४; उ० ७; इसलिए २ के बाईं तरफ़ दहाईके स्थानमें रखो ७ हाथ लगे ३ सैकड़ा।

अब ३+५+६+२+१+४=? उ० २१; २१+?=२९; उ०—८; इसलिए ८ सै० के स्थानमें रक्खो; हाथ लगे २ हज़ार २+१+१+१=? उ० ५, ५ और ?=६ उ० १, इसलिए १ को हज़ारके स्थानमें रखदो।

---

## विसूचिका ( हैज़ा )

[ ले० अनुवादक मण्डली, ]

यहाँकी बीमारियोंमें यह सबसे भयानक रोग है, परन्तु इसका प्रभाव घटता बढ़ता रहता है, जैसा कि इस बातसे प्रतीत होता है कि सं० १९६३ वि०में चेचक, प्लेग, पेचिश और संग्रहणी इन सबकी अपेक्षा विसूचिकासे अधिक

लोग मरे और सं० १६६४में प्लेगका नंबर इन सबसे बढ़ चढ़ कर रहा।

पहचान

इसकी पहचान सुगम है। रोगीको चाँवलके माँड़के सदृश बहुतसे पतले दस्त होना ही इस रोगका लक्षण है। यह संचारी अर्थात् फैलनेवाला रोग है जो मैली तथा गंदी आदतोंसे पैदा होता है और यदि इस बातका ध्यान रखा जाय तो बहुत सुगमतासे मनुष्य इससे बच सकता है। यह रोग एक प्रकारके कीटाणुओंसे पैदा होता है जो पानी, दूषित दूध तथा भोजनके साथ शरीरमें प्रवेश करते हैं। वे पानीमें रहते हैं और विशेषकर गदले पानीमें बहुत शीघ्रतासे बढ़ते हैं। यहाँके आदमियोंका स्वभाव है कि वे शौचके पश्चात् शरीरशुद्धिकेलिए किसी नदी या तालावके किनारे जाया करते हैं, इससे वह पानी गंदा हो जाता है और इस रोगका कारण होता है। काममें लानेसे पहिले बर्तनोंको भली भांति साफ़ न करनेसे इस रोगके कीटाणु सहसा भोजनमें प्रवेश कर जाते हैं। इनके फैलनेमें मक्खियाँ भी सहायक होती हैं।

जहाँ कहीं स्वच्छ जल पहुँचनेका पूरा पूरा प्रबंध होता है और वह किसी प्रकार बिगड़ने नहीं पाता वहाँ यह रोग किंचिन्मात्र भी नहीं होता, परन्तु आधुनिक निरीक्षणोंसे विदित हुआ है कि भोजनकी सामग्रीको भी किसी प्रकार न बिगड़ने देना चाहिये।

इस सबका सारांश यह है कि इस भयानक विसूचिकासे सुगमतासे बचनेकेलिए निम्नलिखित बातोंका पूर्णतया ध्यान रखना चाहिये- (१) स्वच्छ जल (२) स्वच्छ भोजन (३) मलकी सफ़ाई (४) शारीरिक स्वच्छता (५) रोगीका पृथक् निवास (६) जो वस्त्र या वस्तुएं किसी रोगीके व्यवहारमें आई हों उनकी सम्यक् शुद्धि (७) मक्खियोंका निर्वासन (८) और घर और पड़ोसकी सफ़ाई। स्वच्छ जलकी प्राप्ति और उसको गदला होनेसे बचानेके नियम और प्रवन्धका वर्णन चतुर्थ अध्यायमें किया जायगा, परन्तु इस स्थानपर यह कह देना आवश्यक है कि पटास परमैंगनेट ( Potassium permanganate ) जलको साफ़ करनेमें बड़ा उपयोगी होता है। अनुसंधानसे प्रतीत हुआ है कि विसूचिका फैलनेके दिनोंमें इसका व्यवहार अत्यन्त उपयोगी होता है। यह बात ध्यानमें रखनी चाहिये कि परमैंगनेट कुएंमें इतना डाला जाय कि पानीकी लालिमा आठ घंटेतक न जा सके। यदि इसका प्रयोग सायंकालमें किया जाय तो पानी प्रातःकालतक ठीक हो जाय।

भोजनके विषयमें चार मुख्य बातोंका ध्यान सदैव रखना चाहिये परन्तु विसूचिकाके दिनोंमें तो अवश्यही पूर्ण ध्यान देना चाहियेः—

( १ ) भोजनकी सामग्री या पात्र छूनेके पहिले बैंजनी तूतियेके ( परमैंगनेट ) पानीसे सेवकों और सम्बन्धियोंके हाथ अच्छी तरह धुलवा देने चाहिएँ।*

( २ ) पाकशाले बहुत स्वच्छ दशामें रहनी चाहिये और फटे या मैले कपड़ेसे पुतवानेके (चौका लगवानेके) बजाय पोता मिला हुआ पानी डालकर झाड़ूसे उसे धुलवा देना चाहिये।

(३) सब सामग्री जैसे भोजन या दूध ढका रहना चाहिये जिससे मक्खियां उसपर न बैठ सकें।†

इस रोगके पैदाकरनेवाले कीटाणुओंमें एक विशेष बात होती है जिसका ध्यान रखना अत्यावश्यक है। यद्यपि यह गंदे पानीमें बहुत जल्दी

* विहारमें जहाँ यह रोग विशेषतः हुआ करता है रोगसे बचनेकेलिए लोग अपने बर्तनोंको नीमकी पत्तियोंसे माँजा करते हैं और अपने हाथ नीमके पानीसे धो डालते हैं। हमारी सम्मतिमें यह रीति सुलभ तथा लाभदायक है।

† ( ४ ) कच्चे फल जैसे ककड़ी, फूट, तरबूज़ इत्यादि जो विशेष खाद पड़ी हुई भूमिमें उगते हैं न खाने चाहिएं।

बढ़ते हैं किन्तु खटाईके संयोगसे यह बहुत शीघ्र मर जाते हैं।

मामूली तौरसे आदमीके पेटमें उदररसमें ( gastric juice ) खटाईका अंश होता है। इसका परिणाम यह है कि यदि किसी पूर्ण स्वास्थ्य-वाले मनुष्यके उदरमें विसूचिका पैदा करनेवाले कीटाणु पहुंच जायँ तो शीघ्र ही मर जाते हैं। परन्तु जो मनुष्य अजीर्णका रोगी हो और उसके पेटमें उदररसकी उचित मात्रा न हो या उसको दस्त होते हों तो यह कीटाणु मरनेके पहिले ही उसकी आंतोंमें प्रविष्ट हो जाते हैं और शीघ्र ही संख्यामें बढ़ जाते हैं और मनुष्यको विसूचिका रोग हो जाता है। इस ज्ञानसे तीन आवश्यक नियम सिद्ध होते हैं और जिस समय विसूचिका फैली हो हमें इनका ध्यान रखना चाहियेः—

(१) बहुत स्वादिष्ट या देरसे पचनेवाला भोजन व्यंजन अथवा कच्चा या बहुत गला हुआ फल जिससे अजीर्ण या दस्तकी विशेष आशंका हो नहीं खाना चाहिये।

(२) दस्तोंके होनेपर शीघ्र ही चिकित्सा करानी चाहिये।

(३) जुल्लाब कभी नहीं लेना चाहिये, विशेषतः मेगनीशिया, सैलाइन मिक्सचर और एनोज़फ्रूट साल्टसे बचना चाहिये।

जब किसी घरमें किसीको विसूचिका हो जाय तो—

(१) रोगीको अलग रखना चाहिये और उसके व्यवहारके पात्र अलग कर देने चाहिएं।

(२) उन सब पात्रोंको और कपड़ोंको जो रोगी-के व्यवहारमें आये हों अच्छी तरह साफ़ कर देना चाहिये जिससे रोगका संचार न हो सके।

(३) रोगीको छूनेके पश्चात् हाथ धो डालना चाहिये। भोजन करनेके पहिले तो उन्हें अवश्य ही धो डालना चाहिये। रोगीके कमरेमें कोई भोज्य पदार्थ नहीं खाना चाहिये।

(४) मक्खियोंको रोगीके शरीरपर या उसके शरीरसे निकले हुए मलपर या रोगीके बिगड़े हुए कपड़ोंपर बैठनेसे रोकना चाहिये।

(५) रोगीका मल और वमन बिलकुल अलग कर देना चाहिये। इसके पश्चात् उसको जला अथवा किसी ऐसे स्थानमें गाड़ देना चाहिये जहां वह पानीको ख़राब न कर सके। उसे ख़ाली ज़मीनपर फेंक देना उचित नहीं क्योंकि उसके अंश हवामें उड़कर हवा ख़राब कर देंगे।

---

## गुरुदेवके साथ यात्रा (३)

[ अनु० महावीरप्रसाद, बी. एस-सी., एल. टी. ]

क्सफोर्डके कन्सरवेटिव विश्व-विद्यालयमें विजय प्राप्त करनेके पश्चात् अब यह आवश्यकता हुई कि गुरुजीका काम सारे युरोपमें अच्छी तरह प्रसिद्ध हो जाय। इस सिद्धिकेलिए ग्रेट ब्रिटेनके रायल इन्स्टीट्यशनके सिवा और कोई वैज्ञानिक परिषद् इतना प्रभावशाली और लोकमान्य नहीं समझा जाता था।

### रायल इन्स्टीट्यूशन

इस वृहत् परिषत्का इतिहास, जहां ऐसी ऐसी युगान्तर कर देनेवाली गवेषणाएं गत सौ बर्षसे की गयी हैं कि जिनसे वैज्ञानिक संसार चौंधिया उठा है, इस देशमें बहुत कम मालूम है। इसलिए मैं संक्षेपमें इस परिषत्द्वारा की हुई कुछ महत्वकी गवेषणाओंका वर्णन करूंगा। रायल इन्स्टीट्यूशन-की स्थापना कौन्ट रम्फर्ड और उनके कुछ मित्रों-की सम्मतिसे सं० वि० १८५६ में आविष्कार करने और inductive आगमनात्मक तथा प्रयोगिक वि-ज्ञानके सिद्धान्तोंको पुष्ट करने और प्रचार करनेके उद्देश्यसे हुई थी। इस परिषत्ने कभी राज्य-साहाय्य नहीं लिया वरन् अपनी ही बढ़ती हुई वैज्ञानिक कर्म्मशीलताके कारण बढ़ा और फैला। बहुतसी संस्थाओंकी नाईं जिनका दुःखमय इति-

General साधारण ]

हास प्रायः सभीको मालूम है पत्थर और भवन निर्माणने ही इसका वैज्ञानिक उत्साह नहीं दबा दिया वरन् इसका बाहरी सौंदर्य्य भीतरी बाढ़के साथ साथ बढ़ता गया। इसीकी छत्रच्छायामें बहुतसे मौलिक विचारोंका विकास और पुष्टि हुई जिनकी उपयोगिताके कारण इंगलैंडकी श्री वृद्धि होती गयी। इसी परिषत्में विद्युत् सम्बन्धी ऐसे युगान्तर कर देनेवाले आविष्कार हुए जिन्होंने वर्त्तमान कालिक साम्पतिक दशाको बिलकुल बदल दिया। जिन जिन प्रसिद्ध पुरुषोंने इस परिषद्की गवेषणाओंको जारी रखा और रखाया उन्होंने ऐसे ऐसे अनमोल काम किये जो सारे संसारकी अभिवृद्धिके कारण हुए।

सं० वि० १८५८ से १८६० तक टामस यंगने प्रकाशके व्यतिकरणके (Interference) ऐतिहासिक आविष्कारके द्वारा प्रकाश तरंगका (wave theory) सिद्धान्त यहीं निश्चय किया था।

सं० वि० १८५६ से १८७२ तक हम्फ्री डेवीने यहां काम किया। इसने विद्युत्-रासायनिक electro-chemistry विज्ञान सम्बन्धी बहुतसे आविष्कार किये। पोटाशके विश्लेषणमें, पोटासियम सोडियम और हरिण गैसके अलग करनेमें सफल हुआ तथा दलदलसे निकलनेवाली वायु और दीपशिखा सम्बन्धी आविष्कार करके प्रसिद्ध सेफ़टी लेम्प (रक्षक लम्प) बना डाला जिससे सहस्रों जानोंकी रक्षा हुई और हो रही है।

आधुनिक समयका सबसे बड़ा वैज्ञानिक मिचेल फाराडेने सं० वि० १८६० से १६२४ तक यहीं काम किया। इसने चुम्बकीय परिभ्रमणका Magnetic Rotation आविष्कार किया, हरिण और अन्य गैसोंको द्रव कर देनेमें सफल हुआ और युगान्तर कर देनेवाला चुम्बकीय-विद्युतका आविष्कार किया जिसके असंख्य उपयोगोंने जीवनकी वर्त्तमान दशामें बहुत कुछ परिवर्त्तन कर दिये। इस परिषत्में घुसते ही दर्शकोंको फाराडेकी जीवनपरिमाण मूर्ति दिखाई पड़ती है जिसपर कोई लेख नहीं है। किसी प्रकारके लेखसे अधिक भावोत्पादक एक लोहेका छल्ला है जिसको वह हाथमें पकड़े हुए है और जिसके चारों ओर ताम्बेके तारकी एक कुंडली लपेटी हुई है। इस कुंडलीके प्रभावसे जो विद्युत्धारा संसारमें प्रगट हुई वह इन्द्रके वज्रसे अधिक प्रभावशाली थी। यौगिक पदार्थोंके विद्युत् विश्लेषणके नियमोंका स्थिर करना इसी महात्माका काम था जो इसीके नामसे प्रसिद्ध भी हैं। इसीने विशिष्टि उपपादनी ग्रहण शक्तिको स्थिर किया, चुम्बकीय बलकी रेखाओंका मानस दर्शन किया और प्रकाशका चुम्बकीय परिभ्रमण निश्चित किया। जिन यन्त्रोंसे इसने यह सब आविष्कार किये वे बहुत ही सावधानीसे उसकी प्रतिष्ठाका स्मरण दिलानेकेलिए रखे हुए हैं और अब भी उन जिज्ञासुओंका उत्साह बढ़ानेका काम करते हैं जो फाराडेका अनुकरण कर, वैज्ञानिक खोजमें अपना जीवन व्यतीत करना चाहते हैं।

यहीं जान टिंडल भी सं० १६१० से १६४४ तक गवेषणाएं करता था और अपनी अद्भुत वाक्शक्ति और प्रयोगशक्तिकेद्वारा श्रोताओंको मुग्ध कर देता था।

वर्त्तमान् भौतिक-विद्या-विशारदोंमेंसे लार्ड रेले भी एक हैं। यह सं०१६४४ से १६६२तक यहीं काम करते रहे और अब भी इस परिषद्के अवैतनिक अध्यापक हैं। यह अध्यापक रेलेका ही काम था कि उन्होंने विद्युत्-मापप्रमाणोंके मानोंको ठीक ठीक निश्चित किया। उनके शब्द विज्ञान और विद्युत् विज्ञान सम्बन्धी काम प्रमाण माने जाते हैं। वायुमण्डलके नत्रजनका गुरुत्व निकालते हुए इन्हींको पहले पहले यह सूझ पड़ी थी कि इसमें और कोई गैस है जिसके पश्चात् अर्गनका पता लगा। इनकी वैज्ञानिक कर्म्मशीलताकी व्यापकता नीचे दिये हुए विषयोंसे अच्छी तरह समझमें आ जायगीः—जलके फुआरों और जल-बून्दोंके दृश्य, पतली प्लेटों (पट्टिकाओं) के रंग, शब्द-विकृति (Diffraction), व्यतिकरण पट्टियां, अर्गन सम्बन्धी

गवेषणा, सुननेकी सीमाएं, फेन, जानवरोंकी उड़ान।

सर जे. जे. टामसन सं० १८६२ से धनात्मक-विद्युत्-रश्मि, धनात्मक-विद्युत्-वाहक, विद्युत्-धारियों (electric striations), रसायनिक विश्लेषणको नवीन रीति, और रासायनिक साध्योंके अनुशीलनमें धनात्मक रश्मिके उपयोगोंके परिणामोंपर खोज कर रहे हैं।

सं० १८७४से सर जेम्स देवर रसायनिक विज्ञानके फुलरियन अध्यापक हैं। इनके निम्नांकित विषय सम्बन्धी खोज प्रसिद्ध हैं:-वायुका द्रवीभवन, द्रव वायु और परम-तापक्रमके शून्य विन्दु, स्फुर-प्रकाशन और ओज़ोन, द्रव वायुके वैज्ञानिक उपयोग, द्रव अभिद्रवजन, ठोस अभिद्रवजन, नवीन निम्न तापक्रमके दृश्य, तापक्रमके अधःस्वस्तिक और तत्सम्बन्धी साध्य, हीलियम और रेडियमके साध्यों और शून्य कुप्पे ( vacuum flask ) के आनेवाला युग इत्यादि। (अंतिम आविष्कार प्रयोगिक उपयोगोंके कारण बड़े ही महत्वका है)।

रायल इन्स्टीट्यूशनका यही क्रमागत इतिहास है। इस परिषद्के सामने व्याख्यान देनेकेलिए निमन्त्रित किये जानेसे बढ़कर विशेष सम्मान और कौन हो सकता है? इसी परिषद्में नियमित व्याख्यानोंकी श्रेणीके अतिरिक्त विशेष श्रेणीके भी व्याख्यान दिये जाते हैं जो फ्राइडे इवनिङ्ग डिस्कोर्स (शुक्रवार-संध्या-व्याख्यान) के नामसे प्रसिद्ध हैं। इन अधिवेशनोंमें प्रसिद्धि-प्राप्त विशेषज्ञोंकेद्वारा किसी नवीन आविष्कार वा किसी महान् वैज्ञानिक सिद्धान्तके नयेसे नये विकासपर एक घंटेका व्याख्यान दिलाया जाता है। फ्राइडे ईवनिंग डिस्कोर्समें व्याख्यान देना अद्वितीय सत्कार समझा जाता है। व्याख्यानदाता इतिहास-प्रसिद्ध भवनमें जाकर उस स्थानपर खड़ा होता है जहां डेवी और फैरेडे खड़े होकर अपने व्याख्यान देते थे और विना किसी परिचय कराए व्याख्यान आरम्भ कर देता है। परिचय कराए जानेकी आवश्यकता नहीं होती क्योंकि इस स्थानपर वही व्याख्यान दे सकता है जो सारे वैज्ञानिक संसारमें प्रसिद्ध समझा जाता है। वह अपना व्याख्यान सभापति वा श्रोतागणको सम्बोधन करके नहीं आरम्भ करता जैसा साधारणतः प्रचार है वरन् एकाएक आरम्भ कर देता है क्योंकि यह मान लिया जाता है कि वहांका व्याख्यान सारे संसारकेलिए दिया जाता है किसी विशेष जन समुदायके लिए नहीं। यह अनोखापन किसी नवीन दर्शकको जो रायल इन्स्टीट्यूशनके गत इतिहाससे परिचित नहीं है अचम्भेमें डाल देता है। अल्बेमारल स्ट्रीटमें बड़े बड़े विद्वान और सुशिक्षित श्रोतागण ही देख पड़ते हैं। सड़कमें खड़े मोटरों और गाड़ियोंके कारण इतनी भीड़ हो जाती है कि मार्ग बन्द हो जाता है। रास्तेके रुक जानेसे भी काममें बहुत कुछ हर्ज होता है इसलिए मार्गको बहुत देरतक बन्द न रखनेकेलिए यह परमावश्यक है कि व्याख्यान ठीक नौ बजे आरम्भ किया जाय और ठीक दसबजे समाप्त कर दिया जाय। यह परम्परागत रीति एक बार जब रायल इन्स्टीट्यूशनके उत्साहित श्रोतागणने एक स्वरसे गुरुजीके व्याख्यानको जारी रखनेकेलिए प्रार्थनाकी थी तोड़ देनी पड़ी।

### विद्युत् तरंगपर गुरुजीका व्याख्यान

रायल इन्स्टीट्यूशनमें व्याख्यान देनेका अद्वितीय सम्मान गुरुजीको तीन बार प्राप्त हुआ था। पहले पहल १८९७ की २९ वीं जनवरीके दिन गुरुजीने रायल इन्स्टीट्यूशनके श्रोताओंको विद्युत्-तरंगके व्याख्यानसे चकित और प्रसन्न कर दिया था। जिस यन्त्रका उन्होंने प्रचार किया वह ऐसा पूर्ण है कि बहुत ही सूक्ष्म और चकित कर देनेवाले प्रयोग ऐसी शुद्धताके साथ दिखलाये गये कि विश्वास ही नहीं होता था। लार्ड रेलेने धन्यवाद देते हुए कहा कि इस अद्भुत निर्देशनकी सत्यता प्रमाणित करनेकेलिए यदि दो एक बार प्रयोग बिगड़ जाता तो अच्छा होता। जो स्थान

फाराडे और टिंडल ऐसे प्रयोग कर्त्ताओंके प्रयोगिक निर्देशनोंको देख चुका है वहां लार्ड रेलेकी इस प्रशंसासे बढ़कर और क्या हो सकती है ? गुरुजीकी अद्वितीय प्रयोग सम्बन्धी कार्य-पटुताने पाश्चात्य संसारमें इतना प्रभाव डाला कि वह सचमुच पूरबके जादूगर कहलाने लगे। प्रसिद्ध हिरम मैक्सिम जो तत्कालीन बड़े बड़े वैज्ञानिकों और आविष्कार कर्त्ताओंमेंसे था गुरुजीके प्रयोगोंसे इतना चकित हुआ कि व्याख्यान समाप्त होनेपर उसने अपनेको केवल हिरम यन्त्र-वैज्ञानिक बतला कर गुरुजीसे भेट की। व्यक्तिगत कृपाकेलिए प्रार्थना करते हुए उसने गुरुजीके हाथ यह अनुभव प्राप्त करनेकेलिए छूना चाहे कि उनके हाथकी स्पर्शशक्ति कितनी सूक्ष्म है जिससे प्रकृतिकी नाड़ीको भी वह बड़े कौशलसे देख सकते हैं। इन प्रयोगिक कुतूहलोंकी अपेक्षा गुरुजीकी काल्पनिक दृष्टि भी किसी प्रकार कम कुतूहलजनक नहीं थी क्योंकि इसी दृष्टिसे उन्होंने पदार्थोंके विद्युत-आणविक गुण सम्बन्धी बहुत सी नई बातें पहली ही बार वैज्ञानिक संसारको बतलाई थीं। एक व्याख्यानमें सर हेनरी रास्कोने उनकी कार्य प्रणालीके विषयमें कहा था "यह उन पदार्थोंकी आन्तरिक आणविक बनावटके जाननेका द्वार खोल देनेवाली हैं जो साधारण नेत्रोंकेलिए बिलकुल अपार-दर्शक है और जिसकी जांच करनेका अन्य साधन अभीतक दृष्टिगोचर नहीं हुआ था परन्तु अब यह इतना प्रत्यक्ष है जैसे आकाश वा दिनका प्रकाश।" इसी व्याख्यानमें एक और महत्वका अविष्कार प्रकट किया गया। यह कुछ वस्तुओंकी Selective transparency चयनात्मक पारदर्शिताके सम्बन्धमें था जिसके कारण वही पदार्थ एक स्थितिमें रखनेसे बिलकुल पारदर्शक और दूसरी स्थितिमें जो पहली स्थितिसे समकोण बनाती हो रखनेसे बिलकुल अपारदर्शक हो जाता था। जब गुरुजी यही व्याख्यान देनेकेलिए बर्लिनमें हेल्महोज़की प्रयोगशालामें बुलाये गये, अध्यापक वारवर्गने जो हेल्महौज़के पदके उत्तराधिकारी थे गुरुजीको व्याख्यान-शालामें ले जाते हुए दूरसे ही अपने गवेषणालयको दिखलाया परन्तु उस गवेषणाके रहस्यको जिसमें चारवर्षसे स्वयम् लगे हुए थे गुप्त रखा। यह गवेषणा ऐसे महत्वकी समझी जाती थी कि उसको विशेष प्रकारसे गुप्त रखना आवश्यक था। इसलिए गवेषणालयका द्वार आध इंच ही खोलकर जल्दीसे बन्द कर लिया गया। जिस समय गुरुजी अपने प्रयोगोंका प्रबन्ध व्याख्यानशालामें कर रहे थे उस समय अध्यापक वारवर्गका ध्यान किसी विशेष वस्तुकी ओर खिंचा। यह एक विशेष प्रकारका स्फटिक था जिसको गुरुजीने पहले ही पहल खोज निकाला था जिसमें विद्युत्-तरंगकेलिए चयनात्मक पारदर्शिताका अद्भुत गुण था। इस गुणका निर्देशन भी उस चकित अध्यापकके सामने आध ही मिनटमें कर दिया गया। गुरुजीको बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह अध्यापक तुरंत ही व्याख्यान-शालासे बाहर झपटकर निकल गया और अपने सहकारी कार्लको लिवाते हुए और यह कहते हुए लौटा कि जो बात ४ वर्षसे निरन्तर खोज करते हुए भी नहीं प्रतिपादित हो सकी थी वह एक भारतीयसे क्षणभरमें कर दिखायी गई।

अध्यापक वारवर्ग भौतिक विज्ञानमें वस्तुतः प्रथम स्थान ग्रहण करनेके योग्य थे। इसीलिए उनकी प्रयोगशालामें अमेरिकाके बड़े प्रसिद्ध जिज्ञासु अध्यापक मिलिकन पधारे थे जिनकी परम-परमाणुक भार सम्बन्धी नापोंने वैज्ञानिक संसारको चकित कर दिया है। उस समय अध्यापक मिलिकन विद्युत्तरंगोंके विषयमें कुछ खोज करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने अध्यापक वारवर्गसे कुछ सहायता चाही। इसपर जर्मनके विद्वान्ने कहा 'इस विषयमें कलकत्ताका बोस नामक मनुष्य खोज कर रहा है जो ऐसा मनुष्य है कि दूसरोंके करनेकेलिए कुछ

बाक़ी नहीं छोड़ता"। यह समझकर वह अमेरिकन विद्वान् दूसरे विषयकी ओर झुका जिसमें उसने बहुत सी नवीन गवेषणाएं भी कीं। इस फ्राइडे ईवनिंग डिस्कोर्समें प्रयोगोंकी सफलता केवल उस (wireless detector) तार-रहित परम-ग्राहकके कारण हुई जो सूक्ष्मसे सूक्ष्म तरंगोंको निश्चयपूर्वक मालूम कर सकता था और जिसको गुरुजीने स्वयम् खोज निकाला था। इस प्रकारके परम-ग्राहकका महत्व व्यापारिक उपयोगके कारण बहुत बढ़ गया था। इसलिए व्याख्यानके आरम्भमें ही एक सिंडीकेटके सभापतिने गुरुजीके पास जाकर उस आविष्कारका पेटेन्ट करानेकी आज्ञा मांगी। परन्तु गुरुजीने अपने वैज्ञानिक खोजोंका बेचना स्वीकार नहीं किया जिसपर इलेक्ट्रिकल इंजीनियरनामक पत्रने अपना आश्चर्य यों प्रकट कियाः

"इस अद्भुत यंत्रका रहस्य किसी समय गुप्त नहीं रखा गया अतएव सारा संसार इसको व्यवहारमें लाकर धन कमा सकता है।"

इस व्याख्यानकी सफलता इतनी बड़ी हुई कि एक प्रसिद्ध विश्वविद्यालयका बड़े महत्वका अध्यापन कार्य गुरुजीको, यदि स्वीकार हो तो, लोग सौंपनेकेलिए तैयार हो गये। गुरुजीके बहुतसे मित्रोंने ज़ोर देकर कहा कि अन्तर्जातीय कारणोंसे भी युरोपके वैज्ञानिक संसारमें यह सम्मानित पद ग्रहण करना और गवेषणाओंके जारी रखनेका परम अवसर न जाने देना उचित है। परन्तु गुरुजीका यह दृढ विचार नहीं डिगा कि प्रत्येक भारतवासीका यह कर्तव्य है कि वह अपने देश-वासियोंके दुखको अपना दुख समझकर उसमें शरीक हो। इसलिए उनका स्थान भारतवर्षमें ही रहेगा और वह अपने देश और उस विद्यालयके-लिए काम करेंगे जिसमें उन्होंने उस समय प्रवेश किया था जब उनको कोई जानता भी न था। परदेसमें गुरुजीको उस प्रशंसासे बढ़कर सन्तोष-जनक और कोई नहीं मालूम हुई जिसे इलेक्ट्रीशिअन नामक पत्रने गुरुजीके देश और कालेजके सम्बन्धमें यों की थीः—

"वैज्ञानिक संसार डाक्टर वसुके उन गवेषणाओंकेलिए बहुत ही ऋणी है जिनको उन्होंने पूर्णकरके सारे संसारमें प्रकट कर दिया है। इन गवेषणाओंसे भारतवर्षका बहुत कुछ नाम हुआ और विशेषकर प्रेसीडेन्सी कालेज कलकत्ताका नाम हुआ जहांसे डाकृर बसु इस देशमें पधारे हैं।"

गुरुजीके रायल इन्स्टीट्यूशनवाले व्याख्यानके अन्तिम अंशका स्मरण अब भी बार बार होता है जब उन्होंने श्रोतागणसे एक बृहदाकार विद्युत् आर्गनकी * जिसमें असंख्य छिद्र लगे हुए हों और प्रत्येक छिद्रसे एक विशेष अकाश-स्वर निकलता हो कल्पना करनेको कहा।

"एक अदृश्य हाथकी कल्पना कीजिए जो भिन्न भिन्न छिद्रोंको बहुत ही शीघ्रताके साथ दबा रहा हो और स्वरोंकी उच्चताको बढ़ा रहा हो। इस प्रकार आकाश-स्वरके स्पन्दन प्रतिसैकिंड एकसे दस, सौ, हज़ार, लाख, करोड़ अरब, खरब इत्यादितक बढ़ते जायंगे! परन्तु जिस समय यह अकाश-समुद्र जिसमें हम सब उठते बैठते चलते फिरते और रहते हैं इन सब असंख्यों तरंगोंसे क्षुब्ध होता है हम लोगोंको इनका कुछभी ज्ञान नहीं हो सकता, क्योंकि हमारी किसी इन्द्रीमें ऐसे तरंगोंको मालूम करनेकी शक्ति नहीं है। जब आकाश-स्वरके स्पन्दन उससे भी अधिक होने लगते हैं हम लोगोंको थोड़ी देरकेलिए तापका कुछ ज्ञान होने लगता है। यह परिज्ञान केवल उसी समय होता है जब स्पन्दन एक सैकिंडमें कई खरबका होने लगता है। इससे भी अधिक स्पन्दन-से हमारे नेत्रोंपर कुछ प्रभाव पड़ने लगता है। पहले पहल आकाश-स्वर रक्तवर्ण दीखेगा फिर जैसे जैसे स्पन्दन बढ़ते जाते हैं और और रंगका

* आर्गन—एक प्रकारका अंग्रेजी बाजा होता है जिससे वायुको विशेष रुकावट देकर छिद्रोंद्वारा निकालनेपर स्वर निकलता है। छिद्रको स्टाप कहते हैं।

प्रकाश दृष्टिगोचर होने लगता है। यह परिज्ञान उस समय होता है जब स्वरके स्पन्दन प्रतिसैकिंड ४०० खरबसे ८०० खरबतक होते रहते हैं। इनसे अधिक संख्यामें स्पन्दन होने लगें तो भी हमारी परिज्ञान शक्तियां अनुभव नहीं कर पातीं। इससे हमारा ज्ञान आगे बढ़नेसे रुक जाता है। प्रकाश-की तनिक सी चमकके बाद अटूट अंधकार ही अंधकार है।

पदार्थोंकी सर्वव्यापिनी परिज्ञान-शक्तिपर व्याख्यान

दूसरी बार रायल इन्स्टीट्यूशनके सामने गुरुजी पदार्थोंकी सर्वव्यापिनी परिज्ञान शक्तिके आविष्कारका महत्व दिखलानेकेलिए बुलाए गए थे। इस समय उन्होंने ( automatic graphs ) स्वतः प्रवृत्तलेखनोंकेद्वारा जीवितों और अजीवितोंकी खींचातानी ( stress and strain ) के सामान्य इतिहासका प्रतिपादन किया। उस स्मरणीय दिन १० मई १६०१ ई० का रोमांचकारी व्याख्यान अब भी वही भाव उत्पन्न कर देता है।

"जिस समय इन स्वतः अंकित लेखोंको मूक गवाही मैंने देखी और इनमें सर्वव्यापिनी एकताकी अवस्थाका अनुभव किया जिसमें सभी वस्तुएं —राग जो प्रकाश-तरंगमें फरकता है, हमारे पृथ्वीके असंख्यों जीव और प्रकाशमान सूर्य्य जो हमारे ऊपर चमकते हैं—गुंथी हुई हैं, तभी मैं पहले पहल उस संदेसेका थोड़ासा अंश समझनेके योग्य हुआ जिसकी घोषणा मेरे पूर्वज गंगाजीके किनारे तीन सहस्र वर्ष पहले कर चुके थे। वह सन्देसा यह है :—

"जो इस परिवर्तनशील जगतके बहुत्वमें एकत्वका अनुभव करते हैं, सनातन सत्यका ज्ञान उन्हींको है अन्य किसीको नहीं, अन्य किसीको नहीं।"

इस तीसरे अवसरपर गुरुजीको वनस्पति-वर्गके मूक संसार सम्बन्धी नूतन आविष्कारोंपर व्याख्यान देनेकेलिए कहा गया। लार्ड रेलेने जो गुरुजीके काममें बड़ी रुचि रखते थे प्रयोगकी अत्यन्त सूक्ष्म गतिको समझकर जिसकी सफलता ऋतुको अनियमित अवस्थापर बहुत कुछ निर्भर थी, यह कहला भेजा कि एक या दो प्रयोगोंसे अधिकका यत्न न किया जाय। व्याख्यानका समय एक घंटेसे किसी प्रकार बढ़ाया नहीं जा सकता था इसलिए बीचमें तनिक सी गड़बड़से भी सफलतामें बहुत कुछ बाधा पहुंच सकती थी। सर मिचेल फास्टर ऐसे सिद्धहस्त प्रयोगकर्त्ता भी रायल इन्स्टीट्यूशनके सामने अपने एक व्याख्यानके आरम्भमें मेढ़कके हृत्स्पन्दनके एकाएक रुक जानेसे जो उस अवसरपर प्रतिपादनका विषय था इतना घबड़ा गए कि कुछ न कह सके। शरीर धर्म-विज्ञानका कोई प्रयोग इतना सरल नहीं है तो भी अपने समयके प्रमुख शारीर धर्म-वेत्ताओंकी श्रेणीमें होते हुए भी उस अवसरपर प्रयोगके दुहरानेमें असमर्थ हो गए। इसी कारण कठिन प्रयोगोंके प्रतिपादनकेलिए यही कहा जाता था "मत करो"। गुरुजीके व्याख्यानकेलिए एक अद्भुत प्रयोग विशेष प्रकारसे सोचा गया। विषय था रश्मि-रंगोंका प्रभाव और साबुनकी झिल्लीपर परावर्तित होते ही उसका अपूर्व परिवर्तन जिससे ( sympathetic vibration ) अनुकम्पित कम्पनका सिद्धान्त दिखलाया जाता। मिस्टर हाथने, जो टिंडलके विशेष सहायक रह चुके थे और इस समय रायल इन्स्टीट्यूशनकी प्रयोगशालाके अध्यक्ष थे हम लोगोंसे कहा कि व्यर्थ साहस करना उचित नहीं है। उन्होंने मुझे अकेलेमें समझाया कि गत सप्ताहमें ही जब वह साबुनकी झिल्ली सम्बन्धी कुछ प्रयोग कर रहे थे जिनको एक प्रसिद्ध वैज्ञानिकने करनेको कहा था झिल्ली अचानक उसी क्षण फट गयी जब अवसर आया। इसी प्रकार उन्होंने और भी उदाहरण दिये।

पौदोंके स्वतः लेखनपर व्याख्यान

इन सब सम्मतियोंके विरुद्ध गुरुजी यह भलीभांति समझते थे कि उनके सिद्धान्त कई वर्ष सर्वसाधारणके सन्मुख रह चुके हैं और अब

केवल उस अविश्वासको मिटाना रह गया है जिससे वह सबको मान्य हो जायं। प्रत्यक्ष निर्देशनके अतिरिक्त और कोई साधन नहीं है जो सर्वसाधारणको विश्वास करादे। इसलिए उन्होंने प्रयोगका दिखलाना ही ठाना और विफल मनोर्थ होनेकी भी कुछ परवाह नहीं की। रायल इन्स्टीट्यूशनके कई सहायक अध्यापक प्रयोग दिखलानेके कामोंमें सहायता देनेको तैयार थे परन्तु गुरुजीने कहा कि भारतवासियोंके सिवाय अन्य किसीसे इस निर्देशनके काममें सहायता न ली जायगी जिससे सारा संसार जाने कि अकेले भारतवर्षसे ही संसारको यह ज्ञान प्राप्त हुआ। सवेरा होते ही गुरुजी हम लोगोंको लेकर रायल इन्स्टीट्यूशनमें पहुंचे जहां प्रवन्धशाला ( preparation room ) में हम लोग अपने प्रयोगोंका प्रबन्ध एक मेज़पर कर सकते थे जिसका तख़्ता ज्योंका त्यों व्याख्यान आरम्भ करनेके कुछ पहले व्याख्यानशालामें उठा लाया जा सकता था। मेरे साथी उस समय ज्योतिप्रसाद सरकार थे। गुरुजीने सारी सामग्रीके एक एक अंशको अच्छी तरह देखा भाला और हम लोगोंसे नियमपूर्वक विधान ठीक करनेको कहा। अब तक हमारे चित्त बहुत ही उद्विग्न थे परन्तु जब समय आ गया गुरुजीने हम लोगोंसे सारे उद्वेगों और चिन्ताओंको हटा देनेकेलिए कहा क्योंकि पहलेसे जिन जिन बातोंकी आवश्यकता प्रतीत होती थी उनका प्रबन्ध कर लिया गया था। इसलिए भविष्यकी चिन्ता करना व्यर्थ था। तब हम लोग शान्त हो गये और परिणामकी शंका भी मिट गयी। गुरुजीका व्याख्यान पौदोंके स्वतः अंकन और उनके गूढ़ आशयपर था। विद्याके इस बड़े केन्द्रके पास ही काच-सामुद्रिकवेत्ताओं और रहस्यवेत्ताओंकी बड़ी भारी भारी संस्थाएं बांड स्ट्रीटमें थीं। गुरुजीने अपना व्याख्यान इन्हीं संस्थाओंके आचार्योंका कुछ वर्णन करते हुए आरम्भ किया जो प्रायः अपरोक्षज्ञानवादकी सीमा-तक पहुंच चुके थे और दावा करते थे कि किसी मनुष्यका आचरण और उसकी पूर्वावस्था केवल उसके हस्तलेखसे बतला सकते थे। ऐसे दावोंकी सच्चाईपर अविश्वास किया जा सकता है; परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि मनुष्यकी हस्त-लेखन शैली उसकी मानसिक और शारीरिक दशाके परिवर्तनसे बहुत कुछ बदल जाती है। इस समय प्रसिद्ध गनपौडर षडयन्त्रके रचयिता गैफ़ाक्सकी जांच होनेके पहलेके और फांसीकी आज्ञा हो जानेके बादके हस्ताक्षरोंके फ़ोटो पर्देपर दिखलाये गये। इन हस्ताक्षरोंकी भिन्नता तुरंत ही दिखने लगी। गैफ़ाक्सके अंत समयकी बांकी और ऐंठी लिपि, जिसको उसने पृथ्वीपर उस दिनके प्रातःकालके अंधेरेमें अपने अपराधोंको लिखित स्वीकृतिपर लिखा था स्वयम् उन विचारोंका भेद खोल रही थी जो एकान्त कारागारमें उस भयानक रात्रिमें उत्पन्न हुए थे जिसके सवेरे उसको फांसी होने वाली थी। यह इतिहास परीक्षात्मक आंखोंके सामने मानवी स्वलेखनोंकी टेढ़ी सीधी रेखाओंकेद्वारा प्रत्यक्ष दिखने लगा। शान्तावस्थामें वनस्पति जीवनका गुप्त इतिहास भी ऐसा ही होता है। आंधी, पानी, धूप, छांह, ग्रीष्म ऋतुकी गरमी और जाड़ेका शीत, वृष्टि, अनावृष्टि और कितने अन्य प्रकारकी घटनाएं वनस्पतियोंपर गुज़र जाती हैं। यह सब वनस्पतियोंपर किस प्रकारका निर्दय व्यवहार करती हैं और कौनसा प्रभाव छोड़ जाती हैं यही सब प्रश्न उठाते हुए गुरुजीने समझाया कि किस प्रकार वनस्पतियां अपना आन्तरिक जीवन वृत्तान्त बाहरी धक्कोंके प्रत्युत्तरमें अंकनद्वारा प्रकट कर सकती हैं। अब प्रयोगोंकी श्रेणी आरम्भ हुई। प्रत्येक प्रयोग पिछले प्रयोगसे विचित्र समझ पड़ता था। साबुनकी झिल्ली जो प्रकाशको परावर्तित करती थी फटी नहीं वरन् दूरसे एक चिल्लानेके शब्दके उत्तरमें अनुकम्पित कम्पन करने लगी। रंग-चित्र (colour pattern) जो अबतक विलीनावस्थामें था मोरके हरे और पिघले सुवर्णके रंगोंके

भंवरमें बदल गया। लाजवन्तीके पौदेने जो मेज़पर रखा हुआ था अपने आप अपने स्नायविक धक्कोंकी गति अंकित कर दी। बन-चांडाल वा टेलिग्राफ़ प्लान्टने अपने स्पन्दनके धक्कोंको अंकित कर दिया और मृत्युका धक्का लगनेपर मृत्युके कष्टप्रद ऐंठनको भी लिख दिया। यह सब प्रयोग बड़ी सफलतापूर्वक दुहराये गये जिससे समय व्यर्थ नष्ट नहीं होने पाया। एक प्रयोग समाप्त होनेपर श्रोतावृन्दकी जिसमें युरोपके प्रसिद्ध प्रसिद्ध विद्वान् सम्मिलित थे उत्साहवर्द्धक करतलध्वनि गूंज उठती थी। जिस समय गुरुजीने उन मूक साथियोंके इतिहासको जो हमारे घरके आसपास चुपचाप फलते फूलते हैं और उनके करुणामय जीवनको जिसमें बोलनेकी सामर्थ्य नहीं है सुनाकर व्याख्यान समाप्त किया, उस समय सब श्रोता अवाक बैठे रह गये जिससे सारी मंडलीमें शान्तिका साम्राज्य स्थापित मालूम होता था।

---

## चतुर बैरिस्टर

[ ले० प्रेमवल्लभ जोषी, बी० एस-सी० ]

गताङ्कसे आगे

आज रूसके राज्यमें रणका डंका बज रहा है। चारों ओर लोग जोशमें भरे हुए फिर रहे हैं। सड़कोंपर झंडे लिये हुए लोगोंके झुण्डके झुण्ड चले जा रहे हैं। जिधर देखो उधर "Long live Russia" "Long live the Little Father" 'रूसका अटल राज रहे' 'हमारे छोटे पिता अमर हों' की ध्वनि सुनाई दे रही है। इधर परेड हो रही है, उधर लोग भागे चले जा रहे हैं कहीं कुछ कहीं कुछ—

* * * *

इस सबका कारण?

आज रूसने जर्मनीके विपरीत युद्ध करनेकी ठानी है। आज ज़ारने भी अपने मित्र राष्ट्रों फ्रांस बेलजियम तथा सरवियाकी रक्षा करनेका प्रण किया है। आज रूसकी सेनाको १० घंटेके भीतर रणकेलिए कूच करनेका हुक्म हुआ है।

General साधारण ]

यही सब जोशका कारण है। इसीसे सब खलबली मची हुई है। भट्टाचार्य्यजी भीड़को काटतेहुए बिसमार्क होटलकी ओर चले जा रहे थे। इनके चेहरेसे मालूम होता था कि ये बहुत घबराए हुए हैं। ख़ैर, ये बिसमार्क होटल पहुंच सीधे मानकरके कमरेमें घुसे। मानकर इस समय अपने कमरेकी खिड़कीसे रूसी लोगोंका तमाशा देख रहे थे। भट्टजीने पीछेसे पहुंच एक चपत इनके जड़ ही तो दी और बोले "कहो क्या हाल है? रुपया आया कि नहीं?" मानकर लज्जित होकर "अभी नहीं आया, लेकिन आता ही होगा। जल्दी क्या है?"।

भट्ट०—देखो मानकर! तुमसे हम एक काम लेना चाहते हैं। यहां लड़ाई छिड़ गई है। जाने क्या हो क्या न हो। तुम हमारे इस रेडियमको लेकर आज ही हिन्दुस्तान चले जाओ। वहां पहुंच इसे बड़ी सावधानीसे रखना। मुझको अभी ३०, ४० लेकचर और सुनने हैं। फिर मैं भी आऊंगा। हिन्दुस्तानमें ही इस रेडियमको बेच लेंगे। बोलो क्या विचार है? अगर स्वीकार करो तो मैं तुम्हें रास्तेका ख़र्च भी दे देता हूं और हिन्दुस्तान पहुंचकर यदि वह रेडियम हमें पूरा पूरा सौंप दिया तो हम ३ हज़ार रुपया भी छोड़ देंगे। बोलो?"

"अहा! हा! नेकी और पूछ पूछ"—मानकरको इससे अच्छा और क्या मिल सकता था। ये तुरन्त तैयार हो गए और अपने एक दो मित्रोंके नाम कौलम्बोको पत्र लिख आप लाश्वारी होटल पहुंचे। भट्टाचार्य्य बाबू पिचब्लैन्डीके टुकड़ोंको बड़ी सावधानीसे एकत्रित कर रहे थे। कांटा तराज़ू सब तैयार था। मानकरके पहुँचते ही भट्ट बाबू कीटको तोलने लगे कुल १००५ पौंड बैठा।

मानकर—ठीक है।

भट्ट०—देखोजी 'आहारे व्यवहारे च त्यक्त लज्जा सुखी भवेत्' इस कारण तुम हमको एक रुक्का लिखदो कि इतना रेडियम पाया।

मानकर तुरन्त राज़ी हो गए। मेज़पर बैठकर आपने रुक्का लिखना शुरू किया।

"मैं कि मानकर बेटा पी. टी. मानकर महाजन कौलम्बोका बिना किसीके फुसलाए या बहकाए, अपने होश हवाशके साथ लिख देता हूं कि मैंने आज ता० ५ दिसम्बर सं० १९१४ को मि० भट्टाचार्य्यजीसे १००५ पौंड रेडियमकी कीट पाई। इसे मैंने बहिफ़ाज़त हिन्दुस्तान पहुँचा देनेकी प्रतिज्ञा की है, जिसके बदलेमें मुझे भट्टाचार्य्य बाबूने राह ख़र्च देनेका और तीन हज़ार रुपये जो इन्होंने मुझे कर्ज़ दिये हैं छोड़ देनेका वादा किया है।

गवाह दः क्यूचोमी।
मैनेजर, लाश्वारी होटल

मानकर साइबीरियासे चल पड़े। इनके आनेके बाद तारद्वारा रुपया पहुँचा। तबतक भट्टबाबू भी पैट्रोग्रैड पहुँच गए थे। तार कौलंबो वापिस आया। घरमें हाहाकार मच गया। मानकर क्या हो गए। भट्ट बाबूने भी तारद्वारा रुपया स्वीकार नहीं किया।

इस चिन्तामें मग्न बूढ़े पी. टी. मानकर इधर उधर तार उड़ा रहे थे कि एकाएक पिछले इतवारको विलायती डाकका लिफ़ाफ़ा ले दीनानाथ उनके पास गए और उनको उनके पुत्रका कुशलसमाचार सुनाया। मानकरने अपने पत्रमें रेडियमका हाल तो लिखा था पर आगे यह नहीं कहा था कि उसने अपना हिस्सा बेच डाला है।

बस, यही महाजनके घरमें खुशीका कारण है। एक तो इकलौता बेटा दूसरे इतने वर्षोंके उपरान्त घर लौटकर आया खुशी न हो तो क्या हो।

मिस्टर मानकरको भी घर पहुँचनेकी बड़ी खुशी हुई। आज एक मित्रके घर भोजन पाया, कल दूसरेके, परसों टी पार्टी—दो माह यों ही बीत गए। रेडियमके बक्सका ख्यालतक भी न रहा।

एक दिन सन्ध्याके तीन बजे मिस्टर मानकर टेनिस खेलनेकी तैय्यारी कर रहे थे कि तारवाला तार लेकर पहुंचा। मानकरने तार फाड़कर पढ़ा था कि उनको रेडियमकी सुध आई। तार भट्टाचार्य्यजीने कलकत्तेसे भेजा था और उसमें यह लिखा था—

"Arrived yesterday coming to take Radium Friday" अर्थात मैं कल आ पहुंचा शुक्रवारको रेडियम लेने आऊंगा।

अब तो मानकर टैनिस वैनिस सब भूल गए और रेडियमके बक्सको निकाल उसकी कीट तोलने लगे। १—२—३—४—१००१ पोएड हैं! यह क्या? ४ पौंड क्यों कम हो गया। फिर तोला वही १००१ पौंड बैठा। हाय हाय अब क्या होगा भट्टजीका स्वभाव सबको मालूम ही है। वह अपने पिताको भी न छोड़ें। अब तो वह अवश्य ही नालिश करेंगे।

मानकर शोकसागरमें डूब गए। किनसे कहें क्या कहें बौक्स खोला भी न था कील काँटे सब जुड़े हुए थे। फिर यह कैसे घट गया कहीं वहां तो तोलनेमें ग़लती नहीं हो गई थी। नहीं जी वहां तो स्प्रिंगदार तराज़ू थी उसकी सुई ठीक १००५पर थी। वही तराज़ू यहाँ भी है फिर क्या कारण है।

मानकरके ऊपर घोर दशा आई हुई है क्या हो क्या न हो!

मंगल, वृहस्पति, शुक्र, आज शामको मानकरके जीवनका फ़ैसला है, आज मानकरका मान भट्ट बाबूके हाथ है। सिर्फ़ चार पौंडकी कमी है वह कमी भी शायद भट्ट बाबू इन्हें क्षमा ही कर दें। पर इस कीटमें!

नहीं ऐसा कदापि नहीं होगा। रुक्का भट्ट बावूके पास है, उसमें साफ़ लिखा हुआ है कि १००५ पौंगड वापिस देंगे।

भट्ट वावू आपहुंचे। आज ही रातको आप कलकत्ते वापिस जायंगे। आपने आ हाथ मुँह धोया और कुछ भोजन कर मि० मानकरसे कीट तोलनेको कहा।

मानकरका हाथ कांप रहा है। कीट तोली गई—१००१ पौंड बैठी।

भट्ट—क्यों चार पौंड क्या हो गई ?

मानकर—भाई क्या कहूँ ईश्वर साक्षी है, मैंने नहीं ली।

भट्ट•—तो क्या मैंने ली। देखो मानकर भलाईका बदला हमको यह मिला। जिनकी विपत्तिमें रक्षाकी उनका यह वर्ताव, बेईमानी है—लाकर ४ पौं० कीट रक्खो नहीं तो हम नालिशकर देगें।

मानकर—भाई सच कहता हूँ। मेरे पास कीट नहीं है। तोलकर देखा सिर्फ़ १००१ पौं० निकली। बाक़ी कहाँ गई मुझे नहीं मालूम। निश्चय जानो मैं ६ पौन्डकेलिए बेईमानी नहीं करूंगा। बक्सको मैं बड़ी हिफ़ाज़तसे लाया। कहीं खोलातक नहीं यह मेरा मन्दभाग्य है। विश्वासघात करना मेरे आगे बड़ा पाप है। सच जानो यह कुछ भ्रम होगा।

भट्ट०—अच्छा तो लाओ हमारे ३ हज़ार रुपये।

मानकर---क्यों साहेब रुक्केमें क्या लिखा है ?

भट्ट०—रुक्क़ा अगर पूछोगे तो अदालतमें बातें करूंगा—

मानकर (गुस्से)-डराते किसे हो, कर लो जो कुछ करना हो। रुपया शर्तके मुताबिक मुझे नहीं देना है। रहा ४ पौंडका झगड़ा सो मुझे पूर्ण विश्वास है कि इसका कोई कारण होगा, सो न्यायाधीशके सामने भुगत लेंगे। पाठक, यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि भट्ट बावूने मानकरके ऊपर १२ हज़ारकी नालिश कर दी।

[ असमाप्त ]

---

## चुम्बक

[ ले० शालग्राम भार्गव, एम० एस-सी० ]

### भूमिका
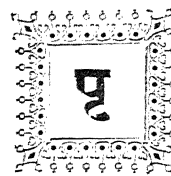
पृथ्वीपर सैकड़ों जगह और भारतवर्षमें कहीं कहीं, विषेशतः गवालियर राज्यमें, एक प्रकारका काला पत्थर मिलता है जिसमें यह शक्ति होती है कि लोहेकी चीज़ोंको अपनी ओर खेंच लेता है, जो उससे जाकर चिपट जाती हैं। चिपटी हुई चीज़ोंको छुड़ानेसे यह स्पष्टतया ज्ञात हो जाता है कि लोहेकी चीज़ उस काले पत्थरकी ओर खिंची जा रही हैं। इस काले पत्थरको जिसमें लोहेकी वस्तुओंको अपनी ओर खेंचनेकी शक्ति है लोहचुंबा अथवा चुम्बक कहते हैं।

इस समय मैं यह नहीं बतला सकता कि भारतमें पहिले पहल चुम्बक किसने और कहां पाया, पर ऐसी बातें बतलाई जा सकती हैं कि जिनसे पाठक कुछ अनुमान लगा सकते हैं। गुजरातमें प्राचीन कालका बना हुआ एक मन्दिर था जिसमें ठाकुरकी प्रतिमा हवामें लटकी हुई थी। जब मन्दिरपर आघात हुआ और मन्दिर तोड़ने और मूर्ति खंडित करनेकी इच्छासे चार कोनोंमेंसे एक कोना गिराया गया तो मूर्ति भी पृथिवीपर गिर पड़ी। इससे केवल इतना ही नहीं प्रतीत होता है कि जिस समय मन्दिर बना उस समय चुम्बक मिलता था किन्तु यह भी प्रतीत होता है कि बनानेवाले यह भी जानते थे कि चारों ओर चुम्बक किस प्रकार लगावें कि लोहेकी वस्तु हवामें लटकी रहे। उस समयके भारतवासियोंका चुम्बक सम्बन्धी ज्ञान बड़ी उच्च कोटिका था, और यदि इस शास्त्र-

Magnetism चुम्बकत्व ]

में बराबर उन्नति होती चली आती तो वर्तमान समयमें न मालूम वह कितनी उन्नत दशामें होता।

परन्तु किसी कारणसे इस विषयमें अधिक गवेषणाएं नहीं हुईं। भारतवासियोंको केवल इतना ही मालुम रहा कि चुम्बक लोहेको अपनी ओर खेंच लेता है। कभी कभी कोई बालक अपनी चतुराई दिखानेकेलिए एक सुई थालीमें रख और एक छोटासा चुम्बक उँगलियोंके बीचमें छिपा थालीके नीचे इधर उधर चलाता है, जिससे सुई भी थालीमें इधर उधर चलने लगती है। यह करतब दिखला कर बालक कहता है कि उसकी उंगलीमें अद्भुत शक्ति है जिसके कारण सुई उसकी उंगलीके साथ साथ चलती है। इससे यह स्पष्ट है कि देशकी प्रचलित बातोंको बच्चे शीघ्र ही जान जाते हैं जिससे उनकी शिक्षामें बड़ा सुभीता होता है।

चीनका इतिहास देखनेसे ज्ञात होता है कि ५००० वर्ष पूर्व भी वहांके नाविक एक स्थानसे दूसरे स्थानको जानेकेलिए दिशाका पता इसी चुम्बकसे लगाया करते थे। यह हम आगे बतावेंगे कि इससे दिशाका पता कैसे चलता है। यूरोप-वाले आजकल भी जहाज़ोंपर इससे ही दिशाका पता चलाते हैं। हिन्दू जो बड़े ज्योतिषी थे दिशा-का पता तारोंसे लगा लेते होंगे। यूरोपके इतिहासमें चुम्बकका उल्लेख ११ वीं शताब्दीमें मिलता है। इसके पश्चात् वहांके लोग उसके गुणोंकी खोजमें लग गए और उससे असीम लाभ उठाया।

चुम्बकके गुण

किसी काग़ज़के टुकड़ेपर एक चुम्बक रखो और लोहेका बुरादा अथवा लोहेके बारीक तारोंके छोटे छोटे टुकड़े उसपर बुरक दो। चुम्बकको हाथ-में उठालो और उसे उलटा कर दो जिससे कि उसका वह तल जिसपर आपने लोहेका बुरादा डाला था नीचे अथवा पृथ्वीकी ओर हो जाय। बुरादा
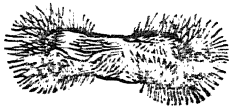
चित्र नं० १

चुम्बकके बीचके भागसे गिर जायगा और इतना भाग छोड़ शेष चुम्बकपर दोनों छोरोंतक लगा रहेगा। बुरादा अधिकांश सिरोंपर ही चिपटा रहेगा जिससे यह प्रतीत होता है कि सबसे अधिक आकर्षण शक्ति सिरोंपर है; इसीलिए इन को चुम्बकीय शक्तिका केन्द्र अथवा केन्द्र कहते हैं।

एक तागेके सिरेपर इस प्रकारके दो फँदे बनाओ कि उनमें रखा हुआ चुम्बक सीधा लटका रहे जैसा चित्र नं० २ में दिखलाया गया है। थोड़ी देरतक चुम्बक इधर उधर घूमता रहेगा फिर इस प्रकार ठहरेगा कि उसका एक सिरा उत्तरकी ओर और दूसरा दक्षिण-की ओर होगा। जो सिरा उत्तरकी ओर हो उसपर लाल स्याही, पेन्सिल अथवा रेतीसे एक चिन्ह बनादो जिससे यह पहचान लिया जाय कि कौनसा सिरा उत्तरकी ओर रहता है। इस प्रकार लटकाया हुआ चुम्बक एक क्षितिज धरातलमें चारों ओर घूम सकता है। यह चुम्बक लटकाने-की बहुत ही सरल रीति है किन्तु और भी कई रीतिसे लटकाये हुए चुम्बक पाठकोंके देखनेमें आवेंगे। दो रीतियां अधिक प्रचलित हैं। उनको हम वर्णन किये देते हैं:—
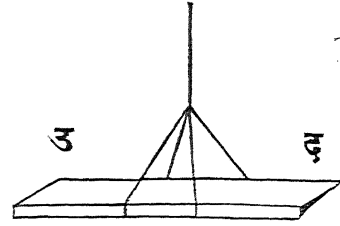
चित्र नं० २

(१) एक काग़ज़की रकाब बना लेते हैं और उसको धागेसे लटका देते हैं। (चित्र ३)
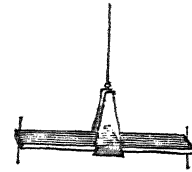
चित्र नं० ३

(२) कभी कभी पीतलके तारमें दो आंकड़े अथवा कुन्दे लगा लेते हैं। इस तारको डोरेसे लटका देते हैं, और चुम्बकको कुन्दोंमें रख देते हैं। (चित्र ४)

( ३ ) यह रीतियां तो चुम्बकको लटकानेकी हैं। चुम्बक लटकाये जानेकी बजाय चूलपर भी रखा जा सकता है। चुम्बकके बीचमें एक छेद कर लेते हैं। और उस छेदमें एक छोटा सा प्याला लगा देते हैं जिसकी भींत पीतलकी किन्तु पैंदा शीशे अथवा पत्थरका होता है। इसको एक नौकीली कीलपर रख देते हैं। चित्र ५।
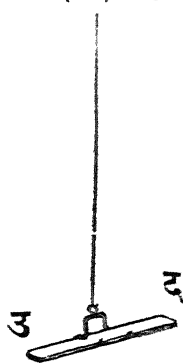
चित्र नं० ४

इस रीतिसे चूलपर रखा हुआ चुम्बक भी क्षितिज धरातलमें चारों ओर घूम सकता है। इस प्रकारके छोटे छोटे चुम्बक दिग्दर्शक या दिक्सूचक (कुतुब नुमा Compass needle ) के नामसे बाज़ारमें मिलते हैं। यह एक छोटेसे बक्समें बन्द होते हैं जिससे हवासे न हिल सकें। इस बक्सका ढकना शीशेका होता है जिसमेंसे चुम्बक दीखता रहता है।
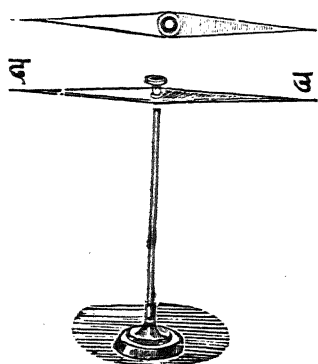
चित्र नं० ५

इस प्रकारसे लटकाये हुए चुम्बकको जो क्षितिज धरातलमें प्रत्येक ओर घूम सकता हो, यदि हाथसे किसी ओर हटा दिया जाय तो यह फिर घूम घामकर अपनी पहली स्थितिमें आकर ही ठहरेगा। जो सिरा पहिले उत्तरकी ओर था वह उत्तरकी ओर ही आ जायगा। यदि यह सिरा दक्षिणकी ओर भी करदें तो भी यह उधर नहीं ठहरेगा और घूमकर फिर उत्तरकी ओर ही आजायगा। ऐसे क्षितिज धरातलमें घूमनेवाले चुम्बकसे दिशाका पता चल सकता है इसलिए इसका नाम दिक्सूचक पड़ा।

इस दिक्सूचक चुम्बकके पास एक लोहेका टुकड़ा लाओ। चुम्बक लोहेके टुकड़ेकी ओर खिच आयगा। इससे यह मालूम हुआ कि चुम्बक ही लोहेको नहीं किन्तु लोहा भी चुम्बकको अपनी ओर खेंचता है अर्थात् इन दोनोंका खिचाव अथवा आकर्षण परस्पर है और जो दोनोंमेंसे अस्थिर होता है वही स्थिरकी ओर खिँचता है।

एक दूसरा चुम्बक लो और उसको भी इसी प्रकार लटकाकर उसके उत्तरी और दक्षिणी सिरे मालूम कर लो। फिर इनमेंसे एकको लटकाकर दूसरेका उत्तरी सिरा लटके हुए चुम्बकके उत्तरी सिरेके पास लाओ तो देखोगे कि लटके हुए चुम्बकका उत्तरी सिरा उससे दूर हटने लगता है। यदि दक्षिणी सिरा लाया जाय तो लटके हुए चुम्बकका उत्तरी सिरा उसकी ओर खिचेगा। इसी प्रकार लटके हुए चुम्बकके दक्षिणी सिरेके पास दूसरे चुम्बकका दक्षिणी सिरा लानेसे वह हटेगा, और उत्तरी सिरा लानेसे वह खिँचेगा। इन प्रयोगोंसे यह मालूम हो गया कि समान (सजातीय) सिरे एक दूसरेको हटाते हैं और असमान (विषम जातीय) सिरे एक दूसरेको खेंचते हैं। हटाना (निरा करण) ही चुम्बककी पहिचान समझना चाहिये क्योंकि चुम्बक लोहेकी ओर भी खिंच आता है।

चुम्बकका एक और गुण यह है कि जो लोहेका टुकड़ा उसके पास रखा जाता है वह भी चुम्बक बन जाता है। चुम्बकको एक लकड़ीके टुकड़ेपर रखिये, और उसके पास एक मुलायम लोहेकी छड़ उतनी हीउंचाईपर रखिये। लोहेके छोटे छोटे टुकड़े इस छड़के पास लानेसे उसी प्रकार चिपट जायंगे कि जैसे चुम्बकसे चिपटते हैं। बीचमें बिलकुल नहीं होंगे, सिरोंपर अधिक चिपट

जायँगे और चुम्बकके हटानेसे पृथ्वीपर गिर जायंगे। यदि चुम्बक और लोहेके टुकड़ोंको पृथ्वीपर ही रखते तो यह बात न दिखाई देती। चुम्बक फिर छड़के पास लानेसे लोहेके टुकड़े उससे फिर चिपट सकते हैं किन्तु फिर चुम्बक हटानेसे फिर गिर जायंगे।

यह मुलायम लोहेका टुकड़ा उस अस्थिर चित्तवाले मनुष्यकी तरह है जो जबतक सतसंगमें रहता है अच्छे काम करनेको उद्यत रहता है परन्तु जैसे ही सतसंगसे हटा कि सद्विचारोंको भी त्याग देता है। परन्तु कड़ा लोहा और फौलाद इस मुलायम लोहेकी तरह नहीं हैं। इनके टुकड़ोंमें हटानेपर भी कुछ चुम्बकत्व बच रहता है। वास्तवमें मुलायम लोहेमें भी कुछ न कुछ चुम्बकत्व बच ही रहता है, पर यह बहुत ही कम होता है। लोहे और फ़ौलादमें केवल दरजेका ही अन्तर है।

यदि लोहेकी छडके पास चुम्बकका उत्तरी सिरा हो तो इसके उस सिरेके पास जो चुम्बकसे दूर है एक दिग्दर्शक लानेसे मालूम हो जायगा कि लोहेकी छड़का वह सिरा उत्तरी है और पासवाले सिरेके पास दिग्दर्शक लानेसे वह दक्षिणी सिरा निकलेगा। इसके जांचनेमें चुम्बकका पास होना थोड़ीसी कठिनाई डालेगा। यदि चुम्बकका दक्षिणी सिरा इसके पास हो तो लोहेके टुकड़ेका दूरवाला सिरा दक्षिणी
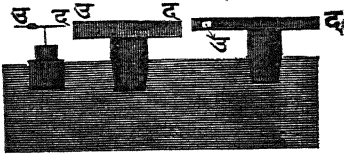
चित्र नं० ६

होगा और पासवाला उत्तरी, केवल चुम्बकके छोरोंकी स्थिति बदल देनेसे ही यह बात देखी जा सकती है। इससे हमको मालूम हो गया कि चुम्बक अपने पास रखे हुए लोहेको चुम्बक बनाता है और इस लोहेका चुम्बकके पासका सिरा उस चुम्बकके सिरेके असमान और दूरवाला सिरा समान होता है। इससे यह फल निकाल सकते हैं कि चुम्बक लोहेको लोहा समझकर नहीं खींचता किन्तु चुम्बकका वह सिरा जिसके पास लोहा आता है पहिले उस लोहेके पासवाले सिरेमें असमान सिरा उत्पन्न कर देता है और तब दोनों असमान सिरे आपसमें एक दूसरेको खेंचते हैं। (देखो चित्र ६)

इस चुम्बकको लोहे अथवा फौलादके किसी टुकड़ेपर १०-१५ बार फेरनेसे वह लोहे वा फ़ौलादका टुकड़ा स्वयं ही चुम्बक बन जाता है। इसी कारण बाज़ारमें यह चुम्बक पत्थर (प्राकृतिक चुम्बक) बहुत कम मिलता है। बनाये हुए (कृत्रिम चुम्बक) मिलेंगे और वे पांच प्रकारके होते हैं।

१. दीर्घाकार जैसा चित्र के ऊपरके भागमें दिखाया गया है।
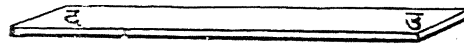
चित्र नं० ७

चित्र नं० ८

२-३. चौकोर अथवा गोलदंड। चुम्बक देखो चित्र ७ और ८।

४. बनेटी की शकलका चुम्बक (चित्र ९)
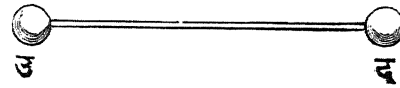
चित्र नं० ९

५. घोड़ेकी नालकी तरह मुड़ा हुआ अथवा नालचुम्बक।

अब आप कोईसा भी चुम्बक लेकर किसी मोज़े बुननेकी सुई अथवा किसी टूटी घड़ीके फ़नरके टुकड़ेको चुम्बक बनालें या बना बनाया पतला चुम्बक जिसको तोड़ सकें ले लें। बीचमें इसके
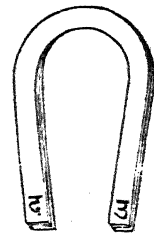
चित्र नं० १०

कोई शक्तिका केन्द्र नहीं है। अब यदि चुम्बकको दोनों हाथोंमें ऐसे थामें कि दहने हाथमें उत्तरी और बाएँमें दक्षिणी सिरा हो और बीचमेंसे तोड़ें तो आप यह समझेंगे कि केवल उत्तरी सिरा दहने हाथमें और दक्षिणी सिरा बाएँ हाथमें रह जायगा। परन्तु प्रत्येक टुकड़ेके सिरोंको दिक्सूचकके पास ले जानेसे ज्ञात होगा कि हर एक टुकड़ेके उत्तरी और दक्षिणी सिरे हैं। जो सिरा पहिले उत्तरी था वह उत्तरी ही रहा और जो पहिले दक्षिणी था वह दक्षिणी ही रहा पर उत्तरी सिरेवाले टुकड़ेका दूसरा सिरा दक्षिणी और दक्षिणी सिरेवालेका दूसरा सिरा उत्तरी हो गया। लोहेका बुरादा डालनेसे मालूम होगा कि प्रत्येक टुकड़ेके सिरेपर बुरादा लग गया है और मध्य भाग खाली है। चुम्बकके दो टुकड़े करनेसे उसके जैसे ही दो चुम्बक पैदा हो जाते हैं। इसी प्रकार तोड़ तोड़कर चुम्बकके कितने ही टुकड़े क्यों न करलें प्रत्येक भाग चुम्बक ही मिलेगा। इससे यह समझा जाता है कि चुम्बकका प्रत्येक अणु ही चुम्बक है। लोहेके प्रत्येक अणुको भी चुम्बक ही समझना चाहिये क्योंकि केवल चुम्बक फेरनेसे लोहा चुम्बक हो जाता है। उसके स्वभावमें इतना बड़ा परिवर्त्तन अवश्य हो जाता है किन्तु टुकड़ेको चुम्बक बनानेके पहिले और पीछे अच्छीसे अच्छी तराज़ूमें भी तोलनेसे उसके बोझमें कोई अन्तर नहीं मिलता है। रासायनिक क्रियाओंसे इस लोहेके टुकड़ेकी जाँच करनेसे मालूम होगा कि चुम्बक बननेके बाद भी वह ऐसा ही लोहा है जैसा पहले था। इसलिए मानना पड़ता है कि लोहेका प्रत्येक अणु वास्तवमें चुम्बक ही होता है। जिन क्रियाओंसे साधारण लोहेको चुम्बक बनाते हैं, उनका प्रभाव केलव लोहेके अणुओंको एक विशेष क्रमसे लगा देना है। यह सिद्धान्त नीची दी हुई परीक्षा करनेसे शीघ्र समझमें आ जायगा। एक लोहेका चौखटा बनाओ जिसके चारों बाज़ू बराबर और अलग अलग हो सकें। चारोंको चुम्बक बनालो फिर चारोंको इस प्रकार जोड़ो कि एकका उत्तरी और दूसरेका दक्षिणी सिरा मिला रहे जैसा चित्र में दिखलाया गया है। इस चौखटेके चारों टुकड़े चुम्बक हैं पर इस प्रकारका चौखटा साधारण परीक्षाओंसे चुम्बक न मालूम न होगा। इससे यह सिद्ध हुआ कि साधारण अवस्थामें लोहेके अणु-चुम्बक इस प्रकारसे जुड़े रहते हैं कि मालूम न हों किन्तु चुम्बक इन अणुओंको इस प्रकार फेर देता है कि उसमें चुम्बकत्व आ जाता है। जब चुम्बकत्व आ जाना केवल अणुओंकी रचनाका बदलना ही है तो एक अवस्था ऐसी भी आ सकती है जिसमें रचनाका पूरा परिवर्तन आ जावे और उसके पश्चात् और कुछ न हो सके और अधिक चुम्बकत्व लोहेमें न लाया जा सके। जब लोहा इस अवस्थाको पहुँच जाय तो उसकी अवस्थाको परिपूर्ण अवस्था कहते हैं।

---

## वेदान्त मीमांसा

( ले० कन्नोमल एम. ए. )

### वेदान्त

ब्रह्म सत्य है, जगत मिथ्या है, और जीव ब्रह्म है—यही सब वेदान्तका सार है।

जैसे आकाशके साथ अंधकार मिला है वैसे ही ज्ञानसे अज्ञान मिला है। यह अज्ञान जिसे अविद्या अथवा माया कहते हैं संसारका कारण है। जीवका अज्ञान दूर करना वेदान्त दर्शनका मुख्योद्देश है।

### ब्रह्म

ब्रह्म अखँड सत्चिदानन्द है। मन और वाणीसे परे है और जो कुछ है उस सबका एकमात्र आधार है। वह एक है और वही वास्तविक सत्य है। उसके सिवा और कुछ सत्य नहीं है।

Philosophy दर्शन शास्त्र ]

आत्मा

जीव अथवा आत्मा वास्तवमें ब्रह्म ही है। क्योंकि ब्रह्मके सिवा और कोई वास्तविक सत्य वस्तु नहीं है। जब आत्मा ब्रह्म ही है तो निश्चय एक ही है-अनेक नहीं है। जो ब्रह्मके लक्षण हैं वे ही आत्माके लक्षण हैं। जो भिन्नता दिखाई देती है उसका कारण अविद्या है। अध्यारोप* नियमसे आत्मामें जगत बन जाता है और अपवाद नियमसे जगत दूर होकर केवल नित्य शुद्ध आत्मा ही रह जाती है। आत्मा ब्रह्मका दूसरा नाम है। इसलिए जो कुछ है वह ब्रह्म ही है।

अविद्या ( माया )

ऐसी वस्तु जो सत् है न असत् है बल्कि अनिर्वचनीय है और जिसमें सत्व रजस् और तमस् तीन गुण हैं और जो ज्ञानकी विरोधी है और केवल भान रूप ही है वही माया है।

जबतक ये तीनों गुण एकसे रहते हैं अर्थात् सम्यावस्थामें होते हैं तो जगत भी नहीं होता। जब तमोगुणकी अधिकता होती है तो इसमें क्षोभ होता है जिसका परिणाम जगतोत्पत्ति है।

मायामें दो शक्तियां हैं :—

१—आवरण शक्ति

२—विक्षेप शक्ति

आवरण शक्तिसे वस्तुका यथार्थरूप ढक जाता है और विक्षेप शक्तिसे मिथ्या कल्पना हो जाती है। बादलका टुकड़ा सूर्यके सामने आनेसे सूर्यको दृष्टिसे छिपा लेता है इसी तरह आवरण शक्तिके द्वारा आत्मा नहीं दिखाई देती। अंधेरेमें सूखे वृक्षको देखकर भूतकी कल्पना हो जाती है। इसी तरह विक्षेप शक्तिसे आत्मापर मिथ्या जगतकी कल्पना होती है।

कोई मनुष्य अंधेरेमें एक कोठेमें गया। वहाँ एक रस्सीका टुकड़ा पड़ा था। इसे देखकर वह मनुष्य डर गया और उसे सर्प जाना। बाहर आकर एक दीपक लिया और फिर प्रवेश किया तो प्रकाशसे ज्ञात हुआ कि वह रस्सीका टुकड़ा है-सर्प नहीं।

इस उदाहरणमें रस्सीका असली रूप दिखाई नहीं देना एक बात है। रस्सीपर सर्पकी कल्पना होना दूसरी बात है। प्रकाशसे रस्सीका असली रूप ज्ञात होना तीसरी बात है।

पहिलीका कारण आवरण शक्ति है। दूसरीका विक्षेप शक्ति और तीसरीका वेदान्त शास्त्रका ज्ञान।

इसी प्रकार समझना चाहिये कि माया अपनी इन दो शक्तियोंद्वारा आत्मा छुपाकर उसपर जगतकी कल्पना कर देती है। इसलिए जगत वास्तवमें सत्य नहीं है परन्तु व्यवहारिक सत्ता रखता है।

अब यह लिखते हैं कि मायासे जगतकी किस प्रकार उत्पत्ति होती है। पहिले मायाका कारण शरीर है अर्थात् जितनी माया है वह सब ब्रह्मके कुछ भागसे मिली है जिसमें सत्वगुण प्रधान है।

संसारभरकी वस्तुओंका यह शरीर भांडार है। इस माया पुंजके साथ जो ब्रह्मका भाग मिला है वह ईश्वर कहलाता है। यह ईश्वर सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् और सबका नियन्ता है।

इस शरीरमें सत्वगुण प्रधान है इसलिए यह आनन्दसे परिपूर्ण है। इसे आनन्दमय कोष भी कहते हैं।

इसकी सुषुप्ति अर्थात् स्वप्नरहित निद्राके आनन्दकी अवस्था है। स्थूल और सूक्ष्म शरीर जिनका आगे वर्णन होगा उनका यह लयस्थान है अर्थात् कारण शरीर इनके परे है।

यह जगत भरका कारण शरीर हुआ। इसी तरह प्रत्येक मनुष्यका कारण शरीर समझना चाहिये। इस कारण शरीरका चैतन्य जो ईश्वरका एक भाग है प्राज्ञ कहलाता है और मायाकी

* पृष्ठ...पर देखो

मलिन उपाधियोंके कारण अल्पज्ञ और अनीश्वर है।

इसी शरीरके कारण अपनेपनकी कल्पना होती है। जैसे समस्त जगतका कारणशरीर आनन्दमयकोष कहलाता है ऐसे ही यह भी कहलाता है। इसकी अवस्था भी सुषुप्ति है और जीवके सूक्ष्म और स्थूल शरीरका लयस्थान है।

समस्त जगतका कारण शरीर और एक व्यक्तिका कारण शरीर अलग अलग नहीं हैं किन्तु एक ही हैं। यह केवल दृष्टिका ही अंतर है।

वन और वृक्ष पृथक पृथक नहीं है। जलाशय और जल पृथक पृथक नहीं हैं।

जब जब वृक्षोंके समूहको एक दृष्टिसे देखते हैं तो वन है।

जब वृक्षोंको पृथक पृथक देखते हैं तो वृक्ष हैं।

इसी तरह जलाशय और जलके उदाहरणको समझिये। सब जीवोंको एकत्र कर देखना समष्टि है और उन्हीं जीवों को पृथक पृथक कर देखना दृष्टि है।

वृक्षोंके समूहको वन कहना समष्टि रीतिसे है और वनके अलग अलग अंशोंको वृक्ष कहना व्यष्टि रीति है। इस तरह जब सब माया पुंजका ब्रह्म चैतन्यसे मिला एकत्र देखते हैं तो समष्टि है और जब प्रत्येक शरीरको पृथक पृथक देखते हैं तो व्यष्टि है। ईश्वर और प्राज्ञ एक ही हैं। ईश्वर समष्टिसे है और प्राज्ञ व्यष्टि दृष्टिसे।

जैसे वन और वृक्षोंमें सब आकाश नहीं लय हो जाता किन्तु बाहर बहुत कुछ बच रहता है इसी तरह सब मायापुंजमें सब ब्रह्म नहीं आजाता बहुत बाहर रह जाता है। केवल एक अंश मात्र ही मायासे मिला है। जो अवशिष्ट ब्रह्म रहा उसकी अवस्था तुरीय या तुर्य है।

जगतकी उत्पत्ति ब्रह्मसे इस तरह समझी जाती है जैसे मकड़ीके जालेकी उत्पत्ति मकड़ीसे। मकड़ी जालेके निमित्त और उपादान दोनों कारण है। तन्तुको बनाती हुई निमित्त कारण है और तन्तुके उसके शरीरसे पैदा होनेसे उपादान कारण है। ऐसे ही आवरण और विक्षेप शक्तियोंद्वारा अज्ञान-युक्त चैतन्य अपनी प्रधानतासे जगतका निमित्त कारण है और अपनी उपाधियोंकी प्रधानतासे उसका उपादान कारण।

उत्पत्तिक्रम

तमः प्रधान विक्षेप शक्तिवाले अज्ञान युक्त चैतन्यसे आकाश उत्पन्न हुआ, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी।

संसारमें जो जड़ताकी प्रधानता दिखाई देती है उससे ज्ञात होता है कि इसमें तमोगुणकी अधिकता है। ये पांचों स्थूल तत्व हैं और इनसे सूक्ष्म शरीर बना है।

स्थूल शरीरके १७ अवयव हैं अर्थात् ५ ज्ञानेन्द्रिय, ५ कर्मेन्द्रिय, ५ वायु, मन और बुद्धि।

अन्तः करणकी वृत्ति जो निश्चय करती है बुद्धि है।

अन्तः करणकी वृत्ति जिसमें संकल्प विकल्प होते हैं मन है।

अनुसंधान और अभिमान युक्त अन्तःकरण है।

सूक्ष्म शरीरमें तीन कोष हैं—(१) विज्ञानमय कोष (२) मनोमय कोष (३) प्राणमय कोष।

बुद्धि और ज्ञानेन्द्रियां मिलकर विज्ञानमय कोष है।

मन और कर्मेन्द्रियां मिलकर मनोमय कोष है।

पंच प्राण और कर्म्मेन्द्रियां मिलकर प्राणमय कोष है।

विज्ञानमय कोष अपनेको कर्ता मानकर और सुख दुःखका भोक्ता समझकर इस और परलोकमें आता जाता रहता है; वही जीव है। इन तीनों कोषोंमें विज्ञानमय कोष ज्ञान-शक्तिमान होनेसे कर्ता है, मनोमय कोष इच्छा-शक्तिमान होनेसे कारण रूप है और प्राणमय कोष क्रिया शक्तिमान् होनेसे कार्य रूप है।

इन तीनों कोषोंसे संयुक्त सूक्ष्म शरीर आवागमनमें साथ रहता है।

इन शरीरोंके चैतन्यको समष्टि रूपसे सूत्रात्मा कहते हैं। इसे हिरण्यगर्भ अथवा प्राण भी कहते हैं क्योंकि वह सब सूक्ष्म शरीरोंमें प्रविष्ट है और तीनों कोषोंमें जिनसे ज्ञान, इच्छा और क्रिया हो सकती हैं विद्यमान है। इसकी स्वप्न अवस्था है।

इसी चैतन्यको व्यष्टि रूपसे देखा जाय तो तैजस है। सूत्रात्मा और तैजस मन-विकारसे सूक्ष्म विषयोंका अनुभव कर सकते हैं।

जैसे वन और वृक्षोंमें भेद नहीं है उसी तरह सूत्रात्मा और तैजसमें नहीं है।

स्थूल शरीर

स्थूल तत्व वे हैं जो पाँचों सूक्ष्म तत्वोंके मेलसे बने हैं। इन पांचोंके मिलानेको पंचीकरण कहते हैं।

पंचीकरण समझनेको नीचे लिखा उदाहरण देखिये।

प्रत्येक तत्वका अर्द्ध भाग लो और बाक़ीके अर्द्ध भागकी जगह अवशिष्ठ चारों तत्वोंके अर्द्ध-भागोंके चौथाई चौथाई भाग मिलाओ तो एक तत्वमें पांचों तत्व मिल जायँगे। दूसरे शब्दोंमें यह कहना है कि पंचीकृत तत्वोंमेंसे प्रत्येक तत्व में $\frac{१}{२}$ अपना तत्व है और $\frac{१}{८}$ प्रत्येक बाक़ीके चार तत्वोंका।

जैसे पंचीकृत आकाश तत्वमें $\frac{१}{}$ आकाश तत्व $\frac{१}{८}$ वायु, $\frac{१}{८}$ अग्नि, $\frac{१}{८}$ जल और $\frac{१}{८}$ पृथिवी तत्व हैं।

इन पंचीकृत तत्वोंसे सब लोक और सब स्थूल शरीर उत्पन्न हुए हैं। जो खाने और पीनेकी वस्तुएं हैं वे भी इन्हींसे निर्मित हैं।

स्थूल शरीर चार प्रकारके हैं

१. जरायुज-जो गर्भसे उत्पन्न हों जैसे मनुष्य पशु आदि।

२. अंडज-जो अंडेसे उत्पन्न हों जैसे पक्षी, सर्पादि।

३. स्वेदज-जो पसीनेसे उत्पन्न हों जैसे जूं, मच्छड़ आदि।

४. उद्भिज-जो पृथिवीको फोड़कर उत्पन्न-हों जैसे लता वृक्षादि।

इन सब स्थूल शरीरोंको भी समष्टि और व्यष्टि दृष्टिसे देखिए।

जो चैतन्य सब स्थूल शरीरोंसे मिला है वैश्वानर अथवा विराट कहलाता है। यह शरीर अन्नमयकोष है और जागृत इसकी अवस्था है।

जो चैतन्य प्रत्येक व्यक्ति शरीरसे मिला है विश्व कहलाता है। इसे भी अन्नमय कोष कहते हैं और जागृत इसकी अवस्था है।

सूक्ष्म शरीरोंकेद्वारा विराट और विश्व सब स्थूल पदार्थोंका अनुभव कर सकते हैं।

सारांश

ब्रह्मका जो भाग समस्त माया अर्थात् अज्ञान-से मिला है और जिसके कारण संसारकी उत्पत्ति है तीन शरीरोंमें विभक्त है अर्थात् :—

१. कारण शरीर—इसमें समस्त माया पुंज शामिल है। जो चैतन्य इसमें मिला है उसे समष्टि दृष्टिसे ईश्वर और व्यष्टि दृष्टिसे प्राज्ञ कहते हैं। इस शरीरको आनन्दमय कोष भी कहते हैं और सुषुप्ति इसकी अवस्था है।

२. सूक्ष्मशरीर-यह शरीर शुद्ध सूक्ष्म अपंचीकृत तत्वोंका बना है और १७ अवयव रखता है अर्थात् ५ ज्ञानेन्द्रिय ५ कर्मेन्द्रिय ५ वायु, मन और बुद्धि। जो चैतन्य इसमें मिला है उसे समष्टि दृष्टि-से हिरण्यगर्भ अथवा सूत्रात्मा अथवा प्राण और व्यष्टि दृष्टिसे तैजस कहते हैं। विज्ञानमय, मनोमय और प्राणमय ये तीन कोष इसमें हैं। स्वप्न इसकी अवस्था है।

३. स्थूल शरीर-यह शरीर पंचीकृत तत्वोंका बना है। इसके चैतन्यको समष्टि दृष्टिसे वैश्वानर और व्यष्टि दृष्टिसे विश्व कहते हैं। इस शरीरको अन्नमय कोष भी कहते हैं। इसकी अवस्था जागृत है।

४. चौथी अवस्था वह है जिसमें शुद्ध माया रहित ब्रह्म है। उसे चतुर्थ अथवा तुरीय अवस्था कहते हैं।

अध्यारोप और अपवाद

अध्यारोप- सत्चिदानन्द ब्रह्म वस्तुमें माया प्रपंच अवस्तुका आरोप करना अध्यारोप है।

उदाहरण—किसी रस्सीके टुकड़ेको अंधेरेमें सर्प समझना अर्थात् रस्सीके वास्तविक रूपको नहीं जानकर उसमें सर्पकी मिथ्या कल्पना करना; इसी तरह शुद्ध सत्चिदानन्द ब्रह्ममें संसारकी कल्पना करना, पूर्वोक्त अध्यारोप नियमसे ही है।

अपवाद—अध्यारोप नियमके विपरीत अर्थात् असत्यको हटाकर सत्य वस्तुका ज्ञान प्राप्त करना है। इस नियमसे ज्ञान प्राप्त होता है कि संसार असत्य है-केवल ब्रह्मही सत्य है।

यह संसार सत्य वस्तु ब्रह्मका विकार नहीं किन्तु विवर्त है जो देखने मात्रका ही है-वास्तवमें कुछ नहीं है।

अध्यारोपसे संसारकी उत्पत्ति आदिका और अपवादसे ब्रह्मका ज्ञान प्राप्त होता है।

पहले ही कह आये हैं कि ब्रह्मसे मिली हुई त्रिगुणात्मिका मायासे संसार उत्पन्न हुआ है। पहिले आकाश, आकाशसे वायु, वायुसे अग्नि, अग्निसे जल, जलसे पृथिवी, इसी तरह और क्रम है।

यह अध्यारोप नियम है अर्थात् ब्रह्ममें अवस्तुका आरोप करना है।

इसके विपरीत करना अर्थात् यह समझना कि पृथिवी जलसे, जल अग्निसे, अग्नि वायुसे, वायु आकाशसे उत्पन्न हुई और आकाश मायासे उत्पन्न हुआ और माया असत्य है; केवल ब्रह्म ही ब्रह्म है। यह अपवाद नियम है।

अध्यारोपको Synthetical method और अपवादको Analytical method कह सकते हैं।

अविद्याभ्रम दूर करनेके उपाय

जैसा कि लिख आये हैं आत्मा ब्रह्म ही है इसलिए उसमें कोई दोष नहीं है। जो उपाधियां अविद्या की उत्पन्न की हुई हैं उन्हींके कारण उसका वास्तविक स्वरूप छिपा हुआ है। यदि उपाधियां हटा दी जायं तो शुद्ध सत्चिदानन्द ब्रह्म रह जाय। इन उपाधियोंके हटानेका नाम ही आत्म-शुद्धि है जिसके ये उपाय हैं:—

१ श्रवण २ मनन ३ निदिध्यासन ४ समाधि

श्रवण

छः साधनोंद्वारा सर्व वेदान्त वाक्योंका अद्वितीय ब्रह्ममें तात्पर्य समझना श्रवण है।

छः साधन ये हैं:—

१ उपक्रमोपसंहारौ २ अभ्यास ३ अपूर्व्वता ४ फल ५ अर्थवाद ६ उपपत्ति।

१. उपक्रमोपसंहारौका अर्थ प्रकरणका आरंभ और अंत है। जो विषय किसी पुस्तकमें दिखाया जाय उसका प्रकरणके आरंभ और अंतमें वर्णन हो। जैसे छान्दोग्य उपनिषद्के छटे प्रपाठके आदि और अंतमें अद्वितीय ब्रह्म वस्तुका इस भांति प्रतिपादन है-"एक मेवाद्वितीयम्" "ऐतदात्ममिदं सर्वम्"।

२. अभ्यास-जिस वस्तुका प्रकरणमें प्रतिपादन है उसका बार बार उस प्रकरणके मध्यमें प्रतिपादन होना जैसे उसी छान्दोग्य उपनिषद् प्रपाठमें "तत्वमसि" वाक्य उसमें नौ दफ़ा आया है।

३. अपूर्वता-प्रकरणमें जिस वस्तुका प्रतिपादन है वह किसी तरह इन्द्रियोंका विषय नहीं है, जैसा छान्दोग्य उपनिषद्के उसी प्रपाठमें सिद्ध किया है।

४. फल—प्रकरणमें जो आत्मज्ञान वा उसका अनुष्ठान प्रतिपादन किया हो उसीका ज्ञान प्राप्त करनेका प्रयोजन। उदाहरणकेलिए छान्दोग्य उपनिषत्का छटा प्रपाठ देखिये।

५. अर्थवाद-प्रकरणमें जिस विषयका प्रतिपादन हो उसीकी स्थान स्थानपर प्रसंशा करना। ( छान्दोग्य उपनिषत्का छटा प्रपाठ देखो )

६. उपपत्ति—प्रकरणके प्रतिपाद्य विषयके अर्थसाधनमें जो युक्तियां वार वार कहीं हों जैसे उसी प्रपाठमें एक मृत्पिंडसे समस्त मृन्मय वस्तुओंका ज्ञान बताया है।

मनन

जिस अद्वितीय ब्रह्म वस्तुका श्रवण किया है उसका वेदान्त अर्थानुसार निरंतर चिन्तन करना मनन है।

निदिध्यासन

विजातीय देहादि वस्तुओंको छोड़कर अद्वितीय ब्रह्म सम्बन्धी वस्तुओंके प्रत्यय प्रवाहका नाम निदिध्यासन है।

समाधि

समाधि दो प्रकारकी है-१ सविकल्प २ निर्विकल्प।

सविकल्प समाधि-जिसमें ज्ञाता और ज्ञानादिके विकल्पलयकी अनपेक्षा हो और अद्वितीय ब्रह्मके आकारकी आकारता हो जाय ऐसी चित्त वृत्तिके अवस्थानका नाम सविकल्प समाधि है।

इस समाधिमें चित्तकी वृत्तिको ब्रह्ममें लय कर देना है और इसका कुछ विचार नहीं रखना है कि ज्ञाता और ज्ञानमें भेद है या नहीं। जैसे मिट्टीसे बनेहुए हाथी आदिका ज्ञान भी हो परन्तु सब मिट्टी ही दिखाई दे। इसी तरह चाहे द्वैत भी भान होता हो परन्तु सब अद्वितीय ब्रह्म ही दिखाई दे वह सविकल्प समाधि है।

निर्विकल्प समाधि—बुद्धिकी वृत्तिका अद्वितीय ब्रह्ममें उसीका आकार बनकर एक भावसे अवस्थान होना निर्विकल्प समाधि है। इसमें ज्ञाता ज्ञानादिके भेदकी कोई अपेक्षा नहीं रहती है। जैसे लवण पानीमें मिलकर पानीका रूप ही हो जाता है और पानी हो पानी दिखाई देता है इसी तरह ब्रह्ममें चितवृत्ति लीन हो जानेसे सिवा ब्रह्मके और कुछ नहीं दिखाई देता। इस अवस्था और सुषुप्ति अवस्थामें यह भेद है कि सुषुप्ति अवस्थामें तो चित्तवृत्ति विद्यमान रहती है और निर्विकल्प समाधि अवस्थामें नहीं। दोनोंमें चित्तवृत्तिका भान नहीं होता है—केवल चितवृत्ति रहने और नहीं रहनेका ही भेद है :—

निर्विकल्प समाधिके आठ अङ्ग और हैं :—

अर्थात्—१ यम २ नियम ३ आसन ४ प्राणायाम ५ प्रत्याहार ६ धारणा ७ ध्यान ८ समाधि।

यम

अहिंसा, सत्य, अस्तेय ( अर्थात् चोरी नहीं करना ) ब्रह्मचर्य्य और परिग्रह ( दानादि नहीं लेना ) ये पांच यम हैं।

नियम

शौच ( शुद्धि रखना ) संतोष, तप, स्वाध्याय (जप) और ईश्वर पूजन। ये पांच नियम हैं।

आसन

आसन अनेक हैं-जैसे पद्मासन, स्वस्तिकासन, अर्द्धासन आदि

प्राणायाम

रेचक, पूरक, कुम्भक प्राणनिग्रहके उपाय हैं।

प्रत्याहार

इन्द्रियोंको अपने अपने विषयमें विचरनेसे अलग करना प्रत्याहार है।

धारणा

अद्वितीय ब्रह्ममें इन्द्रियोंका लगाना धारणा है।

समाधि

सविकल्प समाधिका पहिले विवरण हो चुका है। निर्विकल्प समाधिमें चार चीज़ें विघ्न डालनेवाली हैं अर्थात् लय, विक्षेप, कषाय और रसास्वाद।

अखण्ड ब्रह्ममें चित्तवृत्तिके नहीं लगनेसे निद्रा आना यह लय है। अखण्ड ब्रह्ममें चित्तवृत्तिका नहीं लगना किन्तु और किसी चीज़में लग जाना यह विक्षेप है।

लय विक्षेप भी नहीं हों तथापि चित्तवृत्तिका रागादि वासनासे अखंड ब्रह्मपर नहीं लगना यह कषाय है।

अखण्ड ब्रह्ममें चित्तवृत्ति नहीं लगनेसे सविकल्प आनन्दका स्वाद आना अथवा समाधि के आरम्भमें सविकल्प आनन्दका स्वाद आना–यह रसास्वाद है।

जब इन विघ्नोंसे बचकर चित्त निर्वात दीपके समान अचल होकर अखंड चैतन्यमात्र ठहरता है तब निर्विकल्प समाधि होती है।

जीवनमुक्त

जो मनुष्य इसी देहमें अज्ञानसे बने हुये कर्म संशयादिको छोड़कर बन्धन रहित होकर अखंड ब्रह्ममें ही तत्पर होजाता है और अखंड ब्रह्म और अपनेमें कुछ भेद नहीं समझता क्योंकि अखंड ब्रह्मको अपनी आत्मामें साक्षात् कर लेता है वह जीवनमुक्त है।

श्लोक-भिद्यते हृदयग्रन्थि श्छिद्यन्ते सर्व संशयाः।
क्षीयन्ते चास्य कर्म्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे॥

उस परब्रह्मके देखनेपर हृदयकी गाँठ टूट जाती है, सब संशय जाते रहते हैं और सब कर्म्म क्षीण हो जाते हैं।

---

## अमोनिया

[ ले० मुख्त्यारसिंह वकील मेरठ ]

अमोनिया एक प्रकारकी बे रंगकी गैस है, जो कि वायु, वर्षाके पानी आदिमें उपस्थित रहती है। एक भाग नत्रजनसे तीन भाग अभिद्रवजनके संयोग होनेसे यह गैस पैदा होती है। वनस्पति और वानस्पतिक पदार्थोंका एक अवयव नत्रजन भी है। इनके गलने सड़नेपर गर्मी तथा नमी पहुँचनेसे नत्रजन अमोनियामें परिणत हो जाती है। जिस स्थानपर चीज़ें सड़ती हैं वहां इसकी गन्ध अवश्य आयगी। इसकी सुगंध बड़ी तीव्र और असह्य होती है। यदि नौसादरमें चूना मिलाकर गर्मी दें तो यह गैस निकलनी आरम्भ होगी, जो अपनी तीव्र गंधसे पहचानी जा सकती है। जिस मनुष्यने यह गंध एक बार सूंघी हो वह कदापि नहीं भूलता। खादमें अमोनिया ही ऐसा पदार्थ है जो पौदेको बढ़ाता और हरा भरा रखता है। खादका न्यूनाधिक उपयोगी होना अमोनियाकी उपस्थित मात्रापर ही निर्भर है। यदि नौसादर और चूनेसे बनी हुई अमोनिया गैसको पानीमें घुलने दें और इस पानीमें लाल लिटमस डालें तो उसका रंग नीला हो जायगा। अथवा इसी प्रकार निकलती हुई गैसपर भीगा हुआ लाल लिटमस काग़ज़ रक्खें तो वह नीला हो जाता है। यही परीक्षा खादके ढेरोंपर जिनमेंसे अमोनियां निकल रहा हो की जा सकती है। इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि अमोनिया एक प्रकारका क्षार है। जिस प्रकार अनेक क्षार अम्लोंसे मिलकर लवण बनाते हैं, उसी भांति अमोनिया भी अनेक लवण बना सकता है। उदाहरणतया गंधकके तेज़ाबसे मिलकर गंधित अमोनिया, और कारबनिक अम्लसे मिलकर कारबनिक अमोनिया बन जाता है। साधारणतया अमोनिया गैस बिक्रीकी वस्तु नहीं है, किन्तु अमोनिया मिला पानी जिसको अंग्रेज़ीमें लाईकर अमोनिया ( Liqour ammonia) कहते हैं बनाकर बेचा जाता है। तथा अमोनियाके अनेक यौगिक हरित अमोनिया ( नौसादर ), गंधित अमोनियां, कारबनित अमोनिया इत्यादि बनाकर बेचे जाते और काममें लाये जाते हैं।

भारतवर्षमें हरित अमोनिया (नौसादर) बहुत पुराने ज़मानेसे बनाया जाता है। ईंटोंका पज़ावा लगाते समय जो खादका धुआँ बाहरकी ईंटोंकी तहपर जमा हो जाता है उसको खुरचकर बाज़ारमें बेच देते हैं। यह पदार्थ क्या है? केवल जो खाद ( गोबरके कण्डे ) ईंटोंके फूंकनेमें जलता है उसके नत्रजनीय पदार्थका नौसादर बनता हैं। यही उड़कर ऊपरी ईंटोंपर जमा होता है। जबसे चिमनीके भट्टे बनने लगे हैं और पत्थरका कोयला कण्डोंके स्थानपर बरता जाने लगा है,

नौसादर बनना बंद हो गया। अब प्रायः भारतमें नौसादर विदेशसे ही आता है।

विष्ठा और मूत्रका विशेष कर बड़े बड़े नगरोंमें शहरसे बाहर ले जानेका प्रबंध करना पड़ता है। इन वस्तुओंका किसी ऐसे स्थानपर सड़ना जहाँ जीवधारी रहते हों अत्यन्त हानिकारक है। इसी कारण विष्ठा और मूत्र शहरसे बाहर फिकवा दिये जाते हैं। कहीं कहीं तो इनको बड़ी बड़ी नदियोंमें बहा दिया करते हैं। म्युनिसपैलटियोंको विष्ठा और मूत्रके फिकवानेमें बड़ा व्यय करना पड़ता है। हम लिख चुके हैं कि अमोनिया बहुत ही उपयोगी पदार्थ है, और जिन पदार्थोंसे यह प्राप्त हो सकता है, वह भी उपयोगी ही हैं। अतः यदि विष्ठा आदिसे अमोनिया बनाया जाय, तो बड़ा लाभ हो। बहुत सी म्युनिसिपैलटियोंने विशेष कर बड़ी बड़ी छावनियोंमें इसको जलाना आरम्भ कर दिया है और इस प्रकार लाभके स्थानमें वायुमंडलमें दुर्गंध फैला, जीव धारियोंकेलिए वायु हानिकारक बना दी है। विलायतमें प्रायः सभी बड़े बड़े नगरोंमें विष्ठा और मूत्रसे अमोनियाके अनेक यौगिक बनाये जाते हैं और वे सैकड़ों कामोंमें लाये जाते हैं। अमोनियाके सम्मेलन बनानेका कार्य्य इतना सुगम है कि वह थोड़ेसे ही व्यय और प्रबंधसे हर म्युनिसिपैलटीमें आरंभ किया जा सकता है। अमोनियां देनेवाले पदार्थ खादमें बरते जा सकते हैं। यह रसायनिक वेत्ताओंमें तो प्रसिद्ध ही है। हमारे देशमें भी इन पदार्थोंका उपयोग खादमें होता रहा है, पर यहांके किसान यह नहीं जानते कि अमोनिया ही इन पदार्थोंमें विशेष गुणकारी है और इसी कारण खादके ढेरोंमेंसे इसकी बहुत सी मात्रा धीरे धीरे उड़कर वायु मंडलमें मिल जाती है, और खाद नष्टप्राय हो जाता है। अमोनियाको खादमेंसे न निकल जाने देनेके उपाय फिर कभी बतलाए जायँगे, अभी हम अमोनिया बनानेकी रीतिपर विचार करेंगे।

विष्ठा और मूत्र बड़े बड़े तालावोंमें नगरसे बहुत दूरीपर एकत्रित किये जाते हैं, जहां मनुष्यका आना जाना बहुत कम हो। तालाबमें पड़े रहनेसे एक प्रकारकी स्याह खाद नीचे बैठ जाती है और ऊपर एक प्रकारका गदला सा पानी रह जाता है। इस कार्य्यकेलिए प्रायः तीन सप्ताह पर्य्याप्त होते हैं। इन तालावोंको ऊपरसे बंद रक्खा जाता है जिसमें अमोनियाके उड़ जानेसे हानि न हो। फिर अलग करनेके पीछे गादको सुखा लिया जाता है। सूखनेपर वह वेच दी जाती है। अर्क़से अमोनियाके अनेक यौगिक बनाये जाते हैं। इस कार्य्यके करनेमें बहुत दिनोंतक पड़े रहनेके कारण बड़ी दुर्गंधि फैलती है किन्तु यदि इस गादको बिना सुखाये किसानोंके हाथ बेच दिया जाय और वे खादकेलिए काममें ले आवें तो कोई संभावना हानि की नहीं रहती। तथापि जितनी शीघ्रतासे विष्ठा और मूत्र अमोनियाके न उड़नेवाले यौगिकोंमें परिणत किये जा सकें उतना ही अच्छा है, क्योंकि ऐसा करनेसे प्रथम तो अधिक स्थान नहीं घिरता दूसरे दुर्गंधि कम होती है और प्रबंधमें भी कम व्यय होता है।

विज्ञान वेताओंने इस कार्य्यमें शीघ्रता करनेकेलिए अनेक सस्ते और सहज उपाय निकाले हैं। विष्ठा और मूत्रको तालावोंमें भरनेके पश्चात् उसमें चूनेका पानी १·१६से १·२०के गुरुत्वका मिला देते हैं। जितनी इसकी मात्रा अधिक होती है, उतनी ही शीघ्रतासे इसकी गाद नीचे बैठ जाती है। घंटे भरके पश्चात् नितरा हुआ पानी ऊपर आजाता है, और सब गाद नीचे बैठ जाती है, फिर पम्पकेद्वारा इस पानीको अलग करलिया जाता है, और तालाबमें दूसरा घान भर दिया जाता है। कई बार ऐसा करनेसे सब तालाब गादसे भर जाता है, फिर इस गादको निकालकर फ़िल्टर प्रेसमें दवाया जाता है। अब इसके दवानेमें क़लई पड़जानेके कारण सुगमता होती है। इस प्रकार दवकर इसकी टिकिया

बन जाती है, और सब अमोनियांका अर्क़ बाहर निकल जाता है। टिकिया भी सख़ बनती है। गरम करनेसे पानीका रंग पीला होता है और बिना गरम किये स्याह। इस कारण प्रायः गर्मी पहुंचाकर ही दबानेका काम किया जाता है। जितनी कम मात्रा चूनेकी काममें लाई जायगी उतनी ही अधिक मात्रा नत्रजनकी टिकियोंमें रह जायगी। इन टिकियोंको खादकेलिए बेंच डालते हैं, फिर इस अर्क़को गंधित अमोनियां अथवा और किसी सम्मेलनमें परिणत कर लेते हैं।

इस अर्क़के बनानेका एक और उपाय यह है कि विष्टा और मूत्रको बड़े तालाबमें जिसमें लोहेकी दीवार लगाकर कई टुकड़े किये होते हैं, डालना आरंभ करते हैं। इन दीवारोंकी उँचाई—पहिलीकी सबसे अधिक दूसरीकी उससे न्यून—उत्तरोत्तर घटती जाती है। सबसे ऊंचे दीवारवाले भागमें डालनेसे कुछ अर्क़ बहकर दूसरेमें चला जाता है, और इसी प्रकार सबसे गाढ़ा भाग सबसे पहिले भागमें और सबसे पतला अंतिम भागमें पहुंचता है। अब इसमें १५ भाग बोक्साइट ( Bauxite ) प्राकृतिक प्रसफुरित चूना ३ भाग अनार्द्रलोह अम्लजिद ( Anhydric Ferrous oxide ) १६० भाग साधारण नमकका तेज़ाब और १५० भाग पानी डालकर भली भांति मिलाते हैं। उपरोक्त सब पदार्थोंके घोलके ५० किलो ( kilo ) १ घानकेलिए पर्य्याप्त होते हैं। २४ घंटे पश्चात् इसपर अर्क़ आजाता है, इसको अलग कर लेते हैं, और बाकीको फिल्टर प्रेसमें दबाकर टिकिया बना लेते हैं। इन टिकियाओंमें पहिली प्रकारकी टिकियाओंकी अपेक्षा वनस्पतियोंके भोजन सम्बन्धी पदार्थ अधिक होते हैं, और इसी कारण इस क्रियाको अधिक काममें लाया जाता है। उपरोक्त प्रकारमें चाहे जिस क्रियासे अर्क़ प्राप्त किया जावे उसको बड़े बड़े भपकोंमें उड़ाकर और गंधकादिका तेज़ाब मिलाकर गंधित अमोनियां आदि बनाये जाते हैं।

[ असमाप्त ]

---

## इंजीनियरीकी अद्भुत लीला

[ ले० तेजशंकर कोचक, बी० ए० एस् सी० ]

### ( १ ) रेलें

आज कल संसारमें जो अद्भुत लीला इनजीनियरीने फैला रक्खी है उसको सब मानते हैं, परन्तु ऐसा विरला ही कोई होगा जो इस प्रान्तमें बतला सकेगा कि किस वस्तुके देखनेसे इस अद्भुत लीलाका ज्ञान हो सकता है। बहुतसे मनुष्य तो ऐसी वस्तुओंको दिखलाकर हमको चकित करना चाहेंगे जिनको अब अद्भुत लीला कहकर अपनी हँसी कराना है। हम इस विषयपर कई लेख देंगे और जो संसारमें अद्भुत लीला इंजीनियरीने दिखलाई है उसका वर्णन करेंगे।

हम इस संख्यामें रेलोंकी अद्भुत लीला लिखेंगे। हम और हमारे पाठकगण सभी रेलपर चढ़कर एक स्थानसे दूसरे स्थानको गये हैं और रेलकी सवारी बड़ी आनन्ददायक मालूम हुई है, परन्तु यह कभी ध्यानमें न आया होगा कि रेलकी सवारीके पहिले हमारे देशकी क्या दशा थी और रेलके होनेसे कैसी हो गयी। रेलका रास्ता बड़ा सीधा साफ़ दिखाई देता है और उस जंगलका जो पहिले फैला था कुछ ध्यान नहीं होता। हम तो आंख बन्द करके रेलमें बैठते हैं और आंख बन्द किये सैकड़ों मील चले जा सकते हैं। वाह, यात्रा करनेका क्या सहल मार्ग है और प्रायः ध्यानमें भी यही आता है कि इसका बनाना भी ऐसा ही सहल है। इसके अतिरिक्त हमारा प्रान्त एक साफ़ मैदान सा बना हुआ है। इसमें न तो बड़ी बड़ी पहाड़ियां हैं न

झीलें न समुद्र न दलदल। और जहां यह हैं भी वहां प्रायः रेलें देखनेमें नहीं आतीं।

अब देखिये रेल बनानेमें प्रथम दिनसे क्या क्या उद्योग करने पड़ते हैं। पहिले exploration देशानुवेषण करना पड़ता है। हज़ारों मील जंगलमें फिरना पड़ता है। जंगलमें पैदल चलनेतकका रास्ता नहीं होता। खाने पीनेकी वस्तुएं कठिनाईसे मिलती हैं। अगर बीमार पड़ जाय तो डाक्टर और दवाखानेका नाम और निशान भी नहीं मिलता। यह देशानुवेषण आवश्यक होता है, क्योंकि जबतक देशमें भ्रमण न किया जायगा यह न मालूम होगा कि देशमें कितने गांव, कितनी नदियां, कितनी झीलें, कितने पहाड़ हैं, और कौन कौन सी वस्तु उसमें कहां होती हैं। करोड़ों रुपया लगाकर अगर पीछेसे मालूम हो कि रेल ग़लत रास्तेपर लगायी गयी है तो फिर बदलना कठिन हो जाता है। इसलिए देश भ्रमणमें जो थोड़ासा परिश्रम और धन ख़र्च होता है अन्तमें बड़ा लाभदायक होता है। देशभ्रमण करनेके पश्चात् जब कच्चा नक़शा तैयार हो गया तब Reconnaisance रीकोनेसैन्स पुनर्निरीक्षण आरम्भ होता है। चार पांच पार्टियां देशमें इधर उधर छोड़ दी जाती हैं। यह पारटियां देशके अपने अपने भागका विस्तारपूर्वक ज्ञान प्राप्त करके अलग अलग रिपोर्टें तैयार करती हैं। रेल बनानेवाली Board बोर्ड इन रिपोर्टोंको पढ़कर तय करती हैं कि किस दिशामें और किन स्थानोंसे होकर रेल निकाली जाय।

यहां हमको यह बता देना भी उचित मालूम होता है कि इस कच्चे नक़शे बनानेवालोंको चेन और झण्डियोंकी सहायतासे नक़शा बनाना असम्भव मालूम होता है। जैसे हमारे यहां नक़शे बनते हैं उस रीतिसे जंगलोंमें नक़शे नहीं बनाये जा सकते। इस दशामें देशभ्रमण करनेवाले तीन यन्त्रोंकि सहायतासे नक़शा बनाते हैं।

(१) दिशा सूचक—इसकी सहायतासे यह मालूम होता है कि किस दिशामें जा रहे हैं। और हमारे यहांसे कौन स्थान किस दिशामें है।

(२) Barometer बैरामेटर अर्थात् वायुभारमापक—इसकी सहायतासे हम यह जान सकते हैं कि कौन स्थान किस स्थानसे कितना ऊंचा या नीचा है।

यह दोनों यंत्र बटुएकी नाईं गलेमें लटकाए रहते हैं।

(३) Odometer ओडोमीटर अर्थात मापचक्र—इस यंत्रसे एक स्थानकी दूरी दूसरे स्थानसे मीलों या फुटोंमें मालूम होती है। आपने प्रायः देखा होगा कि बैसिकिलके पहियेकी धुरीपर एक डिबिया ऐसी लगा देते हैं और पहियेके चलनेसे डिबियाकी संख्याएँ बदलती रहती हैं जिनको पढ़कर हमको ज्ञात हो जाता है कि पैरगाड़ी कितनी दूर चली है। उसी भांति मापचक्र भी बड़ा भारी पहिया होता है जिसकी धुरीपर एक डिबिया लगी होती है। जहां कहीं पारटी जाती है इसे भी एक या दो आदमी साथ लुढ़काते ले जाते हैं। इसकी संख्याओंसे मालूम हो जाता है कि कितने मील चले। नक़शोंको विचार करके जब यह तय हो गया कि किस दिशामें रेल जायगी तब ढालका नकशा तैयार कराया जाता है। देखिये चित्र नं० १ ब एक देश है जिसमें रर रेलें हैं; और
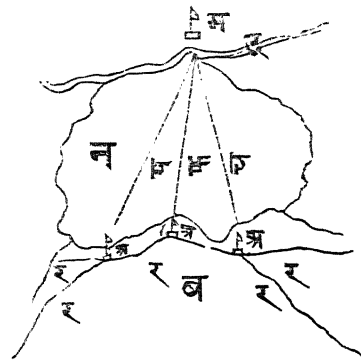
चित्र नं० १

उसके तट न एक दूसरा देश है। द दरिया है और दरियापार म एक नगर है। व देशसे म को रेलके-द्वारा हम मिलाना चाहते हैं। न देशका कच्चा नक़शा तैयार किया। फिर तीन पार्टियां प, फ, च, रास्तोंसे म को गयीं। इन तीनोंकी जब रिपोर्ट आगयी तब बोर्डने यह तय किया कि फ की राहसे रेल निकाली जाय।

देखिये चित्र नं० २। यह फ राहका ढालका
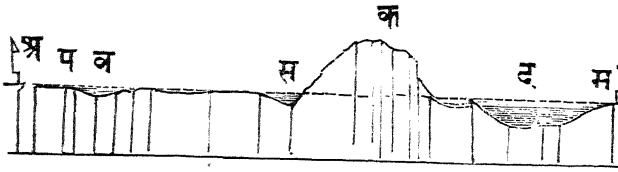
चित्र नं० २

नक़शा है इसको देखनेसे आपको भली भांति ज्ञात होगा कि प, व, स, द स्थानोंमें पुल बांधने होंगे और या तो रेल निकालनेकेलिए क पहाड़को खोदकर कन्दरा बनानी होगी या पहाड़की परिक्रमा करके रेल निकलेगी। आपको यह भली भाँति ज्ञात होगा कि इस नक़शेकी सहायता बिना ठीक ठीक तख़मीना या एस्टिमेट नहीं बन सकता।

इसके बाद अन्तमें दागबेल लगाई जाती है। अर्थात् जहां जहांपर रेलकी पटरी पड़ेगी, जहां जहांपर स्टेशन होंगे खूंटियां गाड़कर ठीक ठीक उनकी हदबन्दी कर दी जाती है।

यह तमाम "सरवे" पैमाइश या मापनेका काम ऐसा आवश्यक समझा जाता है कि रेलकी कुल लागतपर दो प्रति सैकड़ातक इसमें ख़र्च करना बुरा नहीं माना जाता; अर्थात् एक करोड़की लागतकी रेल बनानेमें अगर दो लाख इन कामों-में ख़र्च हो जायँ तो कुछ बहुत ज़ियादा नहीं है।

अब दागबेल लगानेके बाद रेल बनाना आरम्भ होता है। फिर दूसरी भांतिकी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ता है। जंगलोंमें जहां रास्ता नहीं है और आस पास कोई बड़े शहर भी नहीं हैं, हज़ारों कुलियोंको लाकर इकट्ठा करना, उनके खाने पीनेका बन्दोबस्त करना उनके रहने और दवा इलाजका बन्दोबस्त करना, माल मसाला पहुँचाना, अत्यन्त कठिन हो जाता है। माल मसाला पहुँचानेकेलिए प्रायः एक उठाऊ रेलकी पटरियां डाल दी जाती हैं। इन सब कठिनाइयोंके होते हुए भी इनजीनियरीकी अद्भुत लीला देखिए कि जब नई दुनियामें केनेडियन पैसिफ़िक रेलवे (Canadian Pacific Railway) बनी थी प्रतिदिन साढ़े छः मील रेलकी पटरी पड़ती थी। इससे भी ज़ियादा जल्द अफ्रिकाकी उत्तमाशा अन्तरीपसे मिश्रकी राजधानी काहिरातक जानेवाली केप-टू-केरो रेलवे साढ़े चार हज़ार मील लम्बी बनी है। इसमें आठ मील प्रति दिनके हिसाबसे रेलकी सड़क तैयार हुई है। खुदाईका काम अक्सर कलके फावड़ोंसे लिया जाता है। यह एक एक चोटमें अस्सी अस्सी मन मिट्टी खोद डालते हैं।

रेल बनानेके वक़्त यह भी ध्यान रक्खा जाता है कि पटरीमें ढाल ज़ियादा न होने पाए। देखिये चित्र नं० ३ एक लकड़ीका तख़्ता लीजिये और उसे
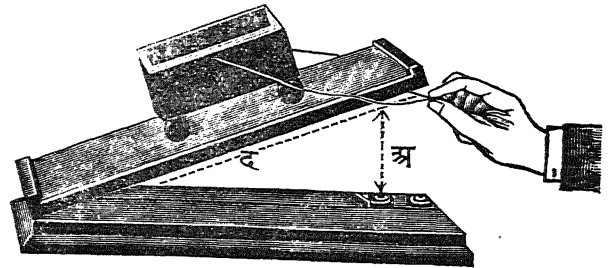
चित्र नं० ३

ज़मीनपर रख दीजिये और लड़कोंके टीनके खिलौनेकी जो रेलें होती हैं उनमेंसे एकको लेकर तख़्तेपर रखिये। तख़्तेको धीरे धीरे एक तरफ़से ऊंचा

कीजिये। देखिये ज़ियादा ढाल होनेसे रेल आप ही आप तख़्तेपरसे लुढ़क आयगी। यदि ऐसी दशामें आउंचाई है और द सड़ककी दौड़ है, आ चार फुट है और द सौ फुट है, तो ऐसी ढालको संख्याओंमें यों लिखते हैं, "४०—१०००"। आपने रेलगाड़ीमें सवार होकर प्रायः सड़कके दाएं या बाएं चित्र नं० ४ केसे हथ्थे लगे देखे होंगे। यह रेलकी पटरी-

चित्र नं० ४

का चढ़ाव या उतार बतलाते हैं। एक हथ्था बिलकुल चौरस होता है और इसपर संख्याएँ लिखी होती हैं, यहसंख्याएं ढालकी नाप हैं। १०० फुटमें २५ फुटसे ज़ियादा ढालपर रेल नहीं चढ़ सकती और साधारण चिकनी रेलपर जब १०० फुटमें चार ४ फुटसे ज़ियादा ढाल होती है, तो साधारण रीतिसे गाड़ी चलाना लाभदायक नहीं होता। ऐसी दशामें तीन पटरीकी

पटरीके दाँतोंको पकड़कर गाड़ियोंको ढालके ऊपर ले जाते हैं।

हमारे देशमें यात्री प्रायः बड़े परिश्रमसे पहाड़ों-परके धर्म्म क्षेत्रोंमें जाते हैं परन्तु यूरोप और अमेरिकामें जहां रुपया भरा पड़ा है, कमाना तो अलग रहा वहांके रईसोंको अपना समय बिताना कठिन हो जाता है। यह रईस दिल बहलानेके-लिए बरफ़से ढकी हुई बड़ी ऊंची पहाड़ियोंपर हवा खाने जाया करते हैं और इतनी संख्यामें जाते हैं कि गंगास्नानके समय जैसी बहुत सी रेलें हिन्दुस्तानमें अपना साल भरका मुनाफ़ा कमा लेती हैं वैसे ही इन पहाड़ियोंके यात्रियोंसे पहाड़ोंकी रेलें भरपेट मुनाफ़ा कमा लेती हैं। ऐसे स्थानोंकी रेलोंकी अद्भुत लीला देखकर आप चकित हो जायँगे। (देखिये चित्र ६) मानों आपको आ स्थानपर जो पहाड़की चोटीपर है रेल ले जाना है। अगर आप पहाड़में द रास्तासे रेल ले जाते हैं तो चढ़ाई बहुत पड़ेगी और रेलका चढ़ना कठिन हो जायगा। अगर आप चित्र ७ के अनुसार पहाड़परके चक्करदार रास्तेसे

चित्र नं० ७

चित्र नं० ६

रेल बनाते हैं। देखिये, चित्र नं० ५। इसमें एक गाड़ी पहाड़की कन्दरामेंसे निकलकर आप ही आप ढालकी तरफ़ तीन पटरीकी रेलपर लुढ़कती चली आती है। इन तीनों पटरियोंमेंसे बीचकी पटरीमें दाँते बने हुए हैं। गाड़ियों और अंजनमें भी बीचमें एक दाँतेदार पहिया होता है। इसके दाँते बीचकी
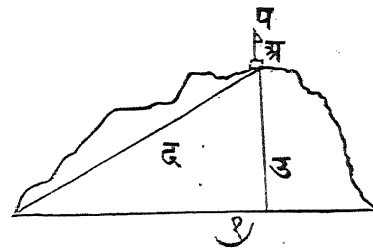
रेल ले जायंगे तो रास्ता तो ज़रूर लम्बा हो जायगा पर चढ़ाई कम होगी और गाड़ियां सुगमतासे पहाड़के ऊपर चढ़ सकेंगी। अमेरिकाका नक़शा हाथमें लीजिये, देखिये Trans Continental Railway ट्रान्स कानटीनेन्टल रेलवे Halifax हलीफक्ससे Lytton लिटिन Rocky

राकी पहाड़ोंको पार करती हुई हज़ारों मील चली आती है। Siberia सैबीरियाका नक़शा हाथमें लीजिये, देखिये, सैबीरियन रेलवे ५००० मील लम्बी है और पहाड़ों जंगलों और झीलोंको पार करती चली जाती है। बेकाल झीलमें यह एक अद्भुत लीला दिखलाती है, जिसका आगे चलकर वर्णन किया जायगा। अफ्रिका का नकशा हाथमें लीजिये। देखिये, (केरो) काहिरासे लेकर केपटौनतक एक रेलवे लैन है। हमारी रेलें इनके सामने तो मानों खिलौना हैं। Peru पीरूमें पहाड़पर तीन मील ऊंचे रेल चढ़ जाती है। दारजिलिंग रेलवे भी हिमालयमें हज़ारों फुट ऊंचे चढ़ गयी है।

जब पहाड़ राहमें पड़ जाते हैं तो उनमें खोदकर सुरंग या कन्दराएं बना देते हैं और रेल कन्द्रामें* से होकर पहाड़के उस पार निकल जाती है। Simplon tunnel सिमपिलन टनल जिसका आगे चलकर किसी संख्यामें विशेष वर्णन किया जायगा इटली और स्वीज़रलेंडके मध्यमें है। यह कन्दरा बारह मील लम्बी है और आठ वर्षमें कलोंके द्वारा खोदकर बनायी गयी थी। जब दो पहाड़ोंके बीचमें कोई घाटी आजाती है तो साधारण रीतिसे पुल बांधकर रेल एक पहाड़से दूसरेपर नहीं जाती। लकड़ीकी धन्नियों या लोहेके गाटरोंसे पाड़ बाँधकर पाड़ी पुल बनाते हैं। हिन्दुस्तानमें दो बड़े प्रसिद्ध पाड़ी पुल हैं। देखिये चित्र नं० १० इसमें प पाड़ी पुल है यह बोलन पासमें है।

देखिये चित्र नं० ६ इसमें प पाड़ी पुल है और क एक कच्चा पुल है जिसकी सहायतासे पक्का पुल बनाते हैं। यह चटगाँवमें गोकटैक स्थानपर है। साधारण रीतिसे रेलका रास्ता बनानेमें लगभग एक मीलपर एक लाख रुपया ख़र्च होता है और कहीं कहीं तीन लाखतक ख़र्च हुआ है, परन्तु पहाड़ या बड़ी नदी राहमें पड़ जाय तो करोड़ों रुपया ख़र्च कर देना कोई बड़ी बात नहीं है।

जब कभी किसी ऐसे पहाड़के तटमेंसे रेल होकर गुज़रती है जहाँ जाड़ोंमें बर्फ़की धारा बहा करती है और पहाड़परसे गलगलकर रेलकी पटरीपर आजाने का भय रहता है तो ऐसे स्थानोंपर बर्फ़की धाराको दूसरी ओर बहा ले जानेका प्रबन्ध किया जाता है। ऐसी दशामें रेलकी पटरीको एक भाँतिके लकड़ीके ठाठरोंसे ढक देते हैं। (देखिये चित्र नं० ८) प पहाड़ है जिसके तटमें र
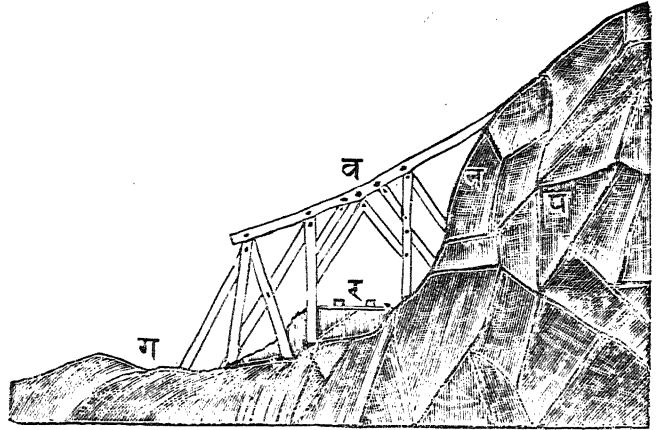
चित्र नं० ८

रेल है न पहाड़की ढाल है व ठाठर हैं जो र रेलकी पटरीके ऊपर छाये हुये हैं। जब गलकर पहाड़परसे बर्फ़ चलती है ठाठरपरसे होकर ग स्थानपर गिरती है और रेलकी पटरी बच जाती है। नयी दुनियाकी Central Pacific Railway सेंट्रल पैसिफ़िक् रेलवे Sieranevada सीरानवेडा पहाड़के तलेसे होकर निकलती है। इस स्थानपर उसको बर्फ़की धारासे इसी तरह बचाना पड़ता है। यहांपर तैंतीस मील लम्बाईमें पटरीके ऊपर

* मध्य प्रदेशमें ऐसी कन्दराको "बोवदा" कहते हैं। (वि० सं०)
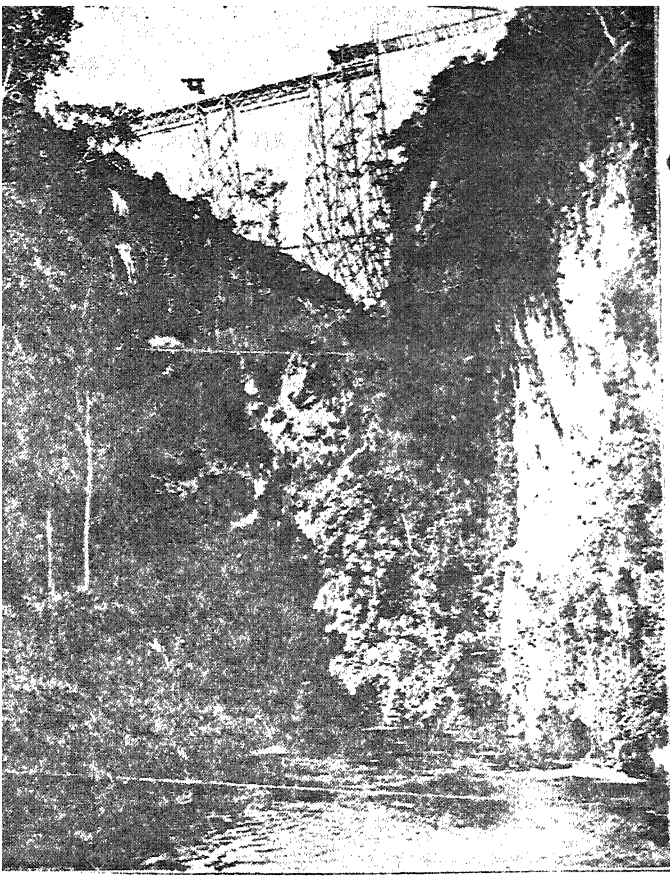
चित्र ९—गोकटैक ( चट गांव ) का पाड़ी पुल।

[ प—पाड़ी पुल, क–कच्चा पुल ]
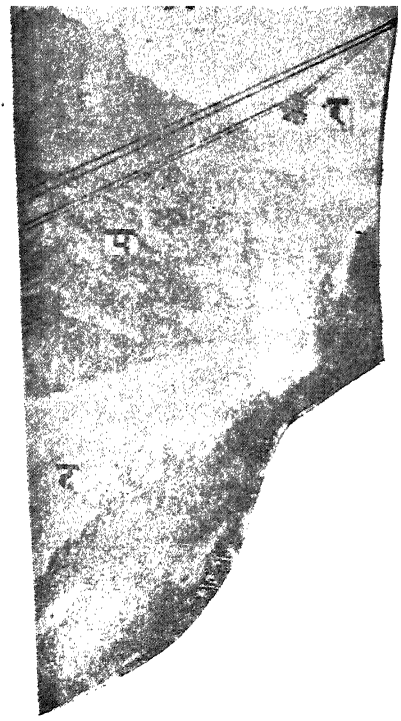
चित्र ११—लोहेके रस्सोंपर चलनेवाली रेल

[ द—बरफ़का दरिया, र–रेल गाड़ी, प–पहाड़ ]

चित्र १०—बोलन पासका एक पुल

[ प—पाड़ी पुल ]
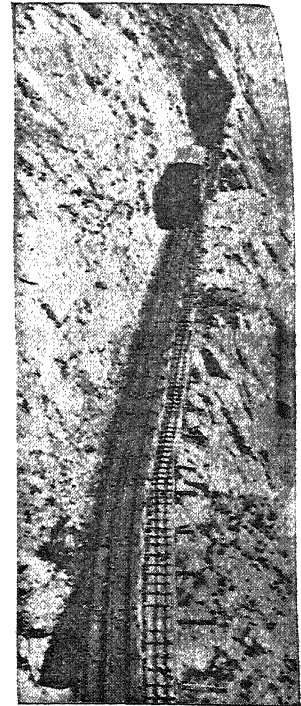
चित्र ५—तीन पटरोकी पहाड़ी रेल

ठाठर छाये हुये हैं। सब लकड़ीके बने हुए हैं, और उनके बाहर दोनों तरफ़ स्टेशनोंपर ट्रेन आग बुझानेका मसाला लिये रात दिन खड़ी रहती हैं। जगह जगह गुमटियोंमें चौकीदार इसको देखते रहते हैं। जो अनायास कहीं आग लग जाय, तुरन्त ख़बर भेजकर आग बुझानेकी ट्रेन मँगा सकते हैं।

मध्य अमेरिकाका नक़शा हाथमें लीजिये, देखिये, फ़लोरिडामें एक नगर Miemi मियामी है। यहांसे सौ मील रेल समुद्रमें होकर Key west कीवेस्टतक जाती है। फिर यहांसे तीस मील जहाज़में चढ़कर Havana हवाना जाती है। हवाना नगर Cuba क्यूबामें है। यह रेलकी पटरी साढ़े चार करोड़ रुपया लगाकर बनी थी और जगह जगह समुद्रमें छोटे छोटे सीमेंटके टापू पुल बांधनेकेलिए बनाने पड़े थे।

जहाज़पर चढ़कर रेलका जाना पढ़कर आप चौंके होंगे। हां, रेल भी जहाज़में चढ़कर जाती है मसल मशहूर है "कभी नाव गाड़ीपर कभी गाड़ी नावपर"। जब कोई बड़ी झील या समुद्र बीचमें आजाता है तो इस पार माल असबाब और मुसाफ़िर उतर पड़ते हैं। फिर जहाज़पर चढ़कर और मालको लादकर उस-पार जाते हैं और उसपार फिर रेलपर चढ़कर जहां जाना होता है चले जाते हैं। इस तरहसे समय बहुत व्यतीत होता है, ख़र्च बहुत लगता है और परिश्रम बहुत उठाना पड़ता है। यूरोप और अमेरिकाके वैज्ञानिक इनजीनियरोंने यह कठिनाई देखकर कहा कि रेल ही क्यों न इस पार जब किनारेपर पहुंचे तो, जहाज़में पटरी डालकर चला दी जाय और रेल समेत जहाज़ उस पार चला जाय। जब किनारे पर पहुंचे, रेल जहाज़से निकलकर भूमिपर साधारण रीतिसे जहां जाना हो चलीजाय। इसका गूढ़ विचार करके और हिसाब लगाकर ऐसे ही जहाज़ बनाये और उनकाप्रयोग किया। समय कई स्थानोंको रेल जहाज़पर चढ़कर जाती इस है। अमेरिकामें एक स्थानका नाम मेरीलैंड है। यहां एक खाड़ी है जिसका नाम (Chesa Peak) चिसा पीक है। यहां छत्तीस मील रेल जहाज़पर चढ़कर जाती है। साल भरमें लगभग साठ हज़ार-के गाड़ियां जहाज़पर आती हैं और जाती हैं। डेन-मार्क (Denmark) में एक स्थान है जिसका नाम—(Falster) फ़ाल्स्टर है। यहां छब्बीस मील रेल जहाज़पर चलती है। (Lake Michigan) लेक मिचीगन झीलमें कितनेही जहाज़ इधरसे उधर ट्रेनें ले जाते और ले आते हैं। लम्बीसे लम्बी यात्रा इस झीलमें दो सौ चालीस मीलकी है। इस झीलमें ट्रेन ही नहीं जहाज़पर चढ़ जाती बल्कि जहाज़-पर ही ट्रेनके मुसाफिरोंकेलिए भोजनालय और वाचनालय हैं।

फिर देखिये यात्रियोंकी इतनी बड़ी धारा आती जाती रहती है कि एक ट्रेनसे काम नहीं चलता। तब (underground railway) सुरंगीरेल या पाताल गाड़ी बनाते हैं। यह मकानों-के और सड़कोंके तले पृथ्वीके अन्दर सुरंगों या कन्दराओंमें होकर चलती है। जब इससे भी काम नहीं चलता तो (overhead railway) आकाशी रेल बनाते हैं। यह बड़े ऊंचे पुलोंपर होकर नगरके सब मकानोंके ऊपरसे निकलती है।

कहीं कहीं घाटियां बहुत बड़ी बड़ी होती हैं। ऐसे स्थानोंपर अगर पाड़ी पुल भी नहीं बांध सकते तो झूला रेल बनाते हैं। पाठकगणोंने लछमन-झूला हृषीकेशसे दो मीलपर बद्रीनाथके रास्ते-में देखा होगा। उसी भांति पूरी गाड़ी मुसा-फ़िरोंसे भरी हुई इस पारसे उस पार जाती है और आती है। देखिये चित्र नं० ११ इस चित्रमें प, एक पहाड़ है दूसरी तरफ़का पहाड़ नहीं दिखाया गया है। द, इस घाटीमें एक बड़ा भारी-बरफ़का दरिया है, र एक रेलगाड़ी है जो लोहे-के रस्सोंपर लटकी हुई पार जा रही है। अक्सर स्थानोंपर रात दिनमें सैकड़ों गाड़ियां आती जाती हैं। हमारे यहांके अफ़ीमची सरीखे

स्टेशनमास्टर और (पेंट्स्मैन) पेंटमन ऐसे स्टेशनोंपर कुछ काम नहीं कर सकते। Metropolitan Station मेट्रोपोलिटन स्टेशनपर लंडनमें कई सौ गाड़ियां आती जाती हैं। यहां पटरियोंके बीचोंबीच एक कमरा बना हुआ है। इसी कमरेसे पेंटमैन सब लैनोंको मिलाता रहता है और काटता रहता है। पेंटमैनके आगे दीवारपर एक रेलकी लैनों का नकशा बना हुआ है। इस नकशेपर जिस लैनपर जहां रेल होती है बिजलीसे रोशनी होती जाती है। इस नक़शेको देखकर अगर कहीं रेल लड़नेका डर हो तो उसको तुरन्त मालूम हो सकता है।

---

## नेत्र रक्षा

[ लेखक डी. वी. देवधर, एम्. एस-सी. ]

आजकल विद्यार्थियोंके नेत्रोंकी दशापर थोड़ासा विचार किया जाय तो मालूम पड़ेगा कि यदि किसीको दूरकी वस्तु ठीक ठीक नहीं दीखती तो कोई पासकी ही वस्तुको नहीं देख सकता, यदि किसीके नेत्रोंमें थोड़ी देरके पढ़नेसे पानी भर आता है तो किसीके नेत्र दुखने लगते हैं और किसीके नेत्रोंके सामने अंधेरा छा जाता है। यह दोष कैसे उत्पन्न हो जाते हैं और किन किन नियमोंपर चलनेसे यह विकार होने ही न पावें इत्यादि बातोंका दिग्दर्शन मात्र करा देना इस लेखका उद्देश्य है।

जीवधारियोंकी जीवन-यात्राको सुगम करनेकेलिए ईश्वरने जितनी इन्द्रियोंको रचा है उनमें नेत्रेन्द्रिय सर्व प्रधान कही जाय तो अत्युक्ति नहीं होगी क्योंकि इसके बिना सम्पूर्ण जगत अंधकारमय दीखता है। किसी वस्तु या दृश्यका कितना ही वर्णन सुना जाय परन्तु जो प्रसन्नता और भाव उस वस्तु या दृश्यको स्वयम् देखनेसे उत्पन्न होते हैं वह सुननेसे कदापि उत्पन्न नहीं होते। इस इन्द्रियकी बनावटपर विचार करनेसे चकित हो जाना पड़ता है। आजकल ताल केमरा, दूरदर्शक यंत्र, सूक्ष्म दर्शक यंत्र इत्यादिके समयमें नेत्रोंकी बनावट और विचित्र कारीगरीका समझना कठिन नहीं है। इसका वर्णन और नेत्रके अंगोंकी स्थितिका चित्र पाठक वृश्चिक १९७३ वि० के विज्ञानमें 'फोटोका केमरा जो सबके पास है' वाले लेखमें पढ़ ही चुके हैं इसलिए यहां पुनः लिखना अनावश्यक है।

नेत्रोंके सम्बन्धमें एक अचंभेकी बात यह है कि दोनों नेत्रोंसे एक वस्तुके दो चित्र नहीं बनते वरन् एक ही चित्र बनता है। इसपर कुछ लोग शायद यह समझने लगेंगे कि दो नेत्र केवल सुन्दरता बढ़ानेकेलिए बनाये गये हैं।-क्योंकि सब काम एक ही नेत्रसे पूरी तरह निकल सकते हैं। परन्तु बात यह नहीं है। एक नेत्रसे वस्तुओंकी दूरी, तथा मुटाई, लम्बाई, चौड़ाई इत्यादिका ठीक ठीक पता लगाना असम्भव है। एक नेत्र बन्द करके सुईके छेदमें तागा डालिये तो मालूम पड़ जायगा कि एक नेत्रसे ही काम लेनेमें कितनी कठिनाई पड़ती है। दोनों नेत्रोंके दृश्यमें किंचित भेद रहता है। दोनों प्रकारके दृश्योंका एक ही कारण होनेसे ही दूरी, लम्बाई, मुटाईका ठीक ठीक ज्ञान होता है। Stereoscope सैरबीनको तो आपने देखा ही होगा। इसमें दो ताल लगे रहते हैं दोनों तालोंके पास दोनों नेत्रोंको रखनेसे दूसरी ओरका चित्र देखा जाता है। चित्रमें लम्बाई, मुटाई इत्यादिका इतना बोध होता है कि वस्तु साक्षात दीखती हुई मालूम पड़ती है और यह नहीं मालूम पड़ता कि चित्र देखा जा रहा है। प्रायः इसी प्रकारके दृश्य उन गोलकोंमें दिखाई पड़ते हैं जिनकेद्वारा मेलोंमें एक एक पैसा देकर लोग आगरेके ताजमहल, बम्बईके घाट, काशी विश्वनाथके मन्दिर इत्यादिकी छटा देखते हैं।

'फोटोका केमरा' वाले लेखमें यह दिखलाया गया है कि बहुत पासकी वस्तुएं लगातार बहुत

देरतक देखते रहनेसे जैसे पुस्तकें बहुत पास करके पढ़ने, कपड़ा आंखोंके बहुत पास करके सीने पिरोने और दस्तकारीका काम करने, काग़ज़ बहुत पास करके लिखने, रेखा-चित्र (ड्राइंग) बनाने इत्यादिसे नेत्रोंके ताल मोटे पड़ जाते हैं और मज्जा तन्तुओंका स्वभाव ऐसा बदल जाता है कि वह दूरकी वस्तुएं देखनेकेलिए तालको फैलानेमें असमर्थ हो जाते हैं। जब कभी दूरकी वस्तुएं प्रयत्न करके देखी जाती हैं तो मज्जातन्तु बहुत जल्द थक जाते हैं। इसी थकावटसे आंखे दुखने लगती हैं। ऐसे नेत्रवाले लड़के दूरकी वस्तु देखने-केलिए ऐनक लगाते हैं। यदि ऐनक न लगावें तो उनकी आंखें दिनपर दिन ख़राब होती जायंगी और कुछ कालके पश्चात् बिलकुल असमर्थ हो जायंगी। इस रोगको मायोपिया (Myopia) कहते हैं। इसके प्रतिकूल नेत्रके ताल जब अधिक फैल जाते हैं तब आंखें पासकी वस्तुओंके देखने-में असमर्थ हो जाती हैं यद्यपि दूरकी वस्तुएं साफ़ साफ़ दीखती हैं। यह रोग प्रायः बुढ़ापेमें होता है और इसी कारण बूढ़े लोग कोई किताब या पत्र पढ़ते समय उसको हाथ फैलाकर आंखोंसे अधिक दूरपर रखकर पढ़ते हैं। यदि ऐसे लोग ऐनक न लगाना चाहें तो उनको उचित है कि अपने हाथकी लम्बाई कृत्रिम उपयोंसे बढ़ावें। परन्तु यह करना कठिन है इसलिए यह लोग ऐसी ऐनक लगाते हैं जिसके ताल बीचमें उभरे रहते हैं जिससे ऐनकके तालकी मोटाई और नेत्रके तालका पतलापन मिलकर उचित मोटाई कर देते हैं। इस रोगको हैपर मेट्रोपिया (hypermetropia) कहते हैं। अब पाठकोंको मालूम हो गया होगा कि आंखसे पानी आना या आंखोंका दुखना केवल मज्जातन्तुओंकी थकावटसे होता है। पर मेट्रोपिया कभी कभी लड़कोंमें भी पाया जाता है।

अब कभी इन दोनों विकारोंमेंसे कोई विकार दिखाई पड़े तो चाहिए कि तुरन्त अच्छे डाक्टरकी सम्मति लेकर उचित ऐनक खरीदें नहीं तो आंख दिनपर दिन बिगड़ती ही जायगी और कुछ समय-के पश्चात ऐसी असाध्य दशामें पहुंच जायगी जहां ऐनककी सहायतासे भी काम नहीं चल सकेगा। इस समय उन नियमोंका बतलाना भी आवश्यक है जिनका पालन करनेसे नेत्रकी ज्योति हीन नहीं होने पाती या यदि कुछ हीन हो गयी हो तो और बिगड़ने नहीं पाती। वह नियम स्थूलतः यह हैः—

(१) पढ़नेके समय ध्यान रखना चाहिये कि (क) जिन बारीक अक्षरोंके पढ़नेमें बहुत प्रयत्न करना पड़े और जल्दी थकावट मालूम देने लगे उनको न पढ़ें और यदि पढ़ना बहुत आवश्यक हो तो तालकी सहायतासे पढ़ें, (ख) अक्षरों और नेत्रों-का अंतर १० से १२ इंचका रहे। इससे कम अन्तर-पर पुस्तक रखकर पढ़ने या कपड़ा रखकर सीने-से आंखके ताल मोटे पड़ जाते हैं, (ग) लेटकर न पढ़ें विशेषतः औंधे लेटकर। पढ़नेसे नेत्रोंमें रक्त उतरकर बहुत जल्द विकार उत्पन्न कर देता है, (घ) चलती गाड़ीमें बैठकर न पढ़ें (ङ) कम प्रकाशमें आंखोंको तान तान कर न पढ़ें।

(२) जहांतक होसके रात्रिमें आंखोंसे बारीक काम न लें विशेषतः गर्मीके दिनोंमें जब दिन इतना बड़ा होता है कि रात्रिमें काम करनेकी आ-वश्यकता ही नहीं पड़ती। जाड़ेमें दिन छोटा होता है इसलिए रात्रिका पढ़ना आवश्यक है। इसकेलिए तिली, सरसों अंडी वा बिनौलेके तेलका दीपक अच्छा होता है। इन दीपकोंका प्रकाश अति शुभ्र तथा अति प्रबल नहीं होता, इसलिए नेत्रको पीड़ा नहीं होती। इनसे जो प्रकाश मिलता है उनमें भी पीली और लाल किरणोंकी अधिकता होती है। ऐसी किरणें आंखको कम हानि पहुंचाती हैं और पढ़नेकेलिए सबसे अच्छी होती हैं। मोमबत्तीका प्रकाश भी नरम और सुख-प्रद होता है। जिन दीपकोंका प्रकाश बहुत शुभ्र और प्रबल होता है वह पढ़नेकेलिए हानिकर होता है क्योंकि इसमें बैजनी और इससे भी परे-

की किरणोंकी अधिकता होती है। ऐसी किरणें आंखके मज्जा तन्तुओंपर विशेष प्रकारका आघात पहुंचाकर दृष्टिमें विकार उत्पन्न कर देती हैं। आजकल अमेरिकाके विद्वानोंकी समझमें यही बात आयी है। इसीलिए वह कहते हैं कि प्रकाशके जितने नए उपकरण मिट्टीका तेल, गैस, बिजली, मैंटल लाइट, इत्यादि जो विज्ञानके प्रभावसे आविष्कृत हुए हैं उन सबके प्रकाशमें बैजनीसे परेकी किरणोंकी अधिकता होती है और उनकी ज्योति भी आंखोंको असह्य होती है। यह प्रकाश अस्पतालोंमें चीर फाड़का काम करने या हड्डियोंका चित्र उतारनेके काममें चाहे भले ही लिया जाय परन्तु पढ़ने लिखनेके काममें उपयोगी नहीं होता।

लालटेन, लम्प इत्यादिमें मिट्टीके तेलकी रोशनी अधिकतर काममें लायी जाती है। इसके धुएंसे वा अदृश्य दुर्गन्धितयुक्त गैससे सदैव बचना चाहिए क्योंकि यह पहले तो नाकको ही असह्य होता है दूसरे सांसके साथ भीतर जानेसे स्वास्थ्यकेलिए भी हानिकर होता है। लम्प अथवा लालटेनको आंखके सामने रखकर पढ़ना सर्वथा अनुचित है क्योंकि ऐसा करनेसे आंखोंको सदैव तेज़ रोशनीके सामने रहना पड़ता है। इस लिए यह पढ़नेवालेकी बाईं ओर कुछ पीछे रखे जायं तो अच्छा है। इससे आंखोंमें वही रोशनी पहुंचेगी जो पुस्तक वा काग़ज़पर जाकर लौटती है। यह स्वाभाविक नरम होती है और आंखोंको कष्ट नहीं पहुंचाती। दाहिनी ओर रखनेसे लिखनेमें सुविधा नहीं होती क्योंकि हाथकी परछांईं काग़ज़पर ही पड़ती है।

३—औषधोपचार—चरक, बाग्भट इत्यादि वैद्यक ग्रन्थोंमें नेत्ररक्षाके साधारण नियम और औषधियां बहुत सी दी हुई हैं। उनमेंसे कुछ यहां लिखी जाती हैंः—प्रत्येक विद्यार्थीको सन्ध्याकेसमय कमसे कम पाव भर दूध पीना चाहिए। इससे आंखोंको पुष्टि होती है। पन्द्रहवें बीसवें दिनका अन्तर देकर गुलाब-जल शहद या पानीमें घिसी हुई मिश्री आंखोंमें डालते रहनेसे आंखके साधारण विकार जैसे पानी आना, लाल होना या दुखना उत्पन्न नहीं होने पाते। रात्रिके समय रुईके फाहे दूधमें भिगोकर आंखोंपर रखकर सो जानेसे भी आंखोंको पोषण होता है और उनकी शक्ति नष्ट नहीं होने पाती। त्रिफलाका चूर्ण, जिसमें जब एक हर्रा हो तो दो बहेड़ा और चार आंवला, चार माशा कुनकुने पानीके साथ सर्वदा सोते समय सेवन करनेसे नेत्रोंमें कोई विकार नहीं उत्पन्न हो सकता और शक्ति बढ़ती ही जाती है। इससे पेटके विकार भी मलकी शुद्धि होनेसे जाते रहते हैं। यह वैद्यक शास्त्रमें नेत्रकेलिए रसायन कहा गया है।

४—यदि आंख अनियमित व्यवहारसे ख़राब हो ही जायं और दूरकी अथवा पासकी वस्तु देखनेमें कठिनाई पड़ने लगे तो आंखकी परीक्षा तुरन्त अच्छे डाक्टरसे करावे और जैसी ऐनक वह लगानेको कहे वैसी ही लगावे। आजकल बहुतसे ऐनकके व्यापारी घूमते हुए मिलते हैं जो आंखकी परीक्षा स्वयम कर लेते हैं और ऐनक भी दे देते हैं। यह प्रथा निंदनीय है जिससे हानिके सिवा लाभ नहीं होता क्योंकि आंखकी परीक्षा बड़ी कठिन है। रोगीको यह नहीं मालूम पड़ता कि उसकेलिए कौन सी ऐनक लाभदायक होगी क्योंकि ऐसी बहुत सी ऐनकें होती हैं जो पहले पहल उचित समझ पड़ती हैं परन्तु कुछ दिनोंमें अयोग्य हो जाती हैं। इसलिए परीक्षा किसी अच्छे डाक्टरसे ही करवाना चाहिए और उसीकी सम्मतिसे उचित ऐनकका व्यवहार करना चाहिए। इसपर भी कभी कभी वर्ष, छः मासके अनन्तर परीक्षा कराते जाना चाहिए जिससे आंखकी दशा मालूम होती रहे।

लोग साधारणतः यह समझते हैं कि pebbles पत्थरकी ऐनक कांचकी ऐनकसे अच्छी होती है वास्तवमें है भी ऐसा। परन्तु पत्थर और कांचकी

पहिचान कठिन है। टूरमलीन नामक पारदर्शक स्फटिकके चिमटे बाज़ारमें मिलते हैं। प्रत्येक चिमटेके सिरोंपर स्फटिक होता है। एक सिरे-परका स्फटिक घुमाया जा सकता है, दूसरा जमा हुआ रहता है। यदि जमे हुए स्फटिकके पास आंख रखकर दूसरेमें होकर किसी ओर देखें तो उसमेंसे दिखलाई देगा, पर यदि उसको घुमाते जायं तो उसकी एक स्थिति एसी आयगी कि प्रकाशका आना बन्द हो जायगा। [ यदि और अधिक घुमाएं तो फिर दीखने लगेगा। प्रत्येक पूरे चक्करमें चार बार उसमें होकर दीखना बन्द हो जायगा ] एसी स्थितिमें यदि पत्थर या बिल्लोरका टुकड़ा दोनों टूर मलीनोंके बीचमें रखा जाय तो फिरसे दीखने लगेगा। काचंका ताल रखनेसे कुछ परिवर्तन न होगा अर्थात् अन्धकार ही रहैगा यही परखनेकी साधारण रीति है परन्तु कांचपर अधिक दबाव या गरमी सरदी पहुंचाने-पर इसकी भी वैसी ही दशा हो जाती है। इसलिए कांच और पत्थरकी ऐनकोंके विचारसे भी योग्य डाक्टरकी परीक्षाकी आवश्यकता है।

---

## सुवर्णकारी २

[ ले० गङ्गाशंकर पचोली ]

कि सुनारोंको सोनेके अतिरिक्त अन्य धातु जैसे चांदी तांबा आदि-का भी काम पड़ता है इस हेतु इन धातुओंके विषयमें भी कुछ कहना आवश्यक है।

चांदी एक सफ़ेद चमकीली धातु है। कड़े-पनमें यह धातु सोने और तांबेके बीचमें समझी जाती है और सोने और तांबेकी अपेक्षा कम दर्जे-की गरमीसे पिघल जाती है। यह धातु जलसे १०.५ गुनी भारी है। शुद्ध सोनेमें खूब मिल जाती है, पर सोनेका रंग फीका कर देती है।

[ विज्ञान भाग ४--संख्या १—पृष्ठ ३५ से सम्मिलित ]

शुद्ध तांबा लाल रंगकी धातु है। यह भी बढ़ाव और खिंचावमें अच्छा है और इसी कारण सोने-में मिलाव करनेके काम आता है। गलानेकेलिए १९९४ दर्जेकी गरमीकी ज़रूरत होती है और जलसे ८.९६ गुना भारी है।

जस्तेका रंग नीली झांई लिये हुए सफ़ेद होता है। यह ७७३ दर्जेकी गरमीसे पिघलता है। तेज़ आग देनेसे जल जाता है वा उड़ जाता है। इसकी भस्म सफ़ेद रंगकी होती है।

जस्तेका मेल सोनेमें न करना चाहिये, पर जो काम पड़ जाय और मेल करना पड़े तो पहिले सोनेको घरियामें गलाकर पीछेसे जस्ता गरमकर थोड़ा थोड़ा मिलाना चाहिये। अंगरेज़ी सुनारों-को तांबे और जस्तेकी मिलावटसे काम पड़ता है जिसको वे 'कम्पाउण्ड' अर्थात् भरत कहते हैं और इसको १६ भाग तांबा और ८ भाग जस्ता मिलाकर बनाते हैं। एक तोले शुद्ध सोनेमें २ माशे ३ रत्ती जस्ता मिलानेसे सोना कड़ा हो जाता है। यद किसी उतरते दरजेके सोनेके बनानेमें चांदी तो कम मिलाई जाय और यह मिलाया जाय तो उस केरटके सोनेको दो वा तीन केरट ऊंचे दरजेकी सूरतका कर देता है, पर वह सोना काममें लाना बहुत कठिन हो जाता है और थोड़ेसे इस्तेमालमें उसका रंग बदल जाता है। जो धातु तीन भाग तांबा और एक भाग जस्तेके मेलसे बनाते हैं वह 'माहन गोल्ड' के नामसे बोली जाती है।

प्रत्येक केरटके सोनेके बट्टेके विषयमें पहिले सारिणी दी गयी थी। यहांपर एक दूसरी सारिणी दी जाती है जिसमें २४ केरटके सोनेकी कुछ और मिलावटें दिखाई जाती हैं और यह भी बताया जाता है कि किसी नम्बरके केरटमें कितना बट्टा मिलानेसे उससे नीचेके नम्बरका सोना बन सकता है।

अब यह दिखाया जाता है कि किसी केरटके सोनेको उतरते केरटका बनाया जाय तो बट्टा

किस हिसाबसे मिलाना चाहिये। मानलो कि हमको २२ केरटके सोनेको १८ केरटका बनाना है तो इन संख्याओंको १२ से गुणाकर इनके गुणनफलोंके अन्तरको जिस केरटका सोना बनाना है उससे अर्थात् १८ से भाग दो। जो उपलब्ध होगा वही माशे आदिमें बट्टेकी तोल होगी जिसके देनेसे अभीष्ट नम्बरका सोना हो जायगा। इस उदाहरणमें—

२२ × १२ = २६४ ; १८ × १२ = २१६ ;

∴ अन्तर = ४८,

∴ बट्टा = $\frac{४८}{१८}$ = २ माशे. ५$\frac{१}{३}$ रत्ती.

अर्थात् २२ केरटके एक तोले सोनेको १८ केरटका करनेमें २ माशे ५ रत्ती बट्टा मिलाना चाहिये।

जिस प्रकार ऊपरके केरटके सोनेको उतरते केरटका सोना बनानेकेलिए बट्टेकी तोल निकाली जाती है उसी प्रकार नीचे दरजेके सोनेको ऊपरके दर्जेका बनानेकेलिए कितना शुद्ध सोना देना चाहिये यह भी जाना जा सकता है। केवल अंतर इतना ही है कि पहिली रीतिमें अभीष्ट नम्बरके सोनेके केरटसे भाग देते हैं और जो मिलता है वह बट्टेकी तोल होती है परन्तु इस स्थानपर २४ केरटके और अभीष्ट केरटके अंतरसे भाग दिया जाता है और जो उपलब्ध होता है वह शुद्ध सोनेकी तोल होती है। यथा

२२ × १२ = २६४, १८ × १२ = २१६,

अन्तर = ४८, २४ − २२ = २,

$\frac{४८}{२}$ = २४ माशे

अर्थात् १८ केरटके एक तोलो सोनेमें २४ माशे शुद्ध सोना मिलानेसे सब २२ केरटका हो जायगा।

| सोनेका नम्बर | तोल | बट्टा | | कुल तोला | किस केरटका बना | गुरुत्व |
|---|---|---|---|---|---|---|
| | | चांदी | तांबा | | | |
| शुद्ध सोना | ११ माशे | १ माशा | ... | १ | २२ केरट | १८·७४६ |
| ” ” | ” ” | ... | १ माशा | १ | २२ केरट | १८·६२१ |
| ” | ” ” | ३ रत्ती | ५ रत्ती | १ | ” ” | १८·६६६ |
| ” | १० ” | १ माशा | १ माशा | १ | २० ” | १७·८७ |
| ” | ६ ” | २ ” | १ ” | १ | १८ ” | १७·११ |
| ” | ६ ” | १ ” | ५ ” | १ | १२ ” | १४·३५ |
| २२ केरट सोना | ६ मा० ७ र० | ७ रत्ती | १० रत्ती | १ | १८ ” | १७·०८ |
| ” ” | ८ मा० २ र० | ६ ” | २१ ” | १ | १५ ” | १५·७८ |
| ” ” | ७ ” १ ” | ११ ” | २६ ” | १ | १३ ” | १४·७१६ |
| १८ केरट ” | १० माशे | ३ ” | १३ ” | १ | १५ ” | १५·७४६ |
| ” ” | ८ ” | १ माशा | ३ माशे | १ | १३ ” | १४·४७६ |
| शुद्ध सोना | १ मा० २ र० | ६ रत्ती | १० ” | १ | कामन गोल्ड | १०·३३४ |
| ” ” | ८ ” ४ ” | १ ” | २१ ” | १ | राइडर गोल्ड | १६·५८३ |

### जुदे जुदे केरटके सोनेके मेल और उनके गुरुत्वका कोष्ठक।

| केरट | शुद्ध सोना | बट्टा | | कुल | गुरुत्व | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | चांदी | तांबा | | सोनेका | बट्टेका | मेलका |
| | माशा | | | तोला | | | |
| २४ | १२ | ... | ... | १ | १९·५ | ... | १९·१७ |
| २३॥। | ११-७ | १ रत्ती | १ रत्ती | १ | १९·२९ | ·१०९ | १९·४०६ |
| ” | ” | ... | ... | १ | ” | ·०९३ | १९·३९३ |
| २३॥ | ११-६ | २ रत्ती | १ रत्ती | १ | १९·०९ | ·२१८ | १९·३१ |
| ” | ” | १ ” | २ रत्ती | १ | ” | ·२०२ | १९·२९ |
| ” | ” | ... | ... | १ | ” | ·१८६ | १९·२८ |
| २३। | ११-५ | ३ ” | १॥ ” | १ | १८·८८ | ·३२७ | १९·२१ |
| ” | ” | १॥ ” | ३ ” | १ | ” | ·३०३ | १९·७८ |
| ” | ” | ... | ... | १ | ” | ·२७९ | १९·१६ |
| २३ | ११॥ | ४ रत्ती | १ रत्ती | १ | १८·६९ | ·४३७ | १९·१२ |
| ” | ” | ३ ” | २ ” | १ | १८·६९ | ·४२१ | १९·११ |
| ” | ” | २ ” | ३ ” | १ | १८·६९ | ·४०४ | १९·०९ |
| ” | ” | १ ” | ४ ” | १ | १८·६९ | ·३८८ | १९·०८ |
| ” | ” | ... | ... | १ | १८·६९ | ·३७३ | १९·०६ |
| २२ | ११ | १ माशा | २ रत्ती | १ | १७·८७ | ·८७४ | १८·७५ |
| ” | ” | ६ रत्ती | ४ ” | १ | १७·८७ | ·८४१ | १८·७१ |
| ” | ” | ४ ” | ६ ” | १ | १७·८७ | ·८१० | १८·६८ |
| ” | ” | २ ” | १ माशा | १ | १७·८७ | ·७७३ | १८·६४ |
| ” | ” | ... | ... | १ | १७·८७ | ·७४६ | १८·६२ |
| २० | १० | २ माशा | ४ रत्ती | १ | १६·२५ | १·७४८ | १८·०० |
| ” | ” | ६॥ ” | १ माशा | १ | १६·२५ | १·६८४ | १७·९३ |
| ” | ” | १ ” | १॥ ” | १ | १६·२५ | १·६२० | १७·८७ |
| ” | ” | ४ रत्ती | २ ” | १ | १६·२५ | १·५५६ | १७·८१ |
| ” | ” | ... | ... | १ | १६·२५ | १·४९२ | १७·७४ |
| १८ | ९ | ३ माशा | ६ रत्ती | १ | १४·६२ | २·६२२ | १७·२४ |
| ” | ” | १८ रत्ती | १॥ माशा | १ | १४·६२ | २·५२४ | १७·१४ |
| ” | ” | १॥ माशा | १८ रत्ती | १ | १४·६२ | २·४१० | १७·०४ |
| ” | ” | ६ रत्ती | ३ माशा | १ | १४·६२ | २·३३३ | १६·९५ |
| ” | ” | ... | | १ | १४·६२ | २·२३८ | १६·८६ |

ऊपरकी सारिणीमें १८ केरट (पाश्चात्य देशोंके व्यवहारिक सोने) तकके मेल और गुरुत्व दिये हुए हैं। प्रत्येक केरटके जुदे जुदे मेलके गुरुत्वके देखने-स्पष्ट है कि चांदीके विशेय अंशके मेलका गुरुत्व तांबेके अंशोंवाले मेलके गुरुत्वसे अधिक है।

इस देशमें सारांका सोना २४ केरटका माना जाता है और चलनका सोना कमसे कम २६ केरट-का है पर सभ्य देशोंमें ७ केर-तकका काममें आता है। इसपर भी व्यहारमें सारांका सोना गिन्नी का सावरेनका है जो २२ केरटके सोनेके होते हैं। १८ केरटके सुवर्णके आभूषण अधिक वनते हैं। १८ केरटसे नीचेके सुवर्णके मेलके गुरुत्व जानने हों तो इस भांति व्यवहार करे—

एक तोले सोनेको प्रति माशा कम करने और दूसरी धातु उसके स्थानमें रखनेसे सोनेका गुरुत्व प्रतिमाशा १·६२५ गिरता जाता है और उसके स्थान चांदी मिलानेसे ·८७४ प्रतिमाशा बढ़ता है और तांबा मिलानेसे प्रतिमाशा ·७४६ अधिक होता है। माना कि १५ केरटका सोना वनाना है तो एक तोलेके लिये ७॥ माशा शुद्ध सोना लिया जायगा जिसका गुरुत्व १६·५-(४·५ × १·६२५) = १२·१८८। अब ४॥ माशे सोनेकी कमी पूरा करनेको ४॥ माशे चांदी मिलावें तो ४·५ × ८७४ = ३·९३३ गुरुत्व बढ़ा जिससे निरी चांदीके मेलका १५ केरटका सोना १२·१८८×३·९३३ = १६·१२१गुरुत्वका हुआ। और यदि ४·५ माशे तांबा ही मिलावें तो गुरुत्व = १२·१८८×(४·५ × ·७४६) = १५·५४५ होता है। इसी प्रकार यदि सवा दो माशे चांदी और सवा दो माशे तांबा मिलाकर १ तोला सोना वनावें तो गुरुत्व = १२·१८८×(१·९६६+१·६७८) = १५·८३२ होता है। इस प्रकार प्रत्येक केरटके जुदे जुदे चांदी तांबेके अंशोंके मेलके सुवर्णके गुरुत्व ज्ञात हो सकते हैं।

## अध्याय ३.

सोना गलाना, वट्टा मिलाना और शुद्ध करना

पिछले अध्यायमें सोनेके दर्जे और बट्टेके विषममें लिखा गया है। अव इस स्थानपर पहले यह वताना आवश्यक जाना जाता है कि जुदे जुदे केरटका सोना बनानेमें बट्टेको अर्थात् चांदी तांवा आदिको सोनेमें किस प्रकार मिलाना चाहिये। प्रथम तो सब फातुओंको शुद्ध व स्वच्छ करके काममें लाना उचित है। बाज़ारमे जो सोना चांदी आदि धातु ज़िकती हैं उनमें 'नेशनलवंक' वा 'चारटर्डवंक' के सोज, 'ईंट' की चांदी और 'स्वीडिश कापर' वा 'ग्रेनकापर' तांवे को शुद्ध मानते हैं। सोने और अन्य धातुओंको गलानेके लिए 'प्लम्बेगो' वा ढलवां लोहेकी घरिया ली जाय तो अच्छा है। जो ये न मिलें तो खड़िया मिट्टी और गूदड़को खूब कूटकर घरिया बनाएं और उसको सूख जानेपर अग्निमें तपाकर काममें लाएं। धातुको गलानेमें एसा प्रायः होता है कि धातु घरियामें चिपट जाती है। धातुके घरियामें न चिपटनेकेलिए यह आवश्यक है कि घरियामें कोयलेकी मपीन बुकनी पहिले कैलाई जाय और पीछे उसमें धातु रखी जाय।

कई धातुओंको एक संग गलाकर मिलाना हो तो हलकी धातुको सबसे नीचे रक्खे और उसके ऊपर क्रमसे भारी धातुओंको रक्खे। सबसे नीचे तांबा फिर चांदी और ऊपर सोना रखकर गलाना चाहिये। यदि जस्ता भी मिलाना हो तो सब धातुओंको घरियामें गलाकर चक्कर खानेपर जस्तेको गरम करके मिलावें। जब सब धातु गल जायं और चक्कर खाने लगें तब एक लोहेकी डंडीसे उनको हिलाकर मिलावें और फिर घरियाको चिमटेसे बाहर निकाल गली हुई धातुको रेजे' में उंडेल देवे और 'रेनी' ढाल लेवें। 'रेनी' ढालनेसे पहिले रेजेमें तेल लगाते हैं और इतना गरम कर लेते हैं कि उंगली से छूआ जासके। जो रेज़ा अधिक गरम हो जाय वा ठंडा ही रहे तो सोना चटखना हो जाता है। सोना गलनेपर आवे उस समय यदि उसपर कोयलेकी बुकनी बुरक दी जावे तो हवाका असर उसपर नहीं होता।

जो सोना चिम्मड़ करना हो तो कोयलेकी बुकनीके संग नोसादरकी भी चुकटी मिलावे। नोसादर खुद तो जल जायगा पर सोनेको चिम्मड कर देगा और फिर यह पीटने बढ़ानेमें न फटेगा। नोसादरके स्थानमें खारी नोनको भी काममें लाते हैं। खारी नोनके गेरनेसे वह रेनीमें लगा रह जाता है और रेनीपर सफ़ाई नहीं रहती। इनके सिवाय सुहागेको भी काममें लाते हैं पर कोयलेकी बुकनी और नोसादर सबसे अच्छे हैं।

सुनारों और सराफ़ोंके पास रेज़गारी का बहुतसा सोना इकट्ठा हो जाता है उसको गलाने केलिए यह ज़रूरी है कि पहिले रेज़गारीको तपाकर उसमेंसे चिकनाई दूर कर देवें। बढ़ाने व पीटनेसे सोना फटने लगे वा पत्तर उतरने लगें तो यह जानना चाहिये कि इस सोनेमें, लोहा, स्पात, रांग सीसा आदि धातुका अंश अवश्य है। 'कार्बोनेट पुटास' २ भाग और शोरा १ भाग मिलाकर इसकी बुकनी सोनेमें गलते समय गेरो जाय तो लोहा और स्पातके अंश कोयलेकी बुकनीमें खिंचे जाते हैं। 'बाई क्लोराइड आफ़ मरकरी' (रसकपूर) को गलते सोनेमें गेरनेसे रांग और सीसेके अंश निकल जाते हैं। रसकपूरको काममें लानेके समय उसमें दो भाग कोयलेकी बुकनी मिलाकर उपयोग करें। लोहे और स्पातके अंशोंको सोनेमेंसे दूर करनेकेलिए 'सेंडीविर' भी बहुत अक्सीर हं।

सोनेको चक्कर खानेके पीछे रेजेमें ढालते हैं। यह रेजा भी वैसाही होता है जैसा गोंके लिये सोना काममें लाया जावेगा। जो सोनेके पत्तर बढ़ाने हैं तो रेज़ा चौड़ा होता है जिससे प्रथमसे ही चौड़ा ढल जाता है और फिर चोटसे सुगमतासे और बढ़ा लिया जाता है। इसी रीति जो सोनेको तार खेंचने होते हैं तो रेज़ा पतला लम्बा होता है जिससे लम्बी पतली रेनी ढल जाती है। रेनीके ढल जाने और ठंडा हो जानेपर तौल करनेसे जो पहिली तोलसे अन्तर आवे वही सोनेका कदा जानना?

सोना शुद्ध करना

अब १२ केरटसे नीचे नम्बरके सोनेमेंसे वट्टेकी धातुको जुदाकर सोनेको शुद्ध करनेकी रीति लिखते हैं। सोनेके पतले छोटे टुकड़े कर एक आतशी शीशीमें (जिसकी बनावटमें सीसेका अंश नहीं) रख उसमें सोनेसे दुगुना नोसादरका तेज़ाब वा शोरेका तेज़ाब गेरे और शीशीको पानी या बालूमें आधी डूबती रख आगपर इतनी गरमकरे कि सोना तेज़ाबमें नीचे बैठ जाय। जब तलछट नीचे बैठ चुके तो तेज़ाबको धीरेसे दूसरे कांच वा चीनीके बासनमें नितार लेवे और गाद वा तलछटको पानीसे धोकर पानीको नितार उस तेज़ाबमें मिला देवे। धोनेके पीछे जो तलछट रहे उसको सुखा लेवे और सूख जानेपर घरियामें धर सुहागेके संग चर्ख देनेसे सोना गलकर अलग होगा। उसको ठंडाकर जुदा कर लेवे। यह सोना शुद्ध होगा। तेज़ाब मिला जो पानी बच रहा है उसमें तांबेके टुकड़े गेर कर पूर्व रीतिसे उष्ण करनेसे सफ़ेद गाद नीचे बैठ जाती है। इस गादको भी तेज़ाब और पानी से जुदा कर और सुखाकर गलाते हैं तो चांदीका भाग जुदा हो जाता है।

चांदीकी गादमेंसे तेज़ाब मिला जो पानी नितारा गया है, उसमें लोहा वा सीसेके टुकड़े गेर ऊपर दी हुई रीतिसे बरताव किया जावे तो तांबेका गाद नीचे बैठ जाती है जिसको सुखाकर गलानेसे तांबा निकल आता है।

तांबेकी गादपरसे जो नितरा हुआ तेज़ाब और पानीकी मिलावट है उसमे नौन गेरनेसे सीसा भी निकल आता है।

यदि सोनेमें और धातुका मेल आधेसे अधिक हो तो उसमें थोड़ी सी चांदी गलाकर और मिलादें, फिर ऊपर लिखी रीतिसे सोना चांदी तांबा आदि जुदे करलें। यदि सोनेमें और धातुका मेल थोड़ा-

सा हो तो सीसेके पुटसे गलाकर शुद्ध कर लेते हैं। हड्डी वा लकड़ीकी राखको पानीमें सान घरिया-के भीतर लेपनेसे और फिर उसमें सोना गलाने और सीसा छोड़ते जानेसे सीसा जल जाता है और सोना रह जाता है।

आधेसे कम बट्टेके शोधन करनेकी एक रीति और भी है। वह यह है। जिस सोनेको शुद्ध करना हो उसको बढ़ाकर पत्तर बनाते हैं और उन पत्त-रोंके ऊपर-ईंटकी बहुत महीन सुरख़ी ४ भाग, अग्निमें भूनकर लालकी हुइ हीराकसीस १ भाग, शोरा १ भाग, पानीमें खूब घोटकर चढ़ाते हैं और थोड़ीसी सुरख़ी घरियामें नीचे बिछा उस-पर १ पत्तरको रख ऊपर सुरखी बिछाते हैं। उस सुरखीपर फिर एक पत्तरको रख ऊपरसे सुरख़ी ( ईंटाखोआ ) बुरकते हैं। इस प्रकार कई तह लगाकर घरियाभर देते हैं तो ऊपरसे दूसरी घरिया औंधी ढक कपरोटी कर दी जाती है। सूख जानेपर उस संपुटको कंडोंकी अग्निमें लाल होने तक तपाते हैं और उस जगरेमें ही ठंडा होने देते हैं। ठंडा होनेपर संपुट खोल पत्तरोंको पानी-में उबालकर धोते हैं जिससे सोना शुद्ध हो जाता है। जो ऊपर दी हुई क्रियासे सोना पहिली बार शुद्ध नहीं होता तो यह क्रिया दुहराई जाती है।

सोना शुद्ध करनेकी ऊपर लिखी हुई क्रियामें कोई सुनार ईंटाखोआके संग हीराकसीस और शोरेके सिवाय नौन भी मिलाते हैं और कंडोंकी अग्निके स्थान कोयलोंकी आंच देते हैं। कोयलोंकी आंच १२ घंटोंकी देकर पीछे पूर्व लिखे अनुसार पानीमें उबाल सोनेको साफ़ कर लेते हैं।

सोना शुद्ध करनेकी उपरोक्त रीतियोंके सिवाय जो अन्य रीतियां प्रचलित हैं उनका वर्णन खेरीज, रेतन, न्यारा, आदिमेंसे सोना निकालने-के उपायोंमें वर्णन किया जायगा।

यदि सोना कड़ा हो और उसे नरम करना हो तो सोनेको गलानेके समय पिसा हुआ शोरा वा मस्तगी, रगतबेल, सुहागा बराबर मात्राओंमें पीसकर गेरनेसे सोनेका कड़ापन दूर हो जाता है। जब सोनेको गलाकर रेज़ेमें ढालनेके पश्चात् पीटा और बढ़ाया जाता है तो वह फटने लगता है और उस परसे पत्तर उतरने लगते हैं। सोनेके इस फटावके कारणोंमें प्रथम तो गले हुए सोनेका रेज़ेमें ढालनेसे पूर्व गरम न होना या अधिक गरम हो जाना है। रेज़ा इतना गरम होना चाहिये कि जो उसपर पानीकी बूंद गिरे तो उबलकर भाप हो जाय। दूसरा कारण सोनेके चटखनेका रेज़ेमें जोड़ होना है, जिसके कारण हवा रेनीमें घुस जाती है और रेनीका किनारा आरीकी धारकी नांई फट जाता है। तीसरा कारण फटाव वा तड़खनका रेनीमें रेत वा और महीन कणोंका घुस जाना है। चौथे सोनेमें जो और धातु मिली हुइ हैं उनका सोनेके साथ एक जीव होकर न मिलना है। इन सब कारणोंको दूर करनेपर सोना पिटाव और बढ़ावमें ठीक रहता है और मुलायम हो जाता है

जब सोना बट्टेका होता है और विशेषकर जब तांबेका मेल होता है तो सोना गलनेपर वायुसे ओषजन ग्रहणकर लेता है और सोनेमें एक हलकी ज़ंग सी लग जाती है। यह ज़ंग सोनेको कड़ा और चटखना करदेती है। सोनेकी इस चटखन वा फटनको दूर करनेकेलिए यह ज़रूरी है कि जब सोना गलने आवे तो घरियापर ख़ालिस वानस्पतिक कोयलेकी बुकनी गेरकर हिलाता रहे जिससे न वायु घुसेगी और न सोनेपर ज़ंग जमेगी न वह सोना चटखना होगा।

## वैज्ञानिकीय

( १ ) वृक्षोंकी रोगाक्षमता

मनुष्यों और पशुओंकी रोगाक्षमताके विषयमें पाठक 'विज्ञान' की किसी पिछली संख्यामें पढ़ चुके हैं। हालमें ही र.व. थेचर ( R. W. Thatcher ) ने वृक्षोंकी रोगाक्षमताके सम्बन्धमें गवेषणाएं दो

रीतिसे की हैं। (१)—स्वस्थ और रोगी वृक्षोंके अभ्यान्तरिक रासायनिक परिवर्तनोंकी तुलनाकी गई (२) उन रासायनिक परिवर्तनोंकी जांचकी गई, जो कि बकटीरियाके प्रवेश करनेसे वृक्षके भीतर हुए।

इन गवेषणाओंसे प्रतीत होता है कि वृक्ष इन रोगोंके कीटाणुओं (बकटीरिया) का सामना दो प्रकारसे करता है:—

(१) वृक्षकी तन्तु उन विषों या रासायनिक पदार्थोंको नाश करने लगते हैं, जो कि कीटाणुओं-के द्वारा वृक्षके भीतर पैदा किए जाते हैं।

(२) वृक्ष अपनी सूक्ष्मचैतन्यकेद्वारा उस स्थानको मालूम कर लेता है कि जहांपर कीटाणुओंने या परोपजीवी पोदोंने प्रवेश किया है और उस स्थानकी आसपासकी तन्तुओंमें पुष्टिकारक पदार्थ भेजना बन्द कर देता है। इस प्रकार वहां-की तन्तु मर जाती हैं और उनके साथ ही साथ कीटाणु या परोपजीवी पोदे भी मर जाते हैं।

(२) निरामिष भोजन

मद्रासके न्यु इन्डियापत्रमें प्रोफ़ेसर जी. एस. अगाशे एम. ए., एम. एस-सी. ने ४ थी दिसम्बर के अङ्कमें इस बातका प्रमाण दिया है कि निरामिष-भोजनमें वैज्ञानिक दृष्टिसे भी कोई त्रुटि नहीं पायी जा सकती और वह सर्वथा शरीरका पोषक और बलवर्द्धक है। कुछ वैज्ञानिकोंकी आजतक यह धारणा थी कि हमारे प्रतिदिनके आहारमें निम्न-लिखित परिमाणमें आवश्यक पदार्थ होने चाहिएँ—

| | ब्योट साहबके अनुसार | रानकी साहबके अनुसार | |
|---|---|---|---|
| प्रोटीड | १२० | १०० | ग्राम |
| स्नेह | १०० | १०० | ” |
| कर्बोज | ३३३ | २५० | ” |

निरामिष भोजन करनेवालोंको यथेष्ट रूप प्रोटीड नहीं प्राप्त होता, अर्थात् उसमें प्रोटीडकी कुछ न कुछ कमी रह ही जाती है। अब इधर चिटनडन (Chittenden) साहबने कितने ही प्रयोग अपने तथा अपने मित्रों और विद्यार्थियोंके ऊपर किये हैं जिसमें प्रोटीडका अंश पहिलेसे आधा कर दिया गया पर तब भी उसका कोई अशुभ फल देखनेमें नहीं आया। जिन लोगोंपर इसकी परीक्षा ली गई उनका स्वास्थ्य ज्यों का त्यों बना रहा, वरन किसी किसीकी अवस्थामें इससे लाभ भी हुआ। मानसिक शक्तिमें भी कोई न्यूनता नहीं हुई। यद्यपि इस सिद्धान्तकी सत्यतामें संदेह करनेका किसीको साहस नहीं हुआ है पर विपक्षी यह कह सकते हैं कि खाद्य पदार्थोंमें थोड़ेसे ही "प्रोटीन" से निर्वाह तो किया जा सकता है पर उससे हमें आवश्यकतासे अधिक शक्ति और पुष्टि नहीं मिल सकती जो असाधारण परिश्रमके दिनों-में हमारे काम आये। ख़ैर जो हो, निरामिष भोजन-नमें लोग जो दोष निकालते थे उसके विषयमें उन्हें अपना मन बदल देना पड़ेगा। अब रहा यह देखना कि खाद्य पदार्थोंमें प्रोटीनकी कमी हमारे लिए गुण है या अवगुण।

यूरोपके लड़नेवाले देशोंमें लड़ाई छिड़नेके बाद ही लोगोंका इस ओर ध्यान आकृष्ट हुआ और वे खाद्य पदार्थोंकी बचतके सोचमें तत्पर हुए। कितने ही वैज्ञानिकोंने इसकी खोजकी पर प्रौफ़ेसर डबलू.एच.टोम्सनका निर्णय बड़े महत्वका ठहरा। उन्होंने आहारमें आवश्यक पदार्थोंका अंश इस प्रकार निश्चित किया।

प्रोटीड १०५ स्नेह १४० कर्बोज ५६०

संतोषकी बात यह है कि युद्धके पूर्व जर्मनी-वालोंकी जांचसे भी खाद्य पदार्थमें आवश्यक द्रव्यों-का यही परिमाण बतलाया गया था। इन दोनों-में ही प्रोटीडकी मात्रा और द्रव्योंकी अपेक्षा बहुत ही कम रखी गयी है फिर निरामिष भोजनमें क्या दोष रहा?

इसके अतिरिक्त (Parliamentary War Saving Committee) खाद्य पदार्थोंमें बचत करनेवाली मण्डलीकी ओर से जो परचा प्रकाशित हुआ है उसमें भी यही परामर्श दिया गया है कि

जहांतक संभव हो मांस कम खाया जाय और उसके स्थानमें अनेक सस्ते वानस्पतिक पदार्थ जैसे मटर सेम इत्यादि व्यवहारमें लाये जायं।

* * * *

(३) सीमेन्ट और रेत

प्रायः समझा जाता था कि पोर्टलेण्ड सीमेन्ट में रेत केवल उसे पतला करनेकेलिए मिलाया जाता था, परन्तु अब परीक्षाओं द्वारा जाना गया है कि पोर्टलेण्ड सीमेन्ट और रेतके बराबर भाग लेनेसे जो मिश्रण बनता है वह शुद्ध सीमेन्टके समान ही मज़बूत और उपयोगी होता है।

* * * *

(४) मध्य औस्ट्रेलियामें वायु मण्डलकी पारदर्शिता

प्रायः पदार्थ दो प्रकारके होते हैं, पारदर्शी अपारदर्शी। पारदर्शी पदार्थ वे हैं जिनमें होकर प्रकाशकी किरणें निकल सकती हैं अर्थात् जिनमें-से दूसरी तरफ़ रक्खी हुई चीज़ें दिखलाई दे सकती हैं, जैसे कांच, पानी इत्यादि। पर यह स्मरण रहे कि पारदर्शी पदार्थ भी मोटी तहोंमें अपारदर्शी हो जाते हैं, जैसे यदि कोई चीज़ पानीके अन्दर आठ या दस हाथ नीचे रक्खी हो तो ऊपर-से न दिखलाई देगी। उसी प्रकार यदि अपारदर्शी पदार्थ जैसे चांदी इत्यादि बहुत बारीक वर्कोंमें लिए जायं तो वे भी पारदर्शी हो जायँगे। पदार्थोंकी पारदर्शिता कई और बातोंपर भी निर्भर है, जैसे पदार्थोंमें हल चल, उनकी आकृति, उनमें विशेष वस्तुओंका घुला होना। यही हाल वायुका भी है। हम सब भली प्रकार जानते हैं कि वायु पारदर्शी है, पर हर स्थानपर और हर ऋतुमें इसकी पारदर्शिता यकसां नहीं रहती। प्रायः देखा गया है कि पानी बरस चुकनेके बाद वायु अधिक पारदर्शी होती है, इसी प्रकार जाड़ेमें गर्मीकी अपेक्षा अधिक पारदर्शी होती है। प्रत्येक दिवसमें भी सुबह सूर्योदय और मध्यान्हके समयमें बड़ा अन्तर पाया जाता है। वायुकी पारदर्शिताकी जांच दूरकी वस्तुओंके देखनेसे हो सकती है। जितनी इसकी पारदर्शिता अधिक होगी, उतनी ही दूरकी वस्तु अधिक स्वभाविक रूपमें दीखेगी। इस प्रकारकी जांच सं० १९१२ में कार्निगीद्वारा भेजी हुई चुम्बकत्वकी पैमायश करनेवाली पार्टी ने औस्ट्रेलियामें की। वे तथा अन्य यात्री इस बातके साक्षी हैं कि मध्य औस्ट्रेलियामें वायु बहुत ही निर्मल है। [ वायु-में कई प्रकारकी गन्दगी रहती हैं, वाष्प, रेत, इत्यादि ] ग्रेट नर्दर्न रेलवेपरसे उस रेलगाड़ी-की धुआं देख सके, जो ४५ मीलके फ़ासलेपर विलियम क्रोक स्टेशनपर शंट कर रही थी। धुआंको देखकर वे उस गाड़ीके चक्करोंका अन्दाज़ा लगा सकते थे। सूर्य्य तथा तारागणों-का अति निर्मल, स्वच्छ, और स्थायी प्रतिबिम्ब उन्होंने दूरवीक्षण यंत्र द्वारा Blood's creek ब्लडक्रीकपर देखा जो Oodnadatta उदनदत्त और Charlotte waters के बीचमें हैं। इसीप्रकार Moorrilyauna Hills मूरिलयन पहाड़ीको शिखरसे जो ४०० फुट ऊँचा है mount Ill fillee इलफ़िल्ली गिरको ३५ मीलकी दूरीपर स्पष्ट देखा। Binocular द्विदर्शककी सहायतासे ६४ मील दूरीपर स्थित फ़रडीनन्द गिर साफ़ दिखलाई दिया। यह भी देखा गया कि दूरके पहाड़ और उनके पीछेका आसमान स्पष्ट दिखलाई देते हैं, यद्यपि यह साधारण नियम है कि दूरकी वस्तु-ओंसे उनके पीछेका देश भिन्न नहीं दिखाई देता। इन सब आलोचनाओंसे observations यह प्रतीत होता है कि मध्य औस्ट्रेलियाका वायुमण्डल बहुतही निर्मल और पारदर्शी है।

---

## विज्ञानपरिषद्का वार्षिकोत्सव

विज्ञानपरिषद्का तृतीय वार्षिक अधिवेशन १८ और ६ नवम्बरको हुआ। पहिले दिन संयुक्त-प्रान्तके छोटेलाट सर स्कार्जी मेस्टन, एल एल० डी०, के० सी एस-आई, बी-डी ने सभापतिका

आसन ग्रहण किया। परिषद्के प्रधानमंत्री अध्यापक सतीशचन्द्रदेव एम्.ए. ने परिषद्की रिपोर्ट पढ़ी जिसका सारांश अन्यत्र दिया गया है। रिपोर्ट पढ़े जानेके उपरांत सभापतिजीने जगत् प्रसिद्ध गणिताचार्य्य गणेशप्रसाद एम्.ए. डी. एस.सी. को अपने व्याख्यान आरम्भ करनेके-लिए आज्ञा दी। सुयोग्य व्याख्याताने बहुतही रोचक व्याख्यान दिया, जिसमें उन्होंने यह दिखलाया कि पूर्वकालमें भारतवर्षने संसारका गणित सम्बन्धी ज्ञान किस प्रकार बढ़ाया, और अब वर्तमान कालमें फिर भारतमें जागृतिके चिन्ह कैसे दिखाई दे रहे हैं और नई नई गवेषणाएँ कैसी शीघ्रतासे हो रहीं हैं। (व्याख्याता स्वयम् कलकत्ता विश्वविद्यालयमें वीसियों विद्यार्थियोंसे गणितमें नई नई गवेषणाएँ करा रहे हैं और स्वयम् भी उन्होंने बहुतसी गवेषणाएँकी हैं और संसारके बड़े बड़े गणितज्ञोंमें आपकी गिनती है)। व्याख्यानके उपरान्त विज्ञान परिषद्के उपसभापति महामहोपाध्याय डा० गङ्गानाथझाने व्याख्याता महोदयको धन्यवाद दिया। तदनन्तर परिषद्के सभापति माननीय डा० सुन्दरलाल एल०एल० डी०, सी०आई०ईने छोटे लाटको धन्यवाद दिया कि उहोंने परिषद्के वार्षिकोत्सवपर पधारकर और सभापतिका आसन ग्रहणकरके परिषद्के कार्य्य कर्तृगण, सभ्य और परिसभ्योंका उत्साह बढ़ाया। आपने यह भी कहा कि परिषद्को यद्यपि किसी धन कुवेरका आश्रय अभीतक नहीं मिला है, तथापि परिषद्के कार्य्य कर्तृगण केवल अपने उत्साहसे ही काम चला रहे हैं।

अन्तमें श्रीमान छोटेलाटने कहा कि हमको यहां आज सायंकालमें आनेसे बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। यद्यपि डा० गणेशप्रसादके कथनानुसार उनके व्याख्यानका प्रथमांश 'मामूली आसानी चीज़' नहीं था, तथापि उनका व्याख्यान बड़ा मनोरंजक था। हमको यह सुनकर बड़ा आनन्द हुआ कि परिषद्ने इतनी अच्छी उन्नति की है। हमारा विश्वास है कि परिषद् सदैव फले फूलेगी।

* * * *

दूसरे दिन (१६ नवम्बर १६१६) को अधिवेशन म्योरकालेजमें माननीय डाकृर सुन्दरलालकी अध्यक्षतामें हुआ। प्रधान मंत्रीकी रिपोर्ट स्वीकृत हुई। तदनन्तर निम्नलिखित प्रस्ताव पास हुएः—

( १ ) म्योरकालेजके प्रिंसिपेल, रसायन, और भौतिक शास्त्रोंके अध्यापकोंको धन्यवाद दिया जाय कि जिन्होंने परिषद्के व्याख्यानोंमें बड़ी सहायता दी और परिषद्के कार्य्यसे सदा सहानुभूति दिखलाई।

( २ ) जिन पदाधिकारियों और अन्तरङ्गियों-के नाम निर्वाचनपत्रमें दिये गये हैं उन्हींका चुनाव किया जाय

( ३ ) आगामी वर्षकेलिए नीचे दिया हुआ बजट पास किया जाय।

---

## बजट ( १६१६–१७ )

| आय | | व्यय | |
|---|---|---|---|
| रोकड़ बाकी ( जो ख़र्चकी जा सकती है ) | १२२) | छपाई | १३७) |
| | | सांयर ख़र्च | ५०) |
| सभ्यों का चन्दा | ७५०) | ओफ़िस ख़र्च | ३००) |
| पुस्तकोंकी विक्री | २५०) | डाक व्यय | ७५) |
| सूद | २५) | सामान फ़र्नीचर | ३०) |
| फुटकर | ५०) | विज्ञान | ३५०) |
| | ११९७) | स्लाईड | ५०) |
| विशेष चंदोंसे | ६७५) | पुस्तक छपाई | ८००) |
| | | पुस्तकें | ३०) |
| | | फुटकर | ५०) |
| | १८७२) | | १८७२ |

## परिषद्की तृतीय वार्षिक रिपोर्ट

परिषद्को स्थापित हुए तीन वर्ष हुए हैं। अभीतक परिषद्ने दो पुस्तकें निकाली हैं। उनका उर्दू भाषामें भी अनुवाद छप गया है। परिषद् और भी पुस्तकें निकाल सकती थी, पर धनके अभावसे ऐसा किया जाना सम्भव न हुआ।

विज्ञानका प्रकाशन वैशाखतक लाला कर्म चन्द भल्ला करते रहे। पर कौंसिलने यही उचित समझा कि विज्ञानका प्रकाशन भी परिषद् ही स्वयम करे। अतएव वैशाखसे विज्ञानका सम्पादन और प्रकाशनका काम परिषद् स्वयम ही कर रही है। विज्ञानके निकालनेमें परिषद्को ७००) सालका घाटा होनेका डर है। हिन्दी सेवियों और प्रेमियों-से अभीतक विज्ञानको इतनी सहायता नहीं मिली है कि विज्ञान अपने बल चल सकै। यद्यपि हिन्दी संसारमें वैज्ञानिक साहित्य बढ़ानेकी प्रबल इच्छा दिखाई देती है, पर हमें खेद है कि अभीतक विज्ञानकी ग्राहक संख्या उचित परिमाणतक नहीं पहुंची। अभी तक विज्ञानके २० अङ्क निकल चुके हैं। शनैः शनैः हिन्दी भाषामें संसारकी सभी विद्याओं, कलाओं और विज्ञानिक शास्त्रोंपर 'विज्ञान' द्वारा अच्छा साहित्य बन रहा है। आशा है कि भविष्यमें हिन्दी प्रेमियोंसे उचित आर्थिक सहायता मिलैगी।

परिषद्को विज्ञानके प्रकाशनका भार लेनेका साहस न हुआ होता यदि परिषद्के सभापति माननीय डा० सुन्दरलालने २००) का चन्दा विज्ञानकी सहायतार्थ न दिया होता।

इस वर्ष परिषद्की ओर से १६ व्याख्यान हिन्दी भाषामें हुए। इनमेंसे ८ म्योर कालेजमें, २ कायस्थपाठशालामें, ३हिन्दी साहित्य सम्मेलन बुलन्दशहरमें, २ हि० सा० सम्मे० हरदोईमें, १ नागरीप्रचारणी सभा काशीमें, २ हि० सा० सम्मे० रायबरेलीमें और १ निखिलभारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयागमें हुए।

विज्ञानकी प्रत्येक शाखापर व्याख्यान दिए गए, जैसा कि निम्नलिखित विषयोंसे प्रतीत होगा—

(१) विद्युत्का इतिहास (२) प्राचीन भारतमें गृह निर्माण और स्वास्थ्यरक्षा (३) पुराण और विकासवाद (४) ज्योतिष (५) छाया चित्रण (६) रङ्गीन छाया चित्रण (७) लोक संग्रह (८) भाषा विज्ञान और हिन्दी (९) इन्द्रियोंके सहायक यंत्र इत्यादि।

इस वर्ष २१५४॥≡)॥ की आय हुई, १३८२॥=)॥। का व्यय हुआ। परिषद्के मान्य सभ्य ६ हैं जिनमें विज्ञानाचार्य्य जगदीशचन्द्र बसु, विज्ञानाचार्य्य प्रफुल्लचन्द्र राय, गणिताचार्य्य गणेश-प्रसाद और पं० मदनमोहन मालवीय हैं। ३ आजन्म सदस्य हैं:—श्रीमती मिसेज़ बीसेन्ट, श्रीमती रानी फूल कुमारी देवी और माननीय डा० सुन्दरलाल। १२५ साधारण सभ्य हैं। ३०० के लगभग परिसभ्य हैं।

परिषद्का काम दृढ़ और स्थायी करनेके लिए १५०००) की आवश्यकता है। यदि परिषद्के समस्त सभ्य आजन्म-सभ्य बन जायँ तो यह धन इकट्ठा होना मुश्किल नहीं है। आशा है कि परिषद्के प्रेमी इस धनको जमा करनेका प्रयत्न करेंगे।

## साहित्य समाचार !

### मनोरमा

हिन्दीकी यह एक सचित्र मासिक पत्रिका है। पण्डित प्यारेलाल जो दीक्षित और उनके शिष्य पण्डित रामकिशोर शास्त्री इसके सम्पादक हैं। इसकी आख्यायिकायें, विशेष प्रकारसे बड़ी चटकीली और लच्छेदार होती हैं। सब पत्र पत्रिकाओंने इसकी बड़ी प्रशंसा की है; सरस्वती-की समालोचना देखिये—

आकार सरस्वतीके सदृश है। चित्र भी रहते हैं। वार्षिक मूल्य तीन रुपया है। इसके सम्पादक संस्कृतज्ञ हैं। काव्योंके गद्य पद्यमय अनुवाद आप इसमें विशेष करके छापते हैं। अन्यान्य कवितायें और लेख भी इसमें रहते हैं, पत्रिका साहित्य सम्बन्धिनी है, अच्छी निकलती है इत्यादि। ऐसी अच्छी पत्रिका यदि आप देखना चाहते हैं तो आज ही मैनेजर "मनोरमा" मंडी धनौरा यू. पी. को लिख दीजिये।

---

## विज्ञान-परिषद्-द्वारा प्रकाशित

## हिन्दीमें अपने ढंगकी अनूठी पुस्तकें

१—विज्ञान-प्रवेशिका ( प्रथम भाग ) ... ... ।)
२—ताप ... ... ... ... ... ।)
३—विज्ञान प्रवेशिका (द्वितीय भाग) **छप रही है**
४—मिफ़ताहुल-फुनून
( विज्ञान-प्रवेशिका प्रथम भागका उर्दू अनुवाद ) ।)

**विज्ञान**—सरल सुबोध सचित्र वैज्ञानिक मासिकपत्र जो प्रति सङ्क्रान्तिको प्रकाशित होता है। वार्षिक मूल्य ३) ; प्रति अंक ।) ; नमूनेका अंक ≈)॥ और वी० पी०से ।-)

पता—मंत्री,
विज्ञान-परिषत्,
कटरा, प्रयाग।

### बाल सुधा

यह दवा बालकोंको सब प्रकारके रोगोंसे बचाकर उनको मोटा ताज़ा बनाती है। क़ीमत फ़ी शीशी ॥।)

### दद्रुगज केसरी

दादको जड़से उखाड़नेवाली दवा क़ीमत फ़ी शीशी ।) मंगानेका पता—

सुख-संचारक कंपनी मथुरा।

---

### विज्ञान प्रवेशिका ( दूसरा भाग )

श्रीयुत महावीरप्रसाद, बी. एस्-सी, एल. टी, द्वारा रचित

एक मासके भीतर प्रकाशित होगी। इसमें २२५ के लगभग पृष्ठ और ६० से अधिक चित्र होंगे। प्रारम्भिक विज्ञानकी अद्वितीय पुस्तक है। मैट्रिक्युलेशन तथा स्कूल लीविङ्गके विद्यार्थियों-केलिए बहुत उपयोगी होगी।

जो अभीसे अपना नाम ग्राहकोंमें लिखा लेंगे उनको यह पुस्तक पौन मूल्यपर मिलैगी।

### हरारत

"ताप" का उर्दू अनुवाद छपकर प्रकाशित हो चुका है; मूल्य ।)

पता—मंत्री,
विज्ञान-परिषत्,
कटरा, प्रयाग।

---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—गोपालस्वरूप भार्गव, एम्. एस्-सी.,**
**विज्ञान—परिषत् प्रयाग।**

---


प्रकाशक—पं: सुदर्शनाचार्य्य विज्ञान परिषत्-प्रयाग। लीडर प्रेस, इलाहाबाद में सी. वाइ. चिन्तामणि द्वारा छपा।

Reg NO. A 708

भाग ४ मकर, १९७३ । January 1917. संख्या ४
Vol. IV. No. 4

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची



**प्रकाशक**

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य ।)

## विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे।

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

---

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३। ५।

भाग ४ | मकर, संवत् १९७३। जनवरी, सन् १९१७। | संख्या ४

## मंगलाचरण

### तिहारो को पावै प्रभु पार

विपुल सृष्टि नित नव विचित्रके चित्रकार आधार
मकरीके सम जगतजाल यहि सृजत और विस्तारत
कौतुक ही में हरत ताहि पुनि वेद पुरान उचारत
जगमें तुम 'ओ' तुममें सब जग 'वासुदेव' अभिराम
सकल रंग तन बसत आपके याही सों घनश्याम
परम पुरुष तुम प्रकृति नटी सँग लीला रचत अपार
जग व्यापन सों 'विष्णु' कहावत अचरज तउ अविकार
जितने जात समीप दूर अति होत जात तव ज्ञान
'सत्य' क्षितिज सम तरसावत नित विश्वरूपभगवान

—सत्यनारायण

## आकाशी दूत अर्थात् टूटनेवाले तारे

[ ले० गोपालस्वरूप भार्गव, एम्. एस-सी ]

तारे टूटते किसने न देखे होंगे। कभी कभी तारा टूटकर पृथ्वीपर गिरता है और लोग बाग उसे उठा लेते हैं। यद्यपि उल्कापात अनादि-कालसे होता रहा है, तदपि इस बातका विश्वास कि आकाशसे पत्थर या लोहेके टुकड़े गिरते हैं सर्वसाधारण तथा वैज्ञानिकोंको बड़ी कठिनाईसे हुआ। कुछ दिन पहले अद्भुतालयोंमें जो उलका-ओंके नमूने रहते थे वे छिपाकर रखे जाते थे, ताकि दर्शक रक्षकोंका उपहास न करें। पूर्वकालमें जब कभी उल्का पाये जाते भी थे, तो उनको बड़ी श्रद्धासे रखकर पूजा किया करते थे। फ्रिगिया-में ( Phrygia, Asia Minor ) विक्रमसे २०० वर्ष पूर्व एक पत्थर आकाशसे गिरा था। इसको देवता-ओंकी माता सिबिली (Cybele) मानकर पूजा की जाती थी। उसी समय किसीने यह भविष्यद्वाणी की

General साधारण ]

कि इस पत्थरके रखनेसे रोमवालोंकी सुख स्मृद्धि होगी। अतः राजा एटेलसने फ्रिगियावालोंसे इस पत्थरको मांगा और बड़े समारोहसे उसे रोममें ले जाकर रखा। इतिहासकारोंने लिखा है कि इस पत्थरका आकार वृत्तसूचीका सा था। प्लुटार्कका कथन है कि यह ४१४ वर्ष विक्रमसे पूर्व, पिंडार के कालमें आकाशसे गिरा था, यह प्लिनीके समय तक (५०० वर्ष पीछे तक) सुरक्षित था। एफीशियन्सकी ( Ephesians ) डायनाकी ( Diana ) मूर्त्ति और साइप्रस नगरकी शुक्रकी मूर्त्ति भी वृत्तसूचीके आकारके पत्थर थे, जो आकाशसे गिरे थे।

एक और पत्थर सातवीं शताब्दीमें गिरा, जो कावेमें अभीतक संग अस्वतके नामसे पूजा जाता है। वृहदाकार केसेस ग्रांडी ( Casas grandes ) उल्का मेक्सिकोमें पाया गया था, जिसका वज़न ४० मनके लगभग है। जिस समय यह मेक्सिकोके एक खंडहरमें पाया गया था तो इसपर बहुतसे कफनके टुकड़े चढ़े हुए थे जिनसे ज्ञात होता है कि इतिहासिकालसे पूर्वके बाशिन्दे इसे बड़ी श्रद्धासे पूजते थे।

पूर्वोक्त उल्काओंके विषयमें दृढ़ निश्चय नहीं है कि ये वास्तवमें उलका ही हैं, पर दो उलकाओंके सम्बन्धमें जो एलबोजिन (बोहेमिया) और एन्सिशियम्में ( जर्मनी ) सुरक्षित हैं, यह निश्चित है कि वे वास्तविक उल्का हैं। इनमेंसे पहिला लोह है और अन्तिम पत्थर। पहिला लोह १४०० स० वि० के लगभग पाया गया था, पर १८६६ वि० में जाकर उसका उल्का होना सिद्ध हुआ। एलबोजिनके रथहाउसमें कई सौ वर्षसे यह रखा हुआ है। एन्सिशियमवाला पत्थर १४९२ ई० की १४ नवम्बरको गिरा, उस समयके लगभग जब कोलम्बस अपनी खोज कर रहा था। इसके गिरनेके समय वज्रपातका सा घोर नाद हुआ। यह गिरते हुए देखा गया था, और शीघ्र ही खोदकर निकाला गया क्योंकि यह ज़मीनमें ५ फुट घुस गया था। इसका वज़न ३। मन था और बहुत दिनों तक एक गिरजाकी छतसे लटका रहा। तदनन्तर उस नगरके रथहाउसमें रखा गया।

अन्तिम घटना जैसी सच्ची घटनाओंसे कमसे कम वैज्ञानिक संसारमें तो विश्वास हो जाना चाहिये था पर ऐसा नहीं हुआ और इतने दिन पीछे १८२९ में भी फ्रांसीसी विज्ञान परिषद्की, एक उपसमितिने उस उल्काके विषयमें एक रिपोर्ट तैय्यार की जो चार वर्ष पहिले लूसमें गिरा था और यह निर्णय किया कि वास्तवमें वह उल्का नहीं था, वरन् किसी चट्टानका टुकड़ा था जो वज्रपातसे टूटकर गिर गया था।

१८५१ वि० में जर्मन वैज्ञानिक च्लेडिनीने उल्काओंपर एक निबन्ध लिखा, जिसमें उसने उन सब उल्काओंका वर्णन किया जो उस समयतक मालूम थे और वैज्ञानिक संसारका ध्यान इस, ओर आकर्षित किया कि संभवतः आकाशसे लोहेके टुकड़े पृथ्वीपर अवश्य पड़े होंगे। उसने विख्यात पेल्लेस लोहका ( Pallas iron ) भी वर्णन किया, जो १८५६ वि०में किसी कोसेक ( रूसी क्षत्रिय ) को सैबीरियामें क्रेसनो जार्स्क (Krasnojarsk) के पास किसी ऊंचे पर्वत शिखरपर मिला था। च्लेडनीने इस बातपर ज़ोर दिया कि यह लोह न तो आग लगनेसे बन सकता है, न कोई मनुष्य उसको वहां छोड़ गया होगा। (वहां तक उसका ले जाना ही दुष्कर है)। यदि यह कहा जाय कि किसी ज्वालामुखीने उसको उगला होगा, तो इसका समाधान यों किया जा सकता है कि उस पर्वतके आसपास कोई ज्वालामुखी नहीं है। न संसारमें कोई ऐसा ज्वालामुखी पर्वत है जो लोह उगलता हो। अतः हमको यह मानना पड़ता है कि यह आकाशसे ही गिरा होगा।

उस ही वर्ष इटलीमें सीनके पास उल्काओंकी बौछार हुई और उसके दूसरे साल स्वच्छ निर्मल आकाशसे २८ सेरका एक पत्थर एक खेतमें काम करनेवालेके पैरोंके पास गिरा। १८५५ वि० में काशीमें भी कई पत्थर आकाशसे गिरे।

इन सब प्रमाणोंको भी माननेके लिए वैज्ञानिक संसार तैय्यार न था, पर सौभाग्यसे १८६० वि० के चैत्रमें, पैरिसके निकट ल' ऐलके आसपास फिरतीन हज़ारसे अधिक उल्काओंकी बौछार हुई। इस घटनाकी भी जांच की गई पर यह घटना इतनी सच्ची प्रत्यक्ष और सुप्रमाणित थी कि वैज्ञानिक संसारको मानना पड़ा कि उल्का निस्सन्देह आकाशसे ही गिरा करते हैं।

### उल्का पात कैसे होता है

जब कभी उल्कापात होता है तो प्रायः शब्द भी हुआ करता है, जो बन्दूकों तोपों या वज्रपातके सदृश होता है। यदि पतन रात्रिमें होता है तो प्रकाश भी होता है और सुर्री के मार्गके सदृश प्रकाशित मार्ग दीखता है। जबतक उल्का आकाशमें रहता है, वह किसी पदार्थसे रगड़ नहीं खाता पर वायुमण्डलमें घुसते ही वायुके साथ संघरषण होनेसे उल्कामें गरमी पैदा होती है, जो कभी कभी इतनी अधिक होती है कि उल्का उत्तप्त हो जाता है और जलने भी लगता है। यदि बहुत छोटा हुआ तो गर्मीके कारण था तो उल्का वायुमें ही जलकर भस्म हो जाता है या उसका ऊपरी भाग थोड़ासा गलकर कांचकीसी शकलका हो जाता है। जो उल्का बड़े होते हैं उनमें सहसा ताप प्रकट होने और उनपर वायुका दबाव पड़नेसे उनके बहुतसे टुकड़े हो जाते हैं। अतः प्रायः पृथ्वीपर बड़े उल्का बहुत कम गिरते हुए देखे गए हैं। प्रायः छोटे छोटे टुकड़ोंकी ही वर्षा हुआ करती है।

### उल्काओंका वेग

जितने वेगसे उल्का पृथ्वीपर पहुंचेगा उतनाही अधिक पृथ्वीमें धंसेगा। भिन्न भिन्न वैज्ञानिकोंने २ से ४५ मीलतकका वेग बतलाया है। न्याहिन्य (हंगरी) में एक ८$\frac{१}{४}$ मनका उल्का गिरा था। यह पृथ्वीमें ११ फुट धंस गया था। इससे अधिक धंसा हुआ उल्का अभीतक नहीं पाया गया। इससे भी भारी भारी उल्का पृथ्वीपर इस प्रकार पड़े हुए पाये गये हैं जिससे मालूम होता है कि वे तनिक भी पृथ्वीमें नहीं धंसे।

### उल्काओंका तापक्रम

इस सम्बन्धमें जितनी बातें कही जायं उनपर सोच समझकर विश्वास करना चाहिये, क्योंकि अबतक जितनी बातें कहीं गई हैं, वे एक दूसरीसे विरुद्ध हैं।

कुछ पत्थर जो स्टीरियामें १८१६ वि०में गिरे उनके सम्बन्धमें कहा जाता है कि पांच सेकंडसे अधिक तक वे लाल उत्तप्त दशामें रहे, और पाव घण्टेतक इतने गरम थे कि उनका छूना मुश्किल था। पर धर्मशालापर गिरा हुआ पत्थर गिरते ही उठा लिया गया था और बहुतही ठंडा पाया गया था।

उल्का पातसे आग लगनेकी ख़बरें भी विश्वसनीय नहीं हैं।

अलीगन और विनीवगोमें यद्यपि उल्का पात सूखी घासपर हुआ, तदपि घास न झुलसी और न उसमें आग लगी।

इन गिरनेवाले पत्थरोंके आघातसे मनुष्यों और पशुओंका मरना भी सम्भव है। यद्यपि १५६८ वि०से लेकर १७३१ तककी कुछ ऐसी घटनाएँ सुननेमें आई हैं, पर हालमें ऐसी घटनाएँ नहीं हुईं और इसीलिए पुरानी घटनाओंपर संदेह होता है।

दूसरे यह भी स्मरण रखना चाहिये कि नगरोंका वर्गक्षेत्र समस्त पृथ्वीतलके वर्गक्षेत्रकी अपेक्षा बहुत ही थोड़ा है। इसलिए उल्काओंके नगरोंमें गिरनेकी उतनी ही कम सम्भावना है। अभी वर्णन कर चुके हैं कि योर्कशायरमें एक मज़दूरके पास ही (१० गज़के फासलेपर) पत्थर गिरा था। मिडिल्ज़बरोमें रेलवे लैनपर काम करनेवालोंसे ४० गज़पर पत्थर गिरा, चारसनविलि (Charsonville) में दो गाड़ीवालोंके बीचमें एक उल्का गिरा और उसके गिरनेसे मट्टी छः फुट ऊंची उड़ी। क्राहिनबर्गमें (Krahenberg) पत्थर

एक छोटी बालिकासे कई क़दमकी दूरीपर पड़ा। एनगर्समें ( Angers ) एक महिला अपने बाग़में खड़ी हुई थीं, उनके पास ही उल्का गिरा। ब्रौनोमें ( Braunau ) एक मकानकी छत फोड़कर उल्का अन्दर गिरा। मेकोओमें ( Macao ) पत्थरोंकी वर्षा हुई जिससे कई बैल मारे गये। भारतवर्षमें नदगोला में उल्कापात एक मनुष्यके इतने पास हुआ कि वह बेहोश हो गया। इतनी घटनाओंमें कोई मनुष्य नहीं मरा, पर १८८४ वि० में मऊकी छावनीमें एक पत्थरके गिरनेसे मनुष्य मरा था।

६५० से अधिक उल्कापातोंका समाचार अभीतक ज्ञात हुआ है। सबसे बड़ा उल्का जो अभीतक पाया गया है वह है जो कमान्डर पियरी, केपयोर्क ( ग्रीनलेण्ड ) से लाये थे। इसका बोझ ६१०। ( नासौ, सवादस ) मन है।

उल्काओंमें क्या क्या पदार्थ पाये जाते हैं

उल्का प्रायः तीन जातिके माने जाते हैं।

(१) लोह निर्मित (Siderites)—इनमें अधिकांश लोहा या निकिल पाया जाता है।

(२) पाषाण निर्मित (Aerolites)—यह केवल पत्थरकेसे टुकड़ोंके बने होते हैं।

(३) लोह-पाषाण (Siderolites)—इनमें लोहा और पत्थर दोनों पाये जाते हैं।

पहिली और दूसरी जातिके बहुत उल्का पाये गये हैं, पर तीसरी जातिके केवल नौ उल्का अभीतक मिले हैं। लोहेके अतिरिक्त थोड़ी थोड़ी मात्राओंमें और भी अनेक मौलिक उल्काओंमें पाये जाते हैं। एलुमिनियम्, केलसियम् ( खटिक ), कर्बन, मेग्नीसियम्, निकिल, ओषजन, फ़ास्फ़ोरस, सिलिकन, और गंधक विशेषतः पाये जाते हैं। कभी कभी सुर्मा, संखिया, हरिण, क्रोमियम, कोबाल्ट, तांबा, उज्जन, मैंगेनीज़, पोटासियम, सोडियम्, टाइटेनियम, वेनेडियम भी पाये जाते हैं। सोना, चांदी, प्लेटिनम, इरिडियम, सीसा, गेलियम भी दो एक बार उल्काओंमें पाये गये हैं। डाक्टर मिलरके कथनानुसार अभीतक उल्काओंमें ऐन्द्रिक पदार्थोंके अंश नहीं पाये गए। अतएव यह आकाशी दूत अभीतक इस पृथ्वीके अतिरिक्त किसी अन्य स्थानपर जीवोंके रहने सहने या पैदा होनेका संदेसा नहीं लाये हैं।

---

## चतुर बैरिस्टर

[ले० प्रेमवल्लभ जोषी, बी. एस-सी. ]

गताङ्कसे सम्मिलित

उस रोज़ प्रातःकाल मैं घूमता घामता कोर्ट हाउसकी ओर चला गया। वहां हमारे पुराने मित्र मि० बरकिट कुछ दिनोंसे रहा करते थे। कोर्ट हाउस पहुंच इन महाशयसे इधर उधरकी बातें करने लगा। कुछ समय उपरान्त इनका चपरासी डाक लेकर आया। साहब अपनी चिट्ठी पढ़ने लगे और मुझको कलकत्तेका 'स्टेट्समैन' नामक अख़बार जो उसी डाकमें आया था पढ़नेको दिया। कुछ समयतक इधर उधरके समाचारोंको पढ़नेके उपरान्त मेरी दृष्टि एकाएक कुछ बड़े बड़े अक्षरोंपर पड़ी जिसमें यह लिखा था— "Radium in court" 'न्यायालयमें रेडियम'। मैं तुरन्त उस लेखको पढ़ने लगा।

"Considerable excitement is caused here by a case brought against one Mr. Mankar, son of the well-known Banker of Colombo, by one Bhattacharya. It appears that these two young men found some *pitch blende* in one of their excursions in Russia. They were offered high prices for it by the Russian scientists, on which Mankar seems to have disposed off his share for a ridiculous price and spent every penny of it in racing. Bhattacharya taking pity on the man's condition entrusted him with 1,005 lbs of the radium

ore and promised to pay him Rs. 4,000 provided he took it all safe to India. On arriving here, Mr. Mankar can account for 1,001 lbs only and denies having misappropriated 4 lbs. Bhattacharya, on the other hand, maintains that the most shining part of the *pitch blende* which he had purposely marked has disappeared. The case is clear enough. Both the parties were heard yesterday by the 3rd Presidency Magistrate. Mankar denies on oath to have meddled with the ore given in his charge. Judgment will be given on Saturday."

अर्थात् "कलकत्तेके प्रेसीडैन्सी मैजिस्ट्रेट-के यहां भट्टाचार्यने मानकरके ऊपर नालिश की है। ये दो युवक साथ साथ रूस गये थे वहां इन्हें रेडियमकी कीट मिल गई। मानकरने आधा हिस्सा बेच डाला और इस सब रुपयेको जुआ खेलनेमें ख़र्चकर दिया। इसपर भट्टाचार्य बाबू ने इन्हें अपना हिस्सा हिन्दुस्तान पहुंचानेको कहा और यह प्रतिज्ञाकी कि यदि मानकर हिन्दुस्तान पहुंचकर इन्हें सब कीट भली भांति सौंप दें तो भट्ट बाबू इन्हें ४ हज़ार रूपया देंगे। कीट रूसमें तोली गई थी और इसका वज़न १००५ पौंड था। कौलम्बो पहुँच मि० मानकरने सिर्फ़ १००१ पौंड ही कीट भट्ट बाबूको दी, जिसपर इन्होंने मानकरके ऊपर नालिश की है। मानकर न्यायालयमें इस बातकी शपथ खाते हैं कि उन्होंने कीट नहीं चुराई। देखिये क्या हो इत्यादि।"

मैंने इस समाचारको अच्छी तरह दो बार पढ़कर बरकिट साहबको सुनाया। आप कुछ देर चुपचाप रहे, फिर मुझसे प्रश्न किया "क्या मि० मानकरको तुम सच्च ही चोर समझ रहे हो?"

मैं—साहब क्या कहूं मुझे तो मालूम होता है कि चोरी नहीं है केवल आकर्षण शक्तिके नियमानुसार कौलम्बोमें तोल सैबीरियासे कम बैठी है।

बर०-ठीक है मेरी भी यही राय है कि तोलमें २ सेरका अन्तर हो जाना कोई आश्चर्यकी बात नहीं, कहो तो चलकर मानकरको बचावें।

मैं—चलिये, लेकिन पैरवी कौन करने देगा—न आप वकील न हम वकील।

बर०—अजी इसके लिए तो हम पुलिसवाले हैं। हां फैसला कब सुनाया जावेगा?

मैं—शनिवारको-आज है वृहस्पतिवार।

बर०—चलो तो कुछ दिल्लगी ही रहे। हम बनें बैरिस्टर और तुम हमारे मुन्शी। मानकरको एक तार भेज दो।

मैं—लेकिन उसका पता?

बर०—कोर्टके मार्फ़त।

मैंने मानकरको तार भेज दिया कि मि० वैश्य बैरिस्टरने आपके मुक़दमेका हाल पढ़ा, वह आपकी तर्फ़से पैरवी करना चाहते हैं और यक़ीन दिलाते हैं कि आपको बचालेंगे। अगर ज़रूरत समझो तो तारसे सूचित करो।

सन्ध्याको मानकरका तार हमारे पास पहुंचा और हम दोनों पंजाब मेलसे कलकत्ते रवाना हुए।

मानकर हमारी राह देख रहे थे। स्टेशन पहुंचनेपर आप न जाने कैसे ठीक हमारी गाड़ीपर आए और हमारा परिचय पूछा। "मिस्टर वैश्य बार-एट्-ला?" मैंने कहा 'हां आप ही मिस्टर वैश्य हैं।'

मानकर—मैं मानकर हूं। मैं आपका बड़ा अहसानमन्द हूं कि आपने मेरे ऊपर इतनी दया की। वास्तवमें दया इसे ही कहते हैं। अनजान दुखी मनुष्यको बचाना अथवा उसकी मदद करना ही वास्तविक दया है जैसा कविने कहा है-

"भक्त जन तारे जिन तारवेके कम कीने
विना भक्ति तारो तो तारवो तिहारो है"

पर साहब, मुझे अब बचाना असम्भव सा प्रतीत होता है। मैं आज सवेरे मैजिस्ट्रेटके सरिश्तेदारके पास गया था। उनकी राय यह

है कि मामला बिलकुल ही सीधा है और जज साहबने भट्ट बाबूको मय ख़र्चेके डिग्री दे दी है।

मि० वैश्य-चिन्ता न कीजिये। शनिवारको हम चलकर पेशी करेंगे।

अस्तु हम लोग एक होटलमें टिके और शनिवारके दिन ठीक १० बजे न्यायालय पहुंचे। वहां बैरिस्टर वैश्यने पैरवी करनेकी आज्ञा मांगी। आज्ञा मिलनेपर दूसरी ओरके भी वकील सब आ डटे।

न्यायालयमें भीड़भाड़ खूब थी। आज अजमेरके बैरिस्टर एक अभियोगीको जिता ले जायंगे, यह समाचार चारों ओर फैल चुका था। समाचार पत्रोंके सम्बाददाता और अन्य युवकगण आ इकट्ठे हुए थे।

मैजिस्ट्रेट साहेबने फैसला सुनाना शुरू किया "यह मुक़दमा इत्यादि।"

जब आप आधा फैसला सुना चुके तब मिस्टर वैश्यने कुछ कहनेकी आज्ञा मांगी।

मैजि०—कहिये।

वैश्य—अगर आप आज्ञा दें तो किसी कालेजके प्रौफ़ेसरको यहां बुलवा उसके भी बयान लिये जायं।

मैजि०—प्रौफ़ेसरसे और इस मामलेसे क्या सम्बन्ध, वह क्या करेंगे?

वैश्य—सम्बन्ध बड़ा भारी है, जो उनके आनेसे स्पष्ट हो जायगा, वास्तवमें उनके आनेपर यह मुक़दमा रद्द हो जायगा।

मैजि०—अच्छा।

बाबूजीने रुक्का लिख चपरासीको दिया और क्योंकि कालेज बहुत ही निकट था १० ही मिनटमें प्रोफ़ेसर साहब आ पहुंचे। मैजिस्ट्रेटकी आज्ञानुसार मि० वैश्य इनसे प्रश्न करने लगे।

बैरि०—क्यों साहब यह पेनसिल हाथसे छोड़नेपर पृथ्वीपर क्यों गिरी?

प्रोफ़े०—क्योंकि पृथ्वी इसको अपनी ओर खींचती है। पृथ्वीमें अपनी ओर वस्तुओंको आकर्षित करनेकी शक्ति है।

बैरि०—इस शक्तिके बाबत कुछ और कहिये।

प्रोफ़े०—किसी वस्तुमें जितनी पदार्थकी मात्रा होती है उतना ही अधिक उस पर आकर्षण शक्तिका प्रभाव पड़ता है। वास्तवमें आकर्षणपर ही वस्तुकी तोल निर्भर है।

बैरि०—(न्यायाधीशसे) कृपा कर सुनियेगा। (प्रौफ़ेसरसे) हां कहिये।

प्रोफ़े०—प्रत्येक वस्तु अपनी आस पासकी सभी वस्तुओंको थोड़ा बहुत आकर्षित करती है, और स्वयम् भी उनकी ओर खिंचती है, परन्तु उसकी आस पासकी चीज़ोंमें पृथ्वी ही सबसे बड़ी है, अतएव सबसे अधिक बलसे वह पृथ्वीकी ओर ही खिंचती है। इस ही कारण पृथ्वी तलसे ऊपर उठानेसे प्रत्येक वस्तु भारी प्रतीत होती है और छोड़ देनेसे पृथ्वीकी ओर ही गिरती है। साधारणतया जब लोलक लटकाया जाता है तो उसकी डोर सीधी रहती है, पर बड़े बड़े पर्वतोंके पास देखा गया है कि उसकी डोर बिलकुल सीधी नहीं रहती। दूसरे यदि उसे वहां इस प्रकार हिलाया जाय कि कभी पहाड़की ओर जाय, कभी पहाड़से दूर, तो यह पाया जाता है कि पहाड़से दूर जानेका समय, उसकी ओर आनेके समयसे अधिक होता है। इससे ज्ञात होता है कि पहाड़ अपनी तरफ़ उसे खींचता है। मान लीजिये कि दो वस्तुओंके भार भ और भ्र हैं और उनके केन्द्रोंका अन्तर अ है, तो उनमेंसे प्रत्येक दूसरेको $\frac{भ \times भ्र}{अ^2}$ शक्तिसे अपनी ओर खींचेगी। वह शक्ति दोनों वस्तुओंमें भिन्न भिन्न गति उत्पन्न करेगी। जो वस्तु भारी होगी उसमें कम गति उत्पन्न होगी। अब देखिये कि पृथ्वी साधारण वस्तुओंसे करोड़ों गुनी बड़ी है। अतएव जिस शक्तिसे पृथ्वी किसी वस्तुको (या वह वस्तु पृथ्वीको) खींचती है उस

शक्तिसे पृथ्वीमें तनिक भी गति नहीं उत्पन्न होती है पर वह वस्तु अवश्य पृथ्वीकी ओर खिंचती है, यदि वह किसी आधारपर न टिकी हो।

बैरिस्टर—क्या पृथ्वी बिलकुल गोल है ?

प्रोफे़०—नहीं यह दो ध्रुवोंके पास चपटी है। यह मैं कहनेको ही था कि ध्रुवपर पृथ्वी चपटी है, इससे यह प्रत्यक्ष है कि ध्रुव और स्थानोंकी अपेक्षा पृथ्वीके केन्द्रसे बहुत नज़दीक हैं और भूमध्यरेखापर स्थित स्थान पृथ्वीके केन्द्रसे दूर हैं। इसलिए किसी वस्तुपर पृथ्वीका आकर्षण ध्रुवके निकट भूमध्यरेखापरके किसी स्थानकी अपेक्षा अधिक होगा। अतएव यदि कोई वस्तु ध्रुवपर और भूमध्यरेखापर तोली जाय तो उसका भार भूमध्यरेखापर कम बैठेगा और ध्रुवपर वा ध्रुवके पास अधिक।

बैरि०—क्यों साहब साधारण तराज़ूसे तोलनेसे यह बात मालूम होगी या नहीं।

प्रोफ़े०—नहीं, क्योंकि साधारण तराज़ूसे हम केवल दी हुई वस्तुके पदार्थकी मात्राका बांटोंके पदार्थकी मात्रासे समानता करते हैं। इससे निरपेक्ष भार नहीं मालूम होता, केवल पदार्थ-मात्रा mass ही मालूम होता है। यदि निर्पेक्ष-भार मालूम करना हो तो कमानीकी तराज़ू Spring balance लेनी चाहिये, क्योंकि इस तराज़ूमें कमानीका खिंचाव पृथ्वीको आकर्षण शक्तिके बराबर होगा। बांटोंसे यदि कोई साधारण वस्तु तोलें, तो सदैव, पृथ्वी तलपर सब जगह, उन्हीं बांटोंके बराबर रहेगी, क्योंकि यदि पृथवीका आकर्षण वस्तुपर बदल गया है तो बांटोंपर भी बदल गया होगा। कमानीकी तराज़ूमें हम, वस्तुपर जो पृथ्वीका आकर्षण है उसका, और कमानीकी खिंचावका मुक़ाबला करते हैं। अतएव असली भार मालूम कर सकते हैं।

बैरि०—क्या आप बता सकते हैं कि ध्रुव और भूमध्यरेखाके बीच तोलमें कितनेका अन्तर हो जाता है अर्थात् अगर कोई वस्तु ध्रुवके निकटवर्ती देशमें १००५ पौंड तोलमें होतो उसकी तोल कौलम्बोमें जो कि भूमध्यरेखाके निकट है कितनी होगी ?

प्रोफ़े०—जब कोई वस्तु ध्रुवके पास १००५ पौंड तोलमें होगी तो कोलम्बोमें कमसे कम १००१ पौं० तोलमें बैठेगी।

बैरि०—( न्यायाधीशसे ) हजूर इसलिए प्रोफ़ेसर साहबको कष्ट दिया था। १००५ पौं० सैबीरियामें तोली हुई वस्तु उसी काँटेसे कौलम्बोमें १००१ पौं० निकलेगी, इसलिए मि० मानकरने कोई भी जाल और बेईमानी नहीं की।

दावा रद्द किया गया और मि० मानकर बैरिस्टर साहबको बार बार धन्यवाद देते कौलम्बोको विदा हुए।

हम लोग भी उसी रातकी गाड़ीसे अजमेर वापिस आ गए।

---

## अङ्क गणितकी शिक्षा

[ ले० शतीश्चन्द्रघोषाल. बी. एस्-सी., एल-एल. बी.]

### गुणा और भाग

#### गुणाका साधारण मतलब

बालकोंको आरम्भमें बताया जावे कि गुणाका मतलब बार बार जोड़ना है। प्रत्यक्ष उदाहरणोंद्वारा उन्हें यह मतलब इस भांति समझाया जाय—मान लो कि यदि पहिली बेंचके पांचों लड़कोंमेंसे प्रत्येकको ४ बीज दिये जायं तो कुल बीज कितने चाहिएँ ? यदि हरएक क़तारमें दस गमले हों और ऐसी तीन कतारें हों तो कुल गमले कितने होंगे ? हर एक बेंचपर पांच लड़के बैठें और ऐसी बेंचें कुल पांच हों तो लड़कोंकी संख्या क्या होगी? इस प्रकारके कई प्रश्न लेकर पाठक हरएक सवालका मतलब विद्यार्थियोंको बार बार जोड़ लगवाकर समझादें और यह भी बतादें कि इन्हीं प्रश्नोंको गुणाके रूपमें किस प्रकार कर सकते हैं।

Teaching शिक्षा ]

यद्यपि गुणाका यह अर्थ विशेष युक्तिपूर्ण और संतोषप्रद नहीं है तो भी इसको आरम्भमें बतानेसे फ़ायदा यह है कि सरल होनेके कारण बालक इसे शीघ्र समझ लेते हैं। बार बार पदार्थोंको जोड़कर बालक इसे प्रत्यक्ष भी देख सकते हैं और जोड़से सम्बन्ध बताये जानेके कारण गुणा भी उन्हें नवीन और कठिन नहीं मालूम होता।

आरम्भमें गुणाके साथ साथ भागका भी प्राथमिक ज्ञान करा दिया जाय

यह बात स्पष्ट ही है कि भाग एक तरह गुणाका उलटा है, इसलिए आरम्भमें बालकोंको गुणाके साथ साथ भागका भी ज्ञान करा दिया जाय। उनको बताया जावे कि भाग सिर्फ़ गुणाका उल्टा ही है। उन्हीं प्रश्नोंसे जिनमें गुणा किया गया है, भागका मतलब समझाना सुगम होगा। गुणनफल और गुणकको देकर गुण्य; और गुणनफल और गुण्य देकर गुणकके निकलवानेसे ही भागके प्राथमिक ज्ञान करा देनेका अभिप्राय है। परन्तु यह स्मरण रहे कि सिर्फ़ बालकोंद्वारा किये हुए गुणाके सवालोंसे ही यह सब समझाया जाय। इसी समय गुणा और भागके चिन्ह × ÷ भी क्रमशः बतलाये जायं।

पदार्थोंका उपयोग और वर्ग काग़ज़

शुरुमें गुणा सिखाते समय विद्यार्थियोंसे बीज, पुट्ठेके टुकड़े, कंकड़ इत्यादि पदार्थोंका उपयोग कराना आवश्यक है। काग़ज़ जिसपर छोटे छोटे वर्ग बने हों उपयोगमें लाना लाभकारी है। इस प्रकारके काग़ज़को उपयोगमें लानेसे बालक सिर्फ़ गुणा ही नहीं समझेंगे परंतु धीरे धीरे उन्हें वर्गफलका ज्ञान हो जायगा और उसके निकालनेकी विधि समझनेमें भी सुगमता होगी। तोल और नापके बांट और नपनों, तथा सिक्कोंका भी उपयोग कराया जाय और प्रश्नोंको करते समय विद्यार्थी लम्बाई वग़ैरहको स्वयम् नापें और पदार्थोंको तोलें। इस प्रकार प्रत्यक्ष क्रिया करनेसे उन्हें गणित सीखनेमें विशेष आनन्द आवेगा और नाप तोलकी परिभाषाएं वे स्वतः सीख लेंगे।

पहाड़े पढ़ानेके पहिले लड़कोंको उनका अभिप्राय और उनके बनानेकी रीति समझाई जावे।

गुणाके सवाल करनेके पहिले बालकोंको पहाड़े मुखाग्र करना पड़ेंगे। इनको मुखाग्र करनेकेलिए बार बार दुहरानेकी आवश्यकता होगी। जिसमें कि लड़के उनको बिना समझे बूझे न रटने लगें मास्टरको चाहिये कि पहाड़ोंके बनानेकी विधि और उनका उपयोग बालकोंको समझादें।

२ के पहाड़े बनानेकी रीति

लड़के दो बीज लेवें और अपने अपने सामने रक्खें। फिर दो और लेकर उनमें मिलावें और कुल गिनें। तब पाठक तख़्तेपर इस भांति लिखे—

२ बीज + २ बीज = ४ बीज

अब पूछा जाय कि दो दो बीजोंके कै ढ़ेर हैं? उत्तर दो, तख़्तेपर इस भांति लिखो—

दो दो बीजोंके दो ढ़ेर = ४ बीज
या २ × २ = ४
या दो दूनी चार।

इसी भांति दो दो बीजोंको तीन जगह गिनकर विद्यार्थी गिनें कि कुल ६ बीज हुए। इस तरह तख़्तेपर लिखो—

२ × ३ = ६
या दो तिया छः

विद्यार्थियोंके मनमें पहाड़े बनानेकी रीति अंकित करनेकेलिए पाठक इस भांति भी तख़्तेपर लिखें—

| | | | |
|---|---|---|---|
| २ | | | |
| २ | २ | | |
| २ | २ | २ | |
| २ | २ | २ | २ |
| २ | २ | २ | २ |
| १० | ८ | ६ | ४ |

दो पंजे दस, दो चौके आठ, दो तिया छः, दो दूनी चार इत्यादि।

इसी प्रकार २ को क्रमशः १० बार तक जुड़वा-कर विद्यार्थियोंको समझाया जाय कि पहाड़े सिर्फ़ इसी प्रकार संख्याओंको जोड़कर बनाये जा सकते हैं। इसी प्रकार ३ इत्यादिके पहाड़े भी बनवाये जायं और ज्यों ज्यों विद्यार्थी इन्हें बनाते जायं मास्टर तख़्तेपर लिखता जाय। इसी प्रकार विद्यार्थी मास्टरकी सहायतासे १२ तकके पहाड़े बना लें।

यह भी बता दिया जाय कि दोके पहाड़ेमें प्रत्येक संख्या पिछली संख्यासे दो अधिक है। तीन, चार इत्यादिके पहाड़ोंमें भी प्रत्येक संख्याका पिछली संख्यासे अंतर बता दिया जाय।

बदलनेका नियम

बदलनेका नियम कोई नवीन नियम नहीं है। गुणामें यदि हम चाहें तो गुण्यको गुणक और गुणकको गुण्य बना सकते हैं। यही बदलनेका नियम है। इस नियमको समझ जाने और उसके अनुसार कार्य करनेसे विद्यार्थियोंको पहाड़े बनानेमें बड़ी सुविधा होगी। छोटे छोटे उदाहरणों द्वारा यह नियम बालकोंको इस भांति समझाया जाय—

२ तिया ? उ० ६ अथवा २ × ३ = ६
३ दूनी ? उ० ६ " ३ × २ = ६
३ चौके ? उ० १२ " ३ × ४ = १२
४ तिया ? उ० १२ " ४ × ३ = १२

अब यह बताया जावे कि यदि तुम्हें २ तिया छः मालूम हो तो तुम जान सकते हो कि तीन दूनी क्या होगा। इसी भांति यदि तुम २ × ४ = ८; २×५ = १० जानते हो तो तुम जान सकते हो कि ४×२ = ८; ५ × २ = १० होंगे अर्थात् दोका पहाड़ा यदि हमको १० तक मालूम हो तो हम क्या जान सकते हैं ?

उ०—३ × २, ४ × २, ५ × २, ६ × २,... १० × २.

इस प्रकार आगेके पहाड़ोंको दो और तीनके पहाड़ोंकी सहायता द्वारा आगे बढ़वाओ व इस प्रकार ४ का पहाड़ा पढ़कर आगेके पहाड़ोंके स्थान भरवा दो।

अलग अलग पहाड़ोंकी विशेष बातें

अब विद्यार्थियोंको भिन्न भिन्न पहाड़ोंके विशेष गुण बताने चाहिएं। दोके पहाड़ेको लेकर बताओ कि २ छक्के १२ के उपरांत जितनी संख्याएं हैं उन सबकी इकाईयोंमें दोका भाग जाता है। पांचके पहाड़ेमें कुल संख्याओंमें क्रमशः ५ और ० हैं। दसके पहाड़ेमें प्रत्येक संख्या उतनी ही दहाई है जितनी बार गुणा किया गया है। इसी प्रकार भिन्न भिन्न पहाड़ोंकी विशेष बातोंको समझा देनेसे विद्यार्थी पहाड़ोंसे परिचित हो जायंगे और वे पहाड़ोंको समझकर याद करेंगे। पहाड़ोंका मुखाग्र करना अत्यंत आवश्यक है। उनके रटनेमें बड़ी कठिनाई होती है और बालक उन्हें शीघ्र भूल जाते हैं। इसलिए पाठक जिस प्रकार हो विद्यार्थियोंको सहायता दें जिससे पहाड़ोंका अभ्यास हो जाय।

पहाड़े ख़ूब याद होने चाहिएँ

पहाड़ोंको याद करनेके बाद विद्यार्थियोंको गुण्य गुणकको फ़ौरन बतला देनेका अभ्यास कराना चाहिये। २४ कहते ही वे बतला देवें कि १२×२, ४×६, ३×८, हर एक २४ के बराबर होता है। इसी प्रकार उनसे इस प्रकारके सवाल पूछे जायं, कै चोक ३६ ? कै गुणे ११=५५ ? इस प्रकारके अभ्यासका फ़ायदा उस समय मालूम होगा जब बालक खंड गुणा सीखेंगे और उनको गुणाका दूसरा मतलब बताया जायगा। विद्यार्थियोंको ऐसे प्रश्न भी दिये जायं जिनमें वे पहाड़ोंका उपयोग करें। वर्गकाग़ज़, बीज और पैमानेका उपयोग भी प्रश्नोंके साथ कराना चाहिये।

गुणाकी रीतिका पृथक्करण

गुणा करनेमें हम कई नियमोंका सहारा लेते हैं और पाठकको चाहिये कि यह नियम उदाहरणों-द्वारा विद्यार्थियोंको ख़ूब समझा दें। इन नियमोंमें एकका ज़िक्र हम ऊपर कर आए हैं। गुण्यको गुणक और गुणकको गुण्य बना देनेसे गुणनफल-

में अंतर नहीं पड़ता। और नियम नीचेके उदाहरणोंको देखनेसे मालूम हो जायंगे।

उदाहरण—४३ को २९ से गुणा करो।

इस प्रश्नको हम इस भांति करते हैं--

पहले ४३ को ९ से गुणा करते हैं। ऐसा करते समय हम पहिले ३ को ९ से गुणा करते हैं फिर ४० को ९ से गुणा करते हैं और दोनों फलोंको जोड़कर इकट्ठा लिख देते हैं। पश्चात् ४३ को २ से गुणा करके जो फल आता है उसे दससे गुणा करते हैं इसका मतलब यह हुआ कि ४३ को बीससे गुणा किया। फिर इन दोनों खंड फलोंको जोड़कर गुणनफल निकाला जाता है। इस रीतिसे प्रश्न करनेसे स्पष्ट मालूम होता है कि इस रीतिमें हमने निम्न लिखित तीन नियमोंका उपयोग किया हैः—

(१)दो संख्याओंके योग और तीसरी संख्याका गुणनफल उन दो खंड फलोंके योगके बराबर है जो कि पहिली और तीसरी तथा दूसरी और तीसरी संख्याके गुणनसे प्राप्त होते हैं।

(२) यदि गुणकको हम तिगुना कर दें तो गुणनफल भी तिगुना होगा, यदि गुणकको आधा करें तो फल भी आधा होगा।

(३)किसी संख्या (जैसे५) और दूसरी दो संख्याओंके (जैसे ४ और ३) योगका गुणनफल पहिली और दूसरी संख्याके खंडफल (५×४=२०) और पहिली और तीसरी संख्याके खंडफलके (५×३=१५) योगके तुल्य होगा।

इन तीनों नियमोंको उदाहरणोंद्वारा बालकोंको ख़ूब समझाओ ताकि वे स्वतः इन नियमोंको निकालने लगें।

पहिला नियम सिखाना

८×३=? ९+४= ?

(६×३)+(२×३)= ? (७×४)+ (२×४)= ?

बतलाओ कि ६+२=८, ७+ =२९

इस प्रकार कई प्रश्न हो चुकनेपर ये प्रश्न केए जायं--

२३×४=?

३२×६=?

कई लड़के तो वट्टुओं और बीजों द्वारा २३ को ४ वार जोड़ कर उत्तर निकालें, और कई २३ को दो हिस्सोंमें २० और ३ में बांटकर प्रत्येक को ४ से गुणा करके खंडफलोंको जोड़कर उत्तर निकालें। दोनों तरहसे प्राप्त किये हुए उत्तर मिलाए जायं। तब तख़्तेपर पाठक इस भांति लिखेंः—

२३ = २ द.+३ इ.

४ ४

९२ = ८ द.+१२ इ.=९ द.+२ इ.

अब पाठक इसी रीतिको मुखसे इस भांति कहें—३ इ. चौके १२ इ. अर्थात् १ द. और २ इं.। २ इ. को इकाईके स्थानमें रक्खो। हाथ लगी १द.। २ द. चौके ८ द., ८ द. और १ दहाई हुई ९ दहाई। ९ को दहाईके स्थानमें रक्खो। हाथ लगी समझानेपर विशेष ध्यान दिया जाय, तब विद्यार्थी इस प्रकारके सवाल करें—

३५×८=?, २९×५=?, ११२×८=? इत्यादि

दूसरे और तीसरे नियमको सिखाना

दूसरे और तीसरे नियम भी बालक वस्तुओंका उपयोग करके स्वतः ढूंढ निकालें। इस प्रकारके उदाहरण दिये जायं--

(१) ४×१३=? अब चारको ३ से गुणा करो,

(२) १२×१३=?, ४×३९=? मिलान करो,

पहिला गुणनफल कै गुणा हुआ, ? उ० तिगुना। ऐसे ही और प्रश्न भी किये जायं।

उदा० (१) ३×८=? ; ५+३=? ; (३×५)+(३×३)=?

(२) ८×६७=? ६०+७=? (८×६०)+(७×८)=? इत्यादि,

दूसरा उदाहरण यदि विद्यार्थियोंसे न बने तो इस भांति समझाओ--

पहिले ८ को ७ से गुणा करो, फिर ८ को ६ से गुणा करो और फलको १० से गुणा करो (इस-

का मतलब यह है कि ८ को ६० से गुणा किया) फिर दोनों खंड फलोंको जोड़ दो।

यह भी समझाया जाय कि ८×६७=६७×८
४×१३=१३×४

उपरोक्त तीन नियमोंके आधारपर गुणा करना

इन तीनों नियमोंका उपयोग करनेकेलिए निम्न लिखित उदाहरण लो।

उदाहरण–३७ को २६ से गुणा करो। पहिले ३७ को २६ से गुणा करनेकेलिए २६ के दो खंड करो–२० और ६; ३७ को २० से और ६ से अलग अलग गुणा करो।

```
 ३७     ३७
 २०      ६
───    ───
७४०    २२२
```

दोनों खंडफलोंको जोड़कर (७४०+२२२=९६२) गुणनफल निकाल लो। [ यहांपर ३७ को भी पहिले २ से गुणा करो और फिर १० से ]

अब विद्यार्थियोंको यह बताओ कि सुभीतेके-लिए ६ और २० का अलग अलग गुणा न करके यदि हम इस भांति लिखें तो अच्छा होगा।

```
 ३७             ३७
 २६    अथवा     २६
───            ───
२२२            २२२
७४०            ७४
───            ───
९६२            ९६२
```

विद्यार्थियोंका ध्यान इस बातकी ओर खींचा जाय कि जिस स्थानमें शून्य रक्खा हो उसका मतलब यह है कि उस स्थानमें कोई संख्या नहीं है। इसलिए यदि हम सावधानीसे प्रत्येक अङ्क-को उसके स्थानमें रक्खें तो शून्यको रखनेकी कोई आवश्यकता नहीं। ऊपरके सवालमें यदि हम ४ को दहाईके स्थानमें और ७को सैकड़ेके स्थानमें रक्खें तो इकाईके स्थानको ख़ाली छोड़ना शून्य ही रखनेके बराबर है। निदान पाठक इस प्रकारके कई प्रश्न लेकर इस बातकी मश्क़ करावें।

ऐसे सवाल जिनमें गुण्य अथवा गुणककी संख्याओंमें एक या अधिक शून्य हों

ऐसे सवाल जैसे ४०३×२३ या १५३९×६०८ ख़ास तौरसे तख़्तेपर समझाए जावें जिससे वि-द्यार्थियोंको मालूम हो जाय कि यदि संख्याके बीच-में किसी स्थानपर शून्य हो तो किस भांति करना चाहिये।

उदाहरण—१

४०३×२३=?

रीति—४०३=४ सौ+३ इकाई

अब ४०३×३=(४ सौ×३)+(३ इ.×३)
=१२००+९
=१२०९

४०३मेंसे दहाईके स्थानमें कुछ नहीं और इकाईयोंके गुणनसे भी कोई दहाई हाथ नहीं लगी इसलिए गुणनफल अर्थात् १२०९ में कोई दहाई नहीं अथवा दहाईके स्थानमें शून्य है।

इसी भांति दो दहाईका गुणन भी समझा दो।

```
  ४०३
   २३
 ────
 १२०९
 ८०६
 ────
 ९२६९
```

उदाहरण—२

```
 १५३९
  १०८
──────
 १२३१२
१५३९
──────
१६६२१२
```

इस प्रश्नमें ८ से गुणा करनेके बाद देखते हैं कि गुण्यमें दहाईके स्थानमें कुछ नहीं इस-लिए हम सैकड़ेसे यानी १ से गुणा करते हैं। इसलिए ९ को सैकड़ेके स्थान-में अर्थात् ३ के नीचे रखते हैं। विद्यार्थी यह भी देखलें कि ९ इकाईके स्थानसे दो स्थान बाईं तरफ़ हटाकर रखा गया है।

उदाहरण—३

| | |
|---|---|
| १५३९ | इस प्रश्नमें ८से गुणा |
| १००८ | कर चुकनेके बाद देखो |
| १२३१२ | कि दहाई और सैंकड़े- |
| १५३९ | के स्थानमें कुछ नहीं, |
| १५५१३१२ | इसलिए हज़ार याने १ |

से गुणा करना होगा १ हज़ार×९=९ हज़ार हुए। इसलिए ९ को हज़ारके स्थानमें याने २ के नीचे रक्खो।

गुणा करनेकी विशेष रीतियां

उन विशेष रीतियोंमें, जिनके द्वारा गुणा करनेमें सरलता हो जाती है, उत्पादकों द्वारा गुणा करनेकी रीति विशेष ध्यान देने योग्य है। उत्पादकोंका मतलब वे छोटी छोटी संख्याएं हैं जो आपसमें गुणित होकर किसी दी हुई संख्याको प्राप्त करें यथा ४ और २ आठके उत्पादक हैं, क्योंकि ४×२=८. उत्पादकोंका उपयोग करनेसे गुणामें किस तरह सरलता हो जाती है यह हम उदाहरण देकर समझाते हैं।

उदाहरण १—३७९ को १३२से गुणा करो। पहाड़ों द्वारा बालकोंको मालूम है कि १२×११=१३२ अर्थात् ११ और १२, १३२ के उत्पादक हैं, इसलिए यदि हम पहिले ३७९ को ११ से गुणा करें और गुणनफलको फिर १२से गुणा करें तो बड़ी सरलता होगी। इस प्रकार गुणा सिखानेके पहिले बालकोंको उदाहरणोंद्वारा यह नियम समझाना होगा कि ५०×८=५०×(२×४)=५९×२×४ कई उदाहरण लेकर पाठक उत्पादकोंद्वारा गुणन करनेकी रीतिका अभ्यास करादें।

उदाहरण २—२९८६७ को १६३२८ से गुणा करना है। यहांपर गुणक संख्याको देखनेसे विदित होगा कि उसमें क्रमसे ८,३२,१६ ये संख्याएं हैं। इसलिए यदि हम इस प्रश्नको नीचे लिखी रीतिसे करें तो बहुत सरलता होगी।

२९८६७
१६३२८

२३८९३६=८×२९८६७
९५५७४४ =३२०×२९८६७
४७७८७२ =१६०००×२९८६७
४८७६६८३७६=१६३२८×२९८६७

यहांपर पहिले खंडफलको ४० से गुणा करदेनेपर ३२०×२९८६७ प्राप्त हुए। इसी प्रकार दूसरे फलको ५० से गुणा करनेपर १६०००×२९८६७ प्राप्त हुए। तीनों फलोंको जोड़नेसे गुणनफल प्राप्त होगा।

पाठक जान लेंगे कि यह प्रश्न कठिन हैं। विद्यार्थियोंको यह रीति समझानेकेलिए इसी प्रकारके कई सरल उदाहरण लेने चाहिएं।

यथा १२८×४२, १२३६×९३ इत्यादि

११ और १९ के बीचकी किसी संख्यासे गुणा करनेकी विशेष विधि

यदि प्रश्नोंमें गुणक ११ और १९ के बीचकी कोई संख्या हो तो निम्नलिखित विधिसे गुणा करनेमें विशेष सरलता होगी—

उदा०—३९६ को १७ से गुणाकरो।

रीति—६ सत्ते ४२ हाथ लगे ४;

| | |
|---|---|
| ३९६ | ९ सत्ते ६३, ६३+४=६७, |
| १७ | ६७ और ६ हुए ७३, ७३ |
| ६७३२ | की तीन हाथ लगे ७; |

३ सत्ते २१, २१+७=२८, २८ और ९=३७, ३७ के ७ हाथ लगे ३, ३ एकम ३, ३+३=६

इस रीतिसे गुणा करनेमें हमने क्या किया?

यथार्थमें हमने ३९६ को ७से गुणा करके फलमें ३९६० याने (३९६×१०) को जोड़ दिया। इस प्रकार रीतिमें यह ध्यान रखना चाहिये कि अङ्क ठीक ठीक स्थानोंमें जोड़े और रक्खे जाते हैं।

२१, ३१, ४१ इत्यादि संख्याओंद्वारा गुणा करनेकी विशेष रीति

२१, ३१, ४१ इत्यादि संख्याओंसे गुणा करना

हो तो निम्नलिखित रीतिका अवलम्वन किया जाना चाहियेः—

उदाहरण—६६३४×६१ = ?

| | |
|---|---|
| ६१ | गुणयको लकीरके नीचे लिखनेसे यह |
| ६६३४ | फायदा है कि एकसे गुणा करनेपर |
| ४१६०४० | दुबारा नहीं लिखना पड़ता। ६० से |
| ४२२६७४ | गुणा करके फलमें गुणयको जोड़ दिया है। |

---

## भूलभुलैयां

[ ले० चिरंजीलाल माथुर बी. ए., एल. टी. ]

भारतवर्षमें होलीका त्यौहार बड़ा माना जाता है और मुख्यतः उस त्योहारपर दुःखको भुलाकर अनेक प्रकारसे सुखी रहनेका प्रयत्न किया जाता है। चित्तको हर्षित रखनेकेलिए गाना बजाना बड़ा उपयोगी है इसी कारण होलीपर गाना बजाना अवश्य होता है। सं० १६५७की होली-के दिनोंमें दो विद्यार्थी एक ग्राममें अपने संबंधी-से मिलनेके हेतु गये हुए थे। इन विद्यार्थियोंमेंसे एकका नाम कुंजलाल था और वह कालेजकी प्रथम कक्षामें पढ़ रहा था। दूसरा ऐ.फ़े. पास करके बी. ए. के पहले बर्षमें था। इसका नाम ब्रजनंदन था। सायंकालके समय यह दोनों जो एक ही कुटुम्बके थे अपने संबंधीसे वार्तालाप कर रहे थे कि इनके कानोंमें डमडमकी ध्वनि आनेलगी। कुंजलालने कहा यह क्या शब्द हो रहा है।

संबंधी—अजी साहब! आपको नहीं मालूम आजकल होलोके दिन हैं। इस ग्रामके गाने-बजानेवाले सब सायंकालमें एक स्थानपर एकत्रित होते हैं और गा बजाकर आनन्द मना-ते हैं। चलिये आपको भी तमाशा दिखलाएं। आगरेमें ग्रामोफोन तो बहुत सुना होगा, और फेशनोंका भी गाना सुना होगा परन्तु आज ग्रामीण गायनोंका भी गाना सुनिये—

कुंजलाल व ब्रजनन्दन दोनों चलनेको तैय्यार हुए। एक तो कंघी लेकर अपने बाल ठीक करने लगा दूसरा बूटके तसमे कसने लगा। फिर दोनों विद्यार्थी संबंधी सहित वहां पहुंचे जहां गाना हो रहा था। इनके वहां पहुंचनेतक एक डफवाला डफ छोडकर किसी कामको चला गया था और दूसरा डफवाला बजा रहा था। यह दोनों विद्यार्थी उस डफके निकट जाकर बैठे।

कुंजलालकी दृष्टि रखे हुए डफपर पड़ी तो उसको जान पड़ा कि उसकी खाल कुछ हिल रही है। अधिक ध्यानसे देखनेपर मालूम हुआ कि वास्तवमें उस डफकी खाल हिल रही थी और कुछ गुनगुनाहटकी सी आवाज़ भी आती थी। कुंजलालको बड़ा अचंभा हुआ कि यह क्या विचित्र घटना है। उससे न रहा गया ब्रजनंदनसे पूछा "देखो भाई साहब इस डफकी खाल स्वयम् हिल रही है और कुछ धीमी धीमी आवाज़ भी आती है, यह क्या बात है? मेरी कुछ समझमें नहीं आता।"

ब्रजनन्दन--तुमने अभी शब्द ( sound ) का कुछ हाल नहीं पढ़ा?

कुंज०—नहीं तो, हमको तो अभी 'ताप' और थोड़ासा 'प्रकाश' ही पढ़ाया गया है।

ब्रज०—देखो दूसरा डफ बज रहा है। उसकी खालमें उंगलियोंद्वारा थरथराहट पैदा होती है तो आवाज़ निकलती है। जैसी थरथराहट (vibrations) उस खालमें होती है वैसी ही वायुमें होती है और इस डफकी खालतक आती है। यहां-तक आनेमें हलकी अवश्य पड़ जाती है, परन्तु थोड़ी थरथराहट यहां भी उत्पन्न कर देती है। क्या तुमने कभी नहीं सुना कि भेड़ियेकी खालसे मढ़े हुए डफके साथ साथ बजानेसे बकरीकी खालसे मढ़ा हुआ डफ ठीक ठीक आवाज़ नहीं देता।

Physiology शरीर धर्म विज्ञान ]

साधारणतः मनुष्य कहा करते हैं कि भेड़ियेसे बकरी इतनी डरती है कि मरी हुई बकरीकी खालपर भी भयका प्रभाव पड़ जाता है। वास्तवमें इनदोनों खालोंकी थरथराहटमें अन्तर होता है भेड़ियेको खालकी थरथराहट वायुमें होकर बकरीको खालकी थरथराहटपर ऐसा प्रभाव डालती है कि उसकी थरथराहट धीमी हो जाती है।

कुंज०—तो क्या किसी वस्तुकी थरथराहट हवामें होकर चलती है और वैसी ही थरथराहट दूसरी वस्तुमें पैदा हो जाती है।

व्रज०— हां! हां! और इसी नियमके अनुसार तो हम आवाज़ सुन सकते हैं।

कुंज०—तो क्या कानमें भी कोई डफकीसी खाल है? कानमें तो एक छिद्र ही दिखलाई देता है।

व्रज०—यह बिलकुल ठीक है कि कानके अन्दर डफकीसी खाल मढ़ी हुई है और हवामें थरथराहट (Vibrations) चलती हुई वैसी ही थरथराहट वहां पैदा करती है और उस आवाज़का ज्ञान हमको होता है।

कुंज०—'ज्ञान' होता है इसका क्या अर्थ। कानमें थरथराहट पैदा हो गई और बस।

व्रज०—आहा? तो मालूम होता है आप आज कल इलाहाबादसे प्रकाशित होने वाला 'विज्ञान' नहीं पढ़ते हैं। नवम्बरके विज्ञानमें ही तो एक जगह था कि आंख ठीक ठीक होते हुए भी हम नहीं देख सकते यदि हमारे भेजेमें प्रकाश ले जाने वाले तारमें गड़बड़ हो जाय। यदि खटकेपर बाबूजी मौजूद न हों तो तार लाख बोला करे।

ठीक यही हाल कानका भी है। कानमें शब्द पहुंचा और थरथराहट उत्पन्न हुई, वहां इसकी ख़बर नाड़ियों द्वारा भेजेको गई। तब मनुष्यको उसका ज्ञान हुआ।

कुंज०—अच्छा भाई साहब तो मकानपर चल कर चित्रद्वारा हमको यह समझा दीजिये कि कान कैसा बना है और शब्दका ज्ञान किस प्रकार होता है। चलिये होलीकी भें भें तो हमको अच्छी नहीं मालूम होती।

दोनों विद्यार्थी वहांसे उठकर अपने संबंधीके मकानपर गए। कुंजलालने एक काग़ज़ पैंनसिल लाकर व्रजनंदनजीके समीप रख दी और कहा कि कृपया समझा दीजिये मैं आपका बड़ा कृतज्ञ हूंगा।

व्रजनन्दनने एक चित्र खींचा और समझाने लगा "देखो भाई जो आवाज़ होती है उससे हवामें थरथराहट या छोटी छोटी लहरें पैदा होती हैं। यह लहरें कानके बाहरके फैले हुये भागसे रुककर चक्करदार रास्तेसे धीमी पड़कर क नलीमें जाती हैं और जाकर ख से टक्कर खाती हैं। यह ख बिलकुल डफकीसी खाल है। इसपर जाकर वैसी ही थरथराहट पैदा होती है जैसी लहर वायुमें होकर आई थी। यह बिलकुल उसी नियमसे होता है जिससे रखे हुए डफकी खाल हिलने और गिनगिनाहट करने लगी थी। इस झिल्लीके अन्दरकी ओर एक हड्डीका टुकड़ा ह लगा हुवा है इसकी सूरत हतोड़ेकी सी है। यह हतोड़े जैसी हड्डी एक दूसरी हड्डी घ से भिड़ी हुई होती है जो लोहारके घनकी सूरतकी होती है। घ से अन्दरकी तरफ़ जुड़ी हुई एक रकाब जैसी हड्डी र होती है। ख में थरथराहट होनेसे र भी थर्राता है और यह थरथराहट र तक पहुंचती है। इसके पश्चात् कानका दूसरा भाग आरम्भ होता है। पहले भागमें होकर एक नली ग गलेतक आजाती है और इसके द्वारा कानकी वायुका दबाव वायुमण्डलके दबावके समान रहता है। ऐसा न होता तो वायुके दबावसे कान फटजाता। दूसरा भाग जो यहांसे आरम्भ होता है बड़ा पेचदार है। पहले भागका काम तो थरथराहटको यहांतक पहुंचा देनेका ही है। दूसरे भागके आरम्भमें दो द्वार हैं एक र पर तो पावड़े जैसे हड्डी जा बैठती है। दूसरे द्वारमें ढ हड्डी समुद्रके संखकी जैसी बनी हुई है। पहले द्वारसे अन्दर जाकर एक द्रव (छ) भरा हुआ

है और एक थैली ज है जिसके अन्दर कुछ छोटे छोटे दानेसे हैं। छ और ज, प हड्डीके अन्दर बन्द हैं। चित्रमें नहीं दिखाए गए हैं। इसका दूसरा चित्र फिर कभी दिया जायगा। ऊपरकी ओर तीन चक्करदार नालियां हैं। जब पावड़े जैसी हड्डी खड़खड़ाती है तो अन्दरके द्रव छ में भी हलचल मचती है और वैसी ही थरथराहट पैदा होती है। इस द्रव द्वारा थैली ज के अन्दरके दानोंमें भी वह थरथराहट पैदा होती है। यह दाने बड़े उपयोगी हैं, क्योंकि आगे चलकर इन्हींका कार्य्य है। बाहरसे जो शब्दकी लहरें आकर कानमें थरथराहट पैदा करती हैं, वह बड़े आकारकी पर कमज़ोर होतीं हैं। ऊपरकी मुड़ी हुई तीन हड्डियोंका यही उपयोग है कि इन लहरोंको ज़ोरदार, पर छोटे आकारकी बनादें जिससे स्पष्ट सुनाई दे। अब लहर त तारतक पहुंच जाता है। इस तार द्वारा थरथराहटके अनुसार शब्दका ज्ञान भेजे या दिमाग़को होता है तो हम कहते हैं कि आवाज़ सुनाई दी।

कुंज०—तब तो कानकी बनावट बड़ी विचित्र है। यह तो लखनऊके इमामबाड़ेकीसी भूलभुलयां है या कहिये यूनानीगल्प (Greek mythology) के मिनेटोर (Minotaur) नामी राक्षसके रहनेकी भूलभुलैयां (labyrinth) है, जो डेडेलस (Daedalus) ने बनाई थी।

व्रज०—इसमें संदेह नहीं कि मनुष्यके शरीरको किसी भागकी भी बनावट इतनी विचित्र नहीं है, जितनी कानकी और नाज़ुक भी अव्वल दरजेका है। तब ही तो ईश्वरने सरके भीतर भली भांति सुरक्षित रक्खा है, फिर भी कोई कोई मनुष्य दुर्भाग्यसे बहरे हो ही जाते हैं।
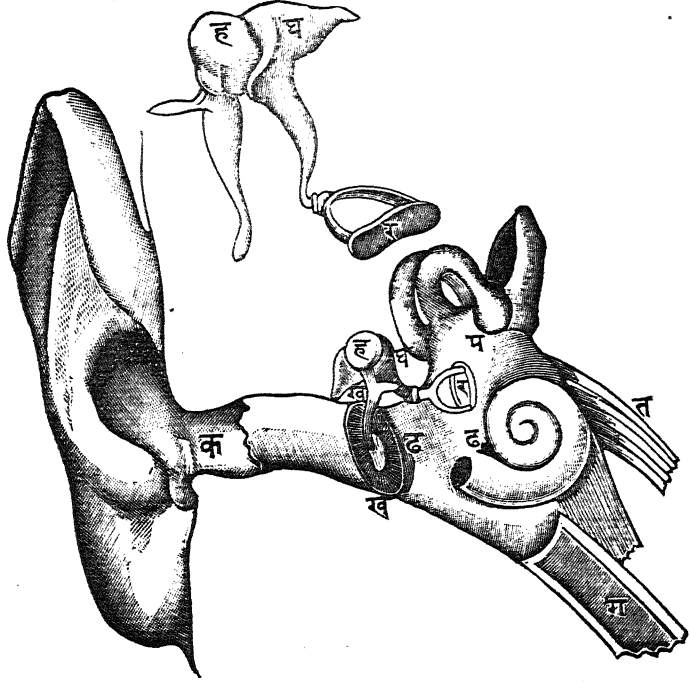
चित्र नं० १—कानका चित्र

कुंज०—भाई साहब आदमी बहरा कैसे हो जाता है?

व्रज०—देखो, कानके ढोलकी झिल्ली डफकी खाल जैसी मज़बूत नहीं होती। बड़ी कोमल होती है। यदि कोई भयङ्कर गर्जना एकाएक उसपर लगे तो उसका टूट जाना सम्भव है। ऐसा होनेपर किसी इलाजसे भी बहरापन ठीक नहीं होता इस ढोलपर मैल जम जानेपर भी कुछ बहरापन हो जाता है। अधिक सूखापन आनेसे भी विकार हो जाता है। प्रकृति देवीने इसका उपाय तो अवश्य कर दिया है। कानके आरम्भ में केनल (क) के अन्दर मोम जैसा द्रव्य स्वयम् बनकर तरी रखता है और रेतके कणोंको अन्दर नहीं

जाने देता। अपनेमें मिलाकर बाहर निकाल लाता है, वही मैल कनमैलिये निकाला करते हैं।

कुंज०—तो क्या कनमैलियोंसे कानका मैल अवश्य निकलवाना चाहिए?

व्रज०—नहीं कोई आवश्यकता नहीं है। मैल स्वयम् निकल जाता है। यदि निकलवाया भी जाय तो सावधानीसे, पर जहांतक हो सके कानके अन्दर कोई नोकदार चीज़ नहीं चलानी चाहिये। क्या तुमने यह कहावत नहीं सुनी 'आंखका अंजन दांतका मंजन नितकर नितकर नितकर। नाकमें उंगुली कानमें तिनका मतकर मतकर मतकर'

कुंज०—भाई साहब मैं आपका बड़ा कृतज्ञ हूं। आपके परिश्रमकेलिए आपको धन्यवाद।

व्रज०—यदि कानमें खुजली चले या दर्द हो, तो थोड़ासा देशी तेल या ग्लिसरीन (glycerine) डाल देनी चाहिए। यह दोनों द्रव कानके मैलको ढीला कर अपनेमें घुला लेंगी और बाहर निकलनेपर मैल भी इनके साथ निकल आयगा। कानके विषयमें बहुत ही लापरवाही की जाती है। इसको सदैव गर्मी या सर्दी लगती रहती है। ऐसी लापरवाही बहुत ही अनुचित है, क्योंकि इससे कानमें रोग हो जानेकी सम्भावना रहती है। इतनेमें लाला, जिनके यह मेहमान थे, आगए और इधर उधरकी बातें होने लगीं।

---

## बच्चोंके खिलौने

### चेतू और फव्वारा

[ ले० आत्माराम, बी. ए. ]

अमृतसरमें गरमीके दिनोंमें भद्रकालीका मेला होता है। बच्चोंको इस मेलेमें जानेसे बहुत ही हर्ष होता है, जिसका कारण यह है कि अमृतसरके नामी खिलौने बनानेवाले इस मेलेमें छकड़ों भर खिलौने ले जाते हैं। बालक अपने माता पितासे अनुरोध पूर्वक खिलौने मोल लेनेकेलिए ख़ूब पैसे मांगते हैं। ग़रीबसे ग़रीब बाप भी बच्चेको खिलौने ख़रीदनेकेलिए बहुतसे पैसे देनेको तैयार हो जाता है। हरि और गोपाल एक मुहल्लेके रहनेवाले अपने मां-बापके साथ इस मेलेमें आनन्दसे जा रहे थे। रास्तेमें दोनों इस प्रकार बातें करने लगे।

हरि—भाई गोपाल! तू कौनसा खिलौना लेगा?

गोपाल—मैं तो वह खिलौना लूंगा जिसको मैंने उस दिन अपने मित्र रामके घरमें देखा था। और जो सुला देनेसे फिर उठ खड़ा होता है।

हरि—उसका नाम क्या है?

गोपाल—मैंने तो "चेतू" हीं सुन रखा है। आगे कौन जाने उसका पूरा नाम? मैं तो उसको देखकर पहिचान लूंगा। चूकनेका नहीं। मेरा तो जी चाहता है कि दिन भर उससे खेलता रहूं।

हरि—मैं तो फ़व्वारा लूंगा। उसमें पानी डालकर भर दो। जिस छेदसे पानी निकलने लगे उसको उँगलीसे दबाए रखो, जब फव्वारा गरदन तक भर जाय तब झटसे उंगली छोड़ दो, फिर देखो पानीकी बहार! वाह! वाह! कैसे ऊपरको पानी जाता है। लाहौरके शालाबाग़का तमाशा तो फव्वाराही दिखाता है।

गोपाल—भाई वह देख वह आदमी छबड़ीमें रखकर 'चेतू" बेच रहा है। जल्दी चल कहीं मेलेमें कोई मुझसे पहिले न ले लेवे।

दोनों जल्दीसे चन्द क़दम चले इतनेमें खिलौनेवालेकी दुकानपर पहुंच गये।

गोपाल—ओ भाई! ओ खिलौनेवाले! इस टोपवाले चेतूका क्या लेगा?

खिलौनेवाला—मेरे यहां तो एक ही मोल है। मैं तो दो पैसे लूंगा। ज़रा हाथमें माल तो लेकर देखो।

गोपाल—अच्छा, यह लो दो पैसे और खिलौना लाओ।

खिलौना लेते ही गोपालने उसको ज़मीनपर सुलाना चाहा पर जब जब गोपाल हाथ हटाता वह चेतू खड़ा हो जाता। गोपालने दस बीस बार उससे खेल किया और जबतक खेल करता रहा वह किसीसे न बोला। पाठक विद्यार्थी पूछेंगे कि उस खिलौनेका आकार किस प्रकारका होगा जिसपर गोपाल लट्टू हो रहा था। हम नीचे पहिले उसका आकार दर्शाकर फिर उसका कुछ वर्णन करेंगे।

जिस प्रकार एक प्याले वा कटोरीकी शकल होती है उसी प्रकार इस खिलौनेका निचला भाग नं० १ निसान वाला है। यह मट्टीका बना हुआ है। क स्थान से लेकर ख तक काग़ज़का टोप गोल रूपका इस मट्टीकी कटोरीपर मढ़ा हुआ है। इसी चेतूको जब सुलाया जाता है तो यह सोना नहीं चाहता।
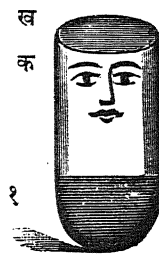
चित्र नं० १

सुलाकर हाथको परे करो तो यह झटसे अपने आप खड़ा हो जाता है। अपने आप खड़ा होता देखकर बच्चे बहुत प्रसन्न होते हैं।

जब गोपाल अपना खिलौना ले चुका तो हरिको भी फव्वारा लेनेकी चिन्ता हुई। वह भी आखें फाड़ फाड़कर देखने लगा कि फ़व्वारे वालेकी दूकान आवे। मुशकिलसे ५० क़दम बढ़े होंगे कि एक फव्वारे बेचने वालेकी दूकान उसको नज़र पड़ी। उसके हर्षकी कोई सीमा न रही, बड़े, छोटे, तरह तरहके मट्टीके बने हुए फव्वारे वहां रक्खे थे। हरिने दूकानदारसे पूछा कि इस छोटे फव्वारेकी क़ीमत क्या होगी। उसने कहा लालाजी वह झूठे दूकानदार हम नहीं हैं जो कहें कुछ और लें कुछ। आप दस दूकानें फिर देखो यदि हमारा माल सबसे अच्छा और मोल वाजिबी प्रतीत हो तो लेना नहीं तो आपकी मरज़ी। हरिका बाप भी साथ ही था उसने कहा बेटा यह दूकानदार कभी झूठ नहीं बोलता। आओ हम ले लें। एक आना उसने मोल कहा था सो देकर हरिने झट फव्वारा ले लिया। यह मट्टीका बना हुआ था, इसकी शकल चित्र २ में दी है। हरिने
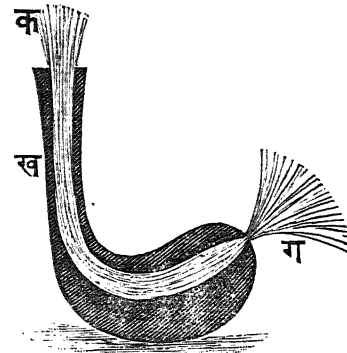
चित्र नं० ३

अपने बापसे कहा कि आप मुझे कृपा कर पानी ला देवें, मैं इस फव्वारेसे खेलूंगा। उसके पिता लोटेमें पानी भर लाये और हरि अपने हाथसे लोटा उठाकर क स्थानसे उस फव्वारेके अन्दर पानी डालने लगा। गोपालने ग स्थानकी टूंटी (छेद) उँगलीसे दबा रखी। जब फव्वारा क तक लबालब भर गया तब गोपालने उङ्गली उठाली। उँगली उठाते ही टोंटीसे पानीकी धार पहिले ऊपरको जा फिर नीचे गिरने लगी और सब ही कहने लगे "अजी फव्वारा तो ख़ूब छूटा क्या कहना? वाह! वाह! वाह!"

[ असमाप्त ]

## गुरुदेवके साथ यात्रा

[ अनु० महावीरप्रसाद, बी. एस-सी, एल. टी. ]

केम्ब्रिज

विज्ञानकी उन्नति और प्रचारकेलिए शायद इंगलैंडके किसी विश्वविद्यालयने इतना काम नहीं किया जितना केम्ब्रिज विश्वविद्यालयने। क्लार्क मैक्सवेल, रेले और जे० जे० टाम्सन जैसे प्रमुख वैज्ञानिकोंके समयमें उस विश्वविद्यालयने बहुत ऊंचा स्थान प्राप्त कर लिया है। रसायन विज्ञानके सम्बन्धमें देवरने यहां बहुत कुछ काम किया है। मिचेल फास्टर और लैंगले जैसे शरीर-धर्म विज्ञानके ( physiology ) धुरन्धर विद्वान् वहांसे निकले। इंगलैंडके भूतपूर्व प्रधान मंत्रीके भाई जे० बैलफ़ोरने गर्भ-विज्ञान सम्बन्धी कई महत्वके आविष्कार यहां ही किये। प्रमुख डार्विन भी इस विश्वविद्यालयका विद्यार्थी था, क्योंकि उसने क्राइस्ट कालेजसे उपाधि प्राप्त की थी और वनस्पति-विद्या-विशारद हेन्स्लोने उसकी वैज्ञानिक पिपासा बढ़ाई। इसके दो पुत्र जार्ज डारविन और फ्रान्सिस डारविन भी इस विश्वविद्यालयसे सम्बन्ध रखते थे। पहलेने ज्योतिष-सिद्धान्त और दूसरेने वनस्पति-शरीर-धर्म विज्ञानकी ( physiological botany ) अपने मूल लेखोंकेद्वारा बहुत कुछ पूर्ति की। सर फ्रान्सिसने तो अपने पिताके वानस्पतिक खोजोंमें बहुत कुछ हाथ बंटाया था। प्रसिद्ध वनस्पति विद्याविशारद वाइन्स भी यहां कई वर्षतक रहा है और यहींसे आक्सफ़ोर्डकी वानस्पतिक प्रयोगशालाका प्रबन्ध करनेकेलिए गया।

इससे प्रकट है कि केम्ब्रिजमें वैज्ञानिक आविष्कारोंकेलिए बड़ाई पानेसे ऊंचा और कोई सन्मान नहीं है। जब गुरुजी इंगलैंड शिक्षा प्राप्त करनेकेलिए गये थे तब उन्होंने केम्ब्रिजमें ही शिक्षा पायी थी। शायद यही प्रथम भारतीय विद्यार्थी थे जो विज्ञानकी शिक्षा प्राप्त करनेकेलिए केम्ब्रिज गये थे। उस समय ऐसा कोई नहीं था जो गुरुजीको पाठ्य विषयोंके चुननेमें सलाह दे सकता। इसलिए उन्होंने सबसे सरल रीति यह निकाली कि जितने प्रकारके व्याख्यान कालेजोंमें दिये जाते थे सबमें उपस्थित होने लगे। इस प्रकार भौतिक और रसायन विज्ञानके अतिरिक्त उन्होंने पशु-विज्ञान सम्बन्धी व्याख्यान सिजविकसे, गर्भविज्ञानके व्याख्यान बैलफ़ोरसे, शरीर-धर्म-विज्ञानके व्याख्यान मिचेल फोस्टरसे और वनस्पति विज्ञानके व्याख्यान वाइन्ससे सुने। हर शनिवारको अध्यापक ह्यूजेज़के साथ भूगर्भ सम्बन्धी खोजोंकेलिए वह बाहर निकल जाते थे।

ऐसा परिश्रम बहुत दिनतक नहीं किया जा सकता। अतः एक वर्षके पश्चात् वह बीमार पड़ गये और तदनन्तर थोड़ेसे विषयोंको लेकर उन्हींमें विशेष योग्यता प्राप्त करनी पड़ी। परन्तु एक वर्षके टटोलनेसे अन्तमें इनको बड़ा लाभ हुआ क्योंकि इससे विज्ञानकी बहुत सी शाखाओंमें रुचि उत्पन्न हो गयी जिससे वह उस समन्वयात्मक कामकेलिए प्रौढ़ हो गये जिसकी ओर उनकी प्रवृत्ति स्वभावसे ही थी।

गुरुजीके अन्वेषणोंकी ओर केम्ब्रिजके वैज्ञानिकोंका ध्यान बहुत रहा है। पहले भौतिक विज्ञानके विद्युत्-तरंगोंके सम्बन्धमें अन्वेषण किया गया था जिसका वर्णन जे० जे० टाम्सनने स्वयम् इन्सैक्लोपीडिया ब्रिटानिकामें किया है। शरीर धर्म-वैज्ञानिकों और वनस्पति-विद्या-विशारदोंका ध्यान भी गुरुजीके जीव-विज्ञान सम्बन्धी प्रयोगोंपर उसी प्रकार आकृष्ट रहा है। गुरुजीके प्रयोगोंकी ओर लोगोंकी रुचि इतनी बढ़ गयी थी कि वानस्पतिक विभागने यह सुनते ही कि गुरुजीका इंगलैंड जाना संभव है विशेष प्रबन्ध करके भारतवर्षसे वह मिट्टी मंगायी जिसमें गुरुजीके प्रयोगमें आने योग्य पौदे लगाये जा सकें। जिस समय गुरुजी आङ्गलदेशमें पहुंचे, विश्वविद्यालयमें व्याख्यान

देनेकेलिए उन्हें हार्दिक निमन्त्रण दिया गया और व्याख्यानकी तिथि १६१४ ई० की २ री जून नियत की गयी।

यह हम जानते थे कि केम्ब्रिजके वानस्पतिक उद्यानके ताप-भवनमें हमारे कामके पौदे विशेष प्रबन्धसे लगाये गये हैं, तथापि हम भारतीय पौदोंको अपने साथ ही केम्ब्रिज लेते गये। इस दूरदर्शिताका परिणाम बहुत अच्छा हुआ। शायद लोग समझते होंगे कि जूनका महीना ग्रीष्म ऋतुके मध्यमें पड़ता है, इसलिए पौदे अच्छी अवस्थामें रहते होंगे परन्तु हम लोग जब वहां पहुंचे, शीतसे कांप रहे थे। वानस्पतिक उद्यानमें पहुंचनेपर मालूम हुआ कि जो पौदे वहां लगाये गये थे वह बहुत ही क्षीण और दुर्बल थे और हमारे कामके न थे। इसलिए हम अपने पौदोंको वानस्पतिक प्रयोगशालाके ताप भवनमें ले गये जिससे वह दूसरे दिनके व्याख्यानमें काम दे सकें। यहां हमको वह सेवक मिला जो ३० वर्ष पहले भी इसी प्रयोगशालामें काम करता था जब गुरुजी विद्यार्थी थे। उस समय वानस्पतिक प्रयोगशालाके अध्यापकोमें भी अनूठा वानस्पतिक जमाव था। वाइन्स[१] अध्यापक थे, ओक[२] निर्देशक ( demonstrator ) और त्रिमूर्त्तिकी पूर्तिकेलिए श्रब[३] सेवक थे। पशु-विभाग भी होड़ लगानेमें किसी प्रकार कम नहीं था। यहांके अधिकारियोंमें भी एक लैम्ब*; दो पीकाक† और एक जोड़ी फ़ाक्स‡ की थी। गुरुजी बूढ़े मिस्टर श्रबको देखकर बड़े प्रसन्न हुए। यह महाशय उस समयतक बड़े हट्टे कट्टे थे। इनसे हम लोगोंको पौदोंकी देख रेखमें बड़ी सहायता मिली।

जो दिन व्याख्यान देनेकेलिए नियत किया गया था वह प्रयोगोंकेलिए बिलकुल ठीक न था। शीत और अन्धकार तो था ही, सांवनकी सी झड़ी भी लग रही थी। वानस्पतिक व्याख्यान-शालाके एक किनारे व्याख्यानवाली मेज़ थी और बैठनेकी गैलरी दुमंज़िले तक पहुंच गयी थी। वन चांड़ालके स्पन्दन और ओषधियोंके प्रभावसे प्रतिक्रियाके स्वतः प्रवृत्त लेखनोंका निर्देशन भी उस सायंकालको दिखाए जानेवाले प्रयोगोंमेंसे मुख्य प्रयोग था। व्याख्यानके दो घंटे पहले मैंने पौदेको यंत्रमें लगा दिया। इस समय पौदा ज़ोरसे स्पन्दन कर रहा था। परन्तु आध ही घंटेमें शीतकी तीक्ष्णता और कुहरेके अंधकारके कारण स्पन्दन रुक गया और पौदा ठिठर गया। ऐसी दुर्घटनासे हमारी निराशा चरम सीमातक पहुंच गयी। गुरुजीको एकाएक यह सोचना पड़ा कि व्याख्यानका विषय कैसे बदल दिया जाय। व्याख्यानके कुछ पहले गुरुजीने निराश होकर स्तब्ध पौदेको एक उत्तेजक दे ही दिया और मुझसे कह दिया कि व्याख्यानके मध्यमें यह सूचना दूं कि इसका कुछ प्रभाव पड़ा या नहीं।

सौभाग्यसे दस मिनटका समय हमें अकस्मात् और मिल गया। बात यह थी कि व्याख्यानके सुननेकेलिए लोग इतना उत्सुक थे कि यद्यपि व्याख्यानशाला अध्यापकों और उच्च विद्यार्थियोंसे तो भर गयी थी परन्तु जो विद्यार्थी ट्राइपोस* की (Tripos) परीक्षा देनेकेलिए बैठे थे उन्होंने आग्रहपूर्वक प्रार्थना की कि यदि व्याख्यान दस मिनट पीछे आरम्भ किया जाय तो वह सब भी व्याख्यान सुननेकेलिए परीक्षालयसे वानस्पतिक

१ वाइन्स अध्यापकका नाम था और यह अंगूरकी लताओंका भी नाम है।

२ ओक अध्यापकका नाम था और एक वृक्ष विशेषका भी नाम है जो डीलमें बहुत बड़ा होता है और ईसाइयोंमें वैसा ही पूज्य समझा जाता है जैसे हिन्दुओंमें वर्गद, पीपल इत्यादि।

३ श्रब अध्यापकका नाम था और झाड़ियोंको भी कहते हैं। यह तीनों नाम यहां श्लेषात्मक हैं।

* लैम्ब, †पीकाक और ‡ फ़ाक्स भी यहां श्लेषात्मक हैं। अधिकारियोंके नामके अतिरिक्त क्रमानुसार इनके अर्थ बकरीका बच्चा, मोर और लोमड़ी हैं।

*ट्राइपोस भारतके बी. ए.के समान एक परीक्षाका नाम है।

प्रयोगशालामें सीधे ही दौड़कर पहुंच सकेंगे। सर फ्रांन्सिस डार्विन, प्रो० सीवर्ड, और प्रोफ़ेसर ब्लैक मैन और अन्य सज्जन सबसे आगे बैठे हुए बड़ी उत्सुकताके साथ बाट जोह रहे थे। आरम्भ में गुरुजीको उस यन्त्रका सिद्धान्त समझाना था जिसका उन्होंने स्वयम् आविष्कार किया था। इसके मुख्य अंग 'स्लाइड' द्वारा पर्देपर दिखाने थे। मेजिक लालटेन वैज्ञानिक कार्य्यालयके एक कुशल कारीगरके सुपुर्द की गयी थी। व्याख्यान आरम्भ कर चुकनेपर गुरुजीने पर्देपर पहले स्लाइडका चित्र दिखानेका इशारा किया। परन्तु पर्दा सफाचट ही रहा। दूसरी बार इशारा करनेपर भी कुछ न हुआ। तब जिसके सुपुर्द काम किया गया था उसने कहा कि आर्क-लम्प कहीं बिगड़ गया है, ठीक करनेकेलिए श्रोतागणको थोड़ा समय देना पड़ेगा। गुरुजीने तुरन्त ही यह बात ऐसे पलट दी कि जिससे मुझे बड़ा लाभ हुआ। उस समय मैं चिन्ता और निराशासे कांप रहा था क्योंकि बन चांड़ाल मूर्छित ही बना रहा। गुरुजीने कहा कि आर्क-लम्पका आविष्कार ६० वर्ष पहले हुआ था और इस समयतक साधारण कारीगर भी उसके कल पुर्ज़ोंसे अच्छी तरह परिचित हो गया है, परन्तु आश्चर्य है कि जिस वैज्ञानिक कार्यालयसे सारे संसारको सूक्ष्मसे सूक्ष्म यंत्र परख परखकर भेजे जाते हैं उसीमें ऐसा साधारण यंत्र एक कार्यकुशल कारीगरके हाथमें भी ठीक समयपर काम न दे सका। तब क्या श्रोतागण व्याख्यातासे इस बातकी आशा कर सकते हैं कि संसारके दूसरे छोरसे भोले भाले और लजीले पौदे जो ऋतुकी तीक्ष्णताको भी नहीं सह सकते लावे और उनसे उन सब प्रश्नोंका उत्तर दिलावे जो उनसे किये जायं। गुरुजीने कहा यह बर्ताव निस्सन्देह उससे भी ख़राब है जो उस तोतेके साथ किया गया था, जिसने यह शिकायत की थी कि उसको केवल दुख ही नहीं पहुंचाया गया वरन् उसका अपमान भी किया गया था क्योंकि उसको केवल अपनी जन्मभूमि ही नहीं छोड़नी पड़ी, वरन् उसे अंग्रेज़ी बोलनेकेलिए भी मजबूर किया था। इससे लोग धीमे पड़ गये और विद्यार्थियोंने बड़ी प्रशंसा की। उनको यह भली भांति मालूम हो गया कि जिन घटनाओंका गुरुजी निर्देशन करना चाहते हैं वह कैसी टेढ़ी और पेंचदार हैं। ऐसे प्रयोग जनसाधारणके सामने व्याख्यानमें कभी नहीं किये जा सकते। यह प्रयोगशालामें ही किये जा सकते हैं और उस समय जब शरीर धर्म सम्बन्धिनी अवस्थाएं अनुकूल हों।

इसी समय पौदेमें दो एक बार सहसा स्पन्दन हुआ जिससे मुझे प्रतीत होने लगा कि शायद यह अपनी मूर्च्छा त्यागनेका प्रयत्न कर रहा है। स्पन्दन-क्रिया बढ़ने लगी जिससे प्रकट होता था कि जो उत्तेजक २० मिनट पहले दिया गया था उसका प्रभाव अब पड़ रहा है। मुझे इस बातकी गुरुजीको सूचना देनेकी आवश्यकता न पड़ी क्योंकि गुरुजीको मेरे चेहरेसे ही मालूम हो गया कि पौदा हम लोगोंको धोका न देगा। अब वह ऐसे बोलने लगे मानो वाग्देवी उनकी जिह्वापर बैठी हुई थीं, श्रोतागणकी उत्तेजना बढ़ गयी और व्याख्यानके अन्तमें प्रोत्साहक करतलध्वनि बहुत देर तक होती रही।

श्रोताओंको ओरसे सर फ्रान्सिस डार्विनने गुरुजीके व्याख्यानोंका महत्व बतलाते हुए एक बड़ी ओजस्विनी वक्तृता दी। उन्होंने कहा कि गुरुजीके महत्वपूर्ण कामकेलिए ही नहीं वरन् उन प्रयोगोंको ठीक ठीक दिखा देनेकेलिए भी जिनसे शंकाकी जड़ ही उखड़ जाती है और जो गुरुजीके सिद्धान्तोंको ठीक प्रमाणित करते हैं लोग प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकते। उन सबके चित्तमें यह जम गया कि डाक्टर बोस ऐसे सिद्ध हस्त प्रयोगकर्त्ता, कार्यकुशल और तीक्ष्ण बुद्धिके मनुष्य बहुत कम पाये जाते हैं। लोगोंको यह भी स्मरण दिलाया कि डाक्टर बोसको अकेले ही

काम करना पड़ा है और मिस्त्रियोंकी भी उचित शिक्षा देकर उनसे अपूर्व सूक्ष्म और शुद्ध यन्त्र बनवाने पड़े हैं। डाक्टर बोसके सिद्धान्तोंका प्रभाव वनस्पति-शरीर-धर्म विज्ञानपर ही नहीं पड़ा है, वरन् विज्ञानकी और शाखाओंमें भी वह बड़े उपयोगी होंगे। भविष्यमें जो काम वह करेंगे उससे भी विज्ञानको बड़ा लाभ पहुंचेगा।

वीना

गुरुजीके आविष्कारोंसे जर्मनी, अस्ट्रिया और फ्रान्समें इससे भी अधिक उत्सुकता उत्पन्न हुई। हालीके प्रसिद्ध वनस्पति-विद्या-विशारद अध्यापक प्रिंगशीमने जर्मनीके एक प्रमुख वैज्ञानिक पत्रमें गुरुजीके जन्तु-विज्ञान सम्बन्धी आविष्कारोंपर अत्यन्त प्रशंसात्मक आलोचनाकी। इसपर गुरुजीको यह लिखकर हार्दिक निमन्त्रण दिया गया कि उनके महत्वपूर्ण कामकी लोगोंने बड़ी प्रशंसा की है और उनके अपूर्व यन्त्रोंकी प्रदर्शिनी जर्मनीके जीवन-विद्या-विशारदोंको अत्यन्त रोचक होगी। १९१४ ई० के अगस्त मासमें वनस्पति-विद्या-विशारदोंका एक अन्तर्जातीय सम्मेलन म्यूनिचमें होने वाला था। गुरुजीके व्याख्यान और प्रयोगोंकेलिए एक दिन विशेष प्रकारसे अलग कर दिया गया। म्यूनिचकी वानस्पतिक प्रयोगशाला दुनियामें सबसे प्रसिद्ध समझी जाती है क्योंकि इसी प्रयोगशालाके निमित्त वानस्पतिक सामग्री जुटानेकेलिए अध्यापक गीबेलको (Goebel) तीन बार पृथ्वीका चक्कर लगाना पड़ा था। इसी अध्यापक गीबेलने गुरुजीको लिखा कि हमारे पौदोंकेलिए विशेष प्रबन्ध किया गया है। हम लोग वहां ९ अगस्त १९१४को जानेवाले ही थे कि वीनाके विश्वविद्यालयसे निमन्त्रण मिला। यह विश्वविद्यालय भी जीवन-विद्या और ओषधि विद्या सम्बन्धी विज्ञानकेलिए अच्छोंमें गिना जाता है। वानस्पतिक विभागके अध्यक्ष अध्यापक मोलिश Prof. Molisch थे, इनके प्रकाशमान जीवाणु और मिश्रित वनस्पति plant complex सम्बन्धी आविष्कार प्रमाण समझे जाते हैं। इन्हीं महाशयने अपने विश्वविद्यालयकी ओरसे गुरुजीको सानुरोध निमन्त्रण भेजा जिसमें लिखा था कि वीना निवासी वैज्ञानिकोंको गुरुजीका व्याख्यान सुननेकी बड़ी लालसा है क्योंकि इससे उनको बहुत कुछ शिक्षा मिलेगी। हम लोगोंने निश्चय कर लिया कि पहले वीना जाना चाहिए और फिर जर्मनीके प्रसिद्ध विश्वविद्यालयोंमें व्याख्यान देने चाहिएँ।

वीनाकेलिए हम लोग १९१४ की २४ जूनको चल पड़े। यात्रा बहुत लम्बी करनी पड़ी। विशेष कठिनाई पिंजरेमें बन्द पौदोंको और यंत्रोंको साथ ले जानेमें थी क्योंकि इन्हें हम लोग आंखकी ओट नहीं करना चाहते थे। Orient express ओरिएंट एक्स्प्रेसमें एक विशेष डिब्बा रिज़र्व कराना पड़ा। रास्तेमें अद्भुत पिंजरा और यंत्रोंका सन्दूक़ सबके मनको खींच लेता था और जिन स्टेशनोंपर गाड़ी कुछ देरतक रुकती थी वहीं खिड़कीके सामने ख़ासी भीड़ इकट्ठी हो जाती थी, जिसमें सिपाही और सैनिक अफ़सर भी देख पड़ते थे।

रास्तेमें और भी बहुतसे अनुभव हुए जो अब बड़े महत्वके जान पड़ते हैं। मुझसे एक अस्ट्रिया निवासीकी गाड़ीके बरामदेमें भेट हुई जो मित्रता करनेके लिए ही हमारे पास आया था। वह बहुत अच्छी अंग्रेज़ी बोलता था और उसकी बात चीतसे जान पड़ता था कि वह भारतवर्षका अच्छा ज्ञान रखता है यद्यपि वह यहां कभी नहीं आया था। रेलपर लम्बी यात्रा करनेकी कठिनाई ऐसे सज्जनके मिलनेसे बातचीतमें बहुत कम प्रतीत हुई। जब यह कहा गया कि गुरुजी ब्रिटिश सरकारकी ओरसे वैज्ञानिक व्याख्यान देनेकेलिए वीना जा रहे हैं तब उसने इंगलैंडके व्यवहारिक विज्ञानमें बहुत पिछड़े हुए होनेके विषयमें बुराई की। उसने कहा कि सारे उद्योग और धंधे वस्तुतः जर्मनी और अस्ट्रियाके हाथमें आगये हैं

और बहुतसे कामोंमें अंग्रेज़ी अफ़सर वैज्ञानिक बातोंमें बहुत पिछड़े हैं। उसके दो बेटे सेनामें थे। एक तो कप्तान था और दूसरा लफ़टंट। परंतु सेनामें भर्ती होनेके पहले ही वे रसायन विज्ञान-का अध्ययन कर चुके थे और सेनामें भी गवेषणाएं करते ही जाते थे। उन्हें युद्धविद्या सम्बन्धी व्यवहारिक विज्ञानमें कई परीक्षाएं भी जो समय समयपर ली जाती हैं पास करनी पड़ती थीं।

जब हम लोग लिपज़िकके पास पहुंच रहे थे एकाएक कुछ उड़ती हुई मशीनें देख पड़ीं जो आकाशमें चिड़ियोंके झुंडके समान मड़राती थीं और बहुतसी युद्धसंबंधी पेचीली क़वायद करती थीं। कोई अपने अड्डेमेंसे बाहर निकलकर उड़ती थी और कोई भीतर जाती थी। ऊपर दो बड़े ज़ेपलिन भी दिखाई पड़े जो ऐसे मालूम होते थे मानों नीचेके देशपर अधिकार जमाए हुए हैं। यह उस समयकी बात है जब शान्ति देवीका अटल साम्राज्य था। उस समय हमें आश्चर्य होता था कि इतने उड़नेवाले अंजनोंको इकट्ठा करनेका क्या उद्देश्य हो सकता है।

२६ तारीखको प्रातःकाल वीनामें पहुंच गये जहां अध्यापक मोलिशने हम लोगोंका हृदयसे स्वागत किया।

विश्वविद्यालय-भवन बड़ा विशाल है और यूरोपके अच्छे अच्छे महलोंमें गिना जाता है। अंडर-ग्रेजुएटों ( उपाधि परीक्षाकी तैयारी करने वालों ) की संख्या सात आठ हज़ारसे कम न होगी। हम लोगोंका सदासे यह विचार था कि अस्ट्रियाका राज्य एक राजाके अधीन है और इसकी प्रजा कट्टर धर्म्मावलम्बियोंके पंजेमें है। इसलिए हमें पूरा विश्वास था कि विश्वविद्यालयका प्रबन्ध बहुत उन्नतिशील न होगा। यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि स्त्रियां भी कालेजोंमें शिक्षा पारही हैं और उनके लिए वैसी ही सुविधाएं रखी गयी हैं जैसी पुरुषोंकेलिए। हम लोगोंको इसका विचार भी नहीं था क्योंकि उन्नतिशील और स्वतंत्रता प्रेमी इंगलैंडमें भी आक्सफ़ोर्ड तथा कैम्ब्रिजमें स्त्रियोंको उपाधि प्राप्त करनेका अधिकार नहीं दिया गया था।

हम समझते थे कि राजातंत्र राज्यमें विश्वविद्यालयके विद्यार्थी भी बड़े कादर और सीधे-सादे होंगे परंतु अनुभव इस विचारके प्रतिकूल हुआ क्योंकि जिस दिन हम लोग पहुंचे उसी दिन देखा कि विश्वविद्यालय एक प्रकारसे घेर लिया गया है। यह प्रकट हुआ कि एक जेसुइट पादरी विश्वविद्यालयका रेक्टर नियुक्त किया गया था परंतु विद्यार्थियोंकी सारी मण्डली चाहती थी कि उनके पढ़ने लिखने और वैज्ञानिक उन्नतिके काममें पादरीको हस्तक्षेप करनेका कुछ भी अधिकार न दिया जाय, क्योंकि इससे स्वतन्त्र और उन्नतिशील शिक्षा न दी जा सकेगी। यही बात वे प्रकट कर देना और विश्वविद्यालय-भवन-में बलपूर्वक घुसकर दफ़्तरोंको तहस नहस कर डालना चाहते थे। इस चढ़ाईको रोक रखनेके-लिए विशेष प्रबन्ध करना पड़ा था। इसलिए विद्यार्थियोंने अपना क्रोध दो चार खिड़कियां तोड़ ताड़कर शान्त किया और तब चुपचाप घर लौट गये।

( असमाप्त )

---

## परमाणुक जीव अर्थात् जीवाणु *

( Micro-organisms )

[ ले० तेजशंकर कोचक बी. ए., एस-सी ]

### १—रूपावली और जीवन चरित्र

(Morphology and Physiology )

अब हम यह बतलाना चाहते हैं कि जीवाणुओंके कितने रूप रूपान्तर होते हैं, ये कैसे उत्पन्न होते हैं, और उनका कैसे पालन, पोषण और वृद्धि होती है। जीवाणु अपने आप ही अनायास नहीं पैदा हो जाते वरन् अन्य जीवधारियोंकी भांति यह भी सजातीय

* विज्ञान भाग ४ संख्या २ पृष्ठ ७० से सम्मिलित।

प्राणियोंसे उत्पन्न होते हैं। इनको भी नानाप्रकारके व्यञ्जन जीवन निर्वाहके लिए अन्य प्राणियोंकी भांति चाहिएँ।

ठंडे देशके रहनेवाले जब गरम देशमें आते हैं तो उनकी चेष्टा और रंगरूपमें अन्तर आजाता है, उसी भांति आबहवा और आहारके प्रभावसे इनका भी रूप प्रायः बदल जाया करता है। हम पहले यहांपर इनके साधारण रूपका वर्णन करेंगे।

विन्दु या विंदवाकार ( Coccus )
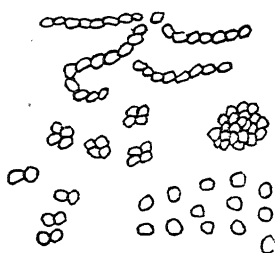
[ देखिये चित्र १ ] जिन जीवाणुओंका रूप बूंदियोंका ऐसा होता है उनको ( Coccus कोकस) विन्दु कहते हैं। इनका आकार इतना छोटा होता है कि यदि एक रेखामें एक दूसरेसे सटे हुए

चित्र नं० १

क़तार बांधकर खड़े कर दिये जायँ तो पच्चीस हज़ारके लगभग एक इंचमें आयँगे। इसी प्रकार एक वर्ग इंचमें बासठ करोड़के लगभग आयँगे। परन्तु इनकी लम्बाई निश्चित नहीं है। कभी उपरोक्त लम्बाईसे छोटे भी मिलते हैं और कभी बड़े भी। कभी कभी दो दो या चार चारके जुट्ट मिले हुए दिखलाई देते हैं। दो वाले जुट्टको द्विविन्दु ( Diplococcus ) और चारवालेको चतुर्विन्दु ( Tetrads ) कहते हैं। कभी कभी अंगूरके गुच्छेके समान मालूम होते हैं। इनको विन्दुराशि ( Streptococcus ) कहते हैं। कभी कभी बहुतसे विन्दु एक दूसरेमें ज़ंजीरके समान गुथे रहते हैं। एक लड़में छः विन्दुओंसे लेकर चालीस विन्दुओंतकका होना सम्भव है। विन्दु जीवाणु अचर ( Nonmotile ) होते हैं यह इधर उधर चलते फिरते नहीं दिखलाई देते।

शलाका ( Bacillus )

जो जीवाणु, अणुवीक्षण यंत्रसे देखनेसे छोटे छोटे दंडोंकी सदृश दिखाई पड़ते हैं [ देखिये चित्र २ ] उनको शलाका या शलाकाकार ( Bacillus
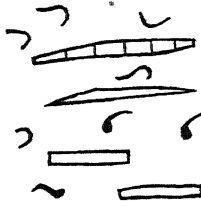
चित्र नं० २
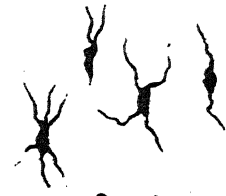
चित्र नं० ३

वेसीलस ) कहते हैं। इनके सिरे कभी नुकीले कभी गोल और कभी चौकोर होते हैं। इनके ऊपर बहुधा एक प्रकारकी (Capsule) थैली चढ़ी होती है। इनमें ( Polymorphism ) बहुरूपत्व बहुधा दिखाई देता है। बहुरूपत्वका क्या अर्थ है यह आगे चलकर बतलाया जायगा।

कर्षण्याकार या लहरी ( Sipirillum )

यह बहुत छोटे छोटे पेचदार, सेमईके लच्छोंकी भांति होते हैं। कभी कभी सेमईके टुकड़े जैसे, कोमाके समान भी होते हैं। [ देखिये चित्र नं० ४ ] उच्चजीवाणुओंमें और अन्य जीवाणुओंमें
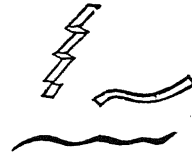
चित्र नं० ४

कई भेद हैं। अणुवीक्षण यंत्रसे देखनेसे मालूम होता है कि इनके शरीरमें एक प्रकारके ( Flagella ) डान्डसे लगे होते हैं और इनका शरीर एक थैलीके अन्दर बंद होता है। इनकी उत्पत्ति भी निराली है।

बहुरूपत्व ( Polymorphism पोलीमोरफ़िज़्म )

कई प्रकारके जीवाणुओंमें यह पाया गया है कि यदि उनको एक प्रकारके आहारमेंसे निकालकर दूसरे आहारमें डालदें तो उनका रूप बदल जाता है। बहुधा ऐसा भी होता है कि यदि फिर पहिले ही आहारमें डाल दिये जायँ तो अपना पहिला ही रूप फिर धारण कर लेते हैं। इस गुणको ही बहुरूपत्व कहते हैं।

शरीरके अवयव

दूसरा यह प्रश्न उठता है कि इन जीवाणुओंके

शरीर किन तत्वोंसे बने हैं। इनमें नैट्रोजन, कारबन, उज्जन और बहुतसे खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। बहुधा जीवाणु थैलीमें बन्द होते हैं। इस थैलीके बीचोंबीच एक प्रकारका गूदा होता है जिसको हम ( mycroprotien ) जीवविन्दु कहते हैं। यह जीवविन्दु एनिलीनके रंगसे रंगा जा सकताहै,और इसकी थैलो सेलुलोज़* (cellulose) की होती है। जीवविन्दुमें बहुधा गंधक, माड़ लोहा इत्यादि मिलते हैं। जीवाणुकी थैली जीवविन्दुकी रक्षाकेलिए होती है। एक पानीकी बूंद किसी गन्दे स्थानसे उठा लो और दलपर रखकर कांचके टुकड़ेसे ढ़क दो। अणुवीक्षणयंत्रमें रखकर तैल निमग्न तालसे देखो। इसमें चार प्रकारकी दशाएँ मिलेंगी।

( १ ) कुछ जीवाणु आगे पीछे तो हटते नहीं दिखलाई देंगे पर जिस स्थानपर हैं वहीं पर थर्राते हुए ( Brownian dance ) मालूम होंगे।

( २ ) कुछ सांपकी तरह लहराते ( undulatory ) हुये दिखलाई देंगे।

( ३ ) कुछ चक्कर खाकर (rotatory) नाचतेहुये मिलेंगे।

( ४ ) वाक़ीके झपटकर आगे चलते ( progressive ) दिखलाई देंगे।

बहुधा दलके गरम करनेसे, या जिस माध्यममें जीवाणु हैं उसमें उनका आहार डालदेनेसे, जीवाणुओंका थर्राना, लहराना, झपटना अधिक बेगके साथ होने लगता है। प्रायः जीवाणुओंमें [ देखिये चित्र ३ ] एक भांतिके सूत ऐसे निकले रहते हैं जिन्हें हम डान्ड (flagella) कहते हैं। शायद यह जीवाणु अपने शरीरोंको तरल पदार्थोंमें इन डाडोंकी सहायतासे नावके समान चलाते हैं।

इनकी उत्पत्ति तीन प्रकारसे होती हैः—

१—विकसन (budding)-पहले जीवाणुमें एक विंदुसा पैदा होता है जो बढ़ता जाता है, यहांतक कि उस जीवाणुके बराबर हो जाता है। इस अवस्थामें इसके दो टुकड़े हो जाते हैं, जिनमें प्रत्येक एक जीवाणु होता है। चित्र ५ में चार अवस्थाएँ एक जीवाणुकी बतलाई हैं। (१) में साधारण जीवाणु है, ( २ ) में इसी जीवाणुपर एक छोटासा विंदु पैदा हो गया है। ( ३ ) में यह छोटा विंदु बढ़कर पहले विंदुके बराबर हो गया है। ( ४ ) में यह बढ़ता हुआ विन्दु असली विन्दुसे अलग होकर एक नया स्वतंत्र जीवाणु हो गया है।

चित्र नं० ५

२—फटन (division) बहुधा जीवाणु इसी प्रकार उत्पन्न होते हैं। इनके थैलोंमें एक प्रकारकी खोंचसी लगी दिखलाई देती है। [ देखिये चित्र ६ ] यह खोंच बढ़ती चली जाती है। इस प्रकारसे इनकी उत्पत्ति बड़ी जल्दी जल्दी होती है। लगभग आध घंटेमें एक जीवाणसे दो उत्पन्न हो जाते हैं और इसी प्रकार दोके चार हो जाते हैं। कूनने हिसाब लगाया है कि अगर कोई हानिकारक दशा न पैदा हो जाय और उत्पत्ति इनकी बराबर होती चली जाय तो चौबीस घंटेमें एक जीवाणुसे पौने दो करोड़ जीवाणु उत्पन्न हो सकते हैं और सातदिनमें अगर यों ही उत्पत्ति बराबर होती रही तो इतने पैदा हो जायँगे कि एक जीवाणुकी सन्तति तोलमें दो लाख मन होगी। परंतु इनको निर्भीक उत्पन्न होनेके लिए कभी सावकाश नहीं मिलता।
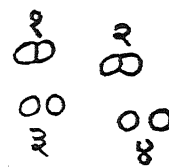
चित्र नं० ६

३—दानोंद्वारा (sporation)—तीसरी रीति इनके उत्पन्न होनेकी यह है कि इनके शरीरमें एक भांतिका दानासा पैदा हो जाता है। यह फूलना शुरू होता है, और तीन चार घंटेमें थैली फाड़कर अलग निकल आता है। तदनन्तर वह एक स्वतंत्र जीवाणु

* सेलुलोज़ वह पदार्थसे, जिससे काग़ज़, काठ, रुई इत्यादि बने हैं।

होकर विचरने लगता है। [ देखिए चित्र ७ ]
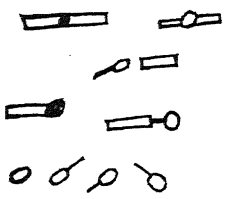
चित्र नं० ७

बहुधा इस प्रकार उत्पत्ति शलाकाकार जीवाणुओंमें होती है। इनमें जो दाना-सा उत्पन्न हो जाता है इसे गर्भ (spore) कहते हैं। एक शलाकाकार जीवाणुसे एक गर्भ होता है और एक गर्भसे एक ही जीवाणु पैदा होता है। बहुधा जब आहार नहीं होता और तापक्रम १६°श. से कम या ४०°श.से ज़्यादा होता है और नमी नहीं होती तो गर्भ कठिनाईसे उत्पन्न होते हैं। एक बात बहुत अच्छी तरहसे ध्यानमें रखनी चाहिये कि जितनी गर्मीमें शलाकाकार जीवाणु नष्ट होते हैं उतनेमें उनके गर्भ नष्ट नहीं होते। इनका नाश करनेकेलिए ऊँचा तापक्रम चाहिए।

### जीवाणुओंका आहार।

दूध इनका आदर्श आहार है। मुरदा मांस भी बहुत अच्छा आहार है। जीवित पशु या मनुष्यकी देहमें भी यह बड़े आनन्दसे अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इनको प्रयोगशालामें उत्पन्न करनेकेलिए बहुत प्रकारके व्यञ्जन बनाये जाते हैं। साधारण रीतिसे तीन प्रकारके आहार बड़ी सुगमतासे बनाये जा सकते हैं।

(१) चर्बी रहित मांस पानीमें उबालो और छन्ने कागज़से छानो, इसमें थोड़ासा नमक और बहुत थोड़ी सज्जी मिला कर और गरम करके शुद्ध कर लो।

(२) थोड़ासा दूध पानीमें डालो और इसमें अंगूरी शकर मिलाकर गरम करके शुद्ध कर लो।

(३) एक आलूको छीलकर (Mercury lotion) मरकरी लोशनसे धो डालो, फिर गरम करके शुद्ध कर लो और उसके टुकड़े काममें लाओ।

### जीवाणुओंपर तापक्रमका प्रभाव

बहुधा जीवाणु मनुष्यके तापक्रमपर अर्थात् ३८°श पर भली प्रकार जीवित रह सकते हैं। बरफ़में अर्थात् ०°श या इससे कम तापक्रमसे जीवाणु नष्ट नहीं होते। वे एक प्रकारसे सुन्न पड़ जाते हैं और फिर जब गर्मी होती है तो साधारण रीतिसे अपना जीवन व्यतीत करने लगते हैं। ७०°श. पर बहुत कम जीवाणु जीवित रह सकते हैं।

प्रकाशमें भी जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। जीवाणु तीन श्रेणियोंमें बांटे जा सकते हैं।

(१) वायव्य (aerolic)–वह जो वायुमें जीवित रह सकते हैं।

(२) अवायव्य ( anaerolic )–वह जो वायुमें जीवित नहीं रह सकते।

(३) सुखजीवी ( facultative )–वह जो हर दशामें जीवित रह सकते हैं। फिर कुछ ऐसे जीवाणु हैं जो केवल मृत शरीरपर ही जीवन निर्वाह कर सकते हैं। इनको मृत्भक्षी ( sprophyt e) कहते हैं। जो जीवाणु जीवित शरीरपर ही जीवित रह सकते हैं परोपजीवी (parasite) कहलाते हैं। जीवाणुओंका शरीरमें केवल प्रवेश कर जाना ही हानिकारक नहीं होता परन्तु इनके प्रवेश करनेके पश्चात् जीवाणुओंसे एक प्रकारका विष निकलना आरम्भ हो जाता है। इसे जीवाणुविष ( toxine ) कहते हैं। सब प्रकारके रोग इन विषोंसे ही पैदा होते हैं।

### शुद्ध करनेकी रीतियां ( Sterilising )

शुद्ध करनेकी तीन रीतियां हैं:—

१—हम पहले ही इस बातपर विचार कर आये हैं कि जीवाणुओंपर तापक्रमका क्या प्रभाव पड़ता है। ७०°श पर समस्त शलाकाकार जीवाणु मर जाते हैं।

जिस वस्तु या पदार्थमें इन जीवाणुओंको मारना हो उसे आध घंटेतक ७०°श पर गरम करना चाहिए। २१२° फ० अर्थात् १००°श पर एक घंटेतक गरम करनेसे कुल शलाका जीवाणु और उनके गर्भ नाश हो जाते हैं। अगर यह इच्छा हो कि वस्तुको उबलते पानीकी ताप हानि न पहुंचाने पावे तो ऐसी वस्तुको शुद्ध करनेकी एक सरल रीति यह है कि उसको किसी बर्तनमें इस तरहसे बंद कर दो कि उसमें किसी प्रकारसे वायु न जा

सके। फिर इस वर्तनको आध घंटेतक ७०°श तक गरम करो और फिर अलग उठाकर ठंडा हो जाने दो। दूसरे दिन फिर उसको सत्तर दर्जेकी तापमें गरम करो और अलग उठाकर रख दो। इसी प्रकार छः सात रोज़तक बराबर गरम करो। इस क्रियासे जीवाणु और उनके गर्भ सब नाश हो जायँगे, क्योंकि पहिले दिन जीवाणु नाश होंगे परन्तु उनके गर्भ नाश नहीं होंगे। दूसरे दिन जो कुछ जीवाणु गर्भोंसे पैदा होंगे वह नाश हो जायंगे। सम्भव है कुछ थोड़ेसे गर्भ बाक़ी रह जायं। तीसरे दिनके गरम करनेसे यह भी नाश हो जायंगे। इस प्रकारसे आशा है कि सात दिनके गरम करनेसे वस्तु बिलकुल शुद्ध हो जायगी।

इस बातको ध्यानमें रखो कि किसी वस्तुको सम्पूर्ण रीतिसे शुद्ध करना तभी सफल हो सकता है कि जब जीवाणु और उनके गर्भ दोनों नाश हो जायं।

२—किसी वस्तुके शुद्ध करनेकी दूसरी रीति यह है कि इसको किसी चीज़में छान लिया जाय। छन्ने नाना प्रकारके हैं परन्तु जीवाणु इतने छोटे होते हैं कि किसी साधारण छन्नेसे छानकर यह अलग नहीं किये जा सकते। केवल एक छन्ना है जिसे (Berkfield filter) बर्कफ़ील्ड फ़िल्टर कहते हैं। इसमें छाननेसे तरल पदार्थ बिलकुल शुद्ध हो जाते हैं। बर्कफ़ील्ड फ़िल्टर बिना रोग़न की हुई चीनीकी मिट्टीकी नलिका होती है।

३—शुद्ध करनेकी तीसरी रीति यह है कि ओषधियोंका प्रयोग किया जाय। इस विषयमें फिर कभी विचार किया जायगा।

परमेश्वरने भोजन वायु, जल, इत्यादि शुद्ध रखनेका, मनुष्यकी रक्षाके लिए, प्रबन्ध कर दिया है, जैसा कि नीचे दी हुई बातोंसे प्रतीत होगा।

(१) बहुधा यह देखा गया है कि जिस पदार्थके उपर एक जातिके जीवाणु जीवित रह सकते हैं उसपर और किसी जातिका जीवाणु सुगमतासे जीवित नहीं रह सकता।

(२) जीवाणुओंमें आपसमें बहुधा घोरसंग्राम हुआ करता है और यह सदैव एक दूसरेके नाश करनेपर कमर बांधे रहते हैं।

(३) संसारमें जितने जीवाणु हैं उनमेंसे बहुत ही कम संख्यामें मनुष्यको हानि पहुंचानेवाले हैं।

(४) वायु और प्रकाशमें हानिकारक जीवाणु बहुत कम जीवित रह सकते हैं।

(५) मनुष्य और पशुओंके शरीरमें परमेश्वरने अद्भुत शक्ति रखी हैं। जैसे कि जीवाणुसे जीवाणुविष (toxines) शरीरमें निकलना आरम्भ होता है उसीके साथ ही साथ मनुष्य और पशुओंके शरीरसे एक प्रकारका (antitoxine) प्रतिविष उसके काट करनेको निकलने लगता है और मनुष्य अगर सबल और तन्दुरुस्त हुआ तो जीवाणुविष और जीवाणु सबको नाश कर डालता है और किसी प्रकारकी पीड़ा शरीरमें नहीं होने पाती।

एक यंत्र भी जिसको हम शुद्ध करनी यंत्र (steriliser) कहते हैं वस्तुओंके शुद्ध करनेमें बड़ा उपयोगी सिद्ध होगा। विलायती शुद्ध करनी यंत्रका मूल डेढ़ सौ, दो सौ रुपयेके लगभग है। परन्तु देशी यंत्र आप बड़ी सुगमताके साथ बीस पचीस रुपयेमें बनवा सकते हैं। शुद्धकरनी यंत्रकी बनावट चित्रसे स्पष्ट समझमें आ जायगी।

अ–एक लोहेकी चद्दरका गोल बकस है

व–इसका ढकना है
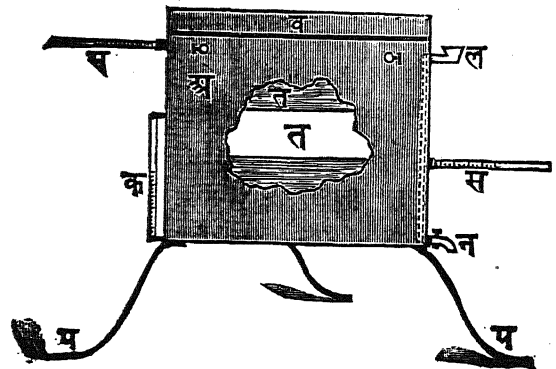
चित्र नं० ८

प प प–इसके तीन पाये हैं जिनके ऊपर यह रखा है।

स स–दो थर्मामीटर हैं

न–पानी निकालनेका टैप है

क–बकसके अन्दर पानीकी ऊंचाई बतलानेको माप नली है।

ल–कीप है जिसके द्वारा पानी बकसमें डालते हैं

त त–बकस काटकर बकसके अन्दरके तख़्ते दिखलाये गये हैं

इन्हींपर वस्तुओंको रखकर गरम करते हैं।

यह बात याद रखनी चाहिये कि पानीकी भापसे वस्तुएँ सूखी तापके मुक़ाबिलेमें बहुत ज़्यादा सुगमतासे और सम्पूर्ण रीतिसे शुद्ध हो सकती हैं। जिस चीज़को शुद्ध करना हो उसको बकस खोलकर तख़्तोंपर रख दो, ढकना दे कर बकसमें कीपसे पानी भर दो अगर ज़्यादा हो जाय तो टैप खोलकर निकाल दो। तिपाईके तले आग रखकर बकसको गरम करो।

---

## भारतीय बंकोंका भविष्य*

[ ले० गोपालनारायण सेन सिंह बी. ए. ]

"बंक ऑफ बम्बे" सन् १८६८में ही सट्टे और मनसूबे बाज़ीके फेरमें टूट गयी। सन् १६०६ में "अर्बूथनाथ" बंकका दिवाला निकला। एक पट्टीदारने तो आत्महत्या करली और दूसरे जो "नाइट" की पदवीसे सम्मानित और विभूषित किये गये थे जेलकी हवा खाने गये। अप्रैल सन् १६१३ में तीन यूरोपियन अफसरोंको कठोर कारागार वासका दण्ड हुआ। दोको २ सालके लिए और तीसरेको १८ महीनेकेलिए। यदि बंक सम्बन्धी विदेशी पदाधिकारियोंकी विशेष महिमा जानना है तो "हिन्दुस्तान रिव्यू" की १६१४ की जुलाईकी संख्या उठाकर देख लीजिये। बस उनकी व्यर्थकी सारी डींगकी पोल खुल जायगी और तब आपको अपनी वास्तविक स्थिति मालूम होगी और कार्यक्षेत्रमें बढ़नेका उत्साह होगा।

बंकोंके बुरेसे बुरे दिनोंमें भी, इसी बातके भरोसे कुछ लोगोंकी मतिगति नहीं बिगड़ी और जिस कालमें सब दिशाओंसे सरकारी हस्तक्षेप करने और बंकोंके ऊपर सरकारी निरीक्षण और पहरा बैठानेकी गूंज उठ रही थी, उस समय भी बड़ी धीरतासे उन्होंने इन ऊटपटांग प्रस्तावोंका विरोध किया।

बड़े लाटकी संस्थापक सभामें पारसाल फ़रवरीके महीनेमें जो बहस हुई थी उसका कुछ आशय ऐसा ही था। सर गंगाधर चितनवीसने यह प्रस्ताव उपस्थित किया कि बंकोंके टूटनेके कारणोंका अनुसन्धान करनेकेलिए एक कमेटी निर्माण हो। सर फज़लुल भाई करीमभाईने इसका विरोध किया और यह बतलाया कि यह सबपर प्रकट है कि दिवालिये बंकोंमें बहुतेरोंका व्यवहार जाल फ़रेब और धोखेका हुआ करता था पर विशेषकर उस समयमें (१६१३) धरोहर (डिपौज़िट) रखनेवालोंका घबराकर बंक से अपना रुपया काढ़ लेना ही बंकोंके पतनका कारण हो गया। इसके अतिरिक्त उन्होंने यह भी कहा कि सरकारकी ओरसे कभी कभी हिसाब जाँचनेके सिवा कोई छेड़ छाड़ करनेमें भारतीय बंकोंको लाभके स्थानमें हानिकी ही संभावना है।

उसी अवसरपर सर इब्राहीम रहमतुल्लाने, जो बम्बईके एक प्रतिष्ठित व्यापारी हैं और इन्डियन मुस्लिम लीगकी अन्तिम बैठकके सभापति भी हो चुके हैं, अपनी सम्मति दी कि छोटे स्वदेशी बंकोंको विदेशी प्रेसीडेन्सी बंक और एक्स्चेन्ज बंकोंके साथ स्पर्द्धा सहन करनेमें बहुत

* विज्ञान भाग ४ संख्या २ पृष्ठ ६७ देखिये।

असुविधा और हानि होती है। एक ओर देशी बंकोंको अनेक विघ्न बाधाओंके बीच काम करना पड़ता है, दूसरी ओर प्रेसीडेन्सी बंकको अनेक प्रकारसे सरकारी सहायता पहुंचती है। सरकारी कोषसे उन्हें बड़ी रक़में धरोहरके रूपमें मिलती हैं। उनकी बढ़ती और अभ्युदयका मुख्य कारण उनका सरकारके साथ इस सम्पर्कका होना तथा बहुत लोगोंका यह मिथ्या भ्रम है कि उनके बेठ जानेपर सरकार उनकी देनदारी अपने ऊपर ले लेगी। इसी नाम और ख्यातिपर करोड़ों रुपये विदेशी प्रेसीडेन्सी बंकोंमें जमा हुआ करते हैं और बेचारे देशी बंकवाले, जो उनसे कम सच्चे और प्रतिष्ठित नहीं हैं, बैठे हुए बेकारीके दिन गिनते हैं।

हम ऊपरकी पंक्तियोंमें बाहरी बंकोंके केवल छिद्र और दोष निकालते हों यह नहीं है। अपनी कमी और बुराइयां हमें अच्छी तरह मालूम हैं। हम उनके दूर करनेके उपाय भी जानते हैं।

इस सम्बन्धमें जब हम विचार करते हैं तो मालूम पड़ता है कि पिउपिल्स बंकके टूटनेके दिनसे जितने और बंक, बड़ेसे बड़े, टूटे हैं उन सबोंमें यह एक बड़ी बुराई थी कि वे सबके सब एकाएक मालामाल हो जानेकी धुनमें थे। व्यवहारिक जगतमें जो कहावत प्रसिद्ध है कि "आधा छोड़ एकको धावे, वह आधा भी हाथसे खोवे" उसे वे बिलकुल भूल बेठे थे। धीरज बांधकर थोड़ा सा लाभ लीजिये और अपनी साख जमाइये फिर तो लोग चारों ओरसे आपके साथ व्यवहार करने और आपका लाभ चौगुना अठगुना करनेको दोड़े आवेंगे। पर इसके विपरीत हमारे देशी बैंकोंके संचालकगण उतावलीमें आकर लालचमें पड़ गये। यदि आप पूछिये कि हम उनपर यह अपवाद कैसे लगाते हैं तो ज़रा उनके हिसाबकी बही उठाकर देखिये। सरकारी रिपोर्टसे मालूम होता है कि देशी बंकोंका औसत संचितद्रव्य (रिज़र्वफन्ड अर्थात् इकट्ठी पूंजीका वह अंश जो अपने पास रखकर शेष भाग लोग व्यवहारमें लगाते हैं) केवल सैकड़े पीछे ११ ही हुआ करता था। हमारे बंकोंके संचालक प्रायः अपना कोष झाड़कर सूदकी चाटमें जहां तहां रुपया बिखरा देते थे। इसकी चिंता उन्हें अधिक नहीं सताती थी कि जिसका रुपया है यदि वह मांगेगा तो हम उसे कहांसे देंगे। फिर कुशल कैसे रहे। बंकमें पहलेसे डिपौज़िट या जमा किये हुए रुपयेका अधिक अंश अवश्य प्रस्तुत रखना चाहिये।

दूसरी बात व्याजके निर्ख़में यह खटकती है कि हमारे देशी बंक ही सब जगहसे बढ़कर सूद देनेको उतारू होते हैं। इसका कारण यह है कि वे लालचमें आ जाते हैं कि अधिक सूदके विचारसे लोग इनके बंकमें रुपया जमा करने लगेंगे। परंतु कुछ सम्पत्तिशास्त्रके विद्वानोंके मतसे स्थायी धरोहरपर केवल ४॥ सैकड़ा और रोज़ीने हिसाबपर २% बहुत उचित निर्ख़ हैं। क्योंकि अधिक सूद देनेकेलिए उन्हें काम भी बड़े जोखिमके करने पड़ते हैं और यही उनके नाशका कारण बन जाता है। देखनेमें आता है कि ऐसे बंक बहुधा अपने धनसे चांदी, मोती वा ग़ल्लेकी फ़सल ख़रीदकर भावकी तेज़ी और मंदगीके अनुसार बेचनेकी आशासे रख छोड़ते हैं। बहुत दिन नहीं हुए, गत १० अप्रैल १९१५ को "इन्डियन स्पीसी" बंकके डाइरेक्टरोंपर अभियोग चला था। रुपया जमा करनेवालोंकी ओरसे बंकपर एक करोड़ साठ लाखका दावा किया गया था जो बंकके मैनेजरकी असावधानी और निरीक्षणके अभावके कारण बंकको घाटा पड़ा था। उसमें १ करोड ११ लाख चांदीके सट्टे में डूबा, ३६ लाख मोतियोंकेलिए पेशगी देनेमें और १८ लाख अन्य कुप्रबन्धोंसे।

इससे यह स्पष्ट है कि बंकके ऐसे कारबारमें सफलता होनेकी बस उतनी संभावना होती है जितनी पासा फेककर बाजी जीतनेकी। तब क्यों

नहीं सब सोना विचारा विगड़े और बंकोंका दिवाला निकल जाय।

यह जो हुआ सो हुआ, कितने बंकवाले बंकके रुपये ऐसे कल कारखानोंमें मुक्तहस्त झोंक देते हैं जो चल नहीं पाते और उसमें उनका लगाया हुआ सारा धन नष्ट हो जाता है। कहीं कहीं दस दस बीस बीस लाखकी पूंजी लोग बंकसे उठाकर अपने इष्ट मित्रों वा ग्राहकोंको आटेकी कल, दियासलाई वा चीनीका कारख़ाना इत्यादिमें लगानेकेलिए दे देते हैं। पर बंकके संचालनकी यह गूढ़ नीति है कि बंकका धन किसी काममें दीर्घ समयकेलिए नहीं अटकाना चाहिये। पक्का सिद्धान्त यह है कि इधर धन लगाया और न्यूनाधिक लाभ उठाकर उधर निकाल लिया, क्योंकि बंकका धन तो अपना है नहीं। वह अमानत या धरोहरका माल ठहरा। जब अवधि पूरी होगी तभी मालिक उसे वापिस ले सकता है। इसलिए अपने दो पैसेके लालचवश सर्वसाधारणका माल कभी झगड़ेमें डालना नहीं चाहिये। अर्थात् मामूली बंकोंके वास्ते केवल थोड़े दिनोंकेलिए ऋण देनेमें सुभीता है जिसमें उनके यहां मांग आनेपर वे अपना काम रोककर संचित धनकी सहजमें ही वृद्धि कर लेवें। हां, मियादी जमाका कुछ अंश शिल्प व्यवसायमें लगाया जा सकता है। पर समय देख लेना चाहिये। उसी तरह रोज़ीना हिसाबमें आये हुए धनको भी छः महीनेसे अधिक लगाना बुरा है। इस विषयमें हमारे बंकवाले प्रायः कच्चाई करते आये हैं।

जिस समय बंकोंका काम ठीक तरह नहीं चल रहा था और उसमें हिस्सेदारोंको वास्तवमें लाभ नहीं होता था, उसपर भी उन्हें किसी प्रकार प्रसन्न रखनेके लिए बंकके पदाधिकारी मुनाफ़ेका हिस्सा बांटा करते थे। वह रुपया कहांसे आता था? उन्हींके मूलधनसे। यह अन्धेर! ऐसे डावांडोल बंकोंको ऊपरसे चलाते रहने तथा उनकी भड़क बनाये रखनेमें भी बहुत अर्थ हानि होती थी। भला जिस रोज़गारमें कुछ बचत नहीं है, उलटे मकानका किराया और नौकरोंका वेतन घरसे भरना पड़ता है उसे चलाना कैसी मूर्खता है। मानहानिकी झूठी लाजमें आकर कितने ही बंक अपना काम न आप उठाते न दूसरोंको उठाने देते थे।

बहुतेरे बंक अपनी तरफ़से दिखलानेकेलिए इख़्तियारी पूंजीको (औथेराइज़्ड कैपिटल) एक बड़ी भारी रक़म बतलाते हैं। इससे धरोहर रखनेवाले धोखेमें आजाते हैं। पर इससे होता ही क्या है जब इक़रार की हुई पूंजीसे (सब्सक्राइब्ड कैपिटल) वर्तमान अर्थ संकटमें कोई काम न निकला? इसलिए केवल वेबाक़ की हुई पूंजीको ही अपनी पूंजी कहना चाहिये।

सम्पत्ति शास्त्रके विद्वानोंकी राय

एककी राय है कि बंकोंकी कार्रवाईके सुधारके हेतु साधारण कम्पनी एकट्के अलावा एक और क़ानून होना चाहिये। जबतक यह नहीं होता इस बातका ध्यान होना आवश्यक है कि बंकके कामके साथ और कामोंकी खिचड़ी—जैसे बीमाका काम, आढ़तका काम—न पकाई जावे। सरकारकी ओरसे बही खातेकी जांच और पड़ताल होनी चाहिये और उसे छपवाकर जन साधारणपर प्रकट कर देना चाहिये। दैनके धनकी संख्या मूलधन और संचित धनके परिमाणसे अधिक होनेपर ही नफ़ेका बखरा? बांटा जाना चाहिये। इख़्तियारी पूंजी (authorised capital) पर थोड़ासी स्टाम्प फ़ोस लगा देनेसे विज्ञापनकी धोखेबाज़ी आप ही आप बन्द हो जायगी। उपरोक्त मन्तव्योंमें कितना सार है अनुभवी पाठक स्वयं स्थिर कर सकते हैं। अब हम यहांपर उन दो चार बातोंका उल्लेख करेंगे जिन्हें बंकके हल्लेके दिनोंमें अपने मित्रोंके बीच हमने बहुत विवादके उपरान्त निश्चय किया था। प्रथम प्रश्न जो संयुक्त-मूलधन अर्थात् जोइन्ट स्टाक बंकके सम्बन्ध उठता है वह यह है कि पराए धनकी रक्षा पराए वेतन भोगी मैनेजर इत्यादि कहांतक कर सकते हैं। यह स्पष्ट है कि

जो व्यक्ति अपने गाढ़े पसीनेसे धन उपार्जन करता है उसके समान कोई अन्य पुरुष उस उपार्जित धनको सहेज नहीं सकता। संयुक्त-मूलधन बंकोंमें लोग अपना अपना हिस्सा लगाकर अलग हो जाते हैं और बीचमें कोई पुनः उसकी सुध बुध नहीं लेते। इधर मैनेजर साहब उसे दोनों हाथोंसे लुटाते हैं। इस पापके दूर करनेकी एक ही क्रिया है कि विशेष हिस्सा बंककी पूंजीका डाईरेक्टर या निरीक्षक जन स्वयं खरीदें। जब साधारण पट्टी दारोंके साथ साथ डाइरेक्टरोंकी भी चोटी बंकवालोंके हाथ रहेगी तो यह लोग अपना प्रभुत्व दिखला कर उन्हें अधिक अत्याचारसे रोकेंगे। अन्यथा उन्हें बंकके मासिक अधिवेशनोंमें अपनी बहुमूल्य सम्मति देकर ५) वा १०) रोज़की फ़ीस बनानेसे प्रयोजन होता है।

दूसरे यह है कि विदेशी परिपाटीसे काम करनेके जितने अच्छे ढंग हैं उनका हमें अवश्य अनुकरण करना चाहिये। क्योंकि विदेशियोंका यश उनकी चैतन्यता कुशाग्रता क्रमशीलता और परिश्रमपर हुआ करता है, अन्यथा इनमें कोई सुरख़ावका पर नहीं लगा होता है। इस कारण जो गुण उनकी संस्थाओंमें हैं वह हमारी संस्थाओंमें भी आने चाहिएँ। अर्थात् प्रेसीडेन्सी बंककी भांति हमें भी यथा संभव स्थायी सम्पत्ति (immovable goods) के रहन पर जैसे भूमि वा गृह इत्यादि रुपया कम लगाना चाहिये। किसी पुरुषके स्वतंत्र प्रतिज्ञापत्रके ऊपर भी रुपया देनेमें बहुत झंझट है। इस नियमके पालन न करनेसे जितने धनी पुरुषोंके कुटुम्बी या परिचित पुरुष आयंगे उन्हें हमें ऋण देना पड़ेगा। यदि इनका सम्बन्ध भले लोगोंसे है तो वे उनकेलिए पत्रपर अपना हस्ताक्षर बनाकर उनकी असमर्थतामें ऋणके उत्तर दाता भी हो सकते हैं। अन्ततोगत्वा यदि रहनपर रुपया देना ही हो तो रहनकी वस्तु अपने हस्तगत कर लेनी चाहिये या बंकके गोदाममें रख लेनी चाहिये। ऋण लेनेवालोंकी स्थिति और आर्थिक अवस्थाका पता लेनेकेलिए जो महाशय भेजे जाते हैं वह बहुधा अपनी दलालीके आगे सब बातें ठोंक पीटकर बराबर कर देते हैं। यह बड़ी नीचता है। जो माल बंकके गोदाममें रखा जाता है और जिसपर रुपया दिया जाता है उसका मोल निर्धारित करनेमें भी बड़ी लापरवाही की जाती है। ऋण लेनेवाला १० पिटारी सामने रखकर उन्हें बहुमूल्य पदार्थोंसे भरा हुआ बताता है। उसके कथनानुसार प्रत्येक पिटारीकी क़ीमत १००) रु० रख ली जाती है चाहे उसमें काठका बुरादा ही भरा हो। पीछेको वह उनसे उतना ही वसूल करता है और बंकवाले जो बाज़ारमें चौबेसे छब्बे होनेको बैठते हैं दुबे होकर रह जाते हैं। और सुनिये, कभी कभी चरस चंडू पीनेवाले या दुर्व्यसनी ज़मींदारके कपूत, दलालोंके मार्फ़त, बंकसे, दो चार सौ रुपये लेकर दो चार हज़ारकी टीप लिख देनेको तैयार रहते हैं। ऐसी आसामियोंको दिये हुए धनसे कितनी फूटी कौड़ी लौटती हैं यह पाठक अनुमान कर लें। यह सब अनर्थ जहां होते हैं वहांके बंकोंका क्या सिलसिला और क्या भरोसा हो सकता था, पर अब यह सब पुरानी बातें हो गई हैं। दूधका जला छाछ फूक फूक कर पीता है। हालकी ठोकरोंसे हम लोगोंको जो चेतावनी मिली, उसकी सुरत बिसारकर अंधाधुन्ध करनेवालोंमें हम लोगोंकी गणना अब नहीं हो सकती। (co-operative credit banks) सहकारी बंक खोलकर हमारे उदार, कार्यप्रवीण शासकगण हम लोगोंको मार्ग दिखला रहे हैं। कृषि और औद्योगिक धन्धोंकेलिए जिस तरह वे हमारे भाइयोंकी सहायता कर रहे हैं वैसे ही नागरिक व्यापारी वा उत्साही कार्यपटु गृहस्थको हम अपने संयुक्त मूलधनवाले बंकोंके द्वारा वांछित धन दे सकते हैं। वर्त्तमान पश्चिमी युद्धकी भीषणता और उससे विलायती वाणिज्यका मन्दापन देखकर आसार ऐसे ही मालूम होते हैं कि हमें अपनी आवश्यकताओंकी पूर्त्ति अपने हाथ करनेका समय

आ गया है। करोड़ों रुपयोंके माल—सूती, ऊनी, कांचके, शीशेके, कैंची, चाकू, बुरुश, ताले, कम्बल सूती चादर, एलूमीनीयमके बर्तन, आला औजार, दियासलाई, मोज़े, बनियाइन, आईना, कंघी, चूड़ी, नक़ली गहने और खिलौने जो कानपूर प्रदर्शनीमें अस्ट्रिया जर्मनीके बने हुए दिखलाये गये थे और जिसे बहुत कुछ अब जापानी सौदागर हमारे यहां बेचने लगे हैं इसी बातको जताते हैं कि बस हमारे लिए एक बहुत बड़ा अवसर उपस्थित हुआ है और अब पहलेसे दसगुने बल और उद्योगसे हमारे बंकोंको, देशके गढ़े और बिखरे हुए धनको इकट्ठा करना और उन्हें ऐसे लोगोंके हाथ बढ़ाना चाहिये जो उनके सदुपयोगसे संसारके सारे सुखके सामान हमें गढ़ गढ़ दें और अपने प्यारे भारतीय भाईयोंको औद्योगिक स्वाधीनता प्रदानकर अपना उद्देश्य सफल करें।

———

## स्वर्णकारी

[ ले० गङ्गाशंकर पचोली ]

गताङ्कसे सम्मिलित

### ४—सुवंज और चीप

धातुकी चीज़ोंके सिरों वा तलोंको मिलाने वा जोड़नेकेलिए जो धातुकी मिलावट काममें आती है वह हा सुवंज कहलाती है और विशेषकर सोने चांदीकी वस्तुके जोड़नेमें जो धातुकी मिलौनी काममें आती है उसको ही सुनार लोग सुवंज कहते हैं। जिस धातुको जोड़ना हो उस धातुसे कम गरमीसे पिघल जानेवाले धातु-मिश्रणसे सुवंज बनती है। सोनेके आभूषणादिमें जोड़ देनेकेलिए जो सुवंज बनाते हैं उसमें यह ध्यान रखते हैं कि सोना और सुवंज कड़ेपन तथा अग्निमें गलनेमें एकसी ही रहें। सोनेके आभूषणोंके साफ़ सुथरे बननेकेलिए सुनारकी चित्तकी स्वाभाविक सुघड़ताके और हस्त कौशलके साथ साथ सुवंजकी मिलावटका ज्ञान भी अत्यावश्यक है क्योंकि सुवंज ऐसी होनी चाहिये कि सोनेकी वस्तुके रंगकी हो और अग्निमें गलकर सोनेमें तद्रूप होकर मिल जाय।

जुदे जुदे नम्बरके सोनेकी वस्तु जोड़नेकेलिए यह जानना भी आवश्यक है कि प्रत्येक नम्बरके सोनेके और सुवंजके अग्निमें गलनेके लिए कितनी गरमीकी आवश्यकता होती है। इस स्थानपर यह दिखाना कि जुदे जुदे नम्बरका सोना और अन्य धातु कितने कितने दर्जेकी गरमीमें गल जाती हैं विषय-संगत ही ज्ञात होता है।

इस सारिणीसे स्पष्ट है कि शुद्ध सोना सबसे अधिक गरमीमें गलता है और ज्यों ज्यों उसमें अधिक बट्टा मिलता है त्यों त्यों वह कम गरमीमें गलने लगता है, अर्थात् उसका द्रवणविन्दु कम होता जाता है*।

धातु किस तापक्रमपर गलती है

| धातु | | | ताप क्रम | धातु | | | ताप क्रम | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| सोना | २४ | केरट | २०१६ | सोना | ९ | केरट | १९७९ | अंश |
| ,, | २३ | ,, | २०१२ | ,, | ८ | ,, | १९७३ | ,, |
| ,, | २२ | ,, | २००९ | ,, | ७ | ,, | १९६० | ,, |
| ,, | २० | ,, | २००२ | तांबा | | | १९९४ | ,, |
| ,, | १८ | ,, | १९९५ | चांदी | | | १८७३ | ,, |
| ,, | १५ | ,, | १९९२ | भरत (कम्पोज़ीशन) | | | १५८७ | ,, |
| ,, | १३ | ,, | १९९० | जस्त | | | ७७३ | ,, |
| ,, | १२ | ,, | १९८७ | सीसा | | | ६१२ | ,, |
| ,, | १० | ,, | १९८२ | रांग | | | ४४२ | ,, |

७ केरटका सोना १९६० अंशपर गल जाता है। यह तापक्रम तांबेको छोड़ और धातुओंके द्रवण विन्दुओंसे बहुत अधिक है। तांबा १९९४° फ० पर गलता है जो नम्बर १८ के द्रवण विन्दुके समान है। इससे स्पष्ट हुआ कि

*गर्मीके दर्जेको तापक्रम कहते हैं और जिस तापक्रमपर कोई पदार्थ गलता है, उस तापक्रमको उस पदार्थका द्रवणविन्दु कहते हैं।

सुवंज बनानेमें तांबेका मेल देनेसे वह १८ केरटसे ऊपरके सोनेके जोड़नेके काम आ सकती है पर उससे नीचेके नम्बरके सोनेके जोड़नेके कामकी न होगी। चांदी तथा कम्पोज़ीशन धातु ऐसी हैं जो ७ केरटके सोनेके द्रवणविन्दुसे कम तापक्रमपर गल जाती हैं। इसलिए जो सुवंज इनको मिलाकर बनाई जायगी वह सब नम्बरोंके सोनेके जोड़नेमें काम आ सकेगी। विलायतमें बहुत बारीक कामके जोड़नेकेलिए अधिक भाग चांदीके मेलकी बनी हुई सुवंज काममें लाते हैं जो १८६६ अंशसे १८०२ अंशतकके तापक्रमपर गल जाती हैं।

आगेके कोष्टकमें स्पष्ट दिखाया जाता है कि किस नम्बरके सोनेके जोड़नेकेलिए किस किस धातुके कितने कितने भागके मेलसे बनी सुवंजका प्रयोग करना चाहिये।

इसी सारिणीसे स्पष्ट है कि नं० १ से नं० २१ तककी सुवंज शुद्ध सोनेसे बनती हैं और उनको जुदे जुदे नम्बरके सोनेकी वस्तुओंको झालनेकेलिए जुदे जुदे परिमाणमें चांदी और तांबेका मेल देकर बनाते हैं। नं०२०और २१ की सोनेकी सुवंज सब केरट वा नम्बरके सोनेके झालनेमें काम आती है। नं० २२ से नं० २६ तककी सुवंज चांदीसे बनती हैं और इनमें सोना बिलकुल नहीं मिलाया जाता। इसी कारण ये ७ केरटके सोनेसे भी कम गरमीमें पिघल या 'बह' जाती हैं और २४ केरटसे ७ केरट तकके सोनेकी वस्तु झालनेमें उपयोगी होती हैं। इन चांदीकी सुवंजोंके 'बहानेकेलिए' निम्नलिखित दर्जोंको गरमीकी आवश्यकता होती है।

| सुवंज | | दर्जोंकी विन्दू |
|---|---|---|
| चांदीकी कड़ी सुवंज | ...... | १८६६ अंश फारनहैट |
| ,, मध्यम ,, | ...... | १८४३ ,, ,, |
| ,, नरम ,, | ...... | १८१८ ,, ,, |
| ,, मामूली ,, | ...... | १८०६ ,, ,, |
| ,, मामूली नरम | ...... | १८०२ ,, ,, |

नम्बर २७ वाली टामी सुवंज निरे सीसे और रांगके मेलकी होनेसे सस्ती और सुलभ अवश्य है, पर प्रथम तो इसको काममें लाना बड़ी होशियारीका काम है क्योंकि सोनेके गरम होते ही रांग उसमें घुसा तो निकलना कठिन होता है और दूसरे उसकी झाल चिरस्थायी भी नहीं होती। इस सुवंजमें एक गुण भी है और वह यह है कि

| नम्बर | नाम सुवंज | किस केरटके कामकी | मिलावट १६ भाग में | | | | | | | कम्पो० भरत |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | सोना | चांदी | तांबा | सीसा | जस्त | रांग | पीतल | |
| १ | देशी बढ़िया ... | २२ | १४ | | २ | | | | | |
| २ | ,, ... | २४ व २२ | १३ | १।। | १।। | | | | | |
| ३ | चमकीली ... | १८ | १२ | २।। | १।। | | | | | |
| ४ | ,, | २२ | १३।। | १।। | १ | | | | | |
| ५ | ... ... ... | २० | १३।। | १। | १। | | | | | |
| ६ | .. ... ... | १८ | १३ | २।। | ... | ... | ... | ... | ।। | |
| ७ | अति उत्तम | २२ | १० | ४ | २ | | | | | |
| ८ | मध्यम | १८ | ८ | ५ | ३ | | | | | |
| ९ | साधारण | १६ | ७ | ५। | ३।।। | | | | | |

| नं० | नाम सुवंज | किस केरटके कामकी | मिलावट १६ भागमें | | | | | | | कम्पो-भरत |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| | | | सोना | चांदी | तांबा | सीसा | जस्ता | रांग | पीतल | |
| १० | रंगीन सोनेके | १८ | १०॥। | ३। | २ | | | | | |
| ११ | उपयोगी | १८ | १०॥। | ३। | १॥ | ...... | ...... | ...... | ...... | ॥ |
| १२ | | १८ | १० | ३॥ | २॥ | | | | | |
| १३ | | " | १० | ३॥ | २ | ...... | ...... | ...... | ...... | ॥ |
| १४ | | १६ | ९ | ३॥। | ३। | | | | | |
| १५ | | " | ९ | ३॥। | २। | ...... | ...... | ...... | ...... | १ |
| १६ | | १५ | ८ | ४ | ४ | | | | | |
| १७ | | " | ८ | ४ | २॥। | ...... | ...... | ...... | ...... | १। |
| १८ | | १४ | ७ | ४॥ | ४॥ | | | | | |
| १९ | | " | ७ | ४॥ | ३। | ... | ...... | ...... | ...... | १। |
| २० | | सब केरटके | ६॥। | ५ | ४। | | | | | |
| २१ | | " | ६॥। | ५ | ३। | | | | | १ |
| २२ | चांदी प्रधान कड़ी | " | ० | १३ | २॥ | | ॥ | | | |
| २३ | " मध्यम | " | ० | १२ | ३ | | १ | | | |
| २४ | " नरम | " | ० | ११ | ३॥। | | १। | | | |
| २५ | मामूली कड़ी | " | ० | १० | ४॥। | | १। | | | |
| २६ | " नरम | " | ० | ९ | ५ | | २ | | | |
| २७ | रंगकी टामी | | | | | १ भाग | | २ भाग | | |
| २८ | बढ़िया- | १८ | १५। | ० | ॥। | | | | | |
| २९ | सवाई | तक | ११ | ० | ५ | | | | | |
| ३० | डोढी | — | ११ | २॥ | २॥ | | | | | |
| ३१ | चिलखाइ | — | ८ | ४ | ४ | | | | | |

इससे निखरे और जिला किए हुए काममें भी जोड़ लग सकता है।

ऊपर जितने प्रकारकी सुवंजोंको लिखा है उन सबके बनानेकी रीति इस प्रकार है। जिस नम्बरकी सुवंज बनानी होती है उस नम्बरमें जिन जिन धातुओंके जितने भाग दिये हुए हैं उनको ठीक ठीक तोलकर घरियामें रखते हैं और घरियाको अंगीठीमें अग्निपर रख अच्छी तरह चक्कर खा जानेतक गरम कर देते हैं। जब चक्कर खाकर सब धातु एक जीव हो जाती हैं तब दबकनीके नीचे उंडेलकर दबक देते हैं, जिससे फैलकर उसका पत्तर हो जाता है। जो सुवंजमें तांबे-

के भाग विशेष होते हैं तो हथोड़ेसे पीटकर भी बहुत पतला पत्तर (पत्र) बनाया जाता है।

इस प्रकार बनी सुवंजको उपयोगमें लानेके-लिए पतले पत्तरोंमेंसे बहुत छोटे छोटे टुकड़े कतुएसे काटते हैं या पत्तरोंको रेतीसे रेतकर बुकनी बनाते हैं। कतुएद्वारा कतरे हुए टुकड़े फारी या पाने के नामसे बोले जाते हैं। इन पानों वा बुकनीको जोड़ लगानेके स्थानपर जिस वस्तुमें मिलाकर रखते हैं उसे चीप कहते हैं। इस चीपके सहारे पाने वा बुकनी जहां उनको लगाया जाता है चिपके रहते हैं।

हमारे देशके सुनार चीप बनानेमें दो बातोंका ध्यान रखते हैं। प्रथम यह कि सुवंजके पानेको जोड़पर 'चलाने'के समय सुहागेका उपयोग किया जाय जिससे पाने झट गलकर जोड़को जमा दें। दूसरे पाने अग्निमें फूंककर चलानेतक अपने स्थान-पर चिपके रहें। इन बातोंकेलिए तीन प्रकारकी चीप प्रायः प्रचलित हैं। पहिली चीप बनानेकेलिए सुहागेको किसी प्यालेमें रखकर पानीमें घोल आगपर पकाते हैं। जब उबाल आ जाता है तब उतारकर जस्त वा लोहेकी प्यालीमें ठंडा कर देते हैं। जब उपयोग करना होता है तो उस समय इस सुहागेमेंसे आवश्यकतानुसार लेकर थोड़ेसे पानीमें पतला कर उसमें पाने गेर देते हैं या बुकनी-को सान लेते हैं और जोड़ देनेके स्थानपर चिमटी-से रखते हैं। चीपके जोड़पर सूख जानेके पश्चात् अग्निमें रख पानोंको बहा लेते हैं।

दूसरी प्रकारकी चीप उड़द (उर्द) की दालकी बनाते हैं। उड़दकी दाल और थोड़ा सा सुहागा लेकर एक छोटी प्याली या कटोरीमें पकाते हैं। दालके सीज जानेपर उसका पानी जुदी कटोरीमें नितार लेते हैं वा कांचकी शीशीमें भर लेते हैं। फिर जब पाने जोड़पर रखने होते हैं उस समय पानोंको उस पानीमें डोबकर जोड़पर रखते हैं और सूख जानेपर पूर्व लिखित रीतिसे अग्निपर बहा लेते हैं।

चीपके बनानेकी तीसरी रीति दूसरी रीतिके समान है। केवल भेद इतना ही है कि इस रीतिमें उड़दकी दालके स्थान मेथो काममें लाते हैं।

देसी रीति को संक्षेपसे लिखकर चीप बनाने-की विलायती रीतिसे भी लिखना आवश्यक है। इंगलिस्तानके सुनार 'ज़िंक क्लोराइड' (अर्थात् जस्तेका हरित), सुहागा और 'सेंडीवर' (काच-का मैल) सुवंजके चलानेके काममें लाते हैं। इन तीनोंमेंसे एकको थोड़ेसे पानीमें सान, जोड़के स्थानपर चुपड़ते हैं और फिर सुवंजके पानोंको चीपमें डुबोकर जोड़के स्थानपर रखकर सुखाते हैं और फिर यातो अग्निमें रख वा दीपक-की लौमें फुकनीसे फूंक जोड़के स्थानपर सुवंजको चलाते हैं जिससे जोड़ ठीक लग जाता है। 'ज़िंक क्लोराइड' को अकेला काममें लाते हैं पर सुहागेको अकेला भी और कभी कभी 'सेंडीवर' के साथ पानीमें घिसकर काममें लाते हैं। 'सेंडी-वर' को सुहागेके संग मिलानेसे सुवंज चलाने व बहानेके समय भी पाने जहांके तहां लगे रहते हैं, सरकते नहीं।

इंगलेण्डके सुनार सब केरटके सोनेकी वस्तुओंके जोड़नेकेलिए चांदीकी सुवंज विशेषकर काममें लाते हैं और खासकर रंगीन सोनेकी वस्तु तो चांदीकी ही सुवंजसे जोड़ते हैं। नं० २२ से २६ तककी चांदी प्रधान सुवंजोंके सिवाय सोनेसे बनी नं० ७, ८, ६ की सुवंज भी रंगीन सोनेकी वस्तु जोड़नेके काम आती हैं, परंतु ये सुवंज विशेष नम्बरके सोनेसे ऊपरके सोनेके जोड़नेके कामकी हैं और चांदी प्रधान सुवंज सब प्रकारके सोनेके जोड़नेके काममें आती हैं।

ऊपर दिए हुए कोष्टकमें नं० २७ पर जो रांग-की 'टामी' नामकी सुवंज लिखी है उसके बनानेमें एक लोहेकी घरियामें प्रथम सीसा गलाते हैं और

रांगको पीछेसे मिलाते हैं। जब दोनों धातु गलकर एक हो जाती हैं तो घरियाको उतार उस द्रवको या तो रेनीमें ढालते हैं या दबककर पत्तर बना लेते हैं। जब ये धातु गल जाती हैं तो ढालनेसे पूर्व घरियाको काठके टुकड़ेसे ढक देते हैं कि जिससे गली धातुपर कीट न जम जाय। इस सुवंजको विलायती सुनार 'नरम टामी सुवंज' भी कहते हैं।

जैसे सोने या चांदीसे बनी सुवंजोंको चलानेकेलिए चीप बनाते हैं वैसे ही इस 'नरम टामी' सुवंजकेलिए द्रव अर्थात् अर्क़ बनाया जाता है जिसको 'मंकी' वा 'फेक' कहते हैं। इस द्रवके बनानेमें 'हाईड्रोक्लोरिक एसिड' दो भाग और जस्ता १ भाग लेते हैं। एक मिट्टीकी कूलड़ीमें ७ वा ८ तोला 'हाइड्रोक्लोरिक एसिड' भरते हैं और २॥ तोला जस्तेके छोटे छोटे टुकड़े उसमें डालते हैं। प्रथम खदबद होकर जस्ता गल जाता है। जब खदबद बंद हो जाती है उस समय कुलड़ीको एक लोहेके पत्तरपर रख गैसकी लौके ऊपर रख देते हैं। गरमी लगनेसे जो 'एसिड' उड़ जाती है उसके पूरा करनेकेलिए १। तोला और मिलाते हैं। जब जानते हैं कि 'एसिड' में जस्तके अंश आगये तब अर्क़को नितारकर शीशीमें भर डाट लगा रख छोड़ते हैं। जब कभी लोह वा स्पातमें जोड़ लगाना होता है तो थोड़ासा नोसादर उसमें और मिला लेते हैं। ऊपर जो तोल एसिडकी लिखी है उतनेमें ८ माशेके अन्दाज़ नोसादर ठीक रहता है।

'नरम टामी' सुवंजसे सोनेकी वस्तु जोड़नेमें अधिक होशियारी चाहिये और जैसा हम पहिले लिख आये हैं यह सुवंज थोड़ीसी गरमीमें सोनेके भीतर घुस जाती है और फिर उसका निकलना कठिन हो जाता है। जब कभी इस सुवंजसे जुड़ी हुई सोनेकी वस्तुको साफ़ उजला करनेकी आवश्यकता होती है तो प्रथम जोड़परसे पुरानी सुवंजको हटाना पड़ता है क्योंकि निखार देनेमें वस्तुको यातो अग्निमें तपाना पड़ता है या निखारके पानीमें उबालना पड़ता है और थोड़ीभी गरमी लगनेपर सुवंज सोनेमें घुस जाती है। पुरानी 'टामी' सुवंजको जोड़परसे हटानेकेलिए कई प्रयोग किये जाते हैं पर यहांपर दो रीतियां लिखी जाती हैं।

'टामी' सुवंजको जोड़परसे दूर करनेको 'म्यूरिएटिक एसिड' * २० तोले और 'क्रोकस' (?) २॥ तोले मिलाते हैं और उसको भली रीति हिलाते हैं। इस मिश्रणके एक भागमें चार भाग गरम जल मिलाते हैं और गैसकी लौपर गरम करते हैं। इसी मिश्रणमें 'टामी' सुवंजसे जुड़ी वस्तुको रखते हैं जिससे सुवंज गलकर निकल जाती है।

दूसरी रीति वह है जिसको विशेष काममें लाते हैं और जिससे सब प्रकारके सुवर्णमेंसे 'टामी' सुवंज सुगमतासे दूर हो जाती है और इस रीतिसे चांदीकी बनी वस्तुपरसे भी यह सुवंज दूर हो सकती है। 'प्रोटो सल्फेट ऑफ आइरन' ५ तोले और शोरा २॥ तोले लेकर महीन चूर्णकर २५ तोले पानीमें मिलाते हैं और मिश्रणको ढलवां लोहेके पात्रमें अग्निपर उबालते हैं और फिर उसे ठंडा होने देते हैं। ठंडा होनेपर खारकी क़लमें पड़ जाती हैं। जो सब मिश्रणकी क़लमें नहीं पड़ती तो मिश्रणको नितार फिर उबाल देकर जमाते हैं, ऐसा करनेसे सब मिश्रण जमकर क़लमें बन जाती हैं। इन क़लमोंको आठ गुने 'म्यूरिएटिक एसिड' में गलाते हैं और फिर इसमेंका एक भाग चौ गुने खौलते पानीमें एक लोहके पात्रमें मिलाते हैं और उसके नीचे पूर्ववत् गरमी देते रहते हैं। इस रीतिसे सोनेकी वस्तुको खौलते मिश्रणमें रखनेसे थोड़े ही समयमें 'टामी' नामकी सुवंज निकल जाती है और सुवर्णका रूप रंग ज्योंका त्यों बना रहता है।

* नमकके तेज़ाबका बाज़ारु नाम। इसका ही वैज्ञानिक नाम 'हाइडोक्लोरिक एसिड' है।

## रासायनिक सिद्धान्त* ।

[ ले० बी. के. मित्र, एल. एम. एस. ]

अब पाठकोंको प्राचीन 'तत्त्व' और आधुनिक 'मौलिक' पदार्थोंका स्थूल ज्ञान हो गया होगा। हम दिखा चुके हैं कि प्राचीन तत्त्ववादमें कहीं कहीं साक्षात् त्रुटियाँ हैं। उसमें भौतिक पदार्थोंका गठन संबन्धी ज्ञान ऐसे सुन्दर-रूपमें प्रतिपन्न नहीं होती, जैसा कि आधुनिक ८० से भी अधिक मौलिक-पदार्थ-वादसे। यह मत पिछली शताब्दी में परिपुष्ट होकर सिद्धान्तके स्थानतक पहुंचा है। नवीन गवेषणाओंसे उसमें भी कुछ त्रुटियां पायी गयी हैं। तथापि अभ्यासात्मक रसायन-विज्ञानमें कोई भेद नहीं पड़ता।

पाठक यह प्रश्न कर सकते हैं कि जब पञ्च-तत्त्व वाद, और ८० से भी अधिक मौलिक-पदार्थ-वाद दोनोंमें त्रुटियां हैं तो फिर आधुनिक मतकी श्रेष्ठता क्यों मानी जाय ? इसका उत्तर हम पहले दे चुके हैं कि भौतिक विद्याओंके विषयमें मत भेद होनेपर जो मत अधिक उपयोगी समझा जाता है, और जिसके द्वारा भौतिक घटनाओंका तथ्य सुगमतासे निर्णय होता है वही श्रेष्ठ समझा जाता है।

किसी समय पञ्चतत्त्व वाद ही जगतका वैज्ञानिक मत था, परन्तु अब वह नहीं माना जाता। हम अन्यत्र यह भी दिखायँगे कि आधुनिक रसायनशास्त्रको इस अवस्थातक पहुंचानेमें कितने जटिल मार्ग तै करने और कितने लेखनी-युद्ध और वाग्युद्ध जीतने पड़े हैं। इसके पहलेके कई मत भी अपने अपने समयपर वैज्ञानिक समझे जाते थे और उनके द्वारा वैज्ञानिक जगतको लाभ भी होता रहा। परंतु जब कभी उनमें कोई त्रुटि दिखाई पड़ी वे वर्जित होते रहे।

* विज्ञान भाग ३ संख्या ५ पृष्ठ २२८ देखिए।

पाठक यह प्रश्न कर सकते हैं कि इस बात-का क्या निश्चय, कदाचित्, आधुनिक मत भी इसी प्रकार वर्जनीय हो जाय क्योंकि इसमें भी कुछ त्रुटियां देखनेमें आती हैं; जैसे मध्य युगके कीमियागरों का हीन धातुओंको स्वर्णमें परिणत करनेका प्रयत्न जो असंभव समझा गया था, अब हालमें ही युक्तिसङ्गत प्रमाणित हुआ है। इसका उत्तर हम यह देंगे कि आधुनिक रसायन शास्त्रकी भित्ति ऐसे प्रत्यक्ष प्रमाणोंपर स्थापित हुई है जिनके अनुमानोंपर मतान्तर होते हुए भी क्रियात्मक विषयोंमें कोई भी विघ्न नहीं पड़ता। यद्यपि आधुनिक गवेषणाओंसे ऐसा अनुमान किया जाता है कि सारे मौलिक पदार्थ किसी एक 'प्राथमिक' पदार्थसे ( प्राचीनोंका "अव्यक्त" पदार्थ ) उत्पन्न हुए हैं और कोई कोई मौलिक पदार्थ अपने गुण बदलते बदलते दूसरोंमें परिणत हो जाते हैं, तथापि 'कीमियागरोंका' स्वप्न, स्वप्नही रहेगा। यदि भविष्यमें हमारे इन सिद्धान्तोंमें कोई बड़ी त्रुटि दिखायी पड़े तो अन्य युक्त मतके मानने-में कोई आपत्ति नहीं।

अब यह बतलाया जायगा कि रासायनिक 'सिद्धान्त' कैसे स्थिर किये जाते हैं। इसकी प्रथमावस्था पर्यवेक्षणकी है। भौतिक घटनाओंको ध्यानसे बार बार देखनेको ही पर्यवेक्षण कहते हैं। प्राचीन कालमें पर्य्यवेक्षणसे ही यह सिद्धान्त निकाला गया होगा कि जहाँ अग्नि है वहीं धूम है। दूसरी अवस्था परीक्षाकी है, इसमें हम भौतिक घटनाओंको कृत्रिम उपायोंसे उपस्थित करके उनके विशेष गुणोंको लक्ष्य करते हैं। यथा हम भिन्न भिन्न पदार्थोंको अग्निसंयोग कर देखते हैं कि किसीमें धूम उत्पन्न होता है और किसीमें नहीं भी होता है। पहलेके दार्शनिक उत्तप्त लोहेके गोलेका उदाहरण देते हैं कि इसमें धूम नहीं होता। आधुनिक रसायनशास्त्रकी जानकारीसे इस प्रकार-के और भी उदाहरण दिये और समझे जा सकते

हैं। यथाः—उज्जन (हैड्रोजन) का जलना वा जलपर पोटासियमका जलना आदि। इसमें प्रकाश होनेपर भी धूम नहीं होता। परन्तु ऐसी कोई भी घटना नहीं देखनेमें आयी जिससे सिद्ध हो कि अग्निके बिना धूम हो सकता है। इस प्रायोगिक अवस्थाके अनन्तर मनुष्य अपनी प्रकृतिके अनुसार लक्षित घटनाओंके विषयमें कोई न कोई मत Hypothesis स्थिर करता है। इसीको प्राचीन कालमें "परामर्श" कहते थे। ऐसे 'मत' बहु परीक्षित होने पर (genralisation) 'व्याप्ति' की अवस्थामें पहुंचते हैं। अतएव प्राचीनोंने यह व्याप्ति सिद्ध की कि "यत्र यत्र धूम स्तत्र तत्राग्निः" जहां जहां धुआं वहां वहां आग। परन्तु यदि कोई घटना इस मतके विरुद्ध हो तो हमें प्रत्यक्ष घटनाके स्थानमें अपने मतके विषयमें संशय करना ही समीचीन है। किन्तु प्राचीनोंने अपने मतको ऐसा दृढ़ बना लिया था कि विरुद्ध घटनाओंको देखकर भी वे अपने मतके विषयमें किसी प्रकारकी शंका नहीं करते थे*। यदि परीक्षाद्वारा यह सिद्ध हो कि धूम अतिसूक्ष्म कणोंकी समष्टि है जो अपूर्ण दहन-क्रियासे उत्पन्न होकर वायुमण्डलमें उड़ा करते हैं और यदि किसी कृत्रिम उपायसे धूम उत्पन्न किया जा सके तो पूर्वोक्त मत भ्रान्त सिद्ध होगा। जो मत पुनः पुनः परीक्षाद्वारा एक भी लक्षित घटनाके विरुद्ध नहीं होता वही सिद्धान्त कहलाता है। आधुनिक मौलिक-पदार्थ-वादको हम इस अर्थमें सिद्धान्त कह सकते हैं क्योंकि इस तात्पर्यसे जो अनुमान किये गये वे भी परवर्ती कालमें सत्य प्रमाणित हुए! इसकी दृढ़ताके विषयमें इससे अधिक और प्रमाणोंकी क्या आवश्यकता है?

* इसका प्रमाण क्या है? यदि यही बात होती तो हमें भिन्न भिन्न शास्त्रों और उपनिषदोंके दर्शन न मिलते और चरक संहितामें भिन्न भिन्न मतोंका वर्णन ही न मिलता।

सम्पादक, विज्ञान

# घोलन शक्ति और कण

[ ले० प्रेम वल्लभ जोषी, बी. एस. सी. ]

जब नमक या चीनी पानीमें घुलते हैं तो यह अदृश्य हो जाते हैं। यह जानने-का कि चीनी पानीमें ही है हमारे पास साधारण उपाय एक है। वह यह है कि पानीको चखनेसे चीनीका स्वाद मालूम होता है। परंतु हमारेलिए इस बातको जानना कि चीनी अदृश्य हो जानेपर भी पानीमें ही है और तरहसे भी सम्भव है।

घड़ी भरकेलिए दुकानदारसे तराजू मांग लो। एक पलड़ेमें पानी भरा गिलास रक्खो और दूसरे-में बांट। जब पलड़े बराबर हो जावें $\frac{1}{2}$ पाव नमक गिलासमें डाल लो। कुछ देर बाद नमक अदृश्य हो जायगा। पर इसके साथ ही पानीका वज़न भी बढ़ जावेगा। अब पलड़ेको फिरसे बराबर करनेकेलिए $\frac{1}{2}$ पाव दूसरे पलड़ेमें रखना होगा। इससे यह प्रत्यक्ष है कि नमकके घुलनेसे पानीका वज़न बढ़ गया अर्थात् आध पाव नमक-का डला पानीमें घुल जानेपर भी $\frac{1}{2}$ पाव ही रहता है-कम नहीं होता है। हम नमक घुले पानीको उबालकर फिर $\frac{1}{2}$ पाव नमक निकाल सकते हैं।

चीनी मिला हुआ गरम गरम दूध तो अवश्य पिया होगा अगर नहीं तो अब सही। १ सेर दूध और $\frac{1}{2}$ पाव बूरा ले लो, और ओटते हुए दूधमें चीनी मिला ख़ूब हिला लो ताकि चीनी बिल-कुल ही घुल जाय और लोटेके तलेमें न लगी रहे। अब कुछ देर दूधको ठंडा होने दो। अब दूध पी जाओ। जब सब पी चुको तो लोटेके पेंदेमें ग़ौरसे देखो, कुछ चीनी देखनेमें आवेगी। यह

क्यों? चीनी कहांसे आगई ? गरम दूधमें क्यों नहीं दिखाई पड़ी ? प्रश्न सोचने योग्य है ।

एक छोटी कटोरीमें आधा पानी भर दो । एक एक चुटकी बूरा उसमें डालते जाओ । तुम देखोगे कि सबका सब बूरा इसमें नहीं घुलता बहुत कुछ तलेमें जमा हो जाता है ।

चाहे पानी कितना ही हिलाया जाय पर बूरा जितना घुल चुका है उससे अधिक इस पानीमें नहीं घुलेगा । अब कटोरीको आगपर गरम करो । गरम करनेपर सब बूरा घुल जायगा । इतना ही नहीं यदि और कुछ बूरा डालोगे तो शायद वह भी घुल जायगा । इस प्रकार ज्यों ज्यों पानी अधिक गरम होता जायगा उसकी घोलन शक्ति बढ़ती जायगी । इसका कारण यह है कि गरम पानीमें ठंडे पानीकी अपेक्षा अधिक घोलन शक्ति होती है । किसी नियत कक्षातक गरम किया पानी चीनी या नमककी नियत मात्राको घुला सकता है, अधिक नहीं । जब इस प्रकार पानीने किसी वस्तुकी नियत मात्राको घुला लिया और अधिक घुलानेकी शक्ति पानीमें न रही तो उस समय इस घोलको "परिपूर्ण घोल" कहते हैं । मानो कि पानीका पेट किसी नियत कक्षाकी गरमीमें वस्तुकी नियत मात्रासे भर जाता है । जब यों पानीका पेट भर गया अधिक वस्तु उसमें नहीं समा सकती ।

हमने अभी देखा है कि गरम दूधको ठंडा करनेसे कुछ चीनी लोटेके तलेमें आ जमी थी । इसका कारण समझना कोई कठिन बात नहीं है । गरम पानीमें ठंडे पानीसे अधिक वस्तु घुल सकती है तो निश्चय ही चीनीसे अथवा नमकसे परिपूर्ण गरम पानी ठंडा होगा तो कुछ नमक वा चीनी उसमेंसे निकल आयगी ।

पानीकी घोलन शक्ति मानो एक प्रकारकी थैली है जो गर्मी देनेसे बढ़ जाती है और इसमें अधिक वस्तु आ जाती है पर ठंडा करनेसे सिकुड़ जाती है और इसमें कम वस्तु समा सकती है । जब गरम थैली ठंडी होगी तो यह सिकुड़ने लगेगी और इसमेंसे कुछ वस्तु बाहर निकल आवेगी ।

इस प्रकार जब परिपूर्ण घोल ठंडा किया जाता है तो घुली हुई वस्तुके बहुत ही सूक्ष्म कण इसमेंसे निकलने लगते हैं । और बहुधा ये कण एकत्रित होकर बड़े बड़े बन जाते हैं । तुमने देखा होगा कि कई पदार्थ कणवाले होते हैं जैसे नीला थोथा, फिटकिरी इत्यादि । इन वस्तुओंका कण बनाना कोई कठिन काम नहीं है क्योंकि गर्म पानीको इस वस्तुसे परिपूर्ण कर ठंढा किया जाय तो इस वस्तुके कण एकत्रित होकर बड़े सुन्दर और मनोहर हो जायँगे ।

नीलेथोथेको बारीक पीसकर चीनीके प्यालेमें पानीके साथ मिलाओ । अब इस पानीको गरम करो और जितना थोथा यह घुला सकता है इसमें मिलाओ । अब कुछ समयतक पानीको गरम होने दो, कभी कभी कांचकी डंडीको इस पानामें डुबोकर बाहर निकालो और फूंकसे उसे ठंडा करो । फूंकनेसे पानी उड़ जायगा । घुला हुआ थोथा छड़ीमें लगा हुआ दीखेगा । इस समय पानी थोथेसे परिपूर्ण हो गया होगा, अब घोलको निकाल किसी स्थानमें रख दो । एक दो दिनके उपरांत सुन्दर कण प्यालेमें मिलेंगे । इन कणोंमें सबसे सुन्दर कणोंको एकत्रित कर लो और बाकी सब निकालकर अलगकर लो । केवल इन सुन्दर कणोंको फिर इसी थोथेके पानीमें डाल दो और हर दूसरे तीसरे दिन इसको उलटते जाओ । पांच चार दिनके उपरान्त इनके बड़े बड़े और सुन्दर कण बन जायंगे । अब बाकी पानीको फेंक कणोंको धोकर सुखा लो ।

कई वस्तुओंके कण पानीमें घोलनेसे नहीं बनते परन्तु जब ये वस्तु दृढ़ अथवा द्रव दशासे अन्य दशाओंमें परिवर्तित होते हैं तब इनके सुन्दर कण बन जाते हैं । पानी इसका सुंदर उदाहरण है । जाड़ेके दिनोंमें जब भाप शीशेपर ठंडी हो जाती है तो पानीके सुन्दर कण ऊपर बन जाते हैं । इसी

प्रकार गंधक जब पिघलाकर जमाया जाता है, तो उसके कण बन जाते हैं।

संसारके कई दृढ़ पदार्थोंके कण होते हैं इनमेंसे कई पानीके घोलमेंसे बनते हैं और कई गंधककी भांति दशा परिवर्तन होनेमें बनते हैं।

हीरा भी कोयलेका कण रूप है।

---

## सहयोगी साहित्य

### वैज्ञानिक विचारका प्रचार

[ ले० भ्रमर ]

( १ ) जीवेम शरदः शतम्।

भाद्रपद १९७३के **नवजीवन**में 'जीवेम शरदः शतम्' शीर्षक लेख निकला है। श्रीयुत डा० केशव देव शास्त्री एम्. डी. ने इस लेखमें दिखलाया है कि पाश्चात्य देशोंकी ईसाई जातियां, जिनकी बाइबिलके अनुसार मनुष्यकी आयु साठ वर्षकी होनी चाहिये औसतन ४५ वर्ष जीते हैं, पर अभागे हिन्दू जो प्रातःकाल संध्यामें 'जीवेम शरदः शतम्' कहकर सौ वर्ष जीनेकी अभ्यर्थना करते हैं, औसतन केवल २५ वर्ष जीते हैं। हिन्दुओंका विश्वास है कि मनुष्यको बिना प्रयास ही सौ वर्ष जीना चाहिये। यदि विशेष प्रयत्न किया जाय तो आयु और भी दीर्घ हो सकती है, फिर यह दुर्दशा क्यों? रामायण आदि ग्रन्थोंसे प्रतीत होता है कि कोई ऐसा भी ज़माना था जब बापके सामने बेटेका देहान्त होना बड़ा अशुभ और भयानक समझा जाता था। आजकल देखिये तो दशा विपरीत ही है। गंवारू कहावत 'साठा सो पाठा' अक्षरशः सत्य हो रही है। अब भी जो बुड्ढोंमें तेज, पराक्रम, बल और वीर्य दिखाई देगा, वह आजकलके नवयुवकोंमें नहीं है। इसका कारण? हमारी सम्मतिमें इसका मूल कारण गत पचास वर्षोंके सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक परिवर्तन हैं।

इन परिवर्तनोंका बड़ा भारी प्रभाव मर्यादाका टूटना है। पुरानी रिवाजों परिपाटियोंका टोड़ना ही इस हानिकी जड़ है। आप सहजमें ही यह बात देख सकेंगे कि आजकलके युवकोंको स्वास्थ्य रक्षाके नियम, बचपनसे ही नहीं सिखाये जाते। पुस्तकोंमें पढ़ लेना दूसरी बात है और नियमोंका जीवनमें गुथ जाना दूसरी। माता पिताओंको केवल यह चिन्ता रहती है कि उनके लड़के ( लड़कियोंके सम्बन्धमें यह चिन्ता भी नहीं ) किसी भांति अंग्रेज़ीके टूटे फूटे कुछ अक्षर सीखकर नौकर हो जायं ( कैसा बड़ा उद्देश्य है! )। कालेज या स्कूलमें दाख़िल करानेके बाद माता पिता समझते हैं कि उनका कर्तव्य समाप्त हो चुका। कितने ऐसे पिता हैं जो अपने पुत्रोंकी देख रेख करते रहते हैं। कितने ऐसे हैं जिन्हें अपने पुत्रोंका पूरा हाल मालूम रहता है और जो उनको धर्मोपदेश करते रहते हैं। माताएं भी पहलेकी अपेक्षा अधिक मूर्ख होती हैं। वृद्धा स्त्रियोंको स्वास्थ्यके नियमोंका, पथ्यापथ्यका विचार रहता है। वह प्रायः आजकलकी युवतियोंको नहीं रहता। यह तो दुर्दशा हुई शिक्षित समाज की। अशिक्षित समाजका तो भगवान ही मालिक है। देहातमें भी देखा जाता है कि वृद्ध मनुष्य लड़कों और युवकोंसे अधिक स्वस्थ होते हैं। इसका कारण यही है कि वृद्ध मनुष्योंको स्वास्थ्य रक्षाके नियम बचपनसे ही सिखाये जाते थे और वे उनका पालन भी करते थे, पर आजकलके युवकोंको यह बातें नहीं सिखाई जातीं। अब प्रश्न यह उठता है कि ५० वर्ष पहिले ही देहातोंमें स्वास्थ्य रक्षाके नियम सिखाने कौन जाता था? क्या पहिले भी स्कूल थे? क्या पहिले भी हाईजीन और सेनीटेशनकी पुस्तकें 'वे टू हेल्थ'की तरह पढ़ाई जाती थीं? उत्तर देना पड़ेगा कि जो शिक्षा पहले मिलती थी वह आधुनिक

व्याख्यानोंसे अधिक प्रभाव शाली होती थी, क्योंकि उसकी नींव श्रद्धाके पवित्र जलसे सींची जाती थी। प्रत्येक हिन्दू वैष्णवको ( वैष्णवोंमें ही पूर्वकालमें और अब भी पवित्रताका बड़ा ख़्याल रहता है ) जो पवित्रता और शुद्धता छुआ छूतके नियम सिखाए जाते थे, वह वैज्ञानिक दृष्टिसे बड़े उपयोगी थे। गांव गांव, गली गली, रामायण महाभारतकी कथाएं प्रति दिन हुआ करती थीं, जिनसे हिन्दुओंके दिलमें श्रद्धा उत्पन्न होती थी और वे धार्मिक जीवन व्यतीत करनेकी चेष्टा करने लगते थे। अब स्कूलोंमें यदि स्वास्थ्य रक्षाके नियम सिखाए भी गए तो उनका स्मरण परीक्षाओंके दिनोंमें ही होता है। एक साधारण मिसाल ले लीजिये। किसी गाँवमें जाइये और देखिये कि ब्राह्म मुहूर्त्तमें उठनेवाले (early riser) और प्राणायाम करने वाले ( प्राणायाम बड़ा लाभकारी होता है ) कितने मिलेंगे। चार बजेसे ही कुओंपर भीड़ लग जाती है। शहरोंमें आफ़िसके बाबुओंसे तो पूछिये कि आफ़िससे लौटकर गप्पोंके और दस घंटे सोनेके सिवा कभी देश और जातिकी उन्नतिकेलिए कोई काम करते हैं।

यहांपर यह भी कह देना उचित जान पड़ता है कि यह दशा बहुत दिन नहीं रहेगी, घातक परिवर्तन जितने होने थे हो चुके। अब इस देशके आदर्श दृढ़ हो चले। साथ ही साथ देशवासियोंके हृदयोंमें देशसेवाकी घटा उमड़ रही है और श्रद्धाका पवित्र शीतल पावस वर्षाकर, उनके हृदयाकाशको स्वच्छ और निर्मलकर रही है। या तो फिरसे धार्मिक श्रद्धा उत्पन्न हो जायगी या वह केवल अपना रूप बदलकर देशभक्तिमें परणित हो हमारी पथ प्रदर्शक होगी।

दूसरा कारण इस अवनतिका देशकी आर्थिक अवनति है। किसी कविने कैसा ठीक कहा है—दारिद्र्यात् ह्रियमेति, ह्री परिगतः सत्वात् परिभ्रश्यते इत्यादि।

इस सम्बन्धमें हम डा० केशवदेवजीके लेखसे कुछ उद्धृत करते हैं :—

कांग्रसके दूसरे दिन मध्याह्नकालमें सभापति महोदयने सात और महानुभावोंके संग हमें भी लंचके लिए निमन्त्रण दिया। भोजन वैसेही सात्विक था और जब उन महानुभावोंको ज्ञात हुआ कि मैं न केवल निरामिष भोजी हूँ किन्तु तम्बाकू, शराब, चाय, काफी, कोकादि किसी भी व्यसनमें ग्रसित नहीं तो डाक्टर कैलागकी प्रसन्नताकी सीमा न रही। जहांतक थियेरीका सम्बन्ध था इन महानुभावोंने वैदिक संस्कारों, आर्य्यजीवन और विवाहादिके विषयमें हमारे विचारोंकी खूब प्रशंशाकी, परन्तु जब उन्होंने औसत (Life) आयपर प्रश्न किया तो हमें लज्जित हो उत्तर देना पड़ा कि संसारकी सभ्य जातियोंमें सबसे थोड़ी औसत आयु भारतवर्षके लोगोंकी है। लोग दरिद्री हैं। पेटभर अन्न नहीं मिलता, जिन्हें खाना मिलता है उन्हें निस्सार मिलता है और जिनमें शक्ति है वह प्रायः अज्ञानके कारण उत्तम भोजन, उत्तम आचार व्यवहार द्वारा जीवनको उच्च नहीं बनाते। लूथर बरबंक वह सज्जन हैं जो वनस्पतिशास्त्रके एडीसन माने गये हैं। वैज्ञानिक जादूगर ढूंढ़ना हो तो यही विद्वान हैं। अमेरिकामें आपकी ख्याति बहुत हो चुकी है। जब उनसे पूछा गया तो उत्तर दिया कि चार पुश्तोंमें (generations) मुकम्मिल मनुष्य उत्पन्न किया जा सकता है। इसी समय हमें उस महानुभावका पता मिला जिसने सबसे पहिले इस देशमें मनुष्योंको श्रेष्ठ रीतिसे पैदा करनेका विचार उत्पन्न किया है।

डाक्टर स्टीफन स्मिथ जो आजकल ९३ वर्षकी आयुके हैं, उनका विश्वास है कि मनुष्य को १०० वर्ष जीना चाहिये। '100 years is normal life" "सौ वर्ष साधारण जीवन है" यह आपका कथन है। आपके सामने दो शब्द सर्वदा उपस्थित रहते हैं, Eugenics और Euthenics अर्थात् उत्तम विधि द्वारा सन्तानोत्पत्ति और उत्तम आचार व्यवहार द्वारा शरीर रक्षा। जब आपसे पूछा गया कि सर्वसाधारण जो न तो वैज्ञानिक हैं न विद्वान वह कैसे इस विचारको अपने जीवन द्वारा चरितार्थ कर सकते हैं तो आपने उत्तर दिया "Being well born and living well" उत्तम उत्पत्ति और उत्तम व्यवहारसे। आपने कहा कि जब मैं इन शब्दोंमें Race Betterment की फ़िलासफ़ी बताता हूँ तो यह बड़ी सहज बात प्रतीत होती है परन्तु सच तो यह है कि इनपर अमल करना अति दुस्तर है। प्रथम तो हमें अपनी उत्पत्तिमें हस्ताक्षेपका अधिकार नहीं-हां, हमें अपनी सन्तति-

के चुननेमें बहुत कुछ अधिकार प्राप्त है। भविष्यकी सन्तानको बनाना और सुपरमेन (देवता) पैदा करना हमारे हाथमें है। नवयुवकोंके दृढ़ और बलवान हृदयोंमें प्रयात्मा (Conscience) की ऐसी उन्नति होना चाहिये कि वह अपने समान गुण, कर्मानुसार बलवती, शुद्ध हृदय और उन्नत स्त्रीके साथ विवाह करें। तदनन्तर उन्हें शुद्ध आचरणसे रहना चाहिये जो वह प्रायः नहीं रहते। प्रायः हम सबमें न्यूनाधिक त्रुटियां हैं और वह वस्तुतः "अति" हो जाती हैं। अन्तमें वह विनाशजनक सिद्ध होती हैं। मैंने जीवनमें इन नियमोंका पालन किया है समाजोन्नतिके लिए हम समाज तथा व्यक्तियोंपर निर्भर हैं। जब अमेरिकाके लोग जागेंगे और हमारे विचारोंको कथनसे नहीं वरन क्रिया द्वारा जीवनमें घटावेंगे तो निस्संदेह हमारी औसत आयु ३०० वर्षकी होगी। मनुष्यकी शारीरिक रचना सौ वर्षकी प्रतीत होती है। इस वार्तालाप और कथन में मेरे सामने 'जीवेम शरदः शतम्' का वेदोक्त वाक्य उपस्थित था।"

---

(२) कन्नम्वाड़ीका जल-भांडागार।

**गत नवम्बरके चित्रमय जगतमें अध्यापक एम-एन गोडबोले, एम्-ए. बी. एस-सी, द्वारा लिखित एक मनोरञ्जक लेख उपरोक्त जल भांडागारपर निकला है। इस प्रान्तमें जल भांडागार देखनेमें बहुत कम आते हैं। यहां तो श्रीभागीरथीके पवित्र जलसे भूमि सिंचित होती है। पर राजपूतानेके रेतीले मैदानोंकी उपज बढ़ानेकेलिए कई रजवाड़ोंमें जल-भांडागार बनवाये गए हैं। जयपुर, भरतपुर, अलवर, उदयपुर, धौलपुर इत्यादि रियासतोंमें बड़े बड़े बन्द हैं। मयसूर राज्यने भी अपनी प्रजाकी सुविधाकेलिए यह नया बन्द बनवाना आरम्भ किया है। इससे पहिले मयसूर राज्यने कावेरीका बांद शिवसमुद्रम् पर बांधकर विद्युद्द्वारा उत्पन्न करनेका प्रबंध किया था। इस नए बंदसे क्या लाभ होगा, इसका आकार और इसकी स्थिति क्या होगी, इत्यादि बातें नीचे उद्धृत अंशसे स्पष्ट होंगीः—**

कावेरी नदीका उद्गम पश्चिमी घाटसे है और मयसूरकी सीमामें यह कोई १५० मीलतक बहती है। और इसके बाद 'शिवसमुद्रम' के कृत्रिम जल-प्रपातके आगे आकर मदरास सरकारकी सीमामें प्रवेश करती है। लगभग ९८ लाख रुपया खर्च करके मैसूरसरकारने शिवसमुद्रम्में ५०००० हार्स पावर (अश्वशक्ति) के समान बिजलीकी शक्ति उत्पन्न करनेका प्रबंध किया है। भारतवर्ष भरमें विद्युत् उत्पन्न करनेका यह सबसे बड़ा कार्यालय है। मैसूर सरकारको प्रतिवर्ष इस बड़ी भारी शक्तिसे १४ लाखका शुद्ध लाभ (नेट्प्रॉफिट) है। इसमेंसे १२ लाख कोलारकी सोनेकी खानसे और दो लाख बंगलोर तथा मैसूर, इन दो नगरोंसे है। हां, गर्मियोंमें पानीका संचय कम हो जाता है और कोलारके लिए बिजली उत्पन्न करना कठिन हो जाता है। इसीलिए मैसूर-सरकारने यह विचार किया है कि कन्नम्वाड़ीमें एक बड़ा सा सरोवर बांधकर बरसातमें ही पानी जमाकर लिया जाया करे।

बिजलीकी शक्ति उत्पन्न करनेके अतिरिक्त सिंचाईके काममें भी कावेरीके पानीका उपयोग बहुत दिनसे किया जा रहा है। मैसूर, तंजौर, त्रिचनापली, इत्यादि प्रान्तोंकी बहुतसी भूमि कावेरीके जलसे सींची जा रही है। सिर्फ मदरास इलाकेमें लगभग १० लाख एकड़ ज़मीन इस नदीके पानी पर अवलंबित है। मैसूर रियासतके इंजिनियर लोगोंने ऐसा हिसाब लगाया है कि बरसातमें जब कभी नदीमें बाढ़ आती है तब एक सेकेंडमें २५०,००० घनफुट पानी नदीसे बह जाता है! ऐसी दशामें मैसूर-सरकारने यह विचार किया कि अपनी अड़चनको दूर करनेकेलिये यदि किसी सुभीतेकी जगहमें सरोवर बांधकर बरसातमें खूब पानी एकत्र कर लिया जाया करे और फिर गर्मियोंमें उसीका धीरेधीरे उपयोग किया जाया करे तो हमारा और मदरास सरकार दोनोंका काम बनेगा।

बस, इसी विचारके अनुसार अक्टूबर १९११ में सरकारकी आज्ञा लेकर कार्य प्रारम्भ कर दिया गया। मैसूर सरकारने सरोवर बांधनेकी जगहका चुनाव बड़ीही सावधानीसे किया है। सरोवरकी बंधाईका कार्य जिस जगह हो रहा है, उससे थोड़ीही दूरपर अभी हालमें एक शिलालेख मिला है। उससे अब यह सिद्ध हुआ है कि सन् १७९४ ई० में टीपू सुलतानने भी यही जगह सरोवर बांधनेके लिए पसन्द की थी। इससे क्या यह बात सिद्ध नहीं होती कि इस प्रकारके सर्वजनोपयोगी कार्य करनेकी बुद्धि और कला-कौशल बहुत प्राचीन कालसे भारतमें चला आता है।

इस बांधका काम बहुत विस्तृत है और सरोवरभी बहुत बड़ा बनने वाला है, इस कारण आसपासके कई गांव उठा दिये गये हैं। कुल २७७० एकड़ ज़मीन, अर्थात् १४०३ वर्ग

मील भूमि, पानीके नीचे डूबी रहेगी। सत्रह गावोंके लोगोंको नवीन जगह देकर सरकार नवीन गांव तैयार करवा रही है।

**बड़े हर्षका विषय यह है कि यह सब काम भारतवर्षीय सज्जनोंकी निगरानीमें हो रहा है।**

सरोवर बांधनेका सब काम 'देशी' लोगोंकी ही देखरेखमें हो रहा है। पूनेमें 'खंड़क वासला' का सरोवर प्रसिद्ध है; परन्तु इस सरोवरका कार्य उससे भी अधिक विस्तृत रूपमें हो रहा है। नदीके मध्यभागमें दरवाजे रखे हुए हैं और नदीके दोनों ओर बड़ी युक्तिसे कार्य हो रहा है। सिंचाईके काम और विजली उत्पन्न करनेकेलिये नियमित रूपसे पानी पहुंचने के निमित्त "स्टोनी पेटेंट स्लुइस" गेटका प्रबन्ध किया गया है। गर्मियोंमें, जब कि नदीका प्रवाह मध्यभागमें था, दोनों ओर से बांद बांधकर नदीका प्रवाह एक ओर घुमा लिया गया। इसके बाद मध्यभागका कार्य प्रारम्भ किया। इस प्रकार युक्तिपूर्वक कार्य करनेसे अबतक आधा कार्य हो चुका है। मैसूर सरकारने हिसाब लगाया है कि इस कार्यमें अबतक जो खर्च हुआ है वह १५ वर्षमें व्याज सहित, सिंचाई और विजलीकी आमदनी से, निकल आवेगा। १६ जुलाई १९१५ से सरकारको लाभ होने लगा है; और नवीन भूमि उपजाऊ हो गई है। सम्पूर्ण कार्य समाप्त होने पर १२५,००० एकड़ भूमि मैसूर सरकारकी सीमामें नवीन उपजाऊ बनेगी। अतः यह कन्नम्वाडीका सरोवर संसारके सामने सदैव यह बात पुकार पुकारकर कहता रहेगा कि भारतीय लोग बड़ेसे बड़े उत्तरदायित्वके कार्य सहजमें कर सकते हैं हां, उन्हें अवसर मिलना चाहिए! इसमें सन्देह नहीं कि जो लोग मौका न देते हुए ही सदैव यह कहा करते हैं कि-भारतीय लोग बड़े कार्य करने के लिए अयोग्य हैं-यह सरोवर सदैव के लिए उनकी आखें खोल देगा!

**चित्रमय जगत्के उपरोक्त अङ्कमें 'घर्षण स्नान' 'गतिनिरीक्षण और हस्त कौशल' और 'मधुमक्खिका' शीर्षक लेख बड़े रोचक और उपयोगी है। हमें हर्ष है कि इस पत्रने इतनी उन्नतिकी है उसके द्वारा विज्ञानका प्रचार होता है।**

---

## चुम्बक

[ ले० सालिग्राम भार्गव एम० एस० सी० ]

गताङ्कसे सम्मिलित

**पहिले लेखमें हम यह बतला चुके हैं कि यदि कोई फ़ौलादका टुकड़ा किसी चुम्बकके पास रख दिया जाय, तो वह चुम्बक बन जाता है, पर इस रीतिसे उसके चुम्बक बननेमें बड़ी देर लगती है और वह बलवान चुम्बक नहीं बनता। अतएव चुम्बक बनानेकी अन्य रीतियोंपर विचार करना आवश्यक है।**

पहिली रीति—**जिस लोहेके टुकड़ेको चुम्बक बनाना हो, उसे ज़मीनपर या मेज़पर रक्खो और उसका एक सिरा बाएँ हाथके अंगूठेसे दबाओ। अब दाएँ हाथमें किसी चुम्बकको पकड़कर उसका एक छोर लोहपर अंगूठेके पास रखो, तदनन्तर उसे खींचकर लोहेके दूसरे छोरतक ले जाओ। फिर चुम्बकको पहिलेकी भांति लोहेपर रखकर दूसरे छोरतक खींचो। दस बारह बार चुम्बकको इसी भांति लोहेपर फेरो, पर यह ध्यान रहे कि चुम्बकका वही छोर हर बार अंगूठेके पाससे लोहेके दूसरे छोरतक खींचा जाता है। अब लोहेको उलट दो। पहिले वाला छोर ही अंगूठेसे दबाओ और चुम्बकका पहिलेवाला छोर ही पहिलेकी भांति लोहेपर फेरो। [देखो चित्र १]।**
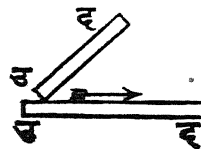
चित्र नं० १

**इस रीतिमें लोहेके टुकड़ेके प्रत्येक भागपर चुम्बक एक बार फेरा गया है, इसलिए इस रीतिको सकृद्स्पर्शकी रीति कहते हैं। यह रीति फ़ौलादके छोटे छोटे तारोंकेलिए जैसे सीनेकी सुइयां, बहुत अच्छी है। परन्तु जो प्रत्येक बार चुम्बक एक ही प्रकार न फेरा जावे तो कभी कभी सिरोंके**

अतिरिक्त चुम्बकीय केन्द्र बीचमें भी उत्पन्न हो जाते हैं।

दूसरी रीति—यह रीति सं० १७४५ में निकाली गई थी। इस रीतिसे चुम्बक बनाना हो तो दोनों हाथोंमें एक एक चुम्बक लेकर उनके विषम जातीय सिरे (केन्द्र) लोहेके टुकड़ेके (जिसे चुम्बक बनाना है) बीचमें रखो और तदनन्तर प्रत्येक
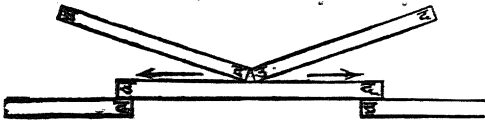
चित्र नं० २

चुम्बकको लोहेसे स्पर्श कराते हुए, लोहेके उस सिरेतक ले जाओ, जो उसके निकटवर्ती हो। जब चुम्बक लोहेके दोनों छोरोंतक पहुंच जायं, तो फिर उन्हें लोहेके मध्यमें पहिलेकी भांति लाकर रखो। तदनन्तर पहिलेकी भांति खींचकर लोहेके दोनों छोरोंतक ले जाओ और फिर लोहेके मध्यमें लाकर रखो। इस प्रकार दस बारह बार फेरनेसे लोहेका टुकड़ा चुम्बक बन जायगा। [देखो चित्र २]

इस रीतिसे लोहेके बड़े बड़े टुकड़े भी अच्छे चुम्बक बनाए जा सकते थे, अतएव इस रीतिमें उन्नति करनेकी चेष्टा की गई। जो परिवर्तन इस रीतिमें किया गया, वह नीचे दिया जाता है।

दो चुम्बक लो और उनको इस प्रकार एक रेखामें रखो कि उनके विषम जातीय सिरे आमने सामने हों। इन दोनों सिरोंपर वह लोहेकी छड़ रखो जिसे चुम्बक बनाना है। अब दो और चुम्बक लेकर, उनको दोनों हाथोंमें पकड़, और उनके विषम जातीय सिरे मिलाकर, लोहेके टुकड़ोंके बीचमें रखो, पर यह ध्यान रहे कि इनके विषम जातीय सिरे उसी क्रमसे रखे जायं जैसे नीचे वाले चुम्बकोंके रखे हैं, अर्थात् यदि दाईं तरफ़ रखे हुए नीचे वाले चुम्बकका छोर उत्तरी हो तो दाएँ हाथमें थामे हुए चुम्बकका भी उत्तरी हो (यहां पर चुम्बकोंके उन्हीं छोरोंका विचार है, जो लोहेसे स्पर्श करते हैं)। चुम्कोंके रखनेकी विधि चित्र २ से स्पष्टतया समझमें आ जायगी।

ऊपरके चुम्बकोंका झुकाव दो या तीन अंशके क़रीब होना चाहिए। यद्यपि झुकाव न्यूनाधिक हो तो भी लोहा चुम्बक अवश्य बन जायगा, पर प्रयोगोंसे सिद्ध हुआ है कि दो या तीन डिगरीका ही झुकाव रखनेसे चुम्बक अच्छा बनता है।

बड़े और चौड़े टुकड़ोंके लिए यह रीति बहुत अच्छीहै परन्तु उनकी मोटाई $\frac{१}{१२}$ इंचसे अधिक न हो। जितना कड़ा फौलाद होता है उतना ही चुम्बक प्रबल होता है। इस रीतिमें एक भागपर एक चुम्बक फेरा जाता है और दूसरे भागपर दूसरा। इसलिए इस रीतिको पृथक् स्पर्शवाली रीति कहते हैं। इस रीतिसे बीच बीचमें केन्द्र (गौण केन्द्र) बन जानेका कोई भय नहीं है। इसी कारण दिक्सूचकके चुम्बक इस रीतिसे बनाये जाते हैं।

तीसरी रीति—यह सब तरहके छोटे बड़े चौड़े और मोटे टुकड़ोंके लिए उपयुक्त है। दो चुम्बकोंके विषम जातीय सिरोंके बीचमें लकड़ी या काग़ज़के चौथाई इंच मोटे दो टुकड़े या इतनी ही मोटी एक लकड़ीकी पट्टी देकर बांध लो जैसा चित्र ३ में दिखलाया गया है इस जुट्टको लोहेके टुकड़ेपर रखकर एक सिरेसे दूसरे सिरे तक ले जाओ, फिर दूसरे सिरेसे लौटालकर पहिले सिरेपर ले आओ। इसी प्रकार दस या बारह दफ़े फेरो। लोहेका टुकड़ा चुंबक बन जायगा, पर बहुत ही अच्छा चुंबक बनानेकेलिए इस रीतिमें यह परिवर्तन करना पड़ेगाः—जुट्टको लोहेके बीचमें रखो, बीचसे किसी एक सिरेतक ले जाओ, वहांसे दूसरे सिरेतक लौटाल लाओ, फिर दूसरे सिरेसे बीचतक लाओ और बीचमें पहुंचनेपर जुट्ट सीधा ऊपर उठा लो। थोड़ी देर
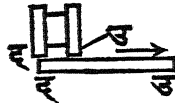
चित्र नं० ३

बाद फिर बीचमें रखकर, बीचसे एक सिरेतक एक सिरेसे दूसरे सिरेतक और दूसरे सिरेसे बीच तक फेरो। प्रत्येक बार उठाने और रखनेके बदले बीचसे एक सिरेतक इससे दूसरे तक और दूसरेसे फिर पहलेतक--इस प्रकार १० या बारह बार एक सिरेसे दूसरे सिरेतक ले जाकर, दूसरे सिरेसे बीचमें लाकर सीधा ऊपर उठा लो। इस प्रकार यह जुट्ट प्रत्येक भागपर उतनी ही बार फेरा जावेगा। दो चुंबकोंके जुट्टके बदले नाल चुंबकसे भी काम लिया जा सकता है। इस रीतिसे बहुत से टुकड़े बराबर रखकर एक ही बार चुंबक बनाये जा सकते हैं जैसा चित्र ४ में दिखलाया गया है। बीच वाले छड़ प्रबल चुंबक बनते हैं और किनारे वाले कमज़ोर होते हैं। इसलिए आपसमें एक दूसरेकी जगह बदलकर बीचवालोंको किनारेपर और किनारेवालोंको बीचमें बदलकर रखनेसे सब परिपूर्ण चुंबक बन सकते हैं। क्योंकि बीचके भागमें सिरोंके भागसे अधिक चुंबकत्व होता है इस रीतिसे ऐसे चुंबक नहीं बनाये जाते हैं कि जिनके प्रत्येकभागमें समान चुम्बकत्व होना चाहिये जैसे दिक् सूचकोंके चुम्बक। उनसब लोहेके टुकड़ोंको, जिन्हें चुम्बक बनाना हो, एक सीधी लकीरमें न रखकर चौखटकी शकलमें रख सकते हैं। एक कोनेसे नाल चुम्बक फेरना आरम्भ किया जावे और दस बारह चक्कर उस चौखटके चारों ओर लगाकर आरम्भमें जिस स्थानपर था, वहां लाकर उठा लिया जावे। यदि नाल चुम्बक अच्छा हो तो इस रीतिसे बहुत अच्छे चुम्बक बनते हैं। चुम्बकोंको अलग करते समय उनके जोड़ोंपर एक लोहेका टुकड़ा दोनों चुम्बकोंपर रखकर अलग किया जावे। अलग करते समय बहुतसा चुम्बकत्व जाता रहता है, परन्तु इस

चित्र नं० ४

चित्र ४—इसमें चार लोहेके टुकड़े एक सीधमें रख कर चुम्बक बनाए गए है।

उपायसे बहुत कमी नहीं होती। कुलम्ब बड़े वैज्ञानिक हो गये हैं। उनके कामसे आगे चलकर हमको अधिक परिचय होता जायगा। उन्होंने भी अपने प्रयोगोंकेलिए चुम्बक इस रीतिसे बनाये, किन्तु उनकी रीति इस रीतिसे जो अभी बताई गई है थोड़ीसी भिन्न थी। उनके चुम्बक इस प्रकारसे खड़े नहीं थे जैसे ऊपर रक्खे गये, परन्तु थोड़ेसे टेढ़े थे जैसे चित्र ५ में दिखलाये
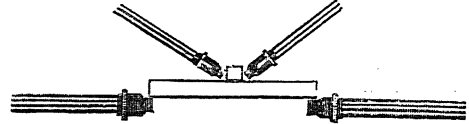
चित्र नं० ५

गये हैं और वे छड़ोंको दूसरी रीतिकी नाईं दो चुम्बकोंपर रखते थे। चित्रमें यह भी दिखलाया गया है कि वे एक चुम्बककी जगह चुम्बकोंके जुट्टसे काम लिया करते थे। यह जुट्ट इस प्रकार बनाये जाते थे जैसा कि चित्र६व७ में दिखाया गया हैं। इनके सिरोंपर लोहेके टुकड़े लगा दिये जाते हैं और ऊपर नीचेके दोनों चुम्बकोंके बीचमें एक ऐसा चुम्बक रखा जाता है जो दोनोंसे लम्बा हो। मोटे चुम्बक नहीं लिए जाते हैं। दो चुम्बकोंके साधारण जुट्टकी प्रबलता उनकी प्रबलताओंके जोड़के बराबर नहीं होती इस लिए ही यह युक्ति निकाली गई। इन सब चुम्बकोंके उत्तरी सिरे एक ओर रहते थे और एक लोहेका टुकड़ा उनके सिरोंपर पेचोंसे कस दिया जाता था। चुम्बकोंका जुट्ट एक दूसरी रीतिसे भी बनाया जा सकता है। एक समान चुम्बकोंको सीढ़ियों-

चित्र नं० ६ चित्र नं० ७
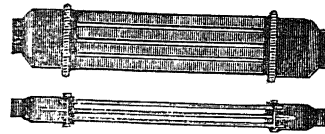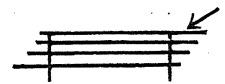
[चित्र ६—में १२ चुम्बकोंका एक जुट्ट दिखाया है। चार चार चुम्बकोंकी तीन तह हैं। ऊपरसे देखनेसे जुट्ट

ऐसा दिखाई देगा। जैसा चित्र ६ के ऊपरके भागमें दिखाया है। बराबरसे देखनेपर, नीचे दिए हुए चित्रके समान दिखाई देगा। बीचके चारों चुम्बक ऊपर और नीचेकी तहोंके चुम्बकोंसे अधिक लम्बे हैं। ]

की तरह जोड़ देते हैं जैसा चित्र७में दिखलाया गया है। एक को छोड़कर एकका सिरा थोड़ा सा आगे निकाल दिया जाता है। ऐसा समझा जाता है कि इस जुट्टमें एक सिरेका दूसरेपर कम प्रभाव पड़ता है। एक उत्तरी सिरा दूसरेके उत्तरी सिरेमें दक्षिणी सिरा उत्पन्न करता है जिससे उस सिरेका बल कम हो जाता है।

नाल चुम्बक बनानेकी रीति

नाल चुम्बक भी इन्हीं रीतियोंमें थोड़ासा परिवर्तन करनेसे बनाया जा सकता है। उस लोहेकी नालको कि जिसको चुम्बक बनाना चाहते हो किसी जगह रखो। (अच्छे चुम्बक बनाने के लिए १२॥ इन्च लम्बी, १॥ इन्च चौड़ी और $\frac{१}{४}$ इन्च मोटी छड़ लो और उसे इस प्रकार मोड़ो कि ६॥ इन्च लम्बी नाल बन जाय। दोनों बाज़ुओंमें १॥ इन्चका अन्तर हो)। अब (१) दोनों सिरोंपर एक लोहेका टुकड़ा रख दो (देखो चित्र ८) या (२) इस नालके एक सिरेके
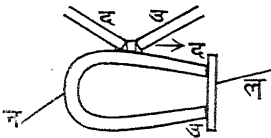
चित्र नं० ८

न--नाल ल--लोहेका टुकड़ा
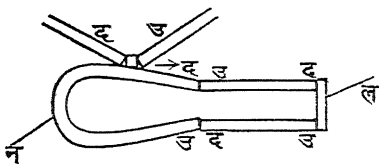
चित्र नं० ९

न—नाल। ल—लोहेका टुकड़ा।

सामने एक चुम्बकका उत्तरी सिरा और दूसरे सिरेके सामने दूसरे चुम्बकका दक्षिणी सिरा रखकर इन चुम्बकोंके सिरोंको एक लोहेके टुकड़ेसे जोड़ दो (देखो चित्र ९) (३) या इस नालके सिरोंको दूसरे नाल चुम्बकसे जोड़ दो। (देखो चित्र १०)
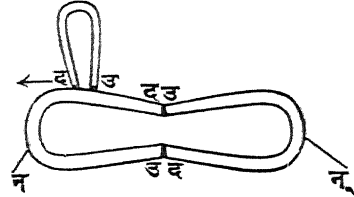
चित्र नं० १०

न—नाल। न१—नाल चुम्बक।

इस प्रकार नाल चुम्बकको रखकर उसके एक एक भागको दूसरी रीतिसे चुम्बक बना लो पर इस बातका ध्यान रहे कि यदि एक भागको चुम्बक बनानेके समय दाहिने हाथके चुम्बक-का उत्तरी सिरा नीचे था तो दूसरे भागपर चुम्बक फेरते समय दाहिने हाथके चुम्बकका दक्षिणी सिरा नीचे हो। बात यह है कि लोहेके टुकड़ोंका वह सिरा कि जिससे चुम्बक अलग होता है चुम्बकके सिरेसे भिन्न होता है। अलग होने वाला सिरा यदि उत्तरी हो तो टुकड़ेका सिरा दक्षिणी होगा। इस नियमके अनुसार जब नालके एक बाज़ूपर दाहिने हाथ वाले चुम्बकका सिरा उत्तरी था तो उस बाज़ूका सिरा दक्षिणी हुआ। जब नालका एक सिरा दक्षिणी हो गया तो दूसरा उत्तरी बनानेकेलिए यह ज़रूरी हुआ कि दक्षिणी सिरा अलग हो। इसलिए दूसरे बाज़ूको चुम्बक बनानेके समय चुम्बक अथवा चुम्बकका सिरा बदल लेना चाहिये।

इस नियमसे यह भी सिद्ध होता है कि जब इस नालके सिरोंके सामने चुम्बक रखे जाते हैं

तो फेरे जाने वाले चुम्बकका वैसाही सिरा नालके बाजूके सिरेसे अलग हो कि जैसा उस चुम्बकका है जो उसके सामने रखा है। यदि चुम्बकका उत्तरी सिरा रखा हो तो फेरते समय उत्तरी सिरा ही अलग हो।

नाल चुम्बोंसे नाल चुम्बक बनानेकेलिए नालके सिरोंसे नाल चुम्बक मिलाकर रखो। जिस सिरेको उत्तरी बनाना चाहो उसके सामने दक्षिणी सिरा हो और दूसरेके सामने उत्तरी। फिर नाल चुम्बक हाथमें लेकर और उसका दक्षिणी ( अथवा उत्तरी ) सिरा सामने रखे हुए चुम्बकके दक्षिणी ( अथवा उत्तरी सिरे ) पर रखकर उसको १० या १२ बार जुट्टपर चारों ओर घुमाओ और जहांसे चले थे वहां लाकर उठा लो। नाल चुम्बक बनजावेगा। ( चित्र नं० १० देखो )

नाल चुम्बकके उपयोग

नाल चुम्बक लोहेके बड़े बड़े टुकड़े उठानेके काममें आता है। इनकी बोझा उठानेकी शक्ति छड़ या दंड चुम्बकसे कहीं अधिक होती है क्योंकि इनके दोनों सिरे उठानेके काममें आते हैं। और इस शक्तिका अनुमान करनेकेलिए इसके सिरोंपर एक कुन्देवाला लोहेका टुकड़ा लगा रहता है। प्रयोगोंद्वारा यह भी ज्ञात हुआ है कि जितनी अच्छी तरह यह लोहेका टुकड़ा चुम्बकके सिरोंपर चिपटेगा उतना ही अधिक बोझ चुम्बक उठा सकेगा। इसलिए चुम्बकोंके सिरे पहिले ही रेतकर चिकने कर दिये जाते हैं और शेष भागोंपर वार्निश लगा रहता है, जिससे फौलाद पर बाहिरी वस्तुओंका कोई प्रभाव न पड़े और उसके गुण ज्योंके त्योंहीं बने रहें।

विना चुम्बककी सहायताके लोहेका चुम्वक वनाना।

इन तीनों रीतियोंमें चुम्बक बनानेकेलिए एक, दो अथवा अधिक चुम्बकोंकी आवश्यकता पड़ती है किन्तु बिना चुम्बकके भी चुम्बक बन सकता है। खड़ी या उस दिशामें रखकर जो आगे बतायी जावेगी इस छड़के ऊपरी सिरेपर हथोड़ेसे दस बारह बार चोट लगाओ। यदि इस छड़के नीचे लोहेका टुकड़ा रख लिया जावे तो और भी अच्छा हो। उन देशोंमें जोकि भूमध्यरेखाके उत्तरमें हैं नीचेका सिरा उत्तरी और ऊपरका सिरा दक्षिणी हो जायगा किन्तु उन देशोंमें जो भूमध्यरेखाके दक्षिणमें है नीचेका सिरा दक्षिणी और ऊपरका उत्तरी होगा। इससे यह फल निकाल सकते हैं कि पृथ्वी स्वयं ही चुंबक है और इस पार्थिव चुंबकका दक्षिणी सिरा उत्तरमेंऔर उत्तरी सिरा दक्षिणमें है। (देखो चित्र ११)
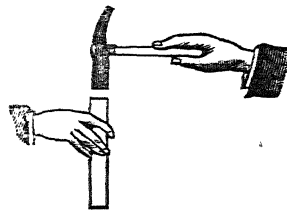
चित्र नं० ११

नीचे छड़ है और ऊपर व है।

विजलीसे चुम्वक वनाना

ऊपर दी हुई रीतियां वही मनुष्य काममें लायगा कि जिसके पास बिजली उत्पन्न करनेका उपाय न हो अथवा जो बिजलीके गुणोंसे अपरिचित हो।

बिजलीकी धारासे चुम्वक बनानेकी रीति सबसे सरल और निर्दोष है।

रुई या रेशमसे ढके हुए तांबेके मोटे तारोंकी एक छोटी सर्पिल बनाओ और प्रबल विद्युद्धारा उसमें बहाओ (चित्र १२)। इस सर्पिलमेंसे
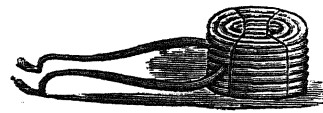
चित्र नं० १२

एक ही बार लोहेकी छड़ धीरे धीरे निकालनेसे परिपूर्ण चुम्बक बन जायगी। दो या तीनबार निकालनेसे तो अवश्य ही परिपूर्ण चुम्बक बन जायगी। इस रीतिमें सर्पिल खड़ा रखना पड़ेगा किंतु बड़े सर्पिलोंको लिटा देते हैं और छड़ोंको उनके अन्दर रख देते हैं। यदि सर्पिल खड़ा हो

और इसके प्रत्येक चक्करमें घड़ीकी सुईकी नांई धाराका प्रवाह होता हो तो छड़का नीचेका सिरा उत्तरी और ऊपरका सिरा दक्षिणी होगा।

यदि बिजलीसे नाल चुम्बक बनाना हो तो रूई या रेशम लिपटे तांबेका तार इस नालपर लपेट देंगे और इस तारमें विद्युद्धारा बहा देंगे। यह नाल चुम्बक बन जायगा। ऐसे तांबेके तार लिपटे हुये नालको विद्युत्चुम्बक कहते हैं। इसका बड़ा महत्व यह है कि नियतधारा बहानेसे सदैव उस ही शक्तिका चुम्बक बनेगा। चित्र १३) इस चुम्बक-

चित्र नं० १३—विद्युत् चुम्बक
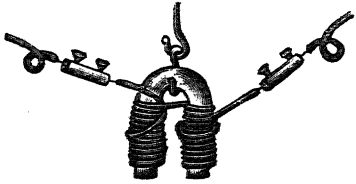
के चुम्बकत्वकी न्यूनाधिकताका कोई भय नहीं और इस विद्युत्चुम्बकके सिरोंसे दूसरे नालके सिरोंको जोड़ रखनेसे दूसरा नाल भी चुम्बक बन जाता है। तार लपेटते समय इस बातका ध्यान रहे कि एक बाजूपर सीधे हाथसे लपेटा जावे तो दूसरे बाजूपर उलटे हाथसे लपेटा जाना चाहिये। बिजलीके नाल चुम्बक बनानेकेलिए एक नालके आकारका सर्पिल बनाकर रखेंगे और धारा बहाकर नालको सर्पिलमें इस तरह डालेंगे कि उसका एक बाजू एक सर्पिलमें और दूसरा दूसरेमें हो। एक या दो बार डालनेसे नाल चुम्बक बन जायगा।

### चुम्बकोंकी रक्षा

इस विद्युत्चुम्बकके लिहाज़से कि जो जब विद्युत्धारा बहाई जाती है तब ही चुम्बक बनता है और चुम्बकोंको स्थिर चुम्बक कह सकते हैं। इन स्थिर चुम्बकोंको इसलिए कि उनके चुम्बकत्वमें कमी न आवे बड़ी होशियारीसे रखना पड़ता है। इन चुम्बकोंमें हानि करनेवाली पहली चीज़ पृथ्वी है। यदि कोई चुम्बक इस तरह रख दिया जावे कि इसका दक्षिणी सिरा उत्तरकी ओर हो तो पृथ्वी उस उत्तरी सिरा बना देनेका यत्न करती रहेगी जिसके कारण चुम्बकका चुम्बकत्व घटता जावेगा। इसलिए दो दंड चुम्बक एक बक्समें इस तरह रखते हैं कि एकका उत्तरी और दूसरेका दक्षिणी सिरा एक ओर हों और दोनों ओर दो लोहेके टुकड़े उनके विषम सिरोंको जोड़ते हुये रख देते हैं जैसा कि चित्र १४ में दिखलाया गया है।

चित्र नं० १४

ल—लोहेका टुकड़ा।

नालचुम्बकके सिरोंको भी एक लोहेके टुकड़ेसे जोड़ देते हैं। चुंबकको पृथ्वीपर या और किसी चीज़पर गिराना नहीं चाहिये न उसको कभी हथोड़े या और किसी चीज़से ठोकना चाहिये और कभी बहुत गरम भी नहीं करना चाहिये। यदि १००° श. तक गरम किया जावे तो ठंडा होनेपर फिर अपनी पहली अवस्थापर आ जावेगा किंतु इससे अधिक गरम करनेसे चुंबकत्व सदाके लिए कम हो जाता है। यदि किसी चुंबकका चुंबकत्व दूर करना हो तो उसको (चंबकीय) पूर्व पश्चिम दिशामें रखकर तपाकर लाल कर लो और फिर उसी दिशामें रखकर उसे ठंडा कर लो। चुंबकत्व बिलकुल कूंच कर जायगा। तीसरी रीतिमें थोड़ासा परिवर्त्तन करनेसे बहुत ही प्रबल चुंबक बनते हैं। लोहेके टुकड़ेको दो चुंबकोंपर रखनेके बदले विद्युत्चुंबकके सिरोंपर रख दो और नाल चुंबक लेकर उसपर उसी प्रकार फेरो जैसा कि ऊपर बतलाया गया है। विद्युत् चुंबक नालकी शकलके बहुत कम मिलेंगे। उसकी शकल बहुधा चित्र १५ कीसी होगी। दो लकड़ीकी रील लेकर
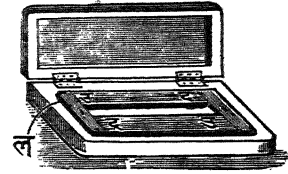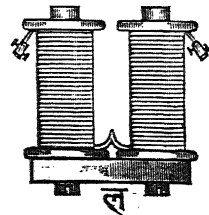
चित्र नं० १५

उनपर तार लपेट लिया जावेगा और दोनों रीलोंके छेदोंमें लोहेकी छड़ें रख दी जावेंगी और उन छड़ोंके नीचेके सिरोंपर एक लोहेकी छड़ रखदी जावेगी जैसा चित्रमें दिखलाया गया है। विद्युत् चुंबकोंसे आजकल बहुत काम लिये जाते हैं और उनकी शकल जिस कामके लिए जैसी अच्छी सिद्ध हुई है उसका समय समयपर वर्णन किया जायगा।

---

## समालोचना

हमारे शरीरकी रचना—रचयिता डा० त्रिलोकीनाथ वर्म्मा, बी एस-सी, एम्. बी., बी. एस., लखनऊ।

पृष्ठ संख्या २६८, चित्र संख्या ४६, जिनमें, १७ से अधिक हाफ़टोन चित्र हैं। मूल्य २।), कपड़ेकी जिल्द २॥), सुन्हरी अक्षरोंसे अलंकृत जिल्द, २॥।)

पुस्तकके नामसे ही ज्ञात होता है कि इस पुस्तकमें कौन सा विषय प्रतिपादित है। प्रत्येक शिक्षित मनुष्यको अपने शरीरकी रचनाका ज्ञान होना आवश्यक है। अतएव जिस अभावकी पूर्ति इस पुस्तकने की है उसका अन्दाज़ा सहजमें लगाया जा सकता है। डाक्टर साहबने हिन्दी साहित्यका जो उपकार इस पुस्तकको लिखकर और प्रकाशित करके किया है वह सराहनीय है।

यद्यपि विषय बड़ा कठिन है, तदपि चित्र देकर और साधारण बोलचालकी भाषाका प्रयोग करके विषय बड़ा सुगम कर दिया गया है। यथा शक्य सभी शब्दोंका अनुवाद हिन्दीमें कर दिया है। कुछ शब्द अंगरेज़ीके ज्योंके त्यों रहने दिये गए हैं, क्योंकि इनकेलिए अच्छे शब्द हिन्दीमें नहीं मिलते, पर हमारा विचार है कि यदि कोरे शब्दोंको ही देखा जाय, तो उनसे कोई अर्थ नहीं निकलता। शब्दको अर्थ सूचक शक्ति हम ही प्रदान करते हैं। शिक्षण द्वारा दूसरोंको यह बतला दिया जाता है कि अमुक शब्दका अमुक अर्थ है। अङ्गरेज़ीके पारिभाषिक शब्दोंके अर्थोंपर विचार किया जाय, तो उनमें भी कुछ विशेषता न पाई जायगी। वैद्योंको विशेषतः यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी होगी। एफ़. ए. बी.ए. कक्षाओं के और नार्मल स्कूलोंके विद्यार्थियोंको इसके पढ़नेसे बड़ा लाभ होगा।

हिन्दी प्रेमी हिन्दीके वैज्ञानिक अङ्गकी पूर्ति करनेकेलिए बड़े उत्सुक हैं, आशा है कि वे इस पुस्तका आदर करेंगे और डाक्टर साहबको इसका दूसरा भाग शीघ्र ही निकालनेकेलिए उत्साहित करेंगे। डाक्टर साहबने इस पुस्तकको ५ वर्षके निरन्तर परिश्रमसे लिखा है। हम उनको बधाई देते हैं कि वे इतनी सरल, सुबोध, रोचक और वैज्ञानिक दृष्टिसे अत्यन्त शुद्ध पुस्तक हिन्दी साहित्यके भेट कर सके।

गोपालस्वरूप भार्गव,

कृषी-शास्त्र—पं० तेजशंकर कोचक, बी. ए., एस-सी., मिनरोलोजिस्ट, लेक्चरार, कृषिविद्यालय कानपुर। मूल्य १)

इस पुस्तकमें पौदोंके भाग, उनके बोने और उगाने योग्य भूमि, उनपर आब हवाका प्रभाव, और उनके रोगोंका वर्णन किया है। विविध भांतिकी वस्तुओंके बोने, सींचने, खाद देने इत्यादि-पर भी बहुत उपयोगी बातें आठवें अध्यायमें दी हैं। किसानोंको पशु चिकित्सासे परिचित होना भी आवश्यक है, अतएव इस पुस्तकमें उक्त विषय दिया गया है। भारतवर्ष जैसे कृषि प्रधान देशमें ऐसी पुस्तकोंकी बड़ी आवश्यकता है। वास्तवमें इस पुस्तकसे कृषिकोंको बड़ा लाभ पहुंचेगा।

पाश्चात्य देशोंने कृषिशास्त्रमें बड़ी उन्नतिकी है। अमेरिकामें लाखों बीघे वंजर भूमि वैज्ञानिक रीतिसे उपजाऊ बना ली गई है। भारतवर्षमें इस प्रकारकी बहुत ज़मीन पड़ी हुई है। परन्तु ऐसी भूमिकी दशा सुधारनेके पहिले, यहांके किसानों और ज़मींदारोंको कुछ वैज्ञानिक शिक्षाकी आवश्यकता है। इस पुस्तकके पढ़नेसे कृषि सम्बन्धी आधुनिक रीतियोंका ज्ञान हो सकता है। आशा है कि पं० तेजशंकर इस विषयमें और पुस्तकें लिखकर देशको लाभ पहुंचाएँगे।

गोपाल स्वरूप-भार्गव

## साहित्य समाचार !

### मनोरमा

हिन्दीकी यह एक सचित्र मासिक पत्रिका है। पण्डित प्यारेलाल जो दीक्षित और उनके शिष्य पण्डित रामकिशोर शास्त्री इसके सम्पादक हैं। इसकी आख्यायिकायें, विशेष प्रकारसे बड़ी चटकीली और लच्छेदार होती हैं। सब पत्र पत्रिकाओंने इसकी बड़ी प्रशंसा की है; सरस्वती-की समालोचना देखिये—

आकार सरस्वतीके सदृश है। चित्र भी रहते हैं। वार्षिक मूल्य तीन रुपया है। इसके सम्पादक संस्कृतज्ञ हैं। काव्योंके गद्य पद्यमय अनुवाद आप इसमें विशेष करके छापते हैं। अन्यान्य कवितायें और लेख भी इसमें रहते हैं, पत्रिका साहित्य सम्बन्धिनी है, अच्छी निकलती है इत्यादि। ऐसी अच्छी पत्रिका यदि आप देखना चाहते हैं तो आज ही मैनेजर "मनोरमा" मंडी धनौरा यू. पी. को लिख दीजिये।

---

---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

पता—सम्पादक "विज्ञान"

विज्ञान-परिषत् प्रयाग।

प्रकाशक—पं० सुदर्शनाचार्य्य विज्ञान परिषत्- प्रयाग। लीडर प्रेस, इलाहाबाद में सी. वाइ. चिन्तामणि द्वारा छपा।

Reg NO. A 708

भाग ४ | कुम्भ, १९७३ । February 1917. | संख्या ५

Vol. IV. | No. 5

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

**VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.**

## विषय-सूची



## प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य । ]

## विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे।

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

---

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०। ३।५।

भाग ४ } कुम्भ, संवत् १९७३। फ़रवरी, सन् १९१७। { संख्या ५

## मंगलाचरण

[ ले० पारस नाथ सिंह, बी, ए. ]

कोटि कोटि विश्वोंसे पूरित है अनन्त आकाश,
कोटि कोटि विश्वोंका प्रतिपल होता सृष्टि-विनाश
क्या सम्बन्ध हमारा उनसे? वस्तु कौन दिक्‌काल?
कौन बता सकता है इनके आदि-अन्तका हाल?
तापदान दे करता सबमें जो जीवन-सञ्चार,
जो प्रकाश-पति इस वसुधाका एकमात्र आधार,
सौर जगतमें प्राप्त जिसे है सर्वाधिक सम्मान—
वही सूर्य है सृष्टि-सिन्धुमें लघु जल-बिन्दु समान!
तो पृथ्वीकी गणना क्या है? कहां हमारा स्थान?
क्या निज क्षुद्र शक्तिका हम सब करें अहो अभिमान?
समाधान इस सृष्टि-समस्याका कर सकता कौन?
'विश्वम्भर' की माया लख हम रह जाते बस मौन।

## बीजोंका प्रवास।

[ ले० भास्कर वीरेश्वर जोषी, कृषि विशारद ]

कुछ वनस्पतियोंने जीवधारियोंको छोड़कर पंच महाभूतोंमेंसे किसी एकको अपने बीजोंकी सवारीके काममें जोतना अच्छा समझा है। ( देखिये चित्र १ )। यह पलाशकी फली है। क स्थानमें पलाशका बीज है, और उसमें ख पंख लगा है। यह पंख फलकी दीवारसे ( pericarp ) बना है। पंखके होनेसे फलका आयतन बढ़ता है, जिससे फलीका हवामें तैरना सरल होता है।
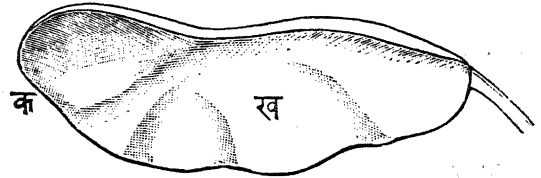
चित्र १—(छेवला) पलाशकी फली।
क—बीज; ख—पंख।

Botany वनस्पति शास्त्र ]

पंखको पकड़कर फलीको ऊपर फेंकिये, तो फली चक्कर लगाती हुई गिरती है। पंख काटकर बीजको ऊपर फेंकिये तो बीज सीधा लम्बरूप धरतीपर गिरता है। बस, पंखके ही कारण फली हवामें उड़कर दूर जाती है। आँधी चलनेके पश्चात् पलाशकी फलियाँ मुझे ऐसे स्थानोंमें मिली हैं, कि जहाँसे एक या डेढ़ मीलतकके घेरेमें पलाशका एक भी पेड़ नहीं था। अर्थात् फलियाँ डेढ़ मीलसे भी अधिक दूरसे आई थीं।

देखिये चित्र २। क में चिरहुलके फलोंकी
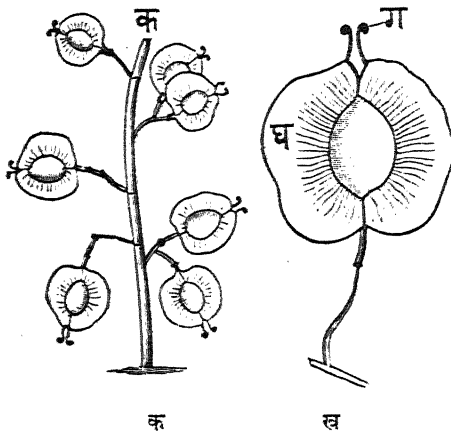
चित्र २—चिरहुलके फल

क—फलोंकी टहनी। ख—एक फल, ग—स्त्री केसर, घ—पंख।

एक टहनी दिखाई है। ख में एक फल अलग दर्शाया है। लोग इन्हें बीज कहते हैं, परन्तु यथार्थमें ये बीज नहीं हैं-फल हैं। ग पर जो दो नोकें बताई हैं वे स्त्री-केसरके (स्त्री-वास) अंश स्त्री-केसर नलिका और नलिकाग्र (style and stigma) हैं। घ-यह बीजका पंख झालरके समान बीजके चारों ओर लगा है। फलके बीचका हिस्सा डब्बीके समान फूला हुआ पोला है। यह बीजको अपने भीतर रखता है। बीज आकार और स्वादमें चिरौंजीके समान लगता है। लड़के इसे बड़े प्रेमसे बीन बीन कर खाते हैं। पंखदार फल साधारण हवा चलनेसे अपने पेड़को नहीं छोड़ते, परन्तु प्रचण्ड हवा चलनेसे वे अपने पेड़से अलग होकर हवामें उड़ने लगते हैं और आसानीसे उड़ते उड़ते बड़ी दूर निकल जाते हैं।

कुछ वनस्पतियोंके फल नहीं, किन्तु बीज ही पंखदार होते हैं, जैसे बैचांदीके बीज। इनका आकार और रंग-ढंग ठीक चिरहुलके फलोंके समान होता है। चिरहुलके फलमें ग स्थानमें जो स्त्री-वासके शेषांश बताये गये हैं, वे उनमें नहीं पाये जाते। बैचांदीका फल तिखूंटा होता है और प्रत्येक खंडमें प्रायः दो दो बीज रहते हैं।

चित्र ३ में मचकुन्दका फल दर्शाया है;
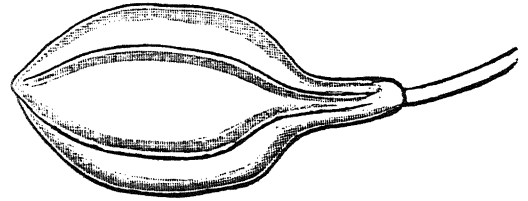
चित्र ३—मचकुन्दका फल।

चित्र ४ में फटे हुए फलकी एक कली बीजों
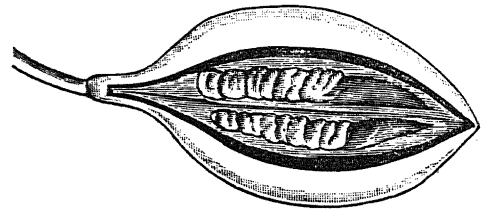
चित्र ४—मचकुन्दके फलके भीतरके बीज।

समेत दर्शायी है। देखिये, छप्परमें जिस प्रकार घासके पूले व खपरे एकके ऊपर एक लगे रहते हैं, उसी प्रकार बीज भी एकके ऊपर एक लगे हैं। एक बीजका पंख अन्य बीजोंके नीचे दबा है। केवल अन्तिम बीजका पंख खुला है। चित्र ५ में एक बीज अलग दर्शाया है। घ-उसका पंख है, और

च असली वीज है। मचकुन्दका फल लकड़ीके समान कड़ा है। उसमें न तो कोई स्वाद है, न सुगन्ध और न रंगकी कोई चटक मटक। भला, ऐसे नीरस फलोंके पास कोई भी जीव किस लालचसे
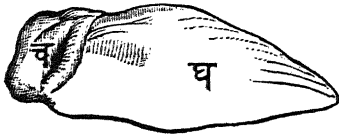
चित्र ४—मचकुन्दका वीज।
च—असली वीज ; ख—पंख।

फटके, अर्थात् जीवधारियोंसे बीजोंके प्रवासमें सहायताकी आशा रखना व्यर्थ है, इसलिए इसने वायु रूपी अश्वको ही अपनी सवारी बनाई है। वैशाख मासमें जब धूप तेज़ीसे तपती है, तब मचकुन्दका फल फट जाता है। फटते ही फलके अन्तका बीज दरारमेंसे झाँक कर देखता है, कि मेरे लिए आब-हवा अनुकूल है या प्रतिकूल? इतनेमें वायु महाराज आकर उसे अपनी पीठपर बैठालकर लेजाते हैं, फिर दूसरा बीज झांककर देखता है। इसी प्रकार सब ही बीज क्रमानुसार उड़ जाते हैं। इसमें न तो किसी प्रकारकी गड़बड़ होती है और न कभी आगे पीछेका कोई झगड़ा होता है।

इसी प्रकार सेझा चीड़, केशोरीना, सरू आदिके फल भी काष्ठवत कड़े और बीज पंखदार होते हैं। मुनगाके बीजोंमें भी छोटे छोटे तीन पंख लगे रहते हैं। बनअगीठा, मधुमालती आदि कई वनस्पतियोंके बीज पंखदार होते हैं। तात्पर्य यह है कि कोई तो फल पंखदार होते हैं, और कोई बीज पंखदार होते हैं, एवं हवाकी सहायतासे अपना स्थानान्तर करते हैं।

कई एक बीजोंने अपने प्रवास-साधनके लिए रोओंकी योजना की है। चैत्र, बैशाखमें हवामें तैरते हुए अनेक बीज दिखाई देते हैं। बच्चोंको इनसे बड़ा प्रेम होता है। अकौवेके फलकी परीक्षा कीजिये। (चित्र नं० ६)। फल सूखने पर फट
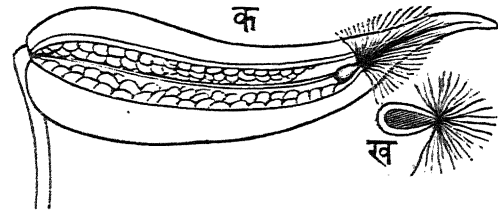
चित्र ६—अकौवेका फल।
क—चिरी हुई फली ; ख—एक रोएँदार बीज।

पड़ता है, बीचमें एक रीढ़ सी दीखती है, उसके दोनों ओर बीज सवारके भाँति बैठे हुए हैं। जिस प्रकार छप्परमें घासके पूले एक दूसरेको दाबे रहते हैं, इसी प्रकार यह बीज एक दूसरेकी चोटी वा रोएँ दाबे रहते हैं। फली फटनेपर पहले अन्तका बीज अपना सिर (चोटी) सन्दमेंसे बाहर निकालकर झाँकता है, मानो देखता है कि समय मेरेलिए अनुकूल है या प्रतिकूल? इतनेमें वायु रूपी अश्व उसे अपनी पीठपर बैठाकर उड़ा ले जाता है, फिर दूसरे बीजकी चोटी (रोएँ) बाहर आते हैं और यथा पूर्व वह भी उड़ जाता है। इस प्रकार यथा-क्रम बीज उड़ते जाते हैं। न किसी प्रकारकी गड़बड़ होती है और न आगे पीछेका कोई झगड़ा होता है। डूबते हुए जहाज़परसे बच्चे, स्त्रियाँ, प्रवासी लोग उनके पश्चात् मल्लाह और सबके अन्तमें कप्तानके उतरनेका नियम है; परन्तु गड़बड़ हो ही जाती है; पर बीजोंके उड़नेमें कभी किसी प्रकारकी गड़बड़ नहीं होती। चित्र नम्बर ६ में क अकौवेकी फटी हुई फली है और उसमेंसे एक बीज अपने रोएँ बाहर निकाले हुए है। खमें एक बीज अलग दर्शाया है, उसकी चोटीपर रोएँ हैं, और नीचे गुब्बारेके (parachute) हुककी (लंगर)भाँति बीज नीचे लटकता रहता है। इसके रोएँ तो सीधे हैं, परन्तु कई बीजोंके रोएँ शाखादार रहते हैं, जैसे (चित्र नम्बर ७) फूलनाके

बीजके। इसके रोएँ शाखादार हैं। ख में बीज बढ़ाकर बतलाया गया है। इसी प्रकार वनजीरा, कुकरौंधा, वनगोभी, रवरवेल आदि कई एक घास पातों तथा वेलों और पौधोंके बीज रोएँदार होते हैं और हवामें तैरते हुए अपना स्थानान्तर करते हैं।
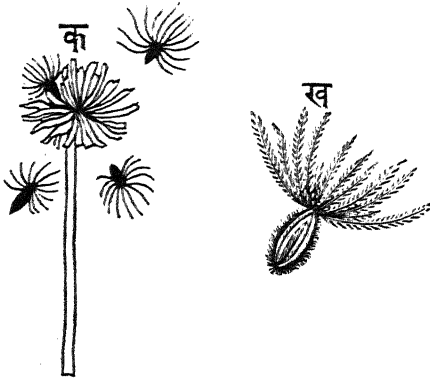
चित्र ७—फूलनाका बीज।

सारांश यह है कि—बीजोंका स्थानान्तर हवाके द्वारा दो प्रकारसे होता है।

( क ) पंखों द्वारा—कोई कोई फल पंखदार होते हैं और कोई कोई बीज पंखदार होते हैं।

( ख ) रोओं द्वारा--किसी किसी बीजके रोएँ सीधे होते हैं और किसी किसीके शाखादार होते हैं।

पंखदार बीजों एवं फलोंको उड़ानेकेलिए तेज़ हवाकी आवश्यकता है। उँचाईपर हवाका वेग अधिक होता है, इसीलिए पंखदार बीज वा फल ऊँचे पेड़ोंमें ही, जैसे–पलाश ( छेवला ), मचकुन्द, चीड़, केशोरीना, सेभा इत्यादिमें ही, पाये जाते हैं। रोएँदार बीजोंको उड़ानेके लिए मुखकी फूंक ही बस है। पृथ्वीके धरातलके पासकी वायु सदैव धीमी चलती है, इसलिए घास, पात आदि क्षुद्र वनस्पमियोंमें रोएँदार बीज रक्खे हैं।

कुछ वनस्पतियोंने अपने बीजोंके प्रवासकेलिए पानीकी सवारी पसन्द की है। इसका सबसे उत्तम उदाहरण नारियल है। इसमें नरेटीके बाहर जटाकी एक मोटी पुर्त होती है जो भीतर पानीका प्रवेश नहीं होने देती। यही कारण है कि नारियल महीनों पानीमें पड़ा रह कर सड़ता और गलता नहीं किन्तु मीलोंतक बहकर अन्य टापुओंमें चला जाता है। इसी प्रकार सुपारीके फलका भी हाल है। पानीके किनारे कौहके पेड़ बहुत जमते हैं। इसके बीज पानीमें बहते बहते बहुत दूरतक चले जाते हैं। वृत्ताकारमें इसमें पाँच पंख होते हैं, जिनमें गोंदसा एक पदार्थ रहता है। मध्यमें काठकी कड़ी सन्दूक़ रहती है, जिसमें नक़्शेके समान लपेटा हुआ बीज रहता है। यह पानीमें १० या १२ दिन तक पड़ा रहकर जमता नहीं और इतना अवकाश पाकर पानीमें लम्बी यात्रा कर डालता है।

कमलका बीज अपनी यात्रामें हवा और पानी दोनोंका आश्रयी है। फल पकनेपर बीज अलग होते हैं, उनमें स्वभावतः हवाका एक बुलबुला चिपका रहता है। उसीके आधारसे वह पानीमें तैरता है। वायुके हिलकोरेसे जलकी तरंगोंके साथ दूरतक चला जाता है और जहाँ कहीं बुलबुला फूट जाता है वहीं बीज जल-मग्न होकर तलीमें पहुँचता और जमता है।

कई एक बीजोंने अपने स्थानान्तरके लिए किसीका भरोसा न करके यह काम अपने ही सिरपर उठाया है, जैसे कि तिवड़ी (balsam) इत्यादि ने।
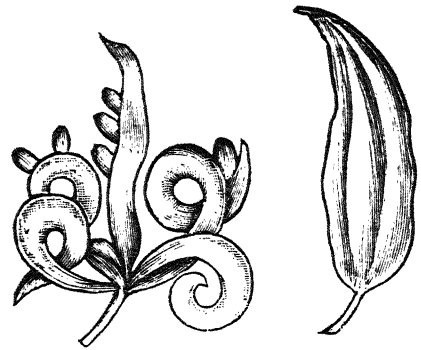
चित्र ८—तिवड़ीकी फली।

इसकी फलीको पकनेपर स्पर्श कीजिये तो छूतेही मानो वह क्रोधित होकर अपने बीजोंको यहाँ वहाँ फेंक देती है और पल्लोंको ऐंठा लेती है (देखिये चित्र ८) वैशाख मासमें दोपहरके समय यदि रूसेके वनमें कोई जावे तो चटचटका शब्द आता है। ध्यान पूर्वक देखनेसे रूसेकी फलियाँ चटकतीं और बीजोंको दूर फेंकती हुई मालूम होती हैं। फलीके पल्लोंके जोड़में कमानी सी लगी रहती है, और जब पल्ले अलग होते हैं तो बीज दूर उचट जाता है। इसी प्रकार अंडी, खटुवा और अनेक बीज उचट उचट कर दूर गिर जाते हैं।

दो रूलें लीजिये और उनके बीचमें कुछ मटर या घुमची रखकर रूलोंके दोनों सिरे दबाइये तो क्रमशः एक एक मटर या घुमची उचटेगी। ठीक इसी प्रकार अरहर, उड़द, मूंग, मटर, बरबटी आदिकी फलियाँ जब सूख जाती हैं तब उनके पल्ले तन जाते हैं और पल्लोंके दबावसे बीज उचट जाते हैं।

राई और सरसोंकी फलियाँ नीचेसे ऊपरकी ओर फटती जाती हैं और पल्लोंके कुछ लचीलेपनके कारण बीज दूर उड़ जाते हैं।
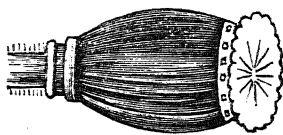
चित्र ९—पोस्तका फल

पोस्ताके (garden-poppy) फलकी बनावट जेलखानेके पहरेवालेकी मीनार (watchtower) के सदृश होती है (चित्र नं० ९)। इसमें चारों ओर छोटे छोटे छेद वा खिड़कियाँ हैं। फल जब पृथ्वीपर ढरकता जाता है तो उसके बीज क्रमसे एक एक गिरते जाते हैं, अर्थात् सबके सब एक स्थानपर नहीं गिरते।

तुरई, फतकुलीके (रिरुवा) छोरपर एक ढक्कन सा होता है जो सूखनेपर निकल आता है और जैसे जैसे फल ज़मीन पर ढुलकता जाता है बीज वैसे वैसे गिरते जाते हैं। (चित्र नम्बर १०)
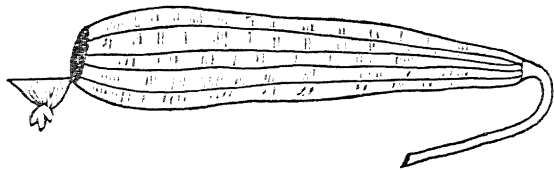
चित्र १०—फतकुलीका फल।

सारांश, कई बीज स्फोटक होते हैं, जैसे अंडी, रूसा, तेवरइया, और कई बीज एक एक करके क्रमशः गिरते जाते हैं, और अनेक फलीके पल्लोंके लचीलेपनसे अथवा ऐंठनेसे दूर फेंके जाते हैं।

---

## बीज परम्पराका नियम

[ ले० करमनारायण, एम. एस. सी. ]

### माता पितासे सादृश्य

वैज्ञानिक खोजमें कदाचित् सबसे अधिक रोचक प्रश्न बीज परम्पराका प्रश्न है। सब लोग अपने देख भालसे जानते हैं कि संतान बहुधा माता पिताके साथ रङ्ग रूप तथा गुण और स्वभावमें बहुत मिलती जुलती है। कई बच्चे अपने पिताके सदृश होते हैं और कई माताके सदृश, परन्तु कईयोंके गुण, कर्म्म और स्वभाव माता और पिता दोनोंसे मिलते हैं। यह बातें सर्व साधारणको मालूम हैं और इन्हीं बातोंके जाननेपर हमारे यहां कई कहावतें हैं जैसे—

मांपर पूत, पितापर घोड़ा।
बहुत नहीं, तो थोड़ा थोड़ा॥

---

नोट—परिषद्के १६ जनवरीके अधिवेशनमें अध्यापक करमनारायण, एम.एस-सी ने इसविषयपर सचित्र व्याख्यान दिया। उसका ही उल्लेख 'विज्ञान' के पाठकोंके विनोदार्थ यहांपर, किया जाता है। गो० भा०

Heridity बीज परम्परा ]

इनसे विदित होता है कि हम लोग इस बीजपरम्पराके नियमसे थोड़े बहुत अभिज्ञ हैं।

### माता पितासे भिन्नता

पहलेसे ही हमें स्मरण रखना चाहिए कि माता पिता और संतानमें सदृशताके नियमके साथ ही एक और भी नियम है जो इसके ठीक विपरीत है और वह यह है कि माता पिता और संतानमें भेद भी अवश्य ही होता है। संतान आपसमें तथा माता पिताके साथ सब बातोंमें कभी नहीं मिलती। दो सगे भाई यद्यपि आपसमें प्रायः बहुत मिलते जुलते हैं, परन्तु उनमें हम विभेद कर सकते हैं। हमारी आँख जहां उनमें सदृशता देखती है, उसके साथ ही उनके विपरीत गुणोंको भी मालूम करती है। प्रायः हम कहा करते हैं कि इन दो भाईयोंकी शकल तो बहुत मिलती है परन्तु एकमें यह गुण है और दूसरेमें नहीं। सदृशताके साथ हमें भेद भी झट ही प्रतीत हो जाता है और इसी भेदके द्वारा हम एक भाईको दूसरेसे पहचानते हैं। प्रश्न अब यह है कि कहांतक सदृशताका नियम काम करता है और कहांसे भेद होना आरम्भ होता है। माता पिताके गुण और स्वभाव संतानमें किस प्रकार बांटे जाते हैं, और एक ही माता पिताके बच्चोंमें भेद कैसे हो जाता है। साथ ही यदि हो सके तो हमें यह भी मालूम करना है कि कौन ऐसा कारण है जिसके द्वारा सदृशता और भेद उत्पन्न होते हैं।

इन प्रश्नोंका उत्तर जानना हमारेलिए कई कारणोंसे लाभकारी है। मानुषी ज्ञानकी वृद्धिके सिवाय इन प्रश्नोंके उत्तरपर हर एक व्यक्तिके जीवनका एक न एक अंश निर्भर है और हमारे सामाजिक नियमोंपर भी जैसा मैं आगे चलकर कहूंगा इनसे बहुत प्रकाश पड़ता है।

### सदृशता और भिन्नताके उदाहरण

पहले पहल मैं आपके सामने थोड़ेसे उदाहरण पेश करना चाहता हूं जिनसे आपको विदित हो जायगा कि माता पिताका विवरण क्या है और वह संतानतक कैसे पहुंचता है।

(१) साधारण अवलोकनकी बात है कि एक लम्बे मनुष्यके बच्चे बहुधा एक छोटे मनुष्यके बच्चोंकी अपेक्षा अधिक लम्बे होते हैं, परन्तु हमें इस बातका भी ध्यान रखना है कि सब बच्चोंकी लम्बाई एक जैसी नहीं होती। कोई बच्चा इस अपने लम्बे पितासे भी अधिक लम्बा होगा, कोई पिताके बराबर और कोई पितासे छोटा होता है। यद्यपि इन बच्चोंकी लम्बाईमें भेद होता है, परन्तु सबकी लम्बाईको हम एक क्रममें लिख सकते हैं, पहले सबसे लम्बा, फिर उससे छोटा और अन्त में सबसे छोटा। सबसे लम्बे और सबसे छोटेके बीचमें हरएक क्रमके बच्चे विद्यमान हैं।

इसी प्रकार यदि एक लम्बा पुरुष एक छोटी स्त्रीके साथ विवाह करे तो उनकी संतान न तो सारीकी सारी पिताके समान बिलकुल लम्बी ही होगी, न माताके समान सारी छोटी ही होगी, और न ऐसा होगा कि ६ बच्चोंमेंसे आधे बहुत लम्बे और आधे बहुत छोटे होंगे। परन्तु यहां भी छोटेसे बड़ेतक एक क्रममें उनकी लम्बाई होगी। इन दोनों उदाहरणोंमें संतानका विरसा एक जैसा है और वह शरीरकी लम्बाई है।

(२) दूसरी प्रकारका विरसा जिसका मैं वर्णन करता हूं, वह जीवोंकी उपजातियोंके आपसमें संयोग होने से मिलता है। आप जानते हैं कि कुत्तोंकी कई क़िस्में होती हैं—शिकारी, ताज़ी कुत्ता, घरेलू कुत्ता इत्यादि। कबूतर भी लका, लोटन, इत्यादि कई प्रकारके होते हैं, इनको हम उपजातियां कहते हैं। कुत्ता या कबूतर एक जाति है और भिन्न भिन्न प्रकारके कुत्ते और कबूतर उपजातियां हैं। इसी प्रकार एक विशेष प्रकारके कुक्कटकी दो उपजातियां होती हैं। एक उपजातिका रंग सफ़ेद और दूसरीका काला होता है। यदि एक सफ़ेद कुक्कटका संयोग एक काले

कुक्कटके साथ किया जाय, तो इनके अण्डोंमेंसे नीले कुक्कट निकलते हैं। अर्थात् न वह मातासे मिलते हैं और न पितासे, एक नए रंग की उपजाति बन जाती है। परन्तु यदि अब इन नीले कुक्कटोंको अलग करके आपसमें फलने फूलने और बढ़ने दें, तो पता लगता है कि इनकी संतानमें तीन प्रकारके कुक्कट उत्पन्न होते हैं—श्वेत, काले और नीले। यह दूसरी प्रकारका विरसा है और कुछ अद्भुतसा मालूम पड़ता है। इसका हम आगे चलकर वर्णन करेंगे।

(३) तीसरे प्रकारके विरसेका उदाहरण दौड़नेवाले घोड़ोंमें मिलता है। आप जानते हैं कि बहुधा सब नगरोंमें घुड़दौड़ होती है। उसके लिए लोग अपने घोड़ोंको महीनों और बर्षों साधते और दौड़ाते रहते हैं। कईयोंको दौड़नेवाले घोड़े रखनेका शौक़ होता है, और वह इस बातका यत्न करते रहते हैं कि उनके घोड़ोंकी चाल बढ़े। यह लोग हमेशा बहुत तेज़ दौड़ने वाले घोड़ेका बहुत तेज़ दौड़नेवाली घोड़ीके साथ जोड़ा मिलाते हैं और प्रायः जो संतान उत्पन्न होती है वह अच्छी, सुन्दर और तेज़ दौड़ने वाली होती है। परन्तु कभी कभी ऐसा हो जाता है कि संतानमेंसे एक ऐसा घोड़ा निकल आता है, जो अपनेमाता पितासे गुणोंमें बिलकुल ही उलटा होता है-बहुत भद्दा, न देखने में अच्छा और न भागने में अच्छा। इसे प्रत्यावृत्ति (reversion) कहते हैं। यह घोड़ा वास्तवमें अपने किसी पूर्वजसे जा मिलता है।

(४) कई लोग वर्णान्ध होते हैं। नीले, लाल इत्यादि रङ्गोंको नहीं पहचान सकते। देखा गया है कि वर्णान्ध पिताकी संतान वर्णान्ध नहीं होती, परन्तु उसके दुहिते वर्णान्ध होते हैं। दुहितियाँ अच्छी भली होती हैं। वर्णान्धताकी बीमारी नरोंमें होती है परन्तु नारियोंके द्वारा बांटी जाती है।

इन उदाहरणोंसे प्रतीत होगा कि विरसे विविध प्रकारके हैं और कई प्रकारसे संतानमें बांटे जाते हैं। साथ ही हमें यह भी मालूम होता है कि सदृशता तथा भेदकी जांच करते समय हमें जीवोंके पृथक् पृथक् लक्षणका ध्यान रखना चाहिये।

### सन्तानोत्पत्ति कैसे होती है।

विरसा तथा सदृशता और भेदके विषयपर विचार करनेसे पहले मैं थोड़े शब्दोंमें यह बतलाऊंगा कि उच्च जन्तुओंमें संतानोत्पत्ति किस प्रकार होती है। सब जानते हैं कि नर व नारीके संयोगसे सन्तान उत्पन्न होती है। इस संयोगमें आवश्यक बात नरके वीर्य्यका नारीके (रज) अण्डके साथ मिलाप है। यदि नरके वीर्य्यकी सूक्ष्मदर्शक यंत्र ( Microscope ) द्वारा परीक्षाकी जावे तो हमें विदित होगा कि द्रवमें छोटे छोटे पूंछवाले जीवसे तैरते फिरते हैं, जिनको वीर्य्याणु कहते हैं। संतानोत्पत्तिमें पुरुषका हिस्सा केवल यह वीर्य्याणु ही हैं। नारीके पेटमें एक अण्डाशय होता है जिससे समय समयपर अण्ड निकलते रहते हैं। स्त्रीके अण्डाशयसे हर महीने ऋतुकालके समय अण्ड (रज) निकलते हैं और अंड नलीके द्वारा नीचेकी ओर यात्रा करते हैं। थोड़ी ही यात्रापर स्त्री पुरुषके संयोगसे कई वीर्य्याणु अंड-नलीमें ऊपरकी ओर चढ़ते हैं। एक वीर्य्याणु एक अंडसे मिल जाता है और गर्भाधान हो जाता है। गर्भाशयमें अंड आकर पुष्टि पाता है, बढ़ता है और बढ़ते बढ़ते बच्चा बन जाता है। पुरुषका वीर्य्याणु तथा स्त्रीका अंड परिमाणमें बहुत ही छोटे होते हैं, नेत्रमात्रसे तो दिखाई ही नहीं देते। केवल सूक्ष्म-दर्शकसे ही दिखाई देते हैं। इस विधिसे यह प्रतीत हो गया होगा कि बच्चा तथा पहले उसका मूलतत्त्व एक सूक्ष्म अंड और वीर्य्याणुके मेलसे बनता है। बीज परम्पराके नियमको समझनेके लिए हमें इस बातका स्मरण रखना चाहिये कि बच्चा यदि अपने पिताके लक्षण ग्रहण

करता है ते वह वीर्य्यके द्वारा और यदि माता के ग्रहण करता है तो अंडकेद्वारा।

बीजपरम्पराका नियम (Heredity)

पहली प्रकारका विरसा जिसका मैंने वर्णन किया है वह यह था कि साधारण तौरपर एक लम्बे पिताकी सारी संतान सर्वदा ठीक उतनी ही लम्बी नहीं होती, कई बच्चे पितासे कम लम्बे और कई अधिक लम्बे होते हैं। परन्तु सबकी लम्बाई-सबसे लम्बेसे लेकर सबसे छोटे तककी —एक लगातार क्रममें लिखी जा सकती है। एक मनुष्यके बहुधा ५ या ६ बच्चे होते हैं और भेदका अनुमान करनेकेलिए यह संख्या थोड़ी है, इसलिए एक ही जातिके बहुतसे जीवोंके लक्षणों की परीक्षा की जाती है। केम्ब्रिज विश्वविद्यालयमें ( Cambridge university ) ४४२६ विद्यार्थियोंकी लम्बाईको माप की गयी थी और निम्नलिखित चित्रमें इस मापका नतीजा दिखाया गया है*।

मूलरेखा ( base line ) पर इंचोंमें लम्बाई लिखी हुई है और लम्बरेखा पर (vertical line) विद्यार्थियोंकी संख्या है । इस वक्र* ( curve ) से विदित है कि ८०० के लगभग विद्यार्थियों की लम्बाई ६९ इच थी और बाकीकी इससे कम या अधिक थी । बहुत थोड़े विद्यार्थी ऐसे थे जिनकी लम्बाई ६२, ६३ या ६४ इंच जितनी थोड़ी हो, और इसी प्रकार ७३, ७४ या ७५ इंच जितनी बहुत लम्बाईवाले भी बहुत थोड़े थे। वक्रको पढ़ते हुए ज्यों ज्यों हम मध्यम-मान ( औसत average ) ६९ इंचकी लम्बाईके निकट जाते जाएं त्यों त्यों विद्यार्थियोंकी संख्या भी बढ़ती जाती है और सबसे अधिक संख्या ( ८०० ) उन विद्यार्थियोंकी है जिनकी लम्बाई मध्यममान ६९ इंच है। लम्बाईके इस वक्रसे दो बातें स्पष्ट हैं। एक तो यह कि यदि हम लम्बाईके लक्षणको लेकर बहुत सारे मनुष्योंकी परीक्षा करें तो उनमेंसे बहुतसी संख्याकी लम्बाई मध्यममान होगी और दूसरी बात यह कि ज्यों ज्यों इस औसतसे न्यूनता तथा अधिकताकी ओर जावें तो क्रमशः मनुष्योंकी संख्यामें घटती होती जाती है। इस उदाहरणसे मनुष्योंमें परस्पर भेदका अनुमान हो सकता है। इस प्रकारके भेदको 'निरन्तर भेद' (continuous variation) कहते हैं। क्योंकि भेदकी राशि एक लगातार क्रममें लिखी जा सकती है। इस प्रकारके व्यक्तिगत भेद बहुधा सब जीवोंमें ही पाए जाते हैं।

कई मनुष्योंमें हाथकी पांच उङ्गलियोंके स्थान छः होती हैं। सरसोंके फूलकी साधारण तौरपर चार पङ्खड़ियां होती हैं, परंतु कई फूल ऐसे देखने में आते हैं जिनकी पांच पङ्खडियां होती हैं। यह दो उदाहरण 'विच्छिन्न भेद' के ( discontinuous variation ) हैं। इनमें भेद थोड़ा थोड़ा नहीं परन्तु बड़ी बड़ी छलांगें हैं।

कहा जाता है कि अधिक गुणवान मातापिता-की संतान कई बार बहुत साधारण सी होती है, और साधारण मातापिताकी संतान कई बार बहुत गुणी निकल आती है। श्रोतागण अपने अनुभवसे इस कथनके कई उदाहरण जानते होंगे। पुराने ग्रंथकारोंने भी इस बातपर ध्यान दिया है और कहा है कि परिवारोंमें विशेष उच्च-गुण पीढ़ी दर पीढ़ी घटते जाते हैं और बापदादा-की अपेक्षा संतान बहुत अधम दरजेकी निकलती है। परंतु हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि कई बार संतान बापदादासे बहुत अधिक गुणी भी होती है। सर फ्रेंसिस गाल्टनने (Sir Francis Galton) १५० परिवारोंके लक्षणोंकी परीक्षा-की और 'संतानप्रत्यावर्तन' (filial regression) नामक नियम स्थापित किया है और वह यह है कि संतानकी प्रवृत्ति या झुकाव प्रायः जातिकी मध्यमताकी ओर रहता है। मातापिता चाहे बहुत गुणी हों अथवा निर्गुण हों, संतानका झुकाव जातिके मध्यममान गुणोंकी ओर होगा।

*यह ब्लाक उचित समयपर न बन सका अगले अङ्कमें दिया जायगा। गो. भा.

यदि जातिकी मध्यममान लम्बाई ६८ इंच है तो ६२ या ६३ इंच लम्बाईवाले मातापिताकी संतान ६२ या ६३ इंच नहीं होगी परंतु उस संतानकी प्रवृत्ति ६८ इंचकी ओर होगी और इसी प्रकार ७४ या ७५ इंचवाले मातापिताकी संतानका भी झुकाव ६८ इंचकी ओर ही होगा। यह नियम जिसके अनुसार संतानकी प्रवृत्ति मध्यमताकी ओर होती है किसी गुणके पूर्ण संक्रमणमें बहुत बाधक है। बहुत गुणवान मातापिताकी संतानमेंसे थोड़े ही बच्चे गुणी निकलते हैं बाक़ीके मध्यम दर्जे-के ही होते हैं। वास्तवमें मातापिता जितने अधिक गुणी होंगे, उतनी ही सम्भावना सन्तानकी माता-पिताके समान गुणी होनेकी कम होगी। इस सौभाग्यकी सम्भावना तो बहुत ही कम होगी कि उनकी सन्तान मातापितासे अधिक गुणी निकले।

( असमाप्त )

---

## आवश्यकताका परिणाम

[ ले० गोपालस्वरूप भार्गव ]

इस समय जर्मनी मित्रराष्ट्रोंकी फ़ौजों और जहाज़ोंसे परावेष्टित है। उसकी रसद बिलकुल बंद है। न माल जर्मनीसे अन्य देशोंको जाने पाता है, न वहांसे जर्मनीमें आने पाता है। इस कारण बहुत सी चीज़ोंके बनानेकी सामग्री ही जर्मनीमें नहीं मिल सकती। कपड़ा बनानेकेलिए रूई और सन चाहिएं, जो भारतसे जाया करते थे। लम्पोंमें जलानेकेलिए रूस और अमेरिकासे तेल नहीं पहुंचने पाता। इसी प्रकार कोयला, पेट्रोल इत्यादिकी भी जर्मनीमें बड़ी कमी है।

"पर क्या बाहरसे माल आना बंद होनेके कारण जर्मनीमें युद्ध सामग्री अथवा अन्य आवश्यक वस्तुओंका बनना रुक गया है"? साइन्टिफ़िक अमेरिकनके एक लेखसे मालूम होता है कि जर्म-नोंने उन सब पदार्थोंके स्थानपर जो वे विदेशोंसे मंगाया करते थे, स्वदेशमें होनेवाले पदार्थोंका उपयोग करना आरम्भ कर दिया है।

(१) मिट्टीके तेलके स्थानपर अब वहां केवल कारबाइड काममें लाया जाता है। पुरानी तेलकी लम्पोंमें केवल एक नया मुहरा (Burner) लगा देनेसे ही उनमें कारबाइडसे काम लिया जा सकता है।

(२) कारबाइडसे जब ऐसेटिलीन बन चुकती है तो एक प्रकारकी राखसी बच रहती है। वास्तवमें यह अशुद्ध चूना होता है। जबसे जर्मनीमें मिट्टीके तेलकी जगह कारबाइडका प्रयोग होने लगा, तबसे यह राख भी बहुत पैदा होने लगी। अतएव इसका कोई उपयोग निकालने-की फ़िक्र वहांके इंजजीनियरोंको हुई। उन्होंने शीघ्र ही यह मालूम कर लिया कि यदि इस पदा-र्थमें ४० % रेत मिला दी जाय तो बहुत अच्छा सीमेंट तैय्यार होता है, जो जल्दी सख़्त भी हो जाता है और पत्थरोंको जकड़ भी देता है।

(३) कोयलेके दमघोट तपानेके (destructive distillation) उपरान्त भपकेमें एक ठोस पदार्थ बच रहता है जिसे 'पिच' कहते हैं। अभीतक यह केवल सड़कोंकी कुटाईमें काम आता था, पर जर्मनोंने इसको ईंधनकी तरह प्रयोग करनेकी सुगम रीति निकाल ली है। पिच-को पीसते हैं। उसके भुरभुरे होनेके कारण पीसनेमें बहुत परिश्रम नहीं करना पड़ता। भट्टियों-में दबी (compressed) हुई वायुकी सहायतासे इसे झोंकते हैं। इसकी तापोत्पादक शक्ति (calo-rific power) कोयलेसे कहीं बढ़ चढ़ कर है। अशुद्ध मिट्टीके तेलके बराबर ही इसे उपयोगी समझना चाहिए। इसके जल चुकनेके उपरान्त बहुत थोड़ी राख बचती है। इस लिहाज़से भी इसके जलानेमें बड़ी सुविधा है।

ठोस पिच घरोंमें भी काम आ सकती है। इसको पीसकर कोक-उच्छिष्टके (coke waste)

साथ मिला ईंटें बना लेते हैं, जो बड़ी आसानीसे चिमनीदार चूल्होंमें जलाई जा सकती हैं।

यह विचार करते हुए कि जर्मनीमें कोयला कितना कम मिलता होगा, हम इन नए आविष्कारोंका महत्व समझ सकते हैं,क्योंकि यह पदार्थ (पिच और कोक) कोयलेका प्रयोग करनेपर बच रहते थे और इन आविष्कारोंके पहले फेंक दिये जाते थे। इन्हींका प्रयोग करके अब जर्मन कोयलेकी कितनी बचत कर लेते हैं!

(४) बेलजियम देशान्तर्गत सेरेंग (Seraing) नगर जबसे जर्मनोंके हाथ आया, तबसे वहांके कारख़ाने कोकरिल वर्क्सकी (Cockerill works) धौंकनी-भट्टियोंमें (वह भट्टियां जिनमें धौंकनी द्वारा वायु पहुंचाई जाती है Blast furnaces) कोयलेकी जगह डामर जलाई जाती है। २८ मन लोहा तैयार करनेमें ३॥ मनके लगभग डामर जलती है। तीन मासमें इन भट्टियोंमें २१५ घानमें ५६००० मन लोहा तैयार किया गया है।

(५) रस्सीकी आवश्यकता सभी कामोंमें पड़ती है। कारख़ानोंमें भी बलके इधरउधर लेजानेके लिए (Transmission of power) भी बड़े बड़े रस्सोंकी ज़रूरत होती है। जर्मनीमें युद्धके पहले रस्से सनके बनाये जाते थे, जो गरम मुल्कोंसे मंगाया जाता था,पर अब सन जर्मनीमें नहीं पहुंचने पाता। इस कारण जर्मनोंको किसी ऐसी वनस्पति ढूंढ़ निकालनेकी फ़िक्र हुई, जिसका रेशा रस्सी बनानेके काम आ सके। थोड़े दिन उनकी ऐसी अवस्था रही, जैसी उस बालककी होती है, जो पतङ्ग तो उड़ाना चाहता हो, पर उसके पास डोर बहुत छोटी हो। हालमें उन्होंने एक योग्य वनस्पतिको तलाश कर लिया है और इसके तन्तुओंसे रस्सी बनाना भी आरम्भ कर दिया है।

(६)पहननेके कपड़ोंके बनानेमें भी उनको ऐसी ही कठनाइयोंका सामना करना पड़ा, पर अब वे (Thistle) राम बांसके रेशेसे कपड़ा बनाने लगे हैं। पहले उनको गूदेसे रेशा अलहदा करनेमें बड़ी कठिनाई पड़ी। नमकके तेज़ाबका (Hydrochloric acid) प्रयोग रेशा अलहदा करनेमें किया गया, पर इसके प्रभावसे रेशा चटखना हो जाता था और बुनना मुश्किल था। एक जर्मन रासायनिकने इस मुश्किलको भी दूर कर दिया और अब राम बांसके रेशेसे बारीक, मज़बूत, चमकीला और मुलायम कपड़ा बनाया जाता है।

(७)जूते,काठी, इत्यादि चमड़ेकी चीज़ें बनानेमें चमड़ेकी खुर्चन बहुत निकलती है। पहले यह फेंक दी जाया करती थी, पर अब इससे बड़ा अच्छा खाद तैयार होने लगा है। साथ ही साथ इससे २० % टेनिन भी निकाल लेते हैं। इस प्रकार इससे दुहरा लाभ उठाकर, जर्मन इस आविष्कारसे बड़े प्रसन्न हैं।

ऊपर दिये हुए उदाहरणोंसे हमको मालूम होता है कि आवश्यकता मनुष्यको क्या क्या सिखा देती है। जब तक जापान, अमेरिका, प्रभृति देश हमारेलिए अच्छेसे अच्छे कपड़े, बरतन, सुई, खिलौने, मशीनें इत्यादि चीज़ें बना बनाकर भेजते हैं और हमतक यह चीज़ें पहुंचती हैं, तबतक हम लोगोंकी शिल्प व्यवसायमें किसी प्रकारकी उन्नति होना असम्भव है। कोई समय था जब भारतसे मलमल, गलीचे, रेशमी कपड़े बन बनकर आङ्गल देश, फ्रांस, जर्मनीको जाया करते थे। जब इन देशोंकी गवर्मैंटोंको अपने यहांकी शिल्प व्यवसायकी उन्नति करना अभीष्ट हुआ, तब उन देशोंमें भारतसे माल आना बन्द कर दिया। सुना जाता है कि एक बार किसी लेडीपर भारतका बना हुआ रूमाल लिये हुए गिरजामें जानेके कारण कई सौ पाऊण्ड जुर्माना हुआ था। ऐसा प्रयत्न करनेसे इन देशोंकी उन्नति हुई!

---

# अङ्कगणितकी शिक्षा

[ले० शतीश्चन्द्र घोषाल, बी. एस-सी., एल-एल. बी.]

## १९, २९, ४९ इत्यादि संख्याओंसे गुणा करनेकी विशेष रीति

इसी प्रकार २९, ३९ इत्यादि संख्याओंसे गुणा करनेमें यह रीति लाभ कारी है।

उदाहरण— ४९८१को ६९से गुणा करो।

रीति—६९ यहांपर ४९८१ × ६९

| | | |
|---|---|---|
| ४९८१ | = | ४९८१ (७०−१) |
| ३४८६७० | = | ४९८१ × ७० |
| ३४३६८९ | | −४९८१ |

अतएव गुण्यको १से और ७०से गुणा किया और दोनों गुणनफलोंका अन्तर निकाल लिया। गुण्यको इस प्रकार लकीरके नीचे लिखनेसे यह फ़ायदा है कि १ से गुणा करनेपर उसे दुबारा नहीं लिखना पड़ता। इसी प्रकार ३९=४०−१; ८९=९०−१, इत्यादि।

### बीज गणितके नियमोंका उपयोग

गुणाके प्रश्नोंमें यदि धीरे धीरे बालकोंको बीजगणितके नियमों, अथवा गुरोंका जैसे $(अ+ब)^२ = अ^२ + २अब + ब^२$; तथा $अ^२ - ब^२ = (अ+ब)(अ-ब)$, सिखलाया जावे तो उन्हें बड़ी उत्तेजना मिलेगी। परन्तु यह बात याद रखना चाहिये कि बालक इन नियमोंको सिर्फ़ मोटी दृष्टिसे काममें लावें।

### भागका शुरू शुरूमें कौनसा मतलब बताया जावे

भागका सबसे सरल मतलब यह है कि दी हुई चीज़ोंको इतने आदमियोंमें बांटो। यह मतलब 'भाग' के शब्दार्थपरसे ही बताया जा सकता है। भागका मतलब ही बांटनेका है। भागका दूसरा मतलब जिसमें बार बार घटानेका विचार किया जाता है भागके प्रश्न करनेमें काम आता है।

ज्यों ही बालक भागका पहिला अर्थ अच्छी तरह समझ लें, भागका यह दूसरा अर्थ उन्हें बताया जाय। जिस प्रकार बालकोंको गुणाका अर्थ बार बार जोड़ना समझानेमें आसानी हुई थी इसी प्रकार उन्हें भागका दूसरा अर्थ समझानेमें आसानी होगी। भागका तीसरा अर्थ यह है कि वह गुणाका उल्टा है। यह अर्थ जबतक कि विद्यार्थी भागके पहिले दोनों अर्थ अच्छी तरह न समझने लगें, बताना ठीक न होगा। भागके सवाल लगानेमें इस अर्थके जान लेनेसे सुगमता होती है, इसलिए इस अर्थको पहिले दोनों अर्थोंके समझ चुकनेपर बतलाना चाहिये।

गुणाके विवरणमें हम बता चुके हैं कि पहाड़ोंका अभ्यास कराते समय बालकोंसे '?×६=२४', '?×५=५५' इस प्रकारके प्रश्न पूछे जायं। यथार्थमें ऐसे प्रश्नोंका उपयोग भाग सिखाते समय भली भांति मालूम हो जाता है। गुणन फल, और गुण्य अथवा गुणकमेंसे कोई एक दिये जानेपर दूसरेका निकलवाना भागके शुरूमें बहुत उपयोगी है।

### भागका पहिला और दूसरा मतलब

२० पेंसिलें ले लो। विद्यार्थियोंसे कहो कि ये २० पेंसिलें पहिली बेंचके ५ विद्यार्थियोंमें बराबर बराबर बांटना है। बताओ हरएकको कितनी पेंसिलें मिलेंगीं?

अब पांचों विद्यार्थियोंको एक एक पेंसिल दे दो। विद्यार्थियोंसे पूछो कितनी पेंसिलें दे दीं? उ० ५. कितनी बाकी बचीं? उ० १५. अब एक एक पेंसिल पांचोंको फिर दो। कितनी और देदीं? उ० ५, अब कितनी बचीं? उ० १०. इसी प्रकार फिर एक एक पेंसिल देकर पूछो कितनी बचीं, निदान जब कुछ न बचे तब तख़्तेपर इस भांति लिखो—

Teaching शिक्षा ]

| | | |
|---|---|---|
| | टेबलपर कुल पेंसिलें थीं | २० |
| | पहिली वार दी गई | ५ |
| विद्यार्थियोंके पास इस समय कितनी | बाकी रहीं | १५ |
| पेंसिलें हैं? उ० एक एक। | दुवारा दी गई | ५ |
| इस समय कितनी हैं? | बचीं | १० |
| उ० दो दो | तिवारा दी गई | ५ |
| अब कितनी हैं? | बचीं | ५ |
| उ० तीन तीन | चौथी वार दी गई | ५ |
| | बाकी रहीं? | कुछ नहीं। |

अब कितनी हैं? उ० चार चार

समझाना

अब पाठक बालकोंसे पूछें कि २० पेंसिलें ५ लड़कोंमें बराबर बराबर बांटनेका क्या मतलब हुआ। हमने बीस पेंसिलोंमेंसे पांच निकाल कर हरएक लड़केको एक एक दे दी, इस प्रकार हर समय पांच पांच पेंसिलें निकाल कर एक एक पेंसिल हरएक विद्यार्थीको देते गये जब-तक कि कुछ शेष न रहीं।

इस प्रकार अब बालकोंको बार बार घटानेके उदाहरण दिये जायं ताकि वे यह अच्छी तरह समझ जायं कि भागका मतलब बार बार घटाना है। हर एक उदाहरणके साथ विद्यार्थि-योंको बीज, गोलियाँ अथवा अन्य पदार्थ दिये जायं, जिनको प्रश्न करते समय वे योग्य रीतिसे बांटते जाया करें, उदाहरण इस प्रकार दिये जायं—

(१) ३० पेंसिलोंको ६ लड़कोंमें बराबर बराबर बांटो।

(२) १६ गोलियोंको ४ लड़कोंमें बराबर बराबर बाँटो।

(३) १२ स्लेटोंके ३ बराबरके ढेर लगाओ, इत्यादि।

भागका तीसरा मतलब सिखानेकी विधि

जब लड़के इस प्रकारके प्रश्न कर चुकें तो हरएक प्रश्नका उत्तर पूछो। (१) का उत्तर है ५ पेंसिलें। अब बालकोंसे कहो कि इस प्रकार बार बार घटाने और बांटनेके बदले यदि तुम अपने मनमें सोचो कि 'कै छक्के ३० होते हैं'। इस प्रकार पहाड़ोंको मनमें सोचनेसे सवाल कितनी जल्दी और आसानीसे हो जाता है। इस प्रकारके प्रश्नोंद्वारा बालकोंको ख़ूब समझा दो कि भाग सिर्फ़ गुणाका उल्टा ही है। '३० में ५ का भाग दो' इसका मतलब यही है कि ?×५=३०, बहुतसे उदाहरण देकर विद्यार्थियोंको पहाड़ोंद्वारा भागके सवाल करनेका ख़ूब अभ्यास कराना चाहिये।

ऐसे प्रश्न जो मुखाग्र नहीं किये जा सकते

जब विद्यार्थियोंको पहाड़ोंके ज़रिये भागके सरल सवाल करनेमें अच्छी तरह अभ्यास हो जाय तो ऐसे सवाल लेने चाहियें जिनमें विद्यार्थियोंके पढ़े हुए पहाड़े लागू न हों। जैसे ८४ गोलियोंको ४ विद्यार्थियोंमें बराबर बराबर बांटो। इस प्रश्नको नीचे लिखे अनुसार समझाना चाहिये।

रीति—यह हमें मालूम नहीं कि कै चौके ८४ होते हैं। तो भाग किस तरह करें? ८४ मेंसे चार चार गोलियां कई बार घटाओ। विद्यार्थी स्वतः घटावें, मास्टर अब बतावे कि इस प्रकार बार बार घटानेमें बहुत समय लगता है और बड़ी दिक़्क़त होती है। इसलिए कोई नई रीति निकालनी चाहिये। अच्छा तो ८४ के बदले ८ दहाईके बटुए और ४ बीज लेलो, अब इनको चार लड़कोंमें बांटना है और एक एक बटुआ चारों लड़कों-को दे दो। बाकी बचे चार बटुए, एक एक बटुआ चारों लड़कोंको और बांट दो। हरएक लड़केको कै बटुए मिले? उत्तर दो। अब बाकी बचे ४ बीज, चारों लड़कोंको एक एक और बांट दो। हर एक लड़केको कितने बीज मिले। प्रत्येकको दहाईके दो बटुए और एक बीज अर्थात् कुल २१ बीज मिले। अब पाठक काले तख़्तेपर इस भांति लिखो।

८४ = ८ द. + ४ इ. = ८० + ४

८४ ÷ ४

= (८ द. + ४ इ.) ÷ ४　　=　　( ८० + ४ ) ÷ ४

= (८ द. ÷ ४) + (४ इ ÷ ४) या (८० ÷ ४) + (४ ÷ ४)

= २ द. + १ इ.　　　या　　　२० + १

= २१.　　　　　　　　　　= २१

विद्यार्थियोंको अब यह बताया जाय कि इसी रीतिको नीचे लिखी तरह भी लिख सकते हैं—

```
४) ८० + ४ (२० + १          ४) ८४ (२१
   ८०              अथवा       ८०
   ──                         ──
    ४                          ४
    ४                          ४
    ─                          ─
    ×                          ×
```

विद्यार्थियोंको समझा दिया जाय कि इस प्रकार लिखनेमें बड़ा सुभीता होता है अर्थात् समय कम लगता है और जगह भी थोड़ी घिरती है।

और कठिन प्रश्न दिये जायं

उपर्युक्त सरल सवालोंके करनेका अभ्यास हो चुकनेपर पाठक इसी प्रकारके छोटे छोटे परंतु कुछ कठिन प्रश्न लेवें। ये प्रश्न ऐसे हों जिनकी दहाइयोंमें भाजकका पूरा पूरा भाग न जासके। जैसे ६८में ४का भाग दो।

रीति—जैसा कि पहिले बता आये हैं ६८ बीजोंके बदले ६ दस दसके बटुए और ८ बीज लो। ४ लड़कोंको बुलाकर उन्हें एक एक दहाईका बटुआ दे दो, अब दहाईके कै बटुए बचे? उत्तर–दो। इन दो बटुओंको ४ लड़कोंमें किस प्रकार बांटें? यदि ४ मजदूरोंको २) रुपये बराबर बांटने हों तो क्या करते? उ०–रुपयोंको भुंजा लेते। ठीक, इसी प्रकार अब इन दो बटुओंको ४ लड़कोंमें बांटनेकेलिए क्या करें? यदि विद्यार्थी न बतावें तो कह दो कि बटुओंको खोल लेना चाहिये। अच्छा बटुए खोलकर ऊपरके ८ बीज उन्हींमें शामिल कर दो। कुल बीज कितने हुए? उ०–२८. कै चौके २८? उ०–७. सात सात बीज और बांट दो। हर एक लड़केके पास कुल बीज कितने हुए? उ०–१७.

तख्तेपर इस भांति लिखो—

```
४) ६० + ८ (१०
   ४०
   ──────
   २० + ८              इसलिए
और ४) २८ (७        ६८ ÷ ४ = १० + ७
      २८                  = १७.
      ──
      ×
```

इस प्रकार कई प्रश्नोंको लेकर समझाओ कि पहिले सैकड़ोंको बांटना चाहिये, फिर दहाइयोंको और सबसे पीछे इकाइयोंको। 'बांटना' शब्दकी जगह धीरे धीरे 'भाग देना' उपयोग करने लगो।

उदाहरण—मान लो कि ३६६ में ९ का भाग देना है। ३६६केलिए ३ सै० की थैलियां, ६ बटुए और ६ बीज लो। इनको टेबलपर रखकर इस भांति समझाओ—९ लड़कोंको बुलाकर खड़ा करो, सौ की थैलियां दिखाकर कहो कि थैलियां ३ और लड़के ९ हैं, पूरी पूरी थैलियां नहीं बांटी जा सकतीं, इसलिए थैलियोंको खोलकर भीतरके बटुए निकालें। कुल बटुए कितने निकले? उ०–३०. ६ बटुए ऊपरके भी मिलादो कुल कितने हुए? उ०–३६. अब ९ लड़कोंको एक एक करके बांटो। कै बार बांट दिये? उ०–४ बार। कै बटुए बचे? उ०–३. अब इन तीन बटुओंको खोल लो और ऊपरके बीज मिला दो। कुल बीज कितने हुए? उ०–३६. अब एक एक बीज क्रमशः बांटो। कै बार बांटे? उ०–४ बार। क्या बचा? उ०–कुछ नहीं।

तख्तेपर इस भांति लिखो –

```
९) ३६६ (४० + ४
   ३६०
   ───
    ३६
    ३६
    ──
    ×
```

इस प्रकार पदार्थोंद्वारा भाग करनेमें विद्या-

र्थियोंको स्पष्ट हो जायगा कि भागमें पहिले सब-से बाएँ अंकसे क्यों शुरू किया जाता है। इतना हो चुकनेपर ऐसे प्रश्न लिये जायं जिनमें भाग देनेपर कुछ शेष भी बचे।

अधिक कठिन प्रश्न ; कै बार भाग जायगा इसका अनुमान

भागके ऐसे प्रश्न जिनमें भाजक दससे अधिक हो, अब शुरू किये जायं। यहां विद्यार्थियों-को एक खास अड़चनका सामना करना पड़ता है। भाग कै बार जायगा यह ढूंढ़ निकालनेमें उन्हें पहिले कुछ दिक़्त मालूम होगी, परन्तु अभ्याससे यह कठिनाई सरल हो जाती है। इसमें शंक नहीं कि यह ढूंढ़ निकालनेमें कि भाग कै बार जायगा पहिले पहिल अंदाज़से काम लेना होगा। परंतु यदि यह अंदाज़ विचार पूर्वक किया जाय तो बार बार मिटाने या काटनेकी दिक़्त न होगी। यह अंदाज़ किस प्रकार किया जाना चाहिये यह हम एक उदाहरण लेकर बताते हैंः—

मानलो ५९३२ में ३१का भाग देना है।

रीति—बताओ कि भाज्यमें सिर्फ़ ५ हज़ार हैं इनमें ३१ का भाग नहीं जा सकता, इसलिए ९ को ५ के साथ ले लो कुल कितने हुए ? उ० ५९००. ५९०० में ३१ का भाग उतने ही सौ बार जायगा जितनी इकाई बार ३१ का भाग ५९ में जाता है। ५९, ६० से कम है इसलिए ५९ में ३० का भाग भी दो बार नहीं जाता है तो ३१ का कैसे दो बार जायगा। तो क्या एक बार जाता है ? हां, ५९, ३१ से अधिक है। इसलिए ५९०० में भागएक सौ बार गया। बाकी बचे २८ सौ २८ सौ की २८० दहाई हुई ऊपरसे उतारीं ३ दहाई। कुल दहाई कितनी हुई ? उत्तर २८३ दहाई, २८३ दहाईमें ३१का भाग उतनी ही दहाई बार जायगा जितनी इकाई बार ३१ का भाग २८३ इकाईमें जायगा। देखो ३०० से २८३ कम हैं, इसीलिए दस बार ३० का भी भाग उनमें नहीं जाता ३१ का १० बार कैसे जायगा। २८३—२७० से अधिक हैं इसलिए २८३ में ३० का ९ बार भाग जाता है शायद ३१ का भाग भी नौ बार चला जाय आओ भाग देकर देखें, ३१ × ९ = २७९ हुए, अतएव ९ बार २८३ में भाग जाता है। तो २८३ दहाईयोंमें ३१का भाग नौ दहाई बार गया। वाकी बची ४ दहाई, अर्थात् ४० इकाई, ऊपरसे उतारी २ इकाई कुल कितनी हुईं ? उ० ४२ इकाई। ३१ का भाग कै बार जायगा ? उ० एक बार, बाकी रहे ११.

इसी प्रश्नको तख़्तेपर इस भांति लिखो—

```
३१) ५९३२ (१९१
    ३१
    ---
    २८३
    २७९
    ---
     ४२
     ३१
    ---
     ११
```

भाग कै बार जायगा इसका अंदाज़ा बुद्धिसे किया जाय खास नियमके आधार पर नहीं

सारांश यह है 'कि कै बार भाग जायगा' इसको अंदाज़से ढूंढ़ निकालनेमें किसी ख़ास निय-मका सहारा शुरू शुरूमें कभी न लिया जाय। विद्यार्थियोंको नियम बता देनेसे वे बार बार उसी नियमसे काम लेते हैं और अपनी बुद्धिको काममें नहीं लाते। इसमें संदेह नहीं कि सवाल करते करते विद्यार्थी एक नियम अवश्य बना लेंगे परंतु याद रहे कि विद्यार्थियोंके स्वतः नियम ढूंढ़ निकालनेमें और मास्टरके नियम पहिलेसे हा बता देनेमें बड़ा अंतर है।

## स्वर्णकारी

[ ले० गङ्गाशंकर पचोली ]

### ५—निखार

जब सोनेकी वस्तु जुड़ चुकती है, उस समय उस वस्तुको निखारनेकेलिए पहिले साफ़ करते हैं। अबतक जो काम किया जाता है उससे कहीं दाग़ धब्बे पड़ जाते हैं और कहीं लकीर बन जाती हैं जिनका मिटाना ज़रूरी है। जो दाग़धब्बे और निशान दूर नहीं किये जाते तो वे निखारके पीछे भी बने रहते हैं। इस देशमें सुनार दाग़ धब्बोंको दूर करनेके पीछे ही निखार देते हैं, परन्तु विलायतमें निखार देनेसे पहिले गहनोंको विशेष दवाओंसे धोते भी हैं। साबुन, सोडा और पानी तीनोंको मिलाकर गरम करते हैं और इस गरम जलमें सोनेकी चीज़को डुबोकर धोते हैं और फिर काठके सूखे बुरादेमें रखकर सुखा लेते हैं।

दूसरी रीति सोनेकी वस्तुको धोनेकी यह है कि सुहागेको जलमें पीसकर गाढ़ी लेही बना लेते हैं और वस्तुके ऊपर लपेट देते हैं। फिर इतना तपाते हैं कि सुहागा जलकर काला हो जाय। पीछे ठंडा होनेपर पानी मिले हुए गंधकके तेज़ाबमें रखकर उबालते हैं। उबाल खा चुकनेपर पोंछकर काठके बुरादेमें रखकर सुखा लेते हैं।

जब सोनेकी चीज़ ऊपर दी हुई रीतिसे साफ़ हो चुकती है तब वह निखारके योग्य होती है। चीज़ोंके गढ़ने आदिमें उनका रंग थोड़ासा फीका हो जाता है। इसलिए उसपर और मसाला चढ़ानेसे रंगको चटकीला करना पड़ता है, इसको ही निखार देना कहते हैं। जो मसाला काम आता है, वही निखार कहलाता है। सोनेपर रंग चढ़ानेमें सांभर फिटकिरी, नोसादर, खारी नौन, तूतिया इत्यादि औषध काम आती हैं। इस देशके सुनारोंकी निखार देनेकी रीति और इंगलेण्डके सुनारोंकी रीतिमें अन्तर है। देशी सुनारोंकी निखारकी क्रिया सुगम है और उससे रंग भी अच्छा चढ़ता है। इसका कारण यह है कि यहांपर शुद्ध सोनेकी ही वस्तु बनवानेकी चाल है और बट्टेके सोनेको कम काममें लातेहैं। इंगलेण्डमें २२ केरटका सोना बढ़िया समझा जाता है और १८ केरट वा उससे भी हलके नम्बरके सोनेकी चीज़ें बनती हैं और इस कारण बट्टा अधिक होनेसे सोनेका रंग फीका हो जाता है जिसको शुद्ध सोनेकीसी चमक और रंग देनेकेलिए विशेष उपाय करना पड़ता है।

#### देसी निखार

प्रथम उन निखारोंको लिखा जाता है कि जो देसी सुनार सोनेकी वस्तुके लिए काममें लाते हैं।

१—प्रथम रीति यह है कि सोनेकी वस्तुको अग्निमें ताव देते हैं और ताव लग जानेपर नोसादरको पीसकर उस वस्तुपर बुरक देते हैं। नोसादर बुरकनेके पीछे वस्तुको अग्निमेंसे निकालते हैं। जब नोसादरका धुआं निकलना बंद हो जाता है उस समय बाहर निकालकर पानीसे धोते हैं। साफ़ करके उस वस्तुको चीनीके प्यालेमें ५ तोले पानी और ५ बूंद ज़ामुनके तेज़ाबके मिश्रणमें डालते हैं और थोड़ी देर पड़े रहनेके पीछे निकाल लेते हैं और धोकर सुखाते हैं। सूख जानेपर गेरूको घिसकर रुईके फोयेसे सोनेकी वस्तुपर मलते हैं, जिससे सोनेका रंग गहरा और अच्छा हो जाता है।

२—दूसरी रीति यह है कि लाल (गुलाबी) फिटकरी तूतिया और सांभर नौन बराबर बराबर लेकर पीसते हैं और 'कूलड़ी' में रख छोड़ते हैं। जिस वस्तुको निखारना होता है उसको जलमें धोते हैं और यह मसाला उसपर लपेटते हैं। मसाला अच्छी तरह लिपट जानेपर अंगीठीमें तपाते हैं। जब मसाला जल जाता है, तो उस वस्तुपर नोसादर बुरकते हैं, और तपाते हैं जैसा कि पहिले बतला चुके हैं। तदनन्तर वस्तुको धो लेते हैं और सुखा लेते हैं। इस प्रकार सोनेपर अच्छा रंग चढ़ जाता है।

Industrial Chemistry शिल्प रसायन ]

३—तीसरी रीति-फिटकिरी १ तोला, सांभर आधा तोला, और नोसादर पाव तोला पानीमें पीसते हैं और सोनेकी वस्तुको उस मिश्रणमें अच्छी तरह सानते हैं और सुखाकर अग्निमें तपाते हैं। पीछे पूर्व लिखित रीतिसे धो और सुखा लेते हैं जिससे रंग अच्छा चढ़ जाता है।

४—चौथी रीति-यह रीति तीसरी रीतिकी सी ही है भेद केवल इतना ही है कि नोसादर और औषधोंके बराबर मिलाते हैं।

५—पांचवीं रीति-इस रीतिमें जितनी फिटकिरी लेते हैं उससे आधा सांभर नमक और उतना ही नोसादर लेते हैं। शेष सब क्रिया दूसरी रीतिके अनुसार है।

६—छठी रीतिमें- नोसादर २ माशे और खारी-नौन १ तोला लेते हैं, बाक़ी सब क्रिया दूसरी रीतिके अनुसार है।

७—सातवीं रीति-फीके सोनेको अच्छा रंग देना होता है तो साफ़ सिरका लेकर उसमें ज़ंगार मिलाते हैं और गाढ़ा गाढ़ा सोनेकी वस्तुपर चढ़ा अग्निमें तपाते हैं जिससे रंग अच्छा चढ़ जाता है।

कोई कोई सुनार ऐसा करते हैं कि सोनेकी वस्तुको जिला देकर उसको मनुष्यके बालोंकी धूनी देते हैं। कहते हैं कि इससे भी रंग अच्छा चढ़ जाता है।

### विलायती निखार

ऊपर वे रीतियां लिखी गई हैं कि जिनको देसी सुनार प्रायः काममें लाते हैं। अब आगे थोड़ासा हाल उन निखारोंका दिया जाता है जो इंगलैण्डके सुनार काममें लाते हैं। इंगरेज़ी सुनारोंमें दो प्रकारके निखार प्रचलित हैं। एक तो सूखे निखार दूसरे तर वा द्रव निखार। इन दोनों प्रकारके निखारोंमें मुख्य औषध नौन फिटकिरी और शोरा हैं, पर रंग चढ़ानेकी क्रियामें भेद है।

पहिला सूखा निखार-शोरा ८ तोले नौन ४ तोले और फिटकिरी ४ तोले लेकर बहुत महीन पीसते हैं और किसी बड़ी कूलड़ीमें भर अग्निपर पिघलाते हैं। जब तक वह उबलकर ऊपरतक आ न जाय तबतक लोहेकी डंडीसे हिलाते रहते हैं। फिर सोनेकी वस्तुको तारमें बांध उस कूलड़ीमें इस प्रकार लटकाते हैं कि वह मसालेमें तो डूबी रहे पर पेंदेको न छुए, और उस वस्तुको इस तरह चलाते हैं कि वह मसालेमें धीरे धीरे घूमती रहे। जब मसाला नीचे बैठने लगे तो वस्तुको निकालकर पानी मिले हुए 'म्यूरियेटिक एसिड' में धोते हैं ताकि मसाला छूट जाय। वस्तुको कूलड़ीमेंसे निकालनेके पश्चात् मसाला फिर उफान लेता है तब वस्तुको फिर उसमें पहिलेकी नाईं लटका देते हैं और उफान बैठनेपर फिर उस तेज़ाबके पानीमें धोते हैं। इसप्रकार दो वा तीन डोबमें वस्तु साफ़ हो जाती है। 'म्यूरियेटिक एसिड' की जगह जो गंधकका तेज़ाब काममें लाया जाता है तो और अच्छा रंग आता है। तेज़ाबके पानीसे धोनेसे जब मसाला छूट जाता है तो फिर मामूली सोडा वा पुटासके हलके गरम पानीसे वस्तुको धोते हैं और पोंछकर काष्ठके गरम बुरादेमें रखकर सुखा लेते हैं। यह और आगे दिये हुए सूखे निखार १८ केरटसे ऊपरके सोनेकी वस्तुके कामके हैं।

दूसरा सूखा निखार—शोरा ४ तोले, नौन २ तोले, फिटकिरी २ तोले, इन सबको महीन पीसकर अच्छी तरह मिलाते हैं। एक लोहेकी कूलड़ी जिसके किनारे ४ इञ्च ऊंचे होते हैं लेकर अग्निपर लाल करते हैं। पीछे पिसा हुआ मसाला कूलड़ीमें भर लोहेकी सलाई वा डंडीसे मिलाते हैं। जब कूलड़ीमें से सुरखी स्याही मिली पीले रंगकी लौ उठने लगती है उस समय सोनेकी वस्तुको 'प्लेटीनम' धातुके तारमें बांधकर कूलड़ीके मसालेमें लटकाते हैं और कुछ सेकंड तक मसालेमें रखकर निकाल लेते हैं और 'नाइट्रिक एसिड' (शोरेकातेज़ाब) मिले गरम जलमें डोब देते हैं। जबतक

रंग अच्छा न चढ़े बराबर यही क्रिया करते हैं। डोब देनेसे पूर्व वस्तुको सुखा लेते हैं क्योंकि जो पानीके अंश मसालेमें पहुंच जाते हैं तो वह चटखना हो जाता है और उससे जल जानेका भय रहता है। इस निखारमें सोना कुछ छीजता है इसलिए निखारके मसाले और तेज़ावके पानीको एक बरतनमें इकट्ठा करते जाते हैं और जब बहुत जमा हो जाता है तब सोना निकाल लेते हैं।

तीसरे सूखे निखारमें—नोसादार शोरा और सुहागा प्रत्येकको चार चार तोला लेते हैं और महीन पीसकर ऊपरके दोनों निखारकी विधिसे काममें लाते हैं। अन्तर केवल इतना ही है कि इस निखारके मसालेको धोनेकेलिए गंधकके तेज़ाबका पानी काममें लाते हैं। शोरा और नमकके तेज़ाब काममें नहीं आते। बाक़ी सब क्रिया पूर्ववत ही होती हैं।

चौथा सूखा निखार—यह निखार लन्दनके सुनारोंमें विशेष प्रचलित है। २० तोले शोरा १० तोले नमक और १० तोले फिटकरी लेकर काठके खरलमें बारीक पीस लो। तदनन्तर काले सोसे या लोहेकी कूलड़ी आंचपर गरम करके लाल कर लो, और उसमें उपरोक्त मिश्रण डाल दो। लोहेकी डंडीसे उसे हिलाकर मिला दो। जब कूलड़ीमेंसे स्याही मिला पीले रंगका धुआं निकलने लगे तो सोनेकी वस्तुको प्लेटीनमके तारसे बांधकर उसमें लटका दो। दो तीन सेकंडके बाद निकाल लो और शोरेके तेज़ाबके मिश्रणमें धोलो। इस प्रकार वस्तुको कई बार निखार देते हैं जबतक उसका रंग ठीक न निकल आवे। प्रत्येक बार डोब देनेके पहिले, उस वस्तुको काठके बुरादेमें सुखाते जाते हैं। पर मसालेमें लटकानेके समय यह ध्यान रहै कि बुरादेका कोई भी कण उसके साथ मसालेमें न चला जाय, नहीं तो वह भाग जहां बुरादा लगा था, मसालेमें डालनेपर काला हो जायगा। इस रीतिसे १८ केरटसे ऊपरका सोना निखारा जाता है। इस रीतिमें छीजन भी कम होती है, और इसलिए ओषधियोंका मिश्रण जुदा न रखकर न्यारेमें मिला दिया जाता है।

ऊपर लिखे हुए सूखे निखारोंकेलिए सोना ऐसे मेलका होना चाहिये कि जिसमें मेलकी धातुमें तांबेके भाग विशेष हों अर्थात् २ भाग तांबा और १ भाग चांदीका बट्टा हो और सोनेकी वस्तुके जोड़में सुवंज भी अच्छी लगी होनी चाहिये।

सब प्रकारके निखारोंमें काम आनेवाले बरतन तथा औज़ार और निखारी जानेवाली वस्तु सब साफ़ और स्वच्छ होनी चाहिएँ क्योंकि जितनी सफ़ाई होगी उतना ही उम्दा रंग चढ़ेगा। आगे तर निखार देनेकी उपयोगी ओषधियों और क्रियाओंपर थोड़ा विचार करेंगे। इन तर निखारोंसे १६ केरटसे ऊपरके केरटका सोना निखारा जाता है और जो अधिक हुशियारीसे काम लिया जाय तो १२ केरट तकके सोनेकी वस्तु निखारी जा सकती हैं।

पहिला तर निखार—तीन तोले पानीमें एक तोला गंधकका तेज़ाब मिलाते हैं और तदनन्तर ८ तोले शोरा और ४ तोले नमक महीन पीसकर उसमें घोल देते हैं। इस घोलको एक कूलड़ीमें रखकर उबालते हैं। जब उफान आने लगते हैं, तो सोनेकी वस्तुको प्लेटीनम धातुके तारमें बांधकर मसालेमें इस प्रकार लटकाते हैं कि वह मसालेमें तो डूबी रहै पर पेंदेसे न लगे। चार मिनटतक इस तारको हिलाते रहते हैं, जिससे वस्तुके प्रत्येक अङ्गपर मसालेका प्रभाव पड़े। फिर वस्तुको खौलते पानीमें धोकर मसाला छुड़ा लेते हैं। जब निखारमेंसे सोनेकी वस्तु निकालते हैं तो उसमें थोड़ासा पानी मिला देते हैं। जिस समय दुबारा उफान आता है तो चीज़को फिर उसमें डालते हैं, पर अबकी बार केवल दो मिनटतक रखते हैं और निकालकर पहिलेकी भांति खौलते पानीमें धो डालते हैं। इस ही भांति एकबार फिर क्रिया करते हैं और अन्तमें पानीमें धोकर साफ़ कर लेते हैं। इस रीतिसे निखार

बहुत अच्छा चढ़ता है, पर १४ केरटसे ऊपरके सोनेकेलिए यह विधि उपयुक्त है।

दूसरा तर निखार—एक काली सीसेकी कूलड़ी इतनी बड़ी लेते हैं कि जिसमें मसाला उफनकर बाहर न निकल जाय। इस कूलड़ीको अग्निपर लाल गरम करते हैं और उसमें शोरा ८ तोले और नौन ४ तोले डालकर लोहेकी डंडीसे मिलाते जाते हैं। जब मसाला गरम हो जाता है तब ४ तोला नमकका तेज़ाब उसमें मिलाते हैं और उफान आनेपर सोनेकी वस्तुको तारमें बांधकर लटकाते हैं और ३ मिनिटतक हिलाते रहते हैं। फिर निकाल कर उबलते हुए पानीमें दो तीन बूंद नमकके तेज़ावकी मिलाकर उस वस्तुको उस पानीमें धोते हैं। अब कूलड़ीके मसालेमें १ तोला नमकका तेज़ाब और ४ तोले पानी मिलाते हैं और उफान उठनेपर फिर उस वस्तुको मसालेमें डुबोकर १ मिनिटतक हिलाते रहते हैं। फिर ताज़े खौलते पानीमें धोकर साफ़ कर लेते हैं। इस तरकीबसे १६ केरटसे ऊपरके सोनेपर निखार अच्छा चढ़ता है, विशेषकर जब कि मिलावटमें चांदीका भाग विशेष हो।

तीसरा तर निखार—८ तोले शुद्ध नमकका तेज़ाब और १ तोला शुद्ध शोरेका तेज़ाब लेकर कांचकी डाटवाली शीशीमें रख छोड़ते हैं। काममें लानेके समय पुराने निखारका बचा पानी ५ तोले और यह तेज़ावका मिश्रण १ तोला उबालते हैं और उफान आनेपर सोनेकी वस्तुको पूर्व लिखित रीतिसे लटकाते हैं और १से ३ मिनिटतक हिलाते हैं और पूर्ववत खौलते पानीमें खंगारकर साफ़ कर लेते हैं।

जिस मिश्रणका वर्णन तीसरे निखारमें किया है, उसकी जगह अगर आठ तोले नमकका तेज़ाब और दो तोले शोरा मिलाकर मिश्रण बनाया जावे और काममें लाया जावे, तो भी अच्छा निखार होगा। इन दोनोंका मिश्रण बनानेमें नमकके तेज़ाबको कुछ गरम करते हैं कि जिससे शोरा अच्छी रीति घुल जाय। ठंडा होनेपर शीशीमें भर रखते हैं। निखार देनेकी रीति पहिले लिखे अनुसार ही है। इस रीतिसे रंग अच्छा और गहरा चढ़ता है।

---

## बिजली की रोशनी*

[ले० जगद्बिहारी सेठ बी. एस. सी.; इंगलैंड]

एक नये मेलका चाप लम्प निकला है जिसमें कुण्डलियां आदि निकाल डाली गयी हैं, और कर्बन केवल एक उष्ण तारके घटाव बढ़ावद्वारा ठीक रक्खा जाता है। एक कमानी (spring) ऊपरी कर्बनको ऊपर खींचनेकी कोशिश करती रहती है, पर एक चपटा स्टीलका तार कमानीके विरुद्ध काम करता है। जब धारा लानेवाली कैंची (switch) खुली रहती है तब तो कर्बन परस्पर स्पर्शमें रहते हैं, परन्तु जैसे ही कैंची बन्द कर दी गयी, और धारा चपटे तारमें-से होकर गयी और उसे उष्ण कर दिया, वैसे ही यह तार फैलता है। जबतक तार अपनी प्राकृत अवस्थामें था तबतक तो वह कमानीको कर्बन ऊपर खेंचने नहीं देता था. परन्तु फैलनेसे कमानीपर उसका पूरा अधिकार नहीं रह गया, और कमानीने कर्बनको ऊपर उठा लिया। इस प्रकार चाप बन गया। जैसे जैसे कर्बन क्षयको प्राप्त होते जाते हैं, वैसे वैसे तार ठंडा होता जाता है, इसके ठंडे होनेके कारण वह सिकुड़ने लगता है और अपना अधिकार फिरसे प्राप्त कर लेता है। इस तरह कमानी फिर खिंच आती है और कर्बनके बीचका अन्तर इस प्रकार ठीक रहता है।

कर्बन पेंसिलोंके निरन्तर क्षय अथवा उड़ते रहनेके कारण यह आवश्यक है कि उनकी जगह पर नये कर्बन प्रत्येक चौदहवें या अठारहवें घंटे

* [ विज्ञान भाग ३ अङ्क ४ पृष्ठ १८३ से सम्मिलित ]

Electricity विद्युत् शास्त्र ]

लगाये जायं। निस्सन्देह यह क्रिया लाभकारी नहीं, क्योंकि उसके कारण ख़र्च वढ़ जाता है। अतएव स्वभावतः लोगोंके मनमें यह अभिलाषा उठी कि कर्वनोंके जीवन कालमें वृद्धि करनेका यत्न किया जाय। पिछले कुछ वर्षोंमें ऐसा करनेमें सफलता भी हुई है। कर्वनोंके इस क्षयका कारण क्या है? चापमें उत्पन्न हुआ कर्वनवाष्प ही केवल इसका कारण नहीं हो सकता, क्योंकि अकेला अन्तर्नायक कर्वन ही इन कर्वन कणोंका जन्मदाता है, परन्तु जैसा कि ऊपर कहा गया है, क्षय दोनों ही कर्वनोंका होता है। हां, यह सच है कि अन्तर्नायक कर्वनका क्षय वहिर्नायक कर्वनसे दूना होता है, परन्तु इसका प्रधान कारण यह है कि उसका तापमान बहुत अधिक होता है; और यदि इतस्ततः या अन्योन्यगामी धारासे काम लिया जाय, जिससे कि धारा प्रत्येक कर्वनसे बारी बारीसे आया करे, तो दोनों कर्बन एक ही परिमाणमें क्षयको प्राप्त होंगे! परन्तु अब भी उनका क्षय ऐसे परिमाणमें होता हुआ पाया जायगा जिससे यह प्रत्यक्ष हो जायगा कि जितने थोड़ेसे कर्बनकी (सम्बन्ध स्थापित करने वाले पुलकेलिए) वाष्प वनानेके लिए आवश्यकता है उससे कहीं अधिक वह नष्ट हो रहा है। वात यह है कि तापमान इतना अधिक है कि कुछ थोड़ासा कर्बन वायुके ओषजनसे (oxygen) रासायनिक रीतिसे मिलता रहता है, अर्थात् बोलचालकी भाषामें जलता रहता है। चापके प्रकाशसे और इस जलनेसे कुछ सम्बन्ध नहीं, अतएव यदि हो सके तो हमें इस जलनेको बन्द कर देना चाहिए। कमसे कम हम इतना तो अवश्य कर सकते हैं कि कर्बनों तक जो ओषजन पहुंचता है उसका परिमाण कम करदें, ऐसा उन्हें शीशेकी एक हांडी (globe) में बन्द कर देने से हो सकता है, जिससे कि चाप इस परिवृत स्थानमें ही वने।

इस हांडीके नीचेके छेदसे, जिसमेंसे नीचेका कर्बन जाता है, कुछ थोड़ीसी हवा जाती रहती है, और ऊपरके छेदसे, जिसमेंसेकि ऊपरवाला कर्वन जाता है उष्ण हवा निकलती रहती है*। यह छोटी हांडी वाहर वाली हांडीसे बिलकुल भिन्न होती है। इन 'परिवृत चाप लम्पोंमें' यह सम्भव है कि कर्वन ८० से १५० घंटेतक रह सके—मामूली खुले हुए चाप लम्पमें इन्हीं कर्वनोंको कदाचित् १८ घंटेमें ही बदलनेकी ज़रूर पड़ जाती।
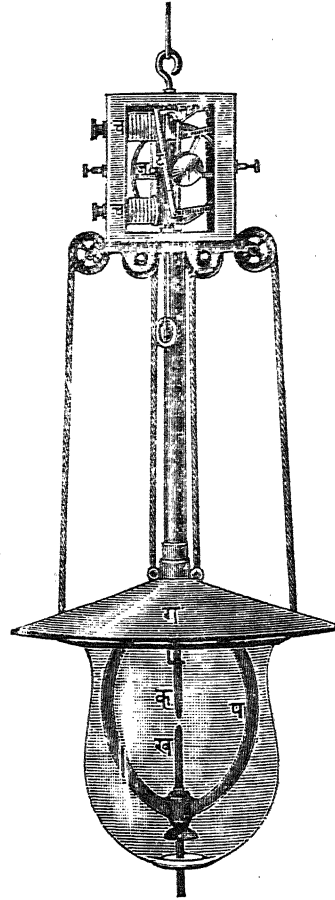
चित्र नं० १

* कर्वन और शीशेमें वाय्वागम्य—air tight-सम्बन्ध नहीं कर सकते क्योंकि दोनों गर्मी पाकर भिन्न भिन्न परिमाणमें बढ़ते हैं। अतएव कर्वन पेंसिलोंके चतुर्वर्ती छेदका होना अनिवार्य्य है।

लण्डनके रायल इंस्टीट्यूशनमें व्याख्याताका काम करते हुए सर हम्फ्री डेवीने केवल विद्युत् चापके तीव्र प्रकाशका ही आविष्कार नहीं किया, उन्होंने यह भी दिखलाया कि यदि अंगारकी किसी छड़में काफ़ी दबाववाली वैद्युतधार का (voltage) सञ्चार किया जाय, तो वह भी तप्त होकर श्वेत हो जाती है और प्रकाश देने लगती है। प्रत्यक्ष है कि अंगार छड़का जीवन काल इतने अधिक तापमानमें बहुत ही कम रहा होगा, ख़ासकर जब कि डेवीने लकड़ीके अंगारका (wood charcoal) इस्तेमाल किया था। चाहे जो हो, इस प्रयोगसे एक दूसरे ही प्रकारके विद्युत् लम्पके सिद्धान्तका सूचन अवश्य हो गया। यह बात ज़ाहिर हो गई कि यदि बहुत पतला कर्बनका तार शून्यमें रक्खा जाय, जिससे कि तारका जलना असम्भव हो जाय, तो बड़ा ही उपयुक्त विद्युत् लम्प बन जायगा।

इस प्रकारके लम्पकी सूचना पहिले पहिल १६०६ वि० में दी गयी थी। किन्तु उस समय तक, व्यवहरणीय डायनमोका प्रादुर्भाव न हुआ था; अतएव ऐसे लम्पोंका निर्माण उस समय नहीं हो सका। परन्तु जब १८ साल बाद व्यवसायी डायनमोका विकास हुआ, तब बहुतसे प्रयोग कर्त्ता इस काममें लग गये; और समयानुसार तापप्रदीप्त ( incandescent ) या श्वेततेज लम्पका ( glow-lamp ) आविर्भाव हुआ।

प्राथमिक प्रयोगकर्त्ताओंके ऐसे लम्पोंके बनानेकी विधि इतनी संकीर्ण होती थी कि उनकी कोई क़दरही नहीं कर सकता था। एडिसन (Edison) तथा अन्य कई प्रयोगकर्त्ताओंने श्वेततेज लम्पके उस भागके लिए जो श्वेततप्त किया जाता था, प्लैटिनमके तारका (platinum wires) इस्तेमाल किया। परन्तु ऐसे लम्पोंकी आयु बहुत ही कम होती थी, और उनकी दीप्ति अधिक न होती थी। इनके सिवाय प्रकाशको उत्पन्न करनेकेलिए जिस बड़े तापमानकी आवश्यकता थी, उस तक उसे तप्त करनेमें धातुके पिघल जानेका भी अन्देशा था। आविष्कर्त्ताओंका ध्यान तब कर्बनके उपयुक्त प्रवाहक अथवा तन्तुओंकी ओर गया। किन्हींने कर्बनीकृत (carbonized) सूतके डोरेका उपयोग किया, किन्हींने भिन्न भिन्न प्रकारकी घास, काग़ज़, लकड़ी, लम्पकी कालिख, कोलटार, कपूर, इत्यादिका प्रयोग किया। अमेरिकामें एडिसन बांसकी खपचियोंको तन्दूरमें ख़ूब सेंककर (जब तक कि उनका कोयला न बन जाय) कर्बन तन्तु बनानेमें सफल हुआ। इंग्लैण्डमें स्वान (Swan) रुईके रेशोंको गंधकाम्लमें भिगोकर, उन्हें बहुत अधिक तापमानपर तप्तकर, कर्बनतन्तु बनानेमें समर्थ हुआ।

आजकल कर्बन-तन्तु एक विशेष घोलसे (solution)बनाए जाते हैं। इस घोल बनानेकी एक विधि यह है कि पिनी हुई रुईको (cotton wool) यशदहरितमें (zinc chloride) तबतक घोलते रहते हैं जबतक कि घोल शीरेकी तरह नहीं हो जाता। इस घोलको किसी घड़ेमें भरकर, एक शीशेकी नलीके द्वारा उसे किसी दूसरे घड़ेमें रक्खे हुए मेथीलेटेड् अल्कोहल (methylated alcohol) और नमकके तेज़ाब (hydrochloric acid) के घोलमें पहुंचाते हैं। यह नली इस दूसरे घोलके भीतरतक चली जाती है, और घोलमें डूबा हुआ सिरा बहुत ही पतला होता है, जिससे कि पिनी हुई रुईके घोलकी ख़ूब महीन धार दूसरे घोलमें निकलती है। धार निकलते ही इस घोलमें तुरंत जम जाती है, जिससे कि वह पतले तागेके आकारमें हो जाती है। जमानेवाले घोलमें लगातार गिरता हुआ यह डोरा सारंगीमें लगे हुए पतले गटकी तरह होता है। यह सारी सामग्री जमानेवाले घोलमें कई दिनतक रहती है। इस (तन्तु) डोरेकी मोटाई फ़व्वारेके छेदको छोटा बड़ा करनेसे कम या ज्यादा की जा सकती है। जमानेवाले घोलसे जब यह लचीला तागा निकाला जाता है तोवह सावधानीसे धोया और सुखाया जाता है; और

या कुमकुमोंमें (bulbs) रखना होगा, और बाहरसे ही इनमें धारा पहुंचानी होगी। अतएव इन तंतुओंके सिरोंको धातुके तारके टुकड़ोंसे जोड़नेकी आवश्यकता है। इन तारोंको शीशेमें जड़ना होगा, इसलिए वे किसी ऐसी धातुके होने चाहिए जो स्वयं उष्णता पाकर उतनी ही बढ़े जितना शीशा बढ़ता है। यह बड़ा ही गुरु विषय है, क्योंकि यदि धातु शीशेसे ज़्यादा बढ़े तो गर्मी पाते ही धातु ज़्यादा बढ़कर शीशेको चटखा देगी; और यदि शीशा धातुसे ज़्यादा बढ़े तो भी कुमकुमेमें शून्यका रहना असंभव है, अर्थात् धातुका तार शीशेमें किये हुए छेदमें ढीला-ढाला हो जायगा, और इसलिए बाहरकी हवा कुमकुमेके भीतर जा सकेगी। प्लैटिनम इस आवश्यकताको अन्य किसी धातुकी अपेक्षा ज़्यादा अच्छी तरहसे पूरा कर सकता है, अर्थात् गर्मीके कारण जितना जितना शीशा बढ़ता है, प्लैटिनम भी उतना ही बढ़ता है। परन्तु प्लैटिनमका मूल्य सोनेसे कुछ ही कम है, इसलिए बहुत ही छोटे और महीन टुकड़ोंका इस्तेमाल करना ज़रूरी है, जो शीशेमें घुस सकें और भीतरके कर्बनतन्तु और बाहरके ताम्र तारके बीच सम्बन्ध कर सकें। इन छोटे टुकड़ोंको मशीनसे काटते हैं, और काटनेके बाद मशीनद्वारा बड़ी सावधानीसे उनके सिरेको खोखला कर महीन नलीके आकारमें कर देते हैं, जिनमें कि कर्बनतन्तुका सिरा पहिनाया या घुसाया जा सकता है। कदाचित् इन तन्तुओंके सिरों और प्लैटिनमके टुकड़ोंके बीचमें आवश्यक सम्बन्ध करना असंभव सा मालूम पड़ता होगा, परन्तु व्यवहारमें यह सम्बन्ध बड़ी ही खूबीसे किया जाता है। हाथ या मशीनसे हम अधिकसे अधिक यह कर सकते हैं कि कर्बनके तन्तुओंके सिरोंको प्लैटिनम तारके टुकड़ोंके खोखले सिरेमें रखकर इन खोखलोंको कसकर दबा दें। परन्तु इस प्रकारसे ठीक ठीक सम्बन्ध करना असंभव है; अतएव इन दोनों पदार्थोंको फिर प्लम्बेगो की (Plumbago) सिल्लियों या सांचों पर लपेटा जाता है जिससे उसका मनमाना आकार—एक अकेला फन्दा, या चक्कर, या बांकी टेढ़ी लकीर - हो जाता है।

तन्तु अब कर्बनीकृत होनेके लिए तय्यार है। ऐसा करनेके लिए सिल्लियां, जिनपर तन्तु लिपटा हुआ है पात्रों या घुलियोंमें (Crucible)रख दिया जाता है, जिनको महीन पिसे हुए अंगारसे भर कर कस देते हैं। इस प्रकार कसनेसे सब हवा निकल जाती है और तागे भी अपनी अपनी जगहपर बने रहते हैं। ये खूब ज़्यादा तप्त तंदूरोंमें एक दिन और एक रात सेके जाते हैं। यहांसे निकलनेके बाद तन्तु काला और तारकी तरह हो जाता है, परन्तु वह खुरदुरा रहता है। इन खुरदरे तन्तुओंकी मोटाई सावधानीसे नापी जाती है, और अपनी अपनी मोटाईके अनुसार अलग अलग किये जानेपर वे इच्छानुसार लंबाईके टुकड़ोंमें काट लिये जाते हैं।

इन तन्तुओंको शून्यीकृत शीशेकी हांडियें आपसमें जोड़ देनेकेलिए एक सिरेसे दूसरे सिरे तक एक सम्बन्ध या अदीर्घ पथ बना देते हैं, जिससे कि कर्बन तन्तुमें गये हुए विना ही दोनों सिरोंमें इस अदीर्घपथ द्वारा विजलीकी धार भेजी जा सकती है। धाराके प्रवाहित करनेके पहिले तन्तु और दोनों सिरोंको बेंज़ीन (Benzene) या अन्य किसी वैसे ही गुणवाले उपयुक्त द्रवके भीतर डुबो देते हैं, और इसी डूबी हुई अवस्थामें ही बिजलीकी धारा प्रवाहित कर प्लैटिनम सिरोंको रक्ततप्त कर देते हैं। बेंज़ीनमें कर्बनका बहुत बड़ा अंश होता है, और इस दशामें उसका कर्बन जोड़ोंपर खोखलेके भीतर खूब अच्छी तरहसे जम जाता है, और इस प्रकार कर्बन-तन्तु और उसे थाम्हनेवाले प्लैटिनमके तारके बीच पूर्ण स्पर्श स्थापित हो जाता है।

जिन लोगोंको रसायन शास्त्रका कुछ ज्ञान है, या जिन्होंने बेंज़ीनसे काम किया है वे जानते हैं

कि बेंज़ीन बड़ा ही ज्वलनशील पदार्थ है, फिर उसके पास आग लाना कैसा ख़तरनाक होगा, यह कहनेकी आवश्यकता नहीं। इसलिए यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि उपरोक्त क्रियामें रक्ततप्त सिरे उसके तलको न छूने पावें और धाराका तब-तक उसमेंसे संचार न करना चाहिए जबतक कि सिरे और कर्बन-तन्तु अच्छी तरहसे द्रवमें डूबे हुए न हों। कोई कोई शायद ज्वलनशील बेंज़ीनके भीतर तारको रक्ततप्त करनेकी क्रियाको भी भयानक समझते हों, परन्तु वास्तवमें उसका कुछ भय नहीं है। आग तबतक नहीं लग सकती जब तक कि रक्ततप्त तारके पास ओषजन नहीं पहुंच सकता। आग लगनेकेलिए इस ओषजनका होना नितान्त आवश्यक है—बिना उसके ज्वलन क्रिया-का होना असंभव है। बेंज़ीन एक ऐसा द्रव है कि उसमें ओषजनका कुछ भी अंश नहीं है। इसलिए उसके भीतर तारको रक्ततप्त करनेमें जलनेका कुछ अन्देशा नहीं। यह सब होनेपर भी, और आग न लगने देनेकेलिए पहिलेसे ही सब इन्तज़ाम कर लेनेपर भी एवं बड़े बड़े पुराने और होशियार कारीगरोंके अनेक यत्न करनेपर भी द्रव बहुधा जल उठता है। ऐसी हालतमें कारीगरके सिर्फ़ कब्ज़ोंपर सधे हुए एक ढकनसे बेंज़ीनके पात्रको बन्द करते ही आग बुझ जाती है, क्योंकि ऐसा करनेसे ओष-जनकी आमद बन्द हो जाती है। किसी आक-स्मिक घटनाके समय कारीगरोंको धीरज रखना सिखलाया जाता है, तथा ज़्यादा ख़तरा होने-पर धीरेसे बिना किसी हड़बड़ीके, कमरा छोड़ देनेका आदेश दिया हुआ होता है, और आग बुझानेके लिए पहिलेसे ही काफ़ी इन्तज़ाम किया हुआ होता है।

इस प्रकार बेंज़ीनके हौज़से निकलनेपर कर्बन तन्तु अन्तर्नायक तारोंसे भली भांति, मज़बूतीसे, जुड़ा हुआ हो जाता है। परन्तु कर्बन तन्तु अब भी पहिलेकी ही तरह बहुत खुरदुरा रहता है, और उसको चिकना और एक मोटाईका बनानेकी कोशिश करना भी शायद असम्भवसा प्रतीत होता होगा। किन्तु यह काम भी बड़ी ही युक्तिसे कर दिया जाता है। तन्तु किसी शीशेके ढकन या आधारमें (reciever) रक्खा जाता है। और वायु निष्कासन यंत्रके ( air pump ) द्वारा उसके भीतरकी हवा निकाल कर हाइड्रो कार्बन (Hydro-carbon) वाष्प भर दिया जाता है। अब तन्तुमें विद्युत् धाराका प्रवाह कराते हैं, जिससे कि वह श्वेततप्त हो जाता है। यह अधिक तापमान चारों ओरकी वाष्पपर असर करता है, जिससे वाष्पका कर्बन अलग होकर उष्ण तन्तुपर बैठ जाता है। ऐसा करनेसे तो सचमुच यही मालूम पड़ता है कि तन्तुकी केवल मोटाई ही बढ़ जायगी, उसका खुरदरापन जैसाका तैसा ही बना रहेगा। परन्तु कभी कभी स्वयं प्रकृति देवी बड़े मौक़ेसे हम लोगोंकी सहायता करनेको आ जाती हैं। कर्बनके ज़्यादा पतले भाग धाराकी राहमें मोटे भागकी अपेक्षा ज़्यादा प्रतिरोध खड़ा करेंगे और इसलिए मोटे भागकी अपेक्षा उनका तापमान अधिक हो जायगा। इस ज़्यादा तापमानपर उनकी ग्राहक शक्ति भी ज़्यादा हो जाती है, और उस स्थानपर ज़्यादा कर्बन बैठता है। इस प्रकार तन्तुके पतले भाग अपने अपने पतलेपनके अनुरूप मोटे होते रहते हैं और अन्तमें चिकना एक मोटाईवाला तन्तु तय्यार हो जाता है।

अब इस तन्तुको शीशेके कुमकुमेके भीतर रखकर, अच्छे अच्छे पम्पोंसे उसके भीतरकी वायु निकालना, तथा और कुछ ऊपरके दो एक काम करना भर ही रह जाता है।

असलमें श्वेत तेज लम्प बनानेकी चालीस, पचास विधियां हैं। यह ध्यान रखना चाहिये कि अच्छे तन्तुका बना हुआ बढ़िया, और ज़्यादा क़ीमती लम्प, घटिया कम क़ीमतवाले ख़राब

तन्तुके बने हुए लम्पसे आखिरको सस्ता पड़ता है। एक दूसरी बात और है कि इन लम्पोंको उनकी लिखी हुई आयुके बाद न जलाना चाहिये। ऐसा करनेसे बिजलीका ख़र्च ज़्यादा होता है, पर रोशनी वैसी अच्छी नहीं मिल सकती। इसलिए ऐसा करनेमें अपना ही घाटा है। इन लम्पोंका जीवनकाल प्रायः एक हज़ार घंटोंका होता है और ऐसे महीन तन्तुकी इतने अधिक तापमान पर जलते रहते हुए, इतनी आयु कुछ कम नहीं है। तन्तुओं पर कुछ और क्रिया करनेसे—उनको धातव पृष्ठ metallic Surface) दे देनेसे अर्थात् उन पर धातु जमा देने से—लम्पोंकी आयु बढ़ायी भी गई है।

बिजलीकी रोशनीका एक बड़ा भारी गुण यह है कि वह इच्छानुसार कमरेके किसी हिस्सेमें जलायी या बुझायी जा सकती है। जब कैंची खुली छोड़ दी जाती है तब विद्युत्के मुख्य मण्डल और लम्पके मण्डलका सम्बन्ध टूट जाता है, और लम्पतक धारा नहीं पहुंच सकती। परन्तु जब कैंची बन्द कर दी जाती है, तब इन दोनों मण्डलोंमें सम्बन्ध हो जाता है और धारा लम्पके तन्तुमें पहुंच कर उसे श्वेततप्त कर देती है। डायनमोसे निकलकर प्रवाहक तारोंपर विद्युत् धाराको बहुत ही सुगम मार्ग मिलता है। ये प्रवाहक तार काफ़ी मोटे बनाये जाते हैं जिससे धारा उनपर सहज ही, विना उन्हें तप्त किए हुए ही, जा सके। परन्तु जब धारा श्वेततेज लम्पके छोटेसे महीन कर्बन तन्तुमें पहुंचती है, तो वहां पर उसके मार्गमें इतना अधिक प्रतिरोध होता है कि तन्तु प्रायः ३५००° फ़ारनहैट ( Fahrnheat ) अर्थात् प्रायः १९३०° शतांशके तापक्रमपर पहुंच जाता है, और बड़ी अच्छी कोमल रोशनी निकलने लगती है।

इन श्वेततेज लम्पोंका एक और बड़ा गुण यह है कि उसके लिए बहुत बड़ी वोल्टेज (voltage) अर्थात् दबावकी ज़रूरत नहीं होती, और इसलिए यदि अकस्मात् कोई व्यक्ति तारको स्पर्श करले तो कोई बड़ा, प्राणघातक, धक्का लगनेका अन्देशा नहीं रहता। एक दूसरा गुण यह है कि इस प्रकारके प्रकाशमें कोई गर्हित या अनिष्टकर पदार्थ 'जल कर' नहीं निकलते, और इसलिए किसी कमरेके सामान तथा अलंकारादिके ख़राब या मैले हो जानेका डर नहीं रहता, जैसा कि मामूली तेल या गैसके लम्पकी रोशनीमें होता है। परन्तु बिजलीकी रोशनीका सबसे बड़ा लाभ—चाहे मामूली आदमी उसे न भी समझता हो—यह है कि इस प्रकारकी रोशनी हमारे जीवन सञ्चारक ओषजन वायुका इस्तेमाल नहीं करती। इस वायुके किसी अंशकी भी चोरी हमें नहीं होने देना चाहिए विशेष कर ऐसी अवस्थामें जब हम सब दरवाज़े, रोशनदान, हवादान, बन्द कर रक्खें।

---

## वर्गसनका सृजनात्मक विकाश

( Creative Evolution )

[ ले० गुलाबसिंह एम. ए. ]

वर्तमान सभ्य समाजमें विकाशवादकी बड़ी चरचा रहती है। क्या समाज, क्या साहित्य, क्या विज्ञान, क्या कला कौशल सबमें ही विकाशवादके सिद्धान्तोंकी योजना की जाती हैं। यहांतक कि स्वयं विकाशवाद सम्बन्धी कल्पनाओंका भी विकाश हो रहा है। चार्ल्स डार्विनके ( Charles Darwin ) समयसे अबतक विकाशवादमें बड़े मत भेद हो गये हैं। कोई वैभिद्यको ( variation ) क्रमागत भेदोंका फल मानते हैं और किसीका यह कहना है कि ये भेद एकाएकी ( आकस्मिक ) हो गये। किसीका यह मत है कि संसारके विकाशमें प्रयोजन विद्यमान है और उसका अन्तिम स्वरूप पहिलेसे ही निर्धा-

Philosophy दर्शन शास्त्र ]

रित है। संसार उसी लक्ष्यको प्राप्त करनेकी चेष्टा कर रहा है। इस कल्पनाको सुभीतेके लिए हम प्रयोगवाद (finalism) कहेंगे। इसके विपरीत कुछ लोगोंका विचार है कि विकाशमें कोई मुख्य लक्ष्य नहीं है। संसारके मूल तत्त्वोंका लौट फेर तथा प्राकृतिक चुनाव (natural selection) और बहिरावेष्ठनके (environment) प्रभावसे विकाशका क्रम निश्चित् होता रहता है। इन लोगोंके मतमें प्राकृतिक कारणों द्वारा ही सब कुछ यंत्रवत् होता रहता है। अच्छा शब्द न मिलनेके कारण हम इस कल्पनाको यंत्र-प्रकार-वाद (mechanism) कहेंगे। इस मत भेदमें बर्गसन की* (Bergson) अपूर्व स्थिति है। इन्होंने अपनी कल्पनाका नाम स्रजनात्मक विकाश (creative evolution) रक्खा है। इनके विकाशवाद सम्बन्धी विचार नीचे दिये जाते हैं।

बर्गसनके मतसे यंत्र-प्रकार-वाद (mechanism) और प्रयोजन वाद (finalism) दोनों ही दूषित है। पहिले यंत्र प्रकारिक कल्पनाओंपर विचार कीजिये। इस कल्पनानुसार इन्द्रियां ही अपने धर्मको बना लेती हैं, जैसे आंखका धर्म दृष्टि है। बर्गसन आंखको उदाहरण लेते हुये पूंछते हैं कि भिन्न भिन्न कोटिके जीवोंकी आंख एक सी क्यों होती है? इसके साथ यह भी बतलाया है कि आंखका धर्म तो एक केवल देखना ही है और उसकी रचनाका तारतम्य बड़ा विचित्रहै, यह क्यों?

इन प्रश्नोंका उत्तर यंत्र-प्रकार-वादी क्या देते हैं। इनका कहना है कि पहिले (बिना किसी विशेष कारण) थोड़ा भेद आरंभ हुआ, फिर ये भेद सञ्चित होते रहे और जब भेद बढ़ गये तो नई जातियां उत्पन्न हो गईं। इस कल्पनामें बर्गसन दो कठिनाइयां उपस्थित करते हैं। पहिले तो यह कि जब अंगोंमें नियम रहित असंयोगिक (accidental) परिवर्तन होता रहा तो यह समझमें नहीं आता कि आंख ऐसी पेचीदा इन्द्रियके अंगोंका ऐसा सुव्यवस्थित परिवर्तन होता रहा कि सब अंगोंने एक ही धर्मके साधनमें योग दिया। भेद अथवा परिवर्तन क्रमागत बतला देनेसे कुछ काम नहीं चलता। माना कि धीरे धीरे परिवर्तन होनेके कारण आंखके धर्ममें कोई रुकावट न पड़ी, पर यह कैसे माना जावे कि हमारी आंखका मस्तिष्क एवं समस्त नाड़ी संस्थानमें ऐसा योग आन पड़ा कि सबके सब देखनेके धर्मको बढ़ावें। जो बातें असंयोगिक रीतिसे होती हैं, उनमें ऐसी सुव्यवस्था नहीं दिखाई देती। यह तो एक व्यक्तिकी आंखकी बात रही। अब दो भिन्न कोटिके जीवोंमें एक सी ही आंखके होनेकी असंयोग वादमें क्या व्याख्या दी जायगी? क्या दो भिन्न राह जानेवाली जातियोंमें भी ऐसा आकस्मिक योग आ पड़ा कि उन दोनोंमें जितने परिवर्तन हुए उनका फल एक ही प्रकारकी आंख हुई? आंख कोई स्वतंत्र अंग नहीं है। उसका तो संबन्ध सारे शरीरसे है। क्या शरीरोंमें परिवर्तन होनेपर आंखमें परिवर्तन हुआ? यदि सब परिवर्तन असंयोगिक (accidental) हुये, तो क्या दो भिन्न कोटिके जीवोंमें लगातार एकसे ही परिवर्तन होते रहे कि दोनोंमें एक सी आंख बन जाती? यह असंयोगता कैसी?

यदि हम दूसरी कल्पनाकी ओर ध्यान दें तो हमको थोड़ा सा सहारा मिलता हुआ दिखाई देता है, किन्तु इसके साथ हमको कठिनाइयोंमें

---

* हेनरी बर्गसनका (Henri Bergson) जन्म फ्रांसकी राजधानी पेरिसमें सन् १६१६ वि० में हुआ था। आपने कई ग्रन्थ रचे हैं, उनमेंसे मुख्य ये हैं—Time and Freewill; Matter and Memory; Creative Evolution, Laughter; Introduction to Metaphysics. आपके मूल ग्रंथ तो फ्रांसीसी भाषामें हैं, किंतु उनका अंग्रेज़ीमें अनुवाद हो गया है। आप बहुत दिनोंसे फ़िलासफ़ी पढ़ा रहे हैं और आपके व्याख्यान भी बड़े चित्ताकर्षक हुआ करते हैं। बर्गसन साहिब आज कलके दार्शनिकोंकी गणनामें ऊंचा स्थान पाते हैं।

पड़ जाना पड़ता है। दोनों ही कल्पनाएँ आक-स्मिकताके आधार पर हैं, केवल अन्तर इतना ही है कि पहलीके अनुसार जो कार्य्य धीरे धीरे हुआ था, वह दूसरीमें एक साथ हो जाता है। पहिलीमें दूसरीसे अधिक कठिनाई है। पहिली कल्पनामें तो, आकस्मिक परिवर्तनोंका एक ही धर्मके साधनमें योग देना, ऐसी करामातको प्रतिक्षण मानना पड़ता है। दूसरी कल्पनाके अनु-सार यह करामात कभी कभी हो जाती है। इसीसे इस कल्पनामें हमको कम कठिनाई पड़ती है। सम्भव है कि दो भिन्न कोटिके जीवोंमें एक साथ ऐसे परिवर्तन हुये हों कि दोनोंमें एक ही सी आंख बन जाय, किन्तु इसके साथ यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जब बड़े बड़े परिवर्तन होते हैं तो किसी एक अंगके परिवर्तनमें न्यूनता वा प्रतिकूलता हो गई, तो देखनेके धर्ममें फ़ौरन बाधा पड़ जावेगी। छोटे छोटे परिवर्तनोंमें सम्भव है, कि एक किसी भागके यथोचित परिवर्तन न होनेके कारण देखनेमें विशेष बाधा पड़े। भारी भारी परिवर्तनोंमें अवश्य ही बाधा पड़ेगी और फिर यह भी समझमें नहीं आता कि सब ही अंग प्रत्यंगोंमें ऐसी सलाहसे परिवर्तन हुआ कि सबने मिलकर देखनेके धर्ममें योग दिया। अतः दोनों कल्पनाओंकी लगभग एक ही सी कठिनाई है।

अब तीसरी कल्पनापर विचार करना चाहिये और देखना चाहिये कि इससे हमारी उलझन कुछ कम होती है या नहीं? इसके माननेवाले यह कहेंगे कि भिन्नभिन्न कोटिके जीवोंकी आंखके निर्मा णका कारण तो एक तेज ( light ) है, फिर इसमें क्या आश्चर्य है कि भिन्न भिन्न कोटिके जीवोंकी एक ही सी आंख होती है। यह बात अवश्यमेव माननी पड़ेगी, कि हमारे शरीरोंको बाह्य कारणोंके अनुकूल बनना पड़ता है, किंतु क्या इस अनुकूलताके सिद्धान्तसे (pinciple of adaptation ) आंखकी बनावट और उसके धर्मकी पूरी पूरी व्याख्या हो जाती है? माना कि तेजने आदि जीवोंके जीवन फेनमें ( Protoplasm ) अपने प्रभावसे कुछ परिवर्तन कर एक छोटी सी रंगीन बूंद बनादी और यही आंखका प्रारम्भिक रूप बन गया, पर क्या यह रंगीन बिन्दु हमारी आंख बनानेमें समर्थ है? क्या चित्रसे केमरा ( camera ) बन सकता है? क्या तेजसे तेजका द्रष्टा बन सकता है? कदापि नहीं। इन सब विचारोंसे ज्ञात हुआ कि बाह्य कारणों द्वारा पूर्ण व्याख्या नहीं हो सकती। वास्तविक व्याख्याकेलिए आंतरिक कारणोंका अनुवेषण करना चाहिये।

यंत्र प्रकारिक कल्पनाओंसे तो हमारा मनोर्थ सिद्ध न हुआ। उनसे तो हम और भी उलझनमें पड़ गये। अब देखना चाहिये कि प्रयोजन संबंधी ( Finalistic ) कल्पनाओंसे हमको कुछ संतोष होता है? प्रयोजन वादके भी दो भेद हैं। कुछ लोग तो यह मानते हैं कि सारे संसारमें एक ही प्रयोजन वर्तमान है और सब उसी अर्थ होते हैं। संसारमें जो कुछ भिन्नता और प्रतिकूलता दिखाई देती है, वह केवल एक दूसरेकी कमी पूरी करनेके-लिए है। फिर कुछ लोग यह मानते हैं कि एक एक व्यक्तिके शरीरमें एक ही प्रयोजन है; जैसे कि हमारे शरीरके भिन्न भिन्न प्रकारके अवयव हमारे पूर्ण शरीरकी रक्षाकेलिए उद्योग करते रहते हैं। यदि हमारे शरीरमें किसी तरहकी ख़राबी आ जाय, तो वह अपने आप ठीक होने लग जाती है। इससे मालूम होता है कि हमारा शरीर किसी एक आदर्शपर बन रहा है।

वर्गसन साहिब प्रयोजनवादको किसी अंशमें मानते हैं। वह कहते हैं कि जहां यंत्र प्रकारिक कल्पनाओंसे हटे, वहीं प्रयोजन वादमें आ जाना पड़ता है किन्तु वह प्रयोजन वादके सोलहों आना मानने वाले नहीं है। वह कहते हैं, कि यदि सब बातें पहिलेसे ही निश्चित हैं तो किसी नई बातकी गंजायश नहीं है। फिर यह भी बात है कि संसारमें जितनी एक प्रयोजनता पाई जाती है, उतनी भिन्न प्रयोजनता भी पाई जाती है, और यह

भी समझमें नहीं आता कि शेर खानेकेलिए बनाया गया और बकरीने खाई जानेके अर्थ जन्म धारण किया। ऐसी सुव्यवस्थाको नमस्कार है !

यदि हम व्यक्तिगत प्रयोजनकी ओर दृष्टि डालें, तो भी बड़ी बड़ी कठिनाइयोंका सामना करना पड़ेगा। पहिली तो यही कठिन बात है कि हम व्यक्ति किसको कहेंगे ? क्या हमारा व्यक्तित्व हमारे पिताके व्यक्तित्वसे भिन्न है ? क्या हम उनके शरीरका अंश नहीं हैं ? एक हिसाबसे हमारे शरीरका एक एक अंग व्यक्तित्व रखता है और उसका प्रयोजन भी हमारे शरीरके प्रयोजनसे भिन्न है। उस अंगके प्रत्यंग उसके प्रयोजनके साधनमें योग देते रहते हैं। यदि हमारे शरीरमें अनेक व्यक्ति वर्तमान हैं, तो उसका प्रयोजन किससे हो सकता है ? प्रयोजनवादकी पुष्टिमें जो युक्ति शरीरके बिगड़े हुये भागोंके स्वाभाविक सुधारमें दी गई थी वह भी कट जाती है। यदि शरीरमें रक्षाकी सामग्री विद्यमान है तो शरीरमें क्या क्षतिके कारणोंका अभाव है ? क्या परोपजीवी कीट (parasites) नहीं होते हैं ? अतः प्रयोजन वाद भी कठिनाइयोंसे ख़ाली नहीं है।

( शेष फिर )

---

## गुरुदेवके साथ यात्रा।

( अनु० महावीरप्रसाद, बी. एस. सी., एल. टी. )

दो पहरके उपरान्त वानस्पतिक प्रयोगशालाके गवेषणालयमें हम लोगोंका हार्दिक स्वागत हुआ। इस प्रयोगशालाकी सामग्री बहुत धन लगाकर इकट्ठी की गयी थी और तत्कालीन सब बातोंमें परिपूर्ण थी। एक विशेष कांच-भवन था जिसका तापक्रम अपने आप घटाया बढ़ाया जा सकता था। इसमें हमारे पौदोंकी लम्बी यात्राकी थकावट शीघ्र ही दूर हो गई। अध्यापक मोलिशने अपनी बहुत सी महत्वकी गवेषणाओंके परिणाम दिखलाये। एक कांचकी कुप्पीमें उन्होंने प्रकाशमान जीवाणुओंको पाल रखा था। इनसे इतना तेज़ प्रकाश निकलता था कि उसमें पुस्तक पढ़ी जा सकती थी। परंतु सबसे अपूर्व बात अप्राकृतिक पौदोंकी उत्पादन-प्रक्रिया थी। अपनी बारीक काट छांटके द्वारा वह आलूके पौदेमें टोमाटोके (विलायती बैंगन) पौदेकी क़लम लगा लेते हैं, जिससे उसी वनस्पति संकरकी जड़में आलू, और कल्लेमें टोमाटो लगते हैं।

हम लोगोंने अपने यन्त्रोंको खोला। गवेषणालयमें कई विशेषज्ञ अध्यापक एकत्रित थे जो यन्त्रके कार्य्यको ध्यान लगाये देख रहे थे। उन्हें इन यन्त्रोंकी सम्भावना और अनूठी शुद्धताका पूरी तरह अनुभव हो गया। उनकी प्रशंसाकी सीमा न रही। अध्यापक मोलिशने कहा कि अब अनुभव हुआ है कि वर्तमान साधन कैसे भद्दे थे और पौदोंकी पेंचदार जीवन-क्रियाका ज्ञान भी हमें कैसा अपूर्ण था। उनकी अब आंखें खुलसी गईं जब उन्होंने यह अनुभव किया कि मनुष्यकी बुद्धि किस प्रकार उन रहस्योंको जाननेके योग्य हो सकती है जो अभीतक सूक्ष्म परीक्षासे भी नहीं जाने गये थे। अब उनको जान पड़ा कि वे लोग भारतवर्षसे कितने पिछड़े हुए हैं और भविष्यमें नई उत्तेजनाकेलिए उनको किस प्रकार भारतमें आना पड़ेगा। इन विशेषज्ञोंमेंसे एकको जीवन-विज्ञानमें प्रसिद्धि प्राप्त करनेके कारण विश्वविद्यालयसे पर्य्यटनकारी * सदस्य-वृत्ति (fellowship) मिली थी। यह पांच वर्ष-तक भिन्न भिन्न प्रसिद्ध जर्मन शरीर-धर्म्म-वेत्ता, जैसे फिटिंग, वरबर्न और फेफरके साथ काम कर चुके थे। इन्होंने अपना सारा ध्यान वनस्पति-जीवनके शरीरधर्म-संबंधी तीन साध्योंपर जमा रखा था। इनमें से एकके विषयमें उन्होंने कुछ बातचीत की

* योरूपमें जो विद्यार्थी सर्वोच्च परीक्षाओंमें अच्छा स्थान पाते हैं उन्हें गवेषणाएँ करनेके लिए छात्रवृत्ति देकर सदस्य बना लेते हैं।

और कहा कि इसके सिद्ध हो जानेपर ही वानस्पतिक गवेषणामें एक नया परिच्छेद आरम्भ हो जायगा। इसी काममें ३ वर्षसे लगे रहनेपर भी उन्हें रहस्यका कुछ पता नहीं लग सका है। साध्यके विषय सुनकर मैंने मेज़पर पड़ी हुई गुरुजीकी (Researches on irritability) 'फड़कन संबंधी आविष्कार' नामक पुस्तकका १९६ पृष्ठ खोलकर चुपकेसे उनको दे दिया। जब उनको मालूम हो गया कि जिस साध्यके पीछे वह पड़े हुए हैं वह केवल स्पष्टतया लिखा ही नहीं था वरन् विश्वासप्रद और चमत्कारी प्रयोगोंसे सिद्ध कर दिया गया था तब तो वह फड़क उठे। उन्होंने कहा "यह काम बहुत ही अद्भुत है, परंतु मेरे बचे हुए दो साध्य ही इतने गम्भीर हैं कि सारे जीवनके लिए अलम् हैं"। जब उन्होंने दूसरेका नाम लिया तो मैंने वही पुस्तक कुछ पन्ने उलटकर फिर उनके हाथमें दे दी। इसबार वह कुछ उदास हो गये और कहा कि अभाग्य है कि मेरे लिए अब केवल एक ही साध्यका सिद्ध करना बच गया और वह स्वतःप्रेरणा (Automatism) संबन्धी रहस्यकी गांठ खोलना है। मैंने कहा क्षमा कीजिये, यह साध्य भी उतना दुर्गम और गूढ़ नहीं है, आप इसो पुस्तकके २० से २३ अध्यायतक देख जायं। यह कहते हुए मैंने गुरुजीकी वानस्पतिक-प्रतिक्रिया संबंधी गवेषणाओंको उनके हाथमें दे दिया। उपरोक्त अध्यायोंपर दृष्टि डालनेके पश्चात् वह निरुत्साह होकर बैठ गये और कहने लगे कि अब मेरे लिए कुछ करनेको नहीं रहा, और इन पांच वर्षोंतक भिन्न भिन्न प्रयोगशालाओंमें घूमघूमकर जानेका परिश्रम व्यर्थ ही हुआ। थोड़ी देरमें वह फिर उत्साहित हो गये और गुरुजीसे पूछा "क्या मैं भारतवर्षमें आकर आपकी कलकत्तेवाली प्रयोगशालामें काम कर सकता हूं"। अध्यापक मोलिश भी जिज्ञासुओंको गुरुजीके पास शिक्षाप्राप्त करनेकेलिए भेजनेको बड़े उत्कंठित हो रहे थे।

दूसरे दिन व्याख्यानमें हम लोगोंको आशातीत सफलता हुई। सारे प्रयोग, वनस्पतियोंकी सर्वव्यापनी सचेतनताके उपपादनसे लेकर धक्कोंके उत्तरमें वैद्युत एंठन, वनस्पतियोंके स्नायविक धक्कोंकी गतिके अंकन और उत्तेजकों अथवा मादकोंके कारण उनके नियमानुकूल स्पन्दनों वा परिवर्तनोंके अंकनतक, सब सफलताके साथ दिखाये गये। जब पौदेने मृत्युके पंजेमें पड़कर क्षणभरकेलिए अपने फड़फड़ाते अंकनोंद्वारा जीवन और मृत्युके मध्यमें अस्थायी स्थिति और कंम्पायमान स्थगतिका दृश्य दिखाया तब तो दर्शकोंके आश्चर्यकी सीमा न रही। इसके पश्चात् पौदेमें एक भयानक संक्षोभ (फड़कन) हुआ जो परदेपर मैजिक लालटेनद्वारा अच्छी तरह दिखाया गया। इससे सिद्ध हो गया कि मृत्युकी कठोरताको कोई रोक नहीं सकता। अध्यापक मोलिशने अपने विश्वविद्यालय की ओरसे धन्यवाद देते हुए कहा कि डाक्टर बोसके व्याख्यानसे जो प्रेरणा वीना निवासी वैज्ञानिकोंके चित्तमें हुई है उसकेलिए वह सदैव ऋणी रहेंगे। उन्होंने कहा कि अबतक हम सब मृत्यु-समाचारका ही ज्ञान प्राप्त करनेमें लगे थे अर्थात् मृतक वा मृतप्राय वस्तुओंकी प्रतिक्रियाओंकी खोजकर रहे थे पर यह पहला ही अवसर है जब हमने जीवन और इसके रहस्योंका अनुभव स्वतःप्रेरित अंकनोंके द्वारा, छेदन क्रियाकी पीड़ा पहुंचाये बिना ही, किया है और हम बहुत ही अनुग्रहीत होंगे यदि डाक्टर बोस पौदोंके इन चमत्कारिक अंकनोंको हमारे अद्भुतालयमें रखनेकेलिए आज्ञा दें। और उपस्थित प्रसिद्ध वैज्ञानिक भी इसी प्रकार उत्साहसे भरे हुए थे। इनमेंसे एक तो जर्मनीके अनुभवी शरीरधर्मवेत्ता फेफरका सहयोगी ही था। उसने गुरुजीके पास आकर यह आग्रह किया कि उसके विश्वविद्यालयमें भी पधारकर लोगोंके सामने प्रयोग दिखावें। गुरुजीके कुछ आविष्कारोंसे फेफरका वह सर्वमान्य सिद्धान्त जिससे वह सिद्ध करता

था कि वनस्पतियोंमें स्नायविक प्रतिक्रियाएं नहीं होतीं असत्य हो गया था। इससे वह समझते थे कि फेफरकी प्रयोगशालामें हार्दिक सहानुभूति कम दिखायी जायगी। परंतु फेफरके साथीने विश्वास दिलाया कि फेफरके चित्तमें गुरुजीका जितना सम्मान है उतना शायद ही किसीमें हो। सचबात तो यह है कि गुरुजीके आविष्कारोंको फेफर बड़ी प्रशंसात्मक दृष्टिसे देखता रहा था और उसको शोक इस बातका था कि यह अद्भुत रहस्योद्घाटन उसके जीवनके अन्त समयमें हुआ।

गवेषणाकी इस नवीन पद्धतिका महत्व इतना अधिक समझा गया कि वीनाके विश्वविद्यालयने भारतसचिवको लिखा कि उस विश्वविद्यालयके विशेष धन्यवाद भारत-सरकारको भेजे जायं क्योंकि डाक्टर बोसकी यात्रा उनकी वैज्ञानिक खोजोंमें बहुत उत्साहवर्द्धक हुई। ऐसी ही सन्तोषजनक दूसरी बात यह हुई कि जर्मनीसे प्रकाशित वैज्ञानिक वार्षिक विवर्णमें (the year book of science) गुरूजीके आविष्कारोंके सम्बन्धमें कहा गया कि वानस्पतिक शरीरधर्म विद्यामें यह बहुत ही महत्वपूर्ण हैं।

दूसरे दिन अध्यापक मोलिश हम लोगोंको "वीना"के एतिहासिक स्थान दिखानेको लिवा ले गये। हम लोग कैलिश वर्गके पहाड़पर चढ़े जहांसे डैन्यूब नदी दीख पड़ती थी और एक शृङ्गपर बैठ गये। उक्त अध्यापकने तब अपने विश्वविद्यालयकी ही नहीं वरन् बूढ़े बादशाह और देशकी राजनैतिक अवस्थाकी अस्थिरतापर भी चर्चा चलायी। उन्होंने कहा युवराज आर्चड्यूक फर्डीनैन्ड बड़े दृढ़ चरित्रका मनुष्य है परन्तु दुराग्रही है और उसका धार्मिक अथवा राजनैतिक झुकाव भी पक्षपात पूर्ण है। उन्होंने यह संदेह भी प्रकट किया था कि बूढ़े बादशाहके पीछे आर्चड्यूकके शासनकालमें बड़ी भारी राजनैतिक खलबली मचेगी। उस समय हमको यह तनिक भी खटका नहीं था कि उसी क्षण थोड़ी ही दूरीपर एक ऐसी प्रलयकारी घटना हो रही है जिससे सारा संसार पीड़ित हो जायगा। आर्चड्यूकके बधका समाचार तो हमें उस समय मिला जब हम लोग दूसरे दिन पेरिस पहुंचे।

पेरिस।

हम लोगोंने विचारा कि पहले पेरिस चलना चाहिये, फिर वहांसे स्ट्रैसबर्ग, लीपज़िक, हाले, बरलिन और बानके विश्वविद्यालयोंको देखते हुए म्यूनिचके अन्तर्जातीय कांग्रेसमें सम्मिलित होंगे। अब मैं यह वर्णन करूंगा कि जर्मनी जाते जाते दो बार हम कैसे रुक गये और इस तरह अपरिमित नज़र बन्दोसे बचे।

गुरूजी वैज्ञानिक आविष्कारोंका प्रचार करनेके लिए दो बार पेरिस पहले भी गये थे जिससे वहां भौतिक-विज्ञानमें प्रसिद्धि पा चुके थे। गुरूजी १८९६ ई० में अपने विद्युत् तरंगों सम्बन्धी आविष्कारोंपर सोरबोर्न, एकेडमी आव् सायन्सेज़ और पेरिसके विश्वविद्यालयमें व्याख्यान दे चुके थे। उस समय फ्रांसके प्रमुख वैज्ञानिक पोन्कार, कार्नू, मैस्कार, लिपमैन, कैलटेट, बेकरल इत्यादिने उनका बड़ा भारी स्वागत किया। एम' कार्नू उस समयके प्रसिद्ध भौतिक-विद्या विशारदोंमें से थे। वहां के विज्ञान परिषद्के (academy of sciences) सभापति थे। इन्हीं महाशयने अपने साथियोंकी ओरसे एक बड़े महत्वका पत्र गुरूजीको भेजा था जिसका अन्तिम वाक्य यह है "आपको अपनी जातिकी महत्वमयी परम्पराको पुनर्जीवन देनेका उद्योग करना चाहिये। यही जाति दो सहस्र वर्ष पहले विज्ञान और शिल्पकलामें पथ-प्रदर्शक, और सभ्यताकी नेत्री थी। हम लोग फ्रांसमें आपका यश गान करते हैं"। सभापतिके भाई एम् पाइन्कार उस समयके बड़े गम्भीर दार्शनिक और भौतिक-विद्या विशारद थे। इनके विद्युत विकरण सम्बन्धी प्रमाणिक ग्रंथमें "होनहार हिन्दू युवक भौतिक-विद्या-विशारद जगदीशचन्द्र बोसके महत्व-

पूर्ण आविष्कारों" के परिणामोंका बहुत कुछ उल्लेख है।

इस समय गुरूजीके व्याख्यान सुननेवाले प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंको आश्चर्य होता था कि शरीर धर्म विज्ञान-वेत्ता बोस भौतिक विज्ञानवेत्ता बोस ही है। गुरूजीके व्याख्यानकी रोचकता इतनी बढ़ गई थी कि प्रधान और अर्द्धसरकारी पत्रिका 'ली टेम्प्स' ने अपने वैज्ञानिक सम्पादकको अद्भुत प्रयोगोंका पूरा विवरण प्राप्त करनेके लिए भेजा और अपने विशेष वैज्ञानिक संस्करणमें एक प्रशंसात्मक महत्व पूर्ण लेख निकाला।

गुरूजीका पेरिसवाला व्याख्यान इस बातमें सबसे बढ़ गया था कि उनका मुख्य प्रयोग, निष्फल रहा। निष्फल होनेका यह पहला और अन्तिम अवसर था। जब पौदा अपने साधारण स्पन्दनोंको अंकित कर चुका, तब उसे पोटासियम साइनाइड विषकी एक मात्रा दी गयी। इसके पश्चात् कुछ देरतक श्रोतागण बड़ी उत्कंठासे देखते रहे कि स्पन्दन कैसे रुकते हैं। परन्तु जब पौदा और भी उत्तेजित हो गया तब तो लोगोंके आश्चर्यकी सीमा ही न रही और हम लोगोंका कलेजा दहल उठा। मैंने इसका अन्त कर देनेके लिए एक अधिक मात्रा दे दी परन्तु इससे और भी तेज़ीसे धड़कन होने लगी। ऐसी घटना पहले कभी नहीं हुई थी। बिलकुल निराश होकर मैंने औषधकी परीक्षा की और एक कण जिह्वापर रखनेसे मालूम हुआ कि वह मीठी है। तब पता चला कि पोटासियम साइनाइड नहीं वरन् शकरका घोल है। सौभाग्यसे मेरे पास कुछ क्लोरोफार्म था जिसके प्रयोग करनेसे स्पन्दन तुरन्त रुक गया और विषकी मात्रा बढ़ जानेसे पौदा मर भी गया।

पोटासियम साइनाइडके स्थानमें शकर कैसे जा पहुंची यह रहस्य भी जानने योग्य है। पेरिसमें व्याख्यान देनेके कुछ पहले मालूम हुआ कि जो पोटासियम साइनाइड हम लेकर चले थे वह चुक गया। बिना किसी डाक्टरके प्रमाण पत्रके परदेशीके लिए यह विष मोल लेना बड़ा कठिन है। हम इसी असमंजसमें थे कि जहां ठहरे हुए थे वहांकी उदार अधिष्ठात्रीकी तरुण कन्या स्वयम् यह विष मोल ले आनेको तैय्यार हुई। इसके औषध विक्रेताकी दूकान पासकी ही सड़कपर थी। लड़कीने विश्वास दिलाया कि वे नियमका थोड़ासा उल्लंघन करके डाक्टरके प्रमाण पत्रके बिना ही दे देंगे। इसलिए वह गई और औषधि विक्रेताको विश्वास दिलानेके हेतु उसने प्रसिद्ध प्राच्य वैज्ञानिकका भी समाचार कहा जो यह सिद्ध करने जा रहा था कि वनस्पतियोंमें भी मनुष्योंके समान ही चेतनता होती है। उस लड़कीको विश्वास था कि पौदेको मारडालने भरकेलिए पोटासियम साइनाइड़ अवश्य मिल जायगा। यह कहावत है कि फ़रासीसी बातचीतमें बड़े सुशील होते हैं, इसलिए यद्यपि उसने इस अद्भुत कहानीका एक शब्द भी विश्वसनीय नहीं समझा तथापि झुककर प्रणाम किया और कहा कि वह हर तरहसे सेवा करनेको तैयार है और इस सेवा करनेके अवसरको वह धन्य समझता है। यथार्थमें उसने यह समझा कि शायद यह नव-बाला किसीके प्रेमसे निराश होकर विष खाकर आत्मघात करना चाहती है। इसी कारण उसने साइनाइडके स्थानमें उसीके सदृश एक श्वेत औषधि दे दी जो शकरके सिवा और कोई वस्तु न थी। हमारे बार बार प्रयत्न करनेपर भी पौदेके न मरनेका कारण औषधि विक्रेताका कृपालु और भावमय विचार ही था।

लंदनसे तार-समाचार मिलनेके कारण हम लोग जर्मनीको जाते जाते रुक गये। कुछ प्रसिद्ध वैज्ञानिकोंने भारत सचिवसे गुरूजीके आविष्कारोंके महत्वकी चर्चा बहुत ही प्रशंसात्मक शब्दोंमें की थी, इसलिए लार्ड क्यूने गुरूजीकी लंदनमें स्थापित मैदावाटी वाली प्रयोगशालाको देखनेकी इच्छा प्रकटकी।

[असमाप्त]

## वैशेषिक दर्शन।

[ ले० कन्नोमल, एम. ए. ]

संसार भरकी सब वस्तुएं सात पदार्थोंमें विभक्त हैं अर्थात् १-द्रव्य, २-गुण, ३-कर्म्म, ४-सामान्य, ५-विशेष, ६-समवाय, ७-अभाव।

(१) द्रव्य

१-पृथ्वी, २-जल, ३-वायु, ४-अग्नि, ५-आकाश, ६-काल, ७-दिशा, ८-आत्मा, ९-मन।

ये नौ द्रव्य हैं, परन्तु ये गुणोंके बिना नहीं रह सकते और न गुण द्रव्यके बिना रह सकते हैं। इनमेंसे पहिले चार नित्य और अनित्य दोनों हैं और परमाणु अथवा शरीर रूपमें रहते हैं।

नित्य द्रव्य भी शरीर, अशरीर अथवा इन्द्रियोंके रूपमें रहते हैं। परमाणुओंको प्रेरणा करने वाला ईश्वर है। ईश्वर एक है परन्तु ईश्वरके अंश जो जीव कहलाते हैं अनेक हैं।

(२) गुण चौबीस हैं

१. रूप-पृथ्वी, जल और अग्निका गुण।

२. रस-पृथ्वी और जलका गुण।

३. गंध-पृथ्वीका गुण।

४. स्पर्श-पृथ्वी, जल, तेज और वायुका गुण।

५. संख्या-एक अनेक चीज़ोंको बताती है। संख्या सभी ९ द्रव्योंमें रहती है।

६. परिमाण-माप करना। सभी ९ द्रव्योंमें परिमाण रहता है।

७. पृथकत्व-भिन्नता बताती है। यह गुण सभी ९ द्रव्योंमें है।

८. संयोग-अर्थात् मिलाना। सभी नौ द्रव्योंमें है।

९. विभाग-अर्थात् अलग करना, सभी ९ द्रव्योंमें है।

१०. परत्व-अर्थात् पहलेसे दूरी। पृथ्वी, जल, तेज, वायु और मनमें रहता है। दिक् और कालसे दो भेद हैं।

११-अपरत्व-अर्थात् पहलेसे निकटता जैसे दूर और पास (दिशा के कारण), वृद्ध और युवा (कालके कारण)।

१२-बुद्धि-सब व्यवहार हेतु ज्ञानका नाम बुद्धि है। यह दो प्रकारकी है-स्मृति और अनुभव। जो ज्ञान संस्कारोंसे हो स्मृति है, और जो ज्ञान उससे भिन्न हो वह अनुभव है। अनुभव दो तरहका है-यथार्थ और अयथार्थ। जैसी चीज़ हो वैसे ही देखना यथार्थ ज्ञान है, जैसे, चाँदीको चाँदी देखना। इसे प्रमा कहते हैं। और जैसे सीपमें चाँदी देखना अयथार्थ ज्ञान है। इसे अप्रमा कहते हैं। यथार्थ अनुभव चार प्रकार का है, और उसके चार प्रमाण हैं, अर्थात्, प्रत्यक्ष, अनुमान, उपमान और शब्द।

कारण तीन हैं। (१) समवायिकारण-जैसे सूत और कपड़ेका सम्बन्ध। (२) असमवायिकारण-जैसे रंग और कपड़ेका सम्बन्ध। (३) निमित्त कारण-जैसे ताना बाना और कपड़ेका सम्बन्ध।

हेत्वाभास-ऐसा वाक्य जो देखनेमें सही मालूम हो परन्तु वास्तवमें सही नहीं हो वह हेत्वाभास कहलाता है, जैसे, पर्वतमें अग्नि है क्योंकि यथार्थ अनुभव होता है। इसमें हेतु ठीक नहीं है क्योंकि नदी का भी यथार्थ अनुभव हो सकता है। हेत्वाभास पांच प्रकारके होते हैं।

अयथार्थ अनुभव, तीन प्रकारका होता है—१- संशय, २—विपर्ययः, ३—तर्क।

एकही चीज़में विरुद्ध धर्मका ज्ञान होना संशय है, जैसे यह पुरुष है या स्थाणु

मिथ्या ज्ञानका नाम विपर्यय है, जैसे, सीपमें चांदी देखना। व्याप्यके आरोपणसे व्यापकको आरोप करना, जैसे, यदि अग्नि नहीं होती तो धुंआ भी नहीं होता।

१३. सुख-जो सबको अनुकूल मालूम हो वह सुख है।

१४. दुःख-जो प्रतिकूल हो वह दुःख है।

१५. प्रयत्न-चेष्टा करना अथवा कराना।

Philosophy दर्शन शास्त्र ]

१६. इच्छा-चाहना (कामः)

१७. द्वेष-क्रोध करना।

१८. गुरुत्व-भारीपन। पृथ्वी और जलमें रहता है।

१९. द्रवत्व-पतलापन। पृथ्वी, जल और तेज-में होता है।

२०. स्नेह-चिकनापन। यह पानीमें गुण रहता है।

२१. संस्कार तीन प्रकारके हैं जैसे वेग, भावना और स्थिति-स्थापक।

वेग-पृथ्वी, जल, तेज और मनमें रहता है।

भावना—स्मृति का कारण है और अनुभवसे उत्पन्न होती है और केवल आत्मा में ही रहती है।

स्थितिस्थापक—जो चीज़ पलट दी है वह फिर वैसी ही हो जाए, जैसे, चटाई आदि; यह गुण पृथ्वी तत्वकी चीज़ोंमें रहता है।

२२. धर्म्म-शास्त्रोक्त कर्म करना।

२३. अधर्म्म-शास्त्र में जिसका निषेध है वह करना अधर्म्म है।

२४. शब्द-आकाश का गुण है।

(३) कर्म्म।

पृथ्वी, जल, वायु, और तेज में कर्म्म होता है। कर्म पांच प्रकार का है:—

१—उत्क्षेपण-ऊपरकी तर्फ़ फेंकना।

२—अवक्षेपण-नीचेकी तर्फ़ फेंकना।

३—आकुञ्चन-सिकुड़ना।

४—प्रसरण-फैलना।

५—गमन-जाना।

४—सामान्य

सबमें एकसापन होना सामान्य है। यह दो प्रकारका है। पर और अपर, अर्थात् अधिक और न्यून। सामान्य नित्य है, एक है और अनेकके अन्तर्गत है, और द्रव्य गुण और कर्म्ममें रहता है। यह दो प्रकारका होता है पर और अपर। पर सत्ता है और अपर द्रव्य जाति है।

५—विशेष

विशेष पृथक्त्वको बताता है। यह नित्य द्रव्योंमें रहता है। विशेष अनन्त हैं अर्थात असंख्य हैं। विशेष नित्य द्रव्योंमें रहता है और सामान्यसे पृथक्त्व बताता है।

६—समवाय

समवाय एक है। इसके भेद नहीं हैं। अभिन्नता सूचक है। जो सम्बन्ध घोड़े और सवारमें है वह संयोग सम्बन्ध है, परन्तु जो सम्बन्ध सूत और उसके कपड़ेमें है वह समवाय सम्बन्ध है। पिता पुत्र, सम्पूर्ण और उसके भाग, कारण कार्य, द्रव्य गुण, विचार वाणी—इन सबमें समवाय सम्बन्ध है।

समवाय सम्बन्ध वह सम्बन्ध है जो सदैव दोनोंमें आन्तरिक हो। वह नित्य सम्बन्ध है। जो चीज़ें अलग नहीं हो सकतीं उनमें समवाय सम्बन्ध है। जो दो चीज़ें पृथक् नहीं हो सकती हैं उनमें एक चीज़ दूसरी चीज़में व्याप्त होती है। जैसे, अवयव और जिसमें अवयव हों, गुण और जिसमें गुण हों, क्रिया और क्रिया करने वाला, जाति और व्यक्ति, विशेष और नित्य द्रव्य।

७—अभाव

अभावका अर्थ नहीं होता है। यह चार प्रकारका है:—

१-प्रागभाव—जैसे बना हुआ कपड़ा और वह कपड़ा जो अभी नहीं बना है।

२-प्रध्वंसाभाव—जैसे बने हुये कपड़ेका नाश हो जाना।

३-अत्यन्ताभाव—जैसे बांझ स्त्रीके पुत्र।

४-अन्योन्याभाव—जैसे घड़ा कपड़ा नहीं है।

द्रव्य-विवेचन

पृथ्वी, जल, तेज और वायु अपने परमाणु रूपोंमें नित्य हैं और कार्य रूपोंमें अनित्य हैं।

जब परमाणु मात्र हैं तो सदैव विद्यमान

रहते हैं परन्तु जब शरीर इन्द्रियादि कार्य रूपोंमें होते हैं तो विनाशमान हैं।

आकाश एक विभु सर्वव्यापी और नित्य है अर्थात् नाशवान नहीं है, और इसका शब्द गुण है।

काल-भूत भविष्यत, वर्त्तमान समय सूचक है और एक विभु सर्वव्यापी और नित्य है।

दिक्—पूर्व पश्चिमादि दिशा सूचक है और एक विभु और नित्य है।

आत्मा—ज्ञानका आधार है अर्थात् जिसमें ज्ञान रहता है। जीवात्मा, परमात्मा, ये इसके दो भेद हैं। परमात्मा ईश्वर है जो सर्वज्ञ एक और सुख दुःखसे रहित है। जीवात्मा प्रत्येक शरीरमें अलग अलग है। आत्मा विभु सर्वव्यापी और नित्य है। इसमें आठगुण रहते हैं। सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म्म, अधर्म्म और ज्ञान।

मन—सुख दुःखके प्राप्तिसाधनकी इन्द्रियका नाम मन है। प्रत्येक जीव आत्माके साथ अलग अलग रहनेसे मन अनन्त हैं। मन अपने परमाणु रूपमें नित्य है।

परमाणु

जलान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्मं दृश्यते रजः।
भागस्तस्यचषष्ठोयः परमाणुः सउच्यते॥

जलके भीतर सूर्यकी किरणोंके जानेसे जो सूक्ष्म रज दिखाई देती है, उस रजके छटे भागको परमाणु कहते हैं। इनके खंड नहीं हो सकते। अपने रूपमें ये नित्य हैं और जब आपसमें मिल जाते हैं तब अनित्य अर्थात् नाशवान् हैं। जितने शरीरादि हैं सब इन्हींसे बने हैं। सृष्टिके आदिमें ईश्वरकी प्रेरणासे दो परमाणु मिलते हैं। उन्हें अणु कहते हैं। जब तीन अणु मिलते हैं तब दिखाई दे सकते हैं। इनके मिलनेका यह क्रम है—

पहिले दो परमाणु मिलकर एक अणु होता है। फिर तीन अणु मिलते हैं। फिर ऐसे चार अणु, जो तीन तीनसे एक बना हो मिलते हैं। इसी तरह और भी मिलते जाते हैं और सर्व शरीरोंको निर्माण करते हैं। परमाणु नित्य हैं। संयुक्त परमाणु अनित्य हैं।

वैशेषिक शास्त्रके कर्त्ता कणादि ऋषि हैं।

---

## केला।

[ ले०—गङ्गाशङ्कर पचोली। ]

हिन्दुस्तानमें ऐसे बहुत ही कम मनुष्य होंगे जिन्होंने केलेके पेड़को न देखा हो। यह पेड़ प्रायः बगीचोंमें लगाया जाता है और देखनेमें सुहावना मालूम होता है। इसके पत्ते अकसर त्यौहारों *, उत्सवों, तथा व्रतोंके समय देवताओं-के मंडप बनानेमें काम आते हैं, इसलिए सब लोग इससे जानकार हैं।

केलेके पेड़में पेड़ी और पत्ते होते हैं और डाली नहीं होतीं। पेड़ी जो हलके पीले रंगकी होती है उसको देखनेसे जान पड़ता है कि छालके खोलोंसे मढ़ी हुई है। यदि एक खोलको हटाया जाता है तो भीतर दूसरा खोल मिलता है। इस रीतिसे केलेकी पेड़ी छालके खोलोंसे बनी हुई दिखाई देती है। पर इन खोलोंसे ढका हुआ बीचमें एक सफ़ेद मूसला होता है और यही मूसला असली पेड़ी है। जब पौदा बहुत छोटा होता है तो यह पेड़ी गांठकी सूरतमें धरतीके समीप ही रहती है और इस गांठसे ही रेशेदार जड़ें धरती-में घुस जाती हैं। ज्यों ज्यों पेड़ बढ़ता है जड़ें फैलती जाती हैं और गांठ ऊपरको बढ़कर (मूसला) पेड़ी होती जाती है।

केलेके पत्ते ४ से ८ फ़ुट तक लम्बे और दो फ़ुटतक चौड़े होते हैं। छालकी खोल ही बढ़-कर पत्तोंकी सूरतमें बदल जाती है अर्थात् खोल-का ऊपरी सिरा बढ़कर पत्ता हो जाता है।

* त्यौहारोंके समय बहुत लोग इसके पत्तोंको थालीकी जगह काममें लाते हैं।

पत्तोंके बीचमें एक मज़बूत गूदेदार रीढ़की नस होती है जिसमेंसे छोटी छोटी नसें पत्तोंके किनारेतक सीधी जाती हैं। जब हवा ज़ोरसे चलती है तो वह चौड़े लम्बे पत्तोंसे रुकती है और पत्तोंको फाड़ देती है जिस कारण पत्ते फटकर झालर या बंदनवारकी सूरतके हो जाते हैं और फिर हवाको नहीं रोक सकते। पत्तोंकी रीढ़की नसमें तथा खोलोंमें असंख्य छोटे छोटे छिद्र होते हैं जिनमें रस भरा रहता है, जिससे पेड़के सब अंगोंको पोषण मिलता रहता है । मूसला पेड़ी, खोल, रीढकी नस सब-रस पूर्ण होते हैं।

पेड़के बीचकी मूसला पेड़ी बढ़कर जब खोलोंसे बाहर निकल आती है, तब वह फल फूल लगनेकी डाल हो जाती है। मूसला पेड़ीमें जब फल फूल लग चुकते हैं तो पेड़ काट देनेके लायक़ हो जाता है। फूलका गुच्छा लगनेपर बोझके कारण डाल झुक जाती है। हर एक गुच्छा लम्बगोल मध्यनिम्न चिम्मड़ पत्तोंसे ढका रहता है। ये पत्ते भीतरकी ओर गहरे लाल रंगके और बाहरसे हलके लाल रंगके नीली झांइ लिये होते हैं। इन पत्तोंमेंसे प्रथमके ८ वा अधिक जो उस झुकी हुई डालके आदिमें होते हैं, १० या १६ फूलोंकी दुहरी क़तार वा लड़ीको ढकते हैं और यही फूल फलोंको उत्पन्न करनेकी शक्तिवाले होते हैं। ज्यों ज्यों फूलोंकी क़तार वा लड़ी पकती जाती है फूलोंकी पंखड़ियां मुरझाकर गिरती जाती हैं और फल खुले होते जाते हैं। इसी प्रकार बाक़ी बचे और फूलोंके गुच्छे दो वा तीन मासतक खिलते और गिरते रहते हैं, पर उनसे फल उत्पन्न नहीं होते।

फूलकी कली ६ पुटोंकी, दो भागमें होती है। तीन बाहरी छद और दो भीतरी दल मिलकर एक नलकी सूरतमें जुड़े रहते हैं जिनके बीचमें तीसरा भाग रहता है। फूलके ५ पुटोंके सिरे बनावटको स्पष्ट करते हैं। फूलमें ५ पुमङ्ग होते हैं और छठा अपक्व अर्थात् बिना खिले वा उभड़े अंगका होता है। फूलोंके मूलमें सुस्वादु रस रहता है जिसको मधुमक्खी पीनेको आती है और एक फूलके गुच्छेसे दूसरेपर बैठती है। ऐसा करनेमें पुमङ्गकी परागको दूसरे गुच्छेके स्त्री-अङ्गके मुन्डपर लगा देती हैं जिस कारण ग्रीवाके नाल द्वारा पराग डिम्बा-

चित्र १ केलेका फूल
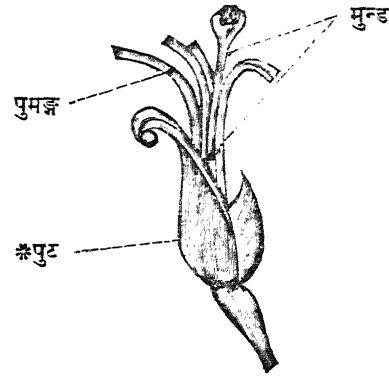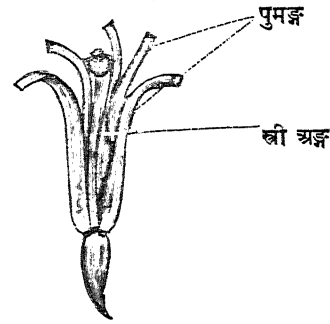
चित्र २ पुट रहित केलेके फूलका चित्र

शयमें पहुंच जाता है और फल उत्पन्न होता है। पुष्प डाल वा शाखाके आदिवाले फूलोंके गुच्छोंमें प्रथमके आठ और अधिकके भागोंमें पुमङ्ग परागहीन होता है पर स्त्रीकेसरके मुन्ड लसवाले होनेसे वे स्त्रीअङ्ग बांझ नहीं होते। इसके ख़िलाफ़ डालके

*नोटः—साधारणतः फूलोंमें छद (Sepals) और दल (petals) जिनको बहुधा पंखड़ी भी कहते हैं दोनों वर्तमान रहते हैं और भिन्न रंगके होते हैं, पर अनेक फूलोंमें इनमेंसे एक श्रेणीके अङ्ग या तो विलकुल लुप्त हो जाते हैं या छद और दल दोनों एक रंगके हो जाते हैं, ऐसी दशामें दोनों पुटके ही नामसे पुकारे जाते हैं।

नीचेके भागके फूलोंमें पुमङ्ग तो फलोत्पादक शक्ति वाले होते हैं पर स्त्रीअङ्ग बांझ होते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि डालकी जड़के पासके गुच्छेमें फल लगते हैं और नोकके पासके फूल बिना फल दिये झड़ पड़ते हैं।

केलेका फल लम्बा मोटा तीन वा पांच पहलका और सिरेपर नोकदार होता है। फलके गूदेमें बीज छिपे हुए रहते हैं। बीज पूरे अंगके नहीं होते इसहेतु बीजसे केलेका पेड़ नहीं उग सकता। जो केला जंगलमें अपने आप उगता है उसके बीज भरेपूरे अंगके होते हैं और उनसे पेड़ भी होते हैं। मनुष्यने जंगली केलोंको अपने कामके और अधिक गूदेके उत्पन्न करनेके हेतु जुदी जुदी क्रिया कीं तो फलमें यह गुण उत्पन्न हो गया कि गूदा विशेष होकर बीज कमज़ोर हो गया। यही कारण है कि केलेका पेड़ बीजसे नहीं होता। जड़परसे छोटे छोटे पौदे उग उठते हैं और फिर उनको वहांसे हटा जुदे जुदे लगाकर पेड़ उत्पन्न करते हैं।

चित्र नं० ३

केलेकी जातियां

केलेकी मुख्य चार जातियां फलके रंगके अनुसार नियतकी गई हैं। (१) देसी, (२) सुनहरी, (३) नीला, और (४) लाल।

(१) देसी केला अधिकसे अधिक २० फुटतक ऊंचा होता है और हिन्दुस्तानके सब भागोंमें पैदा होता है। इसका फल ६ इंच लम्बा और ५ से ८ इंच तकके घेरेका होता है। कच्ची अवस्थामें हरा पर पक जानेपर हलके पीले रंगका काली नसवाला हो जाता है। इसके ३ से ५ तक पहल होते हैं और ऊपरका छिलका मोटा होता है। पके फल मीठे, पर बिना गंधके होते हैं। केलेके फलकी तरकारी और अनेक खानेकी वस्तुएं बनाई जाती हैं।

(२) सुनहरी फलवाले केलेका पेड़ बहुत ऊंचा बढ़ता है। फल छोटा और मीठा और बिना नसवाला होता है। पक जानेपर फल पीले रंगका हो जाता है। इसका छिलका पतला और गूदा मीठा होता है।
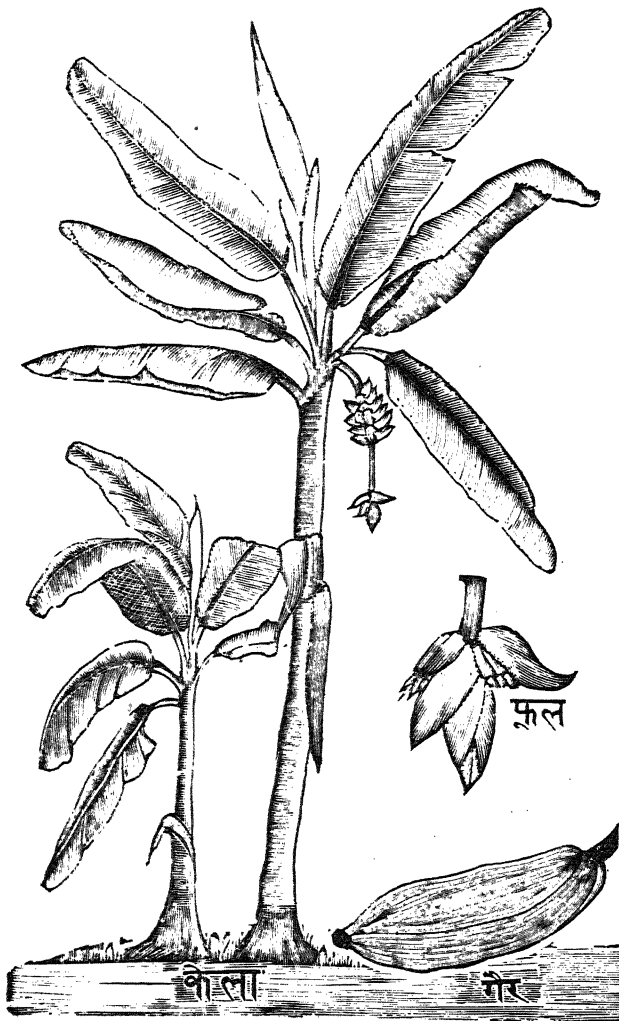
(३) नीले हरे रंगवाले फलका पेड़ छोटा होता है और उसको लोटन कहते हैं। फल पक जानेपर भी हरा ही रहता है। छिलका इसका भी पतला होता है और गूदा मीठा होता है। पेड़की पीड़ मोटी और मज़बूत पर ५ फुटसे अधिक बड़ी नहीं होती। पेड़ छोटा होता है पर फल बहुत लगते हैं। फल फूल वाली डाल इतनी लम्बी हो जाती है कि उसके अधर लटकते रहनेके लिये नीचे धरतीमें गड़हा खोदना पड़ता है क्योंकि धरतीसे लगनेपर फल बिगड़ जाते हैं। फल मीठा तो होता है पर गूदा कुछ पीले रंगका सा होता है। एक डालपर ३०० से ५०० तक फल वा गैर लगती हैं।

(४) लालगैर वाला केला २० फ़ुटतक ऊंचा होता है। गैरका फल ७ से १० इंचतक लम्बा रसदार और स्वादिष्ट होता है। पेड़का रंग भी लालझांई लिये होता है। छिलका मोटा और दलदार होता है। पक जानेपर भी फल लाल रंगका ही रहता है और बिना नसका होता है। डालपर ६० फल तक लगते हैं।

ऊपर लिखी चार जातियोंमें और अनेक भेद भी हैं जैसे बसराइ, लाडम, एलचीया, राजेली, चीनाई, कदमी इत्यादि। ये सब जाति प्रायः दक्षिणमें होती हैं। डूंगरी नामका केला त्रावंकोर और दक्षिण कानाड़ा में बहुत होता है। यह केला देखनेमें अच्छा होता है और १५ से २० फ़ुटकी ऊंचाई तक पहुंचता है। इसकी पेड़ी बड़ी, फल छोटेपर बिना रस वा गूदेके होते हैं और बीज काले और बड़े होते हैं। जोकि बीजके सब अंग भरे पूरे और स्फुट होते हैं इस लिए बीजसे भी पेड़ हो सकता है।

धरती, जोत और पेड़ लगाना।

केलेकी खेतीकेलिए महीन रेतीके मेलकी दुर्मट धरती तथा काली, भूरी व लाल और कछार अर्थात् नदीके पानीकी तलछटसे बनी धरती बहुत कामकी होती है। जो धरतीका ऊपरी पड़ (तह) मोटा होता है तो वह विशेष अच्छी गिनी जाती है।

केलेके पेड़को लगानेकेलिए पहिले हल गहरा चलाना चाहिये जिससे मिट्टी ऊपर आजाय और फिर उस मिट्टीको महीन कर गोबर या लीदका सड़ा खाद खेतमें हल जोत कर मिला देते हैं। जब जोत और खादसे धरती ठीक हो जाती है तो चौमासेके आरम्भमें हल से १२ फ़ुट लम्बी ६ फ़ुट चौड़ी क्यारियां बनाते हैं और हरएक क्यारीमें दो दो पेड़ लगाते हैं। जब चौमासा शुरू हो जाता है उस समय पेड़ लगानेकी जगह दो फुट गहरे और डेढ़ फ़ुट घेरेके गड़हे कर उनमें गोबरका सड़ा खाद वा एरंडकी खरीका खाद या मछलीका खाद ১॥ सेर तक देते हैं और केलेके छोटे छोटे पौदोंको उनमें खड़ाकर ऊपरसे मिट्टी डालकर दबाते हैं। केलेके पौदोंको लगानेके बाद क्यारियोंमें पानी देते रहते हैं क्योंकि इस पौदेको पानी अधिक चाहिये। तीसरे चौथे महीने पौदेकी जड़के पासकी मिट्टीको गोड़कर थोड़ासा खाद मिला पानी देते हैं जिससे पौदा ज़ोरसे बढ़ता है। चौमासेमें मेहका पानी मिलता रहता है पर जो मेहकी खेंच हो जाय (पानी देरमें बरसे) वा चौमासा बीत चुका होवे तो हर अठवाड़े पानी देते रहते हैं और महीने महीने पौदेके जड़की मिट्टीको गोड़कर पोच वा ढीली करते रहते हैं जिससे पानी नीचे उतर जाता है और जड़ोंके काममें आता रहता है।

केलेके पेड़को यथेष्ट पानी मिलने और खादके लगनेसे जड़ोंमेंसे छोटे छोटे पौदे फूट निकलते हैं और बढ़ने लगते हैं। इन नये पौदोंमेंसे एक दोको छोड़ बाक़ीको वहांसे उखाड़ दूसरे स्थानपर पूर्व लिखी रीतिसे जमाते हैं और उनको पेड़ीके बीचसे काट देते हैं जिससे पौदा ज़ोरसे बढ़ने लगता है। केलेका पेड़ धरतीमेंसे बहुत सा रस चूस लेता है इसलिए पेड़को एक ही जगह तीन वर्षसे अधिक नहीं रखते। पहिले कह चुके हैं कि

केलेकी पेड़ीके बीचमें एक ठोस मूसला होता है और वही बढ़कर फूल फलकी डाल हो जाता है। जब केलेका फल वा गेर पक चुकती है तो फिर पेड़ फल देनेके कामका नहीं रहता और उसको धरतीकी बराबरसे काट लेते हैं। जो दो एक छोटे पौदे होते हैं उनको बढ़ने देते हैं और बाक़ीमेंसे एक दोको छोड़, औरोंको उखाड़, दूसरे स्थान पर लगाते हैं वा फेंक देते हैं। इस रीति एक ही जगहपर तीन वर्ष तक पेड़को रखते हैं। तीन वर्ष पीछे पहिली जगहपर तीन चार वर्ष केला नहीं लगाते।

जब कभी वायु ज़ोरसे चलता है तो फलोंकी डालके टूट पड़नेका भय रहता है। इस भयसे बचनेकेलिए था तो केलोंको ओटकी जगह लगाते हैं कि जहां पवनका ज़ोर कम लगे या फलोंकी डालको सहारा या टेका लगाते हैं जिससे वह टूटकर गिर नही पड़ता।

पेड़ोंकी लैनोंके बीचमें खाली धरतीमें शकरकन्द लगाते हैं जिसका पौदा केलेकी पेड़ीपर चढ़ जाता है। सात मासमें शकरकन्द पक जाती है तब उसकी बेलको धरतीसे खोद निकालते हैं।

कहीं कहीं ऐसा करते हैं कि केलोंसे कुछ अन्तरपर कलमी आमके पौदे लगाते हैं। केलेका पेड़ एक जगह तीन वर्ष रखा जाता है इस समयमें आमके पौदे पोषण पाकर बढ़ जाते हैं। इसके पीछे धरतीको गोड़, खाद पानी देनेसे दो वर्षमें आम फल देने लगता है। इस रीतिसे केलेके पेड़ोंके संग आमको लगानेसे बहुत लाभ हो सकता है।

पेड़के ऊपर ही जब गैर वा फल पूरे भर जांय और रंग पीला पड़ने लगे तो फलोंवाली डालको तोड़ लेते हैं और गैरोंको इस रीति पकाते हैं। फलके गुच्छेको डोरीमें बांध खूटीपर अधर लटकाते हैं जिससे कभी कभी गैरें पक जाती हैं। जो शीघ्र ही पकाना चाहते हैं तो मिट्टीकी नांद वा कोठीमें घास वा पत्ते बिछा उसपर फलोंके गुच्छोंको रख ऊपरसे और घास वा पत्ते ढक देते हैं और नांदके ऊपर दूसरी नांद वा ढकना लगा संध बंदकर ऊपर मेंगनी वा सूखे कंडोंके चूरेको सिलगाकर गरमी पहुंचाते हैं जिससे भीतर रक्खी गैरें दो दिनमें पक जाती हैं। गैरोंके गुच्छेको धरतीपर नहीं रखते वरन डोरमें बाँध खूंटीपर लटकाये रखते हैं। ऐसा करनेसे फल पीले रहते हैं। जो धरतीपर रखे जाते हैं वा बारबार हाथ लगाया जाता है तो गैर काली पड़ जाती हैं।

केलेके पेड़में साधारण रीतिसे १०० से १५० तक गैर वा फल लगते हैं। छोटे फलवाले पेड़ोंमें ५०० से १००० तक फलोंके होनेके विषयमें अनुभव किया गया है।

### केलेके पेड़ पत्ते और फलोंका उपयोग

केला बहुतायतसे होता है और सहजमें ही उसकी काश्त हो सकती है। उसके सब भागोंको कुछ न कुछ काममें लाया जा सकता है। पेड़ खुद सुन्दर और सुहावना होता है, इसलिए प्रत्येक बगीचे वा बाग़में अवश्य लगाया जाता है। पत्ते पत्तलका काम देते हैं। छोटे पौदे उत्सवोंपर देवमंदिरोंमें तथा विवाह आदि शुभ मौक़ोंपर मंडप बनानेमें लिये जाते हैं। फल पुष्टिकारक, स्वादिष्ट और ठंडक देने वाला है। फलोंकी तरकारी बनती है और पेड़ीका पानी पापड़ बनानेके उपयोगमें आता है। केलेकी जड़ और रस औषधके काम आता है। रसमें 'टेनिक एसिड' होता है जिसमें तरीको सुखा देनेका गुण है। रसका दाग़ दूर नहीं होता इस हेतु कपड़ेपर निशान करनेमें काम आता है। चमड़ेको काला करनेमें छाल काम आती है। सबसे बड़ा उपयोग केलेको छालसे रेशे निकालना और फलसे आटा बनाना है। इन दोनों रीतिके उपयोग दिन प्रतिदिन बढ़ते जाते हैं और उनसे लाभ भी अधिक होता है। रेशोंसे कपड़ा रस्से आदि कामकी वस्तुएं बनाई जाती हैं। कच्चेफलोंके गूदेको सुखाकर आटा बनाया जाता है

जो पुष्टिकारक है। आटेको 'स्टार्च' अर्थात मांडी भी कहते हैं और बच्चों, बूढ़ों और रोगियोंको खुराकमें बताया जाता है। केलेकी गैरसे चौथाई आटा बैठता है। गेहूं और गैरका आटा बराबर भागमें मिलाकर डबल रोटी तथा टिकिया बनाई जाती हैं और इनमें स्वादकेलिए मसाले भी मिलाते हैं।

छालसे रेशे निकालना।

हिन्दुस्तानके निवासी और विशेषतः हमारे इस प्रान्तके किसान, माली तथा बगीचोंके स्वामी केलेके पेड़से फल लेना ही मुख्य काम जानते हैं। फल ले लेनेके पीछे पेड़को उखाड़ फेंकते हैं और पेड़ी वा छालको किसी उपयोगमें लानेके विषयमें ध्यान ही नहीं देते। जिस भांति पेड़ी तथा छालको वे निकम्मा जानते हैं, उसमेंसे बड़े कामकी और बड़ा लाभ देनेवाली वस्तु, रेशे निकाले जा सकते हैं कि जिनसे रस्सी, रस्से, किरमिज, टाट, पट्टी, क़ालीन, चिक, कपड़ा, आदि अनेक वस्तु बनती हैं। यह रेशा उष्ण देशमें जहां सूर्यका ताप विशेष पड़ता है अच्छा और मज़बूत निकलता है। इसी तरह छायाके स्थानमें उगे पेड़की अपेक्षा खुले स्थानमें उगने वाले पेड़से अधिक रेशा प्राप्त होता है। इसलिए यदि माली किसान, वा बागोंके स्वामी रेशे निकालनेका उद्यम करें तो नफ़ा ही रहेगा। रेशे निकालनेकी सरल रीति तो यह है कि केलेकी पेड़ीकी छालको चीर पतली दो तीन इंच चौड़ी धज्जी कर ईखके रस निकालनेके कोल्हूमें दाब रस निकाल लेते हैं। जो गूदा बचता है उसको पानीमें धोकर साफ़ कर लेते हैं और फिर रेशोंको जुदाजुदा कर बंडल बना रखते हैं। अथवा जैसे केतकीके पत्तोंको छुरेसे छील गूदा जुदाकर रेशे निकालते हैं वैसे ही केलेकी छालसे भी रेशा निकाल सकते हैं पर यह बड़ी सिरपच्चीका काम हैं। सरल और सुगम रीति यंत्र द्वारा रेशे निकालनेकी है।

कलकत्तेको एक प्रदर्शनीमें बंगालके बाबू जे० एन० बनरजीने रेशे निकालनेका एक यंत्र रक्खा था जिसकी क़ीमत १५) है। उस यंत्रको सुगम और मज़बूत बताया जाता है और वह एक जगहसे दूसरी जगह सुगमतासे ले जाया जा सकता है। बाबूसाहबने सन् १९०७ के 'इण्डस्ट्रिअल कांफ्रेंस' में एक लेख पढ़ा था उसमें यंत्र द्वारा रेशे निकालनेके फ़ायदे दिखाये थे, जिसका सार यह था कि जब १८ मासमें केलेके पेड़से फल लिए जा चुकते हैं तो धड़को काट उसकी ३॥ इंच चौड़ी धज्जी उतारते हैं और उन धज्जियोंको साफ़ करते हैं। फिर यंत्रमें देकर रेशोंको जुदा जुदा कर लेते हैं। पेड़की बाहरकी छालकी अपेक्षा भीतरकी छालसे बहुत अच्छा रेशा निकलता है इस हेतु इन दोनों भागोंके रेशे जुदा रखनेमें लाभ रहता है।

बाबू साहबके हिसाबसे एक आदमी और एक लड़का साढ़े पांच आनेके ख़र्चेसे एक दिनमें सात सेर रेशा निकाल सकते हैं। इस हिसाबसे एक टन (२७॥ मन) रेशे निकालनेमें ५५) ख़र्च पड़ता है और ४५) लन्दन तक पहुंचानेका ख़र्चा मानें तो १००) में एक टन विलायतमें जाकर पड़ता है। उस समय लन्दनका भाव ३५ पाउण्ड फ़ी टन मानें तो फ़ी टन ४२५) का नफ़ा रहता है। यदि हिसाब ठीक है तो यह नफ़ा थोड़ा नहीं है और जब पड़ता और नफ़ा इस भांति है तो देशके किसानों, ज़मींदारोंको इस ओर अवश्य ध्यान देना चाहिये।

सन् १९०४ की बम्बईकी प्रदर्शनीमें एक दूसरा ही यंत्र दिखाया गया था और उसके चलानेकी क्रिया भी बताई गई थी। फिलीपाइन द्वीपके वासी इस यंत्रको काममें लाते हैं। मदरासके कृषि विभागकी तरफ़से इस यंत्र विषयक सूचना प्रगट हुई थी। यदि यह यंत्र सचित्र यहांपर वर्णन किया जाय तो अनुचित न होगा। यंत्रका चित्र और उसके चलानेकी क्रिया काठियावाड़के 'खेडुत' नामके मासिक पत्रसे लेकर यहां दी जाती है। (देखिए चित्र ४)

चित्र ४ में (अ) (अ) दो सोट वा बल्लीके टूक हैं जो धरतीमें समान ऊँचाइपर खड़े हैं और उनके ऊपर (व) गोल बल्लीका टूक कीलोंसे जड़ा हुआ है। (व) बल्ली ८ फुट लम्बी और ६ इंच व्यास-

चित्र नं० ४
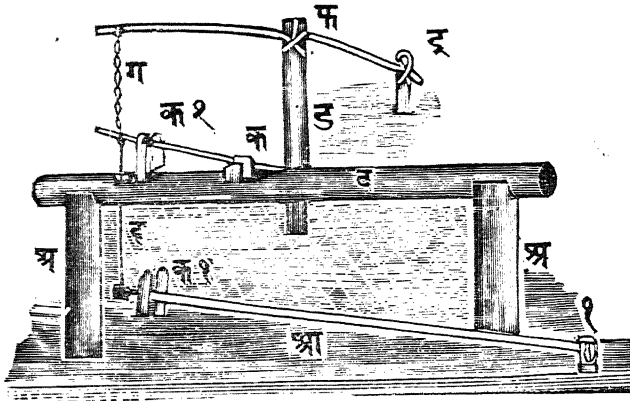
की एक सिरेसे दूसरेतक समान गोलाईकी चिकनी है और उसका ऊपरी तल धरतीसे २ फुट ७ इंच है। इस गोल बल्लीके बीचमें ऊपरकी ओर १५ इंच लंबा २ इंच चौड़ा और आध इंच मोटा लोहेका पत्तर जड़ा हुआ है। (क) लोहेकी छुरी ४॥ सेरकी है जिसका गोल दस्ता (क$_2$) खूंटीमें इस रीति जड़ा है कि जिससे छुरी नीचे ऊपर हो सकती है। छुरीके दस्तेके सिरे पर एक संकल (ग) बंधी हुई है जो ऊपर (फ) बांसके सिरेमें लग रही है और नीचेकी ओर तार (ह) लगा हुआ है। यह तार (व) बल्लीके एक छिद्रमें होकर नीचे निकल गया है और वहां (आ) बांसके एक सिरेमें जड़ा हुआ है। (क) छुरीका दूसरा सिरा धारदार है जिसका फल लोहेकी पत्तीके अन्दाज लम्बा है पर फलकी धार पैनी न होकर मोटी और भोतरी है।

चित्रमें (ड) लकड़ीका एक और टूक है जो (व) बल्लीसे ६ फुटकी दूरी पर एक बगलमें गढ़ा है और वह धरतीसे ४॥ फुट ऊँचा है। इस (ड) लकड़ीसे ६ फुट आगे हटकर, पर छुरीके दस्तेके सिरे और (ड) लकड़ीकी सीधमें (द) एक खूंटी गड़ी हुई है। इस खूटी और (ड) के ऊपरी सिरेसे एक बांस या लकड़ी जिसमें स्थिति स्थापक शक्ति है बंधी हुई है जिसका सिरा छुरीके दस्तेके सिरेके ऊपर तक पहुंचता है और जिससे दस्तेमें लगी संकल बंधी हुइ है। यंत्रके नीचे (आ) बांसके एक सिरेमें दस्तेसे बंधा तार लगा हुआ है। यह बांस (क$_1$) दो खुटियोंके बीच होता (व) बल्लीके चोखटेकी दूसरी तरफ़ १ स्थान तक गया है और वहां यातो खुटीमें कीलसे घूमता हुआ जड़ाजाता है या कोई भारी बोझ उसके सिरे पर रख दिया जाता है।

ऊपर लिखे यंत्रसे केलेके रेशे तैयार करनेकेलिए उसकी पेड़ीके ३॥ फुट लम्बे १॥ वा २ इंच चौड़े टूक वा फाड़ करते हैं। जिस दिन केलेको उखाड़ा जाता है उसी दिन रेशे निकालने चाहिएँ। पेड़ीकी भीतरी छालकी फाड़ोंमेंसे अच्छे और मज़बूत रेशे निकलते हैं इसलिए उनके दो तीन ऊपरके परतोंके रेशे जुदे निकालते हैं क्योंकि ये परत हरे होनेसे कुछ कड़े होते हैं और रेशे भी सुगमतासे नहीं निकलते।

जब धज्जी वा फाड़ बन चुकती है तो एक आदिमी दो तीन फाड़ोंको हाथमें लेकर (आ) बांस पर एक पैरको रखता है जिससे बांस नीचेको दब जाता है और उसके साथ (ह) तार खिंचनेसे छुरेका दस्ता नीचा होता है और फल ऊपर उठ जाता है। उस समय वह मनुष्य हाथमेंकी फाड़ोंके सिरेको लोहेकी पत्तोपर रखता है और धीरे-से (आ) बांस परसे अपना पैर उठाता है जिससे छुरा उन फाड़ोंपर होलेसे गिरता है। ये फाड़े लोह पत्तरसे छः वा सात इंच आगे बढ़ी रहती हैं। जब छुरा फाड़ों पर गिर जाता है उस समय

यह आदिमी लोहेके पत्तर और छुरेके बीच दवी हुइ फाड़ोंको खेंचता है। इस प्रकार पांच छः समय फाड़ोंके सिरेको छुरेके नीचे दाबकर निकालनेसे रेशे जुदे हो जाते हैं। इसके पीछे वह आदिमी फाड़ोंके दूसरे सिरोंको पूर्व रीतिसे छुरे और लोह पत्तरके बीच दाब दाब कर खेंचता है जिससे दूसरे सिरोंके भी रेशे जुदे जुदे हो जाते हैं। जब रेशे निकल आते हैं तो उनको बीचसे पकड़ कर झटकारते हैं जिससे वे जुदे जुदे बिखर जाते हैं और बांस वा अड़गनी पर लटकाते हैं जो धरती-से ५॥ फुट ऊंची रहती है। जब तक रेशे सूख न जायं तब तक उनको लटका रखते हैं। जो दिन साफ़ और धूप वाला होता है तो ये सब शीघ्र ही सूख जाते हैं। इस प्रकार तैयार किये रेशे पूर्व लिखे उपयोगमें लाने योग्य होते हैं।

यंत्र सादा है जिसको मामूली खाती व लुहार बना सकते हैं परन्तु इससे काम लेनेके लिए थोड़े-से अभ्यासकी ज़रूरत है। जब तक काममें हाथ जमता नहीं तब तक रेशे निकालनेमें अड़चन ज़रूर पड़ती है।

इस हेतु हमारे देशके बगीचोंके स्वामी माली और किसानोंसे यही कहना है कि वे केलेके फलोंका ही उपयोग न कर उसकी पेड़ीकी छालसे रेशे निकालनेके धंधेमें तरक्की करते हुए अपने लाभकी ओर ध्यान दें तो बहुत अच्छा हो।

यह छोटा सा लेख पाठशालाओंके उन विद्यार्थियोंके लिए लिखा है जो कृषि विद्याको पढ़ते हैं या जिनके घर कृषि होती है जिससे वे केलेकी पैदावार करना जानें और पेड़से जो जो उपयोगी वस्तु बन सकती हैं उनकी क्रिया जान फायदा उठावें।

# चुम्बक

[ ले०-सालिग्राम भार्गव, एम. एस. सी. ]

## चुम्बकको प्रबलताकी जांच

म्बक बनानेकी रीतियोंमें यह बतलाया गया है कि एक रीतिसे दूसरीकी अपेक्षा अधिक बलवान चुम्बक बनते हैं, किंतु इस बातकी जांच करनेकी कोई विधि नहीं बताई गयी। विना जांचके यह कह देना उचित नहीं है कि एक रीति दूसरी रीतिसे अच्छी है। प्रबलताकी जांच तीन रीतियोंसे हो सकती है। यहां केवल उनका वर्णन किया जायगा और आगे चलकर यह बतलाया जायगा कि इन रीतियोंसे प्रबलता क्योंकर जांची जा सकती है।

पहिली रीति-एक लकड़ीका ऐसा चैाकोर बक्स लो कि जिसमें कमसे कम एक तरफ़ शीशा लगा हो और जिसका ढकना शीशेका हो। इस ढकनेके बीच-में एक छेद होना चाहिए। इसके पेंदेमें एक ऐसा कागज़ चिपका लो कि जिसमें डिग्रियां बनी हों। ढकनेके छेदमें एक पीतल, तांबे या शीशेकी एक नली लगा लो। इस नलीके ऊपरके सिरेपर एक टोपी लगा ओ जिसके किनारेपर ४,८,१६ या इससे भी अधिक बराबरके चिन्ह बने हों। [देखिये चित्र १]
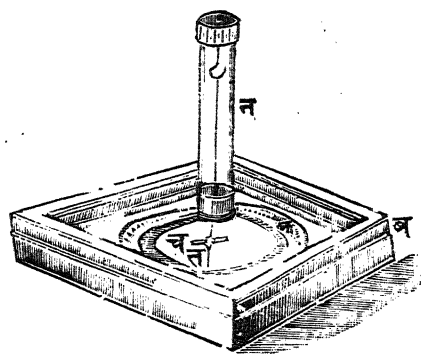
चित्र १ ब बक्स, न नलिका, च चुम्बक, त तार।

Magnetism चुम्बकत्व ]

नलीपर भी टोपीके नीचे निकला हुआ एक चिन्ह बनालो, टोपीके बीचमें एक छेद होना चाहिए कि जिसमें एक हुक लग सके। यदि इस बक्सके पेंदेमें तीन पेच (टांगकी तरह) लगे हों तो और भी अच्छा है। इन पेचोंके सहारे यह बक्स समतल रक्खा जा सकेगा। इस बक्समें काग़ज़की रकाब ( या कुन्दों-वाला पीतलका तार ) एक बारीक तांबेके तार या रेशमके तागेसे हुकसे लटका लो। रेशमका तागा इतना मज़बूत होना चाहिए कि चुम्बकके बोझसे टूट न जावे। इस रकाबमें चुम्बकके बराबर पीतल या तांबेकी छड़ रखकर टोपीको हाथसे घुमाओ। जैसे जैसे टोपी घुमाएँगे वैसे ही रकाब भी घूमेगी, किंतु यदि इस छड़के बदले कोई चुम्बक रखिए (यह चुम्बक उत्तर दक्षिण दिशामें ठहरेगा ) और टोपी घुमाना शुरू कीजिये तो चुम्बक टोपीके साथ साथ पहली छड़की तरह न घूमेगा। टोपीको एक पूरा चक्कर देनेसे थोड़ा हट जायगा। दूसरा चक्कर देने से और थोड़ा हटेगा। इसी तरह प्रत्येक चक्करके साथ थोड़ा थोड़ा हटता जायगा और टोपीको उलटा घुमा देनेसे फिर अपनी पहली ही जगह आजायगा। इससे यह स्पष्ट है कि पीतलकी छड़के लिए कोई रोक नहीं है किंतु चुम्बककेलिए एक रोक है जो उसके घूमनेमें बाधा डालती है और यह रोक पृथ्वीकी है, जिसका वर्णन अगले लेखमें विस्तार पूर्वक करेंगे।

तागेमेंसे सब ऐंठन ( twist or torsion ) निकाल डालो और चुम्बकके ठहरनेकी जगह देखलो, बहुधा रकाबमें तांबे या पीतलका एक इतना लम्बा तार लगा देते हैं कि जो घेरेके चिन्हों-तक पहुंच सकता है। इससे चुम्बककी जगह मालूम करनेमें बड़ी आसानी होती है। अब टोपी-को घुमाओ, जबतक कि चुम्बक अपनी पहली जगहसे ५ या १० डिगरी हट जाय और टोपीके चक्करोंको भी लिख लो। टोपीपर निशान होनेके कारण $\frac{१}{२}$, $\frac{१}{४}$, चक्कर भी मालूम हो जायगा।

तागेकी ऐंठन निकाल डालो और रकाबमें दूसरे चुम्बकको रखो और इसके भी ५ या १० डिगरी हटानेके लिए जितने चक्कर टोपीको देने पड़ें उनको लिख लो। यदि पहिलेकी बराबर चक्कर देने पड़ें तो दोनों चुम्बक एक समान बलवान हैं। यदि दूसरेकेलिए पहलेकी अपेक्षा दुगने चक्करोंकी अव-श्यकता हो तो दूसरा चुम्बक दुगना बलवान है। इसी तरह चक्करोंकी दूसरी संख्याको पहली संख्यासे भाग देनेसे दूसरे चुम्बककी प्रबलता पहलेकी अपेक्षा मालूम हो जायगी।

दूसरी रीति–बक्सके अन्दर रकाबमें एक चुम्बक रखो और उन दोनों चुम्बकोंमेंसे एक चुम्बकको कि जिनकी प्रबलताकी तुलना करना हो इस बक्ससे थोड़ी सी दूरीपर रकाबवाले चुम्बकके पूर्व या पश्चिम उतनी ही ऊँचाईपर इस प्रकारसे रखो कि रकाबवाले चुम्बककी अक्षके साथ इस चुम्बकका अक्ष समकोण बनावे, जैसा चित्र २ में
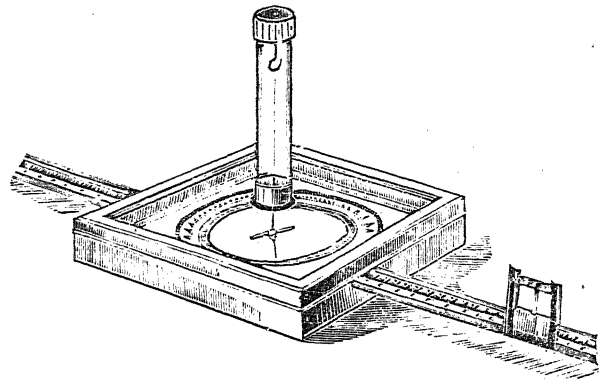
चित्र न० २

दिखलाया गया है। वास्तवमें आसानीकेलिए लकड़ी या पीतलका गज़ इस बक्समें इस प्रकारसे जड़ देते हैं कि बक्सके अन्दर तो गज़ नहीं रहता किंतु उसके दोनों तरफ बाहर निकला रहता है और इसी गज़पर एक घोड़ीसी होती है जिसपर चुम्बक रख दिया जाता है। चुम्बकके पास होनेसे बक्सके

भीतरका चुम्बक घूम जायगा और किसी दूसरी स्थितिमें ठहरेगा। बाहरका चुम्बक इतनी दूरीपर रखना चाहिए कि भीतरवाले चुम्बककी दोनों स्थितियोंमें पांच या दस डिगरीसे अधिक कोण न हो।

इस कोणको देखकर लिख लो। यह कोण इस चुम्बक द्वारा विचलन ( Deflection ) हुआ। अब घोड़ीपरका चुम्बक हटाओ, देखोगे कि अब लटका हुआ चुम्बक फिर उसी जगह आकर ठहरता है, जहां पहिले घोड़ीवाले चुम्बककी अनुपस्थितिमें ठहरा था। दूसरे चुम्बकको घोड़ीपर रखकर उसके द्वारा जो लटके हुए चुम्बकका विचलन हो देख लो। यदि दोनों विचलन बरावर हैं तो दोनोंकी प्रबलता बराबर है और यदि बरावर न हों तो दूसरे विचलनको पहले विचलनसे भाग देनेसे दूसरे चुम्बककी प्रवलता पहलेकी अपेक्षा मालूम हो जायगी।

तीसरी रीति—ऊपर की दोनों रीतियां कठिन हैं। उनमें बहुतसी सामग्री इकट्ठी करनी पड़ती है, परंतु उनसे चुम्बकोंकी प्रबलताकी तुलना करना सुगम है। इस तीसरी रीतिमें सामग्री विशेषकी आवश्यकता नहीं होती, परंतु दो चुम्बकोंकी प्रबलताकी तुलना करना कठिन है। इसकी सरलताके कारण हम बतला देना ही उचित समझते हैं।

एक मामूली बोतल लेकर उसका पेंदा अलग कर लीजिये, तदनन्तर उसके मुंहपर एक छड़ रखिये, जिसमें डोरा बान्ध कर चुम्बक बोतलके अन्दर लटकाया जा सके। डोरेके निचले छोरपर काग़ज़की एक रकाब बनाकर लटका दीजिये और उस रकाबमें चुम्बक रख दीजिये।

ऊपरके प्रयोगोंके रकाबमें रक्खे हुए चुम्बकके पूर्व या पश्चिममें चुम्बक या लोहेका टुकड़ा लाने और हटानेसे चुम्बक क्षितिज धरातलमें इस तरह हिलने लगेगा कि जैसे किसी घड़ीका पहिया (wheel) क्षितिज धरातलमें या घंटेका लटकन ऊर्ध्व तलमें ठहरनेके स्थानके दाईं ओर बांई ओर हिलते रहते हैं। जिस प्रकार घंटेके लटकनके प्रत्येक झोटेमें (अर्थात् दाएँसे बाएंको या बाएंसे फिर दाएंको जानेमें) सदैव एक ही बराबर समय लगता है, उसी भांति किसी चुम्बकके प्रत्येक झोटेमें भी उतना ही समय लगेगा। चुम्बकके १०, २० या और भी अधिक झोटोंमें जो समय लगे उसे निकाल कर झोटोंकी संख्यासे भाग देकर एक झोटेका समय निकाल लो। इसी प्रकार दूसरे चुम्बकके भी एक झोटेका समय निकाल कर पहले चुम्बकके समयके वर्गको दूसरे चुम्बकके समयके वर्गसे भाग देनेसे दूसरे चुम्बककी प्रबलता पहलेकी अपेक्षा मालूम हो जायगी।

उदाहरण—यदि पहले चुम्बकके २० झोटोंमें १ मिनट लगे, तो उसके एक झोटेका समय ३ सेकंड हुआ और यदि दूसरे चुम्बकके २० झोटोंको ४० सेकंड लगें तो इसके एक झोटेका समय २ सेकंड हुआ। $\therefore \frac{\text{दूसरे चुम्बककी प्रबलता}}{\text{पहले चुम्बककी प्रबलता}} = \frac{३^२}{२^२} = \frac{९}{४}$

अर्थात् दूसरा चुम्बक पहलेसे २ $\frac{१}{४}$ गुना बलवान है।

इस बातका ध्यान रहना चाहिये कि जिन चुम्बकों की जाँच की जा रही है, वह यकसां लम्बे चौडे और मोटे हों।

नीचे हम एक सूची देते हैं कि जिसमें कई रीतियोंसे बनाये हुए चुम्बकोंके झोटोंका समय निकाला गया है और उस समयसे उनकी प्रबलताकी तुलना की गई है।

इससे स्पष्ट है कि जो रीति पिछले लेखके अन्तमें बतलायी गयी है उसीसे बहुत प्रबल चुम्बक बनते हैं।

नोट—यदि विचलन १० या १२ डिगरीसे अधिक हों तो एक कोणकी (tangent) स्पर्श रेखाको दूसरे कोणके (tangent) स्पर्श रेखासे भाग देना पड़ेगा।

| किस रीतिसे चुम्बक बनाया गया। | एक झोटेका समय सेकंडों में। | आपेक्षिक प्रबलता |
|---|---|---|
| १-दूसरी रीतिसे, २० बार स्थिर चुम्बक एक प्रष्टपर फेरे गये। | २२·१३ | १ |
| २-दूसरी रीतिसे, चुम्बक चारों पृष्ठोंपर फेरे गये। | १४.८७ | $\frac{(२२.१३)^२}{(१४.८७)^२}$=२.२२१ |
| ३-तीसरी रीतिसे दो चुम्बक लेकर। | ११.१३ | ३.९५ |
| ४-तीसरी रीतिसे, नाल चुम्बक लेकर। | १०.१६ | ४.७१ |
| ५-अंतिम रीतिसे-विद्युत्त चुम्बके सिरोंपर रखकर नाल चुम्बक फेरनेसे। | ८ | ७.५२ |

## चुम्बकमें चुम्बकत्व कहां रहता है

अब यह प्रश्न उठता है कि चुम्बकमें चुम्बकत्व कहां रहता है और शक्तिका केन्द्र कहां होता है। लोहेका बुरादा बुरककर कुछ ठीक ठीक पता चलना कठिन है। जो रीति कि नीचे दी जाती है उससे पूरा पूरा पता चल जायगा। एक मुलायम लोहेकी नोकीली कील या छड़ लो। इसको तराज़ूके उस कुन्देसे कि जिसमें पलड़ा लटकाया जाता है एक तागेके टुकड़ेसे बांध दो। दूसरे पलड़ेमें बांट रखते जाओ जब तक कि तराज़ूकी डंडी सीधी न हो जाय। तराज़ू बहुत अच्छी होनी चाहिये जिससे कि हलकी चीज़ें बहुत शुद्धतासे तोली जासकें और जैसी प्रयोग शालाओंमें काममें आती हैं। इस लोहेकी कीलके नीचे एक लकड़ीकी तिपाई इस प्रकार रखो कि पलड़ेसे न छुए। इसपर एक चुम्बक रखो (देखो चित्र ३)। चुम्बक कीलकी नोकसे चौथाइ इंचके लगभग नीचे रहे। आरंभमें चुम्बकका सिरा कीलके नीचे रहे। कील नीचेकी ओर चुम्बकके निकट होनेके कारण खिंच आयगी। दूसरे पलड़ेमें और बांट रखकर फिर कीलको तोल लो। इस बोझमेंसे पहला बोझ घटानेसे जो कीलके बोझमें चुम्बक लानेसे अधिकता हुई है मालूम हो जायगी। चुम्बकको थोड़ासा सरका दो, जिससे कि कीलकी
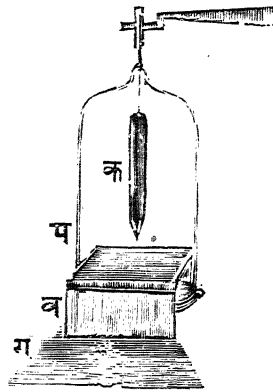
चित्र ३
क-कील, प-पलड़ा
व-तिपाई ग-पृथ्वी

नोक उसके उस भागपर आजाय कि जो सिरेसे $\frac{१}{२}$ इंच दूर हो। अब कील कुछ हलकी मालूम होने लगेगी। बांट निकालकर फिर तोल लो। इस बोझमेंसे कीलका असली बोझ घटानेसे जो अधिकता कीलके बोझमें चुम्बकके इस हिस्सेके नीचे लानेसे हुई है मालूम हो जायगी। फिर चुम्बक थोड़ासा खिसका दो जिससे कि कील उस हिस्सेके ऊपर आजाय कि जो सिरेसे १ इन्चकी दूरी पर है। तब कीलको तोल लो और इसके बोझकी अधिकता इसके असली बोझको घटाकर निकाल लो। इसी प्रकार चुम्बकको थोड़ा थोड़ा प्रत्येक बार हटाते जाओ और उसके बोझकी अधिकता निकालते जाओ। जब खिसकाते हुए दूसरे सिरेपर पहुंच जाओ तो एक वक्र इस प्रकार बनाओ। २ इन्च लम्बी सीधी लकीर चुम्बककेलिए खींचो। इसके बीचमें ० रखो और एक सिरेपर ४ और दूसरे सिरेपर भी ४ लिखो, यदि चुम्बक कुल ८ इन्च लम्बा हो तो। चुम्बककी लम्बाईको २ से भाग देकर जो संख्या मिले उसे दोनों सिरोंपर लिखदेना चाहिए। अर्थात् आधी लम्बाईकेलिए १ इन्च रखा है जैसे नकशोंमें सौ

सौ मीलोंकेलिए आधी आधी चौथाई चौथाई इन्च रखते हैं। परिमाण इससे भिन्न भी माना जा सकता है। १,४,८ इन्च लम्बी लकीर भी ली जा सकती थी। बड़ा चित्र बनानेकेलिए बड़ा परिमाण और छोटा चित्र बनानेकेलिए छोटा परिमाण लेते हैं। इस चुम्बकके सिरेसे $\frac{1}{2}$, १, १$\frac{1}{2}$, २ इंच इत्यादिकी दूरीवाली जगहके ऊपर कील रखनेसे जो उसके बोझमें अधिकता आ गई थी, वह मालूम करली गयी है। इस अधिकताका भी एक परिमाण मानकर हर जगह एक एक लम्ब खड़ा करलो। एक हिस्सेमें लम्ब ऊपरकी ओर हो और दूसरेमें नीचे की ओर, क्योंकि एक ओर उत्तरी चुम्बकत्व है और दूसरी ओर दक्षिणी। यदि इन लम्बोंके सिरोंको जोड़ती हुई एक रेखा खेंची जावे तो वह ऐसी होगी जैसी कि चित्र ४ में बनी है। इसको
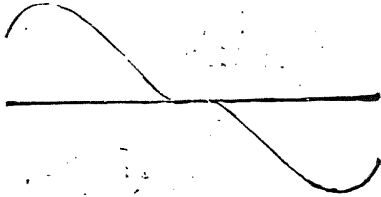
चित्र ४

चुम्बकके चुम्बकत्वका वक्र कहेंगे। यह वक्र हर चुम्बककेलिए भिन्न भिन्न आकारका होगा। किसीकेलिए चित्र ५ का सा और किसीकेलिए
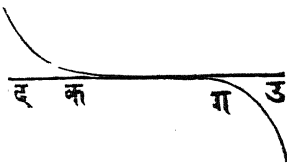
चित्र नं० ५

चित्र ६ का सा हो सकता है। जिसकेलिए वक्र
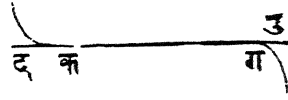
चित्र ६

चित्र ७ का सा हो उसको साधारण चुम्बक
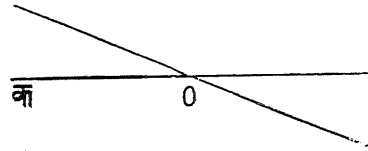
चित्र ७

कहते हैं। जिस चुम्बकका वक्र चित्र ६ का सा हो उसकेलिए यह कहा जा सकता है कि इसका चुम्बकत्व केवल दो ही जगहोंमें है। जिन चुम्बकोंमें गौण केन्द्र होते हैं उनके चुम्बकत्वके वक्रका आकार चित्र ८ का सा होगा।

* चित्र नं० ८

ऐसे वक्रके आकारसे यह तुरन्त पता चल जाता है कि चुम्बक ठीक ठीक बना है या नहीं। दिक्सूचकके चुम्बकत्वका वक्र चित्र ७ कासा होना चाहिए। छोटे चुम्बकोंका वक्र ऐसा ही होता है।

चित्र न० ५ और ६ में क और ग के बीचके भागको उदासीनताका भाग कहते हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि इस भागमें चुम्बकत्व है ही नहीं। चित्र ७ वाले चुम्बकमें उदासीनताका भाग बड़ा नहीं है परन्तु ० पर उदासीनताका भाग है।

कूलम्बने अपने प्रयोगोंकेलिए जो चुम्बक बनाये उनके वक्र चित्र ५ और ६ के समान थे। एक चुम्बकके साथ दूसरा चुम्बक जोड़नेसे

* यह चित्र अगली संख्यामें निकलेगा

जुट्टका वक्र दोनोंके वक्रसे भिन्न होता था। इस जुट्टके वक्रमें उदासीनताका भाग कम होता था। चुम्बकोंकी संख्या बढ़ानेसे कम होता चला जाता था जबतक कि चित्र नं० ७ कासा (साधारण चुम्बक कासा) हो जाता था। इसके पश्चात् संख्या बढ़ानेसे जुट्टका चुम्बकत्व बढ़ता नहीं। और चुम्बक जुट्टमें जोड़ना केवल लोहा ख़राब करना है। इससे यह भी सिद्ध होता है कि बहुत ज़्यादा चुम्बकोंके जुट्ट बनानेसे कोई लाभ नहीं—एक विशेष संख्या ही लेना उचित है।

अबतक केन्द्रका प्रयोग ज़रूर किया परन्तु कोई परिभाषा नहीं दी। वास्तवमें ठीक ठीक परिभाषा वक्रोंके बनानेके पश्चात् ही दी जा सकती थी। वक्र और उस रेखाके कि जो चुम्बकको सूचित करती है बीचमें जो जगह अथवा क्षेत्र है उसका गरुत्व केन्द्र निकालकर, इस विन्दुसे एक लम्ब चुम्बकवाली रेखापर डालना चाहिये। जहां यह लम्ब चुम्बकवाली रेखासे मिले उस विन्दुको चुम्बकत्वका केन्द्र कहना चाहिये। यदि वक्रका आकार टेढ़ा मेढ़ा न हो परन्तु बहुत सीधा हो जैसा साधारण चुम्बकका चित्र ७ में दिखलाया गया है तो केन्द्रका निकालना सुगम है। यहां वक्र और चुम्बकवाली रेखा मिलकर एक त्रिकोण बनाते हैं। त्रिकोणका गरुत्वकेन्द्र उस रेखापर होता है कि जो एक कोणसे सामनेवाले भुजके मध्य विन्दुमेंसे होती हुई खेंची जावे। यह रेखा चित्र ६ में खेंची गयी है। इस रेखाके ३ भाग कर लो भुजसे पहिले भागका जो विन्दु व है वही त्रिकोणका गुरुत्व केन्द्र है। इससे व ल एक लम्ब क० पर गिराया गया है। यह क० के साथ ल पर मिलता है, ल ही चुम्बकत्वका केन्द्र हुआ। चित्र ६ में ल की दूरी ० से नाप लो और परिमाणके हिसाबसे जो दूरी निकले उसको चुम्बकके मध्य भागसे नापकर ल का स्थान चुम्बकपर निकाल लो। चुम्बकके चुम्बकत्वका केन्द्र मालूम हो जायगा। रेखा गणितके नियमोंके अनुसार यह चुम्बककी आधी लम्बाईकी तिहाई दूरीपर चुम्बकके सिरेसे होना चाहिये।
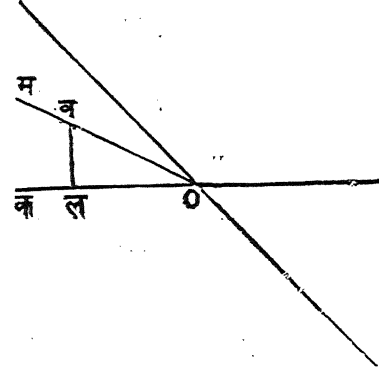
चित्र नं० ६

ऐसा चुम्बक कि जिसका चुम्बकत्व सिरेसे लेकर मध्य स्थान तक फैला हुआ न हो किन्तु एक स्थानपर ही एकत्रित हो जैसा कि चित्र ६ वाले वक्रसे मालूम होता है, चुम्बकोंके आकर्षण और निराकरणके नियम मालूम करनेके काममें आता है। यह मोटाई और चौड़ाईकी अपेक्षा बहुत लम्बा होता है। यदि गोल हो तो यह कहा जा सकता है कि उसकी लम्बाई सदैव मोटाईकी ३४०० गुणी या इससे अधिक होगी परन्तु कम नहीं। ऐसे लम्बे चुम्बकोंको विद्युतधारासे बनाना आसान और सम्भव है और किसी रीतिसे बनाना तो बहुत ही कठिन होगा।

(असमाप्त)

## खाद्य

[ले० बी. के. मित्र, एल. एम. एस.]

शरीर एक यन्त्र है। इसकी क्रियाके लिए शक्तिकी आवश्यकता है, जो खाद्य रूपी ईंधनद्वारा उत्पन्न होती है। शरीरकी क्रियाएँ दो प्रकारकी हैं-(१) वाह्य, जोकि पेशी मण्डलीकी (प्राचीनोंके कर्म्मेन्द्रियां) चेष्टासे होती है; (२) आभ्यान्तरिक, जोकि हृत्पिण्ड, फुस्फुस, आदि यन्त्र तथा प्राचीनोंके ज्ञानेन्द्रियोंसे होती है। जीवितावस्थामें कायिक चेष्टाएं बन्दकरनेपर भी यान्त्रिक तथा मानसिक क्रियाएं निरन्तर होती रहती हैं। शरीर कभी भी निष्क्रिय नहीं होता।
'नहि कश्चित् क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्म्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म्म सर्वः प्रकृतिजैगुणैः॥'

जन्मसे प्रायः मृत्युतक खाद्यकी आवश्यकता है। जन्मसे पूर्व गर्भावस्थामें भी माताके शोणितसे भ्रूणकी पौष्टिक क्रिया होती है। शैशवावस्थामें माताका स्तनपान ही शिशुका जीवनाधार है। इसके अनन्तर भिन्न भिन्न भोज्य पदार्थसे शरीरकी उन्नति होती रहती है। अनाहारकी अवस्थामें भी देहमें पूर्व सञ्चित धातुओंसे कुछ कालतक शारीरिक क्रियाएं होती रहती हैं, क्योंकि बिना शक्तिके कोई भी कार्य्य नहीं हो सकता और यह शक्ति भोज्य पदार्थोंके रासायनिक परिवर्तनसे उत्पन्न होती है।

कार्य्य के अनुसार खाद्य द्रव्योंके दो भेद हैं। (१) वह जो शारीरिक वृद्धिकेलिए धातु उत्पादन करते हैं, और शरीरकी आभ्यान्तरिक क्रियाओंसे क्षयप्राप्त धातुओंकी पूर्ति करते हैं, यथा आमिष जातीय पदार्थ तथा जल और लवण; (२) वह जो शरीरकी पेशी मण्डलीके चेष्टाकेलिये ईंधनके सदृश उत्ताप उत्पादन करते हैं यथा-स्नेह और श्वेत सार तथा शर्करा जातीय पदार्थ।

यह बात प्रमाणित हुई है कि अधिक कायिक परिश्रमसे आमिषजातीय पदार्थोंका मल (जोकि मूत्रद्वारा परित्यक्त होता है) इतना नहीं बढ़ता जितना कि स्नेह और श्वेतसारादिका मल (जोकि फुस्फुस तथा अन्त्रोंद्वारा निर्गत होता है)। इसी कारण अधिक परिश्रमके समय हम घोड़े,या बैलोंको घी, वा तैल तथा गुड़, अधिक देते हैं। दाने का बढ़ाना (जिसमें कि आमिष जातीय पदार्थ होता है) बहुत आवश्यकीय नहीं।

उत्पत्तिके अनुसार भोज्यपदार्थोंकी दो बड़ी बड़ी श्रेणियां हैं-एक जैव दूसरी अजैव, परन्तु रासायनिक गठनके अनुसार वह ५ वर्गों में विभक्त किए जाते हैं:—

(१) आमिष जातीय वा नत्रजनीय। जैसे मांस, दाल, पनीर अण्डा आदि पदार्थोंके "प्रोटीन्स"।

(२) श्वेतसार जातीय (कर्बोज) यथा चावल, गेहूं आदि अन्न तथा आलू, मूली आदि कन्दमूलोंके "निशास्ते"। शर्करा भी इसी गणके अन्तर्गत है।

(३) स्नेह जातीय यथा मक्खन, घी, चरबी, तिल, खोपड़ा इत्यादिके तैल। यह भी अनत्रजनीय पदार्थ हैं।

(४) लवण जातीय—यथा साधारण अजैव लवण और कितने ही प्रकारके जैव लवण तथा अम्लादि जो भिन्न भिन्न प्रकारके शाक और फलोंमेंसे प्राप्त होते हैं।

(५) जल जातीय—यथा जल और भिन्न भिन्न प्रकारके पानीय तथा सरस फलोंका जलीय भाग।

इन पाँच प्रकारके पदार्थोंके अतिरिक्त (जो कि शरीरके उपकरण होनेके कारण जीवनके लिए अति आवश्यक हैं) एक और प्रकारके द्रव्य भी हमारे भोज्य पदार्थोंके अन्तर्गत हैं जो कि रोचक, पाचक, जीवाणु नाशकादि गुणोंसे समन्वित होनेके कारण आधुनिक मनुष्योंके लिए प्रायः अनिवार्य्य हो गए हैं। यथा मसाले, पान, तम्बाकू आदि। मादक उत्तेजक पदार्थ इसी गण-

के अन्तर्गत हैं। इनके अधिक सेवनसे बहुत प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं। बहुधा भोज्य पदार्थोंके रासायनिक उपकरण प्रति शति परिमाणके अनुसार दिखाये जाते हैं।

इस तालिकापर विचारनेसे प्रतीत होगा कि जान्तव पदार्थोंमें श्वेत सारादि प्रायः नहीं हैं, उनमें आमिष जातीय पदार्थोंकी अधिकता है। परन्तु उद्भिज पदार्थोंमें सभी प्रकारके उपकरण

| पदार्थोंके नाम | आमिष जातीय | शर्करा वा श्वेतसार जातीय | स्नेह जातीय | लवण जातीय | जल | प्रमाणादि। |
|---|---|---|---|---|---|---|
| चावल | ६·३६ | ८३·३० | ·१५ | ·७६ | शेष | कलकत्ता मेडीकल कालिज |
| आटा | ११·५० | ६७·१० | २·६० | ३·८५ | ,, | ,, |
| चना | १६·६६ | ५६·२० | ३·६५ | ५·६६ | ,, | ,, |
| दाल अरहर (छिले) | १६·८६ | ५७·३० | ३·२० | ८·३४ | ,, | ,, |
| दाल मसूर | २३·२५ | ५६·४० | २·७० | २·५१ | ,, | ,, |
| छाग मांस | २४·०६ | .. | २·५० | १·१० | ,, | ,, |
| मछली (तालाबकी) | १७·५० | ... | ७·१४ | ... | ,, | ,, |
| हरी तरकारियां | ६·०५ | ५·३३ | ·३४ | १·०५ | ,, | ,, |
| दूध (बाज़ारका) | २.१२ | ... | १·६२ | ... | ,, | ,, |
| मातृ स्तन्य (भारतीय) औसत | १·२ | ५·६ | २·८ | ·२४ | ८६·८६ | (डा० लालमोहन घोषाल)। |
| (यूरोपीय) औसत | १·५ | ६·५ | ३·५ | ·२ | ८८·३ | हाचीसन। |
| गो दुग्ध औसत | ३·४० | ४·७५ | ३·६० | ·७५ | ८७·१० | "फूड एन्ड ड्रगस्"। |
| आम (रस) | १·२ | ३५·१६ | ·७६ | १·२३ | शेष | डा० लालमोहनघोषाल। |
| खीलें | ५·७ | ५०·०० | ... | ३·७२ | ,, | ,, |
| कठलके बीज | १३·१४ | ३१·२० | १·६८ | २·२७ | ४६·४६ | नरेन्द्रनाथबसु Food and drugs. |
| आलू | १·३१ | १३·६२ | ·१६ | ·६० | ८०·२० | डा० ए० के० टरनर, बम्बई |
| शकरकन्द | ·७८ | २०·४७ | ... | ·५२ | ७४·१० | ,, |
| बन्ध गोभी | १·५६ | ४·०० | ·५० | ·४२ | ६२·०० | ,, |
| फूल गोभी | ३·०६ | ३·०० | ... | १·१६ | ८८·६६ | ,, |

पाए जाते हैं। हिसाबसे देखा गया है कि यदि कोई पुरुष केवल गेहूंपर जीवन धारण करे तो, उसको प्रायः दो सेर रोटीकी दैनिक आवश्यकता है, जैसे कि साधारणतःनिम्नश्रेणीके लोगोंको होती हैं। यदि केवल मांसपर जीवन धारण किया जाय तो शरीरोपयोगी अंगारके लिए प्रायः २½ सेर मांसकी दैनिक आवश्यकता होगी। इस परिमाण मांससे शरीरके अन्दर इतना अधिक नत्रजनीय (nitrogenious) पदार्थ पहुंचेगा कि वह मूत्र

ग्रन्थियोंका प्रदाह तथा अन्त्रोंके अन्दर भी सड़कर बहुतसे उपद्रव उत्पादन करेगा। अतएव दुग्धको छोड़कर किसी एक वा अधिक जान्तव पदार्थपर मनुष्य जीवन धारण नहीं कर सकता; परन्तु उद्भिज पदार्थोंपर कर सकता है।

रासायनिक उपकरणोंके अनुसार उद्भिज पदार्थोंके भिन्न भिन्न वर्ग बनाए जा सकते हैं। यथाः—

( १ ) अन्नवर्ग—जिसमें गेहूं,चावल, मकई, जौ, बाजरा, आदि सम्मिलित हैं, इनका प्रधान उपादान श्वेत सार है, यद्यपि इनमें ६ से १२ प्रतिशत आमिष जातीय पदार्थ भी होता है। इनमें स्नेह वर्गीय पदार्थ नाममात्र होता है। अतएव यह जीवनके आधार होनेपर भी दाल तथा स्नेह वर्गीय पदार्थोंके साथ मिलाकर खाये जाते हैं!

( २ ) दाल वर्ग—इनमें भिन्न भिन्न प्रकारकी दाल यथा अरहर, उर्द, मूंग, मसूर, चना, मटर, तथा सेम, लोबिया, फलियोंके बीज आदि हैं। इनमें बहुतसा श्वेतसार होनेपर भी १८ से २४ भाग प्रतिशत आमिष जातीय पदार्थ होता है। इनमें भी स्नेह नाम मात्र होता है।

अतएव यह अन्नादिके साथ घी मिश्रित करके खाये जाते हैं। यद्यपि इनमें श्वेतसार भी होता है तथापि अन्नके स्थानमें केवल दाल व्यवहार करनेसे आमिष जातीय उपकरणके आधिक्यसे शरीरकेलिए हानिकर होते हैं। निरामिष भोजियोंके लिए यह 'आमिष' जातीय पदार्थ हैं।

( ३ ) मूलकन्द वर्ग- यथा आलू, कचालू, ज़िमींकन्द, शकरकन्द, चुकन्दर, गाजर, मूली, शलजम आदि। शाक होनेपर भी इनके अन्दर बहुतसा श्वेतसार वा शर्करा रहती है। अतएव अन्न तथा शाक वर्गीय पदार्थोंके मध्यमें इनका स्थान है। इनमें ५ से २० भाग प्रति शत श्वेतसार वर्गीय उपादान होते हैं। आमिष तथा स्नेह जातीय उपादान नाम मात्र होता है। अतएव यह प्रायः तैल वा घीमें भूंजकर अन्न और दालके साथ खाए जाते है। परन्तु इनके अतिरिक्त इनमें जो जैव लवण होते हैं वह स्वास्थ्यकेलिए अत्यन्त उपयोगी हैं।

( ४ ) शाकवर्ग-यथा पालक, सूआ, मेथी, गोभी, करमकल्ला आदि। इनमें जलका भाग अधिक होनेपर भी इनके अन्दर जो भिन्न भिन्न प्रकारके जैव लवण होते हैं उनके कारणसे यह शरीरके लिए प्रयोजनीय हैं। यह लवण 'स्करवी' रोग के निवारक होनेके कारण शाकादि तथा कन्द मूलादि, "अएटी स्कर्व्यूटिक्स" कहलाते हैं। आहारमें यह सदैव अन्न और दालादिके साथ व्यञ्जन रूपमें व्यवहार होते हैं।

खुम्बियां इसी गणके अन्तर्गत हैं, यद्यपि इनमें अल्प परिमाणमें आमिष जातीय पदार्थ भी होता है। इनमेंसे बहुधा विषाक्त हैं और बाक़ी कष्ट पाच्य हैं।

(५) तैल वर्ग – इनमें तिल, सरसौं, खोपरा, महुआ, मूंग फली आदि सम्मिलित हैं। प्रधानतः यह उद्भिज स्नेह उत्पादन करते हैं, अतएव व्यञ्जनादि बनानेमें उपयोगी होते हैं। इनमेंसे कई यथा खोपरा, मूंगफली आदिमें आमिष जातीय उपकरण भी यथेष्ट पाया जाता है।

(६) फल वर्ग—इस वर्गमें भी कई और उपगण हैं। यथा (१) शुष्क आमिष जातीय, जैसे बादाम, पिस्ता, अखरोट, चिलगोज़ा, मूंगफली, चिरौंजी, खोपडा आदि। इनमें अनेक परिमाणमें आमिष तथा स्नेह जातीय उपादान होता है। (२) शुष्क शर्करा जातीय फल, यथा छुहारा, किशमिश, मुनक्का, इञ्जीर, खुब्बानी आदि इनमें शर्करा प्रधान उपादान है। (३) सरस फल-यथा, अंगूर, अनार, सन्तरा, खरबूज़ा, तरबूज़ आम, नास्पाती आदि इनमें शर्कराके अतिरिक्त कुछ जैव अम्ल तथा लवण भी होते हैं अतएव शाकादिके सदृशोपयोगी हैं। (४) कच्चे शाकवर्गीय फल—यथा घिया, तोरई, बैंगन आदि।

———

## कार्य्य विवरण

विज्ञान परिषद्का साधारण अधिवेषण १६ जनवरी १७ को ५। बजे म्योर कालेजमें हुआ। पहिले अधिवेषणकी कार्रवाई पढी गयी और स्वीकृत हुई। परिषद्के सभ्य माननीय मु. प्रयागनारायण भार्गव, रायबहादुरको, मृत्युपर शोक प्रकट किया गया और मंत्रीको आज्ञा दी गयी कि इस सम्बन्धके प्रस्तावकी नकल श्री० विशननारायणके पास भेज दें। तदनन्तर निम्नलिखित सज्जन परिषद्के सभ्य और परिसभ्य चुने गये—

सभ्य

१. श्रीमान् बेनीमाधव, चौक गंगादास, इलाहाबाद।

२. श्री. अब्दुलहसन—बी. एस., सी., डिप्टी कलक्टर, इलाहाबाद।

३. श्री. महेशप्रसाद भार्गव, एम. एस. सी., इलाहाबाद।

परिसभ्यः—

१. सैयद इज़हार हुसेन साहब, एम. ए., एल एल. बी, चौक इलाहाबाद।

२. सैयद माजिद अली साहब, बी. ए. एल-एल. बी, पत्थर गली इलाहाबाद।

३. सैयद हैदर मेहदी, बी. ए., एल-एल. बी. पत्थर गली इलाहाबाद।

४. सैयद यूसुफ हुसेन साहब, बी. ए., बार-एट-ला, क्लबरोड, इलाहाबाद।

५. श्री. शोभालाल जम्मड़, मंत्री, मारवाड़ी पुस्तकालय कृष्णगंज, पूरनिआ।

श्री करमनारायण बाहल, एम. ए. ने "जीव परमपराके निमय" पर मनोहर व्याख्यान दिया, व्याख्यान समाप्त होने पर सभापतिजी सरदार संतोखसिंह बी. ए को धन्यवाद देकर सभाका विसर्जन हुआ।

इसी दिन कौन्सिलके अधिवेषणमें इस वर्षके-लिए निम्न लिखित व्याख्यान दिये जाने निश्चित हुए। [देखिये कवर पृष्ठ ४]

## हिसाब

नवम्बर १९१६

आय

७३२)७ रोकड़बाकी
७५) चन्दा सभ्य और परिसभ्योंका
१=) दान
३-) उर्दूपुस्तकोंकी विकरी
४॥-) हिन्दी पुस्तकोंकी विकरी
योग ८५५॥)७

व्यय

५९॥-) छपाइ और सायर खर्च
१५॥) चपरासी और क्लर्क
८।) ॥ मुतफर्रक
१९॥) डाकव्यय
योग १०३।-) ॥

दिसम्बर १९१६

आय

७५२।=)१ रोकड़बाकी
५०) चन्दा सभ्य और परिसभ्योंका
४) दान विज्ञानके लिए
१॥) उर्दूको पुस्तकोंकी बिकरी
१५॥=) हिन्दी पुस्तकोंकी बिकरी
योग ८२३॥=)१

व्यय

१७) छपाई और सायर खर्च
६।=) ॥ चपरासी और दफ़्तरका खर्च
।-) विज्ञानके हिसाबमें
६॥) डाकव्यय
योग ३०।) ॥
७९३॥-)७ रोकड़बाकी डाक खानेमें
दः सालिग्राम भार्गव मंत्री

नोट—हमें खेद है कि इस मासमें विज्ञानके निकलनेमें बड़ी देर हुई पर हम आशा करते हैं कि आगामि मासमें विज्ञान ग्राहकोंके पास २० तारीख तक अवश्य पहुंच जायगा।

सम्पादक. विज्ञान।

## साहित्य समाचार !

### मनोरमा

हिन्दीकी यह एक सचित्र मासिक पत्रिका है। पण्डित प्यारेलाल जो दीक्षित और उनके शिष्य पण्डित रामकिशोर शास्त्री इसके सम्पादक हैं। इसकी आख्यायिकायें, विशेष प्रकारसे बड़ी चटकीली और लच्छेदार होती हैं। सब पत्र पत्रिकाओंने इसकी बड़ी प्रशंसा की है; सरस्वती-की समालोचना देखिये—

आकार सरस्वतीके सदृश है। चित्र भी रहते हैं। वार्षिक मूल्य तीन रुपया है। इसके सम्पादक संस्कृतज्ञ हैं। काव्योंके गद्य पद्यमय अनुवाद आप इसमें विशेष करके छापते हैं। अन्यान्य कवितायें और लेख भी इसमें रहते हैं, पत्रिका साहित्य सम्बन्धिनी है, अच्छी निकलती है इत्यादि। ऐसी अच्छी पत्रिका यदि आप देखना चाहते हैं तो आज ही मैनेजर "मनोरमा" मंडी धनौरा यू. पी. को लिख दीजिये।

---

## विज्ञान-परिषद्-द्वारा प्रकाशित

## हिन्दीमें अपने ढंगकी अनूठी पुस्तकें

१—विज्ञान-प्रवेशिका ( प्रथम भाग ) ... ... ।)

२—ताप ... ... ... ... ... ।)

३—विज्ञान प्रवेशिका (द्वितीय भाग) **छप रही है**

४—मिफ़ताहउल-फुनून
( विज्ञान-प्रवेशिका प्रथम भागका उर्दू अनुवाद ) ।)

**विज्ञान**—सरल सुबोध सचित्र वैज्ञानिक मासिकपत्र जो प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। वार्षिक मूल्य ३) ; प्रति अंक ।) ; नमूनेका अंक ≋)॥ और वी॰ पी॰से ।-)

पता—मंत्री,
विज्ञान-परिषत्,
कटरा, प्रयाग।

### बाल सुधा

यह दवा बालकोंको सब प्रकारके रोगोंसे बचाकर उनको मोटा ताज़ा बनाती है। क़ीमत फ़ी शीशी ॥।-)

### दद्रुगज केसरी

दादको जड़से उखाड़नेवाली दवा क़ीमत फ़ी शीशी ।-) मंगानेका पता—

सुख-संचारक कंपनी मथुरा।

---

### विज्ञान प्रवेशिका ( दूसरा भाग )

श्रीयुत महावीरप्रसाद, बी. एस-सी., एल. टी., द्वारा रचित

एक मासके भीतर प्रकाशित होगी। इसमें २२५ के लगभग पृष्ठ और ६० से अधिक चित्र होंगे। प्रारम्भिक विज्ञानकी अद्वितीय पुस्तक है। मैट्रिक्युलेशन तथा स्कूल लीविङ्गके विद्यार्थियों-केलिए बहुत उपयोगी होगी।

जो अभीसे अपना नाम ग्राहकोंमें लिखा लेंगे उनको यह पुस्तक पौन मूल्यपर मिलेगी।

### हरारत

"ताप" का उर्दू अनुवाद छपकर प्रकाशित हो चुका है; मूल्य ।)

पता—मंत्री,
विज्ञान-परिषत्,
कटरा, प्रयाग।

## आगामि वर्षमें विज्ञान परिषद् द्वारा दिये जाने वाले व्याख्यान।

| तिथि | व्याख्याता | विषय |
|---|---|---|
| २४. फरवरी, १७. | अध्यापक गोपालस्वरूप भार्गव, एम. एस-सी. | नमक और नमककी खानें |
| ३१. मार्च, १७. | श्री. महेशप्रसाद भार्गव, एम. एस-सी. | शीशा और उसका बनाना |
| २८. जूलाई १७. | श्री. शालगराम भार्गव, एम. एस-सी. | विद्युत् बलकी नाप |
| २५. अगस्त, १७. | अध्यापक, डी. एन. पाल, एम. ए. | विजलीकी रोशनी |
| २६. सितम्बर, १७. | " एस. सी. देव, एम. ए. | क्लोरीन और उससे लाभ |
| २७. अक्टूबर, १७, | श्री. डी. एन सिह, एम. एस-सी. | तेल |

---



---

इस पत्र सम्बन्धी रुपया, चिट्ठी, लेख, सब कुछ इस पतेसे भेजिए—

**पता—मंत्री "विज्ञान"**

**विज्ञना-परिषत् प्रयाग।**


प्रकाशक—पं० सुदर्शनाचार्य्य विज्ञान परिषत्-प्रयाग। लीडर प्रेस, इलाहाबाद में सी. वाइ. चिन्तामणि द्वारा छपा।

Reg NO. A 708

भाग ४ मीन, १९७३। March 1917. संख्या ६

Vol. IV. No. 6

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

## विषय-सूची




### प्रकाशक

विज्ञान-कार्य्यालय, प्रयाग

वार्षिक मूल्य ३) ] [ १ प्रतिका मूल्य

## विज्ञानके नियम

(१) यह पत्र प्रति संक्रान्तिको प्रकाशित होता है। पहुँचनेमें एक सप्ताहसे अधिक देर हो तो प्रकाशकको तुरन्त सूचना दें। अधिक देर होनेसे दूसरी बार विज्ञान न भेजा जायगा।

(२) वार्षिक मूल्य ३) अग्रिम लिया जायगा। ग्राहक होनेवालोंको पहले वा सातवें अंकसे ग्राहक होनेमें सुविधा होगी।

(३) लेख समस्त वैज्ञानिक विषयोंपर लिये जायँगे और योग्यता तथा स्थानानुसार प्रकाशित होंगे।

(४) लेख कागज़की एक ओर, कमसे कम चार अंगुल हाशिया छोड़कर, स्पष्ट अक्षरोंमें लिखे जायँ। भाषा सरल होनी चाहिए।

(५) लेख सचित्र हों तो यथा संभव चित्र भी साथ ही आने चाहिएं।

(६) लेख, समालोचनार्थ पुस्तकें, परिवर्त्तनमें सामयिक पत्र और पुस्तकें, मूल्य, तथा सभी तरहके पत्र व्यवहारकेलिए पता—

सम्पादक 'विज्ञान' प्रयाग

---

विज्ञानंब्रह्मेति व्यजानात्। विज्ञानाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते।
विज्ञानेन जातानि जीवन्ति, विज्ञानं प्रयन्त्यभिसंविशन्तीति। तै० उ०।३।५।

भाग ४ } मीन, संवत् १९७३। मार्च, सन् १९१७। { संख्या ६

## अपनी चर्चा

मान्य पाठको ! आज विज्ञानके दो वर्ष समाप्त हुए। अगले अङ्कसे विज्ञान तीसरे वर्षमें पदार्पण करेगा। जो महानुभाव 'विज्ञान' केलिए लेख लिखनेकी कृपा करते रहे हैं और जो सज्जन ग्राहक होकर 'विज्ञान' के प्रचारमें सहायक हुए हैं, उनको हम इस अवसरपर सहृदय धन्यवाद देते हैं।

'विज्ञान' दो वर्षसे हिन्दी संसारकी यत्किञ्चित सेवा कर रहा है, पर हम यह नहीं कह सकते कि कार्य्य कर्तृ गण पाठकोंको यथेष्ट लाभ पहुंचानेमें और इस पत्रको समुचित रीतिसे निकालनेमें सफल मनोरथ हुए हैं। विज्ञ पाठको ! कार्य्य कर्तृ-गण भली भांति जानते हैं कि 'विज्ञान' अधिक उपयोगी और रोचक किस प्रकार बनाया जा सकता है, पर अर्थाभावके कारण वे अपने विचारोंको कार्य्य रूपमें परिणत करनेमें सर्वथा असमर्थ हैं। गतवर्षमें कागज़का भाव तिगुना हो गया, ब्लाक बनानेकी सामग्री चौगुनी मंहगी हो गई। इन्हीं कारणोंसे विदेशी सामयिक पत्रोंने अपना अपना वार्षिक मूल्य बढ़ा दिया, हिन्दीके पत्रोंने भी कुछ कलेवर पलट दिया, पर विज्ञानके कलेवरमें अभीतक कोई अन्तर नहीं हुआ।

किसी वैज्ञानिक पत्रका सम्पादन करना कितना कठिन है, इसके बतलानेकी आवश्यकता नहीं। विदेशोंमें ऐसे पत्रोंके सम्पादनमें कितना व्यय होता है इसको भी हमारे पाठक भली भांति जानते होंगे। यहांपर थोड़ी सी अपनी कठिनाइयोंका हाल बतलाना अनुचित न होगा। 'विज्ञान' कार्य्यालयमें एक भी वैज्ञानिक पत्र नहीं आता, न उस कार्य्यालयमें कुछ वैज्ञानिक पुस्तकें ही हैं, फिर आप ही सोचिये कि सम्पादनमें कितनी कठिनाई पड़ती होगी। 'विज्ञान' में लेख विज्ञानकी सभी शाखाओं पर–भौतिक शास्त्र, रसायन, शब्द, विद्युत् शास्त्र चुम्बकत्व, त्रिकोणमिति, वैद्यक, शरीर धर्म शास्त्र इत्यादि पर—निकला करते हैं। अतएव इ[न] सब विषयोंकी पुस्तकोंका सम्पादकोंके दफ़्तर[में]

होना परमावश्यक है। वैज्ञानिक पत्रोंके विना मंगाये 'विज्ञान' में आधुनिक गवेषणाओंका देना बड़ा कठिन है। अभीतक मंगनीसे काम चलाया जाता है, और विशेषतः संजीव राव, प्रिंसिपेल कायस्थ पाठशाला, हमारे धन्यवादके पात्र हैं, जिन्होंने अपने पुस्तकालयकी पुस्तकोंको बिना रोक टोकके काममें लानेकी आज्ञा दे दी है। विज्ञानके पास न कोई आफिसका मकान है, न क्लर्क है, न कोई चपरासी है। इन सब बातोंके होते हुए भी 'विज्ञान' हिन्दी साहित्यके वैज्ञानिक अङ्गकी पूर्त्ति करनेमें यथाशक्य उद्यम कर रहा है और आशा है कि करता रहेगा।

पाठको! हम यह आवश्यक जानते हैं कि विज्ञानकी स्थितिका पूरा ज्ञान आपको रहे। यह पत्र आपका है, परिषद् आपकी सेवा कर रही है और करती रहेगी। इसीलिए उपरोक्त बातोंका लिखना आवश्यक था। परिषद् विज्ञानको गत वर्षमें चलानेमें कदापि समर्थ न होती, यदि परिषद्के सभापति माननीय सर सुन्दरलालने परिषद्को विज्ञानके प्रकाशनके निमित्त २००) रुपयेका चन्दा न दिया होता और कार्य्य करताओंका उत्साह न बढ़ाया होता।

पाठको! आपसे भी अब यही निवेदन है कि आप 'विज्ञान' की ग्राहक संख्या बढ़ानेकी प्रतिज्ञा कीजिये, जिससे 'विज्ञान' की आर्थिक दशा सुधरे, 'विज्ञान' अधिक उपयोगी हो, और हिन्दी भाषा और भारत देशकी उन्नति हो। यह कहनेकी आवश्यकता नहीं है कि यदि विज्ञानको कुछ लाभ होगा तो वह भी इसीकी पुष्टिमें लगा दिया जायगा, क्योंकि परिषद्का उद्देश देशकी सेवा है न कि धनोपार्जन। आशा है कि आप विज्ञानकी आर्थिक स्थिति सुधारनेमें योग देंगे।

हम अपने बहुतसे मित्रोंको, जिन्होंने 'विज्ञान'-के प्रकाशन, सम्पादन और प्रबन्धमें सहायता दी है, धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि आगामि वर्षमें भी वे ऐसी ही सहायता देंगे।

## बीटिल वर्गके कीड़े (भुनगे)

[ ले० लज्जा शङ्कर झा ]

इस संसारमें असंख्य प्रकारके प्राणी देखनेमें आते हैं, और उनमेंसे बहुतसे इतने छोटे हैं कि मनुष्य उनकी ओर एक निगाह भी डालना व्यर्थ समझता है। उसका मन यही बोलता है कि इन तुच्छ जीवोंसे मुझे क्या मतलब, वे चाहे मरें चाहे जिएँ। परन्तु यदि कोई मनुष्य अवलोकन करे, तो उसे इन क्षुद्र प्राणियोंके जीवनमें अनेक चमत्कार मिलेंगे। उसे यह भी ज्ञात होगा कि प्रत्येक प्राणी अपना पेट भरनेकी फ़िक्र करते समय अनायास संसारके कुछ न कुछ कार्य-में सहायता देता है और उस कार्यका सम्पादन ठीक रीतिसे जिस प्रकारके शरीर द्वारा हो सके वैसा ही शरीर उसको मिलता है। इस लेखमें एक ऐसे ही तुच्छ प्राणीके वर्णनकी चेष्टा की जावेगी जिसकी तरफ़ लोग बहुत कम ध्यान देते हैं, परन्तु जिसका जीवन रहस्य अद्भुत है। इस जातिका कोई ख़ास नाम हिन्दी भाषामें नहीं मालूम होता, कोई कोई 'भुनगे' शब्दका प्रयोग करते हैं, परन्तु उसका अर्थ अभीतक स्थिर नहीं हुआ और वह उतना व्यापक भी नहीं दीखता। इस कारण अंग्रेज़ी शब्द 'बीटिल' का ही प्रयोग किया जावेगा। लकड़ी तथा अनाजके घुन, जुगनू, (खद्योत), गुबरीले आदि इसी वर्गके प्राणी हैं।

बीटिल जातिके कीड़ोंकी पहिचान विशेषकर यह है कि उसकी पीठपर दुहरे पंख रहते हैं, जिनमेंसे एक जोड़ी कड़े ढकनके समान पीठपर सटकर बैठती है और दूसरी पतले गाछ रूप पारदर्शक पंखोंकी होती है जो ढकनके भीतर रहती है। कड़ा ढकन न रहनेसे किसी भी प्राणीकी गणना बीटिल वर्गमें नहीं होती। जब इस वर्गका कोई प्राणी पत्ते अथवा फूलपर स्थिर खड़ा हो अथवा चलता हो, तब यह ढकन ऐसा सटकर जमा

रहता है कि देखनेवालेको यह अंदाज़ होना कठिन हो जाता है कि इसके भीतर पंख हैं। परन्तु उड़नेकी इच्छा होते ही पीठके पिछले भागपर एक लकीरसी फट जाती है और उसमेंसे सफ़ेद पंख निकल आते हैं।

अन्य कीड़ोंके समान बीटिलके भी छः पैर रहते हैं और मार्गकी परीक्षा करनेकेलिए उसके मुँहपर दो बड़ी मूंछें होती हैं, जिनको हिला घुमा-कर वह अपने मार्गकी परीक्षा करता है। मक्खीके समान इसकी आँखें बड़ी बड़ी और अनेक पहलू-दार होती हैं। इन पहलुओंका मुख भिन्न भिन्न दिशामें रहता है,जिसके कारण बीटिल बिना सिर घुमाये अनेक दिशाओंमें देख सकता है। जबड़े भी इसके दुचन्द होते हैं, एक तो कत्तर स्वरूप बाहिर रहता है जो पकड़ने और काटनेके काममें आता है और दूसरा भीतर होता है, जो चाबनेमें काम आता है।

बीटिल जाति तितलियोंके समान न तो देखने-में सुन्दर और न मधुमक्खियोंके समान बुद्धिमान ही होती है। इसमें कोई शक नहीं कि घुन उप-जातिके बीटिलको देखकर मनुष्यके मनमें एक प्रकारसे अनिच्छा सी उत्पन्न होती है, परन्तु अन्य कई उपजातियोंके बीटिल रंग बिरंगे और अत्यन्त सुन्दर होते हैं। सूर्योदय अथवा सूर्यास्तके समय जंगलों अथवा बगीचोंमें अनेक रंगके स्वच्छ शरीरधारी इधर उधर पत्तों तथा फूलोंपर उड़ते दिखाई देते हैं और उन्हें देखनेसे आनन्द होता है। कोई नारंगी, कोई नीले, कोई ऊदे, कोई मोतिया कोई सुनहरी रंगके बीटिल सूर्य्यके मध्यम प्रकाशमें रत्नोंके समान चमकते हैं। रात्रिके समय जुगनुओं-की बहारका क्या पूछना है? छोटे छोटे बालक बीटिलोंके पकड़नेका प्रयत्न बड़े आनन्दसे करते हैं। पकड़में आते ही ये प्राणी अपने शरीरको ढक्कनसे ढँककर ऐसा कड़ा कर लेते हैं, कि अंगुलियोंके बीचमें दबानेसे उनके प्राण सहजमें नहीं जाते।

कोई कोई बीटिल जातिके प्राणी बहुत ही बड़े होते हैं, अर्थात् चार इंचतक लम्बे होते हैं और यदि उन्हें कीड़ोंका राजा कहें तो अनुचित न होगा। उनके जबड़े इतने बड़े और तीक्ष्ण होते हैं, कि एक बार मनुष्यको भी उनसे अपना पिंड छुड़ानेकी चिन्ता करनी पड़ती है। अन्य कई इतने छोटे होते हैं कि उन्हें पहिचाननेकेलिए तीक्ष्ण दृष्टि चाहिये।

इस वर्गके प्राणियोंमें जो हिन्दुस्तानमें मिलते हैं बहुतेरे हानिकारक होते हैं, पर कोई कोई उपयोगी भी होते हैं। जैसे मुर्दाफ़रोश बीटिल जो मरे गले कीड़ों मकोड़ों तथा छोटे मोटे जन्तुओंको गाड़ते फिरते हैं, अथवा लेडीबर्ड नामका बीटिल जो बगीचोंमें वनस्पतियोंको खा जाने वाले अन्य कीड़ोंकी पकड़ धकड़ किया करते हैं। ये वनस्पतियोंका पहरा स्वेच्छा सेवकों-की भांति बिना वेतनके दिया करते हैं और उनको हानि पहुंचानेवाले कीड़ोंको खाकर अपना काम चलाते हैं। कोई कोई उपजातिके बीटिल बड़े दुष्ट और हानिकारक होते हैं। यदि कृषक लोग फ़सलको हानिसे बचाना चाहें, तो उन्हें यह पहिचानना सीखना चाहिये कि हमारा शत्रु कौन है और मित्र कोन।

भारतवर्षमें सहस्रों उपजातिके बीटिल देखने-को मिलेंगे। यद्यपि उनकी संख्या बहुत है, तब भी वे देखनेमें कम आते हैं। इसका कारण यही है कि ये जीव छिपकर रहना पसन्द करते हैं और दिनभर आड़में रहते हैं; कोई कोई तो जन्मभर अंधेरेमें ही रहते हैं, जैसे कि लकड़ीके घुन। ये लकड़ीमें घर बनाकर उसीको खाकर रहते हैं और न जाने मेड़ोंके समान इनका सिर भी खुजलाया करता है अथवा नहीं; परंतु अपने घरकी दीवालोंसे अपना सिर लड़ानेका इन्हें बहुत शौक़ है। रात्रिके समय जब घरमें सुनसान हो जाता है, तब लोगोंको उनकी ठनकार सुनाई देती है और वह इतने ज़ोर-की होती है कि यह विश्वास करना कठिन होता

है कि यह यथार्थमें इन्हीं छोटे प्राणियोंके सिर लड़ानेके कारण उत्पन्न हुई है। जब मियां अथवा बीबी घुन एक दूसरेको पुकारना अथवा संदेशा भेजना चाहते हैं तो उनका टेलीग्राफ़िक तरीक़ा यही है।

गाने बजानेका शौक़ तो बंगालियोंमें ही पाया जाता है; उत्तरी हिंदुस्थानमें यह शौक़ सभ्य लोगों-के अयोग्य समझा जाता है। यदि हम यह कहें कि बीटिलोंको गाने बजानेका शौक़ रहता है और उनके शरीरमें वाद्ययंत्र भी रहता है, तो विज्ञानके पाठक शायद उन्हें तवायफ़ोंके अर्दली बनाये जाने योग्य समझेंगे। जो कुछ हो चाहे बीटिलोंका मान घटे अथवा बढ़े, यह कहना ही पड़ता है कि उन्हें गाना बजाना प्रिय है और ईश्वरने कृपा करके उनके शरीरमें वाद्ययंत्र भी दिया है। पीछेकी जांघोंपर अथवा शरीरके घेरेपर एक आरीसी रहती है, जिसपर ढक्कनकी किनार रगड़ रगड़कर सुरीली और तीव्र ध्वनि उत्पन्न करती है, जिसे सब बीटिल बड़े आनन्दसे सुनते हैं। मनुष्यके कानमें यह शक्ति नहीं है कि उसका आनन्द ले सकें; क्योंकि बड़ेसे बड़े बीटिलकी भी ध्वनि दो तीन गज़से अधिक नहीं सुनाई देती।

मधुमक्खियों, तितलियों और बर्रोंके समान इन प्राणियोंके भी चार रूपान्तर होते हैं। बीबी बीटिल पहिले अण्डे रखती है, अण्डे फूटनेपर उनमेंसे इल्ली निकलती है, इल्ली खा पीकर बढ़ती और आराम करनेके लिये शंखी (अथवा कैंचुल) रूपधारण करती है और अंतमें बीटिल स्वरूप धारणकर कैंचुलसे बाहर निकलती है।

### मुर्दा फ़रोश बीटिल

इस संसारमें असंख्य प्राणी रोज़ पैदा होते और मरते हैं। न जाने कितने चूहे, चिड़िया, मेंढक, छछून्दर आदि खुले मैदानमें ही मरकर रह जाते हैं। परंतु ताअज्जुब इस बातका है कि उन-मेंसे शायद किसीकी ही लाश मनुष्यको पड़ी हुई दिखती है। प्लेगके चूहे तो अलबत्ता पड़े हुए मिल जाते हैं, उन्हें कौएतक नहीं छूते, परंतु लोग बहुधा यह प्रश्न करते हैं, कि क्या बात है कि और समय मरे हुए चूहे देखनेको नहीं मिलते। इसका उत्तर यही है कि जिस प्रकार भारी बीमारीके समय चुंगी महकमेकी तरफ़से मुर्दा फ़रोशोंके गैंग फिरा करते हैं, जिससे कोई लावारिस लाश पड़ी न रहे, इसी प्रकार ईश्वरने भी सृष्टिक्रम ऐसा रक्खा है कि जिससे किसी भी प्रकारके प्राणीका शव पड़ा रहकर हवाको अशुद्ध न करे। छोटे मोटे प्राणियोंके शव लेजाकर गाड़ देनेवाले प्राणी वही बीटिल वर्गकी एक उपजाति है जिसे मुर्दा फ़रोश कहना अनुचित न होगा।
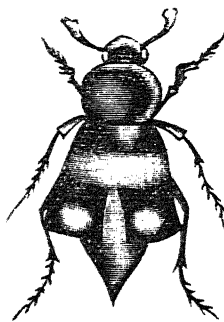
चित्र नं० १
मुर्दा फरोश बीटल

अंग्रेज़ लोगोंमें मुर्देदफ़न करनेवाले ऊपरसे नीचेतक काली पोशाक पहिनते हैं, यदि बिलकुल काली पोशाक न हुई तो काली पट्टी (जिसे क्रेप कहते हैं) अवश्य ही चाहिये। हिंदुओंका भी यही विश्वास है कि काला रंग शोकसूचक है। यमराजके वस्त्र भी काले और उनका वाहन भी, अर्थात् भैंसा, काला होता है। अब तो विधि बहुत कुछ मिल गई, क्योंकि मुर्दा फ़रोश बीटिल भी काले रंगके होते हैं, पर उनके शरीरपर चौड़ी लह-रियादार नारंगी रंगकी पट्टियां सी रहती हैं। यह तो प्रसिद्ध है कि मुर्दा फ़रोशोंको किसीके मरनेका दुःख नहीं होता और उनका काले वस्त्रोंका धारण करना एक प्रकारका ढोंग है। मुर्दाफ़रोश बीटिल-का शरीराच्छादन उनकी-यथार्थ मानसिक स्थिति-का द्योतक है। काला रंग इसलिए है कि एक जीव-के मरनेका दुःख यदि नहीं है, तो होना अवश्य चाहिये। नारंगी रंगकी पट्टी इसलिए है कि पट्टी अच्छी प्राप्तिकी आशा भी है। प्राप्ति किस प्रकार-की होगी यह आगे बतलाया जायगा।

इन बीटिलोंके सिर मज़बूत और चपटे होते हैं, और मूँछें मुगदल नुमा होती हैं। काले रंगपर नारंगी रंगकी पट्टी होनेसे वे सुन्दर मालूम होते हैं। लम्बाई प्रायः एक इंच होती है। सूर्यास्तके समय पति पत्नी अपने आश्रमसे निकलकर अपनी तीक्ष्ण घ्राणेन्द्रिय द्वारा मुर्दोंका पता लगाते फिरते हैं। मान लिया जावे कि एक मरा हुआ मेंढक पत्थरपर पड़ा हुआ उन्हें मिल गया। उसको हटाना उनकी सामर्थ्यके बाहर है तो वे अन्य बीटिल दम्पतियोंको बुला लावेंगे और उनकी सहायतासे मृतक शरीरको घसीटकर नरम जगहपर ले जावेंगे। फिर वे उसके नीचेकी धरतीको खोद खोद कर गड्ढा तैयार करके और लाशको उसमें रखकर मिट्टीसे ढक देते हैं और ज़मीनको बराबर कर सब नर उड़ जाते हैं। इस प्रकार मुर्दे गाड़कर ये प्राणी वायुको बिगड़नेसे बचाते हैं।

परन्तु अब यह प्रश्न उठता है, कि वे ऐसा क्यों करते हैं ? क्या वे ऐसे परोपकारी होते हैं, कि उन्हें स्वार्थकी सूझती ही नहीं, केवल पारमार्थिक कार्य किया करते हैं ? संसारका अटल नियम है कि जिसको देखो वह अपने पेटकी चिंतामें रहता है; यदि केवल अपने पेटकी चिंता नहीं तो बाल बच्चोंके पेटकी चिंता तो अवश्य ही रहती है। बीटिल दम्पति भी इस नियमके विरुद्ध नहीं चलते। दफ़न करते समय थोड़ा बहुत मुँह तो सभी मारते हैं, यह तो हुई पेटकी पूजा। ऊपर कह आये हैं कि नर बीटिल सब उड़ जाते हैं; परन्तु मादी क्या करती हैं ? अब यह कहना अनुचित न होगा कि मेंढकके मृतक शरीरके साथ सब बीबी बीटिलें जीते जी गाड़ दी जाती हैं !! शान्तम् पापम् शान्तम् पापम् (ईश्वर इस पाप से बचाये)। नर बीटिल मादियोंके प्राण लेनेको क़ब्रमें नहीं गाड़ देते, परन्तु सन्तति उत्पन्न करनेके निमित्त। मादी क़ब्रमें पड़ी पड़ी अण्डे देती है और ऊपरकी मिट्टी हटाकर अण्डे वहीं छोड़ चली जाती है। अण्डे वहां रखनेका कोई कारण है ? हाँ, निस्सन्देह कारण अवश्य है। ऊपर कह आये हैं कि अण्डा फूटनेपर इल्ली निकलती है और इल्ली कहीं जा नहीं सकती। गाड़ी हुई लाश उन इल्लियोंके नाजकी मडीसी हो जाती है और वे खा पीकर मस्त हो जाती हैं और अंतमें कैंचुल शरीर धारण करके सो रहती हैं। स्वप्नावस्थामें कैंचुलके भीतर इस प्राणीका रूप बदलकर बीटिल रूप हो जाता है।

ज़रा विचार करना चाहिये कि सृष्टि-क्रम कितना विचित्र है। एक प्राणी तो केवल स्वार्थकी ओर ध्यान देकर कार्य करता है, परन्तु उससे अनायास ही संसारका उपकार हो जाता है।

बीटिलोंके अनेक प्रकार हैं और प्रत्येकके अवलोकन करनेसे कुछ न कुछ जीवनरहस्य ज्ञात होता है। इस लेखमें सबका वर्णन करना असम्भव है। केवल दो चार प्रकारका थोड़ासा वर्णन करनेसे आशा है कि पाठकोंका ध्यान इस ओर आकर्षित होगा।

### व्याघ्र बीटिल

एक विशेष प्रकारके बीटिल हैं जिन्हें व्याघ्र बीटिल कहना अनुचित न होगा। उनकी सूरत
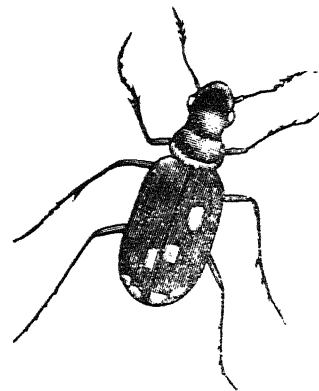
चित्र नं० २ व्याघ्र बीटल

कुछ व्याघ्रके समान नहीं होती, पर वे उसके सरीखे निडर, फुर्तीले और क्रूर होते हैं। व्याघ्र बीटिल देखनेमें सुन्दर और नीले रंगका होता है

और उसकी पीठपर सफ़ेद रंगके छः सात धब्बे रहते हैं, परंतु उसके सिरपर तथा ढक्कनके किनारेपर कभी कभी तामड़ा रंग रहता है। उसके लम्बे पाँव, निकली हुई आँखें, मज़बूत जबड़े और गठीला शरीर होता है। यह बहुधा बंगालमें धानके खेतोंमें मिलता है और फ़सलके खानेवाले कीड़ों मकोड़ोंकी शिकार किया करता है। इस तरह व्याघ्र बीटिल किसानोंकी बहुत कुछ सहायता कर देता है। खाकर अघाना तो यह जानता ही नहीं। शिकारकी खोज करते समय इसकी फ़ुर्ती, धूर्त्तता और क्रूरता देखते ही बनती है। निडर इतना होता है कि अपनेसे बड़े प्राणीपर भी हमला करनेमें चूकता नहीं। यदि कोई मनुष्य उसको शिकार पकड़ लेनेपर छेड़े, तो वह अपनी शिकारको छोड़ता नहीं और यदि कोई उसकी शिकार ज़बरदस्तीसे छुड़ा लेवे तो क्रोधके मारे काटने दौड़ता है।

पूतके लक्षण पालनेमें दीखते हैं। इल्लीकी दशामें वह दौड़ धूप नहीं कर सकता और उसका शरीर भी नरम रहता है। पृथ्वीकी सतहपर रहनेसे कोई भी हिंसक प्राणी उसका जीवन समाप्त कर सकता है। परंतु इसकी चालबाज़ी बाल्यावस्थामें भी काम देती है। वह पृथ्वीमें इस तरहसे गड्ढा करता है कि सारा शरीर उसमें धँस जावे, केवल मुँह बाहिर सतहसे सटा हुआ रह जाता है। बाहिरसे देखनेमें साफ़ धरती दीखती है। ज्योंही कोई भोला भाला कीड़ा पाससे निकला कि झपटकर उसने लिया और भीतर ले जाकर उसका जीवन समाप्त किया और अपनी पेट पूजा की।

### बंदूक चलानेवाले बीटिल

एक अन्य उपजातिका बीटिल है जिसको बंदूकची कह सकते हैं। यह बहुत छोटा होता है और यदि उसके पास बंदूक चलानेकी शक्ति न होती तो अन्य बीटिल उसे सुगमतासे हड़प जाते। इस उपजातिके प्राणियोंके शरीरमें एक गाँठ रहती है जिसमें स्फोटक गैस द्रव रूपसे भरी रहती है। ज्योंहीं कोई शत्रु उनको पकड़नेको झपटा कि बंदूकचीने उस गांठसे कुछ गैस छोड़ दी। उसमें हवा लगते ही आवाज़ होकर धुँआ निकलता है, जो शिकारीके मुँहमें जाकर अथवा आँखमें लगकर उसे विह्वल कर देता है। इतनेमें ये छोटे हज़रत रफ़ूचक्कर हो जाते हैं। ये विचित्र बीटिल सैकड़ों अथवा हज़ारों एक साथ फिरते हैं और भय उपस्थित होनेपर धड़ाधड़ बंदूकें छोड़ने लगते हैं। उस समय सूक्ष्म रूपमें पल्टनकी वालीफ़ायरकी* बहार देखनेमें आती है।

### लेडीबर्ड बीटिल

वनस्पतियोंपर हरे रंगकी एक मक्खी बैठा करती है, जिसे माहू कहते हैं। यह पत्तोंको खा जाती है, जिससे पौदे बढ़ने नहीं पाते और उनपर एक प्रकारका रस छोड़ती है जिसके कारण वे सूख जाते हैं। माहू चिउँटियोंको बड़ी प्रिय हैं, क्योंकि वे उससे एक प्रकारका रस दुहकर निकालती और अपने बच्चोंको खिलाती हैं। यद्यपि यह मक्खी चिउँटियोंको कामधेनुके समान हैं, परन्तु वह मनुष्यकी फ़सल बिगाड़कर हानि पहुंचाती है। फ़सलको माहूसे बचानेवाला एक बीटिल है, जिसे अंगरेज़ीमें लेडीबर्ड कहते हैं। वह स्वरूपमें मटरकी दालके समान गोल अथवा कछुआनुमा होता है। इस देशमें उनका रंग बहुधा गेरुआ
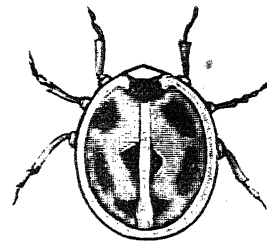
बढ़ाया हुआ आकार

यथार्थ आकार

चित्र-३ लेडीबर्ड बीटल

*नोट—फौजी लोग जब परेडपर एक साथ गोली चलाते हैं तब इस क्रियाको अंगरेज़ीमें वालीफायर कहते हैं।

अथवा पीला होता है, जिसके कारण उसे गुसाँई जी भी कहने लगते हैं। परंतु गुसाँइयोंके गुण तो उसे छूकर भी नहीं गये। माँसभक्षी तो पूरा है, फिर धूर्त्त भी अव्वल दर्जेका होता है। किसीको आते देखा कि कछुओंके समान अपने सिर पैर ढक्कनके अन्दर छिपाकर निश्चल हो जाता है।

देखनेवालोंको यही भ्रम होने लगता है कि कोई अनाजका दाना पड़ा है। इसपर भी यदि किसीने अँगुली दिखाई कि चटसे धरतीपर टपककर बिला गये। घास पातमें फिर उसका पता लगाना कठिन हो जाता है। इन कारणोंसे गुसाँईजीसे तुलना करना ठीक नहीं। कछुआनुमा बीटिल कहना ही उचित दीखता है।

लेडी बर्ड बीटिलकी इल्ली बढ़ाया हुआ आकार
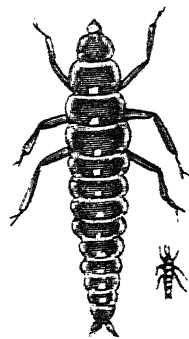
यथार्थ आकार

चित्र नं० ४

ये प्राणी माहू मक्खीकी रात दिन शिकार किया करते हैं। यदि ये न हों तो उस मक्खीके कारण अनेक उपाय करनेपर भी किसान अपनी फ़सलकी रक्षा नहीं कर सकते। उर्दू भाषामें कहावत है कि 'बड़े मियाँ तो बड़े मियाँ छोटे मियाँ सुभान अल्लाह' इन बीटिलोंके छोटे मियाँ सचमुच सुभानअल्लाह होते हैं। इल्ली अवस्थामें छोटे मियाँकी भूखका ठिकाना नहीं होता। माहू मक्खी ही इनका प्रिय भोजन है और फिर वह पकड़नेमें चपल होता है। दिन रात उनको स्वाहा किया करता है। इंग्लिस्तानके किसान इस कारण लेडी बर्डकी विशेष चाह करते हैं।

## नमक और नमककी खानें।

[ ले० गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस-सी. ]

संसारकी सभी सभ्य और असभ्य जातियां, नमकके नामसे और उसके उपयोगसे भली भांति परिचित हैं। जबसे मनुष्य जातिने होश सँभाला और अपनेको पशु, पक्षियोंसे उच्च कोटिका जीव कहना सीखा, तबसे ही नमकको काममें लाना सीखा। संसारमें बहुत थोड़े ऐसे मनुष्य हैं, जो नमकको काममें नहीं लाते, पर वे भी जानवरोंका ताज़ा खून उसके नमकीन मज़ेकेलिए ही पिया करते हैं।

वैज्ञानिकोंका विचार है कि पृथ्वीपर जीवनकी उत्पत्ति पहिले पहल समुद्रमें हुई होगी। इससे ही मनुष्यको क्या, प्रायः सभी पशु, पक्षियोंको भी, नमककी चाट स्वभावसे ही है। इसका सबूत यह भी है कि सभी प्राणियोंके खूनमें ( रुधिरमें ) नमकका अंश पाया जाता है। दिलकी धड़कन भी प्रायः नमकके प्रभावसे ही होती है। हार्वेने, जिसने पहले पहल यह साबित किया था कि मनुष्यके शरीरमें रुधिरका संचार हुआ करता है, कई जानवरोंके दिलोंपर प्रयोग करते हुए यह पाया कि यदि ऐसे किसी दिलको जिसकी धड़कन बन्द हो गई हो, थूकसे छू दिया जाय, तो उसकी धड़कन फिर जारी हो जायगी। बादमें मालूम हुआ कि यह प्रभाव उस नमकका है जो थूकमें मौजूद है। पौदोंकी तन्तुओंमें संचार करनेवाले रसोंमें नमक पाया जाता है, अतएव यह स्पष्ट है कि मनुष्य, पशु, पक्षी, पौदे, सभी जीवोंके लिए नमक कितना उपयोगी, अपरित्याज्य और अपरिहार्य है। इतना ही नहीं, वरन् हमारी सभ्यताकी नींव भी इसी नमककी बदौलत पड़ी। जबसे हज़रत इन्सानने ( मनुष्यने ) कच्चा गोश्त खाना छोड़ा, गोश्त पकाकर खाना सीखा या नबातातका ( वनस्पति ) खाना सीखा, तभीसे

Industrial Chemistry शिल्प रसायन ]

उन्हें नमककी ज़रूरत भी महसूस हुई। जो लोग समुद्रके किनारे या ख़ास ख़ास झीलों या तालाबोंके पास रहते थे, वे नमक बड़ी आसानीसे तैय्यार कर लेते थे और काममें ले आते थे, पर वे बिचारे जो ऐसी जगहोंसे दूर रहते थे, उन्हें नमक दस्तयाव न होता था। इसलिए उन्हें नमक लानेके लिए यात्रा करनी पड़ती थी, जिससे कि अंतरजातीय (international) वाणिज्यकी नींव पड़ी और संसारकी समस्त ऐतिहासिक घटनाएँ बादमें हुईं।

जो जातियां कि केवल साग पात ही खाकर जीवन निर्वाह करती हैं, उनकी सदा ऐसी ही चेष्टा रही है कि लड़ भिड़कर समुद्रतक अपना अधिकार जमालें या समुद्रतक पहुंच जायं। अफ्रीक़ामें थोड़े दिन पहिले एक मुट्ठी नमकमें एक ग़ुलाम ख़रीदा जा सकता था। अब भी वहांके हवशी बाशिन्दे नमकको बड़े आदरसे देखते हैं और किसी धनवानका ज़िक्र करते हुए प्रायः उसकी तारीफ़में कहा जाता है कि वह अपने सभी खाद्योंमें नमक मिलाता है,यानी हर किस्मके खानोंमें नमकका इस्तेमाल करता है।

जो वस्तु कठिनाईसे उपलब्ध होती है, उसे लोग श्रद्धासे और सत्कारसे देखते हैं।प्रयागराजमें रहते हुए बहुतसे हमारे मित्रोंके घरोंमें गङ्गाजल न मिलेगा, पर यदि उनके परिवारोंमें जाकर उनके प्रान्तोंमें देखिये तो अवश्य एक आध घट गङ्गाजलका मिलेगा। यह सभी जानते हैं कि वहांपर गङ्गाजल कितनी चतुराईसे थोड़ा थोड़ा काममें लाते हैं। यही कैफ़ियत उस ज़मानेमें थी, जब रेल गाड़ियां न थीं, स्टीम बोट न थे, जहाज़ न थे। तब नमक बड़ी श्रद्धासे देखा जाता था, जिसका सबूत अभीतक हमारे घरोंमें पाया जाता है। प्रत्येक हिंदू घरमें बचपनसे सिखाया जाता है कि नमक न फैलाओ, ख़राब न करो, नहीं तो अगले जन्ममें, मरनेके उपरान्त पलकोंके बालोंसे (बामनी) नमक बीनना पड़ेगा। क्या कभी भाई बहिनोंका 'राईनोन' होते नहीं देखा। यह भी उसी श्रद्धाका प्रमाण है जिससे हिंदू नमकको देखा करते थे। मुसलमानोंमें, विशेषतः अरबमें, अब भी नमककी सलूनों (हमारे यहां जैसे सलूनोंमें खीर, सेमई उड़ाया करते हैं, वैसे ही उनके यहां भी एक त्यौहार होता है) मनाई जाती है। ईसाइयोंमें इस त्यौहारको(Covenant of salt)*कहते हैं। यह भी ईसाइयोंका एक बड़ा मान्य त्यौहार होता है। मुसलमानोंमें यह त्यौहार केवल ऐसे अवसरोंपर मनाया जाता है, जब उनका कोई सर्दार किसी तर्की पाशासे मित्रता कर लेता है। जहांतक मेरा ख़्याल है हिंदुस्तानके मुसलमान इस त्यौहारको नहीं मनाते।

क्या आपने अङ्गरेज़ी कहावत नहीं सुनी 'This is the salt of life'-*उससे नमककी उपयोगिता प्रतीत होती है। भारतवर्षमें नमककी आनने न जाने कितने स्वामि-भक्तके, वीरता और अतुलित साहसके कार्य्य कराए हैं, जिनमेंसे थोड़ोंका ही उल्लेख इतिहासमें हुआ है, जो संसारभरकी जातियोंके इतिहाससे अधिक गौरवशील और यशप्रद है। किस आनने लाखों राजपूतोंको राणाप्रतापका साथ देनेपर कटिबद्ध किया, किस आनने लाखों राजपूतोंको अपनोंको पराया समझने और मुग़लोंका राज्य स्थापित करनेपर मजबूर किया। किस आनके कारण पंजाबने भारतको अङ्गरेज़ोंके हाथसे निकलते निकलते बचाया। यह आन केवल नमककी थी।

महाशयो! अब देखना यह है कि वैज्ञानिकोंने इस नमककी नमक ख़ारी कितनी की। इस बेचारेकी क्या सेवाकी, इसको कैसे शुद्ध किया, इसे कैसे घर घर पहुंचाया और इससे क्या क्या लाभ उठाये। पहले इस प्रश्नपर विचार करना

---

*कवेनेन्ट ओफ़ साल्ट।

* दिस इज़ दी सोल्ट ओफ़ लाइफ़ अर्थात् यह नमककी भांति जीवनके लिए अनिवार्य है।

परमावश्यक है कि नमक कहां कहांपर पाया जाता है, और कैसे तैय्यार किया जाता है। तदनन्तर यह बतलाऊँगा कि नमक वास्तवमें क्या है।

नमककी सर्वव्यापकताका अभी कथन कर चुका हूं। कोई स्थान पृथ्वीपर नहीं है, जहां नमक मौजूद न हो। वास्तवमें नमककी इस सर्व व्यापकताके कारण रश्मि-चित्रद्वारा विश्लेषण करनेमें बड़ी कठिनाईयां होती हैं। समुद्रके जलमें नमक विद्यमान है। अन्दाज़ा लगाया गया है कि समुद्रोंमें १० संख, ४ पद्म मन नमक घुला हुआ है (१,००४,०००,०००,०००,०००,०००.)। यह संख्या यदि बोर्डपर लिखी जाय तो आप इसे पढ़कर अङ्कगणितकी सभी संख्याओंका स्मरण कर लेंगे पर इसका कुछ ठीक अनुमान न कर सकेंगे। मान लीजिये कि यह सब नमक समुद्रमें तले बैठ जाय तो समुद्रके पैंदेमें १७० फुट ऊंची चट्टान बन जायगी, जो सारे समुद्रके पैंदेपर फैली हुई होगी। अगर मुमकिन हो और इस नमकको समुद्रके जलमेंसे निकालले और रूए ज़मीनके खुश्क हिस्सेपर, पृथ्वी तलपर, रखनेका प्रयत्न करें, तो आपको ४५० फुट ऊंचा गोदाम बनवाना पड़ेगा। यह गोदाम पृथ्वीतलपर तिलभर जगह भी न छोड़ेगा। आपको अपने रहने, सहनेकेलिए इस गोदामके ऊपर मकान बनवाने पड़ेंगे, पर तबतक ज़मीनसे वस्तुओंका प्राप्त होना मुशकिल हो जायगा क्योंकि ज़मीन तो ख़ाली ही न होगी। या यों सोचिए कि समुद्रमेंसे नमक निकालकर पृथ्वीपर फैलाया जाय तो, पृथ्वीपर एक चट्टानकी नई तह, ४५० फुट ऊंची चढ़ जायगी।

समुद्रमें घुले हुए नमकके अतिरिक्त, पृथ्वीपर सैकड़ों खानें हैं, जिनमेंसे कुछ छोटी हैं, और कुछ इतनी बड़ी हैं कि जिनसे नमक हज़ारों वर्षसे खोद खोद कर निकाला जा रहा है, पर इनका अन्त अभीतक नहीं हुआ। इन खानोंका फिर वर्णन करूंगा। समुद्रमें, ४८००००० अड़तालीसलाख वर्गमील (cubic miles) नमक है। पृथ्वी तलपर, अनेकानेक खानोंमें बन्द पड़ा हुआ नमक तीन लाख पच्चीस हज़ार (३२५०००) वर्गमील आयतनमें होगा। इसी थोड़ेसे नमकसे जो पृथ्वीकी खानोंमें मौजूद है, सारी मनुष्य जातिकी आवश्यकताएं लाखों वर्षतक पूरी होती रहेंगी।

भारतवर्षमें नमकके बहुतसे नाम हैं, जैसे नमक, निमक, लौन नून, मीठा, मीठा अप्पू, सा, लवण, इत्यादि।

आयुर्वेदके आचार्य शुश्रुतने नमकको चार क़िस्में बतलाई हैं। आजकल भी, यद्यपि बाज़ारोंमें कोई तेरह तरहका नमक बिकता है, तदपि उनमेंसे मुख्य चार भेद ही हैं:—

(१) सैन्धव अर्थात् सिन्ध नदीके पास पैदा होने वाला। इसको आजकल सैंधा नमक कहते हैं और यह पंजाबकी साल्ट रेंजसे (salt range) आता है।

(२) सामुद्र-समुद्रके जलसे बनाया हुआ।

(३) रोमक-रोमसे मंगाया हुआ या सांभर नमक।

(४) पांसुज-लवणमयी मिट्टीसे बनाया हुआ नमक।

बाज़ारमें जो तेरह तरहके नमक मिलते हैं उनके नाम यह हैं:—

(१) पंगा नमक जो लिवरपूल मिडिलज़बरो इत्यादि स्थानोंसे आता है। (२) हेम्बर्ग नमक। (३) अदन करकच नमक। (४) अदनका बारीक नमक। (५) रवाया करकच। (६) रवाया बारीक नमक। (७) सालिफ़ करकच। (८) सालिफ़ बारीक नमक। (९) परशियाकी खाड़ीका नमक। (१०) बम्बई करकच। (११) स्पेनिश करकच। (१२) मदरासी करकच। (१३) मदरासी बारीक नमक।

संसारमें नमक तीन तरहसे बनाया जाता है। वास्तवमें शुश्रुतके चार प्रकारके नमक,

रोमकको छोड़कर विशेष रीतिसे बनाए हुए नमक हैं—

(१) सामुद्र-समुद्रसे, (२) पांसुज-लवणमयी मिट्टीसे (sub-soil), (३) सैन्धव-खानोंसे निकाला जाता है। भारतवर्षमें भी नमक तीनों तर्कीबोंसे निकाला जाता है। अब हम इन तीनों रीतियोंपर विचार करेंगे।

समुद्रसे नमक निकालना

नमक तैयार करनेकी यह सबसे अधिक पुरानी विधि है। पहले ही मैं निवेदन कर चुका हूं कि जीवनके चिन्ह पहले पहल समुद्रमें दिखलाई दिये थे, वहां ही जीव उत्पन्न हुए थे। अतएव उन्हें नमकका स्वाद भी समुद्रके जलमें निरन्तर रहनेसे आने लगा। आजकल भी देखा जाता है कि जब समुद्रकी उथली उथली खाड़ियोंमें पानी सूख जाता है और नमक जम जाता है तो जङ्गलके पशुओंके झुण्डके झुण्ड वहां जाकर नमक चाटा करते हैं। इन्हें ऐसे स्थानोंको चटौनी ( salt licks ) कहते हैं। कभी कभी जङ्गली पशु ५०० मीलतककी यात्रा करके नमक चाटने आते हैं।

इतिहासकालसे पूर्वके मनुष्य समुद्रके तटपर ऐसे गड्ढे बना लिया करते थे, जिनमें कि इच्छानुसार समुद्रका पानी ले लिया जाता था और नमक जमा लिया जाता था। इन्हीं नमककी क्यारियोंसे आधुनिक सामुद्र नमकके कारखाने शुरू हुए।

आधुनिक समयमें जिस रीतिका अवलम्बन किया जाता है, उसका अब मैं वर्णन करता हूं। समुद्रके तटपर पहिले ऐसा कोई गड्ढा तलाश किया जाता है, जो एक दीवार और फाटक लगाकर समुद्रसे अलहदा किया जा सकता हो। प्रायः समुद्रकी कुछ गहरी और सकड़ी शाखाएँ पृथ्वी में घुसती हुई बहुत दूरतक चली जाती हैं। ऐसी जगह या किसी नदीके मुहानेके पास कोई जगह तलाश करली जाती है और एक दीवार खड़ी करके समुद्रसे इस हिस्सेको अलग कर लेते हैं। दीवारमें सदैव एक ऐसा फाटक लगा दिया जाता है जिसके पटको ऊपर उठानेसे समुद्रका पानी उस भाण्डागारमें भर लिया जा सकता है। पानी भर चुकनेपर कई दिनतक उसी जल-भाण्डागारमें रहने दिया जाता है, जिसमें कि गाद सब नीचे बैठ जाय। इस दो तीन दिनके समयमें थोड़ासा पानी उड़ भी जाता है।

तदनन्तर एक नली द्वारा पानी एक छोटेसे तालाबमें चला जाता है, जो नमक जमानेकी क्यारियोंके पास ही होता है। प्रत्येक कारखानेमें नमक जमानेकी क्यारियोंके कई खेत या समूह रहते हैं। प्रत्येक खेत पहले खेतोंकी अपेक्षा निचाओं या ढलाओंकी तरफ़ रहता है, जिसमें कि पानी ऊपरवाली क्यारियोंसे केवल ढलाओंके ही कारण आता रहे। उपरोक्त तालाबमेंसे पानी क्यारियोंके पहले खेतमें आता है। यहांपर बड़ी विस्तृत क्यारियोंमें, जो केवल चार या पांच इञ्च ही गहरी होती हैं पानी सूर्य और वायुके प्रभावसे बड़ी शीघ्रतासे उड़ने लगता है। क्यारियोंके पहिले खेतमें नमकका घोल अधिक गाढ़ा हो जाता है, पर नमकका जमना आरम्भ नहीं होता। यहांसे जब घोल दूसरे तीसरे या और नीचेवाले खेतोंमें पहुंचता है तो उसके ऊपरी भागमें पपड़ियां जमने लगती हैं। इन पपड़ियोंको इकट्ठा कर लेते हैं और क्यारियोंकी पाड़पर रखते जाते हैं। ऐसा करनेमें दो लाभ हैं, एक तो यह कि जितना घोल कि नमकके साथ चला आता है, वह रिस रिसकर फिर क्यारियोंमें पहुंच जाता है, दूसरे यह कि जब काफ़ी जमा हो जाता है, तब वहांसे हटाते हैं। इस प्रकार थोड़ा थोड़ा हटानेकी तकलीफ़ बच जाती है। यह नमक जो कि तैय्यार

हुआ है, बहुत अशुद्ध है, क्योंकि इसमें मेग्निसियम हरित ($MgCl_2$) मौजूद है। आपने प्रायः देखा होगा कि नमक बरसातमें पसीज जाता है। वास्तवमें नमक पसीजने वाली ( deliquescent ) वस्तु नहीं है, पर जो मेग्निसियम हरित इसमें मिला रहता है, वह पानीको सोख लेता है और द्रवित होने लगता है। समुद्रसे निकाले हुए नमकमें ६ प्रतिशत मेग्निसियम हरित रहता है। इसके दूर करनेका यह उपाय हैः—नमकके बड़े बड़े ढेर लगा दिये जाते हैं और इनको घास फूससे ढक कर छप्परसे बना देते है। छप्पर इन ढेरोंकी बरसातके पानीसे रक्षा करते हैं और नमकको गलनेसे बचाते हैं, पर नमकमें मिला हुआ मेग्निसियम हरित हवासे जलवाष्प सोखकर पसीजता है और गलकर बह जाता है।

( शेष फिर )

---

## स्वास्थ्यरक्षाके साधन

[ ले० अयोध्याप्रसाद भार्गव ]

हवा, (२) पानी, (३) खाना, (४) स्नानकरना (५) कपड़े पहरना, (६) सोना, (७) व्यायाम (कसरत) करना, इन सात बातोंका आरोग्यकेलिए नीचे लिखे नियमोंपर चलना आवश्यक है। अन्य नियम जो आरोग्यकेलिए आवश्यक हैं, उनका वर्णन आगे चलकर किया जायगा।

१ हवा—प्रत्येक मनुष्य और जीवधारीकेलिए हवा आवश्यक है। हवामें ओषजन, नत्रजन, कर्बनद्विओषित, इत्यादि गैसें होती हैं। ओषजन फेफड़ोंमें खून साफ़ करनेमें सहायता करता है। जहाँ यह कम हो जाता है वहाँके बसनेवालोंको फेफड़ोंका रोग हो जाता है।

Hygiene स्वास्थ्य रक्षा ]

नत्रजन—यह वायुमें ८० प्रतिशत भाग मौजूद है। इसका काम केवल ओषजनकी तेज़ीका कम करना है। मनुष्यके फेफड़ोंमें यह और कुछ काम नहीं करता।

कर्बनद्विओषित ( कार्बोनिक एसिड गैस )—जो अक्सिजन प्राणोंके साँस लेनेमें हवाके साथ हमारे शरीरमें जाता है फेफड़ोंमें पहुंचकर खून शुद्ध करता है। इसी क्रियामें खूनके मैलसे मिलकर कर्बनद्विओषित बना देता है। इसके अलावा और चीज़ोंसे भी ये गैस बनती है, जैसे कोयले लकड़ी इत्यादिके जलानेसे। यह गैस पेड़ोंकी ज़िन्दगीकेलिए इतना ही आवश्यक है जितना मनुष्यकेलिए ओषजन। हमको चाहिये कि भीड़ भाड़से अलग रहें, एक जगह बहुतसे आदमी न रहें,कमरेको बिलकुल बंद करके न सोवें और कोयलेके धुएँसे बचें, कूड़ा, घास, पखाना, पेशाब चमड़ा और सड़ी हुई चीज़ोंसे दूर रहें और रातके वक्त पेड़ोंके पास न रहें, क्योंकि रातमें इनसे कार्बोनिक एसिड गैस निकलकर हवामें मिलती है, जो हमारी आरोग्यताको हानि पहुंचाता है।

२ पानी—अच्छे पानीमें रँग सुगंधि या स्वाद नहीं होता। जिस पानीमें चिकनाहट, गदलापन या रंगत पाई जाय उसको उबालकर, भापकेद्वारा शोधलें या फिटकिरी या चूना मिलाकर मिट्टीके बर्तनमें कुछ देर रखकर और निथारकर उबाल लें। बहती नदीका पानी और गहरे कुओंका पानी बहुत कम ख़राब होता है। सबसे अच्छा पानी मेहका है। गदला पानी कभी न पीना चाहिये। क्योंकि पेटमें जाकर ये बीमारी पैदा करता है।

३ खाना—ये शरीरको चलता फिरता रखनेकेलिए बहुत आवश्यक है। मनुष्यका शरीर इँजनकी भांति है और अगर खाना काफ़ी मिक़दारमें, उचित समयपर, ऐसी चीज़ोंका बना हुआ जो शरीर रूपी इंजनके चलानेकेलिए ज़रूरी हैं नहीं

दिया जाय तो इस कमीके कारण शरीर कमज़ोर हो जायगा और इस कमज़ोरीका असर जिस अङ्गपर पड़ेगा वही रोगी कहलायगा। इसलिए हमको चाहिये कि ऐसी चीज़ें खायं जो बल-वर्धक, स्नेह (चिकनाई) उत्पादक और हड्डीको मज़बूत करनेवाली हों और जिनमें नमक भी हो। आरोग्यमें दो वार खानेके बीचमें पाँच घंटेका समय देना चाहिये, क्योंकि ४ घंटेमें खाना पचता है और मेदेसे निकलकर आंतोंमें पहुंच जाता है और कमसे कम १ घंटे मेदेको आराम मिलना चाहिये। सोनेसे ३ घंटे पहले खाना न खाना चाहिये। रोगीकेलिए खानेमें पथ्यापथ्यका विचार रखना चाहिए और खाना समयपर देना चाहिए। खाना एक वार ही अधिक न दिया जाय क्योंकि रोगीका मेदा कमज़ोर हो जाता है। खानेके पीछे नहाना इसलिए न चाहिये कि नहानेसे रगें सिकुड़ती हैं और खून मेदेकी तरफ़ शीघ्रतासे चलता है जो हानि पहुँचाता है। खानेके बाद ही दिमागी काम करनेसे खूनकी तेज़ी कम हो जाती है और खाना देरमें पचता है।

शरीरको बलवान और नीरोग रखनेकेलिए नमकवाली चीज़ोंका खाना इसलिए आवश्यक है कि इससे पाचनशक्ति ठीक रहती है और खूनकी तेज़ी बनी रहती है। मेवा, शक्कर और लसदार चीज़ें इसलिए खानी चाहिएँ कि इनसे शरीरका बल बढ़ता है। घी, तेल, मलाई इत्यादि खानेसे शरीरमें स्थूलता और बल बढ़ता है और ऐसी चीज़ोंका खाना ज़रूरी भी है। नाज, गोश्त, फल, और दूधके इस्तेमालसे रग, पट्ठे और हड्डी मज़बूत होते हैं। ये तो बहुत मुश्किल है कि हर मनुष्यको ये बतला दिया जाय कि उसको क्या खाना चाहिये लेकिन यह बतला देना उचित है कि मनुष्यके जीवनकेलिए कैसी चीज़ोंके खानेकी ज़रूरत है।

४ स्नान करना—हमारे बदनमें लाखों छेद हैं जिनके द्वारा मैल पसीनेके साथ शरीरके भीतरसे निकलता रहता है। इसके अतिरिक्त बाहरकी धूल आदि भी शरीरपर लग जाती है। अगर हम अपने शरीरको स्नानके द्वारा प्रति दिन साफ़ न करें तो वह छोटे छेद जिनके द्वारा पसीना निकलता है बंद हो जायंगे और बहुतसी बीमारियां जैसे खुजली, फोड़ा फुंसी, हो जायंगी। नीरोग मनुष्यको ठंडे पानीसे स्नान करना चाहिये, और कमज़ोर मनुष्योंको और बच्चोंको गुनगुने पानीसे। स्नान करनेसे यही मतलब नहीं है कि शरीरपर पानी उँडेल दिया जाय बल्कि यह भी है कि पानी उँडेलनेसे पहले शरीर खूब मसला जाय या उपटन साबुन या तेल आदिसे मला जाय। पीछे पानी डालकर कपड़ेसे रगड़ा जाय जिससे सब मैल निकल जाय और छेद खुल जायं। अच्छा समय स्नानका सूर्य्य निकलनेसे पहले है। भोजनके पीछे ४ घंटेतक स्नान न करना चाहिये। इससे पाचन-शक्ति बिगड़ जाती है।

५ कपड़े पहरना—सर्दी, गर्मी और बरसात तीन मुख्य ऋतु भारतवर्षमें कही जाती हैं। इन ऋतुओंमें शरीरकी रक्षा कपड़ोंकेद्वारा करना आरोग्यको बनाये रखना है। सर्दीकी ऋतुमें हवा सर्द होती है और यदि इस ऋतुमें हम ऐसे कपड़ोंसे शरीरको न ढकें जो बाहरी हवाकी सर्दीको रोक दें और हमारे बदनकी गर्मीको बनाये रक्खें, तो यह फल होगा कि शरीर ठंडा हो जायगा। इसी भाँति गर्मी और बरसातमें शरीरको ऐसे कपड़ोंसे ढकना ज़रूरी है जो पसीना सोखलें। ऊनी कपड़ा हरारतको कम सोखता है, इसलिए शरीरकी गर्मीको बाहर निकलनेसे बचाता है। परन्तु ख़ाली ऊनका कपड़ा बदनसे छूता हुआ न पहरना चाहिए। बहुत फंसा हुआ कपड़ा किसी ऋतुमें न पहरना चाहिये क्योंकि खूनके बहनेमें रुकावट पैदा करता है। पेट, सीना, गला और कानोंको सर्दी, गर्मीसे बचाना चाहिए।

६ सोना—प्रति मनुष्यकेलिए नींदका आना

ईश्वरने आवश्यक रखा है, क्योंकि जो हिस्से शरीरके काम करते रहते हैं उनको थकावट दूर करनेका और सफ़ाईका मौक़ा नींदके समय मिलता है। यदि नींद न आवे तो दिमाग़को आराम न मिलेगा। वह जल्द थक जायगा, फल यह होगा कि मनुष्य पागल हो जायगा। जो लोग मेहनत और कामकी ज़्यादतीके कारण नहीं सोते वह बड़ी भूल करते हैं, क्योंकि आरोग्यके लिए २४ घंटेमें ६ घंटे सोना ज़रूरी समझा जाता है। बच्चे और बूढ़े ज़्यादा सोते हैं। हमको चाहिये कि साफ़ हवादार मकानमें, जहाँ कूड़ा करकट और दुर्गन्धि न हो, सोवें। सील और दुर्गन्धि हानि पहुंचाती है। बूढ़े, रोगी और छोटे बच्चोंको गुदगुदे बिछोनेपर सोना चाहिये, पर जवान और मेहनती मनुष्यको गुदगुदा बिछोना आवश्यक नहीं है। इनके लिए तख़्त या चटाईपर सोना अच्छा है।

७ कसरत (व्यायाम — जो लोग ऐसा पेशा (रोज़गार) करते हैं जिसमें मेहनत, बहुत कम पड़ती है, उनकेलिए बहुत ही आवश्यक है कि वह चहलक़दमी, घूमना, दौड़ना, टैनिस, क्रिकेट, फुटबाल, डंडमुगदर, डंबल या और कोई कसरत इतनी किया करें कि जिससे थकावट न आय, ताकि उनके दिमाग़ और शरीरको सोनेके बाद दूसरे दिन काम करनेमें सुस्ती या थकावट न मालूम हो। कसरतका करना बूढ़े जवान, नीरोग और रोगी सबकेलिए लाभदायक है। इससे चुस्ती और फुर्ती पैदा होती है। बदनका प्रत्येक हिस्सा ठीक रहता है, खून तेज़ीके साथ दौड़ता है, जिस क़दर रतूबद होती है निकल जाती है, फेफड़ेकी क्रिया ठीक रहती है और शरीरका प्रत्येक हिस्सा मज़बूत और सुडौल हो जाता है।

बच्चे और रोगीकी तेलकी मालिश और मुक्की लगवाना भी एक कसरत है। इसमें कभी सुस्ती या थकावट नहीं मालूम होती। कसरत बूढ़े जवान और रोगी और आरोग्य सभी मनुष्योंकेलिए लाभदायक है।

——

## अङ्कगणितकी शिक्षा

[ले० शतीशचन्द्र घोषाल, बी. एस-सी., एल-एल. बी.]

### ८—अपवर्तक और अपवर्त्य

प्रारम्भीय

यदि सच पूछा जाय तो अङ्कगणितके मूल और व्यवहारोपयोगी तत्त्वोंमें महत्तम समापवर्तक और लघुतम समापवर्त्यकी गणना नहीं की जा सकती। व्यवहारमें महत्तम समापवर्तकका तो विशेष उपयोग है ही नहीं। यद्यपि लघुतम समापवर्त्यका ज्ञान भिन्नोंको सरल करनेकेलिए आवश्यक है, तो भी बड़ी बड़ी संख्याओंका लघुतम समापवर्त्य निकलवाना निरा निरर्थक ही है, क्योंकि भिन्नके हरोंमें बड़ी बड़ी संख्याएं बहुत कम आती हैं।

यदि विद्यार्थियोंको उत्पादकोंका अच्छा ज्ञान हो तो उन्हें दो या अधिक संख्याओंका महत्तम समापवर्तक निकालनेमें कठिनता न होगी। उत्पादकोंका ज्ञान यथार्थमें गणितके पहाड़े पढ़नेके साथ ही साथ शुरू होता है और ज्यों ज्यों बालक गुणा और भाग अधिक करते हैं यह ज्ञान भी बढ़ता जाता है। तो भी महत्तम समापवर्तक निकलवाना शुरू करनेके पहिले उत्पादकोंका विशेष ज्ञान करा देना आवश्यक है।

रूढ़ और यौगिक संख्याएं

उत्पादकोंकी अपेक्षा संख्याओंके दो विभाग किये जा सकते हैं—(१) रूढ़ संख्याएं अर्थात् वे संख्याएं जिनमें उन्हींको या १ को छोड़कर और किसी संख्याका निश्शेष भाग नहीं जाता (२) यौगिक संख्याएं अर्थात् वे संख्याएं जिनमें दूसरी

Teaching शिक्षा ]

छोटी छोटी संख्याओंका भाग निश्शेष जाता है। पहाड़ोंद्वारा सरलतासे जाना जा सकता है कि अमुक संख्या रूढ़ है या यौगिक। पाठक, विद्यार्थियोंसे १०० पर्यंत संख्याओंको जंचवाकर तख्ते-पर दो खाने बनाकर उन संख्याओंको इस प्रकार दो विभागोंमें बांट दें—

| रूढ़ | यौगिक |
|---|---|
| १ | ४ |
| २ | ६ |
| ३ | ८ |
| ५ | १० |
| ७ | १२ |
| ११ | १४ |
| १३ | १६ इत्यादि |

१२० तककी संख्याओंको पहाड़ोंद्वारा जँचवानेके बाद पाठक कई बड़ी बड़ी संख्याओंको भी लेवें। विद्यार्थियोंसे भागद्वारा इनके उत्पादक निकलवाकर कई उदाहरणोंके सहारे उत्पादकोंको सरलतासे ढूंढ़ निकालनेके निम्नलिखित साधारण नियम सिखलाएँ।

उत्पादक निकालनेके कई नियम

(१) ऐसी संख्या, जिसके अंतमें २ अथवा ऐसा अङ्क हो, जिसमें २ का भाग जा सके, उस संख्यामें २ का निश्शेष भाग जायगा।

(२) यदि किसी संख्याके सब अङ्कोंके जोड़में ३ का भाग निश्शेष चला जाय तो वह संख्या तीन-से विभाजित हो सकती है।

(४) यदि किसी संख्याके आखिरी दो अङ्कोंमें ४ का भाग निश्शेष जाय तो पूरी संख्यामें भी चारका भाग चला जायगा।

(५) यदि किसी संख्याके इकाईके स्थानमें शून्य अथवा ५ का अङ्क हो तो उस संख्यामें ५ का भाग निश्शेष जायगा।

(६) यदि संख्या ऊनी न हो और उसके सब अङ्कोंके योगमें ३ का भाग चला जाय तो वह संख्या ६ से भाि। ताजगी

(७) यदि संख्याके सब अङ्कोंके योगमें ९ का भाग निश्शेष जाय तो पूरी संख्याका एक उत्पादक ९ समझो।

(८) यदि संख्याकी इकाईके स्थानमें शून्य हो तो उस संख्यामें १० का भाग जायगा।

स्मरण रहे कि इस प्रकारके नियम जहांतक हो सके उदाहरणों द्वारा विद्यार्थियोंसे ही बनवाये जावें। पहाड़ों तथा इन नियमोंकी सहायतासे विद्यार्थी ५०० तककी संख्याओंके उत्पादक सरलतासे निकालने लगेंगे। इसके पश्चात् विद्यार्थियोंको बताना होगा कि महत्तम समापवर्तकका मतलब क्या है।

समापवर्तकका मतलब

यदि किसी संख्याका भाग दूसरी दी हुई संख्यामें निश्शेष चला जाय तो पहिली संख्या दूसरीका उत्पादक अथवा अपवर्तक कहाती है। यदि दो दी हुई संख्याओंमेंसे दोनोंमें किसी तीसरी संख्याका भाग निश्शेष जाय तो यह तीसरी संख्या उन दोनोंका समापवर्तक है। जैसे ७२ और ३० दोनोंका समापवर्तक ३ और ६ दोनों हैं। महत्तम समापवर्तक निकालनेकेलिए ऐसी बड़ीसे बड़ी संख्या ढूंढ़नी चाहिये, जिसका भाग दोनों संख्याओंमें निश्शेष चला जाय। यह बात अच्छी तरह समझाई जाय कि ऐसे अपवर्तक जो दोनों संख्याओंमें न हों महत्तम समापवर्तक निकालनेकेलिए छोड़ दिये जाने चाहिएँ, क्योंकि इनसे अपना कोई प्रयोजन नहीं। दूसरे किसी संख्याके अपवर्तक निकालनेके समय सिर्फ़ ऐसे उत्पादक लिये जायं जो रूढ़ हों। निम्नलिखित उदाहरण द्वारा यह बात प्रत्यक्ष हो जायगी।

७२ = २ × २ × ३ × ३ × २

३० = २ × ३ × ५

चूंकि ५ दोनों संख्याओंका अपवर्तक नहीं इसलिए अपने कामका नहीं। इसलिए उसे छोड़ दो। देखो २ दोनों संख्याओंका समापवर्तक है और ३ भी समापवर्तक है। और तीसरा कोई

समापवर्तक नहीं, इसलिए सबसे बड़ा समापवर्तक अथवा महत्तम समापवर्तक हुआ ६।

पाठक इस भांति कई उदाहरण लेकर विद्यार्थियोंको महत्तम समापवर्तकका मतलब और उत्पादकोंद्वारा उसके निकालनेकी विधि भली-भांति समझा दें।

वारवार घटानेकी रीति

हम कह आये हैं कि महत्तम समापवर्तकका गणितमें विशेष व्यवहारिक उपयोग नहीं है। उसको निकालनेकी बारबार भाग करनेकी रीतिका मतलब समझना भी कठिन है। पाठकोंको यह जानकर कौतुक होगा कि यदि यह रीति ऐसी कठिन और निकम्मी है तो गणितकी प्रत्येक पुस्तकमें वह क्यों पाई जाती है, और उसे ग्रंथकर्त्ता लोग क्यों निकालकर बाहिर नहीं कर देते, परंतु यह बात ध्यान रखने योग्य है कि यह रीति तर्कसे परिपूर्ण है और गणितकी पुस्तकोंमें उसके दिये जानेका मतलब भी यही है कि जिसमें विद्यार्थी उसके तर्कको समझ उसका स्वाद ले सकें। वास्तवमें प्रायः देखा गया है कि पाठक और विद्यार्थी उसका मतलब समझनेके बदले उसे कंठस्थ ही कर लेते हैं और बिना समझे बूझे उसका उपयोग करने लगते हैं।

प्रैमरी शालाओंके विद्यार्थी उसका गूढ़ अर्थ नहीं समझ सकते

अनुभवी शिक्षकों और गणितज्ञोंका मत है कि प्रैमरी कक्षाओंके विद्यार्थी इस रीतिके गूढ़ अर्थको नहीं समझ सकते। उनकी विचारशक्ति इतनी प्रौढ़ नहीं है कि वे उसके तर्कको समझ सकें और उसका आनन्द पा सकें। इसलिए हमारी रायमें इस रीतिको प्रैमरी शालाओंमें बतानेकी आवश्यकता नहीं; क्योंकि विद्यार्थी बिना समझे बूझे उसका उपयोग करने लगेंगे।

उसके समझानेकी सरल रीति

यदि शिक्षाक्रममें इस रीतिका बताया जाना शामिल हो तो ऐसी हालतमें पाठकको उचित है कि पहिले ऐसे उदाहरण लेवे कि जिसमें बालक समापवर्तकका मतलब समझ जायं। निम्नलिखित उदाहरणको देखकर पाठक समझ सकेंगे कि ये उदाहरण कैसे होने चाहिएँ।

उदा०—एक तसवीरके चौखटेपर जिसकी लम्बाई १८ इंच और चौड़ाई १० इंच है एक बेल (फूल) इस प्रकार भरी जानी चाहिये कि जिसमें दोनों तरफ़ ठीक ठीक पूरी बार आजाय, तो बताओ बूटेकी सबसे अधिक लम्बाई कितनी होनी चाहिये? काले तख्तेपर चौखटेको इस भांति खींचो और विद्यार्थियोंको इस भांति समझाओ।

अ १० इंच ब
ग
घ
च
ख
क
ड स
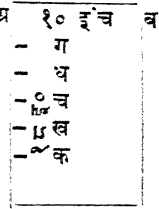
अबसड एक चौखटा है जिसकी लम्बाई अड १२ इंच, और चौड़ाई अब १० इंच है। इसमें बेल इस प्रकार भरी जायगी कि लम्बाई और चौड़ाईमें फूल पूरी बार आ जायं। चूंकि फूल अड और अब दोनोंमें पूरी पूरी बार आ-जाते हैं, इसलिए यदि अड मेंसे हम अक=अब याने १० इंच काटलें तो ५ में भी फूल पूरी बार आने चाहिएँ। अक में पहिला फूल अ के पास शुरू होता है और आखिरी फूल क के पास ख़तम होता है। अब चूंकि फूल अड में पूरी बार आने चाहिएँ और वे अक में भी पूरी पूरी बार आते हैं, इसलिए शेष कड में भी वे पूरी बार आने चाहिएँ। कड में पहिला फूल क के पास शुरू होता है और आखिरी फूल ड के पास ख़तम होता है। कड की लम्बाई कितनी है? उ० ८ इंच।

अब यदि अक मेंसे कड के तुल्य अख टुकड़ा काटलें तो अख की लम्बाई कितनी होगी? उ० ८ इंच। शेष खक की लम्बाई कितनी है? उ० २ इंच। अब देखो चूंकि फूल कड में पूरी पूरी बार आते हैं, इसलिए ये अख में भी पूरी बार आने चाहिएँ क्योंकि अख=कड। अख में पहिला फूल अ के पास शुरू होता है और आख़िरी फूल ख के पास ख़तम होता है। अब खक को देखो। इसकी लम्बाई कितनी

है ? उ० २ इंच, खक में भी फ़ूल पूरी वार आजाना चाहिये । अब देखना चाहिये कि यदि हम फ़ूलको खक के तुल्य लम्बा बनावें तो वह अख में पूरी पूरी वार जायगा या नहीं । अख में से खक के तुल्य खंड काटो । कै खंड हुए ? उ० ४ तो अख में फ़ूल यदि खक के तुल्य हो तो पूरी वार आता है । इसलिए कड में भी पूरी वार आ जायगा । चूंकि अक = अख + खक = १० इंच इसलिये अक में भी फ़ूल पूरी वार जाता है । इसलिये अड में भी पूरीवार आजाता है तो फ़ूल की सबसे अधिक लम्बाई क्या हुई ? उ० दो इंच । पाठक समझलेंगे कि इस उदाहरणमें हमने महत्तम समापवर्तकको वार वार भाग देकर निकालनेकी रीतिका अवलम्बन किया है । काले तख़्तेपर इस भांति लिखो ।

अड = १८ इंच
अब = अक = १० इंच
∴ कड = ८ इंच

अक = १० इंच
अख = कड = ८ इंच
∴ खक = २ इंच

अख = ८ इंच
अग = २ इंच
∴ गख = ६ इंच
गध = २ इंच
∴ धख = ४ इंच
धच = २ इंच
∴ चख = २ इंच

इस प्रकारके कई उदाहरण दिये जानेपर इन्हीं उदाहरणोंके सहारे नियम निकलवाया जाय । विना साक्षात उदाहरण दिये प्रैमरी शालाओंके विद्यार्थी सिर्फ़ अंकोंके ही द्वारा रीतिको भली भांति नहीं समझ सकते ।

लघुतम समापवर्त्य

उत्पादकोंके साथ ही साथ बालकोंको अपवर्त्य-का भी बोध होता जाता है । जिस समय यह ज्ञान लिया कि ६ × ४ = २४ उसी समय यह भी बोध हो गया कि २४ में ६ और ४ मौजूद हैं । यथार्थ-में पाठकको सिर्फ़ यही बताना होगा कि २४ को अपवर्त्य तथा ६ और ४ को २४ का उत्पादक कहते हैं । इसी ज्ञानको पक्का करनेकेलिए इस प्रकारके उदाहरण दिये जायँ—

(१) १३ और ७ का अपवर्त्य क्या है ?

(२) ६ और ४ का अपवर्त्य क्या है ?

समापवर्त्यका मतलब उन्हें नीचे लिखी रीति-से समझाओ :—

३ कौनसी संख्याओंमें मौजूद है ? उ०–३,६, ६,१२,१५ इ० । २ कौनसी संख्याओंमें मौजूद है ? उ०–२,४,६,८,१० इ० । काले तख़्तेपर इस भांति ३ और २ के कई अपवर्त्य लिखकर विद्यार्थियोंसे पूछो कि इन संख्याओंमेंसे ऐसी संख्याएं बताओ जो ३ और २ दोनोंके अपवर्त्य हों ? उ० ६,१२,इ०. देखो ६,१२ इत्यादिमेंसे प्रत्येकमें ३ और २ मौजूद हैं, इसलिए ६,१२ इत्यादिको ३ और २ का समापवर्त्य कहते हैं । निम्नलिखित प्रश्नों द्वारा समापवर्त्यको समझाओः—

२ और ६ के समापवर्त्य बताओ ?

४ और ५ के समापवर्त्य बताओ ?

६ और ५ के समापवर्त्य बताओ ? इत्यादि ।

लघुतम समापवर्त्यका मतलब सिखानेकेलिए दो छोटी छोटी संख्याओंके कई समापवर्त्य लिखवा-कर इन सबमेंसे सबसे छोटी संख्या ढूंढ़नेको कहो; जैसे ३ और २ के कई अपवर्त्य बताओ ? उ०– ६,१२,१८,२४ इत्यादि इन सब अपवर्त्योंमें सबसे छोटा कौन है ? उ० ६. इसलिए ३ और २ का लघुतम ( सबसे छोटा ) समापवर्त्य ६ है ।

इस प्रकार लघुतम समापवर्त्यका मतलब समझानेके बाद निम्नलिखित उदाहरणोंको काले तख़्तेपर लिखकर ऊपर लिखी विधिके माफ़िक कई समापवर्त्योंमेंसे चुनवाकर लघुतम समापवर्त्य निकलवाओ ।

उदाहरण–३ और ४ का लघुतम समापवर्त्य निकालो । ५ और ६ का लघुतम समापवर्त्य निकालो । ६ और ७ का इत्यादि ।

ऊपरके उदाहरणोंमें बालकोंको समझाओ कि दो दी हुई संख्याएं आपसमें रूढ़ हैं । इन रूढ़ संख्याओंका लघुतम समापवर्त्य निकलवाने-

पर विद्यार्थी देख सकेंगे कि दो रूढ़ संख्याओंका लघुतम समापवर्त्य उन दोनों संख्याओंको परस्पर गुणा करनेसे प्राप्त होता है। इस नियमका अभ्यास करनेकेलिए कई उदाहरण दो।

इसके पश्चात् ऐसी संख्याएं लो जो रूढ़ न हों, यथा २० और २४ का लघुतम समा० निकालो। विद्यार्थी ऊपर लिखे नियमानुसार २० और २४ का लघुतम समापवर्त्य ४८० बतावेंगे। उनको बताओ कि देखो १२० में भी तो २० और २४ दोनों मौजूद हैं और वह ४८० से छोटा भी है। इन संख्याओंमें ऊपरका नियम लागू नहीं होता। क्यों नहीं? बताओ कि ये संख्याएं आपसमें रूढ़ नहीं- तो फिर इनका लघुतम समापवर्त्य कैसे निकालें? देखो :—

२० = २ × २ × ५
२४ = २ × २ × २ × ३

चूंकि ५,२० का उत्पादक है, इसलिए २० और २४ के लघुतम समापवर्त्यमें ५ मौजूद रहना चाहिये। इसी प्रकार उसमें ३ भी रहना चाहिये तथा २×२×२ भी। इसलिए लघुतम समापवर्त्य हुआ।

२ × २ × २ × ५ × ३ = १२०

इस प्रकार कई उदाहरण देकर उन्हें यौगिक संख्याओंके लघुतम समापवर्त्य निकालनेकी विधि समझाई जावे।

——

## होमियोपेथिक चिकित्सा

[ ले० अयोध्याप्रसाद भार्गव ]

### भूमिका

भारतवर्षमें अनेक चिकित्सा-प्रणालियां प्रचलित हैं परन्तु उनमें सबसे सस्ती और उपयोगी होमियोपेथिक है, जिससे कदाचित् रोगीको आराम न हो तो हानि भी नहीं पहुंचती। आजकल वैद्यों, हकीमों और डाक्टरोंकी फ़ीस, और दवाओंका मूल्य देना बहुतसे मनुष्योंकी शक्तिके बाहर है। सैकड़ों घर ऐसे हैं जो बीमारीमें हकीम और डाक्टरोंको नहीं बुला सकते। उनका रोग (मर्ज़) बढ़ता चला जाता है। बहुतेरे घर ऐसे हैं कि जहाँ केवल औरत और बच्चे ही हैं, जो हकीम और डाक्टरोंके पासतक नहीं पहुंच सकते। अतएव उनके रोगोंकी उचित चिकित्सा नहीं होती। ये तो मानी हुई बात है कि भारतवासी मामूली रोगोंको ध्यानमें नहीं लाते और जबतक रोग बढ़ नहीं जाता इलाज करनेका ख़्याल भी नहीं करते। इसका कारण बेपरवाही, मूर्खता या ग़रीबी है।

हम इस लेखमालाको इस उद्देश्यसे नहीं लिखते कि इसको पढ़कर प्रत्येक मनुष्य डाक्टर बन जाय। हमारे लिखनेका उद्देश्य यही है कि हर-एक घरमें हिन्दी भाषाके प्रेमी स्त्री या पुरुष अवश्य हैं, यदि वे दो चार रुपये ख़र्च करके होमियोपेथिक औषधियां अपने अपने घरोंमें रखलें और इस लेख मालाकी सहायतासे अपना अपने बच्चों तथा मित्रोंका इलाज किया करें, तो वे इस प्रकार साधारण मर्ज़ोंको बढ़नेसे रोकेंगे और डाक्टरोंकी फ़ीस और क़ीमती दवाओंके दामसे बचेंगे। जो मर्ज़ समझमें न आये या दस पांच दिन इलाज करनेसे जिसमें कमी न मालूम हो तो मेरी राय यह है कि किसी डाक्टर या वैद्यसे सलाह लें।

### औषधोपचार

यदि रोगका कारण मालूम हो जाय, तो औषध देनेमें बड़ी आसानी होती है, पर ठीक ठीक निदान करना बड़ा कठिन है। पहले यह देखना चाहिये कि रोगके लक्षण क्या हैं, तदनन्तर अपने पुराने अनुभवसे या प्रमाण ग्रन्थोंसे यह मालूम कर लेना चाहिये कि रोग क्या है और उसका इलाज क्या है। यह याद रखना चाहिये कि वास्तवमें यह काम किसी अनुभवी वैद्यका है। हम केवल उन्हीं रोगोंके लक्षण और चिकित्सा

लिखेंगे, जो मामूली तौरपर घरोंमें आये दिन होते रहते हैं। इनके लक्षण प्रायः सभी जानते होंगे, यदि न भी जानते हों, तो इस लेखमालासे स्पष्ट हो जायंगे। लक्षण जान लेनेके उपरान्त औषध देना सुगम है।

यदि किसी मरीज़को एकसे ज़्यादा दवा देनी हों तो एक दवाके बाद दूसरी दवा देनी चाहिये। हमारी रायमें बच्चों और बड़ोंको साधारण बीमारियोंमें नं० ३ और ६ डाइल्यूशन हर दवाका देना चाहिये, पर मर्ज़ पुराना हो तो नं० १२ और ३० की दवाएँ देना उचित है। ख़ास ख़ास मर्ज़ोंमें इससे ज़्यादा नं० की दवा भी देनेमें हर्ज न होगा।

होमियोपेथिक दवाएं ३ तरहकी होती हैं अर्थात् (१) द्रव—पानीकी शक्लमें (२) गोलियां (३) बुकनी। अगर पानीकी शक्लमें हो तो १ ख़ुराक में १ बूंदसे दो बूंदतक देना चाहिये अगर गोलियां हों तो १ या २ गोली और अगर बुकनी हो तो २ से ५ ग्रेनतक देनी चाहिये।

अगर ज़मरी ज़बानपर रखकर ख़ुश्क गोली या बुकनीको खाले तो अच्छा है नहीं तो थोड़े पानीमें मिलाकर देना चाहिये। बच्चोंको इससे आधी ख़ुराक़ देनी चाहिये। खाना खानेसे १ घंटा पहले या खाना खानेके १ घंटे बाद जब दवा दी जाती है तो फ़ायदा जल्द मालूम होता है। दिनमें तीन या चार बार या जैसी ज़रूरत हो दवा देनी चाहिये, लेकिन बाज़ मर्ज़, जैसे हैज़ा, दस्त और क़ैमें ५ या १० मिनटके बाद भी दवा दे सकते हैं। जो लोग तम्बाकू खाते हैं या पीते हैं या चाय पीनेके आदी हैं उनको दवा खानेके बाद कुछ देर-तक तम्बाकू या चाय न पीनी चाहिये वरना दवाका फ़ायदा जाता रहेगा। इसी तरहपर खटाई मिर्च तेल और तेज़ ख़ुश्बूकी चीज़ें भी नहीं खानी चाहिएँ।

### मरीज़को क्या खिलाना चाहिए?

हर क़िस्मके बुख़ारमें और ऐसी बीमारियोंमें जिनके साथ बुख़ार आता हो चाहिये कि मरीज़को पतली ख़ुराक़ जैसे कम औटा हुआ और सोड़ा मिला हुआ दूध, अरारोट, साबूदाना, दलिया और दूसरी हल्की चीज़ें थोड़ी मिक़दारमें दें। प्यास मालूम होनेपर सोडा या गर्म किया हुआ ठंडा पानी देना चाहिये। जबतक बुख़ार चढ़ा रहे अगर पानी न दिया जाय तो अच्छा है।

जब दस्त आते हों या पेचिश हो गई हो तो ख़ुश्क खाना कभी नहीं देना चाहिये। इन बीमारियोंमें पतला खाना, जैसा ऊपर बयान किया है, देना उचित है।

पुराने रोगोंमें ऐसे खानोंसे जिनमें बहुत मसाला पड़ा हो, और तरकारियोंसे परहेज़ करना चाहिये। जब क़ै होती हो तो बिलकुल खाना न देना चाहिये। २४ घंटेतक अगर खाना न दिया जाय तो कोई हर्ज नहीं है। जब प्यास लगे तो गर्म या ठंडा पानी चम्मचसे थोड़ा थोड़ा देना चाहिये और कुल्ले कराने चाहिएँ। जब कब्ज़ हो तो बिना चोकर निकाले हुए आटेकी रोटी और दलिया, खिचड़ी, सादे चावल, खिलाने चाहिएँ। लेकिन पानीकी मिक़दार ज़्यादा देनी चाहिये। जब पेटमें बच्चा हो या बच्चा पैदा हो गया हो तो स्त्रीको ऐसा खाना देना चाहिये जिसमें ताक़तदार चीज़ें हों। दूध सबसे अच्छा पदार्थ है और कई दफ़े करके थोड़ा थोड़ा देना चाहिये। चावल, दलिया, खिचड़ी अरारोट साबूदाना भी खिला सकते हैं लेकिन ऐसी चीज़ें जो कब्ज़ पैदा करती हों न देनी चाहिएँ।

छोटे बच्चोंकेलिए माँका दूध सबसे अच्छी ग़िज़ा है और चार महीनेतक कोई चीज़ सिवाय मांके दूधके बच्चोंको न देनी चाहिये। इस दूधका आपेक्षिक गुरुत्व (Specific gravity) क़रीब १.०३२ होता है। स्वादमें मीठा परंतु खारी होता है। यदि हवा न लगे तो चार दिनतक खट्टा नहीं पड़ता। इसमें पानी, मक्खन, कुछ नमक, शुगर आफ़ मिल्क, होते हैं। नमकका कुछ हिस्सा फ़ौस-

फ़ेट और कार्बोनेट औफ़ लाइम होता है। १००० हिस्सेमें ८७४ हिस्सा पानी, ४४ हिस्सा शुगर औफ़ मिल्क, ३० हिस्सा मक्खन और ४ हिस्से फ़ौसफ़ेट या कार्बोनेट औफ़ लाइम और दूसरे नमक और ४८ हिस्सा कैसीनका (Caseine) होता है। काली औरतोंके दूधमें मलाई ज़्यादा होती है। चार महीनेके बाद दूध पतला पड़ने लगता है और उसमें मलाईका हिस्सा कम हो जाता है। अच्छा दूध उत्पन्न करनेके लिए ज़्यादा और जल्द पचनेवाला खाना स्त्रीको खाना चाहिए। बच्चोंको चार महीनेतक मांका दूध ज़रूर दिया जाय और अगर उसमें कमी हो जाय तो धायके ज़रियेसे इन्तज़ाम किया जाय। यदि धाय तन्दुरुस्त २५ से ३० साल तककी उम्रकी, खुशमिजाज़, हँसमुख, बच्चेवाली, बच्चोंसे प्रेम करने वाली, साँवले रँगकी, हो तो बहुत ही अच्छा है। अगर धाय न मिले तो गायका दूध बच्चोंको देना चाहिये, क्योंकि इसमें क़रीब क़रीब वह चीज़ें जो मांके दूधमें होती हैं पाई जाती हैं, जैसा नीचेकी सारिणीसे स्पष्ट होगा।

| पदार्थ | मांके दूध के १०० भागमें | गायके दूध के १०० भागमें |
|---|---|---|
| पानी | ८७४ हिस्से | ८६१ हिस्से |
| मक्खन | ३० हिस्से | ३८ हिस्से |
| कैसीन | ४८ " | ६८ " |
| शुगर औफ़ मिल्क | ४४ " | २६ " |
| नमक | ४ " | ६ " |

अगर गायके दूधमें $\frac{1}{3}$ या $\frac{1}{4}$ हिस्सा पानी मिला दिया जाय तो बच्चेको जल्दी हज़म होगा। जिस दूधमें मक्खन ज़्यादा होगा उसके पीनेसे बच्चा ज़्यादा मोटा होगा। तन्दुरुस्त गायका दूध लेना चाहिये और दूधको औटाना न चाहिये बल्कि गर्म पानी मिलाकर देना चाहिये। अगर बच्चेको दस्त आते हों तो दूध उबालकर चूनेका पानी मिलाकर देना चाहिये। ६ महीने तक बच्चेको नीचे लिखी रीतिसे दूध दिया जाय तो मांके दूधके बराबर फ़ायदा करेगा। ये नुस्ख़ा मिस्टर टरनर मेनचेस्टर निवासीका है :—

"एक औंस शुगर औफ़ मिल्कको ३/४ पैन्ट गर्म पानीमें मिलाकर ३/४ पैन्ट ताज़ा गायका दूध मिला दिया जाय और बोतलमें बन्द करके नलकीके ज़रियेसे पिलाया जाय।" ६ महीनेके बाद बच्चेको खाना और दूध बिना पानी मिलाये दे सकते हैं। बच्चा खाना पचा लेगा। अगर गायका दूध न मिले तो बकरी या गधीका दूध दे सकते हैं और इनमेंसे यदि किसी भी क़िस्मका दूध न मिले तो बिलायती बने हुए खाद्य पदार्थोंमेंसे रिजेज़, ब्राऊन एण्ड पोलसन्स, या नीव्ज़ खाद्य (Ridge's, Brown and Polson's, or Neave's food) सबसे अच्छे हैं। इनको बनाकर बोतलके द्वारा पिलाया जाय।

६ महीनेके बाद बच्चेको हलकी, पतली और जल्दी पचनेवाली ग़िज़ा जैसे साबूदाना, दालका पानी, दलिया, खीर वग़ैरा देनी चाहिएँ। कोई चीज़ ऐसी न देनी चाहिए जो देरमें पचने वाली हो। जो खाने लिखे गये हैं वह तन्दुरुस्त और बीमार बच्चोंके लिए यकसां फ़ायदेमंद हैं।

---

## सुवर्णकारी

[ले० गंगा शङ्कर पचोली]

### ४—चौथा तर निखार।

इस निखारका नाम बरमिंघाम निखार है, क्योंकि इसको उस नगरके सुनार काममें लाते हैं। एक ८ इंच ऊंचे और मुखपर ७ इंच व्यासवाले काले सीसेके पात्रमें ३५ तोले शोरा १७॥ तोले नोन और १७॥ तोले फिटकिरीके महीन चूर्णको रख, अग्निपर धीरे धीरे गलाते हैं और यह ध्यान रखते हैं कि मसाला जल न जाय। जब म-

साला गलने लगता है. उस समय मसालेको काठ, की करछी या शलाकासे हिलाते हैं। जब मसालेमें उफान आता है, उस समय पांच तोला नमकका तेज़ाव उसमें डाल देते हैं, जिससे उफान बंद हो जाता है। इस समय मसालेको करछीसे फिर चलाते हैं जिससे फिर उफान आता है। उफान आते ही सोनेकी वस्तुको. जो साफ़ करके चांदी वा प्लेटीनमके तारमें पहिलेसे बांधकर तैयार रखते हैं.लटका देते हैं और चार मिनिटतक उसको मसालेमें हिलाते रहते हैं। पर यह ध्यान रखते हैं कि वस्तु मसालेमें डूबी तो रहै,पर पात्रसे न छुए। चार मिनिटके पीछे उस वस्तुको निकालकर खौलते जलमें खंगार लेते हैं, जिससे मसाला सब छूट जाता है। इसी प्रकार दूसरी बार उस वस्तुको मसालेमें डेढ़ मिनटतक डुबोए रखते हैं और हिलाते रहते हैं। फिर निकालकर साफ़ कर लेते हैं। दो डोब देनेके पश्चात् उस मसालेके पात्रमें ५ तोला खौलता पानी मिलाते हैं, जिससे मसाला थोड़ी देरको नीचे बैठ जाता है, परन्तु झट ही फिर खौलने लगता है। उस समय तीसरी बार वस्तुको मसालेमें १ मिनिटतक हिलाकर निकालते हैं और पूर्ववत धोकर साफ़ कर लेते हैं। इतना होनेपर सोनेका रंग उज्ज्वल होता दीखता है और चौथी बार फिर उस वस्तुको आधी मिनिटकेलिए मसालेमें लटकाते हैं और अन्तमें दो जुदे जुदे खौलते पानीके पात्रोंमें धो लेते हैं। धोनेकेलिए प्रत्येक समय शुद्ध खौलता पानी लेना चाहिये।

ऊपर लिखे हुए निखारसे १५ केरट तककी सोनेकी वस्तु निखारी जाती हैं और होशयारीसे और सफ़ाईसे काम किया जाय तो बहुत अच्छा निखार चढ़ता है। इस निखारमें अन्दाज़न बीसवां भाग छीज जाता है,इसलिए बचा हुआ मसाला और धोनेका पानी जुदे जुदे रख छोड़ते हैं और बहुत सा मसाला और पानी इकट्ठा हो जाता है तो उसमेंसे सोना निकाल लेते हैं। इस निखारमें यह भी अत्यावश्यक है कि निखार सम्बन्धी क्रियाके जितने पात्र हैं वे सब शुद्ध और स्वच्छ रहें और उनमें चिकनाई तथा लोहका अंश बिलकुल न हो।

इंगलेंडके सुनार सोनेकी वस्तुको निखारनेसे पहिले मसालेसे धोकर साफ़ करते हैं, क्योंकि वस्तुको साफ़ किये विना निखारे जानेसे जहां जहां सफ़ाई नहीं होती वहां ही धब्बे रह जाते हैं। वस्तुपर सफ़ाई लानेकेलिए जुदी औषध काममें आती हैं। कोई सुनार शोरेके तेज़ाबके मिश्रणमें थोड़ी देर उबालते हैं तो कोई सोनेकी वस्तुको ताव देकर गंधकके तेज़ाबके मिश्रणमें उबालकर स्वच्छ जलमें धोते हैं। कोईसी औषध काममें लाई जाय पर सफ़ाइ इस रीतिसे करते हैं। पहिले उस वस्तुको अच्छी तरह पालिश करते हैं और धो लेते हैं। पीछे उसको लोहे वा तांबेके पत्तरपर रख अग्निमें लाल होनेतक तपाते हैं। जो वस्तुके किसी भागमें चिकनाइ रह जाती है तो उसे फिर उबालकर अग्निमें तपाते हैं और ठंडी होनेकेलिए जुदा रख देते हैं और ठंडा होनेपर तारमें लटकाते हैं। जब किसी वस्तुको फिर निखार देना होता है तो पहिले उसको तपाते हैं और प्रायः पुराने निखारके मिश्रणमें, जो जुदा रखते जाते हैं, डोब देकर पूर्ववत् निखारते हैं। जो पुराना मिश्रण गाढ़ा हो जाता है या सूख जाता है तो २॥ तोला तेज़ाब और २॥ तोला जल उसमें मिलाते हैं और यदि वह मिश्रण अधिक पतला हो जाता है तो उसमें और औषध नहीं मिलाते। जो सोनेमें तांबेका मेल अधिक होता है, तो यह पतला मिश्रण सोनेको चमकदार रंग दे देता है।

निखार लग चुकनेके पीछे सोनेको चिकना और चमकना करनेकेलिए उसको ओप वा जिला देते हैं। यहांके सुनार जिला देनेकेलिए मानक रेत वा अकीक आदिकी ओपनी काममें लाते हैं। सोनेकी वस्तुको पानीमें भिगोकर मानक रेतसे

रगड़ते हैं, वा ओपनीसे घिसते हैं। चमक आजाने-पर निर्धूम भूभलपर रख सुखा लेते हैं।

पीछेसे रुईके फोहेसे महीन पिसे हुए गेरूका हाथ फेर देते हैं। परन्तु अंगरेज़ी सुनार जिस रीतिसे जिला या ओप देते हैं उसका बतलाना आवश्यक है। जब सोनेकी वस्तुपर निखार लगाकर जैसा रंग अभीष्ट हो चढ़ा लेते हैं तो उस वस्तुको सुखाकर हलके 'पुटास' के गरम घोलमें धोकर शुद्ध उष्ण जलमें खंगार लेते हैं और पीछे काठके बुरादेमें रखकर सुखा लेते हैं। फिर ऊंटके बालोंके ब्रुशसे साफ़ करते हैं और ओप देते हैं। ओप वा जिला देनेकेलिए फौलाद वा अकोक़की ओपनीसे रगड़ते हैं और पानीमें भिगोनेके स्थान 'एल' नामकी शराब मिले जलमें तर करते जाते हैं। इस क्रियासे बहुत अच्छी आब आ जाती है।

ऊपर जिन निखारोंका वर्णन किया है उनके सिवाय बहुतसे और भी निखार प्रचलित हैं। जो जिस सुनारके हाथपर चढ़ रहा है वह उसीसे काम लेता है, पर सबमें औषधें तो यही हैं। कुछ कुछ औषधोंके परिमाण और क्रियामें थोड़ासा अंतर रहता है। लन्दन, फ्रान्स जर्मनी आदिके जुदे जुदे निखार लिखनेसे विस्तार तो अधिक हो जाता, पर परिणाम यही होता। इस हेतु उनका वर्णन अवकाश मिला तो फिर लिखा जायगा।

छीजन और न्यारा

सुनारके धंधेकी हरएक क्रियामें सोनेकी छीजन होती है। हरएक हथोड़ेकी चोट, कतुएकी काट, रेती तथा ओपनी आदिकी रगड़, हर समयके ताव तथा निखार आदिमें सोना छीजता ही है और सोनेके सूक्ष्म कण अंगीठीकी राख, बुझावके पानी, निखारके बर्तन, सुनारके काम करनेके स्थान तथा रेती आदि औज़ारोंमें मिल जाते हैं। इसलिए छीजनको साधारण बात न समझना चाहिये। जहांतक बने छीजन विशेष न हो। इस बातका ध्यान रखना चाहिये और जिन जिन चीज़ोंमें छीजनके मिल जानेकी सम्भावना हो उनको एकत्रकर छीजनसे सोना निकालनेके उपाय करने चाहिएँ।

इस देशमें सुनार छीजनसे अपने आप सोना निकालनेका परिश्रम नहीं करते वरन् अपनी दूकानका पानी, अंगीठीकी राख, दूकानके झाड़नेसे मिला कूड़ा आदि न्यारियेको बेच देते हैं, जो उस न्यारेमेंसे शुद्ध सोना और अन्य धातु जुदी कर लेते हैं। इस स्थानपर दो चार क्रिया लिखी जाती हैं कि जिनको इंगलेंडके सुनार काममें लाते हैं, और जिनसे सुनार अपनी दुकानके न्यारेमेंसे सोना आदि धातु स्वयम् निकाल सकते हैं।

अंगीठीकी राख, दुकानके झाड़ने और औज़ारोंके पोंछने आदिसे मिला कूड़ा इकट्ठा करना चाहिये। यह कूड़ा व राख जो बहुत एकत्रित हो जाती है तो सोना निकालनेकेलिए एक तो मसाला विशेष ख़र्च होता है और दूसरे महनत और दिक़्क़त अधिक होती है। इस हेतु जहांतक हो सकता है थोड़ा न्यारा इकट्ठा होनेपर ही सोना निकाल लेते हैं। दूकानके न्यारेको इकट्ठा कर बहुत महीन चलनीसे छानते हैं और जो महीन रेत मिलता है उसको पानीसे भिगोकर किसी बरतनमें रख लेते हैं। जो मोटा छानन रहता है उसमें चुम्बक गेरकर लोह स्पात आदिके कणोंको खेंच लेते हैं। बाक़ी बचा मोटा न्यारा किसी बड़े बरतनमें भर मुखपर ढकना लगा अग्निमें भस्म करते हैं। जल जानेपर जो राख रहती है उसको पीस लेते हैं। न्यारेके छाननेसे मिले महीन रेतको जो पानीसे भिगो रखा है, पानीमें कई समय इस प्रकार धोते हैं कि पानी तो जुदा निर्तार लिया जाय और नीचे बैठी गाद अलग कर ली जाय। इस गादको सुखाकर उसमें चुम्बक द्वारा लोहे या स्पातके कणोंको खेंच लेते हैं और बाक़ी रेतको पूर्व लिखी रीतिसे भस्म करते हैं और जो राख मिलती है उसको और पहले मिली हुई राखको भी मिला लेते हैं। इस रीतिसे मिली

राखको घरियामें मसालेके संग गलाकर उसकी रेनी ढालते हैं। फिर उसको बढ़ाकर छोटे छोटे टुकड़े करके शोरेके तेज़ाबमें डालते हैं और तीसरो अध्यायमें लिखी हुई रीतिसे सोना आदि धातुओंको जुदा कर लेते हैं।

ऊपर दी हुई रीतिसे जब राख हो चुके तो जो सोनेके कण आंखसे दीख पड़ते हों, वह बीन लेते हैं, और बची हुई राखको अग्निमें इस रीति गलाते हैं:—न्यारेकी राख ४ तोला, 'कारबोनेट पुटास' २ तोला, नौन १ तोला और 'साल एनिकजान' ६ माशे, इन सबको महीन पीस कर राखमें मिलाते हैं और इतनी बड़ी घरियामें रखते हैं कि जो मसाला भरनेपर १ इंच ख़ाली रहती है। इससे मसाला उबलकर बाहर नहीं निकल जाता। जब राख मसालेके संग गलती है तो थोड़ा थोड़ा शोरा बुरकते जाते हैं। जब मसालेमें उफान आता है तो थोड़ासा नौन गेरते हैं, जिससे उफान बेठ जाता है। गल चुकनेपर घरियाके पेंदेमें एक धातुका बतासा-सा बेठ जाता है, जिसे ठंडा होनेपर घरिया तोड़कर निकाल लेते हैं। राखको गलानेमें साल एनिकजानके स्थान सेंडीवर, बाइक्लोराइड मर्करी, ब्राउन पुटासको भी काममें लाते हैं, जिनके प्रयोग-से धातुओंसे मैल जुदा हो जाता है और धातु एक होकर नीचे बेठ जाती हैं।

यहांतक सुनारकी दूकानकी राख, मट्टी, कूड़ा आदिमेंसे छीजनका सोना निकालनेकी रीतिके लिखी। आगे वह रीति लिखी जाती है कि जिससे इंगलेंडके सुनार निखारके मसाले धोने वा उबाल-के पानी आदिमेंसे छीजनका सोना निकालते हैं। पहले लिखा जा चुका है कि निखारकी औषधों-का मिश्रण, बुझाव, उबाल तथा धोवनका पानी चीनी वा काचके बरतनमें इकट्ठा करते रहते हैं और उसमें 'प्रोटोसल्फ़ेट आइरन' का पानी गेरते हैं जिससे सोनेके कण नीचे बेठ जाते हैं। जब सब बरतन न्यारेके जलसे भर जाता है तो फिर १ तोला 'प्रोटोसल्फ़ेट आइरन' ८ तोला गरम जलमें गलाते हैं। जब खार पानीमें घुल जाता है तब उस मिलावटको न्यारेके पानीके बासनमें डालकर हिलाते हैं और जब यह ज्ञात हो जाता है कि सोना नीचे बेठ गया तो न्यारेके बरतनका पानी धीरेसे दूसरे बरतनमें नितार लेते हैं। इस नितरे हुए पानीमें फिर ऊपर लिखा मिश्रण बनाकर डालते हैं, जिससे उस जलमें जो सोनेके कण रहे होते हैं वे भी नीचे बेठ जाते हैं। कणोंके नीचे बैठ जानेपर पानीको फिर नितार लेते हैं। अब दोनों बरतनोंमें बेठी हुई गादको काठके बुरादेमें मिलाकर सुखा लेते हैं। फिर एक बरतनमें अग्निपर रखकर जला लेते हैं। जो राख बच रहती है उसमें उससे आधा 'कार्बोनेट पुटास' चौथाई नौन और चौथाई बोतलका काच अच्छी तरह महीन पीसकर मिलाते हैं और अन्तमें घरियामें धर अग्निमें गलाते हैं और बीच बीचमें शोरे वा 'सेंडीवर' वा 'साल एनिकज़ान' की बुरकी देते जाते हैं। ऐसा करनेसे साफ़ सोना नीचे बेठ जाता है।

ऊपर कही हुई दोनों रीतिसे न्यारेमेंसे सोना निकाला जाता है, पर यदि उस सोनेमें चांदी तांबा आदिका मेल जान पड़े तो उसको वा जुदे जुदे केरटके सोनेको शुद्ध करनेकेलिए, जिस केरटका सोना हो, उसमें नीचेके कोष्ठकमें लिखे हिसाबसे चांदी और मिलाते हैं।

| २२केरटके | १ तोले सोनेमें | ३२ माशा | चांदी मिलाओ |
|---|---|---|---|
| २० | ” | २८ | ” |
| १८ | ” | २४ | ” |
| १५ | ” | १८ | ” |
| १३ | ” | १४ | ” |
| १२ | ” | १२ | ” |
| १० | ” | ८ | ” |
| ९ | ” | ६ | ” |
| ८ | ” | ४ | ” |
| ७ | ” | २ | ” |

अर्थात् बट्टेके सोनेमें जितने भाग शुद्ध सोना जान पड़े उससे तिगुना बट्टा होना चाहिये। यदि कम हो तो बट्टेके भागको पूरा करनेकेलिए चांदी गलाकर मिलाते हैं। मानलो कि १८ केरटका सोना शुद्ध करना है। १८ केरटके सोनेमें ६ भाग बट्टा और १८ भाग शुद्ध सोना होता है। इस हिसाबसे १८ केरटके १ तोले सोनेमें ९ माशे शुद्ध सोना और ३ माशे बट्टा है। इसको शुद्ध करनेकेलिए सोनेके भागसे तीन गुना बट्टा करना है, तो ९ × ३ = २७ माशे बट्टा चाहिये जिसमें तीन माशे तो सोनेमें पहिलेसे ही है, इसलिए २४ माशे चांदी और मिलानेसे उस सोनेमें शुद्ध सोना ९ माशे और बट्टा २७ माशे हो जाता है।

सोनेमें चांदी मिलानेकेलिए सोना और चांदी दोनोंको घरियामें रख अग्निमें चक्कर खाकर एक हो जानेतक गलाते हैं और गल चुकनेपर घरियाको चीमटे वा संडासीसे पकड़कर ऊंचेसे पानीके पात्रमें उंडेलते हैं कि जिससे उस धातु-मेलके बहुत छोटे छोटे कण हो जाते हैं। इन कण वा रवोंको इकट्ठा कर ऐसी आतशी शीशीमें भरते हैं कि जिसमें जस्तेके अंश न हों, और ऊपरसे (शोरेका तेज़ाब) जिसमें दुगना पानी मिला हुआ हो शीशीमें भरते हैं और कुछ घंटोंतक रख छोड़ते हैं, जिसके पीछे तीसरी अध्यायमें लिखी रीतिसे शीशीको पानी वा बालूमें रखकर धातुको नीचे बेठाते हैं। जब जाना कि धातु नीचे बेठ गई तब तेज़ाबको दूसरे पात्रमें नितार लेते हैं। शीशी-में नीचे बची हुई गादमें फिर ऊपर कहे तेज़ाबकी मिलावटको मिलाकर उसी रीतिसे अग्निपर गरम करते हैं और तेजाबको नितार लेते हैं। इस प्रकार तेज़ाबका मिलाना, गरम करना, नितारना, कई समय करते हैं। जब यह जान पड़ता है कि सोनेमेंकी सब धातु तेज़ाबमें गलकर निकल गई और सोनेपर तेज़ाबका कुछ असर नहीं होता उस समय गादको उष्ण जलसे धोकर और घरियामें रखकर गलानेसे शुद्ध सोना प्राप्त करते हैं। नितरे हुए तेज़ाबसे चांदी तांबा आदि धातुओं-को तीसरी अध्यायमें लिखा हुई रीतिसे जुदा कर लेते हैं।

---

## बर्गसनका स्रजनात्मक विकास

(ले० गुलाब राय एम०. ए०.)

यंत्र प्रकारवाद और प्रयोजनवाद दोनोंमें ही एकसे दोष हैं। दोनों के ही अनुसार काल कुछ नहीं रहता। जबतक परिवर्तनमें कोई नई बात पैदा न हो, तबतक वह सच्चा परिवर्तन ही नहीं और जब परिवर्तन नहीं, तब काल ही क्या? उस कालसे क्या लाभ, जो वस्तुपर अपना चिन्ह नहीं छोड़ता? इन दोनों ही कल्पनाओंके अनुसार भूत और वर्तमानमें कुछ भेद नहीं। एक कल्पनाके अनुसार वर्तमान भूतका रूपांतर है और दूसरीके हिसाबसे वर्तमान भविष्यतका रुपान्तर। एक कल्पना दूसरीका ठीक विपर्यय है। दोनोंके ही अनुसार कोई नई बात नहीं होती। यंत्र प्रकारवादमें सब बातोंके पर्याप्त कारण भूत-कालमें मौजूद हैं और प्रयोजनवादके अनुसार सब कारणोंकी ईश्वरमें स्थिति है। कूकी हुई घड़ीकी कूकके क्रमशः खुलते रहनेको विकास नहीं कहते। जो वस्तु पहिलेसे ही वर्तमान है उसके दुहरानेसे ही क्या लाभ?

उपर्युक्त समालोचना केवल अभावात्मक न समझी जावे। पाठकोंको इससे यह अवश्य पता चल गया होगा, कि बर्गसनके मतसे सच्चे विका-सकेलिए किन किन बातोंकी आवश्यकता है? यंत्र प्रकारिक कल्पनाओंपर विचार करते हुए यह दिखाया गया था कि तेज अथवा अन्य प्रा-कृतिक वाह्य कारणोंको विकासका प्रेरक नहीं मान सकते। विकासकी प्रेरणा भीतरसे ही होनी चाहिये। उसीके साथ आकस्मिकतामें

असंयोगताकी खराबी दिखाई गई थी। फिर विकाशमें किन कारणोंको मानना चाहिये। यह कारण आन्तरिक प्रेरकके स्वार्थ और आवश्यकताओंपर निर्भर हैं। समालोचनाके अन्तमें यह भी बताया गया था कि विकासमें ऐसे कालके माननेकी अवश्यकता है कि जो पिछलेको साथ लिये सदा आगेको बढ़ता रहे और वस्तुओंपर अपने चिन्ह छोड़ता रहे। इस सबका अभिप्राय यह है कि पिछलेकी लौट फेरको ही परिवर्तन नहीं कहते, किन्तु सच्चे परिवर्तन या विकासमें कुछ नई उत्पत्ति अवश्य होनी चाहिये। यही स्रजनात्मक विकास है।

इस नवीन उत्पत्तिका सम्बन्ध भूतसे अवश्य होगा किंतु उसके होनेके पूर्व भूतके आधारपर उसका अनुमान नहीं हो सकता। वर्गसन साहिब एक प्रकारकी लगातार स्वतः सृष्टि मानते हैं, पर यह न समझना चाहिये कि वह किसी जड़ पदार्थकी स्वतः सृष्टि मानते हैं जैसा कि आगे देखनेसे विदित होगा। उनके मतसे स्वतः सृष्टिका विषय जीवनप्रवाह है।

हमारी चेतनाके विकासमें ऊपरके सब विचार घट जाते हैं। हमारा मानसिक विकास हमारी आत्माकी आन्तरिक प्रेरणासे ही होता है। कालका भी प्रभाव हमारी चेतनामें पूरा पूरा दिखाई पड़ता है। हम कलके विचारोंको आजके विचार नहीं कर सकते। उनपरसे समयकी रेखाएँ मिट नहीं सकती। हमारे कलके विचार आज स्मृति रूप ही होकर लौटेंगे। प्राकृतिक पदार्थोंमें समयका भेद इतनी स्पष्टतापूर्वक नहीं दिखाई पड़ता, पर हमारी चेतनामें सच्चे परिवर्तन होते रहते हैं। हम जो कल थे, वह आज नहीं और जो आज हैं, सो कल नहीं होंगे। सच्ची स्वतः सृष्टि हमारे मानसिक संसारमें ही होती रहती है। हमारे आजके विचारोंकी व्याख्या कलके विचारोंसे हो सकती है। कल और आजके विचारोंमें पूर्वापर सम्बन्ध है, लेकिन कलके विचारोंसे यह अनुमान नहीं हो सकता था कि हमारे आजके विचार क्या होंगे। इसीको नवीनता कहते हैं।

वर्गसनके मतसे सारे संसारका विकास चेतनाके विकासकी भांति हो रहा है। अब यह प्रश्न उठता है, कि विकासका आधार क्या है? अर्थात् किस चीज़का विकास हो सकता है? बर्गसन जीवनको ( life ) ही संसारमें मूल वस्तु मानते हैं। जीवन कोई सांकेतिक ( symbolised) पदार्थ नहीं है। सारा स्थावर जंगमात्मक संसार जीवनका ही प्रसार है। चेतना भी जीवनका ही रूपान्तर है। जड़ भी जीवनका ही परिणाम है। जड़ तमोगुणात्मक है। जड़का धर्म गतिका अवरोध है। जब कोई जीवन नष्ट हो जाता है, तो उसकी गति स्थिरताको प्राप्त हो जाती है। फिर वही गतिका अवरोधक बन जाता है। जैसे अग्निसे धुआं अथवा राख उत्पन्न हो अग्निके तेजको रोकनेवाली बन जाती है। वैसे ही जीवनसे उत्पन्न हुई जड़ सामग्री जीवनकी गतिको रोकनेवाली बन जाती है। इसी प्रकार सदा जीवन-तरङ्ग उठती रहती है, और शान्त हो होकर जड़ सामग्रीको बनाती रहती है। जैसे बारूदकी बनी हुई छछूंदर ऊपर जाते हुए धुआं भी बनाती जाती है; वैसे ही जीवन तरंग ऊपर जाती हुई तमोगुणी सृष्टिको भी उत्पन्न करती रहती हैं। इन तरंगोंके केन्द्रको ही वर्गसनके मतसे ईश्वर समझना चाहिये। कोई इस मतकी वेदान्तसे समानता न करने लग जावे, क्योंकि वर्गसनके मतसे ईश्वर परिवर्तनशील और विकारी है*। वर्गसन अभी जीवित हैं। शायद वह अपना मत पलट दें और पूर्णतामें मानने लग जावें। कुछ भी हो, वह संसारमें चेतनताको तो मानते ही हैं।

वर्गसनके मतसे जीवन-प्रवाह संकल्पात्मक है। इसकी वास्तविक अवस्था बुद्धिद्वारा नहीं

* "God, thus defined, has nothing of the already made; He is the unceasng life, action and freedom."

जानी जा सकती, क्योंकि बुद्धि तो जीवनका एक अंश ही है। हम अपने ज्ञान द्वारा सत्ताकी केवल तसवीर ही ले सकते हैं, और तसवीर और असल-में बहुत अंतर होता है। जीवनकी वास्तविक अवस्थाको हम प्रतिभा ( Intuition ) द्वारा जान सकते हैं। इस बातमें बर्गसन साहिबका मत वेदान्तसे मिलता है। वेदान्ती लोग भी अनुभवात्मक ज्ञानकी ओर ज़ोर देते हैं। वेदान्तके हिसाब-से हमारा विशेष ज्ञान केवल सांकेतिक है। उसके-द्वारा सत्ताका यथार्थ स्वरूप नहीं जान सकते। ज्ञान विद्यामें ( Epistomology ) इनका मत वेदान्तसे समानता रखता है। किंतु सत्ता शास्त्रमें ( Ontology ) वेदांत और बर्गसनके मतमें बड़ा भेद है। वेदान्ती परिवर्तनोंको भ्रमात्मक समझते हैं और बर्गसनके मतमें यही सत्ताका वास्तविक स्वरूप है। बर्गसन साहिबके जीवन प्रवाहके मुख्य लक्षण, निरन्तर संकल्प, निरन्तर क्रिया, निरन्तर उद्योग और निरन्तर उत्पादन हैं।

जैसा कि पहिले कहा गया है कि जड़ीभूत जीवनतरंग नई तरंगोंके आगे बढ़नेमें रुकावट डालती है, वैसे ही नई तरंगें नवीन उत्पत्तिका उद्योग तो करती रहती हैं, पर उनको इस कार्यमें पूरी सफलता प्राप्त नहीं होती है। इस रुकावटके कारण इन तरंगोंमें विभाग हो जाता है और जिस प्रकार रेतके आ जानेसे जलका प्रवाह कई ओर विभक्त हो जाता है, उसी तरह जड़की स्थितिसे जीवन प्रवाह भी भिन्न भिन्न दिशाओंमें होने लगता है। इस प्रवाहकी तीन मुख्य दिशाएं हैं। एक प्रवाह तो वनस्पतिकी ओर झुका, दूसरा पशु-सृष्टिकी ओर गया और तीसरेका अंत मनुष्योंमें हो गया। और भी ऐसे ही प्रवाहोंका होना या भविष्यतमें हो जाना सम्भव है। इन तीनों सृष्टियों-के भिन्न भिन्न गुण हैं। वनस्पतियोंमें केवल बढ़ना और शक्तिका संग्रह करना है। उनमें गति नहीं है। इसीसे उनमें चेतनता (Conciousness) भी नहीं है, क्योंकि बर्गसनके मतसे चेतनताका धर्म केवल गतिका क्रम निश्चित करना है। वनस्पति-संसारमें जीवन-प्रवाह जड़के वशमें रहता है। पहिले जीवन-प्रवाह जड़के साथ ही रह कर काम करना चाहता है फिर उससे ऊंचा उठ जाता है और जड़को भी अपने गुण दे देता है। जब तक जड़के वश रहता है तबतक स्वतंत्रताका अभाव रहता है। जैसे जैसे जीवन-प्रवाह जड़पर अपना आधिपत्य जमाता जाता है, वैसे ही, अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करता जाता है। बर्गसन कहते हैं कि व्याख्यान दाता लोग पहिले पहिल तो अपने भाव श्रोताओंके भावमें मिला देते हैं, फिर श्रोता-ओंको अपनी वक्तृता द्वारा वशमें कर उनके भावों को अपनेमें मिला लेते हैं। इसी प्रकार पहिले तो जीवन-प्रवाह जड़के वश हो जाता है और अन्तमें विजय प्राप्त कर जड़को अपने वशमें कर उसको अपने गुण दे देता है।

पहिली अवस्थामें केवल शक्तिका संग्रह होता है। वनस्पतियोंमें चारों ओरसे शक्ति संग्रह करने-की ताक़त है, पर अचल होनेके कारण शक्तिको ख़र्च नहीं करती हैं। वनस्पति संसार शक्तिको केवल इकट्ठा ही नहीं वरन् उसको अपनेमें जमा भी रखता है। पशु और मनुष्य वनस्पतियोंद्वारा इकट्ठीकी हुई शक्तिपर निर्भर रहते हैं। वनस्पति-योंको ऐसी रसायन विद्या याद है कि जिसके-द्वारा वे निर्जीव पदार्थोंमेंसे जीवन सामग्री बना सकती हैं। समस्त चर जगतको अपनी खुराक़के-लिए वनस्पतियोंपर निर्भर रहना पड़ता है। पशु और मनुष्य शक्तिका ख़र्च करना जानते हैं। किन्तु पशु और मनुष्योंके शक्तिके ख़र्च करनेमें भेद है। पशुओंमें एक प्रकारकी सहज क्रिया शक्ति होती है,जिसे इन्सटिंक्ट् (Instinct) कहते हैं। उसके द्वारा वे बिना विचारके ही अपनी शक्तिका उचित व्यव-हार कर लेते हैं। उनकेलिए केवल एक ही रास्ता है और वे उसपर बिना संकोच चले जाते हैं। इसी कारण पशुओंका नाड़ी-संस्थान ( Nervous system ) मनुष्योंकासा पेचीदा नहीं होता। मनु-

थ्यकेलिए बहुतसे रास्ते होते हैं। उसको यह सोचना पड़ता है कि किस रास्ते चलूं और किस प्रकार अपनी शक्ति खर्च करूं? यहींपर बुद्धिका काम आ जाता है। ये जीवन प्रवाहकी तीनों पृथक् पृथक् दिशाएं हैं। ये प्रवृत्तियां एक दूसरेकी फल रूप नहीं हैं। पहिले लोगोंकी यह भूल थी कि वे इन प्रवृत्तियोंमें कार्य्य कारण सम्बन्ध मानते थे। ये प्रवृत्तियां कभी कभी एक दूसरेके अन्तर्गत तो हो जाती हैं, किन्तु एक दूसरेकी परिणाम नहीं हैं। जीवन प्रवाहमें ये सब प्रवृत्तियां विद्यमान हैं। रुकावट मिलनेके कारण वे इन्द्र धनुषके रंगोंकी भांति अलग अलग हो जाती हैं। जैसे बालकमें सब ही प्रवृत्तियां होती हैं, लेकिन कोई बालक किसी ओर झुक जाता है और कोई किसी ओर, वैसे ही कोई जीवन तरंग वनस्पति संसारमें ही खतम हो जाती है, कोई मनुष्यतक पहुंच जाती है और संभव है कि कोई और भी आगे चली जावे।

इस मतके गुण दोष किसी और लेखमें दिखाये जायंगे, किन्तु इस मतसे यह अवश्य सिद्ध होता है, कि जीवनका मुख्य उद्देश्य क्रिया और उद्योग है। अतः हम सब लोगोंको स्वतंत्रतापूर्वक जीवनका लक्ष्य पूरा करनेका यत्न करना चाहिये।

---

## खाद्य

### २-भोजनका परिमाण

[ ले० डा. वी. के. मित्र, एल. एम. एस. ]

देश, काल, पात्रादिके अनुसार भिन्न भिन्न अवस्थाओंमें भिन्न भिन्न प्रकार तथा परिमाणमें आहार किया जाता है। यथा शीतप्रधान देशोंमें मनुष्य मांस तथा स्नेह जातीय पदार्थोंका अधिक सेवन करते हैं और इनका परिमाण बहुधा शरीरके प्रयोजनसे भी अधिक होता है। शैशव तथा किशोरावस्थामें शरीरकी उत्तरोत्तर वृद्धि होनेके कारण तथा प्राकृतिक चाञ्चल्य और अधिक पेशी संचालनके हेतु इस अवस्थामें अपेक्षतया अधिक भोज्य पदार्थोंकी आवश्यकता होती है। अतएव इस समयमें आहारके विषयमें अधिक रोक टोक करना अच्छा नहीं, तथापि प्रत्येक अवस्थाकेलिए उचित नियम पालन करने चाहिएँ। २५ वर्षतक प्रायः वृद्धि समाप्त हो चुकती है, यद्यपि पेशी मण्डली तथा शरीरका मेद ४० वर्षतक बढ़ सकता है। अतएव इस समयसे खान पानके विषयमें संयम आरम्भ करना चाहिए। इसके अनन्तर शरीरकी पौष्टिक क्रियामें शनैः शनैः अवनति होती है, इसलिए इस अवस्थामें आहारके परिमाणको निर्दिष्ट सीमासे बढ़ने नहीं देना चाहिए। ४० वर्षके अनन्तर जो किंचित् शरीरकी स्थूलताकी वृद्धि देखनेमें आती है, वह केवल अधिक मेदके हेतु होती है और स्वास्थ्यकेलिए हानिकारक होती है।

पुरुष स्त्रियोंसे कुछ ($\frac{1}{10}$ भाग) अधिक परिमाणमें खाते हैं और गर्भवती स्त्रियाँ साधारणावस्थासे कुछ अधिक खाती हैं। प्रत्युत प्रथम गर्भसे ही उनके शरीरमें कुछ स्थूलता आ जाती है। बालक स्नेहादिको उत्तम रूपसे परिपाक न करनेके कारण मिष्टान्नोंके भक्त होते हैं, जो कि पेशी संचालनकेलिए शक्ति उत्पादन करते हैं। स्तनंधय* शिशुओंके शरीर अति शीघ्र बढ़नेके कारण उनको तरलावस्थामें भोज्य पदार्थ दिया जाता है, जिसमें स्नेहादि अति सूक्ष्म कणोंमें विभक्त रहनेके कारण यह उनके अन्त्रोंद्वारा सुगमतासे शोषण हो सकते हैं।

भिन्न भिन्न प्रकारके कार्य्योंमें परिश्रमके अनुसार खाद्य द्रव्योंके परिमाणमें न्यूनाधिकता होती है, अतएव सबकेलिए आहारकी एक मात्रा होनी असम्भव है। शरीर-विज्ञानमें शरीरकी अंगारजनक तथा शोरकजन जातीय मलोंके परि-

* दूध पीनेवाला बच्चा

माणको ज्ञातकरके शरीरके उपयोगी कारबन और नाइट्रोजनका परिमाण निर्धारित किया है। परन्तु यह तीन भिन्न भिन्न जातीय पदार्थोंमेंसे (यथा आमिष,स्नेह, तथा श्वेतसार वा शर्करा) प्राप्त होते हैं। अतएव इनका अनुपात निर्णय करनेका उत्तम उपाय मातृ-दुग्धका विश्लेषण तथा भिन्न भिन्न अवस्थाके लोगोंके आहार द्रव्योंका पर्यवेक्षण है।

शिशुओंका खाद्य मातृ-स्तन्य है, जो कि उनको प्रायः ६ मासतक मिलना चाहिए। इस समयमें दुग्धके अतिरिक्त और किसी प्रकारका खाद्य यथा श्वेतसार वर्गीय पदार्थ उनको न देने चाहिएँ। यदि मातृस्तन्य न मिल सके तो धात्री नियुक्त करनी चाहिए. परन्तु यह भी न मिलनेपर शिशुका, गोदुग्ध देकर, पालन किया जा सकता है।

गोदुग्धमें आमिष जातीय पदार्थ मनुष्य दुग्धसे द्विगुण और शर्करा जातीय पदार्थ कुछ (तृतीयांश) कम होते हैं। अतएव गोदुग्ध देनेमें इसको प्रायः समान भाग जल मिश्रित करके $\frac{1}{2}$ घंटेतक हलकी आंचपर उबालना चाहिए, जिससे उसके जीवाणु मर जाते हैं और जल भी कुछ उड़ जाता है। जल मिलानेसे जो शर्करा और स्नेह कम हो जाते हैं वह ऊपरसे मिलाने चाहिएँ, जिसकी रीति नीचे दी जाती है।

पावभर दूध और पावभर जल मिलाकर हलकी आंचपर उबालकर जब ७ छटांक रह जाय उतार लें। ठण्डे होनेपर $\frac{1}{2}$ छटांक "क्रीम" (अर्थात् अधिक स्नेहयुक्त दुग्ध जो गौशालाओंमें यन्त्रद्वारा बनाया जाता है), १ तोला दुग्धशर्करा (यदि यह न मिल सके तो साधारण शरकरा भी दी जा सकती है), और $\frac{1}{2}$ से १ छटांकतक चूनेका पानी (जैसा भी आवश्यक हो) सब मिलाकर प्रायः आधसेर बना लिया जाय। यदि क्रीम न भी मिले तो बहुत हानि नहीं।

यह दूध १ से २ मासतकके शिशुके दैनिक व्यवहारकेलिए पर्याप्त है। अतएव इसको आधा प्रातःकाल और आधा तीसरे पहर बनाना चाहिए। ग्रीष्मकालमें तीनबार यह दूध बनाना समीचीन है। अति शिशुको (१ से २ मास) २,२ घंटेके अनन्तर दिनरातमें प्रायः १० बार दूध पिलाना चाहिए। इसके अनन्तर ३,३ और फिर ४,४ घंटेमें दूध देना चाहिए। ८ मासके अनन्तर शिशुको थोड़ा थोड़ा करके साधारण खाद्य द्रव्य आरम्भ करना उचित है।

स्तनंधय शिशुओंका खाद्य परिमाण यह है—

| | | |
|---|---|---|
| १ से २ मासतक | दैनिक प्रायः | $\frac{1}{2}$ आधसेर |
| २ से ४ मासतक | ” ” | १० छटांक |
| ४ से ६ मासतक | ” ” | १४ छटांक |
| ६ से १२ मासतक | ” ” | १ सेर |

भारतवर्षमें मातृदुग्धके उपादान, जैसा कि कलकत्ता मेडीकल कालेजके परीक्षागारमें डाक्टर लाल मोहनघोषद्वारा किये हुए विश्लेषणसे ज्ञात हुआ है, नीचे दिखाये जाते हैं।

आमिषादि प्रति शत प्रायः......१·२
शर्करादि ” ” ”......५·६
स्नेह ” ” ”......२·८
लवणादि ” ” ”......२·४
जल ” ” ”......शेष

इस हिसाबसे ६ मासके शिशुको, जिसका भार प्रायः १२ या १३ सेर होता है, दिनमें ६ माशे ($\frac{3}{4}$ तो०) आमिष जातीय पदार्थ २० माशे, (प्रायः २ तोले) स्नेह जातीय पदार्थ, और ४५ माशे (प्रायः ४ तोला) शर्करा जातीय पदार्थ मिलते हैं। अतएव शिशुओंके खाद्यमें शर्करा जातीय पदार्थ आमिष जातीय पदार्थोंसे पंचगुने और स्नेह जातीय पदार्थोंसे दुगुनेसे किञ्चत् अधिक हैं।

युवावस्थामें भी आमिष जातीय पदार्थोंका

परिमाण इस अनुपातसे अधिक न होना चाहिए। स्नेहका परिमाण इससे कम होना चाहिए और उसके स्थानमें कुछ श्वेतसार जातीय पदार्थका बढ़ाना समीचीन है।

अमेरिकानिवासी आचार्य्य चिटेंडनने बहुत परीक्षाओंके अनन्तर साधारण मनुष्यकेलिए जिसका भार $१\frac{१}{२}$ मन वा ६० सेर हो निम्न-लिखित खाद्य आवश्यक समझे हैं।

आमिषजातीय पदार्थ ६० माशे
स्नेहजातीय पदार्थ ५० माशे
श्वेतसार जातीय पदार्थ ४०० माशे

इस हिसाबसे प्रतिसेर शरीर भारकेलिए १ माशा आमिष तथा स्नेह और ६ माशा श्वेतसार वर्गीय पदार्थ मिलने चाहिएँ।

परन्तु योरुपके वैज्ञानिकोंकी खाद्य तालिका इससे भिन्न है। वह आमिष तथा स्नेह वर्गीय पदार्थोंकेलिए इससे द्विगुण मात्रा विधान करते हैं। इसका कारण यह हो सकता है कि योरुपमें अमेरीका तथा भारतसे अधिक शीत होता है, परन्तु अधिकतर इसके हेतु अभ्यास और अज्ञान हैं। हम भारतवर्षमें आचार्य्य चिटेंडनके ही विधानको शिरोधार्य करते हैं और उसपर अपनी आहार तालिका स्थिर करते हैं।

कलकत्ता निवासी डाक्टर कार्तिकचन्द्र बोस-ने किसी समय भारतके भिन्न भिन्न श्रेणीके लोगों-के आहार-द्रव्योंकी तालिका तथा उनका रासा-यनिक उपकरण प्रकाशित किया था। वह नीचे दिखाए जाते हैं।

(क) कृषक

| | |
|---|---|
| चावल १० छटांक। | आमिष ५० माशा। |
| दाल आधी ($\frac{१}{२}$) छटांक। | स्नेह २५ माशा। |
| मत्स्य $\frac{१}{२}$ छटांक। | श्वेत ४७५ माशा। |

तरकारी पर्याप्त, तैलादि अल्प परिमाण।

(ख) मध्यवित्तका निम्नास्तर

| | |
|---|---|
| चावल ८ छटांक। दाल और मछली प्रत्येक आधी छटांक। | आमिष ५० माशे। |
| दुग्ध २ छटांक। | स्नेह ५० माशे। |
| तैलादि आधी छटांक। | श्वेतसार ४०० माशे। |

(ग) मध्यवित्तका उच्चास्तर

| | |
|---|---|
| चावल तथा आटा प्रत्येक ३ छ०। दाल $\frac{१}{२}$ छ०। | आमिष ६० माशे। |
| मत्स्य १ छ०। दुग्ध ४ छ०। | स्नेह ६० माशे। |
| घृत तैलादि १ छटांक। शाकादि प्रचुर परिमाण। | श्वेतसार ३०० माशे। |

इसके अतिरिक्त मांस, अण्डे मिष्टान्नादि भी।

(घ) मध्यवित्त—(विद्यार्थी)

| | |
|---|---|
| चावल ६ से ८ छटांक। दाल $\frac{१}{२}$ से १ छ०। मत्स्य | आ० ६० से ७० माशे। |
| १ छ०। दुग्ध २ छ०। घृत | स्नेह ७० से ६० माशे। |
| तैलादि १ से $१\frac{१}{२}$ छ०। | श्वेत० ३०० से ५०० |
| शाकादि पर्याप्त, क्वचित मांस, अंडे मिष्टानादि भी। | माशे तक। |

(३) उच्च श्रेणी (धनवान)

| | |
|---|---|
| चावल २ छ०, आटा ३ छ०, दाल आधी छ०, मत्स्य | आमिष ६० माशे। |
| २ छ०, दुग्ध ८ छ०, घृत २ छ०, तैल $\frac{१}{२}$ छ०, इसके | स्नेह १५० माशे। |
| अतिरिक्त मांस, अण्डे मिष्टान्नादि भी होते हैं। | श्वेत ३०० माशे। |

इन तालिकाओंको देखकर विदित होगा कि क, ख, ग, आचार्य चिटेंडनके अनुसार ही हैं—केवल घ कुछ अधिक है। यही कारण है कि हमारे उच्च श्रेणीके मनुष्य तदाकार मेदोराशिवत प्रतीत

होते हैं और उनके शरीरको व्याधि मन्दिर कहना अत्युक्ति न होगी।

खाद्य द्रव्यकी अधिकतासे जो व्याधियां उत्पन्न होती हैं वे यह हैं—

(क) स्थूलता—यह अधिक होनेसे व्याधिकी अवस्थातक पहुंच जाती है। इससे कायिक परिश्रम नहीं कर सकते, और मनुष्यके हृत्पिण्डपर बहुत मेद संचय होनेके कारण, जीर्ण ज्वरोंमें इनके जीवनकी बहुतसी शंका रहती है। इस रोगकी चिकित्सा भिन्न भिन्न रीतिसे होती है परन्तु आहारका संयम और साथ ही कायिक परिश्रम इसकेलिए प्रशस्त हैं।

(ख) मधुमेह-यह प्रधानतः उच्चश्रेणीमें होता है, जिनको अधिक खाद्य द्रव्य मिलनेके साथ ही अधिक मस्तिष्क चालना करनी पड़ती है और कायिक परिश्रमकेलिए अवसर नहीं मिलता। इनकी भी चिकित्सा पूर्वोक्त रीतिपर होनी चाहिये।

(ग) गौट वा गठिया-यह इस देशमें विरल है। योरुपके उच्चश्रेणीके लोगोंमें मांस और मद्यका अधिक परिमाणमें व्यवहार इसका प्रधान कारण है।

(घ) मूत्रसैकत (ग्रेवल)—इसके भी कारण पूर्वोक्तके सदृश हैं। परन्तु चूर्ण विशिष्ट जलके प्रभावसे भी यह रोग पंजाबमें निम्नास्तरके लोगोंमें भी देखनेमें आता है।

(ङ) अजीर्ण-इसके कारण भिन्न भिन्न होनेपर भी प्रधान कारण अति भोजन है। हमारे खाद्य द्रव्योंमें बहुधा पदार्थ घृत-पक्व होनेके कारणसे ही अजीर्णका सूत्रपात्र होता है। अधिक शर्करा तथा श्वेतसार जातीय पदार्थोंसे भी अम्लशूल होता है।

साधारण व्याधियोंमें भी खाद्य द्रव्योंकी मात्रा तथा प्रकारमें विभिन्नता होनी चाहिये। भिन्न भिन्न रोगोंमें भिन्न प्रकारके खाद्य द्रव्योंकी व्यवस्था की जाती है। जब कोई रोग प्रबल होता है तो साधारणतः परिपाकयन्त्रोंकी क्रियाएं भी अवसाद-ग्रस्त हो जाती हैं। इस समय अति लघु पथ्य देना उचित है। विशेषतः ज्वरोंमें खाद्य द्रव्य तरल होने चाहिएं। यथा-दुग्ध, तक्र, दालका पानी आदि। आमिष भोजियोंके खाद्य परिवर्त्तनकेलिए हड्डियोंका यूष भी प्रशस्त है, कारण इसके अन्दर एक भिन्न प्रकारका आमिष जातीय पदार्थ होता है जो शरीरकी पौष्टिक क्रिया न करनेपर भी ज्वरमें धातुक्षयको निवारण करता है। परन्तु ऐसे पदार्थ रोगीको सम्पूर्णतासे आहारके स्थानमें देना अनुचित है। यह दुग्ध आदिके अतिरिक्त मुख रोचक रूपसे देना चाहिए। विलायती टीनमें आए हुए एसन्स आफ़ चिकन आदि पदार्थोंमें खाद्य द्रव्य अति अल्प है वह केवल एक प्रकारके उत्तेजक हैं। रोगकी अवस्थामें रौमिट यूष एक प्रबल उत्तेजक तथा पुष्टिकर खाद्य है। जो कि कीमाको नींबू निचोड़ यन्त्रमें दबाकर यथा समय बनाया जा सकता है। वालन्टाइन्स मीट जूस भी इसी प्रकारका पदार्थ है। अति क्षीणावस्थामें कच्चा अण्डा और ब्राण्डी मिलाकर एक उत्तेजक तथा पुष्टिकर पथ्य बनाया जा सकता है। साधारण ज्वरोंमें नींबू आदि जैव अम्ल अत्यन्त उपयोगी होते हैं और इस समय जलका अवरोध भी उचित नहीं।

बहुधा मनुष्य दुग्धको उत्तम रीतिसे परिपाक नहीं कर सकते। उनको दुग्धके साथ किसी प्रकारका लघु-अम्ल-जातीय पदार्थ यथा-नर्म चावल, साबूदाना, आरारोट आदि मिलाकर थोड़े थोड़े परिमाणमें देना चाहिए। इन अवस्थाओंमें व्यञ्जर्सफूड भी उपयोगी है। क्वचित शिशुओंमें भी दुग्ध नहीं पचता और खट्टे वमन तथा अम्ल-गन्धके भेद होते हैं। ऐसी अवस्थामें दुग्धका दशांश चूनेका पानी वा प्रति छटांक दुग्धमें १रत्ती सोडा बाइकार या सोडा सिट्रेट मिलाकर देना उचित है। कोष्ठ बद्धतामें शाकादि तथा मोटे आटेका व्यवहार प्रशस्त है। आमवातादि (गठिया) रोगमें मांस वर्गीय पदार्थ तथा मिष्ट और अम्ल-जनक पदार्थ वर्जनीय हैं।

अजीर्ण रोगमें पुराना चावल अति प्रशस्त है, कारण इसके अन्दर काष्ठवत् पदार्थ अति अल्प परिमाणमें होता है और इसमें आमिष जातीय पदार्थ अत्यन्त अल्प होनेपर भी (प्रतिशत ६ भाग) यह सुपाच्य होनेके कारण जापानी जैसे बलवान पुरुषोंका जातीय आहार है। शिशु घृतपक्व द्रव्योंका सुगमतासे पाचन नहीं कर सकते। अजीर्ण रोगीको भी कभी तली हुई चीजें नहीं देनी चाहिएँ, कारण आमाशयका स्नेहादिपर कोई भी प्रभाव नहीं होता।

ऋतु भेदसे भोजनादिकके परिवर्तनार्थ चरकादि ऋषियोंने बहुधा नियम लिखे हैं, जिसके विषयमें आधुनिक शास्त्रोंमें कोई गवेषणा नहीं की, तथापि इसमें कुछ अच्छे विषय मिलेंगे। किन्तु तिथि भेदसे भोज्य पदार्थोंमें क्या क्या परिवर्तन होता है यह विषय आधुनिक शास्त्रोंके अधिकारसे बाहर है। इस विषयमें केवल यह कहा जा सकता है कि उसके पालन करनेसे भोजन, पदार्थोंका परिवर्तन होनेसे स्वास्थ्यकर होते हैं। दिन भरमें दो बार आहार करना प्रशस्त है। परन्तु इसके अतिरिक्त लघु भोजन भी किया जा सकता है, विशेषतः बालकोंको जिनको ४ घंटेके अनन्तर खिलाना चाहिए। छोटे बालक मिष्टान्न अधिक पसंद करते हैं। जिसके देनेमें अधिक हानि नहीं, कारण पेशिओंकी चालनाकेलिए शर्करादि अत्यन्त उपयोगी पदार्थ हैं। परन्तु अधिक शर्करादि वा तैलादिसे यकृतकी बीमारी हो जाती है। स्तनंधय शिशुओंको दो तीन घण्टेके अनन्तर भोजन देना चाहिये सम्पूर्णावस्थाके पुरुष तथा वृद्धोंको कभी कभी एक समयका भोजन त्याग करनेसे आमाशयादि यन्त्रोंको विश्राम मिलता है।

भोजनके साथमें अधिक परिमाणमें जल न पीना चाहिए कारण इससे आमाशयस्थ पाचक निर्यास जलसे मिलकर क्षीणवीर्य्य हो जाता है। यदि भोजनसे पूर्व थोड़ासा जल पिया जाय तो भोजनके समय जलकी आवश्यकता कम रहती है। भोजनके दो वा तीन घण्टेके अनन्तर जल पीनेका समय प्रशस्त है। मनुष्यको छोड़कर और कोई प्राणी जल और खाद्य स्वाभाविक अवस्थामें एक साथ नहीं खाता। अधिक मसालेका व्यवहार होनेके कारण जल पीनेकी भी आवश्यकता होती है।

भोजनके साथ बर्फ़का पानी पीना अतीव अनुचित है। कारण यह आमाशयकी पाचन शक्तिको नष्ट करता है। यदि खाद्य द्रव्योंको खूब चबा कर खाया जाय तो न केवल राल मिश्रित होनेके कारण उनका शीघ्रतया परिपाक होता है प्रत्युत भोजनका स्वाद भी आता है और अति भोजन भी नहीं होने पाता। भोजनके समय किसी प्रकारकी दुश्चिन्ता न होनी चाहिए, कारण उससे परिपाक यन्त्र अवसादग्रस्त हो जाते हैं। इसी मूलपर किसी किसी असभ्य जातिमें दोषीकी दैविक परीक्षाकी जाती है। वह ऐसे पुरुषोंको जिनपर सन्देह होता है 'मन्त्र पूत' खील आदि शुष्क अन्न खाने देते हैं। दोषीके मुंहमें भयके कारण राल निस्सरण न होनेके हेतु वह उनको निगल नहीं सकता।

पाश्चात्य लोग भोजनके समय सपरिवार सम्मिलित होकर आमोद आल्हादके साथ भोजन करते हैं और उसके अनन्तर भी गीतवाद्यादि आनन्द जनक कार्योंमें समय व्यतीत करते हैं। यह प्रथा इस देशमें भी अनुकरणीय है। हमारे देशमें छात्र तथा अन्य लोगोंका भोजनके पश्चात् ही कार्य क्षेत्रमें जाकर कठिन मानसिक परिश्रम करना अत्यंत हानिकर है। बहुधा रोग इसी दोषसे होते हैं। अतएव कामके समयसे कमसेकम १ घंटा पूर्व आहारादि समाप्त करके आधा घंटा विश्रामके अनन्तर धीरे धीरे चलकर कार्यक्षेत्रमें उपस्थित होना सर्वथा उचित है।

# देव या दानव

[ ले० गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस-सी. ]

पृथ्वीपर समय समयपर बड़े बड़े भूधराकार भयानक प्राणी पैदा हो-चुके हैं। इन्हींकी हड्डियां प्रायः मनुष्यों-को धरती खोदनेपर मिला करती हैं, पर वे यह ख़याल किया करते हैं कि यह हड्डियां किसी पुराने युगके मनुष्योंकी होंगी। इससे वे अनुमान कर लेते हैं कि किसी पूर्व युगके मनुष्य कलियुगी मनुष्योंकी अपेक्षा कहीं बड़े डील डौल-के होंगे। कभी कभी यह भी मान लिया जाता है कि यह हड्डियां किसी देव, दानव या राक्षसकी होंगी। संसारके अन्य देशोंमें भी ऐसी हड्डियां पाई गई हैं। पहले वहांके निवासियोंका भी ऐसा ही विश्वास था, जैसा कि भारतवर्षवालोंका है, पर जैसे जैसे विज्ञानकी उन्नति होती गई, इन हड्डियों-ने भी अपनी सारी कथा कह सुनाई और विज्ञानके मंत्रकी शक्तिसे अपने पूर्व रूपसे वैज्ञानिकोंको दर्शन दिये। पाठको! आपने कभी सुना होगा कि बाज़े सयाने (भूत प्रेतादिको सिद्ध करनेवाले) मर्घटमेंसे एक हड्डी उठाकर उस प्रेतको सिद्ध कर लेते हैं जिसके शरीरकी वह हड्डी हो। वास्तवमें वैसा ही जादू वैज्ञानिकोंने भी कर दिखाया है। कभी कभी धरती खोदते हुए इन्हें एक हड्डी मिली है। उसी अस्थिसे उन्होंने उस जीवके आकार, प्रकृति, आकृति, उसके रहने सहने, चलने फिरने, खाने पीनेके विषयमें सभी बातें विचार करके निकाल ली हैं। ऐसी घटना कई बार हुई है। प्रोफ़ेसर ओविनको न्यूज़ीलेण्डसे एक पक्षीकी टांगकी हड्डी प्राप्त हुई थी। उसीसे उन्होंने उस पक्षीका (Moa मो आ) बहुत हाल जान लिया था। इसका वर्णन हम फिर किसी अवसर पर करेंगे। यहां पर अन्य दो प्राणियोंका वर्णन करना चाहते हैं।

### त्रिश्रृङ्ग या तिसिंघा (Triceratops)

यह प्राणी मध्य युग (Mesozoic) के अन्तमें खड़िका कालमें (Cretaceous) अमेरिकामें विच रते थे। इन प्राणियोंके जो अस्थि-पिंजर (Skeletons) मिले हैं, उनमें तीन ऐसी हड्डियां पाई जाती हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि इनके भेजेमें तीन सींग होते होंगे। रक्षित-सराटोंमें (Stegosaurs) बहुत छोटा भेजा पाया जाता है, पर इन प्राणियोंका भेजा वृहदाकार और अद्भुत होता था। बच्चोंका भेजा छः .फुट और बड़े पशुओंका सात या आठ फुट लाम्बा होता था। दुस्सराटों (Dinasaur) की जातिके ही यह प्राणी होते थे, पर इनकी एक नई जाति शृङ्गीसराट मानी जाती है। इनके अगले पैर पिछले अङ्गोंकी अपेक्षा छोटे होते थे, पर निस्सन्देह यह प्राणी चारों पैरोंसे चलते होंगे। इसकी लम्बाई १६ .फुट, ८ इंच थी। प्रोफ़ेसर मार्शने २५ .फुट-का अन्दाज़ा लगाया था। इनके दांतोंमें दुहरी जड़ें हुआ करती थीं। दो बड़े सींग आंखोंसे ज़रा ऊपरकी तरफ़ हटकर हुआ करते थे और तीसरा सींग नाककी जड़में होता था। इन सींगोंकी सहायतासे यह प्राणी अपने हिंसक शत्रुओंको मार भगाता होगा।

इसका भेजा लम्बोतरा होता था और दिमाग़ बहुत छोटा। भेजेका पिछला हिस्सा उठी हुई महरावको शकलका होता था और हड्डियोंकी गोटसे पीछेकी तरफ़से सुरक्षित रहता था। इस प्रकार जब कभी यह प्राणी अपने शत्रुओंसे लड़ता होगा, तो भेजेका पिछला हिस्सा ढालका काम भी देता होगा, जैसे कि आधुनिक समयमें भैसों और गैढ़ोंका भेजा टक्कर लेनेमें भी काम आता है। जहांपर इस प्राणीकी हड्डियां पाई गई थीं, वहां-पर बहुतसे हड्डियोंके ऐसे टुकड़ भी पाये गये थे, जिनसे प्रतीत होता है कि यह हड्डियां इस प्राणीके शरीरपर जगह जगह, विशेषतः गर्दन और गले-पर, जड़ी हुई होगी, पर अभी इस विषयमें मत भेद है।

जैसे जैसे इस प्राणीका सिर बड़ा, भारी और कवचसे सुरक्षित होता गया, वैसे ही उसका भार

भी बढ़ता गया और उसके सहारनेकेलिए उसकी अगली टांगें छोटी, पर अधिक मोटी और मज़बूत
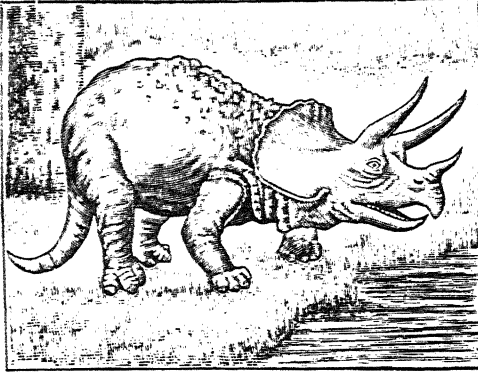
चित्र १

त्रिश्टङ्ग (Triceratops Prorsus)

होती गईं। परिणाम यह हुआ कि सिर बढ़ते बढ़ते इतना भारी होने लगा कि शरीर उसके सहारनेको असमर्थ हो गया और इस जातिका भी नाश हो गया। प्रोफ़ेसर मार्श ने लिखा है कि यदि इस प्राणीकी क़ब्रपर कुतबा लिखा जाय, तो यह होना चाहिये 'मैं और मेरी जाति अति विशेषता प्राप्त करनेमें नष्ट हो गए'। इस प्रकार दुष्सराटोंने लाखों वर्षतक अपने शरीरोंकी काट छांट और सुधार किया, पर यह स्मरण न रखा 'ह्यति सर्वत्र वर्जयेते' और अन्तमें नष्ट हो गये।

इनके केवल भेजोंका ही भार ५६ मनके लगभग था। जो इस प्राणीकी जीवित दशामें आकृति होगी उसका अनुमान अस्थि-पिंजरसे, लगाया गया है और चित्र १ बनाया गया है।

बृहद्पशु (Mega therium)

इस पशुकी लम्बाई अठारह फुटसे भी अधिक थी। इसकी हड्डियां हाथियोंकी हड्डियोंसे भी अधिक मोटी और भारी हैं। इसकी जांघकी हड्डी बड़ेसे बड़े हाथीकी जांघकी हड्डीसे तिगुनी मोटी है। इन हड्डियोंकी परिधि लम्बाईके बराबर ही है। हड्डियोंके आकारसे ही प्रतीत होता है, कि यह पशु बड़ा बलवान होगा। उनकी सतह, उनके दबे हुए या उठे हुए हिस्सोंसे भी जान पड़ता है कि बड़े मोटे और भारी पट्ठे इनपर जड़े हुए होंगे। अस्थि-पिंजरका अगला हिस्सा पतला है, पर पिछला भाग वज़नी और मज़बूत है। पूंछ भी बड़ी मज़बूत और भारी है। शरीरका अगला भाग बहुत ज़ोर करनेके काममें आता होगा और दोनों हाथोंमें (या
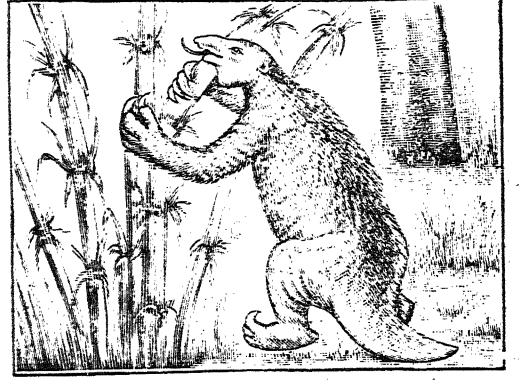
चित्र २

बृहद् पशु (Mega therium Americanum)

अगले पैरोंमें) मज़बूत पंजे लगे हुए होंगे। पहिले कुछ वैज्ञानिकोंका ख़याल था कि इन पंजोंकी सहायतासे यह प्राणी पेड़ोंकी जड़ोंको खोदकर, पेड़ उखाड़ लिया करता होगा और उनकी पत्तियां खा जाता होगा, पर ओवेनका ( Owen ) मत है कि इसके शरीरके अगले भाग इस प्रकार बने हुए हैं कि उनसे बड़ा ज़ोर लगाया जा सकता है, अतएव यह अपने पंजोंसे पेड़ोंको पकड़कर उखाड़ लिया करता होगा। बड़े पेड़ोंको, यदि यह प्राणी न भी उखाड़ सकता होगा, तो भी उनकी निचली टहनी ज़रूर ही तोड़ लिया करता होगा।

इन पशुओंके आगेके जबड़ोंमें दांत नहीं होते थे, पर गोल, चबानेके दांत पांच पांच ऊपरके और चार चार नीचेके जबड़ोंमें हुआ करते थे। यह दांत सातसे नौ इंचतक लम्बे होते थे।

इसके शरीरपर किसी प्रकारकी ढालें नहीं हुआ करती थीं।

जब यह पशु पेड़ोंको उखाड़ता होगा, तब अपने पिछले पैरोंके अन्तके भागों और मोटी पूंछ-से, तिपाईका काम लेता होगा और उनके बल धरतीपर बैठ पेड़ोंके उखाड़नेमें ज़ोर लगाता होगा।

---

## जुनी इण्डियन्सका पुरातन वनस्पति विज्ञान

[ ले० नारायणस्वरूप भार्गव ]

श्रीमती मटिलदा कोक्स स्टीविन्सनने कई वर्षोंतक इन्डियन्सके, विशेषतः न्यूमेज़िको निवासी प्यूबलो (Pueblo) जातियोंके, साहित्यका निरन्तर अध्ययन करनेके बाद जुनी इन्डियन्सके पुरावनस्पति विज्ञानका ( Ethno-botany ) बड़ा रोचक वृत्तान्त लिखा है, जो हालमें ही अमेरिका देशस्थ नृशंसविद्या (Ethnology) परिषद्की ३०वीं वार्षिक रिपोर्टमें प्रकाशित हुआ है।

जुनी लोग पौदोंका ओषधियोंमें कैसे प्रयोग करते हैं, इसका वर्णन करते हुए श्रीमतीजीने लिखा है, कि सम्भवतः चिकित्सा करनेकी परिपाटी मनुष्यकी बुद्धिके विकाश-कालसे भी पुरानी है, क्योंकि बुद्धिहीन पशुओंमें भी यह परिपाटी प्रचलित है। कुत्ते खेतोंमें, या जंगलोंमें उस विशेष घासको तलाश किया करते हैं, जिसका सेवन करके वे अपना इलाज कर लिया करते हैं। [ बिल्लियोंको घास खाते प्रायः देखा होगा]। रीछ अपने बच्चोंके या मित्रोंके घावकी मरहम पट्टी इतनी चतुराई या सावधानीसे किया करते हैं, जितनी योग्यतासे कि आदिम मनुष्य अपनी प्रयोग-सिद्ध औषधोंका उपचार किया करते हैं। आदिम मनुष्य यह नहीं जानता कि उसकी औषधें क्यों रोगोंको शान्त करती हैं। वह केवल इतना ही जानता है कि उनसे रोग शान्त हो जाते हैं। उनका विश्वास है कि रोग किसी न किसीकी खोरसे ( दुष्ट प्रभाव ) हुआ करते हैं। मनुष्य भी अपने भाइयोंपर जादू कर सकता है, जिसका प्रभाव मिटाना केवल पशु-देवताओंके ( अर्थात् वे देवता जो पशुओंकेसे शरीर धारण किये रहते हैं ) ही अधिकारमें है। साधारण मनुष्य केवल दैव-प्राप्त औषधोंका उपचार ही कर सकता है, परन्तु निरी औषधोंसे ही रोगमुक्त हो जाना सम्भव नहीं है। यह बहुत ही ज़रूरी है कि जबतक रोगी ओषधियोंका सेवन करता रहे तबतक उन ओषधियोंके अधिष्ठाता देवताओंकी पूजा होती रहे और उनसे रोगीके आरोग्यकेलिए प्रार्थना की जाय। इडियन्सके चिकित्सा शास्त्रका अदृष्ट-ज्ञानसे बहुत कुछ सम्बन्ध है, क्योंकि इन लोगोंने कई युगोंके अनुभवसे बहुतसे वानस्पत्य औषधोंका उपयोग करना सीख लिया है, यद्यपि न तो आरम्भमें न आधुनिक समयमें ही वे यह जानते हैं कि इन ओषधियोंसे रोग शान्त होते हैं। उनका तो यह अटल विश्वास अभीतक बना हुआ है कि इन औषधोंके अधिष्ठाता देवता ही रोगोंको शान्त करते हैं।

श्रीमती स्टीविन्सनने यह भी दिखलाया है कि जुनी लोगोंके नित्यके जीवनमें पौदोंकी क्या स्थिति है। वे पौदोंको अपनी जातिका एक विशेष भाग समझते हैं, उनको मानते हैं, और यह भी विश्वास रखते हैं कि उनके दीक्षित या अभिमंत्रित (जिनको कि गुप्त रहस्योंमें दीक्षा मिल चुकी है ) भाई उन पौदोंसे बातें कर सकते हैं। पौदे पूजनीय और पूजार्ह माने जाते हैं, क्योंकि उनमेंसे कुछ तारागणोंके रहनेवालोंने पृथ्वीपर डाले, कुछ देवताओंसे प्राप्त हुए, कुछ मनुष्य जातिके हैं, और ये सब पृथ्वी माताकी सन्तान हैं। धार्मिक तथा आर्थिक दृष्टिसे जुनी लोगोंकी रस्म, रिवाज और विश्वास वनस्पति वर्गसे इतने गुथे हुए हैं और उनसे इतना घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं, और वे स्वयम् भी पृथिवी माताकी उपजपर इतने निर्भर रहते हैं कि हमको यह

कहना पड़ता है कि उनकी सभ्यताका आरम्भ वनस्पति सम्बन्धी विचारोंमें हुआ होगा।

श्रीमती स्टीविन्सनने यह भी दिखलाया है कि यह इन्डियन्स औषधोंका उपयोग केवल जादू मात्र ही समझकर नहीं करते, क्योंकि योग्य भैषिजों-के अनुभवसे सिद्ध हुआ है कि जिन वनस्पतियों-का ये लोग प्रयोग करते हैं, उनसे बड़ी उपयोगी औषध बनाई जा सकती हैं।

जुनी जातीय वैद्य औषधोंका उपचार बड़ी-योग्यता, कौशल और सावधानीसे करते हैं, यद्यपि उनके चिकित्सा शास्त्रने अभीतक प्रायोगिक अव-स्थासे प्रयाण नहीं किया है। पौदों या उनके भाग विशेषोंका इन्डियन्स खाने, औषध तैय्यार करने, बुनने, टोकरी बनाने, सजावट करने, शृङ्गार करने या धार्मिक उत्सवोंमें—प्रयोग करते हैं। कभी कभी व्यक्तियों या जातियोंके नाम भी पौदोंके नामोंपर रखे जाते हैं। कभी कभी दो या तीन भिन्न जातिके पौदोंका वही नाम रखा जाता है, पर इससे यह न समझ लेना चाहिये कि वे इन पौदोंमें भेद नहीं कर सकते, क्योंकि सदैव यह बात पाई गई कि वे सब पौदे एक ही काममें आते हैं या उनके एक-से ही मुख्य लक्षण पाए जाते हैं,यद्यपि वे वानस्प-तिक दृष्टिसे भिन्न हैं। पौदोंके नाम कभी कभी जानवरोंके नामपर रखे जाते हैं, और यह ख़याल किया जाता है कि वे उसी जानवरसे सम्बन्ध रखते हैं, जिसका नाम वे धारण करते हैं। कभी कभी इस ही कारण अमेरिकन नृशंस-विद्या विशारदोंने बड़ी ग़लतियां भी की हैं क्योंकि उन्होंने यह मान लिया है कि औषधियाँ पशुओंसे प्राप्त की जाती हैं, न कि उनके नामधारी वृक्षोंसे।

*  *  *  *

पूतिनाशक (antiseptics) और निद्रावह औषधोंका प्रयोग भी यह इन्डियन्स करते थे, यद्यपि संसारकी सभ्य जातियोंने इन वैद्यक शास्त्रके अपरिहार्य सहायकोंका प्रयोग करना बहुत दिनों पीछे सीखा। ऐसा भी ज्ञात होता है कि यद्यपि निद्रावहोंका उपयोग साधारण शस्त्रोपचारोंमें किया जाता था, तदपि जब कभी किसी मनुष्यके गोली लग जाती थी और गोली निकालनेकेलिए शस्त्रोपचार करना पड़ता था, तब निद्रावहोंका उपयोग नहीं किया जाता था, क्योंकि जुनी लोग कहा करते थे कि मनुष्यको स्त्रीके समान न होना चाहिये,उनको मनुष्य ही बना रहना चाहिये। इसलिए वे बिना किसी सोच विचारके चीर-कर गोली निकाल लिया करते हैं।

---

## चुम्बक

### गताङ्क से सम्मिलित

[ले० सालिग्राम भार्गव एम. एस-सी.]

### दूसरी रीति

उपरोक्त रीति सरल अवश्य है किन्तु आजकल काममें नहीं आती,क्योंकि और रीतियां इससे भी अधिक सरल हैं। इन दो रीतियोंमेंसे जिनको अभी हम वर्णन करेंगे,पहिली रीति तो बहुत आसान है परन्तु दूसरीकेलिए कुछ सामग्रीकी आवश्यकता होगी और उसके समझनेमें भी कुछ कठिनाई पड़ेगी। तो भी हम पाठकोंकी सुविधाके-लिए इसका थोड़ासा वर्णन यहां दे देंगे, जिससे उनको इस सम्बन्धके सब प्रयोग एक ही स्थानपर मिल जायं।

जिस प्रकार कि चुम्बककी प्रबलता निकालने-केलिए तीसरी रीतिमें चुम्बकको एक बक्समें या बे पेंदेकी बोतलमें झूलनेकेलिए लटकाया था उसी प्रकारसे एक चुम्बक किसी बक्समें लटका लो और इसके एक झोटेका समय निकाल लो। इस बोतलके बाहर एक चंगुलमें (clamp) जिस चुम्बकके चुम्बकत्वका वक्र निकालना हो इस प्रकार लगाओ कि ऊपर नीचे खिस-काया जा सके, पर उसकी दूरी लटके हुए चुम्बक-से उतनी ही बनी रहे। अब इस चुम्बकका निचला सिरा लटके हुए चुम्बकसे समतल रख-

कर, लटके हुए चुम्बकके एक झोटेका समय निकाल लो। उत्तरी सिरा सामने होनेसे यह समय बढ़ जायगा और दक्षिणी सिरा सामने होनेसे घट जावेगा। पहिले समयके वर्गको दूसरे समयके वर्ग-से भाग दो। उत्तरी सिरा यदि नीचे हो तो इस
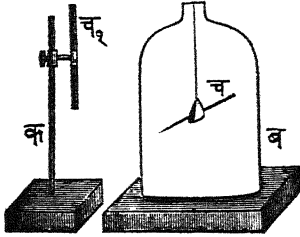
चित्र १

क, डट्टा, $च_१$ चुम्बक च–लटका हुआ चुम्बक ब–बोतल

भजन फलको १ में से घटा लो और यदि दक्षिणी सिरा ऊपर हो तो इस भजन फलमेंसे १ घटा दो। इस बाकी निकालनेसे जो संख्या मिलेगी वह चुम्बकके उस भागके चुम्बकत्वकी सूचक होगी जो लटके हुए चुम्बकके सामने था। इसी प्रकार प्रत्येक भागको लटके हुए चुम्बकके सामने लाकर उस भागके चुम्बकत्वका अंदाज़ा निकाल लेना चाहिए और फिर ऊपर दी हुई रीतिके अनुसार चुम्बकत्वका वक्र खींच लेना चाहिए।

उदाहरण—यदि लटके हुए चुम्बकके एक झोटेका समय २सेकंडहो और किसी चुम्बकका उत्तरी सिरा बोतलके बाहर लटके हुए चुम्बकके सामने रखनेसे उसके झोटेका समय $२\frac{१}{२}$ सेकंड हो जावे तो वह संख्या जो चुकम्बकत्वकी सूचक होगी इस प्रकार निकाली जाती है।

$$१-\frac{२^२}{(२\frac{१}{२})^२} = \frac{(२\frac{१}{२})^२-२^२}{(२\frac{१}{२})^२}$$

$$=\frac{\frac{२५}{४}-४}{\frac{२५}{४}}$$

$$=\frac{\frac{९}{४}}{\frac{२५}{४}}=\frac{९}{२५}$$

यदि अब कोई दूसरा भाग चुम्बकका लटके हुए चुम्बकके सामने लाया जावे तो उससे झोटेके समयमें अवश्य ही अन्तर हो जावेगा। मानलो कि यह समय २ सेकंड हो गया तो इस भागके चुम्बकत्वकी सूचक संख्या

$$=\frac{\frac{१७}{१६}}{\frac{८१}{१६}}$$

$$=\frac{१७}{१८}$$

इसी प्रकार हरएक भागको उस लटके हुए चुम्बकके सामने लाकर उसके झोटेका समय निकालकर यह संख्याएँ निकाल लो जिनसे वक्र खेंचा जा सकता है। इस बातका ध्यान रहे कि चुम्बक ऊपर नीचे खिसकाते समय, लटके हुए चुम्बकसे, उसकी दूरीमें कोई फ़रक न आवे।

तीसरी रीति—एक छोटी घिर्नी या रील (जैसी कि तागेमें लिप्टी हुई बाज़ारमें मिलती है) जिसका छेद इतना बड़ा हो कि चुम्बक आसानीसे जा सके लो। एक पतला रेशम या रुईसे लिपटा हुआ तांबेका तार लेकर इसपर तागेकी नाईं लपेट लो। इसके दोनों सिरे दो छेदोंमेंसे बाहर निकले रहने चाहिएँ जैसे कि प्रायः छेद करके तागेका सिरा बाहर निकाले रहते हैं जिससे तागा खुलने न पावे। १०० या ५० लपेटोंसे अधिक लपेट देनेकी आवश्यकता नहीं है। तारके दोनों सिरोंको तो विद्युद्धारामापक (धारामापक) के

दोनों सिरोंसे जोड़ दो। घिर्नीको चुम्बकके बीचमें रखकर दांई वांई ओर $\frac{१}{२}$ इंच खिसकाओ।
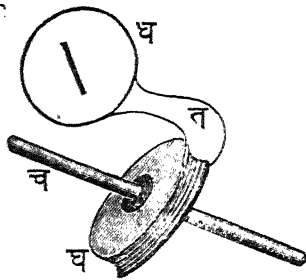
चित्र २—घ-घिर्नी, त-तार, च-चुम्बक, ध-धारामापक ।

धारामापककी सुई अपनी स्थिर जगहसे थोड़ी सी हट जावेगी और लोटकर अपनी स्थिर जगहपर आ जावेगी। हटावको लिखलो और घिर्नीको फिर बीचमें रखकर बीचसे १ इञ्च खिसकाओ। धारामापककी सुई पहिलेसे ज़्यादा हटेगी। इस हटावको भी लिख लो। इसी प्रकार घिर्नीको प्रत्येक बार बीचमें रखकर ज़्यादा ज़्यादा खिसकाते जाओ और धारामापकके हटावको लिखते जाओ। जब इसी प्रकार करते करते सिरे तक पहुंच जाओ तब फिर दूसरे भागकी भी इसी प्रकार जांच कर लो। जैसे कीलके बोझकी अधिकताको लेकर वक्र खेंचा था, उसी तरह अब धारामापककी सुईके हटावको लेकर वक्र खेंचलो।

उदाहरणमें एक चुम्बकत्वका वक्र देते हैं कि जो हमारे मित्रोंने एक गोल दंड चुम्बक इस रीतिसे निकाला है। साथ ही एक सूची भी देते हैं कि जिसमें धारामापककी सुईका हटाव जो घिर्नीको चुम्बकके प्रत्येक भागपर खिसकानेसे मिला है दिया हुआ है। सरल और निर्दोष होनेके कारण बहुधा आजकल यही रीति काम में आती है।

| घिर्नीका खिसकाना | धारामापककी सुईका हटाव |
|---|---|
| (१) बीचसे उत्तरी सिरेके ओर । | |
| १ली बार १ इञ्चके लगभग | ३ अंश |
| २री बार २ इञ्चके लगभग | १२ अंश |
| ३री ,, ३ ,, | ३० ,, |
| ४थी ,, ४ ,, | ५३ ,, |
| ५वीं ,, ५ ,, | १०६ ,, |
| (२) दक्षिणी सिरेकी ओर । | ४ ,, |
| १ली बार १ इञ्चके लगभग | |
| २री ,, २ ,, | १४ ,, |
| ३री ,, ३ ,, | ३२ ,, |
| ४थी ,, ४ ,, | ५७ ,, |
| ५वीं ,, ५ ,, | १११ ,, |

लिया गया चुम्बक १० इञ्च लम्बा था।

वक्र साधारण चुम्बकके वक्रसे भिन्न है परन्तु बहुत कुछ मिलता हुआ सा है। साधारण चुम्बकके वक्रमें "म०" हिस्सा एक सीधी लकीर होता परन्तु इस वक्रमें थोड़ासा झुकाव लिए हुए है। (देखो पृष्ठ २८८)

इसके पश्चात् यह भी बतला देना हम उचित समझते हैं कि चुम्बकत्व स्थिर चुम्बकमें केवल प्रष्ठपर ही रहता है क्योंकि यदि चुम्बकको शोरेके तेज़ाबमें रखकर उसका ऊपरका थोड़ासा हिस्सा गला डालें तो जो कुछ बचेगा उसमें चुम्बकत्व बिलकुल न होगा। एक और रीतिसे भी इस बातकी जांच की जा सकती है। एक लोहेकी नली ले लो उसके भीतर एक ठीक ठीक आती हुई छड़ रख दो। छड़के अन्दर होते हुए इस नलीको किसी रीतिसे चुम्बक बनालो। छड़ अन्दरसे निकालकर जांचो इसमें चुम्बकत्व बिलकुल न होगा किन्तु सब चुम्बकत्व नलीमें ही मिलेगा। इसी कारण कभी कभी खोकले चुम्बक भी काममें लाये जाते हैं। नलीकी दीवारोंकी मोटाई इस प्रयोगकी सफलताकेलिए चुम्बक बनानेकीरीति और नलीके लोहेपर निर्भर है। किसी रीति और लोहेके लिए इसे केवल $\frac{१}{४}$ इञ्च और किसी रीति और लोहेकेलिए इससे अधिक होना पड़ेगा।

आकर्षण और निराकरणके नियम

जब कीलकी मददसे चुम्बकके भिन्न भिन्न भागोंका चुम्बकत्व निकाला था, उस समय यह बतलाया था कि लटकी हुई कीलको प्रत्येक भाग-पर तोलो। इससे अभिप्राय यह था कि कील प्रत्येक भागसे समान दूरीपर रहे। इसी प्रकार जब कम्पन-बक्समें एक चुम्बक रखकर और दूसरे चुम्बकका प्रत्येक भाग उस लटके हुए चुम्ब-कके सामने लाकर उसके एक झोटेके समयमें न्यूना-धिकता मालूम करके उसके हर एक भागके चुम्ब-कत्वका अनुमान लगाना बतलाया था, उस समय भी यह कहा था कि चुम्बक ऊपर नीचे खिसकाते समय अपने स्थानके दाएँ बाएँ न हो जावे जिस-का उद्देश यही था कि चुम्बकका प्रत्येक भाग लटके हुए चुम्बकसे एक समान दूरीपर रहे। स्वतंत्रता पूर्वक घूमते हुए चुम्बकके विचलनसे दो चुम्बकोंके चुम्बकत्वकी तुलना करते समय भी यही कहा गया था कि दोनों चुम्बकोंको एक ही दूरीपर रखना चाहिए। इन सब बातोंका फल यही निक-ला कि हमने दूरीको घटने बढ़ने नहीं दिया। अब प्रश्न यह उठता है कि दूरीके घटने और बढ़नेसे हमको इतना डर क्यों लगता था। इसका कारण केवल इतना ही था कि दूरीके घटने और बढ़नेसे चुम्बकके आकर्षण और निराकरणकी शक्तिमें भी भेद पड़ जाता है। यदि एक भाग चुम्बकका १ इंचकी दूरीपर हो और दूसरा २ इंचकी दूरीपर तो दोनों भागोंके चुम्बकत्वकी तुलना नहीं हो सकती।

सूर्य्य और चन्द्रमा आकारमें बराबर ही दिख-लायी पड़ते हैं। सूर्य्य चन्द्रमासे कई हज़ार गुना बड़ा है। उनका बराबर दीख पड़ना केवल दूरीके ही अन्तरके कारण है। यदि उनकी दूरीपर ध्यान न देकर यह मानलें कि दोनोंका आकार समान है तो बड़ी भारी भूल होगी। इसी प्रकार यदि चुम्बकके प्रत्येक भागकी दूरी हमारे जांचने-वाले यंत्रसे भिन्न भिन्न हो तो हम उसके भागोंके चुम्बकत्वका कोई अनुमान नहीं लगा सकते।

दूरीके घटने बढ़नेसे दो चुम्बकोंके सजातीय सिरोंमें निराकरण और उनके विषमजातीय सिरोंमें आकर्षणकी शक्ति किस प्रकार घटती बढ़ती है—इस बातकी पहले पहल कूलम्बने जांच की थी और उन्होंने अपने प्रयोगों द्वारा यह नियम सिद्ध किया थाः—

चुम्बकोंके सिरोंमें आकर्षण या निराकरण की शक्ति दूरीके वर्गके साथ विपरीत सम्बन्ध रखती है अर्थात् दो चुम्बक लेकर और उनके दो सिरे एक नियत दूरीपर रखकर यदि उनमें आकर्षण या निराकरणकी शक्ति निकाली जावे तो दूरी आधी करनेपर यह चौगनी और दूरी दुगनी करनेपर चौथाइ हो जायगी।

कूलम्बने जो प्रयोग इस नियमके मालूम करने-केलिए किया वह नीचे दिया जाता है—

उन्होंने ऐसा बक्स लिया कि जैसा चित्र ४ में दिखलाया है। इसमें और गताङ्कमें बतलाए
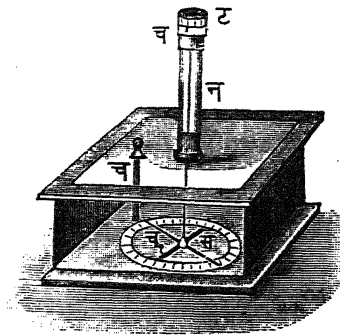
चित्र ४

ट—टोपी, च—चिह्न, न—नलिका, त—सूचक, $च_1$—चुम्बक, च—चुम्बक।

हुए (पृ० २३१) बक्समें इतना ही भेद है कि इस बक्सके ढकनेमें एक छेद है जिसमेंसे एक चुम्बक जा सकता है, जैसा चित्र ४ में दिखलाया गया है। पहले लटके हुए चुम्बकके ठहरनेका स्थान कौण-

वाले काग़ज़पर जो बक्सके पेंदेमें चिपका है देख लिया। तदनन्तर टोपीको घुमाकर यह देखा कि कितने चक्कर देनेसे चुम्बक १° हटता है, जैसा विज्ञान पृष्ठ २३२ पर बतलाया गया है। कूलम्बने अपने प्रयोगमें पाया कि १° हटानेकेलिए टोपी ३६° घुमानी पड़ती है, अर्थात् १° हटानेकेलिए ३५° की एँठन चाहिए। अब छेदमेंसे चुम्बक डाला गया। यह लटके हुए चुम्बकके साथ समतल था। लटका हुआ चुम्बक अपने स्थानसे २४° हट गया। जिस शक्तिने इसे हटाया वह २४+२४×३५= ८६४° के एँठनके बराबर हुई। ऊपरवाले सिरेको ८ चक्कर देनेसे लटका हुआ चुम्बक १२° पर आकर ठहरेगा। इस अवस्थामें एँठन = ८ × ३६०° + १२ × ३५° + १२° = ३३१२° अर्थात् १२° की दूरीपर २४° की दूरीके मुकाबिले चौगुणी एँठनकी निराकरणकी तुलनाकेलिए, आवश्यक होती है। इससे ऊपर बतलाया हुआ नियम सिद्ध हुआ। इस यंत्रमें निराकरणकी तुलना एँठनसे की जाती है, इसीलिए इसको एँठन तुला कहते हैं।

यह पहला प्रयोग था जिससे यह नियम मालूम किया गया, और कूलम्बके समयसे लेकर आजतक इस नियमके विरुद्ध कोई बात मालूम नहीं हुई। इससे बढ़कर इसकी सत्यताका प्रमाण नहीं दिया जा सकता। परंतु यह बिलकुल निर्दोश रीति नहीं है। क्योंकि चुम्बकका दूसरा सिरा अपना कुछ न कुछ प्रभाव लटके हुए चुम्बकपर अवश्य ही डालता है। कूलम्बका चुम्बक बहुत बड़ा नहीं था जिससे यह कहा जा सके कि दूसरा सिरा इतनी दूर था कि उसका असर बहुत ही कम पड़ता था। इस दूसरे सिरेका असर बिलकुल उड़ा देनेकेलिए प्रयोग इस प्रकार करना पड़ेगा।

ऐसा चुम्बक लो कि जिसकी लम्बाई, उसकी मोटाईकी ४०० गुनी हो, जिससे कि चुम्बकके केन्द्र उसके सिरोंके पास हों। चुम्बकका मोटा होना आवश्यक नहीं है। एक सूत मोटा लिया जा सकता है। एक सूत मोटा चुम्बक कमसे कम २५ इंच लम्बा होना चाहिए। तीन, और
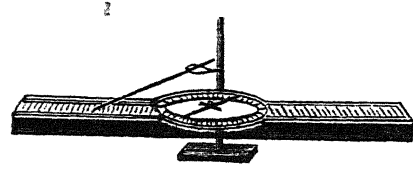
चित्र ५*

तीनसे भी अधिक फुट लम्बे चुम्बकोंसे प्रयोग किया गया है, पर हमारी समझमें एक सूत मोटा और २ फुट लम्बा चुम्बक, जैसा हमने अपने प्रयोगमें लिया था, काफ़ी होगा। इस चुम्बकको चुम्बककत्व मापकपर डट्टेके सहारे इस प्रकार रखो कि इसका एक सिरा तो लटके हुए चुम्बकके साथ समतल हो और दूसरा लटके हुए चुम्बकके ठीक ऊपर हो।* इस प्रकार रखनेसे चुम्बकका दूसरा सिरा लटके हुए चुम्बकको क्षितिज धरातलमें हटा न सकेगा। यह हम आगे साबित कर देंगे कि इसका प्रभाव लटके हुए चुम्बकको केवल उसी ऊर्ध्वतल (vertical plane) में घुमानेका हो सकता है जिसमें लटका हुआ चुम्बक ठहरा हुआ है।

लटके हुए चुम्बकके साथ समतल रखा हुआ सिरा इस चुम्बकको क्षितिज धरातलमें घुमायेगा और इस धरातलमें ऊपरवाले सिरेका असर बिलकुल नहीं होगा। चुम्बकके नीचे रखे हुए सिरेको एक नियत दूरीपर रखकर लटके हुए चुम्बकका विचलन अथवा हटाव नाप लो। फिर दूरी बदलकर विचलन नाप लो। इसी प्रकार दो चार बार करनेसे नियमकी सत्यताका प्रमाण मिल जायगा हमारे एक प्रयोगमें जो कुछ संख्याएँ मिलीं नीचे दी जाती हैं।

*इस चित्रमें चुम्बक लटका हुआ नहीं है। परन्तु कीलपर रखा हुआ है। ये चुम्बकत्व मापकके दो रूपान्तर हैं।

| दूरी | | विचलन |
|---|---|---|
| १५ | सेंटीमीटर | २३° |
| ३० | ,, | ५° के लगभग |
| २० | ,, | १४° के लगभग |

यहांपर स्पष्ट है कि दूरी दुगनी करनेसे हटाव चौथाई हो गया, इत्यादि । हटाव ज़्यादा होनेपर इसका (tangent) लेना चाहिए। हटाव-का यह सम्बन्ध हैः—

$$\frac{\text{पहला हटाव}}{(\text{पहिलीं दूरी})^2} = \frac{\text{दूसरा हटाव}}{(\text{दूसरी दूरी})^2}$$

हम एक और रीतिका वर्णन करे देते हैं जो यद्यपि निर्दोष तो नहीं है, तदपि सरल है। कई रीतियां बतला देनेका लाभ हम यह समझते हैं कि जिस रीतिकी सामग्री पाठक एकत्रित कर सकें उसीसे नियमकी सत्यता जांच लें। दो लम्बे चुम्बक लो। उनमेंसे एकको तो उचित रीतिसे बीचमें दो नोंकोंपर तराजूकी डंडीकी नाईं समतल रखो। यदि इसमें एक सूचक भी लगादो, जैसा तराजूमें होता है, तो और भी अच्छा हो और दूसरेको केवल एक डट्टेमें, जैसा चित्रमें दिखाया है लगादो। दोनोंके सजातीय सिरे एक दूसरेके ऊपर ले आओ जैसा चित्रमें दिखलाया है। नोकोंपर तुले हुए चुम्बकका सिरा नीचेको झुकेगा। एक हलका बोझ दाईं ओर रखकर चुम्बक फिर सीधा किया जा सकता है। एक
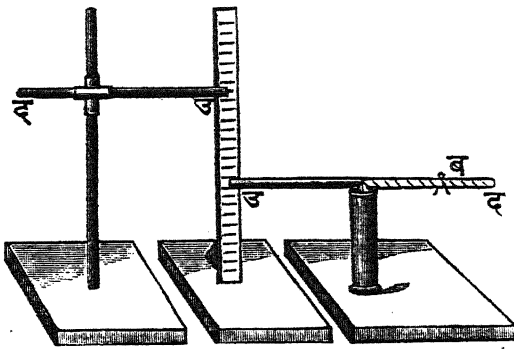
चित्र ६

गज़से दोनों सिरोंके बीचकी दूरी नाप लो। दूरी दुगनी करनेसे बोझ चौथाई दूरीपर रखना पड़ेगा, पर आधी करनेसे चौगनी दूरीपर ले जाना पड़ेगा। जब बोझ चौथाई दूरीपर रखना पड़े तब निराकरणकी शक्ति चौथाई और जब चौगुनी दूरीपर रखा जावे तब शक्ति चौगुनी है। इसका सबूत यह है। मानलो निराकरणकी शक्ति श के बराबर और घुमाव विन्दुसे द दूरीपर है और हलका बोझ ब की बराबर, $द_1$ दूरीपर है। निराकरणकी शक्तिका घूर्ण श × द और बोझका घूर्ण ब × $द_1$ हुआ। चुम्बकके सीधे रहनेकेलिए दोनोंको बराबर होना चाहिए अर्थात् $श \times द = ब \times द_1$

इसलिए $$श = \frac{ब}{द} \times द_1$$

$\frac{ब}{द}$ तो बदलता ही नहीं है इसलिए जो श चौगुना हो जावे तो $द_1$ भी चौगुना हो जावेगा और यदि श चौथाई ही रह जावे तो $द_1$ भी चौथाई ही रह जावेगा।

जबतक किसी नियममें चुम्बकोंकी प्रबलता न आवे उस समयतक नियमको अधूरा ही समझना चाहिए। सब चुम्बकोंकी प्रबलता कभी एक हो ही नहीं सकती। चुम्बकोंके बदलनेसे आकर्षणमें या निराकरण कितना भेद पड़ेगा यह जानना आवश्यक ही मालूम होता है। इसकी जांच भी पहले पहल कूलम्बने ही की और यह सिद्ध किया कि दो चुम्बकोंके सजातीय सिरोंमें निराकरण और विषमजातीय सिरोंमें आकर्षणकी शक्ति उनके सिरोंके चुम्बकत्वकी प्रबलताओंके गुणनफलपर निर्भर है। इसका अर्थ यह है कि यदि प्रत्येक चुम्बककी प्रबलता पहलेसे दुगुनी हो तो उनमें शक्ति चौगुनी हो जावेगी।

इन दोनों नियमोंको मिलाकर शक्ति मालूम करनेका सूत्र इस प्रकार लिख सकते हैं—

श ( निराकरण अथवा आकर्षणकी शक्ति ) = $\frac{प \, प_१}{द^२}$

यहां एक चुम्बकके सिरेकी प्रवलता प और दूसरे चुम्बकके सिरेकी प्रवलता $प_१$ मान ली है और उन दोनोंके बीचमें द के बराबर दूरी है। इसी सूत्रसे प्रवलताके नापनेकी इकाई भी निकाली गयी है। यदि दो समान प्रवलताके सिरे लिये जावें अर्थात् $प = प_१$ और इकाई दूरीपर (अर्थात् द = १) रक्खे जानेपर एक दूसरेको इकाई शक्ति ( अर्थात् श = १ ) से हटावें या खींचें तो उनकी प्रवलता एक है।

जिस पद्धतिमें लम्बाई नापनेकी इकाई एक शतांशमीटर (सेंटीमीटर) है उसमें शक्तिकी इकाई १ डाइन है। इस पद्धतिके अनुसार प्रवलताकी इकाईकी परिभाषा यह होगी—

उस चुम्बकके सिरेकी प्रवलता १ है जो अपने जैसे १ शतांश मीटरपर रखे हुए सिरेको १ डाइनकी शक्तिसे हटावे।

जब उत्तरी सिरेकी प्रवलता बतलानी होगी तो प्रवलता सूचित करनेवाली संख्याके पहले या तो + का चिन्ह लिख देंगे या कोई भी चिन्ह नहीं लगावेंगे। दक्षिणी सिरेकी प्रवलता सूचित करनेवाली संख्याके पहले – का चिन्ह अवश्य ही लगाया जावेगा। हटाव अथवा निराकरणकी शक्तिको + से सूचित करेंगे या कोई चिन्ह भी नहीं लगावेंगे और खिंचाव अथवा आकर्षणकी शक्तिको – से सूचित किया करेंगे।

यदि ऊपरवाले दो सिरोंमें एककी प्रवलता इकाईकी बराबर हो तो दोनोंमें निराकरणकी शक्ति $\frac{प}{द^२}$ के बराबर होगी।

इस संख्याको 'द' दूरीपर 'प' प्रवलतावाले चुम्बककी शक्तिका प्रभाव ( intensity ) कहेंगे। बड़ा महत्व इस संख्याका यह है कि चुम्बककी प्रवलता और उसकी दूरी मालूम न होनेपर भी यह संख्या अर्थात् उस चुंबककी शक्तिका प्रभाव एक नियत स्थानपर मालूम किया जा सकता है। जैसे पार्थिव चुम्बकके सिरेकी प्रबलता और उस सिरेकी दूरी आपके स्थानसे आपको मालूम न हो किंतु पार्थिव चुम्बककी शक्तिका प्रभाव आप अपने स्थानपर मालूम कर सकते हैं। इस संख्याका महत्व आगे और भी स्पष्ट होता चलेगा। इसके नापनेकी इकाई गौस ( gauss ) कहाती है।

जिस स्थानपर इकाई प्रबलतावाला सिरा १ डाइनकी शक्तिसे खिंचे या हटे उस स्थानपर चुम्बकीय शक्तिका प्रभाव (intensity) एक गौसके बराबर है।

—— ——

## वैज्ञानिकीय

१—दक्षिणी अफ्रीकाका हीरोंका उद्योग।

यूरोपीय महाभारतके छिड़नेके पश्चात् संसारभरकी हीरेकी खानोंके मालिकोंने आपसमें यह निश्चितकर लिया था कि खानोंसे पहिलेकी अपेक्षा कम हीरे निकालेंगे जिससे हीरोंका भाव कम न हो। इस कारण दक्षिणी अफ्रीकाकी हीरेकी खानोंका काम बहुत ही मद्दा पड़ गया था, जैसा कि नीचेकी संख्याओंसे स्पष्ट होगा।

१९७२ वि० में ५१९२५४७ केरट हीरे निकले जिनका मूल्य ५५,४२८,४९५, डालर हुआ। पर १९७२ वि० में केवल ५९७४ केरट हीरे निकले, जिनका दाम ९२३,२३४, डालर हुआ। इस हानिको उठाकर अब दक्षिणी अफ्रीकाके खानोंके मालिकोंने फिरसे काम जारी रखनेका निर्णय किया है, पर युद्धसे पहिलीकी अपेक्षा केवल चौथाई माल निकाला करेंगे।

जहाँ हीरेके व्यापारमें अफ्रीकाको हानि उठानी पड़ी, तहां अन्य खनिजों, विशेषतः सोनेका निकास वहांकी खानोंसे और वर्षोंसे कहीं बढ़कर हुआ, जिससे बड़ा लाभ उठाया। आजकल हीरोंकी खपत सबसे अधिक अमेरिकामें होती है, पर

हीरोंके काटनेका काम अब भी विशेषतः एम्स-टर्डममें होता है।

२—यूरोपके सम्राटोंकी रेलगाड़ियां।

यूरोपीय महायुद्धके कारण जहाँ साधारण रेलवे ट्रेनोंसे बहुत ही ज़्यादा काम लिया जा रहा है, तहां रूस, जर्मनी और इटलीके राजाओं और फ्राँसके सभापतिकी ट्रेनें भी लड़ाईके छिड़नेके पश्चात् इतनी शीघ्रतासे बार बार काममें लाई गई हैं कि पहिले कभी न लाई गई होंगीं।

यदि लड़ाई कुछ दिन और जारी रही तो फ्राँसके सभापतिकी ट्रेन फिरसे बनवाई जायगी। युद्धके आरम्भके पहिले ही उसकी कायापलट करनेका विचार था, पर फ्रांसीसी गाड़ियोंके कारख़ानोंमें कारीगरोंकी उचित संख्या न होनेसे, इस कामको मुल्तवी करना पड़ा।

यद्यपि यह ट्रेन यूरोपकी अन्य राजाओंकी रेलगाड़ियोंसे अधिक सुसज्जित, और अलंकृत नहीं है, तदपि इसकी आत्मकहानी बड़ी रोचक है। अन्य गाड़ियांकी अपेक्षा राजनैतिक घटनाओं-में यह कहीं ज्यादा काम आई है और समय समयपर संसार भरके सभी बड़े बड़े राजा इसमें यात्रा कर चुके हैं। संभवतः जर्मन नरेश भी इसमें यात्रा कर चुके हैं। सं० वि० १६५३की वसन्त ऋतुमें यह जल्दीमें बनाई गई थी, जब कि रूसके राजा (ज़ार) फ्रांसमें पधारे थे। इस अवसर-पर रूस और फ्रांसकी मित्रताकी नींव पड़ी, जो आधुनिक इतिहासमें बड़े महत्वकी घटना थी, जैसा कि अब वर्तमान युद्धसे प्रकट हो रहा है। ऐसे शुभ अवसरपर फ्राँस देशनिवासी अपने प्रभावशाली पाहुनेका स्वागत बड़े समारोह और उत्साहसे करना चाहते थे। उन्होंने केम्प एलीसीके (Camp Elysees) वृक्षोंको लाखों कृत्रिम फूलोंसे सजाया था। इसी अवसरपर ज़ारको फ्रांसकी डाँड़से पेरिसतक लानेकेलिए यह ट्रेन तैय्यार की गई। इसमेंकी चार गाड़ियां, सभापति फ़ैलिक्स फौरेकी आज्ञानुसार तेरह दिनमें तैय्यार की गई, यद्यपि नियमानुसार उस बड़ी रक़मकी मंजूरी नहीं ली गई थी, जो इसके बनानेमें ख़र्च हुई। ज़ारके लौट जानेके बहुत दिन पीछे यह मंजूरी हुई। जो गाड़ी ज़ारके निजके प्रयोगकेलिए बनाई गई थी, उसमें नहाने-का कोइ प्रवन्ध न रक्खा गया था। दसवें दिन इस बातका ख़याल आया और उसी दिन एक बड़ी भारी चान्दीकी द्रोणी (टब) छत काटकर गाड़ीके एक कोनेमें रखी गई। अबतक छतमें निशान है। इसी गाड़ीमें हमारे महाराजा ज्योर्जने (Mont) मोन्टतक यात्रा की, जहाँ उन्होंने ५०००० सिपाहियोंका निरीक्षण किया। इस ट्रेनमें विल-क्षणता यह है कि उसपर किसी प्रकारका कवच नहीं जड़ा हुआ है।

जर्मनीके राजा विलियमकी ट्रेनकी दशा इससे विपरीत है। उस ट्रेनकी सातों गाड़ियां कवचसे ऊपर, नीचेसे सुरक्षित हैं। जब फ्रांस-के निकट गाड़ी चलती है तो उसमें कवचसे सुरक्षित इंजन लगाया जाता है। इंजनपर पवन पोतोंसे गिराए हुए बम गोलों या तोपके गोलों-से किसी प्रकारका आघात नहीं पहुंचता। इंजनका कवच बिलकुल रेलकी पटरीतक पहुंचता है और फिर ऊपरकी तरफ़ मुड़ जाता है जिससे उसकी शकल बिलकुल कछुए जैसी हो जाती है। इस ट्रेनकी एक गाड़ीमें पुस्तका-लय भी है, जिसमें ७०० से भी अधिक नक़शे लटके हुए हैं। इन नकशोंकी सहायतासे जर्मन और मित्र राष्ट्रोंकी फ़ौजोंकी चालोंपर विचार किया जाता है। इस ट्रेनमें टेलीफ़ोन भी लगा हुआ है जो किसी भी स्टेशनपर तारोंसे जोड़ दिया जा सकता है और जिससे कैसर अपने फ़ौजी अफ़-सरोंसे बात कर सकता है।

रूसके राजाकी (ज़ार) ट्रेन और सब राजाओंकी ट्रेनोंसे अधिक सुसज्जित और अल-ङ्कृत है। उसमें बारह गाड़ियां हैं जो प्रायः दो हिस्सोंमें चलाई जाती हैं। बहुत दिनोंसे उस-

पर कवच मढ़ा हुआ है, क्योंकि रूसमें वहाँके राजाको अपने जीवनका बड़ा भय रहता है। गाड़ियोंके ऊपर नीचे और दोनों तरफ़ बहुत मोटा कवच चढ़ा हुआ है। यदि डैनेमाईट लैन-पर रख दिया जाय, तो भी गाड़ीको हानि इस कवचके कारण न पहुंचेगी। इन गाड़ियोंमें नहाने, खाने पकाने, तम्बाकू पीने इत्यादि सभी बातोंका अलहदा अलहदा कमरोंमें इन्तज़ाम है। एक गाड़ीमें गिर्जा भी बना हुआ है। जो सुख ज़ारको अपने किसी राजभवनमें मिल सकता है, वह इस ट्रेनमें भी मिल सकता है।

यद्यपि इन ट्रेनोंने गत दो वर्षोंमें सैकड़ों बार यात्रा की होगी, तदपि किसी ट्रेनपर कभी भी बम्ब नहीं गिरा। न मालूम (हवाई जहाज़) वायु-यान जो नगरोंमें बम्ब डालते फिरते हैं, इन ट्रेनोंपर बम्ब डालनेसे कैसे चूके!

* * * *

३—चन्द्रमा

काशीके सेन्ट्रल हिन्दू कौलेज मैगेज़ीनमें श्री-युत जगदीशप्रसन्न मुखोपाध्याय एम. एस-सी. ने ज्योतिष विद्यापर एक गवेषणापूर्ण लेख निकाला है जिसमें सूर्य मण्डल, चन्द्रमण्डल, नष्ट चन्द्रमा और पृथ्वीकी छटा इत्यादि विषयोंका बड़ा सुगम और मनोहर वर्णन दिया है। सूर्यकी चारों ओर-का प्रभा मण्डल उसको तीक्ष्ण रश्मियोंके कारण कम दृष्टि गोचर होता है, पर चन्द्रमण्डल एक सामान्य दृश्य हो गया है और उसके सम्बन्धमें कितनी ही किंवदन्तियां प्रचलित हो गयी हैं, जैसे चन्द्रमण्डलको देखकर इस भयसे चुप लगा जाना कि उसकी चर्चा करनेसे चन्द्रलोकमें वास करनेवाले पितरोंका ध्यान मृत्युलोककी ओर खिच जाता है और उनका वहांसे पतन हो जाता है।

नष्ट-चन्द्र जो भाद्रपद शुक्ल चतुर्थीको दिखाई पड़ता है बहुत ही अशुभ समझा जाता है और उसके दर्शनसे अपवाद लगनेका भय होता है। लेखकने इसका कारण यही बताया है कि उन दिनों चन्द्रमा विशेषकर पृथ्वीकी ज्योतिसे ज्यो-तिमान होता है और इस प्रकार मंगनीके प्रकाशसे अपनी शोभा बढ़ाता हुआ कदाचत् पापी और निन्द्य कहलाता है

* * * *

४ - नत्रजन

हम लोगोंके शरीरोंमें, तथा अन्य, खनिज, वानस्पत्य, पाशव पदार्थोंमें नत्रजन विद्यमान है। वायुमण्डलमें भी इसकी मात्रा ८० प्रतिशत है। यह गैस वायुमण्डलमें उपस्थित रहते हुए न किसी-के भलेमें है न बुरेमें। न यह अभिद्रवजनकी नाईं ज्वलनशील है, न ओषजनकी भांति दूसरोंको जलाती है। अतएव इस बेचारीको बिलकुल जड़ कहा जाता है। पर ऐसा समझना भूल है। इसके दिखावटी शान्त स्वभावसे धोका न खाइये, इसे निरा सन्यासी न समझिये। यह छिपा हुआ रुस्तम है। संसारके जितने विस्फोटक हैं, प्रायः इसकी ही बदौलत प्राप्त होते हैं। क्या डैनेमाईट, क्या गन-कोटन, क्या पिकरिक एसिड, सभीमें यह विद्यमान है। यूरोपमें बड़ा भारी युद्ध हो रहा है, वह केवल नत्रजनकी खिलवाड़ है। इसे लोगोंसे मुहब्बत करनेका बड़ा शौक़ है, पर इसकेलिए मुहब्बतका निबाहना बड़ा मुश्किल है। न जाने इसमें इसका दोष है या अन्य व्यक्तियोंका। हरिणसे (एक बदबूदार हरी गैस जो नमकसे-बनाई जा सकती है) यह नत्रजन-हरित बनाने-की चेष्टा करती है, पर हरिणमें यह शक्ति कहां कि इसका तेज सह सके, अवसर पातेही निकल भागती है। इसी प्रकार अयोडीनका भी हाल है, इन पदार्थोंको निकल भागनेकी इतनी बेताबी होती है कि बड़ा धड़ाका होता है।

पाठको! दिन रात आप सांस लिया करते हैं। यदि आप पांच हिस्सा वायु फुफ्फुसमें खींचते हैं तो उसमें चार हिस्सा नत्रजन जाती है।

अन्दाज़ेसे मालूम होता है कि २४ घंटेमें, ४५० गैलन नत्रजन आपके फुफ्फुसमें पहुंचती और निकल आती है। इश्वर ख़ैर करे, कोई पदार्थ आपके फुफ्फुसमें पहुंचकर नत्रजनसे यौगिक न बनावे और विस्फोटन न हो जाय। यह नत्रजन २० सेर डैनेमाईट बनानेकेलिए काफ़ी है और २० सेर डैनेमाईटसे पर्वत राशि भी उड़ा दी जा सकती है।

तो क्या यह सब उत्पात नत्रजन ही करती है? नहीं इसमें इसका दोष नहीं, यह केवल उन मौलिकोंकी दुर्बलता है, जो इससे यौगिक बनाते हैं। महाकाली संसारका नाश भी कर सकती है, पर वही परम शक्ति जगतकी उत्पत्ति और स्थितिका भी मुख्य कारण है। नत्रजन भी रूपान्तरसे जगतकी मूल है।

शाक, तरकारी, मांस, मत्स्य, घृत, दूध, घास प्रभृति पदार्थोंकी पोषण शक्ति प्रोटीडकी मात्रापर निर्भर है, जो उनमें पाया जाता है। प्रोटीडका मुख्य अवयव नत्रजन है। पृथ्वीकी उपज भी उन नत्रजनीय पदार्थोंपर निर्भर है जो पृथ्वीमें रहते हैं या जो खादके रूपमें पृथ्वीमें पहुंचाये जाते हैं। लता,वृक्ष, पत्र,पुष्प, जो उचित समयपर पैदा होकर पृथ्वीकी शोभा बढ़ाते हैं, इसी नत्रजनके सहारे उगते हैं।

धन्य है इस मौलिकको, जो कभी शिवका भयङ्कर रूप धारण करके जगतका विध्वंस करता है और कभी विष्णुका रूप धारण कर जगतका पालन पोषण करता है।

[ चन्दी चरण पालित एम. एस-सी. ]

## समालोचना

पचौली पुस्तकावली—ले० पं० गंगा शंकर पचोली हेडमास्टर-राज भरतपुर द्वारा लिखित, क्रौन अठपेजी आकार. ग्रन्थकार से प्राप्य।

(१) कृषि विद्या ४, भाग दूध और उसके उपयोग पृ० ३२, मू० ।)

(२) कृषि विद्या, भाग ५, ईख और राव, गुड़ खांड़ पृ० ५० मूल्य ।-) ; (३) करण लाघव पृ० १०४ मू० ॥।) ; (४) व्यापारशिक्षक, भाग १, काग़ज़ का काम पृ० ३६ मूल्य अज्ञात।

पचौलीजीकी सभी पुस्तकें अपने अपने विषयमें उपयोगी हैं। (१) और (२) किसानों और साधारण गृहस्थोंकेलिए लाभ दायक हैं। विषय नामसे स्पष्ट है। बातें बड़े कामकी लिखी गयी हैं। (४) 'व्यापार शिक्षक' व्यापारीके सिवा उन गृहस्थोंके कामका भी है जो काग़ज़को व्यर्थ रद्दी ठहराकर फेंक देते हैं।

(३) 'करण लाघव' ज्योतिषियोंकेलिए अच्छा ग्रंथ है। करण ग्रंथोंकी कमी ज्योतिषमें नहीं है परन्तु आधुनिक दृग्गणितके अनुसार निरयण गणनापर अवलम्बित करण ग्रन्थ लिखकर पचौलीजीने त्रिकोणमित्यादि उच्च गणितसे अनभिज्ञ हिन्दी ही जाननेवाले ज्योतिषियोंका बड़ा उपकार किया है। अन्य हिन्दी ग्रन्थोंकी नाईं इसमें विषयसूची वा वर्णक्रम सूचीका अभाव है। पचौली जी साथ ही परिभाषा सूची भी देते तो अच्छा होता। वैज्ञानिक ग्रन्थोंमें इन बातोंका होना आवश्यक है।

रा. गौ

* * * *

औराक़ परेशान

लाला आत्माराम एम. ए. ने लाहौरके रिसाले रोशनीमें बहुत अच्छे अच्छे मज़मून साइंसपर छापे थे। अब उनकी एक किताब बना ली है जिसका नाम औराक़ परेशान है मगर बातें ऐसी कामकी हैं जिनके पढ़नेसे परेशान होना तो कैसा बग़ैर दो तीन बार पढ़े किताब छोड़नेको जी नहीं चाहता। गति विज्ञान (law of motion), सूर्यका बनना, टारपीडोकी बनावट, नहर पनामाका बनाया जाना—यह सब बातें, (जिनको साइंसकी नई तरक्की कहना चाहिये), इस तौरसे बयान की हैं कि साइंस न

जानने वाला आदमी भी पढ़ले और अच्छी तरह समझ ले। ज़बान तो ज़रूर पंजाबी उर्दू है मगर हम बड़े इतमीनानके साथ यह कहेंगे कि अगर ऐसी किताबें निकलती रहीं तो हमारे देशके लोगोंको साइंसकी मालूमात ही न होंगी बलके इसे पूरी तौरसे जानने और सीखनेका शौक़ भी पैदा हो जायगा। 'दर्याको कूज़ेमें बंद किया। सच तो यह है कि बड़ा कमाल किया'। इस किताबमें पांच छह फोटोके सिवा बहुतसी तसवीरें भी हैं। २०×२६ पैमानेपर १६८ सफहोंमें छपी है। कीमत १॥) है और लाला आत्माराम साहिब एम. ए. प्रोफ़ेसर गवर्मेंट कालेज लाहौरसे मिल सकती है।

मेहदी हुसैन नासिरी।

---

**उपनिषद् रहस्य**—लाला कन्नोमल, एम. ए. द्वारा संकलित और अनुवादित।

लाला साहबने कठ, केनादि, बारह उपनिषदोंके बहुत अच्छे अच्छे मंत्रोंका संग्रह किया है और उनका हिन्दी और अङ्गरेज़ी अनुवाद भी साथ ही साथ दिया है। यह पुस्तक वेदान्तियोंके बड़े उपयोगकी है। जो धार्मिक पुरुष प्रातःकाल पाठ किया करते हैं उनकेलिए भी यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। इस पुस्तकमें संग्रह किये हुए मंत्र वेदान्त विषयके अच्छे प्रमाण हैं। अतएव व्याख्याताओंके काम भी यह पुस्तक आ सकती है।

मनोहरलाल।

---

## प्रधान प्राकृतिक उपज और तदुपादित शिल्प

[ ले० डा. हरिश्चन्द्र, पी. एच-डी., ]

नीचे कुछ प्राकृतिक उपज छोटे टैपमें दी जाती हैं और जो शिल्प उनपर निर्भर हैं मोटे टैपमें उनके बाद लिखी जाती हैं।

### इनऑर्गेनिक

सोनामक्खी वा गंधक—**गंधक अम्ल इत्यादि।**

लवण, शोरा, चूना और गंधकका अम्ल—**नमका अम्ल, "शोरेका अम्ल" "साल्टकेक"। "क्लोरीन्" और तदुत्पादित पदार्थ जैसे "क्लोराइसड्" "शुक्लकारक पदार्थ" इत्यादि। "सोडा" "सोडा बाइकार्ब" "कास्टिक सोडा", "कोस्टिक पोटेश" इत्यादि।**

फ़ोस्फ़ो टाइटस् अस्थियां और गंधकका अम्ल—**शिल्प निर्मित खाद, जैसे अस्थि चूर्ण, "सूपर फोस्फ़ेटस्" अस्थिस्निग्ध, "पाइरिडीन्," "पिकोलीन्", और "ल्युटिडीन्" इत्यादि।**

खनिज—**धातु और उनके क्षार।**

### ऑर्गेनिक

बीज और जन्तुस्निग्ध इत्यादि—**तैल और मेद।**

गंधद्रव्य और पुष्प—**गंध तैल और गंध इत्यादि।**

नाज—**स्टार्च, डेक्स्ट्रिन्, ग्लुकोस् और ग्लूटन इत्यादि।**

गन्ना—**बूरा, अल्कोहोल, मद्य, "ऐसेटिक" अम्ल और "सेल्यूलोस"।**

चीथड़े और घास—**पत्रलुग्दी और पत्र इत्यादि।**

पत्थरका कोयला—**कोलगेस, अमोनिया और तदुत्पादित द्रव्य, कोलतार और तदुत्पादित नाना प्रकारके असंख्य पदार्थ जिनकी गणना अस्सी लाखके ऊपर जाती है।**

## फोकका प्रयोग

"पदार्थका अनुचित स्थानपर होना ही मल है"

कार्यालयमें प्रधान उत्पादकके अतिरिक्त उसके साथ और नाना प्रकारके गौण उत्पादकोंके उपयोगोंका भी तो प्रश्न है! यूरोपके बड़े बड़े कार्यालयोंमें इसपर विशेष ध्यान दिया गया है और यही उनकी व्यापारिक सिद्धिका कारण हुआ है।

कुछ समयसे फोकके उपयोगने इतना गौरव पाया है कि वह स्वयं एक विज्ञान बन गया है। "सहस्र रजनी" की अत्यन्त मनोरंजकसे मनोरंजक कथा भी आधुनिक यंत्र-कला-भिज्ञों और शिल्प रसायनज्ञोंकी निष्फल द्रव्योंके साथकी क्रियासे अधिक आश्चर्यजनक नहीं है। उनकेलिए मलका ढेर एक प्रकारकी सुवर्णकी राशि है। बिना आग्रहके इस बातको मानना पड़ेगा कि उन्होंने लार्ड पामर्स्टनके वाक्य "पदार्थका अनुचित स्थानपर होना ही मल है" को पूर्णतया सिद्ध कर दिखाया है। विविध देशों और बड़े बड़े नगरोंमें जन संख्याकी बढ़तीने भी उपायज्ञोंकी बुद्धिको "निष्फल" कहलानेवाले पदार्थोंको नाना प्रकारकी ऐसी वस्तुओंमें जो कभीकी अपरित्याज्य हो गई हैं परिवर्तन करनेकी नई नई रीतियां निकालनेके लिए प्रेरित किया है। वह पदार्थ जो निकम्मे समझकर मार्ग आंगन और कूड़ोंमें फेंक दिये जाते हैं, इतने प्रकारसे काममें आ सकते हैं कि अब कोई पदार्थ निरर्थक समझा ही नहीं जा सकता। दृष्टान्तरूपसे पुराने टीनके टुकड़े, डब्बे और कतरन पिघलाकर सुन्दर बटन और बालकोंकेलिए खिलौनोंमें ढाले जाते हैं, जो संसारभरमें बिकते हैं। निकम्मे जूते और रबरके टुकड़े नाना प्रकारकी वस्तुएँ बनानेमें व्यवहृत होते हैं। कांचकी एक भी फूटी बोतल या टूटे टुकड़ेको फेंकनेकी आवश्यकता नहीं, क्योंकि पीसनेके पश्चात् मार्गको गमन योग्य करनेकेलिए झाड़ूसे इकट्ठीकी हुई धूल, और एक मृत्तिका विशेषके सम्मेलनसे अत्युत्तम शिल्प-निर्मित पाषाण बनाया जाता है, जो प्रासादादि बनानेके काममें आता है। फटी पुरानी लीरें और चीथड़ोंका मैल और रंग काट कर, वे उत्तम काग़ज़ बनानेमें व्यवहृत होते हैं। स्वभावतः सुगंध और अधिवासादि प्रधानतः फूलोंसे बने समझे जाते हैं। सब शृङ्गार सामग्री ही नहीं, किन्तु मिष्टान्न भी आजकल उस, घृणित "कोलतार" से निकाली हुई अनेक वस्तुओंसे बनाया और स्वादिष्ट किया जाता है जो बड़े बड़े नगरोंके "गैस जनक यंत्रों" का करकट है। नाना प्रकारके मनोहर रंग, जिनके अति साधारण होनेके कारण यहां लिखनेकी आवश्यकता नहीं इसी डामरसे बनाये जाते हैं। घृणित पदार्थको उपयोगी बनाना वैज्ञानिक श्रमका फल है। काष्ठ चूर्ण, जो बेकाम मानकर फेंक दिया जाता था मांस विक्रयालयोंके भूतलपर जूतोंका मैल न लगनेकेलिये बिछाया जाता है और "हाइड्रेटेड आक्साइड आफ़ मेग्नेशिया" के साथ दृढ़ीकरणसे इसकी पट्टियां बनती हैं जो हलकी और चिरस्थायी होती हैं। अपि च उपरोक्त ११० सेर पदार्थमेंसे वाष्पनिष्काशन विधिसे २ गैलन बढ़िया "एल्कोहल" और उनके गौण पदार्थ निर्माण किये जाते हैं। यह बात प्रसिद्ध है कि केवल "न्यूयार्क" में कम से कम काष्ठ चूर्णके ५०० व्यापारी हैं जो साधारणतः "करकट" कहलाने वाले उक्त पदार्थको प्रति वर्ष ६००००००) रुपयेमें बेचते हैं। हिंसागारके गौण पदार्थ अगणित होनेके कारण यहां नहीं लिखे जा सकते। अस्थियां शिल्पनिर्मित खाद और हड्डीके कोयले इत्यादिके रूपमें परिवर्तित कर दी जाती हैं और रुधिरका एक एक बिंदु एल्ब्यूमन् बनानेके काममें लाया जाता है। यहांतक कि पुरीष और मूत्र आदितक भी कृषि और चिकित्साके कई कामों में आनेवाले पदार्थोंके उत्पत्तिकर्ता बना दिये गये हैं।

निर्माणकर्त्ताओं और व्यापारियोंकेलिए पृथक्करण संस्कारकी आवश्यकता

"पृथक्करण संस्कार शिल्पालयकेलिए वैसा ही आवश्य है जैसा विक्रयालयके लिए बही खाता।"

बाहरसे आनेवाली अनेक प्रकारकी वस्तुओंको देखकर किसका मन उनमेंसे कुछ न कुछ लेने-

के लिए न चलेगा। बहुत लोग कई जगहोंसे सूचनाएँ लेकर उन वस्तुओंको स्वयं निर्माण करनेका उद्यम करते हैं, परन्तु उनका प्रयत्न बहुधा निष्फल होता है। निष्फलता प्रायः इच्छित वस्तुके अवयव और उनकी ठीक ठीक मात्राके न जाननेके कारण ही होती है। संपूर्ण पृथक्करण संस्कार बहुधा इस कठिनताको दूर कर देता है और किसी समय तो निर्माण करनेकी रीतिको भी प्रकाशित कर देता है। रसायनालयोंके लाभ पूर्ण रीतिसे यूरोपमें अनुभव किये गये हैं, जहां उनसे सब मनुष्य स्वकार्यमें उन्नति करनेके हेतु सम्मति लेते हैं। इनमें अग्रगामी निर्माणकर्त्ता वे होते हैं, जो पहिले ही विज्ञान प्रकाशित पथपर चलकर लाभ उठा चुके हैं और स्पर्धाकी रणभूमिमें अपनी परिपाटीके निर्माताओंसे विजय प्राप्त करनेके लिए स्वकार्यालय निर्मित पदार्थकी श्रेष्ठता और निर्माण मात्राकेलिए अतीव सूक्ष्म दृष्टि हैं। साधारणश्रेणीके निर्माणकर्ता भी वैज्ञानिक सिद्धान्तोंका अनुसरण करते हैं और अपने पदार्थोंका सर्वदा पृथक्करण संस्कारसे शोधन कराते रहते हैं, ताकि उनसे सुझाई हुई बातोंसे अपनी उपजमें किसी प्रकारकी गुण अथवा परिमाण संबंधी उन्नति कर सकें। व्यापारी लोग भी अपनी क्रय विक्रयकी वस्तुओंके पृथक्करण संस्कार करानेमें वैसे ही तत्पर रहते हैं, जिससे वे उपयोगी अंशोंकी वास्तविक मात्रा जानकर ठीक ठीक मूल्य लगा सकें। बहुतसे दूषित अंशोंके दूर करनेके साधनों और उपायोंका विधान कर और उससे ग्राहकोंको आकर्षण कर अपने व्यापारमें बढ़ जाते हैं। एक कृषक भी खेत बोनेके समय केवल उपजकी मांग और अपनी प्रारब्धपर भरोसा करके बीज नहीं डालता, परन्तु उसमें सहायक भूमि, बीज, जल वायु, आदि तत्वोंके पृथक्करण संस्कारद्वारा यह जाननेका आग्रह करता है कि कौनसी खेती सबसे अधिक लाभदायक होगी।

सम्मतिका लेनदेन।

"अज्ञानमय श्रमका वही फल है जो अंधकार में शीघ्रता का।"

विज्ञानके ऐसे प्रशंसक बहुत कम हैं जो इस सच्चाईको जानते हुए भी कि सारा व्यवहारिक कर्म वैज्ञानिक सिद्धान्तोंपर निर्भर है केवल विज्ञान रोचित सिद्धान्तोंके अन्वेषण करनेमें द्रव्य व्यय करें। इस प्रकारकी गवेषणाएँ तो सर्वदा उन्हीं वैज्ञानिक भक्तोंसे की जाती हैं जो स्वयं वैज्ञानिक हैं और ज्ञानकी लड़ीमें एक कड़ी और डालनेमें अपना सारी आयु व्यतीत कर देते हैं और संसार भरको महा अपूर्व व्यवहारिक सिद्धान्त प्रदान कर जाते हैं। करोड़ों रुपये अन्वेषणोंपर व्यय हो चुके हैं जो केवल उन निरूपण कर्ताओंके ही द्रव्यसे किये गये हैं, जिनमें प्रायः सबके सब साधारण विभवके मनुष्य थे। सम्मति निदान उन शिल्पालय सम्बन्धी प्रश्नोंमें ली जाती है जिनको धनाढ्य लोग स्वयं सिद्ध नहीं कर सकते। शिल्पालय संबंधी प्रश्नोंका जो सर्वदा विचार करते रहते हैं वे अपक्व उपजकी सम्यक परीक्षा, उनका यथा लब्ध पूर्ण इतिहास और प्रकृति शासित दशाओंके बोधकी आकांक्षा रखते हैं। आकस्मिक उत्तर देना बहुत कठिन और भय हेतुक है। इन बातोंका सम्यक रीतिसे ज्ञान होते हुए भी सर्वदा बिना कुछ रासायनिक प्रयोग किये इतना भी कहना कि उस विषयमें अन्वेषण करना उचित होगा या नहीं संभव नहीं, फिर कार्यालय बनानेकी तो बात ही दूर का है। इसीलिए व्यवहारिक सार्थकता अथवा आधुनिक निरर्थकता दर्शानेके लिए विस्तृत प्रयोग करनेकी आवश्यकता होती है।

इन्हीं परिमाणके प्रयोगोंने ही भारतवर्षका सत्यानाश किया है और यह हार्दिक सत्य उपदेश किया जाता है कि उनको अल्प परिमाणमें करना चाहिये। दुर्भाग्यवश इस देशमें शिल्प प्रवीणोंका व्यवहार संतोषजनक नहीं रहा। और उत्साही

धनाढ्योंको सूचना दी जाती है कि किसी प्रकार का कार्यालय स्थापित करनेसे पहिले उसकी अपेक्षा अतिस्वल्प द्रव्य व्ययपर ध्यान न देकर निर्माण कीजानेवाली वस्तुओंकी बानगी बनवाकर और विक्रय स्थानमें दिखाकर उनकी श्रेष्ठता और मांगके संबंधमें पूर्ण रीतिसे संतोष करलें।

उपरोक्त रीतिसे प्रश्नोंकी सिद्धिके लिए सर्वदा यत्किञ्चित् वैज्ञानिक अन्वेषणकी आवश्यकता होती है जो नमूना भेजनेसे पहिले व्यवहार-पारिभाषिक परिमाणमें रूपान्तर करनी पड़ती है। यह स्पष्ट है कि इस प्रकारका कार्य केवल पुस्तकोंकी सहायतासे जिनके लेखकोंका अभिप्राय प्रायः अन्वेषण कर्त्ताओंके अभिप्रायोंसे सहमत नहीं होता, नहीं किया जा सकता। "अनजानेका जानना" अन्वेषणकी अत्युत्तम व्याख्या है। यह, अनभिज्ञ प्रयोगके संबंधमें जो कुछ ज्ञात है उसे जाननेकी आवश्यकताको प्रगट करता है ताकि अन्वेषणकर्ता जाने हुए के पुनर्निरूपण करनेमें वृथा श्रम और व्ययका निवारण कर सके। विद्वद्वर गोरे के अनुसार अन्वेषणकर्ताको अपने विषयके पूर्ण अद्यतम ज्ञानसे युक्त होनेके अतिरिक्त सिद्धिके अत्यंत सरल और सीधे मार्गपर आरूढ़ होनेके लिए "चिन्तन, नूतनआविष्कार, हस्तलाघव, सूक्ष्म दर्शन तुलना और तर्क" करनेके योग्य होना चाहिये।

अन्वेषण कर्त्ताको अनुभव और दृढ़ विश्वास प्राप्त करनेमें समय लगनेपर हतोत्साह नहीं होना चाहिये। सिद्धि प्राप्त न होनेपर धनिकको इस विचारसे कि "द्रव्यका अव्यय भी द्रव्य लाभ है" संतोष करना चाहिये और अनुवेषणकर्त्ताको लोक मान्य "फ़रेड़े" के बचन कि "साधारण मनुष्य बननेके लिए भी २० वर्षके अनुभवकी आवश्यकता होती है" और "अपने अनुभवसे प्रत्येक और अनुभवी प्रयोगकर्ता ज्ञानमय ज्योतिकी किरणोंको फेंकता है जिसके प्रकाशमें देखनेकी सीमा मनुष्यकी बुद्धिपर निर्भर है" स्मरण करते हुए जिज्ञासा और नूतन शक्तिसे प्रेरित होकर वह अपने प्रयोगमें पुनः कटिबद्ध होकर जुत जाय। अतः यह पूर्ण रीतिसे स्पष्ट है कि अपनी कठिनाईओंको सिद्ध करानेकी इच्छावाले लोग रसायनज्ञको अपने विषयका संपूर्ण विस्तृत वृत्तान्त देते हुए अपने ही पक्षकी पुष्टि करेंगे।

अवश्य ही यह अन्वेषण कर्त्ताका धर्म है कि उत्साही धनाढ्योंसे प्रयोग इस चतुराईसे करावे कि उसके सिद्ध करनेमें न्यूनसे न्यून समय श्रम और धन व्यय हो। इसी आशयसे निम्नलिखित विधिका विधान किया जाता है।

किसी अपक्व उपजके मिलनेपर प्रथम आवश्यकता उसकी प्रकृतिका जानना और मूल्यका स्थिर करना है। प्रकृतिका ज्ञान जाति विश्लेषण और मूल्यका निर्णय परिमाण विश्लेषण से किया जाता है। शिल्पीय पृथक्करण संस्कार विचारित उपजके शिल्पीय महत्व और तत्सहोत्पद्‌ पदार्थोंकी उत्पत्ति जाननेके लिए आवश्यक है।

अपक्व उपजके कार्यालय चलानेके योग्य परिमाणमें पाये जानेपर, प्रयोग व्यापारिक गुरुत्व ग्रहण करलेता है। उस समय शिल्पीय अनुसंधान उचित है जिसके लिए अनुवेषणकर्त्ताको उस स्थानपर साम्प्रतिक दशाओंको सम्यक रीतिसे अवलोकन करने और उनके अनुकूल ठीक निर्माण विधिके निर्णयार्थ बुलाना आवश्यक होगा। तत्पश्चात् निर्माणेच्छुक अभिलाषित प्रधान उपज और उसके साथ उपजानेवाले पदार्थोंकी बानगियाँ विक्रय स्थानोंमें स्वीकारार्थ दिखलानेके लिए अन्वेषणकर्तासे मांग सकते हैं और उनके स्वीकृत होनेपर उत्साही धनाढ्य मासिक निर्माण परिमाणकी अवधि देकर भावी कार्यालयके व्यय अनुमान पत्र तथा यंत्रादिके विस्तृत चित्र आदि मांग सकता है। शिल्पालय बनानेके समय शिल्पीको सामग्री और निर्माण विधिमें किसी प्रकारकी रसायनिक त्रुटी न रहने देनेके लिए रसायनज्ञकी सम्मति लेनी आवश्यक होगी। शिल्पालय बन

जानेपर अनुवेषणकर्त्ताको कार्याध्यक्ष बना सकते हैं अथवा यदि उत्साही धनाढ्य निर्माण विधिके विषयमें बात चीत करके मोल लेले तो अन्वेषण कर्त्ता केवल रसायनिक सम्मति दाता रह सकता है। परन्तु उत्साही धनाढ्यको सदा स्मरण रखना चाहिये कि यदि वह स्वयं साहसी वैज्ञानिक न हो तो उसे रासायनिक सम्मतिदाताके विना, जिसकी आवश्यकता सम्मतिकी दैनिक कठिनताओंको दूर करनेके लिए प्रायः होती है, कार्य चलानेमें कठिनता होगी।

निर्माणकर्त्ता जो अपनी उपजको बढ़ाने वा उसको और अच्छी करनेके संकल्पसे किसी सूचनाकी इच्छा करता है उसे अपक उपज, तदुपयोगी रासायनिक परिपक्क उपज उसके साथ उपजानेवाले और मध्य उपज आदि की बानगियाँ पूर्ण वृत्तांतके साथ परीक्षार्थ भेजना अच्छा होगा। यदि कार्यालयकी उपजमें स्पर्धार्थ अन्य निर्मित उपजकी अपेक्षा गुणोन्नति करनी हो तो उसे लक्ष्य उपजकी बानगी भी तुलनार्थ भेजनी चाहिये।

निर्माणकर्ताको अन्वेषणकर्ताके सामने अपनी निर्माण विधियोंके रखनेमें उस रोगीकी नाईं जो अपने सारे भेद चिकित्सा करनेवाले वैद्यके सामने खोल देता है नहीं झिझकना चाहिये। विश्वास ही केवल निर्माणकर्ताको किसी प्रयोगके सम्बंधमें अन्वेषणकर्त्ताके पास ले जाता है क्योंकि रोगीकी नाईं वह नहीं जानता कि 'डाक्टर महोदय' उसकी कहाँ तक सहायता कर सकेंगे। सिद्धि प्राप्त न होनेपर निर्माणकर्ताको समझना चाहिये कि अभावरूपी साक्षी भी लगभग उतनी ही गौरव युक्त है जितनी कि भावरूपी; क्योंकि अकर्तव्यका ज्ञान उतना ही लाभदायी है जितना कर्तव्यका।

व्यापारी लोग भी वैज्ञानिक पथका अनुसरण करनेसे बहुत लाभ उठा सकते हैं क्योंकि विज्ञान बल है और सुप्रेरित उद्यमके सामने कुछ असम्भव नहीं है।

---

## सूचना

जिन ग्राहकोंका चन्दा इस मासमें पूरा हो चुका, उनसे निवेदन है कि आगामी वर्षका चन्दा ३) मनीआडर द्वारा शीघ्र ही भेज देवें। यदि १५ अप्रेल तक कोई सूचना न मिली तो अगला अङ्क वी. पी. से भेजा जायगा।

कदाचित् किसी कारणवश आगामी वर्षमें किसी सज्जनको ग्राहक रहना स्वीकार न हो, तो उन्हें उचित है कि कृपया विज्ञान कार्य्यालयमें एक सप्ताहके भीतर इस विषयकी सूचना भेजदें, जिससे उनके नाम वी. पी. न भेजा जाय और परिषद्को हानि न उठानी पड़े।

जिन परिसभ्योंका चन्दा अभी तक नहीं आया है, उनसे भी निवेदन है कि चन्दा भेजदें अन्यथा वी. पी. भेजा जायगा।

मंत्री, विज्ञान परिषद्।
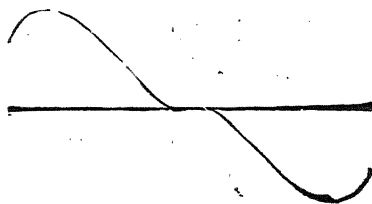
( देखो पृष्ठ २७३ )

गौण केन्द्रवाले चुम्बकके चुम्बकत्वका वक्र। (विज्ञान भाग ४ संख्या ६ पृष्ठ २३५ चित्र ८)

# प्रयागकी विज्ञानपरिषत्‌का मुखपत्र

VIJNANA, the Hindi Organ of the Vernacular Scientific Society, Allahabad.

भाग—४

तुला—मीन १९७३

October 1916–March 1917.

प्रकाशक

विज्ञान—परिषत्‌ प्रयाग

वार्षिक मूल्य तीन रुपये

# विषय-सूची